राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा

अभिनन्दन ग्रन्थ

राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा

अभिनन्दन ग्रन्थ

विक्रम संवत्सर संवत् २०४९
नई दिल्ली
सन् १९९२

संरक्षक - महर्षि महेश योगी

राजवैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा
अभिनन्दन ग्रन्थ
सम्पादक मण्डल

प्रधान सम्पादक–

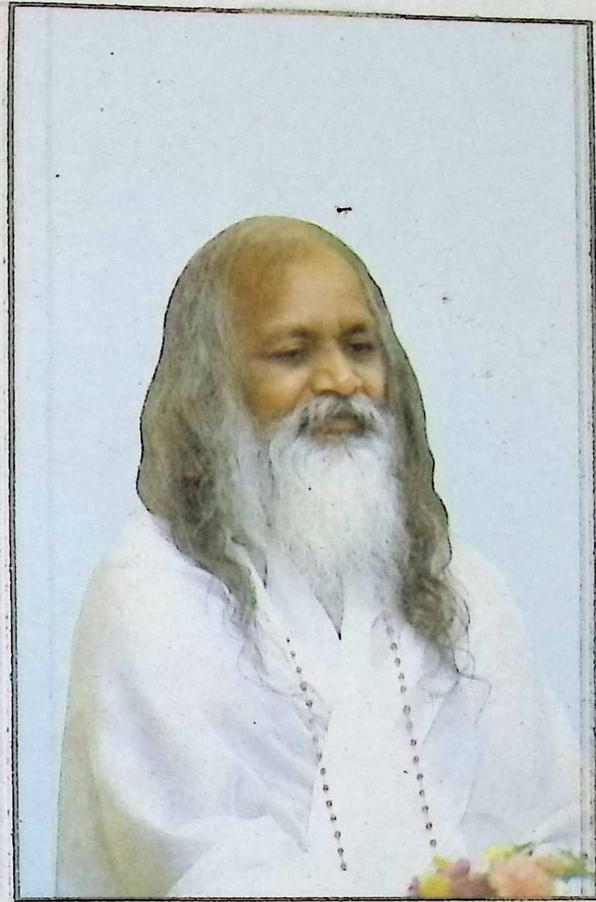
* वैद्य भुवन चन्द्र जोशी

सम्पादक –

* वैद्य ताराचन्द्र शर्मा
* वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी

सह सम्पादक–

* वैद्य पूर्णमल मिश्र
* वैद्य रामदत्त शास्त्री
* वैद्य विजय मोहन पाठक
* वैद्य अनिल कुमार गुप्त
* वैद्य अरुण कुमार बाजपेयी

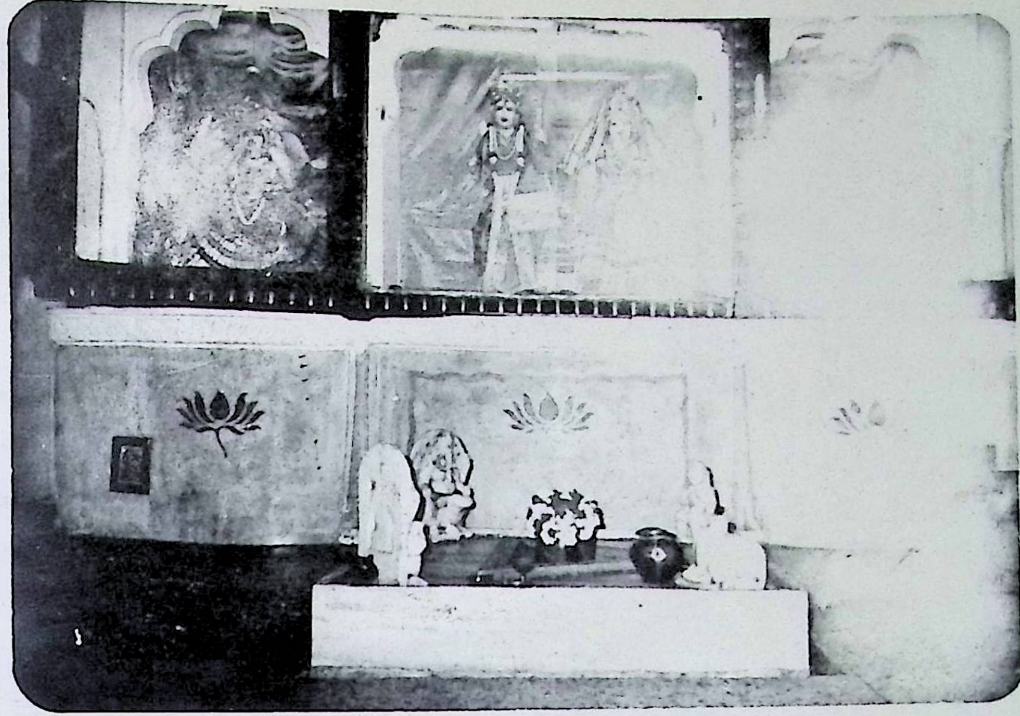


महर्षि महेश योगी

महर्षि जी
का
शुभाशीर्वचन

"श्री त्रिगुणा जी को हम
धन्वन्तरि कहते हैं"

—महर्षि महेश योगी



श्रीत्रिगुणेश्वर वन्दना

सर्वौषधीश्वरशशी तव शेखरस्थः, ।
पापपहारिसुतता च जटासुगङ्गा ।
रोगापहारिगरलं किलयस्य कण्ठे, ।
तस्मै नमोभगवते त्रिगुणेश्वराय ।।१।।

यं वैद्यनाथमिति वैद्यजना वदन्ति ।
मृत्युञ्जयं यमिह मर्त्यजनाः स्तुवन्ति, ।
शं कांक्षिणः स्वमिह शंकरमामनन्ति ।
तस्मैनमो भगवते त्रिगणेश्वराय ।।२।।

शक्तिस्त्रयीघनतया श्रयते यतोऽमुम् ।
तूर्योऽपि पञ्चकृतयस्तनुते स्वकीयाः, ।
पञ्चानना सुरवरा सुर-सङ्घपूज्या ।
तस्मैनमो भगवते त्रिगुणेश्वराय ।।३।।

ब्रह्मा हरिः हर इति त्रिगुणीमतीत्य ।
यस्तन्मयो वरकलो जयति त्रिलोक्याम् ।
विश्व प्रपंच रचना चतुराय तुभ्यम् ।
तस्मैनमोभगवते त्रिगुणेश्वराय ।।४।।



श्रीधन्वन्तरिस्तवनम्

पीयूषं वितरन् सुधाकलशतो दिव्यंदुकूलं दधन् ।
रोग-व्रात-समाकुलान् जनगणान् स्वीयाऽभयामुद्रया,।।

सौख्यं संवितरन् हरन् कलिमलं वेदाङ्ग-वाक्यैः शुभैः ।
आरोग्यं वितनोतु सर्वजगतो धन्वन्तरिः श्रेयसे ।।

दिव्यालोक विकासमान-सुमुखाम्भोजच्छटा संकुलाम् ।
दीप्तां मौलिमणि-प्रभाव-जटिलांसौम्याकृतिं धारयन् ।।

केयूरावृत-वाहुमध्य-विलसद्राजीवमालः प्रभुः ।
सुस्वास्थ्यं प्रति पालयन् विजयताम् देवर्षिधन्वन्तरिः ।।



आयुर्वेद तपोमूर्ति राजवैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा ।

संपादकीय निवेदन

जीवन, जीवन अवधि (आयु) विकार और आयुर्वेद सहगामी हैं। आयुर्वेद शाश्वत ज्ञान है। इसके प्रभव में और इसको अग्रसर करने में देवताओं ऋषियों महर्षियों का योगदान है। ब्रह्मा अश्विनी कुमार इन्द्र जिनको हम देव श्रेणी का मानते हैं उनसे मानव को आयुर्विज्ञान प्राप्त हुआ। अश्विनी कुमार देवताओं के चिकित्सक थे। उन्होंने अपने काल में चिकित्सा के कीर्तिमान स्थापित किये जिससे उनको हम याद करते हैं। इन्द्र से भारद्वाज ने व्याधि शमन का ज्ञान प्राप्त किया। अंगिरा जमदग्नि आत्रेय गौतम आदि महर्षियों ने भारद्वाज से इस विद्या में निपुणता प्राप्त की। पुनर्वसु आत्रेय ने इस विज्ञान को संहिता का रूप दिया। चरक सम्राट् कनिष्क का राजवैद्य था। धान्वन्तर संप्रदाय में औपधेनव,वैतरण पौष्कलावत, करवीर्य, भोज, सुश्रुत प्रभृति आचार्यों ने शल्य अंग को प्रस्तुत किया। सुश्रुत ने इसे संहिता का रूप दिया। आज से २५०० वर्ष पूर्व जीवक भगवान् बुद्ध का चिकित्सक था। उसने अपने चिकित्सा कौशल से सभी को चकित किया। देश के अनेक अधिपतियों की उज्जयिनी काश्मीर अयोध्या आदि में सफल चिकित्सा की। आयुर्वेद की मंदाकिनी के ये महान् शास्त्र कोविद और वैज्ञानिक थे जो सदा हमारे स्मृति पटल पर बने रहते हैं।

इस शताब्दी के विगत दशकों में भी ऐसे वैद्य विद्यावारिधि हुये हैं जिन्होंने विदेशी कुचक्र से आयुर्वेद की रक्षा की। यह इतिहास १९०७ से प्रारम्भ होता है। जब स्व. शंकरदाजी पदे ने नासिक नगर में महासम्मेलन की स्थापना की। उस पीढ़ी में प्रांत-प्रांत में आयुर्वेद के दिग्गज विद्वान् और चिकित्सक हुये हैं। जिनकी यशोगाथा आज भी हम को सुनने को मिलती है। क. गणनाथ सेन स्व. लक्ष्मीराम स्वामी, यादव जी महाराज, पं. ख्याली राम द्विवेदी, पं. जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, डॉ. लक्ष्मीपति, बृज बिहारी चतुर्वेदी आदि अपनी विद्वता और चिकित्सा कौशल के लिये प्रख्यात हैं। वैद्य समाज ने अपना उत्तरदायित्व मान कर इनका भी अभिनंदन किया था। समाज में ख्याति प्राप्त व्यक्तियों के अभिनंदन और अभिनंदन ग्रंथ से सम्मानित करने की परिपाटी बहुत समय से प्रचलित है। जो भी राजनीति साहित्य, विज्ञान, कला और समाज कल्याण के क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त करता है उसके प्रति अपनी भावांजलि समर्पित करने के लिये समाज का संबधित वर्ग प्रेरित होता है। कभी अभिनंदित व्यक्ति लाभान्वित होता है तो कभी अभिनंदन को व्यक्ति की श्रेष्ठता से प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। यह देखा गया है कि ऐसा व्यक्ति अभिनंदित होने से संकोच भी करता है क्योंकि अभिनंदन में स्तवन होता है। यही मानसिकता रही है वैद्य शिरोमणि बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी की। श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा ने विगत वर्षों में कई बार उनके अभिनंदन और अभिनंदन ग्रंथ से सम्मानित करने का प्रस्ताव उपस्थित किया किन्तु उन्होंने सदा असहमति व्यक्त की यह कह कर कि मैं स्तुति से दूर रहना चाहता हूँ।

अन्ततोगत्वा सदस्यों के बहुत आग्रह पर उन्होंने अनिच्छा से स्वीकृति प्रदान की। सभा ने मुझे संयोजक चयन कर इसका कार्य भार सौंपा। तत् सम्बन्धित विभिन्न समितियों का भी गठन इस अवसर पर किया गया।

जिन आयुर्वेद मनीषियों को हमने याद किया है उनका क्षेत्र भारत वर्ष तक ही सीमित रहा। संभवतः तब हम पराधीन थे और दूरी भी बहुत थी। समय बदला, हम स्वतंत्र हुये, यातायात के साधन सुधरे, दूरी कम होने लगी त्रिगुणा जी के व्यक्तित्व को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त होने का अवसर मिला और उन्होंने अपूर्व अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर ली। उनकी योग्यता नाड़ी ज्ञान कुशल चिकित्सा से आज वे देश-विदेश में जाने माने आयुर्वेद के चिकित्सा मर्मज्ञ हैं। राजनेता, व्यवसायी, कलाकार बुद्धि जीवी और अभाव ग्रस्त लोग सभी समान रूप से उनकी चिकित्सा से लाभ उठाते हैं।

त्रिगुणा जी का व्यक्तित्व बहु आयामी है, प्रेरणादायक है। वे एक कुशल संगठन कर्ता सिद्ध हुए हैं। उन्होंने दो बार महासम्मेलनाध्यक्ष पद को सुशोभित कर जहां प्रांतीय संगठनों को सक्रिय किया है वहां जिला संगठनों में प्राण संचार भी किया है। फलस्वरुप आज कई प्रांतों में उच्चस्तरीय जिला सम्मेलन होने लगे हैं। जिनसे आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। आयुर्वेद के विद्वानों का शनैः-शनैः लोप होना देख कर उन्होंने राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ को संगठित और सक्रिय किया है जिससे पुनः आयुर्वेद के विद्वान् सुलभ हो सकेंगे। अपने अध्यक्ष काल में उन्होंने महासम्मेलन की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ किया है। आज उनके पहल और प्रयत्न से धन्वन्तरि भवन परिसर में दो भवनों के निर्माण से पर्याप्त स्थान सुलभ है जिसका वैद्य समाज उपयोग कर रहा है।

लोकतांत्रिक विधि में उनकी बड़ी आस्था रही है। सभी निर्णय परस्पर सहमति से हों ऐसी उनकी इच्छा रहती है। संगठन में बारी-बारी से सभी को कार्य करने का अवसर प्राप्त हो ऐसा उन्होंने चाहा है और क्रियान्वित भी किया है। समय-समय पर उनकी सूझ-बूझ से महासम्मेलन को विविध लाभ होते रहे हैं। उनका सौजन्य मधुर स्वभाव ही उनकी लोकप्रियता का रहस्य है।

हम उनको आयुर्वेद का युगपुरूष कह सकते हैं। उनका समय आयुर्वेद के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। उनका अभिनंदन और अभिनंदन ग्रंथ से सम्मान उनकी महानता के समक्ष एक स्वल्प प्रयास है जिसके माध्यम से वैद्य समाज को भावाजंलि समर्पित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। इस ग्रंथ में गद्य-पद्य और संदेश द्वारा उनके जीवन का चित्रण और उनकी विशेषताओं की झलक प्रदर्शित होती है। इस अभिनंदन ग्रंथ के पठन से पाठकों को उनके बहु आयामी व्यक्तित्व का आभास प्राप्त होगा ऐसा हमारा विश्वास है।

यह अभिनंदन ग्रंथ एक सम्मिलित प्रयास है। विद्वानों के सारगर्भित लेखों से और उनके सहयोग से ग्रंथ के शास्त्र खंड को शिक्षाप्रद और ज्ञानप्रद बनाने में हम समर्थ हो सके हैं। इसके प्रकाशन में महर्षि आयुर्वेद संस्थान की बहुत बड़ी भूमिका रही है। संस्थान के श्री पं. मदन मोहन पाठक, वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी, आचार्य राम दत्त शास्त्री तथा आचार्य पूर्णमल मिश्र वैद्य ताराचन्द्र शर्मा एवं अन्य आयुर्वेद विद्वानों ने बड़े परिश्रम से ग्रंथ के विषयों को परिष्कृत करने में हमारी सहायता की है। उनके हम आभारी हैं। इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के पदाधिकारियों और सदस्यों ने इसके संयोजन में प्रशंसनीय सहयोग दिया है। इतना होने पर भी ग्रंथ में अनेक प्रकार की त्रुटियां हो सकती हैं एतदर्थ हम पाठकों से क्षमा चाहेंगे।

निवेदक :-भुवन चन्द्र जोशी

राजवैद्य वृहस्पति देव त्रिगुणा अभिनन्दन ग्रन्थ
अभिनन्दन समिति

१. श्री आनन्द श्रीवास्तव
२. पूर्व न्याय मूर्ति श्री पी. एन. भगवती
३. पद्म श्री जी. डी. गोयल
४. पद्म श्री वैद्य आशुतोष मजूमदार
५. पद्म भूषण डॉ. करोली
६. श्री वेदप्रताप वैदिक चीफ पी. टी. आई.
७. श्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी
८. श्रीमती राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी
९. श्री चन्द्रशेखर जी पूर्व प्रधान मंत्री भारत सरकार
१०. श्री मण्डन मिश्र कुलपति लाल वहादुर संस्कृत विद्यापीठ
११. श्री विक्रम महाजन पूर्व मंत्री
१२. वैद्य श्रीराम शर्मा बम्बई
१३. वैद्य श्री शिवकुमार मिश्र
१४. वैद्य श्री मदन मोहन पाठक
१५. वैद्य श्री शिवकरण शर्मा छांगाणी
१६. वैद्य श्री दयाराम अवस्थी
१७. वैद्य श्री रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी
१८. वैद्य श्री जागेराम गुप्त
१९. वैद्य श्री प्रकाश नाथ तिवारी जालन्धर (पंजाब)
२०. डॉ. वेवन मोरिस महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्व विद्यालय
२१. डॉ. नील पेटर्सन महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्व विद्यालय
२२. श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा कार्यकारिणी के
समस्त पदाधिकारी एवं सदस्य गण

राजवैद्य वृहस्पतिदेव त्रिगुणा अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशन समिति

इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा दिल्ली कार्यकारिणी के समस्त सदस्य

१.	वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा	अध्यक्ष
२.	वैद्य श्री दामोदर सिंह शास्त्री	वरिष्ठ उपाध्यक्ष
३.	वैद्य श्री विशाल त्रिपाठी	उपाध्यक्ष
४.	वैद्य श्री हरीश सूद	उपाध्यक्ष
५.	वैद्य श्री ओ. पी. वशिष्ठ	महामंत्री
६.	वैद्य श्री जयन्ती भाई पारिख	संयुक्त मंत्री
७.	वैद्य राजेन्द्र छाबड़ा	संयुक्त मंत्री
८.	वैद्य श्री सतीश शर्मा	कोषाध्यक्ष
९.	वैद्य श्री पवन कुमार शर्मा	संगठन मंत्री
१०.	वैद्य श्री बी०पी० गुप्ता	संगठन मंत्री
११.	वैद्य श्री वी०पी कौशिक	पुस्तकालयाध्यक्ष
१२.	वैद्य श्री शिवकुमार शर्मा	आय व्यय निरीक्षक
१३.	वैद्य श्री भुवन चन्द्र जोशी	सदस्य
१४.	वैद्य श्री गौरीलाल चानना	सदस्य
१५	वैद्य श्री नाथ दत्त	सदस्य
१६.	वैद्य श्री एस० के० शर्मा	सदस्य
१७.	वैद्य श्री एन० सी० शाह	सदस्य
१८.	वैद्य श्री हरीनाथ गुप्ता	सदस्य
१९.	वैद्य श्री वी० डी० वशिष्ठ	सदस्य
२०.	वैद्य श्री भूपेन्द्र कुमार	सदस्य
२१.	वैद्य श्री प्रमोद अग्रवाल	सदस्य
२२.	वैद्य श्री संतोष कुमार शर्मा	सदस्य
२३.	वैद्य श्री नामाधार शर्मा	सदस्य
२४.	वैद्य श्री अश्वनी शर्मा	सदस्य
२५.	वैद्य श्री अरुण शर्मा	सदस्य
२६.	वैद्य श्री डी० डी० शर्मा	सदस्य
२७.	वैद्य श्री रवि कौशिक	सदस्य
२८.	वैद्य श्री गौरीशंकर सोलंकी	सदस्य
२९.	वैद्य श्री विजय शर्मा	सदस्य
३०.	वैद्या सु. श्री गायत्री गौड	सदस्य
३१.	वैद्या सु. श्री रेणू बतरा	सदस्य





राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

MESSAGE

On the occasion of the Delhi State Ayurvedic Congress's programme for felicitating Vaidya Shiromani Acharya Pt. Brihaspati Dev Triguna, I have great pleasure in extending my cordial greetings and good wishes to Vaidya Triguna. May he serve the cause of public health and wholesomeness through Ayurveda for many more years.

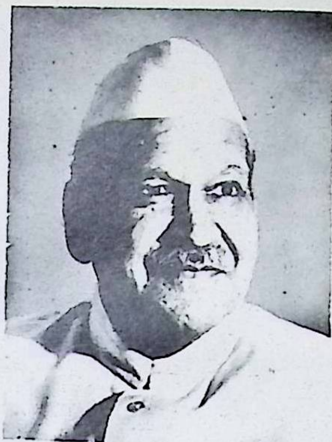
R Venkataraman

(R. VENKATARAMAN)

New Delhi,

December 19, 1991.





उप-राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
VICE-PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

दिनांक 4 अप्रैल, 1992

संदेश

मुझे यह जानकर हर्ष हो रहा है कि इंद्रप्रस्थीय वैद्य सभा, दिल्ली के तत्वावधान में वैद्य शिरोमणि आचार्य पं. बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है ।

मैं इस मंगलमय प्रसंग में श्री त्रिगुणा जी की विद्वत्ता और सेवाओं के प्रति अपने आदर की भावाञ्जलि अर्पित करता हूँ ।

इस प्रकाशन के लिए मेरी शुभकामनाएँ ।

शंकर दयाल शर्मा
(शंकर दयाल शर्मा)



प्रधान मंत्री

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि वैद्य शिरोमणि श्री बृहस्पतिदेवजी त्रिगुणाजी के अमृत महोत्सव समारोह के अवसर पर एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है ।

आयुर्वेद के क्षेत्र में श्री त्रिगुणाजी का योगदान सर्वविदित है । उन्होंने अपने चिकित्सा-कौशल से न सिर्फ आयुर्वेद का गौरव बढ़ाया है बल्कि अनेक लोगों की अमित सेवा भी की है ।

आयुर्वेद शास्त्र के सिद्धांत और व्यवहार, दोनों ही पक्षों पर श्री त्रिगुणाजी को असाधारण अधिकार प्राप्त है । उन्होंने भारत ही नहीं अपितु विश्व के अनेक देशों में आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार किया है ।

मैं श्री त्रिगुणाजी के दीर्घायुरारोग्य की कामना करता हूँ ! मुझे विश्वास है कि उनके अमृत महोत्सव के अवसर पर प्रकाशित अभिनंदन ग्रंथ आयुर्वेद के विशेषज्ञों तथा जन-साधारण के लिए उपयोगी और संग्रहणीय सिद्ध होगा ।

मेरी शुभकामनायें,

(पी०वी० नरसिंह राव)

नई दिल्ली
12 नवम्बर, 1991

वैद्य भुवन चन्द्र जोशी,
संयोजक,
इन्द्रप्रस्थ औषधालय,
गौशाला मार्ग, किशन गंज,
दिल्ली ।

ZAIL SINGH
Former President of India

TEL. 3 0 1 6 0 4 5
4, CIRCULAR ROAD,
CHANAKYA PURI,
NEW DELHI-110021

22nd November, 1991

I am glad to know that a Abinandan Granth is being brought out in honour of Vaid Shiromani Shri Brahaspati Triguna. He was my honorary Physician. His contribution in Aurvedic Medicine and Treatment is commendable which has won international fame and brought world wide laurels not only for him but also for our country. He has shown to the world community that this system of medicine is in no way less than Allopathy or any other discipline. His diagnosis of diseases is prompt and healing touch is praiseworthy. His sincerety, dedication and devotion in the treatment of patients, especially of poorer of sections of society cannot be measured. His compasion, love and affection added with effective treatment is always remembered. He is a humanist and above all a Patriot.

I wish Triguna Ji a long, happy and prosperous life so that his continued service and medical advice are availabe to the society.

Zail Singh
(ZAIL SINGH)

Morarji R. Desai

'Sarang' 6th Floor,
Gen. J. Bhosale Marg,
Bombay-400 021.
Tel.: 202 1250

23rd January, 1992

To,
Vaidya Shiromani Archarya
Pandit Brahaspati Dev Triguna
Abhinandan Granth Samitri
Shri Indraprasthia Vaidya
Sabha Delhi
Vaidya Bhuvan chandra Joshi
Indraprasth Aaushadhalaya
Goshala Marg, Kishan Ganj
Delhi - 110 006

To honour Rajvaid Brahaspati Dev Triguna a living monument of India's ancient medical genius. Shri Triguna could understand, simply by feeling the pulse which the modern medicine needed several expensive tests to diagnose. It is a revealing example of superiority of mind over machine.

I had a personal experience of taking benefits of Ayurvedic Herbs and Rasayans from Acharya Trigunaji.

I wish Acharya Trigunaji a long, happy and prosperous life so that his continued service to the country and the man kind.



चन्द्रशेखर संसद्-सदस्य

30 सितम्बर, 1991

प्रिय भुवनचन्द्र जी,

आपका 25 सितम्बर का पत्र मिला । श्री त्रिगुणा जी के अभिनन्दन के लिए आप एक स्मारिका निकाल रहे हैं यह जानकर प्रसन्नता हुई । वैद्य जी को मैं पिछले 20 साल से जानता हूँ । अनेक मित्रों की उन्होंने सफल चिकित्सा की है । मैं स्वयं समय-समय पर उनके यहाँ उपचार के लिए जाता रहा हूँ । हमारी भारतीय परम्परा को जिस प्रकार उन्होंने अक्षुण्ण रखा है वह सराहनीय है । न केवल अपनी चिकित्सा पद्धति से उन्होंने गौरवान्वित किया, बल्कि वह एक कुशल चिकित्सक अपने अध्यात्मिक संस्कृति की ओर उन्होंने हमें अपने अतीत के प्रति गौरवान्वित होने की प्रेरणा दी है । ऐसे व्यक्तित्व का अभिनन्दन करना हमारा अपना राष्ट्रीय कर्तव्य है । मैं उनके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ और मुझे विश्वास है कि आने वाले दिनों में वैद्य जी समाज की और अधिक सेवा कर सकेंगे । मेरा हार्दिक अभिनन्दन ।

साभिवादन,

आपका

(चन्द्रशेखर)

श्री वैद्य भुवनचन्द्र जोशी,
संयोजक, आचार्य पं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा
अभिनन्दन ग्रंथ समिति
धन्वन्तरि भवन,
मार्ग नं0-66, पंजाबी बाग,
नई दिल्ली-110 026

3, साउथ एवेन्यू लेन, नई दिल्ली-110 011 टेलीफोन - 3012587, 3012163

उपराज्यपाल
दिल्ली
LIEUTENANT GOVERNOR
DELHI



राज निवास
दिल्ली-११००५४
RAJ NIWAS
DELHI-110054

30 मार्च, 1992



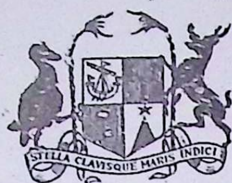
सं दे श

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा (अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की दिल्ली प्रदेश शाखा) द्वारा वैद्य शिरोमणि बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा, को एक अभिनंदन ग्रंथ द्वारा सम्मानित करने का निर्णय किया है ।

श्री त्रिगुणा जी लब्धप्रतिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक हैं । उन्होंने असाधारण चिकित्सा कौशल के कारण न केवल सम्पूर्ण भारत में प्रस्तुत संसार के अनेक देशों में ख्याति प्राप्त की है। वैद्यराज श्री त्रिगुणा जी आयुर्वेद के प्रकांड विद्वान् हैं । वह अनेक वर्षों तक अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष पद पर आसीन रहे हैं । उन्होंने भारत में तथा विदेशों में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । वे केन्द्रीय अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान - जयपुर, इंडियन मेडिसिन फार्मास्युटिकल कारपोरेशन लिमिटिड, मोहान, एवं समय समय पर सरकार द्वारा गठित विभिन्न आयुर्वेद समितियों से संबंधित रहे हैं । नाड़ी विज्ञान पर एवं आयुर्वेद की चिकित्सा में उनका असाधारण अधिकार है । मेरा स्वयं का आयुर्वेद चिकित्सा का उनसे निजी अनुभव है । इस वर्ष भारत सरकार ने उनकी आयुर्वेद की सेवाओं के लिए पद्मभूषण से सम्मानित किया है ।

मैं उनकी दीर्घायु एवं स्वास्थ्य की कामना करता हूँ ।

(मार्कण्डेय सिंह)



MAURITIUS HIGH COMMISSIONER

MESSAGE

I warmly felicitate the Delhi State Ayurvedic Congress for its decision to honour Vaidya Shiromani Pandit Shri Brihaspati Dev Trigunaji by publishing an Abhinandan Granth. It is a honour that is most appropriate and which Shri Trigunaji very well deserves for his long, dedicated and outstanding service in the cause of Ayurvedic system of medicine. He is not only a distinguished practioner of Ayurvedic medicine but also a leading light in propagating Ayurvedic science and treatment in India and abroad. I congratulate him for the honour being bestowed upon him.

I have known Shri Brihaspati Trigunaji from almost the time of my arrival in India eight years ago. The opportunity of my first meeting with him and his able son Vaid Devendra arose when a colleague of mine who had met him in Washington D.C. requested to see him in connection with some medicines required for his ailing son. The number of patients wainting to see him the morning I visited the clinic of Trigunaji ran into hundreds comparable only to the out-patients hall of a hospital. I felt amazed when an assistant told me that this is a daily feature and it has been so over numerous years. I understood straight away that people should be having enormous faith in the diagnosis and treatment by Brihaspatiji to come to him in such large numbers and over such long period. He offered to check me up at the meeting and by simply feeling my pulse he spelt out within a minute with utmost accuracy the state of my general health. The Ayurvedic medicines he prescribed also proved to be very beneficial to me.

Brihaspati Trigunaji is not only widely acclaimed for his professional abilities as Ayurvedic practioner but in recognition of his distinguished and dedicated service to the cause of Ayurvedic systems of medicine was called upon to serve as Chairman of the Ayurvedic Council under the aegis of the Ministry of Health. He has also played a most active part in ensuring the regular holding of the All India Ayurvedic Congress which enables the professionals in the field of Ayurvedic medicine to meet and exchange views and share experiences.

More than any one else Brihaspati Trigunaji has helped propagate Ayurvedic medicine abroad through his frequent visits to numerous countries where he always has large number of people, including prominent personalities, waiting for treatment and advice. He has further helped create international awareness about Ayurvedic system of medicine through his presence at WHO meetings and his addresses on the Ayurvedic science in various countries. We in Mauritius recall with gratitude the help Brihaspatidevji and his son Devendra Triguna have extended to our Government at different stages in the process of our enacting necessary legislation to legalize the practice of Ayurvedic medicine in our country. Brihaspati Trigunaji not only tendered valuable advice particularly at the difficult initial stage but encouraged our Government to proceed to enact the necessary law by personally meeting and discussing with several members of the Government and legislators. On the day the bill was discussed in our Parliament Brihaspatiji rushed his son Vaid Devendra to Mauritius to be personally available in case need arose for consultation during the Parliamentary debate on the subject. The service

was rendered absolutely free to our Government and charactorizes the dedication of Trigunaji to the cause of Ayurvedic medicine.

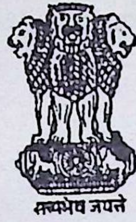
It gives me great pleasure to greet Shiromani Brihaspatidev Trigunaji on this happy occasion. I fervently wish that he keeps excellent health and continue to serve the Ayurvedic science for many years to come.

(ANAND PRIYAY NEEWOOR)
High Commissioner for Mauritius

8th November 1991

ଯଜ୍ଞ ଦତ୍ତ ଶର୍ମା
ରାଜ୍ୟପାଳ, ଓଡ଼ିଶା
यज्ञ दत्त शर्मा
राज्यपाल, उड़ीसा





ରାଜଭବନ
ଭୁବନେଶ୍ୱର-751008
राजभवन
भुबनेश्वर-751008

संदेश

गुरुतुल्य समादरणीय विद्वान एवं वरिष्ठ आयुर्वेदज्ञ, श्री बृहस्पतिदेवजी त्रिगुणा के अभिनन्दन में, श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा एक ग्रन्थ प्रकाशित कर रही है, यह विशेष आनन्द का विषय है और इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का यह सद्प्रयास अतीव सराहनीय है।

पुरातन आयुर्वेद-ज्ञान-निधि विद्वद्वरों में आदरणीय त्रिगुणाजी अपना एक असामान्य स्थान रखते हैं। इस ऋषि-प्रणीत चिकित्सा-ज्ञान-ज्योति के अद्वितीय ज्योतिर्मान नक्षत्र अब भारत में इने-गिने ही रह गये हैं। निदान-विशारद श्री त्रिगुणाजी अपनी अद्वितीय नाड़ी विज्ञान प्रतिभा के लिये न केवल भारत में, अपितु विश्व में विख्यात हैं।

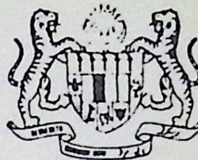
आयुर्वेद महासम्मेलन के अनेक बार अध्यक्ष पद को सुशोभित करनेवाले श्री त्रिगुणाजी, आयुर्वेद के प्रचार और प्रसार में, गत अनेक दशाब्दों से भारत तथा अन्य देशों में कार्यरत हैं।

प्रभु इस प्रकार की पुण्य विभूतियों को दीर्घायुष्य प्रदान करें जिनके शुद्धोपचार से रोगी को स्वास्थ, तथा स्वस्थ को दीर्घायु प्रदान करनेवाला यह ऋषि-ज्ञान उत्तरोत्तर समृद्ध होता रहे।

(यज्ञदत्त शर्मा)

28 सितम्बर, 1991

TEL (202) 328-2700
CABLE: MALAWAKIL WASHINGTON DC



AMBASSADOR

KEDUTAAN BESAR MALAYSIA
EMBASSY OF MALAYSIA
2401 MASSACHUSETTS AVE., N. W.
WASHINGTON, D. C. 20008

7 October 1985

Dear Dr. Triguna,

Thank you for your letter of 1 October. It is without a doubt that the escalating cost of health care poses a threat to the economic stability of individuals as well as nations throughout the word, especially in the developing countries. I will convey the Maharishi's World Plan for Perfect Health - utilizing each country's resources of natural medicine, a cost effective health care -, to the appropriate authorities in Malaysia for their consideration.

I also thank you for the personal consultation I had with you and the herbs which you so thoughtfully sent me which I will put to good use.

With my best wishes for continued success in your movement.

Sincerely,

Dato' Lew Sip Hon,
Ambassador of Malaysia.

Dr. Brihaspati Dev Triguna,
Maharishi Continental Capital
of the Age of Enlightment,
5000 14th Street, NW,
Washington, D.C. 20011.



GOVERNOR
ANDHRA PRADESH

RAJ BHAVAN,
HYDERABAD-500041.

2nd December, 1991.

MESSAGE

To honour Acharya Brihspati Dev Triguna is to honour a living monument of India's ancient medical genius. Therefore, it was only apt that the Delhi State Ayurvedic Congress have decided to formally honour the great Vaidya who has kept the hoary tradition of Ayurveda alive. His life and work is a manifestation of the heights scaled by the science of Ayurveda. The Indian Vaidya used the pulse as a measuring rod of all that the patient had gone through. To his experienced touch the pulse exposed the deepest aspects of the patient's personality. I have been amazed by the extraordinary ability of Acharya Brihspati Dev Triguna to read the pulse. He reminded me of another great practioner of Ayurveda, Pandit Gopinathji Kaviraj of Varanasi, who could tell the story of the patient's physical ailments since his childhood simply by feeling his pulse. Their ability is rooted not merely in the knowledge of medicine and body but in a deep awareness of the unity and the integrity of life and the discipline of mind and body, which the ancient taxts and experience of India taught. It baffles imagination as to how Acharya Brihspati Dev Triguna could understand, simply by feeling the pulse, which the modern medicine needed several expensive tests to diagnose. It is a revealing example of superiority of mind over machine.

I am writing this out of my personal experience. After treatment, for certain persistent ailments, by all systems like allopathy, homeopathy and even naturopathy and sometimes by other Ayurvedic physicians, I was seen by Vaidyaji, who treated me back to normal health. Witnessing his wholesome appraoch my faith in Ayurveda increased manifold. Vaidyaji's curative powers rested not merely on knowledge, experience and expertise but many years of Sadhana lay behind it. His perscriptions, after morning meditation and prayers are like inspired-remidies.

He has done much for raising the status of our ancient knowledge of Ayurveda to the pedestal of modern medicine and even surpassing it. Modern medicine has limitations. It is not close to nature. Ayurveda's approach is holistic and is based on Sadhana of the highest order.

May God grant him long years of service to the regeneration of those values epitomizing the wisdom which is a unique amalgam of Indian medical science and spirtuality.

Krishan Kant

(KRISHAN KANT)





कृषि मंत्री
भारत सरकार
नई दिल्ली-११०००१
MINISTER OF AGRICULTURE
GOVERNMENT OF INDIA
NEW DELHI-110001

December 20, 1991

MESSAGE

Rare are those who institutionalise themselves for dedication to a cause, service to humanity and contribution towards knowledge. Acharya Brahaspati Dev Triguna is one who has become an institution in himself because of his establishing the efficacy of Ayurved as a system of treatment. He has become a legend during his very life time. His widespread fame is that just by touching the pulse, he diagnoses the disease and writes prescriptions. His achievements are said to be surprising. In many cases those who lost hope of life due to suffering from accute, chronic and incurable disease got long life with his treatment and blessings. Acharya Triguna does not practise a vaidic profession, but he symbolises a mission - the mission to remove the sufferings, pain and agony of people. He treats a few hundred every day. His hand has a godly gift. People seek his blessed hand from within and outside the country. Disappointed they come; delighted they return. Ayurved had lost its glory and glow with the development of other modern systems of treatment. Acharya Triguna has revived the heritage of Ayurved with his dexterity, devotion, and dedication and developing Ayurvedic medicine from herbs with his ingenuity and vision. . He has established a number of Ayurved centres in different countries.

I appreciate the initiative taken to honour Acharya Brahaspati Dev Triguna. I wish him a long life.

B. Jakhar

(BAL RAM JAKHAR)



लाल कृष्ण आडवाणी

विपक्ष के नेता
लोक सभा

17 दिसम्बर, 1991

प्रिय श्री जोशी जी,

यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा दिल्ली वैद्य शिरोमणि श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा के सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित कर रही है ।

श्री त्रिगुणा जी आयुर्वेद चिकित्सा में विशेषज्ञ हैं और अपने इस चिकित्सा कौशल से न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी उनका नाम विख्यात है । अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष पद पर आसीन रहकर उन्होंने आयुर्वेद के अन्य चिकित्सकों का मार्ग निर्देशन किया है ।

मैं श्री त्रिगुणा जी की दीर्घायु की कामना करता हूं और आशा करता हूं कि उनके सम्मान में प्रकाशित यह अभिनन्दन ग्रन्थ चिकित्सा के क्षेत्र में प्रेरणा देता रहेगा ।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

वैद्य भुवन चन्द्र जोशी,
संयोजक, अभिनन्दन ग्रंथ समिति,
धन्वन्तरि भवन,
मार्ग सं0 66, पंजाबी बाग,
नई दिल्ली-110 026

सी 1 / 5, पंडारा पार्क, नई दिल्ली - 1100 03 दूरभाष : 3782397 (निवास)
44, संसद भवन, नई दिल्ली - 1100 01 दूरभाष : 3017470/[redacted] (कार्यालय)
3034283



पैट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्री
भारत
MINISTER FOR PETROLEUM & NATURAL GAS
INDIA

नई दिल्ली १९
New Delhi January 21 19 92

MESSAGE

I am happy to know that the Delhi State Ayurvedic Congress (State Unit of All India Ayurvedic Congress) has resolved to honour Vaidya Shiromani Pt. Shri Brihaspati Dev Triguna of New Delhi by publishing an Abhinandan Granth.

Shri Triguna ji is an outstanding Ayurvedic Physician of our times. He is known for his extra ordinary professional skill not only throughout India but also in numerous other countries of the world. He is presently also the honorary Physician to Rashtrapati ji.

Vaidya Triguna ji is a renowned scholar of Ayurveda. He has been President of All India Ayurvedic Congress for several years. He has played a significant role in the advancement of the science of Ayurveda in India and abroad. He has been and is associated with the Central Council of Research in Ayurveda, Rashtriya Ayurved Vidyapeeth, National Institute of Ayurveda, Jaipur, Indian Medicine Pharmaceutical Corporation Limited, Mohan and various other Ayurvedic Committees formed by the Government from time to time.

I wish the organisers of Congress every success in their efforts in organising the function.

(B. Shankaranand)



Smt. D.K. THARA DEVI SIDDHARTHA

MINISTER OF STATE
FOR HEALTH & FAMILY WELFARE
INDIA
NEW DELHI-110011

30 December, 1991

MESSAGE

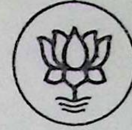
I was very happy to note that the Delhi State Ayurvedic Congress is felicitating Vaidya Brihaspati Devi Triguna ji, a leading Ayurvedic practitioner and renowned Ayurvedic scholar.

Vaidya Brihaspati Devi Triguna is a very well-known Ayurvedic practitioner whose devotion to the propagation for the cause of Ayurveda cannot be over-emphasised. He has been associated with the Ministry of Health & Family Welfare in spreading and developing the Ayurvedic science.

He has served as Chairman of the Scientific Advisory Committee and Member of the Governing Body of the Central Council for Research in Ayurveda and Siddha for many years. Presently, he is a part-time Director of the Indian Medicine Pharmaceutical Corporation Limited, Mohan which is a Government of India undertaking. He is also a prominent Member of the Governing Body of Rashtriya Ayurved Vidyapeeth. He is renowned physician examining and curing hundreds of patients daily. I pray to God for his long life with good health and happiness.

D.K. Thara Devi Siddhartha

(D.K.THARA DEVI SIDDHARTHA)



डॉ. मुरली मनोहर जोशी
अध्यक्ष

भारतीय जनता पार्टी
Bharatiya Janata Party

6 दिसम्बर, 1991

आदरणीय श्री जोशी जी,

वैद्य शिरोमणि आचार्य श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा की प्रतिष्ठा में वैद्य समाज द्वारा जो आयोजन किया जा रहा है और उस आयोजन के उपलक्ष में एक स्मारिका का भी प्रकाशन हो रहा है, यह अत्यन्त आनन्द एवं हर्ष का विषय है ।

वैद्य शिरोमणि त्रिगुणा जी आयुर्वेद जगत के गौरव हैं और इस ज्ञान को देश-विदेशों में प्रतिष्ठित कराने के लिए निरन्तर साधनारत रहे हैं । आयुर्वेद की ही नहीं, अपितु उन्होंने भारतीय संस्कृति की बहुत बड़ी सेवा की है और उन जैसे मनीषी एवं सुविख्यात चिकित्सक का सम्मान वस्तुतः समूचे वैद्य जगत का ही सम्मान है और मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि यह स्मारिका उनके कृर्तृत्व एवं व्यक्तित्व को वैद्यों की नयी पीढ़ी के लिए एक प्रेरणादायी सन्देशवाहक का कार्य करेगी ।

समारोह एवं प्रकाशन के लिए तथा वैद्य शिरोमणि त्रिगुणा जी के सुदीर्घ जीवन एवं अनंत यश के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ ।

ससम्मान,

आपका,

(मुरली मनोहर जोशी)

श्री भुवनचन्द्र जी जोशी,
नई दिल्ली ।

११ अशोक रोड, नई दिल्ली-११० ००१, दूरभाषः ३८२२३४-३६ □ १०-ए टैगोर नगर, इलाहाबाद-२११ ००२, दूरभाषः ६०१ ००८
11 ASHOK ROAD, NEW DELHI-110 001, PHONE: 382234-36 □ 10-A TAGORE TOWN, ALLAHABAD-211 002, PHONE: 601 008

अटल बिहारी वाजपेयी
संसद सदस्य



23 दिसंबर १९९१

प्रिय जोशीजी,

यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के तत्वावधान में वैद्यशिरोमणि श्री बृहस्पतिदेवजी त्रिगुणा का सम्मान-समारोह आयोजित किया जा रहा है और इस अवसर पर एक अभिनन्दन ग्रंथ भी प्रकाशित किया जा रहा है। मैं समारोह की सफलता चाहता हूं।

वैद्यशिरोमणि त्रिगुणाजी आयुर्विज्ञानके सूक्ष्म ज्ञाता, सिद्धहस्त नाड़ी-परीक्षक और असाध्य रोगों की जड़ तक पहुंच कर उनका निर्मूलन करने में समर्थ एक कुशल वैद्य हैं। उन्होंने आयुर्वेद के माध्यम से समाज-सेवा का पावन व्रत लिया है। मैं उनके दीर्घ जीवन और उत्तरोत्तर यश-अर्जन की कामना करता हूं।

आपका,
अटल बिहारी वाजपेयी

6, रायसीना रोड नई दिल्ली-110 001 दूरभाष : 3715166, 3714869



BIJU PATNAIK



CHIEF MINISTER
ORISSA STATE

BHUBANESWAR

Date 31-1-1992

MESSAGE

I am happy to know that the Delhi State Ayurvedic Congress is bringing out an Abhinandan Granth to honour Pt. Shri Brihaspati Dev Triguna of New Delhi, the doyen of Ayurveda of our times.

Shri Trigunaji is a well known personality for his profound scholarship in Ayurveda, coupled with compassion to mitigate the sorrows and sufferings of the sick and disabled. He has worked all his life to propagate the principles and ideas of Ayurveda from the ancient texts and popularised this system of medicine in India and abroad. He has also established that Ayurvedic system of medicine is in no way inferior to the modern system to cure persistent ailments. His life and work is a source of inspiration to the youngsters in the profession and the Delhi State Ayurvedic Congress is doing commendable work to honour him.

I wish the endeavour all success.

Sd/-

(Biju Patnaik)

सुन्दरलाल पटवा
मुख्य मंत्री



मध्यप्रदेश शासन
भोपाल, 462004

दि॰8॰11॰91

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा द्वारा वैद्यशिरोमणि वृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा को अभिनन्दन ग्रंथ द्वारा सम्मानित किया जा रहा है।

समाज में विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य करने वाली विभूतियों का सम्मान उनके प्रति सम्मान की सार्वजनिक अभिव्यक्ति होती है। इससे अन्य लोगों को भी महान विभूतियों का अनुकरण करने की प्रेरणा मिलती हैं।

अभिनन्दन ग्रंथ के सफल प्रकाशन के लिए शुभकामनाएं।

10/11/91
(सुन्दर लाल पटवा)



भैरोंसिंह शेखावत



मुख्य मंत्री
राजस्थान

जयपुर, २८ नवम्बर, 91

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महा॰सम्मेलन की दिल्ली प्रदेश शाखा-श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा द्वारा वैद्य शिरोमणि आचार्य पं० वृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा को एक अभिनंदन ग्रंथ द्वारा सम्मानित किया जा रहा है।

भारतीय आयुर्वेद पद्धति विश्व की प्राचीन चिकित्सा प्रणालियों में सर्वश्रेष्ठ है तथा हमारे मनीषियों ने इस क्षेत्र में जो अनुभूत एवं गुणग्राही औषधियों का अन्वेषण किया है, उनकी अनुवर्ती में पं० त्रिगुणा जी जैसे आयुर्वेदाचार्यों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यह शुभ है कि पं०आचार्य श्री त्रिगुणा जी के जीवन दर्शन पर एक अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि आयोज्य-समारोह आयुर्वेद एवं आयुर्वेदाचार्यों को नई दिशा देने में उपयोगी एवं उद्देश्यपूर्ण सिद्ध होगा तथा अभिनन्दन ग्रंथ की सामग्री ज्ञानवर्धक होगी।

मैं इस समारोह की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

(भैरोंसिंह शेखावत)



CHIEF MINISTER OF SIKKIM

Phone : 2575 (Off)
2304 (Res)

Tashiling
Gangtok
Sikkim

MESSAGE

I am extremely happy to know that the Delhi State Ayurvedic Congress is going to honour Vaidya Shiromani Pt. Shri Birhaspati Dev Triguna by publishing an Abhinandan Granth.

Shri Trigunaji is known all over the country and outside as a renowned scholar in Ayurvedic system of medicine. His contribution in the advancement of science of Ayurveda has been tremendous and the country rightly feels proud of him. I wish Trigunaji every success in his dedication to serve humanity.

(Nar Bahadur Bhandari)

डॉ0 मण्डन मिश्र
कुलपति



दूरभाष कार्यालय : 664003 निवास : 6851250
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ
(मानित विश्वविद्यालय)
कटवारिया सराय, नई दिल्ली-110016

सन्देश

मेरे लिये प्रसन्नता और गौरव का विषय है कि श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा दिल्ली ने वैद्य शिरोमणि आचार्य पं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी को सम्मानित करने के लिए एक अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित करने का निर्णय लिया है । भारत के राष्ट्रपति जी ने आचार्य पंडित बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी को इसी वर्ष 26 जनवरी 1992 को पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित कर सारे संसार में फैले हुए उनको यश की मान्यता प्रदान की है । यह हम सब के लिए गौरव का विषय है । आचार्य पं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी से मेरा गत 30 वर्षों का सम्बन्ध है । इतने लम्बे समय में मैंने साक्षात् धन्वन्तरि की तरह उनका आदर-सत्कार किया है क्योंकि मैं उनमें भारतीय चिकित्सा के उन मौलिक गुणों का दर्शन करता हूँ जिन पर हमारा यह शास्त्र टिका हुआ है । उनका जीवन त्याग और तपस्या से परिपूर्ण है उन्होंने कभी भी चिकित्सा को सम्पत्ति अर्जित करने का माध्यम नहीं बनाया । गुरुजी के समक्ष सशुल्क चिकित्सा न करने का जो व्रत उन्होंने लिया था, इस बींसवीं शताब्दी की पूर्णाहुति के अवसर पर भी यह अक्षरशः उसका पालन कर रहे हैं और लाभ या किसी प्रकार की एषणा उनको किसी प्रकार से विचलित नहीं कर सकी है । उनमें हम को ऋषियों, मुनियों, आचार्यों के तपोमय जीवन और आदर्श-व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं । जब भी कभी देश भर के संस्कृत के विद्वान् आते हैं और किसी प्रकार की भी चिकित्सा की आवश्यकता का अनुभव करते हैं तो मैं उनको पूज्य त्रिगुणा जी तक ले जाता हूँ और वे एक संस्कृत विद्या के संरक्षक की तरह उनकी चिकित्सा करते हैं और इससे उन विद्वानों व संस्कृत की सेवा के लिए और अधिक शक्ति प्राप्त होती है । उनका सौम्य व्यक्तित्व, ओजस्वी भाषण, दिव्य दर्शन, परम्परागत वेशभूषा और सादा जीवन और उच्च विचार के मूर्तिमान स्वरूप इस कलि काल में भी हम सब की आशाओं और श्रद्धा के केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित है । आज भी उनका नाड़ी विज्ञान पर इतना अधिकार हैं और उसके साथ-साथ रोग के निदान के अवसर पर विभिन्न आयुर्वेदिक ग्रन्थों के श्लोकों का धाराप्रवाह उच्चारण आयुर्वेद के प्राचीन वैदुष्य का साक्षात् चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत कर आश्चर्य में डाल देता है ।

आयुर्वेद भारतीय संस्कृति का एक दैदिप्यमान तत्व है और उसको दृढ और सुप्रतिष्ठित करने में अभिनन्दनीय आचार्य पं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी का महत्वपूर्ण योगदान है । उन्होंने राष्ट्रपति भवन से लेकर जन-जन तक तथा संसार के विभिन्न राष्ट्राध्यक्षों और सामान्य औषधालयों तक आयुर्वेद को महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में जो सफलता प्राप्त की है वह अपने आप में अभिनन्दन का विषय है । इसीलिए हम उनमें वर्तमान काल में भी आधुनिक धन्वन्तरि के स्वरूप के दर्शन करते हैं और उनको उसी रूप में अपनी श्रद्धा, आस्था और प्रणामॉंजली भेंट करते हैं ।

मेरा विश्वास है कि आपके इस अभिनन्दन ग्रंथ के प्रकाशन से आयुर्वेद और भारतीय चिकित्सा पद्धति का गौरव बढ़ेगा और वह इस राष्ट्र में आयुर्वेद के अध्येताओं तथा इस क्षेत्र में शोध करने वालों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा ।

दिनांक 12-2-1992

(मण्डन मिश्र)

Telegrams : "Ayurveda Delhi"

Phones : 69 39 92
59 45 21

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
ALL INDIA AYURVEDIC CONGRESS

"धन्वन्तरि भवन"
मार्ग 66, पंजाबी बाग, नई दिल्ली-110026

"DHANWANTARI BHAVAN"
Road 66, Punjabi Bagh, New Delhi-110026

पत्राङ्क

दिनांक 10 दिसम्बर, 1991

आदरणीय श्री जोशी जी

यह समाचार जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि आप लोग समादरणीय वैद्यराज श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा के सम्मानार्थ उन्हें एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेट करना चाह रहे हैं। इस शुभ कार्य के लिए इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा, आप और आपके सभी सहयोगी धन्यवाद के पात्र हैं। मैं इस आयोजन के लिये अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ तथा अपनी ओर से और अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की ओर से समादरणीय वैद्य जी का अभिनन्दन करता हूँ।

श्रद्धेय वैद्यराज पं. बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा आयुर्वेद के अग्रगण्य मनीषी सिद्धहस्तचिकित्सक एवं निःस्वार्थ जनसेवक हैं। वर्तमान समय में आयुर्वेद के प्रतिष्ठासंवर्धन और प्रचार प्रसार में आपका अतुलनीय महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आपके चिकित्साकौशल विशेषतः अद्‌भुत नाड़ीविज्ञानकौशल के कारण न केवल भारतवर्ष में, किन्तु विश्वभर में आयुर्वेद को प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। समाज के सामान्य वर्ग से लेकर उच्चतम वर्ग तक के लोग आपकी चिकित्सा से लाभान्वित होते हैं। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में वैद्यसमाज के संगठन, शासकीय स्तर पर आयुर्वेद की प्रतिष्ठा और महासम्मेलन की सर्वतोमुखी उन्नति और प्रगति में आपका अपूर्व योगदान रहा है। अपने व्यस्त जीवन में जब भी आपको समय मिलता है, निरन्तर आयुर्वेदिक शास्त्रों का चिन्तन मनन करते रहते हैं यही कारण है कि आपकी चिकित्सा में अधिकांश शास्त्रीय योग ही होते हैं। शुद्ध शास्त्रोक्त विधि से निर्मित औषधों में आपका पूर्ण विश्वास है। उनके द्वारा आप अनेक आत्ययिक रोगों की चिकित्सा भी सफलता पूर्वक करते हैं। प्रभु कृपा से अत्यन्त समृद्ध, सम्पन्न और प्रतिष्ठित होने पर भी आयुर्वेद सेवा और रोग पीड़ित जनता की सेवा के अतिरिक्त आपका और कोई व्यसन नहीं है।

देश विदेश में लम्बे समय तक उनके साथ रहने और कार्य करने का अवसर मुझे मिला है। अपने सहयोगियों के प्रति उदारता, प्रेम और विश्वास उनके अनुकरणीय गुण हैं, जिनके कारण एक बार उनके सम्पर्क में आने वाला व्यक्ति सदैव के लिये उनका हो जाता है। वैद्य जी की यह विशेषता है कि वे अपने सफल सिद्ध योगों को गुप्त नहीं रखते। बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दूसरों को बता देते हैं। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, समाज के उच्चतम वर्ग के रोगियों की एक बड़ी संख्या सदैव उनकी चिकित्सा में रहती है किन्तु वे सामान्य जन की चिकित्सा करने में विशेष सन्तोष का अनुभव करते हैं। आदरणीय वैद्य जी बहुत ही आस्तिक एवंधर्मप्राण व्यक्ति हैं। भगवान् शंकर आपके आराध्य इष्टदेव हैं। प्रतिदिन नियमित रूप से अपने इष्टदेव की पूजा आराधना करने के पश्चात् ही आप अपने दैनिक कार्य प्रारम्भ करते हैं। इस कार्य में शान्त, सौम्य और करुणामूर्ति तथा आदर्श गृहिणी आपकी धर्मपत्नी श्रीमती सोहन देवी अत्यन्त तत्परता के साथ आपकी सहयोगिनी रहती हैं। सत्य बात तो यह है कि देश विदेश की यात्राओं, रोगिसेवा और अनेक आयुर्वेदिक एवं सामाजिक

संस्थाओं के कार्यों में निरन्तर व्यस्त रहने वाले आपको और आपके विशाल परिवार और गृहस्थी को उन्होंने बहुत ही कुशलतापूर्वक संभाला है। आपके सुपुत्र वैद्य श्री देवेन्द्र कुमार ने भी अल्प वय में ही आपके अनुरूप चिकित्सा कौशल एवं नाड़ी विज्ञान में वैशिष्ट्य प्राप्त किया है तथा देश विदेश में प्रसिद्धि एवं प्रतिष्ठा प्राप्त की है। आयुर्वेद क्षेत्र की विभिन्न योजनाओं एवं कार्यों को सफल बनाने हेतु शासन से सहयोग प्राप्त करने एवं सम्पर्क बनाये रखने में उनका योगदान महत्वपूर्ण है।

वैद्यराज पं. बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा आयुर्वेद जगत् के सर्वमान्य अग्रणी नेता हैं, हम भगवान् धन्वन्तरि से प्रार्थना करते हैं कि वे इन्हें पूर्ण आरोग्ययुत शतायुः बनाये एवं ये दीर्घकाल तक हमारा मार्गदर्शन करते रहें।

भवदीय
(श्रीराम शर्मा)
अध्यक्ष,
अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

भवदीय

(श्रीरामशर्मा)
अध्यक्ष,
अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

P.N. BHAGWATI S-296 Greater Kailash-II, New Delhi-110 048

December 17, 1991

Dear Shri Joshi:

I was glad to learn from your letter dated 7th December,91, that the Delhi State Ayurvedic Congress has decided to honour Vaidya Shiromani Pt. Shri Brihaspati Dev Triguna by publishing Abhinandan Granth.

I have known Shri Trigunaji since the last several years and I have had many opportunities of talking to him and benefitting from his wide learnings and experience in the science of Ayurveda. He is an outstanding Ayurvedic physician and is known not only in India but also in other parts of the world for his extraordinary professional skill and knowledge of the theory and practice of Ayurveda. He has filled many high positions in the area of his expertise with great distinction and he is actively associated with a number of Ayurvedic Institutions. It is in the fitness of things that a learned and scholarly person like Shri Trigunaji should be honoured by the society.

May I convey my best wishes to Shri Trigunaji on this occasion and pray to God that He may give him long life in the service of Ayurveda.

With kind regards,

Yours sincerely,

P.N. Bhagwati

(P.N. Bhagwati

Shri Vaidya B.C. Joshi,
Indraprastha Aushadhalaya,
Gaushala Marg, Kishan Ganj,
Delhi - 110006.

Phone: 646 2655 Telex: 031 61397 AMCO IN Fax: 0091 11 642 3236

JAG PARVESH CHANDRA

Former Chief Executive Councellor

70. Khan Market,
New Delhi- 110003
Tel. 692564

Dated: 12.3.92

Message

Generally, Ayurved is understood to mean the science of medicine and there through bring health to the sick. But the truth is that Ayurveda represents an integrated approach to mind and mind. For that reason Ayurveda is our great and noble ancient tradition of healing.

Some cynics may say that ayurved is relic of the forgotten past. But in reality, Ayurveda even the western people admit has as much relevance today as it had in the days gone by. For that reason, government has been giving every encouragement to this valued system of mind.

Vaid ji as popularly known is a gifted person. Has technique of diagnosis by just feeling the pulse is some thing remarkable. He is truly the master of what

I say "Science of the Pulse." May God give him long life, so that he could prolong the life of others.

Jag Parvesh Chandra

(JAG PARVESH CHANDRA)

Vaidya S. K. Mishra
Ayurvedic Consultant

मानद विशेषायुक्त (भा०चि०प०)
स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय

A-503, Apartments
Swasthya Vihar
New Delhi-110092

Phone : 2222335

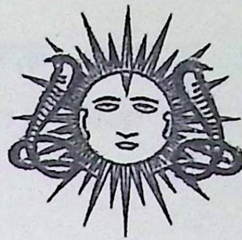
Dated 6.1.1992

शुभकामना सन्देश

आयुर्वेद के विभिन्न पक्षों की समृद्धि एवं विकास के लिये सतत जागरूक, देश-विदेश में आयुर्वेद की प्रतिष्ठा को बढ़ाने में अहर्निश प्रयत्नशील, पीयूषपाणि चिकित्सक, अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन एवं श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के पूर्व अध्यक्ष, आयुर्वेद एवं सिद्ध की केन्द्रीय अनुसंधान परिषद् की शासीनिकाय एवं वैज्ञानिक सलाहकार समिति के पूर्व सदस्य, भारतीय चिकित्सा औषधि निगम के निदेशक आचार्य बृहस्पति देव त्रिगुणा जी को अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित कर अभिनन्दित करने का श्रीइन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का निश्चय आयुर्वेद के समर्पित व्यक्तित्व का सम्मान है और इस शुभ अवसर पर माननीय त्रिगुणा जी के स्वस्थ और शतायु रहते हुए आयुर्वेद जगत के निरन्तर नेतृत्व की प्रार्थना के साथ इस विशिष्ट सम्मान के अवसर पर श्रद्धासुमन समर्पित करता हूँ।

(शिव कुमार मिश्र)





लेखा विहार
सरोजनी नगर
नई दिल्ली- ११००२३.

१२ अक्टूबर, १९९१

मा० श्री वैद्य जी जोशी जी, नमस्कार

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि न केवल भारत में विख्यात वरन विश्व विख्यात वैद्यराज पंडित श्री बृहस्पति देव जी त्रिगुणा के सम्मान में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित कर रही है। यह सद्प्रयास निश्चय ही सराहनीय है।

आयुर्वेद की प्रसांगिकता न केवल प्राचीन भारत में महत्वपूर्ण रहा है यह आज भी उतना ही है जो ...न्देह हमारे लिये बड़े गर्व का विषय है। आवश्यकता आयुर्वेद के मर्मज्ञ एवं ज्ञाताओं की है। इस विधा में विशेषकर नाड़ी विज्ञान में त्रिगुणा जी ने इस कमी की पूर्ति आधुनिक कम्पूटरों को मात देकर कर दी है। न केवल देश में, विदेशों में भी त्रिगुणा जी ने आयुर्वेद के झंडे गाड़ दिये है।

वैद्यराज श्री बृहस्पति देव जी त्रिगुणा पीड़ित मानवता की सेवा दीर्घ काल तक करते रहें यह मेरी हार्दिक मंगल कामना है।

भवदीया,

वि. रा. सिंधिया

[विजया राजे सिंधिया]

वैद्य भुवन चन्द्र जोशी
संयोजक
अभिनन्दन ग्रंथ समिति
धन्वन्तरि भवन
मार्ग नं० ६६, पंजाबी बाग
नई दिल्ली- ११००२६



फोन : ३०१६०८०
३०१९६०६
निवास : ३८ ३८ ६३

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (इ)

२४, अकबर रोड़, नई दिल्ली - ११००११.

डा० राजेन्द्र कुमारी बाजपेई, सांसद
महामंत्री

2958

26 सितम्बर, 1991

प्रिय बन्धुवर जोशी जी,

आपका 23.9.1991 का पत्र मिला । यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आचार्य पं.बृहस्पतिदेव त्रिगुणा के सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन किया जाएगा ।

आज केवल मानव के ही नही प्रत्युत प्राणि मात्र को रोग भय और कष्टों से निराकरण के लिए देशी चिकित्सा पद्धति एवं उसमें निष्ठावान चिकित्सकों का सहयोग एवं पथ प्रदर्शन आपेक्षित है । पं.बृहस्पतिदेव त्रिगुणा सरीखे आयुर्वेद चिकित्सकों को अपनी योग्यता एवं क्षमता से इस दिशा में प्रवृत्त होना चाहिए । उनके अभिनन्दन ग्रन्थ में मानव जाति और प्राणि मात्र को रोगों और कष्टों से उन्मुक्त करने के लिए आयुर्वेद के योगदान का उचित मूल्यांकन करना चाहिए, मेरे विचार में इस प्रकार का कार्य उनका सच्चा अभिनन्दन होगा और आर्न्त और दु:खी मानवता के कल्याण के लिए एक मील का पत्थर सिद्ध हो सकेगा ।

आपके कल्याणकारी प्रयास की सफलता चाहती हूँ ।

हार्दिक मंगलकामनाओं के साथ ।

आपकी,

राजेन्द्रकुमारी वाजपेयी

(डा० राजेन्द्रकुमारी वाजपेई)

श्री वैद्य भुवन चन्द्र जोशी,
संयोजक
अभिनंदन ग्रंथ समिति,
धन्वन्तरि भवन मार्ग नं. 66
पंजाबी बाग नई दिल्ली -110026

मदन लाल खुराना
उप मुख्य सचेतक, लोकसभा (भा ज पा)
अखिल भारतीय मंत्री
भारतीय जनता पार्टी



फोन 594445
533096
एफ -104, कीर्ति नगर
नई दिल्ली -110 015



दिनांक 23 जनवरी, 1992

श्री वैद्य भुवन चन्द्र जोशी,
संयोजक, वैद्य शिरोमणि आचार्यपं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा
अभिनन्दन ग्रन्थ समिति,
धन्वन्तरि भवन, मार्ग नं0 66 पंजाबी बाग, नई दिल्ली:26

महोदय,

प्रस्तावित अभिनन्दन ग्रन्थ मे प्रकाशनार्थ मेरे उद्घोषक सन्देश के लिए जो पत्र आपने लिखा है उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ । मेरा सन्देश इस प्रकार है :-

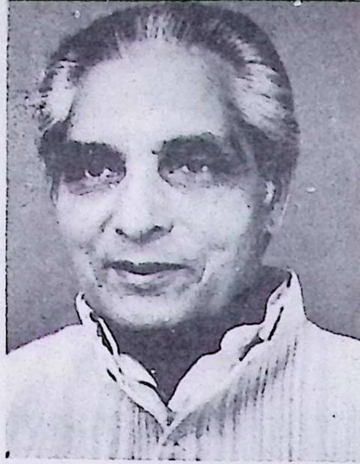
उद्घोषक संदेश

" आयुर्वैदिक चिकित्सा प्रणाली की उपयोगिता न केवल हमारे देश में वरन् संसार भर में सर्वविदित एवं सर्वमान्य है । श्री त्रिगुणा जी हमारे युग के महान आयुर्वेद चिकित्सक हैं जिन्होने इस महत्त्वपूर्व क्षेत्र में अपनी अद्भुत रूचि ,प्रवीणता एवं सेवा से बड़ी ख्याति प्राप्त की है । वह रोग-निदान द्वारा मानवजाति की महान सेवा के अनूठे कार्य मे लगे हैं । अतः मैं उनके लिए अपनी शुभ कामनाएं व्यक्त करता हूँ ।"

सधन्यवाद,

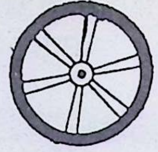
भवदीय

(मदन लाल खुराना)



जनता दल
7, जन्तर मन्तर रोड,
नई दिल्ली-110001

पुरूषोत्तम कौशिक
महासचिव



दूरभाष : 3321833

अक्तूबर 22, 1991

संदेश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि शिरोमणि आचार्य पं. बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी को अभिनंदन ग्रंथ द्वारा सम्मानित करने का निर्णय लिया गया है।

आचार्य त्रिगुणा जी ने अपने विलक्षण चिकित्सा कौशल से आयुर्वेद पद्धति को पुन: प्रतिष्ठित करके लोगों के मन में उस चिकित्सा पद्धति के प्रति गहरी आस्था पैदा करने का स्तुत्य कार्य किया है।

मुझे भी उनकी चिकित्सा सेवा का लाभ उठाने का अवसर प्राप्त हुआ है। नाड़ी स्पंदन द्वारा रोग के निदान के उनके अद्भुत ज्ञान से मैं बहुत प्रभावित हुआ।

उनके दीर्घायु जीवन के लिए आत्मीय शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

(पुरूषोत्तम कौशिक)

१. त्याग राज मार्ग, नई दिल्ली - ११
1, THYAGARAJA MARG
NEW DELHI-110011

19 जनवरी, 1992

संदेश

मैं आचार्य पं० बृहस्पतिदेव त्रिगुणा को व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ । यह चिरकाल से आयुर्वेद की तथा मानव समाज की सेवा में रत हैं । संस्कृत, तंत्र और ज्योतिष के भी आप अप्रतिम विद्वान हैं । भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए आप सदैव तत्पर रहे है । मैं इनके दीर्घायु होने की और सफलता की कामना करता हूँ ।

दिनेश सिंह

दिनेश सिंह

वैद्य भुवनचन्द्र जोशी
इन्द्रप्रस्थ औषधालय
गौशाला मार्ग, किशन गंज
दिल्ली - 110006

Vikram Mahajan
Ex-Minister of State
Union of India

47, FRIENDS COLONY
Mathura Road, New Delhi
Phone : 6837074

Dated 9-8-07-1992

श्रीमान वैध जोशी जी,

हमारे भारतवर्ष को उदार, मानवतावादी एवं कर्त्तव्यनिष्ठ होने का गौरव प्राप्त है। हर विषय के ज्ञान में यह देश प्राचीन काल से ही सर्वाग्र रहा है। चरक, वाग्भट और सुश्रुत जैसे आचार्यों ने आयुर्वेद के आधार पर मानवमात्र को दीर्घायु तथा स्वस्थ करने की परंपरा डाली है। उन्हीं का अनुसरण आज भी केई सपूत कर रहे हैं। उनमें श्री बृहस्पति देवत्रिगुणा जी भी हैं।

श्री त्रिगुणा जी ने नाड़ी परीक्षण द्वारा पाश्चात्य निदानकर्त्ताओं को विस्मय में डाल दिया। इनकी सिद्ध चिकित्सा स्वदेश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी ख्याति प्राप्त है।

रक्तचाप (ब्लडप्रेसर) आज समाज के सामने एक भयावह है। श्री त्रिगुणा जी ने विशेष योग तैयार किया है जिससे हमारो लोग लाभान्वित हुए हैं। ऐस कई उदाहरण हैं।

शुभ कामना करता हूँ, वे शतायु हों और जनसाधारण को स्वास्थलाभ देते रहें।

सधन्यवाद

भवदीय

वि० च० महाजन

(विक्रम चन्द्र महाजन)

अश्विनी कुमार
सदस्य
राज्य सभा





दूरभाष : निवास 3782131
302, विट्ठल भाई पटेल भवन,
रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001

दिनांक 24.10.1991

संदेश

मुझे यह जानकर अतीव प्रसन्नता है कि श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा द्वारा वैद्य शिरोमणि बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा, नई दिल्ली को एक अभिनन्दन ग्रंथ द्वारा सम्मानित किए जाने का निर्णय लिया गया है।

मैं गत कई वर्षों से श्री त्रिगुणा जी के सान्निध्य में हूँ। मैंने अनेक बार देखा है कि वैद्य जी अनेक असाध्य रोगीयों का कुछ ही क्षणों में निदान कर देते है। मैंने स्वयं अनुभव किया है कि वैद्य जी में वह प्रतिभा है कि मात्र नाड़ी-स्पर्श से हो रोगी के बारे में सब कुछ बता देते हैं जो एलोपैथी विज्ञान प्रणाली के अंतर्गत अनेक आधुनिक यन्त्रों से भी स्पष्ट नहीं हो पाती। नाड़ी-तंत्र के जरिए उपचार करना वैद्य श्री का चमत्कार ही कहा जाएगा। विश्व में यदि इस प्रकार के वैद्य प्रशिक्षित होकर समाज की सेवा विभिन्न क्षेत्रों में करें तो निश्चित ही अनेक बेसहारा और गरीब, कम मूल्य पर, औषधि का लाभ उठा सकेंगे।

श्री त्रिगुणा जी की परामर्श पर दी गई आयुर्वेदिक औषधियों से मैंने असाध्य रोगियों को स्वस्थ्य होते देखा है। प्रतिदिन सैकड़ों मरीजों को देखकर निदान करना उनकी अद्वितीय मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है। विदेशों में जाकर वैद्य जी ने आयुर्वेद द्वारा निदान एवं उपचार की श्रेष्ठता प्रतिपादित, एवं प्रस्थापित की है।

ब्राजील में आयुर्वेद को सरकारी औषधि तंत्र मान लिया गया है और उसी से वहाँ की जनता का उपचार करने का प्रयास चल रहा है। आजतक जिस प्रकार से उन्होंने आयुर्वेद की स्थापना कर देश व विदेश में सराहनीय कार्य किया है वह अत्यंत सराहनीय है।

मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनको दीर्घायु करें जिससे वे देश और विदेश में भारतीय चिकित्सा पद्धति की प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाने में महान योगदान कर सकें।

शुभकामनाओं सहित,

अश्विनी कुमार

(अश्विनी कुमार)

केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद
एस-10, ग्रीन पार्क एक्सटेंशन मार्किट, नई दिल्ली-110017

डा0विवेकानंद पाण्डेय,
निदेशक

दिनांक 11 अक्तूबर,1991

शुभकामना संदेश

आयुर्वेद के मूर्धन्य निष्णात् विद्वान् आचार्य पं0 बृहस्पतिदेव त्रिगुणा के अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की जानकारी से मुझे अत्यंत हार्दिक हर्ष हुआ । अपनी कुशाग्रबुद्धि, मधुर भाषण, सौम्य एवं आकर्षक व्यक्तित्व तथा संपूर्ण वैद्य गुणावलियों से अलंकृत वैद्य त्रिगुणा जी का चिकित्सक एवं वैज्ञानिक समुदाय द्वारा अभिनंदन एवं नागरिक अभिनंदन सामयिक एवं श्लाघनीय है ।

आचार्य जी की नाड़ी परीक्षा एवं रोग निदान की चमत्कारिक सफलता ने विद्वान, संपन्न, राजनेता तथा विदेशी नागरिकों एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों को आकृष्ट किया तथा आपने दिन-रात अथक श्रम द्वारा अपनी चिकित्सा सेवा से आयुर्वेद की जो श्रीवृद्धि की है उसे युगों तक याद किया जाएगा । चिकित्सकों, अनुसंधाताओं तथा अध्यापकों एवं शोध छात्रों के लिए आपके लेख, अनुभव तथा भाषण परम प्रेरणादायी रहे हैं । अपनी सेवाओं से आपने भारत में ही नहीं अपितु विश्व के अनेक विकासशील एवं विकसित देशों में आयुर्वेद की यशोपताका फहराने का श्रेयस्कर कार्य किया है ।

अभिनंदन ग्रंथ में प्रकाशित विभिन्न विषयों के विद्वानों के सारगर्भित एवं अनुभवों के सारांश के रूप में ज्ञानवर्धक एवं प्रेरणादायी शोधलेख चिकित्सकों एवं वैज्ञानिकों के लिए दिशाबोध के साथ नवीन आयामों के सृजन में ठोस भूमिका के रूप में सिद्ध हो सकेंगे, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है ।

अभिनंदन ग्रंथ की अनूठी सफलता हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ हैं ।

विवेकानंद पाण्डेय
(विवेकानंद पाण्डेय)

A. N. Namjoshi,
M. Sc. (Chemistry),
M. Sc. (Botany)
F.M.A.S., F.I.A.A., F.N.A.I.M., S.E.M.
Former Minister for Education, Maharashtra State,

Residence :
A-19, Navyug Mansion, N. Bharucha Rd.
Grant Road, Bombay 400 007

Office :
Kartar (Nilam) Mansion, 1st Floor,
Dr. Bhadkamkar Rd., Bombay 400 004.

20th., January 1992.

Vaidya,
Bhuvan Chandra Joshi,
Convener,
Vaidya Shiromani,
Acharya Pt. Brihaspatidev Triguna,
Abhinandan Granth Samithi,
Indraprastha Aushadhalaya,
Gaushala Marg,
Kishan Ganj,
D E L H I - 110006.

Dear Vaidya Bhuvan Chandraji,

It gives me great pleasure to learn that the Delhi State Ayurvedic Congress has decided to felicitate Vaidya Shiromani Acharya Brihaspati Dev Triguna and present him with a commemoration volume embodying various write-ups on his achievements in the various fields of Ayurveda.

Pandit Brihaspati Dev Triguna is perhaps the last of the Romans in the field of Ayurveda. He has been a renowned scholar of Ayurveda, a deep thinker in the Philosophy of Ayurveda, an able teacher of Ayurveda and a successful practising physician with an inspiring photogenic personality radiating the intransigent spirit of Ayurveda. He is a soft spoken orator with firm conviction about what he preaches and practises, yet sympathetic to his patients and dedicated to his profession.

Acharya Trigunaji is associated with most of the organisation and set ups for the development of Ayurveda and a pillar of strength of the All India Ayurvedic Congress. I have great pleasure to associate myself with the Delhi State Chapter of the All India Ayurvedic Congress, and take this opportunity to wish him a long life full of success and satisfaction and realization of his dream of acceptance of Ayurveda all over the world.

Sincerely yours,

(A.N. Namjoshi)
Chairman,
Ayurvedic Pharmacopoea Committee.

Dr. R.K. Caroli

M.B.B.S. M.D. (Med-Cardiology) FNCCP FCCP (USA) FICA

SENIOR CONSULTANT IN CARDIOLOGY

PADMA SHREE 1969 PADMA BHUSHAN 1974

MESSAGE

I am really very glad to learn that an Abhinandan Granth is being brought to honour Shri Acharya Brihaspati Trigunaji. He needs no introduction and is already a legend in his life time. We all know the way he has held high the banner of our traditional medicine in the true liveage of the Rishis who invented and developed it.

Only persons with a closed mind would have failed to see the Himalayan heights to which he has carried the Ayurvedic Science.

Being one of those who has seen him treating his patients. I have developed a respect for Ayurveda and a belief that with the benefit of modern research methods Ayurveda can be further utilized for the benefit of patients.

I send my heartiest felicitation and wish Vaidji a long and happy life in the service of humanity.

I had read somewhere "A scientific mind is an open mind" and also" The mind is like a flower which is so very beautiful when it is open". For, a mind, which is closed, is not receptive and as such cannot observe new phenomena and cannot produce new ideas.

Being born in a family of doctors of modern allopathic medicine, I had developed heavy scepticism toward Ayurvedic Medicine and had developed a habit of rejecting this system outright.

I, however, gradually learnt that not all happenings in the world can be immediately explained by material , rational and lab.reproduceable principles. Just as the fact of the Sun rising in the east can be explained by the rotation of the earth in a particular direction. But why does the earth rotate in that particular direction is not known till today. But all the same all scientists of the world believe that the SUN does rise in the East !

So, I developed a receptive mind towards Ayurveda also. The study of this science could not be undertaken by me and therefore I started observing the practioners of Ayurveda.

At this juncture I happened to meet Shri Trigunaji . I was amazed to see that without any help of clinical pathology, he could diagnose the ailments of people with remarkable accuracy. Though I did not expect him to translate his diagnosis to the text book headings of modern medicine, he could say with uncanny correctness even the symptoms of patients.

I further observed that he was able to do so without even ordinary tools of diagnosis what to say of modern investigation.

It has been interesting to find a long line of patients waiting for, has healing day -in and day -out. These patients came from all walks of life, many of them were foreighners and a

large number of people were educated and intelligent. A few questions to these will bring forth clear answers of their having benefited from Vaidji's treatment.

Many of these patients were earlier thrownout as untreatable by allopaths including well established institutions of modern medicine.

These have been sometime discussions between me and Shri Devendra Triguna, the Vaidji's yonger son. He has a degree in Ayurvedic medicine and has learnt Ayurveda from his worthy, father. He helped me understand many of Vaidji's diagnoses and methods of treatment.

Of course, I do not have the know how to understand the large number of Ayurvedic Medicines and their mode of action as practised by Vaidji.

We all know that many of the Ayurvedic medicines are used as their active principles which have even been synthesised in modern medicine. Even some crude recipes of medication work very well in many ailments even though we may not be able to explain how exactly do they work.

It is hoped that more & more Ayurvedic medicines will be properly researched and persons like Shri Trigunaji involved in this process so that the secrets of Ayurveda are unfolded and made availabe to mankind.

MAHARISHI AYUR-VED GESUNDHEITSZENTRUM

Message for Dr. Triguna from Dr. Ulrich Bauhofer

When I first met Dr. Triguna I was one of the first doctors from the West whom His Holiness Maharishi Mahesh Yogi had invited to learn Ayur-Ved. Trained in modern medicine you easily are caught up in the pretentions pride of the scientific approach. So captivating is the glamour of medical technology that its magic blurs your esteem of the human being as a supreme expression of nature's intelligence. The refinement of the diagnostic machinary has gradually coarsened the physician's own eyes, ears, touch and intuition. Trapped in the fascination of probing into finer and finer details of human physiology and its aberrations, medicine has long since messed the whole in the investigation of the parts. The art of healing has degenerated into a craft of repair.

When, in a medical era in which staggering technological sophistication has been bought at the cost of humanity and benevolence, you are confronted with a personality like Dr. Triguna you soon realize that you have been on the wrong track. Dr. Triguna cannot but impress you. He convinces not only as a physician, but especially as a human being: through the nobility of his mere stature, through his unshakable self-confidence, through the depth of his knowledge, through his penetrating arguments, through his equanimity, through his vitality and through the inner joy he radiates. And when you experience the magic of his fingers. When he reveals a pulse, he does not leave any doubt in you that he practises and lives a wisdom of life that can save the dignity of human existence.

Dr. Triguna embodies the ideal of the physician. He perfectly knows his discipline, he builds on vast experience, he never allows his patients to fall into despair but always instills hope and confidence, he radiates love and compassion, and, most importantly, he is a doctor who glows with health. The source of all these qualities is one: the amazing purity and discipline of his living. When you observe Dr. Triguna you soon become aware that he is a rarely found true remnant of the glorious Vedic civilization. He lives Vedic wisdom. He breathes the ever fresh air of pure knowledge - the knowledge of the infinite.

I am just one of meanwhile thousands of doctors all over the world in whom Dr. Triguna has kindled total enthusiasm for Maharishi Ayur-Ved. he has given us a new perspective for our profession. He has shifted the focus of our attention from disease to health. And he has taught us to think big. He was the one who has picked up Maharishi's aspiration to create a disease-free society, and has carried this message all around the world. We all feel proud that we have become part of this global endeavour. We are sure and confident that we will achieve it. Trigunaji will be our guiding light.

Lembergblick 1 . 6551 Norheim . Telefon (0671) 46094 . Telefax (0671) 46058

From: FEB. 25.1992 5:03 PM

MAHARISHI INTERNATIONAL UNIVERSITY

Fairfield, Iowa 52556 Tel: 515 472-5031 Telex: 286515 Fax: 515 472-1189

FAX MESSAGE

In Honor of Raj Vaidya Brihaspatidev Trigunaji, Supreme Vaidya—Vaidya of Kings and King of Vaidyas

He is the living embodiment of Maharishi Ayur-Ved, in which the basis of health is bliss. We are always so honored when he comes to visit Maharishi International University and blesses us with his beautiful & precious wisdom, which is bringing forth the precious gems of Maharishi Ayur-Ved that have been hidden for many centuries . The very presence of such a great & esteemed luminary creates waves of bliss on the MIU campus and throughout North America. He enlivens perfect health in everyone, wherever he goes.

In 1986 , our founder, Maharishi Mahesh Yogi said, "Trigunaji is already on that level when the time value will not allow him to be anything other than himself—self-referral and cosmic, "Feeling the pulse from the level of *Aham Brahmasmi* is a practical reality in his awareness. When he examines the river of information in the *Nadi*, his legendary and supremely refined sense of touch fathoms the level where the infinite field of pure consciousness is becoming matter, feeling the delicate fluctuations of consciousness in the whole body, and in the whole universe. His three fingers touch the pulse, and the past present, and future are right there.

Patients are half-cured at the blissful sight of him . He is the Samhita value that brings perfect balance and orderliness to the Rishi, Devata, and Chhandas within every person . From the level of perfect balance and perfect order in his enlightened awareness—from the level of his immortal, self—inter acting dynamics of consciousness- he very precisely penetrates to the inner Self of every person, to enliven orderliness within disorder, Just by his feeling the pulse, ignorance gains the touch of enlightenment.

on the ground of perfeclt health, he is actualizing the noblest aspiration of humanity: to nourish all life everywhere . With his unequalled expertise, his infinite wisdom, his deep compassion and unbounded kindness—with his infinite dynamism on the basis of infinite silence—he is fulfilling the need of Nature, tirelessly helping our beloved Maharishi to create Heaven on Earth through a disease-free society and a happy, healthy population enjoying a settled state of life . He is realising the supreme purpose of Maharishi Ayur-ved , to ensure that every single individual on this earth will be free from disease, free from suffering, and will enjoy life in its full glory with bliss.

It is so appropriate that he received the *Padma Bhushan* award from the Indian government. Everyone at MIU is thrilled to hear of this great and special honor bestowed upon him. I offer this tribute to our revered Trigunaji with my deepest respect and my very highest regard and admiration .

Dr. Bevan Morris

President and Chairman of the Board of Trustees, Maharishi International University .

President of the International Council of Maharishi Vedic University .

President of the Maharishi Council of Supreme Intelligence of the Age of Enlightenment for the Creation of Heaven on Earth .

Maharishi European Research University
6377, Waldhaus, Seelisberg, Switzerland
Tel: (043) 315286 Fax: (043) 315551

Dr. Med. Oliver Werner, M.D
Vice-Chancellor

March 20, 1992

Dear Anand,

I met Dr. Triguna for the first time in the autumn of 1979, and right from the first meeting I was impressed with his supreme skills. I was a young physician at the time, on my first visit to India, and someone recommended that I should go and see him and observe him taking the pulse of his patients. So I went to his clinic in Nizamuddin Area and saw how he worked:

Putting his fingers on someone's wrist for a few seconds was enough to give him a complete picture of their state of health. And when he then, after having finished his regular patients, took the pulses of my friends and then my own, and we saw how correct his readings were, our admiration grew even more. I thought, what this man does, is magic.

We visited Triguna several times in the weeks and months that followed, and I was able to observe that he not only is a supreme diagnostician; he also was able to cure many difficult diseases. Knowing little of Ayurved at the time, it was quite impressive to observe that the powders, pills and syrups that he prescribed in many cases substantially improved the condition of patients for whom I would have had little hope otherwise. I saw that it was not only the inherent potency of the herbal and mineral preparations that he prescribed, but his supreme skill in giving exactly the right preparation to each patient that was the basis of the success of his treatments. A truly great Vaidya and physician.

In the years that followed I repeatedly had the occasion to go on tours with him and observe him present Ayurved to Government ministers and officials of various countries. Not only did he impress them all with his diagnostic skills, but the forcefulness, clarity and simplicity of his presentation convinced many to give Ayurved serious consideration for their own countries.

I am very happy to be able to contribute these few lines to a book of honor for Dr. Triguna, which he deserves richly. I wish him all health, happiness and success in the future and hope and look forward to be able to meet and work with him again.

Oliver Werner, MD
Vice-Chancellor
Maharishi European
Research University
Seelisberg, Switzerland

WORLD MEDICAL ASSOCIATION FOR PERFECT HEALTH

United States of America

1111 H Street NW Washington, D.C. 20005 Tel. 202 737-6085 Telex 292 050

April 12, 1986

Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna
World Center for Perfect Health
Maharishi Nagar, India

Dear Dr. Triguna,

We are very much looking forward to your upcoming visit to the United States of America. We remember with great fondness your previous visits and how much you accomplished in bringing the knowledge of Ayurveda to this country, and your great contribution to the nation's health.

During your present visit, you are scheduled to speak at several of our most prestigious medical schools, and to meet with the press in Boston, New York City, Washington, D.C., and Los Angeles.

As it stands now your itinerary is as follows:

April 20 Depart New Delhi in the morning
April 20 Arrive London in the evening
April 21 Depart London in the morning
April 21 Arrive Boston in the evening
April 22 Harvard Medical School and Harvard School of Public Health (joint meeting); Massachusetts General Hospital (speaking in the historic Ether Dome); Press Conference; fly to New York City in the evening
April 23 Cornell University School of Medicine--New York Hospital, Grand Rounds, Department of Pediatrics; followed by a reception hosted by the Department Chairman; television program tapings and interivew
April 24 Press Conference; drive to New Haven, Connecticut for a conference at Yale University School of Medicine; fly to Washington, D.C.
April 25 Press Conference; Georgetown University School of Medicine, General Medical Conference, Department of Medicine
April 26 Meeting with Deputy Mayor, Washington, D.C. as well as private consultations with Ambassadors and dignitaries

April 27 Private consultations with Ambassadors and dignitaries

April 28 Johns Hopkins University School of Public Health, Department of International Health; fly to Los Angeles

April 29 Press Conference; University of California at Los Angeles School of Medicine, Society and Medicine Conference

April 20 UCLA School of Medicine Grand Rounds, Department of Medicine (tentative); leave for Japan

We hope that this schedule meets with your approval. Please let us know if you have any suggestions.

We know that your visit will more firmly establish the United States on the platform of perfect health, and are grateful that you are coming.

With all best wishes,

Jai Guru Dev,

Barry M. Charles, MD

Barry M. Charles, M.D.
President

MAHARISHI AYUR-VEDA PRODUCTS INTERNATIONAL, INC.
417 Bolton Road, P.O Box 541, Lancaster, MA 01523 USA
Tel: (508) 368-1818, Telex: 6976204 MAP UW, Fax: (508) 368-7475

A Tribute to Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna

Until recently, the name Ayur-Veda was not widely recognized in the United State of America. Now, in just a few short years, people from coast to coast are beginning to see Maharishi Ayur-Veda as an addition to the health care system. Working with His Holiness Maharishi Mahesh Yogi, Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna has shown himself to be the "Leader of all the Physicians" by inspiring people across the country during several tours of major cities in the USA and Canada.

He is now known to thousands of Americans who have personally consulted him and been astonished by his great skill in Ayurvedic pulse diagnosis-Nadivigyan. Their reaction was exemplified by one woman patient who said, "It was truly amazing what he did. Before I went in, he just had seen a *Washington Post* reporter, who was only a few weeks pregnant and only she knew. She was flabbergasted that he could tell. When I went in, he was able to tell me every nuance of my medical condition almost as soon as his fingers touched my wrist. The herbs that he gave me before surgery helped to break down my tumors, so that my surgeon said, 'You must have been taking Lupron?' I said, 'No'. But the tumors were soft and jelly-like, just as if I had been".

His great skill brought instant credibility to Ayur-Veda wherever he went and inspired hundreds of American physicians to seek training in Maharishi Ayur-Veda. "Dr. Triguna has taught many physicians in the US how to do good pulse diagnosis and it just opens up a whole world of diagnostic possibilities," said one family practitioner.

John C. Peterson, M.D. of Muncie, Indiana reported that, "The first things I do when a patient comes to me, before I look at their history or anything, is take their Ayurvedic pulse-it tells me the root cause for the visit. I have great credibility when I can tell a patient why he or she came in to see me. Maharishi Ayur-Veda helps to build a lot of trust and respect into the doctor-patient relationship".

Americans can now visit Maharishi Ayur-Veda Medical Centers or one of hundreds of physicians trained in Maharishi Ayur-Veda. "Ayur-Veda

is a complementary tradition," said Brian Rees, M.D., in a review of Maharishi Ayur-Veda in *Men's Fitness* magazine (January, '92). "It is truly mind-body integration." As a result, many American doctors are now seriously considering using Maharishi Ayur-Veda, reports the magazine.

Spokespersons for Maharishi Ayur-Veda are now a big attraction on national TV, radio and for major magazines and newspapers. *Times* magazine and *US News & World Report* are among those who have focused on the growing demand in America today for cost effective, holistic alternatives to modern western medicine, such as Maharishi Ayur-Veda. And among those interested in Eastern traditions, Ayur-Veda is now a household word.

Dr. Triguna has also been instrumental in the revival of the original formulation of Maharishi Amrit Kalash, in direct response to Maharishi's desire to do something for all humanity so that "disease, ill health and suffering can be eliminated from the world."

There are millions of Americans who want more zest for life, treatments without side effects, and perfection in life. Thanks to Dr. Triguna's great inspiration and expertise, these people can now find complete satisfaction in Maharishi Ayur-Veda and Maharishi Amrit Kalash wherever they live in North America.

Maharishi Mahesh Yogi has explained, "If peace in the world is to be achieved, if peace on the level of the individual is to be achieved, if a disease free society is to be created, it can only be through Ayur-Veda. And Ayur-Veda seen, understood and utilized in its completeness has gained the name of Maharishi Ayur-Veda."

With Dr. Triguna as a great exponent in the field of Health, the revival of the total value of Ayur-Veda as Maharishi Ayur-Veda is finding a place in every home on this great continent. We applaud his great work, his consummate skill and his total dedication to bringing perfect health to everyone in North America. His life and work are truly an inspiration to everyone interested in the upliftment of humanity.

Sushil and Anjali Mahaldar
Directors, Maharishi Ayur-Veda Programs, North America

UNIVERSITY OF CALIFORNIA, LOS ANGELES

UCLA

BERKELEY · DAVIS · IRVINE · LOS ANGELES · RIVERSIDE · SAN DIEGO · SAN FRANCISCO



SANTA BARBARA · SANTA CRUZ

OFFICE OF THE DEAN
UCLA SCHOOL OF MEDICINE
CENTER FOR THE HEALTH SCIENCES
LOS ANGELES, CALIFORNIA 90024

Dr. B.D. Triguna
c/o Dr. Barry Charles
111 H St. NW
Washington DC
20005

Dear Dr. Triguna,

Enclosed are three copies of the announcement of your forthcoming lecture to the UCLA Medicine and Society Forum. We look forward very much to your visit. I know that our student Mark Nestor has arrangements in hand, but please advise me if there is anything I can do to facilitate your visit.

Also enclosed is a copy of the Forum Brochure. We will, as usual, be recording the session on videotape, and I will be glad to arrange for you to have a copy. I will ask you to sign a Release in favor of the Regents of the University so that we can use the tape for teaching.

Yours sincerely,

Bernard Towers

Bernard Towers, M.D.
Professor of Anatomy & Psychiatry
Director: UCLA Medicine & Society
Forum

enc.
xc: Mark Nestor

YALE UNIVERSITY
THE SCHOOL OF MEDICINE



THE PROGRAM FOR HUMANITIES
IN MEDICINE

P.O. BOX 3333
333 CEDAR STREET - 2076 LMP
NEW HAVEN, CONNECTICUT 06510
TELEPHONE (203) 785-5494

April 7, 1986

Dr. B. D. Triguna
c/o Dr. Barry Charles
1111 H Street, N.W.
Washington, D.C. 20005

Dear Dr. Triguna:

I was very pleased to hear that you would be in the United States and this letter is intended to ask you to speak under the auspices of out Humanities in Medicine Program to an audience here at Yale University School of Medicine on April 24th, 1986.

Very truly yours,

Howard M. Spiro, M.D.
Professor of Medicine

HMS/hml

MAHARISHI CONTINENTAL CAPITAL OF THE AGE OF ENLIGHTENMENT FOR NORTH AMERICA

5000 14th Street NW . Washington, D.C, 20011 Tel (202) 723-9111

OFFICE OF THE GOVERNOR GENERAL

24 March, 1992

Message from Dr. Neil Paterson
Governor General of the Age of Enlightenment
for North America

On behalf of the citizens of the Continent of North America, it is a very great joy to express deep appreciation for our beloved, enlightened Rajvaidya Brihaspati Dev Triguna on the occasion of this ceremony presenting him with the Padma Bushan award of India - Land of the Ved.

Words cannot really do justice to the greatness of our dear Dr. Triguna, nor to the profundity of his wisdom, nor to the inestimably compassionate service he has rendered over these many years in alleviating the pain and suffering of those afflicted with ill health as well as his great inspiration and counselling of others to effectively prevent the onset of disease. It is a highly fitting tribute to his life of tireless dedication in the service of humanity that he should now be recognized with the highest award of excellence by his Motherland.

Dr. Triguna is well known and deeply respected throughout the United States and Canada as the greatest living Ayurvedic physician, the embodiment of the ancient Vedic wisdom of perfect health and immortality. He is shining example of the perfect physician, expressing the Vedic ideal, *Vasudhaika Kutumbakam* "the whole world is my family" by unselfishly undertaking the responsibility of spreading the supreme knowledge of Ayur-Ved throughout the world for the benefit of people everywhere. Dr. Triguna is dear to us for his historic role of revitalizing Ayur-Ved with His Holiness Maharishi Mahesh Yogi and for travelling to every continent to urge implementation of Maharishi's World Plan for Perfect Health in order to create a disease-free society and to bring self-sufficiency to health care in every nation. Through his efforts Dr. Triguna has ensured Maharishi Ayur-Ved of its rightful place as the supreme system of health care in the world.

Dr. Triguna has always upheld the purity of Ayur-Ved and its eternal relationship to the Ved, which has now been revealed by Maharishi as the Constitution of the Universe. In his meeting with leaders around the world Dr. Triguna has brought out that Maharishi Ayur-Ved stands as the complete health care system for the prevention and cure of disease, preservation of health and promotion of longevity and that through its twenty approaches to all areas of life, Maharishi Ayur-Ved eliminates the basic cause of all individual and collective ill health - violation of the laws of Nature.

Dr. Triguna himself is a living embodiment of Natural Law. Through his every thought, speech and action he upholds life in perfect accord with all the laws of Nature. he is a great freind of Natural Law who always creates balance in Nature. Everywhere

he goes Nature rejoices in his healing presence. He inspires everyone for perfect health. he radiates perfect health. Even at his sight the sick begin to feel better.

Dr. Triguna is agreat national treasure of India who has become, through his extensive global travels, an international treasure. Never before in history has Ayur-Ved been presented to the leaders to the peoples of so many countries. As President of the All India Ayur-Ved Congress, Dr. Triguna has been the custodian of health for the Motherland of Ayur-Ved. His travels around the world have provided great inspiration to government and private health care organizations to adopt the proven approaches of Ayur-Ved. His message has been that the health of the individual and society can be easily secured through Maharishi Ayur-Ved and that this alone can provide a real and lasting foundation for world peace.

Dr. Triguna is recognized in North America and throughout the world as the Ayurvedic physician of the rarest skill and ability. It is well known that just by feeling the pulse Dr. Triguna can detect any imbalance or disorder present in the system and advise measures to cure any existing problem and prevent any future illness. Everyone who has had Dr. Triguna feel their pulse has known first hand his powerful healing influence, *Piyush Pani*, the healing touch of nectar.

Dr. Triguna has blessed North America with many visits and has received a warm reception from leaders in government, distinguished professors of medicine, medical practitioners, ambassadors, industrialists, and business leaders who have all been inspired by his wisdom and insights and have been moved to assist him in implementing Maharishi Ayur-Ved.

In the U.S many Senators and Congressmen have met with Dr. Triguna so that they could learn about the value of Maharishi Ayur-Ved and to have Dr. Triguna take their pulse. In Canada, Dr. Triguna has visited Parliament in Ottawa, the nation's capital and met with many of the leading legislators and ministers, including the Minister of Health. Dr. Triguna has also been the principal speaker at conferences on Maharishi Ayur-Ved held at several of the most prestigious medical institutions including Harvard, Johns Hopkins and the University of California at Los Angeles.

Dr. Triguna wal also invited to be the principal speaker at a medical conference on Ayur-Ved organized by the National Institutes of Health so that he could address the leading scientists and administrators. At these meetings Dr. Triguna has offered the expert assistance of the thousands of Ayurvedic physicians who are members of the All India Ayur-Ved Congress and who are available to trained doctors and technicians in the knowledge and practice of Ayur-Ved.

In his desire to see the knowledge of Maharishi Ayur-Ved adopted by the doctors and researchers, Dr. Triguna also arranged for an extensive 110 volume library of Ayurvedic texts in English language translations including the Samhitas or Charak and Sushrut to be presented to the National Institutes of Health, the Government of Canada, and the Pan American Health Organization.

A natural outcome of all of Dr. Triguna's tireless and compassionate undertaking is that Maharishi Ayur-Ved has become a household word in North America. With his inspiration thousands of articles on Maharishi Ayur-Ved have appeared in leading newspapers and medical journals and hundreds of radio and television shows have brought this precious knowledge into every home. Maharishi Ayur-Ved has also become a focus of study at medical schools, research institutions, and at the National Cancer Institute. Hundreds of doctors have taken training in Maharishi Ayur-Ved and Maharishi Ayur-Ved Medical Centers have been established throughout the U.S and Canada with a plan inaugurated to establish 1000 more.

And now today, on this most auspicious occasion, we rejoice in this opportunity to pledge to Dr. Triguna that we will do justice to the knowledge he has given us. We congratulate him on this high honor he has received and which he so justly deserves, and we hope that he will bless us with his presence in North America again and again. We wish him the perfect health and long, long life that he graciously and untiringly is bestowing on everyone in the world as he creates a disease-free society in every nation raising life to its full dignity, Heaven on Earth.

With best wishes,

Jai Guru Dev

Neil Paterson

MAHARISHI AYUR-VEDA HEALTH CENTER
P.O. Box 282 FAIRFIELD, IOWA USA
Tele: 515-472-5866 Fax: 515-472-7379

Dear Trigunaji,

On this auspicious occasion, it is a profound joy to express to you our deepest respect, admiration, and love for all of your accomplishments towards creating perfect health for every man, woman, and child on this earth. You have become, for the entire world, the embodiment of Ayur-Veda, bringing forth simply by your presence the nectar and blessings of Ayur-Veda for everyone enjoy. It is not possible today to think about Ayur-Veda without having Raj Vaidya Brihaspati Dev triguna come to mind.

In a simple and natural way, you radiate the ideal qualities of a vaidya as exemplified by the sloka from Charaka: *Yogo vaidya gunanam*, "the most important quality of a vaidya is his unified, enlighte ed state of awareness."

Today, a great transition is taking place in the destiny of manking. His Holiness Maharishi Mahesh Yogi, has chosen a few great souls, sidhas who have the vision, power, and creativity to help create the transformation from an age of ignorance to an age of enlightenment, an age of suffering to an age of happiness, an age of disease to an age of health. Amongst these few great sidhas who are transforming the trends of time itself, Trigunaji stands supreme, working constantly and travelling to all continents to illumine the whole world with the eternal light of Vedic wisdom.

You are personally responsible not only for the restoration of Ayur-Veda to its full value in India, land of the Veda, but also for bringing this eternal knowledge of life to every nation on earth. We have been fortunate to witness many of the meetings which you have had with individuals who control much of the political power and financial wealth of their nations and of the world. And, we have seen that when these great individuals meet with Trigunaji, it is they who are honored by being in your presence. When you speak to them, they listen as if they have heard the voice of Ayur-Veda itself -- and, indeed, you are that voice.

We feel very fortunate to be able to call ourselves your students, and to call you our acharya. Your teaching is always perfect, you wisdom complete. Just by being in your presence, we have learned more than is possible in many years of study. One lesson we particularly remember. We remember the day you taught us that every patient must be treated as if they are our own mother, father, sister, or brother. And on that same day, we realized that this is the way you treat everyone with whom you come into contact. You embody that Vedic ideal of *Vasudhaika Kutumbakam*, "the world is my family".

We also remember our great fortune in observing you while you have seen thousands of patients in the U.S. No matter how many times we sit in your presence, we never fail to be amazed and awe inspired with the precision and accuracy with which you practice *nadi pariksha*. Just watching you see patients, reminds us of the vaidyas of Vedic times and confirms the authenticity of Ayur-Veda for every patient who is fortunate enough to see you. We also remember the many hundreds of patients who seemed to get better just by being in your presence and experiencing your *piyush pani,* the touch of immortality.

On this occasion, we wish that every desire and with that you have will very quickly come to pass. We know that fulfillment of this wish can only bring about great blessings for the entire world. We also wish that the greatest gift of Ayur-Veda, *Amritanam*, the nectar of immortality, be bestowed upon you, along with all of the blessings of heaven, as you bring to fruition your lifelong efforts to creat Heaven on Earth.

With all devotion and love,

Dr. Richard Averback, M.D
Dr. Stuart Rothenberg, M.D
National Medical Directors
Maharishi Ayur-Veda Association of America



AMERICAN ASSOCIATION OF AYURVEDIC MEDICINE
Post Office Box 1382, South Lancaster, Massachusetts 01561
Telephone (508) 368-7446 Telefax (508) 368-1809

February 6, 1992

FAX: 011-91-11-683-6682

TO: Dr. B. D. Triguna

FROM: Deepak Chopra, M.D.

Dear Trigunaji,

On behalf of the American Association of Ayurvedic Medicine I have the honour of congratulating you on receiving the PADMA DHUSAN.

We at the American Association of Ayurvedic Medicine look upon you as our guide, mentor and guru. I feel extremely proud that the Government of India has recognized your contribution to the health of society and the World.

With deepest respect,

Deepak Chopra, M.D.
President

महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ

महर्षि नगर - २०१ ३०४

दिनांक - १२ -१-१९९२

माननीय महोदय,

परमपूज्य महर्षि महेश योगी ने आपको महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ की प्रशासन समिती के सदस्य मनोनीत होने पर आशीर्वाद दिया है । यह सदस्यता, १२ जनवरी १९९२, महर्षि ज्ञान युग के अट्ठारवें वर्ष के प्रथम दिन से तीन वर्ष तक वैध होगी ।

मैं अनुगृहीत हूँगा ।

भवदीय

(कुलसचिव)

कुल सचिव
महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ
महर्षि नगर-201304

महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ

महर्षि नगर - २०१ ३०४

दिनांक - १२ -१-१९९२

माननीय महोदय,

परमपूज्य महर्षि महेश योगी ने आपको महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ की विद्वत परिषद के सदस्य मनोनीत होने पर आर्शीर्वाद दिया है । यह सदस्यता, १२ जनवरी १९९२, महर्षि ज्ञान युग के अट्ठारवें वर्ष के प्रथम दिन से तीन वर्ष तक वैध होगी ।

मैं अनुगृहीत हूँगा।

भवदीय

(कुलसचिव)

कुल सचिव
महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ
महर्षि नगर-201304
गाजियाबाद (उ०प्र०)

श्री त्रिगुणा कथामृतम्

लेखक महामहोयाध्याय आचार्य राम विलास शुक्लः
कुलाधिपति
महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ
महर्षि नगरम्।

यो वै सदा स्थावरजङ्गमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः ।
तस्मै नमो मे त्रिगुणेश्वराय देवाधिदेवाय महेश्वराय ॥१॥
नित्यं परोपकृतिनां भिषग्वराणां पवित्रचरितानि ।
वाचस्पतित्रिगुणानां वक्ष्ये पीयूषपाणीनाम् ॥२॥
जगन्नियन्ता प्रसमीक्ष्य भारतं महामयाभीतमनेकदुष्कृतैः ।
कञ्चिन्निजांशैरवतार्य मानवं सम्प्रेषयत्याशु रुजां निवृत्तये ॥३॥
धन्वन्तरिश्चाद्य युगे ह्यवातरत् रोगान् निहन्तुं सकलेहि भारते ।
सुधाघटं दक्षकरे मुदादधत् न्यवारयद् दारुणदुःखदानवाद् ॥४॥
यदाऽभवद् भारत धर्महानिः तदावतीर्यांशुहरिर्निजांशैः ।
कस्यापि वैद्यस्य सरूपमेत्य धर्मार्थवृद्धयै विनिहन्ति रोगान् ॥५॥
असौ धरायां त्रिगुणोहिवैद्यः साक्षाच्छिवांशैर्मनुजोऽवतीर्णः ।
रोगान् निहन्तुं सकलेहि विश्वे पीयूषपाणिर्हि वसुन्धरायाम् ॥६॥
सदैव लोके विदितोहिकर्मणा देवावतारो दुरितस्यवारणाद् ।
बाचस्पतिर्वै त्रिगुणोभिषग्वरः निवारयत्याशु च रोगदानवाद् ॥७॥
अवातरद्वै त्रिगुणोभिषग्वरः गुणाकरः सन्निजवंशभूषणः ।
धन्यः सदेशो बहुपुण्य पुष्करः यत्रावतीर्णो त्रिगुणोभिषग्वरः ॥८॥
पञ्चाननाद्वैजनकान्महेशाद् गिरेः सुताया इवमातृलक्ष्म्याः ।
वृहस्पतिर्देव इहाविरासीद् गणेशतुल्य स्त्रिगुणः सुतोऽसौ ॥९॥
धन्यः पितायस्य च वंशसागरे धन्वन्तरिर्वै त्रिगुणोह्यवातरत् ।
साम्बाहि धन्या शुभकुक्षिसागरात् जातोहियस्या स्त्रिगुणस्सुधाकरः ॥१०॥
कुशाग्रबुद्धिस्त्रिगुणो गुरूणाम् शुभाशिषा स्वल्पतमेहिकाले ।
आयुष्यशास्त्रं विविधान्यशास्त्रैः साकञ्चहस्तामलकीचकार ॥११॥
न चात्र चित्रं गुणपूर्णपात्रे शिक्षागुरूणां सफलाऽल्पकाले ।
सदा प्रसिद्धासुकवेः सदुक्तिः क्रियाहिवस्तूपहिता प्रसन्ना ॥१२॥

आयुर्विदां भारतभूषणम्बै वाचस्पतिर्वै त्रिगुणोमनस्वी ।
धन्वन्तरि लोक हिताय जातः किम्वाऽपरो वैद्यसुधासमुद्राद् ।।१३।।
यः साम्प्रतं भारत राजधानीम् स्वपुत्ररत्नैस्सह धर्मपत्न्या ।
अलङ्करोति स्वयशस्समुद्र भैषज्यरत्नैः सुखिनीकरोति ।।१४।।
यथा सुरेन्द्रस्य पुरींबृहस्पतिः शुभाशिषा सर्वसुखीकरोतिवै ।
तथा सुवैद्यस्त्रिगुणो वृहस्पतिः स्वराजधानी समलङ्करोति च ।।१५।।
सम्मानितो राष्ट्रपतेः कराम्बुजैः प्रधानमन्त्रिप्रवरैश्च सत्कृतः ।
तथा च मुख्यैः सचिवैश्चपूजितः महामनाः श्री त्रिगुणोवृहस्पतिः ।।१६।।
महासभायां किल भारतेऽस्मिन् भिषग्वराणां वहु विश्रुतानाम् ।
अध्यक्ष एकस्त्रिगुणः सुवैद्यः स्वकीर्तिचन्द्रैर्विमलीकरोति ।।१७।।
संस्थास्वनेकासु च मुख्यआस्ते शिक्षालयेष्वेकतमो वरिष्ठः ।
धर्मार्थकार्येषु च दानदक्षः चिकित्सकानां प्रथमः सपक्षः ।।१८।।
आरोग्यधामास्य परं पवित्रम् सहस्रशो रोगिजनांश्च पाति ।
आयान्ति दूरादधिका असाध्या नैरुज्यमालभ्य सुखैर्व्रजन्ति ।।१९।।
ये वै निराशा निजजीवनेषु ते वै समायान्ति निजौषधाय ।
हृष्टाश्चपुष्टाः प्रतियान्ति गेहं शुभाशिषं वैद्यवराय दत्वा ।।२०।।
आरोग्यधामेदमसाध्य रोगान् चिकित्सते भारतराजधान्याम् ।
भिषग्वरो वै त्रिगुणस्तपस्वी स्वदृष्टिपातैर्विरुजीकरोति ।।२१।।
अयं मनस्वी निजधर्मपत्न्या सहैव प्रातः शिवमर्चयित्वा ।
भैषज्यकल्पं प्रददाति नित्यं सहस्रशोनिर्धनमानवेभ्यः ।।२२।।
महाजनाश्चापि निजौषधार्थम् आयान्ति नित्यं वहुशोऽर्थदानैः ।
नीरोगमात्मानमिहामनन्तः गुणान् गृणन्तः प्रतियान्ति गेहम् ।।२३।।
वृहस्पतिर्वै त्रिगुणो रसज्ञः नाडीपरिज्ञानविधौ वरिष्ठः ।
संस्पर्शमात्रेण शरीररोगान् तत्कार्यकल्यान् क्षणतो व्रवीति ।।२४।।
नाडीगतिं साधुतया विविच्य असाध्यरोगान् विमदीकरोति ।
श्रीवैद्यराजामियमाविभूतिः आश्चर्यमम्रान् भिषजः करोति ।।२५।।
वदन्ति केचित् तपसां प्रभावम् केचिन्निजां जन्मगतां विभूतिम् ।
यद्वेष्टदेवस्य कृपां गिरन्ति नाडीविधौ वैद्यवरस्य कीर्तिम् ।।२६।।
इमं महामान्यमना महर्षिः श्री वैद्यराजं त्रिगुणं सुरर्षिम् ।
सत्कृत्य चारोग्य गृहे स्वकार्ये संस्थापयामास महोच्चपीठे ।।२७।।

श्री वैद्यराजस्य महाकृपातः श्री वेदविज्ञानगताः समस्ताः ।
छात्राः श्रुतीनां निधिमाप्नुवन्तः स्वस्थाश्च जीवन्ति यशो गिरन्तः ।।२८।।
श्री वैद्यराजस्त्रिगुणोव्यराजद् अमेरिकाया बहु राजधान्यां ।
विजित्य रोगानसुरस्वभावान् लङ्कानगर्यामिव रामचन्द्रः ।।२६।।
वैदेशिकानां नगरेषु नित्यं भ्रमन् स्वयानेन रुजां निहन्तुम् ।
अन्विष्य रोगानसुराननेकान् निहत्यरेजे हनुमानिवायम् ।।३०।।
कोनाम जानाति न चास्य कीर्त्तिम् देशे विदेशेऽपि च वैद्यराजः ।
गुणोहि सर्वत्रपदं निधत्ते स्ववैरिणाम् वा सुहृदाञ्च गेहे ।।३१।।
ब्राजीलदेशस्य च राजधान्याः स्वास्थ्यस्य मन्त्रिप्रवरैः सदस्यैः ।
सुसत्कृतोवैद्यवरः किलायम् नाडीविधिश्चास्य प्रशंशयद्भिः ।।३२।।
सुरेन्द्रवैद्यः किमुताश्विनेयः धन्वन्तरिर्वा भिषजां निधीशः ।
वृहस्पतिर्वै त्रिगुणोरसज्ञः निहन्ति रोगान् परितः प्रवृद्धान् ।।३३।।
शरीरदोषप्रणधींस्त्रिदोषान् विविच्य नाडीविधिना प्रकुप्तान् ।
अति प्रगुप्तानपि चौरकल्पान् भैषज्यदानैः स्ववशीकरोति ।।३४।।
वैद्याधिराजस्त्रिगुणो विपिश्चिद् देशेविदेशे हि समप्रवृत्तिः ।
रोगातुराणां कमलाकराणाम् इवोदितः किं ह्यपरोदिनेशः ।।३५।।
सर्वेजना बहुगुणं त्रिगुणं प्रवक्तुम् इच्छन्ति तस्य बहुभिर्गुणकर्मवृन्दैः ।
नामापि लोकविदितं भवतीह नित्यम् सर्वस्य गौरवगुणप्रभुतानुसारम् ।।३६।।
बहून् विदेशान् परितः परिभ्रमन् रसायनैर्लोकहितं समर्जयन् ।
वेदोपवेदस्ययशो विवर्धयन् वृहस्पतिर्वै त्रिगुणोविराजते ।।३७।।
त्रिभि र्गुणैर्यो जयति त्रिदोषान् रजस्तमः सत्वमयैर्वलिष्ठान् ।
अन्तःस्थितान् मानवदेहभाजाम् वृहस्पतिर्देव उदारचित्तः ।।३८।।
आयुर्वेदं दीर्घकालप्रसुप्तम् अर्वाचीनैर्भेषजैः कल्प्यमानैः ।
नित्याकृष्टैर्मानवैस्त्यज्यमानम् देशे देशे वोधयन् वै व्यराजत् ।।३९।।
आयुर्वेदः सर्व लोकोपकारी प्राचीनानां वैद्यराजां विभूतिः ।
कालोपेक्ष्यः साम्प्रतं दुःखवार्ता कल्याणार्थं रक्षणीयः सुवैद्यैः ।।४०।।
आयुर्वेदो बहुविधगुणो वेदमध्यात् प्रभूतो देवाराध्यः प्रभुरिवमहासाध्यरोगान् निहन्ता ।
तस्योद्धारे कृतदृढमतिः श्रीमहर्षिमहेशः विश्वेख्यातं सुमतित्रिगुणंवैद्यराजं ददर्श ।।४१।।
वृहस्पतिर्वैत्रिगुणो बहुज्ञ आयुर्विदां दीनदशाञ्च शोचन् ।
चिरप्रसुप्तप्रचुरौषधीनाम् विवोधनं कर्तुमनाः प्रतस्थे ।।४२।।

देशान् विदेशान् सरसै रसायनैः निरामयान् वै विदधे सुखप्रदैः ।
श्रद्धां जनानां चिरसुप्तमानसे संस्थापयामास प्रदत्तभेषजें ।।४३।।
एवं प्रयासाः शतशोवृहस्पतेः साफल्यमापुर्जनताजनार्दने ।
वेदोपवेदस्य हितप्रदौषधम् सिसेविरे वै त्रिगुणप्रभावतः ।।४४।।
श्री मद्वृहस्पतिसुकीर्तिलताहिदिक्षु नूला सदा कुसुमिता जगतीं समस्ताम् ।
आयुर्विवर्धनकरी सुखशान्तिपूर्णा आरोग्यमाशु दधती सुरभिं करोति ।।४५।।
अस्मिन् समस्तभुवने त्रिगुणायशःश्रीः विश्वप्रशान्तिममितां वितनोति लोकम् ।
आबालवृद्धवनिताः सुशान्तिपूर्णाः गायन्ति वै बहुगुणं ननु कीर्ति गानम् ।।४६।।
रोगातुराः समवबुध्य निशावसाने श्रीमन् हरेरिव सुनाम तवस्मरन्ति ।
आगच्छदेव परिपाहि जनान् प्रपन्नान् रोगासुरा इह च नः परितापयन्ते ।।४७।।
श्रीमान् वृहस्पतिरयं खलुदेवरूपः रुग्णार्तिहा करुणया परितप्तचित्तः ।
वज्राङ्कुरैरिव रसायनशस्त्रपातैः रोगासुरांश्चविनिहन्ति दयालुरेकः ।।४८।।
एतादृशा जगति वै त्रिगुणेन तुल्या वैद्या न सन्ति विनिहन्ति समस्तदोषान् ।
प्रायो भवन्ति जगतां हित कारिणो ये ते दुर्लभाश्च विहिता विधिना किमर्थम् ।।४९।।
मन्ये दयामयतनुस्त्रिगुणो हि वैद्यः यः स्वार्थभावमखिलं परिहाय नित्यम् ।
दीनातुरांश्च मनुजान् परिपात्यसंख्यान् नृणामयं हि करुणावरुणालयोऽयम् ।।५०।।
एतादृशा जगति केऽपि सुरावताराः दुःखानि हन्तुमनसो भुवने भवन्ति ।
कारुण्यतप्तहृदयादययाऽर्द्रभावाः रक्षन्ति मानवगणान् ननु पूर्णकामाः ।।५१।।
श्रीमद् वृहस्पतिसुतोऽपि पितुः समानः आयुर्विदां परमश्रेष्ठतमो महात्मा ।
पीयूषपाणिरमलो भिषजां वरिष्ठः सञ्जायते कमलतः कमलं सदाहि ।।५२।।
पत्नी च धर्मनिरता हि वृहस्पतेर्वै सायञ्चप्रात रमले हरिनाम्निमग्ना ।
पत्यानुराग विमला भजनेषु लग्ना उक्तश्च केन गृहिणी गृहमेव सत्यम् ।।५३।।
एतादृशान् हि गृहिणो विरलान् धरायाम् भाग्येनयच्छतिविधि र्निजकर्मवश्यः ।
भक्ताहिकर्मविधिमप्यवहाय लोके राजन्ति भक्तिनिरताविरताः सुखादौ ।।५४।।
तीर्थं नवीनं त्रिगुणस्यगेहम् रोगैनसः स्वं च विमोक्तुकामाः ।
जनाः प्रपन्ना इह यान्ति नित्यम् न चाति दूरे किल राजधान्याम् ।।५५।।
स्वान्तः सुखायैव मया हि वर्णितः वृहस्पतिर्देव इवात्र पूजितः ।
महात्मनः पुण्यकथाऽनुवर्णनम् निहन्ति पापञ्च पुराकृतं वै ।।५६।।

सम्पूर्ण राष्ट्रे आयुर्वेद-शास्त्र-चिकित्साप्रवीणाय विद्वन्मूर्धन्याय आचार्य वृहस्पतिदेव त्रिगुणा महाभागाय सादरमभिनन्दनदलमिदम्

सत्वं रज स्तमश्चेति गुणाः प्रोक्ताः मनीषिभिः ।
तान् गुणांश्च गृहीत्वा किं **'त्रिगुणा'** जायते बुधः ।।१।।

वात पित्त कफाः प्रोक्ताः, त्रयो दोषाः शरीरिणः ।
निग्रहार्थं हि किं तेषां **'विधात्रा त्रिगुणा'** कृतः ।।२।।

वेदेषु पञ्चमोवेदः **"आयुर्वेदः"** इति स्मृतः ।
देवो वृहस्पतिः किं स्वित् स्वयं जातो **'वृहस्पतिः'** ।।३।।

विद्यया वपुषा वाचा नरः प्राप्नोति मान्यताम् ।
त्रिभिरेतैः समाश्लिष्टैः ब्रह्मणा **'त्रिगुणा'** **कृतः** ।।४।।

कल्याणं भवतात् सुखं विलसतात् राष्ट्रे चिरं सद्गुणैः ।
मूर्धन्येन विपश्चिता हि भवता रक्षा विधेया सदा ।
शास्त्रीया प्रक्रिया यथा न विलयं यायात् तथा कुर्वताम्, ।।५।।

आचार्यस्त्रिगुणा वृहस्पति सभो देवो मुदा वर्धताम् ।।

मधुबनी
२२.६.१९८७

सादरं समर्पयति
द्वितीयायुर्वेद स्वास्थ्य शिविर
मधुबनी -परिवारः

सम्मान्यस्याभिनन्दनम्

असंख्यगुणयुतोऽपि त्रिगुणैवमन्यतेस्वम् ।
त्रिगुणेश्वैरैकनिष्ठं वन्दे देवम् वृहस्पतिम् ।।

आदरणीय श्री त्रिगुणा जी के अभिनन्दन का इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का निर्णय सराहनीय है। इससे श्री त्रिगुणा जी की गरिमा में तो उतनी ही वृद्धि होगी जितनी सागर के जल में एक कलश जल समर्पित करने से होती है या दीपक के प्रकाश से सविता की ज्योति में होती है। यह सब कुछ जानते हुए भी भक्तजन निज भावना का सश्रद्ध प्रदर्शन तो करते ही हैं।

वैसे श्री बृहस्पतिदेवजी कोटि-कोटि गुणों से भरपूर होते हुए भी स्वयं को त्रिगुणा ही लिखते हैं। यह इनकी विशालता का ही द्योतक है। स्वयं को त्रिगुणात्मक समस्त सृष्टि का एक नगण्य कणमात्र मानते हैं। स्तुति के मोहजाल से नितान्त असम्पृक्त है आप का अन्तस्तल।

"उपकार प्रधानः स्यात् अपकार परेप्यरौ ।।"

के प्रशस्त उदाहरण हैं। एक सच्चिकित्सक के चरित्र की यही पहचान है। मैं आपका हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ तथा प्रभु से आपके दीर्घायुष्य के लिए हार्दिक प्रार्थना करता हूँ।

मदन मोहन पाठक
२५/२१-ए
चन्ढीगढ़

"आचार्यः सर्व चेष्टासु लोक एव हि धीमतः ।
अनुकुर्यात्तमेवातो लौकिकेऽर्थे परीक्षकः ।।"
"वाग्भट"

आयुर्वेद विश्वध्वज फहरे । त्रिगुणा नित पावें सम्मान ।।

वैद्य श्री रुद्रप्रताप त्रिपाठी
महर्षि आयुर्वेद विभाग
महर्षि नगर (गाजियाबाद)

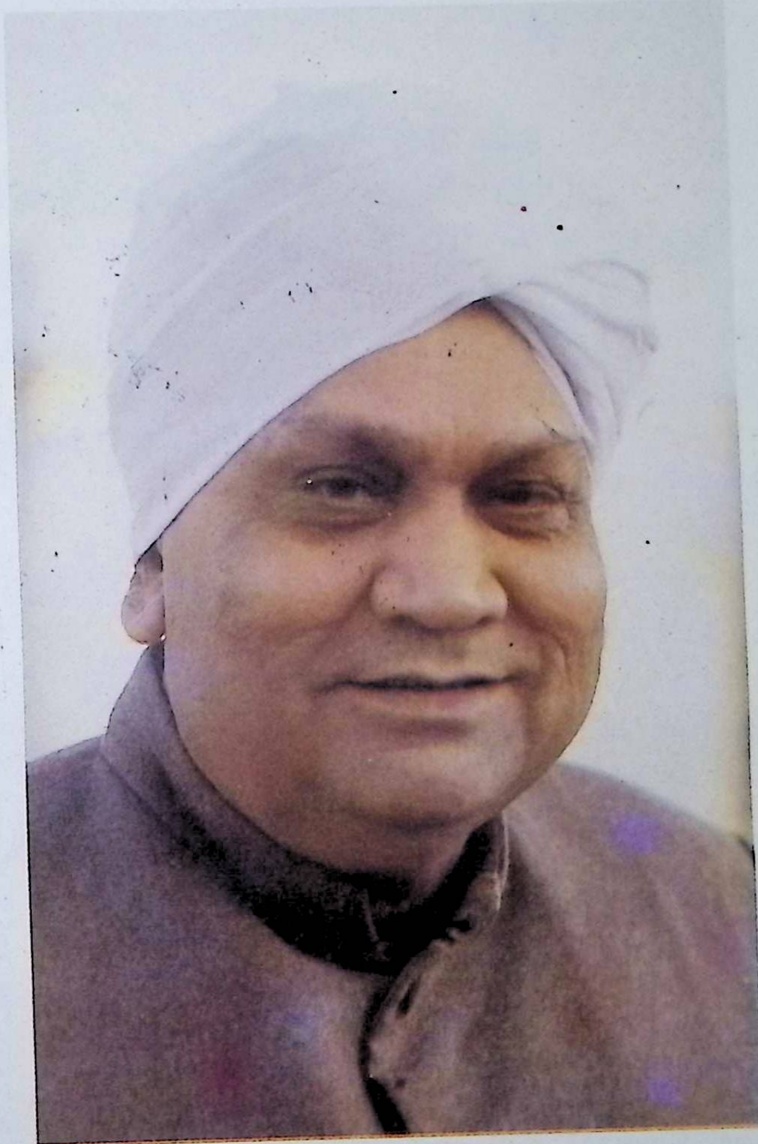
कृत्रिम-स्वास्थ्य-तमाडम्बर से चिन्तित था जब विश्व सभी ।
नए-नए आविष्कारों से औषधियों की बाढ़ तभी ।।
सूची वेध मद्य द्रव्यों से आहत था संसार पड़ा ।
स्वार्थ और आडम्बर से कृश, मानव था बेहाल खड़ा ।।
द्रव्य दौड़ में द्रव्य वान् ही, क्षणिक शान्ति पा जाता था ।
अर्थ-हीन मानव रो-रोकर दिल मसोस रह जाता था ।।
भारत की आदर्श संस्कृति वेद और गुरु ज्ञान सभी ।
हो रहे प्रसुप्त घोर निद्रा से जिनका था वर्चस्व कभी ।।
जब-जब जग में ऐसे संकट घटा टोप बन जाते थे ।
तब-तब प्रेरित परंब्रह्म से प्रभू भूतल पर आते थे ।।
भावातीत ध्यान का माध्यम बन, महर्षि ने जन्म लिया ।
सभी मानसिक रोगों को हर लेने का संकल्प किया ।।
सभी मानसिक रोगों के अन्तर्तम का हर तार छुआ ।
हुए मानसिक रोगों से जब मुक्त, सृष्टि को त्रास हुथा ।।
भावातीत-ध्यान, श्रुति, स्मृति का संचार किया जब से ।
विश्व, तनाव मुक्ति का पथ निष्कण्टक पाया था तब से ।।
कायिक-रोग दोष हर कर हर, पैथी राहत देती है ।
एक रोग हर किन्तु दूसरे को हठ आसन देती है ।।
इस महान सङ्कट से जग था जब "किं कर्तव्य विमूढ" पड़ा ।
तब महर्षि-सहयोगी बन कर त्रिगुण रूप मिल गया खड़ा ।।
आयुर्वेद-वेद पद्धति का करने पुनरुत्थान यहाँ, ।
धन्य हुआ यह भारत जबसे दित बृहस्पति देव जहाँ ।।
आयुर्वेद-शुद्ध भेषज का हुआ जगत में पुनरुत्थान ।
और निरोग शान्ति सुख पाकर पाया आयुर्वेदिक ज्ञान ।।
तभी राष्ट्रपति जी के द्वारा त्रिगुणा ने पाया सम्मान ।
पद्म विभूषण गरिमामय पद से गौरवान्वित हुए महान् ।।
अभिनन्दन है उन्हें हमारा दिन दूना पावें सम्मान ।
आयुर्वेद-विश्व-ध्वज फहरे नित भारत का हो उत्थान ।।

सौजन्य प्रतिमूर्ति श्री त्रिगुणा जी का जीवनवृत्त

लेखक कविराज गौरी लाल चानना
वैद्यबाचस्पति

जन्म एवं कुल-परिचय

पूर्वी पंजाब का जालन्धर जिला जिसे दुआबा भी कहते हैं तदंतर्गत तहसील फिल्लौर के एक प्रसिद्ध ग्राम बड़ा पिण्ड में विक्रमी सम्वत् १९७७ मिथुनार्कगत ८ तदनुसार २१ जून सन् १९२० सोमवार सायंकाल इष्ट घ. २८-५८ वृश्चिक लग्न में सिंहराशि एवं नवम स्थान में कर्क के गुरु से सिंह राशि स्थित चंद्रमा तथा नवम स्थान के कर्क के गुरु से युक्त समय में जन्म हुआ। त्रिगुणायत वंशी ब्राह्मणों की चार ग्रामों की एक पीठ जिसमें छोटा रुड़का, फुलपोता, धुलेता तथा बड़ापिण्ड, जिसका पुराना नाम कुलेटा था तथा एक और पीठ त्रिगुणायत ब्रह्मणों की पंजाब के होशियारपुर जिला में बाड़ियां नाम से प्रसिद्ध है। जन्म ग्राम बड़ापिण्ड में लगभग एक सौ पचास परिवार त्रिगुणायत वंशी एवं अन्य ब्राह्मण परिवार यथा भारद्वाज, श्रीधर, कोरपाल, रणदेव, जोशी आदि परिवार भी हैं। त्रिगुणा जी की वंशावली कई सौ साल की उपलब्ध है। इनके पूर्वज राजस्थान के अलवर जिला के मुबारकपुर तहसील में धनेटा तथा कोटा ग्रामों से पंजाब में आकर बस गये थे। आज भी यह दोनों ग्राम अलवर जिला में है। त्रिगुणायत ब्राह्मणों का ऋषि गोत्र जाम्भव है। इनके कुल देवता अलवर जिला में इसी नाम से है। वहां इनके चूहड़ सिद्ध के नाम से कई प्रतिष्ठित स्थान तथा सरोवर हैं। जो प्रथायें वहां पहले प्रचलित थीं वही प्रथाएं पंजाब में अब भी प्रचलित हैं। पंजाब में बड़ापिण्ड ग्राम में चूहड़बाबा के नाम से प्रसिद्ध एवं रमणीक पूजा स्थान है। राजस्थान की प्रथा के अनुसार महासती का पूजन त्रिगुणायत वंशी करते हैं। दादी महासती के नाम से मंदिर बाबाचूहड़ के ही उसी प्रांगण में बना हुआ है। बड़ापिण्ड ग्राम में त्रिगुणायत वंश के चार पारिवारिक समूह हैं। एक का नाम पाधे (उपाध्याय) दूसरे का नाम भगत तीसरे का नाम पटवारी चौथे डंडे हैं। उपाध्याय ग्रुप में वर्तमान संतति से आठवीं पीढ़ी पूर्व पं. वानीराम हुए जिनके पुत्र पं. भोलाराम जी एवं उनके पुत्र पं. तुलसीराम जी अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान् एवं सम्पन्न व्यक्ति थे। पं. तुलसीराम जी के पुत्र पं. चम्बाराम जी इनके पुत्र स्वनामधन्य पं. चानन राम जी का जन्म विक्रम सं. १९४५ का था। श्री पं. चानन राम जी के पांच पुत्र तथा दो कन्याओं का जन्म हुआ। बड़े पुत्र पं. रामनाथ जी उनके अनुज पं. धनीराम जी पुनः केशरी देवी उनके बाद श्री बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी का जन्म हुआ। उनसे एक छोटी बहिन जानकी देबी उनसे छोटे पं. लाजराम शर्मा तथा सबसे छोटे मास्टर हेमराज जी हैं। यह सभी परिवार इस समय संपन्न एवं यशस्वी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। त्रिगुणा जी की संतान गीता देवी, सीता देवी, संयुक्ता देवी तीन कन्याएं इन कन्याओं के बाद श्री नरेन्द्र कुमार तथा उनसे छोटे श्री देवेन्द्र कुमार दो पुत्रों के जन्म के बाद छठी संतान एक कन्या जिसका नाम विनोद देवी है। त्रिगुणा जी की दादी जी का नाम



हरति तावदशेष रुजाकरम्
पुरुषरत्नमलङ्करणं भुवः ।
इहवृहस्पतिदेव भिषग्वरः
जनगणैस्त्रिगुणः परिकीर्तितः ॥

श्रीमती द्रौपदी देवी तथा पूज्यामाता जी का नाम श्रीमती लक्ष्मी देवी तथा धर्मपत्नी का नाम श्रीमती सोहन देवी है। वैद्य जी की माता श्रीमती लक्ष्मी देवी सबसे छोटे बेटे हेमराज जी के जन्म के दो वर्ष बाद अचानक स्वर्ग सिधार गई थीं। तब दादी जी को ही पूरे परिवार की देखभाल करनी पड़ी।

वैद्य जी के पिता जी दूरदर्शी एवं कर्मयोगी पुरुष थे उन्होने अपनी सन्तान को सुयोग्य बनाने का संकल्प किया। तत्कालीन ग्रामीण जनता में पढ़ाई का कम रिवाज था। गांव का स्कूल केवल मिडल था। उस समय मध्यम वर्गीय परिवार होते हुए भी कठिन परिश्रम से धनोपार्जन करके बड़े शहरों मे भेजकर बोर्डिंग हाउस तथा होस्टल में रहने के प्रबंध के काफी खर्चीले होते हुए भी अपने पुत्रों को उच्च शिक्षा दिलवायी। पिता जी ने त्रिगुणा जी को गांवों के मिडल शिक्षा के बाद संस्कृत पढ़ाने का निर्णय लिया। कारण यह कि पड़ोसी ग्रामों में उनकी पण्डितायी तथा उपाध्यायी रूप में मान्यता थी। दूसरी उनकी यह धारणा थी कि वंश परम्परा बनी रहे, तब निकट के अप्परा ग्राम में पं. श्री लभ्भूराम हकीम द्वारा स्थापित संस्कृत पाठशाला में प्रवेश करा दिया गया। त्रिगुणा जी ने केवल आठ मास के पठनकाल में ही पंजाब यूनीवर्सिटी की प्राज्ञ परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। तदनन्तर संस्कृत का विशारद का कोर्स भी दो वर्ष की अवधि में पूरा कर लिया। इसी काल में पिता जी से ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान मिलता रहा तथा कर्मकाण्ड में रुचि होने से यज्ञ, अनुष्ठान, शतचण्डी आदि अनुष्ठान तथा विवाह आदि अन्य नित्योपयोगी गृहस्थ जीवन के शुभ पूजनों के विधान का अभ्यास भी होता रहा, मुहूर्त जन्म कुण्डली आदि का यथेष्ट ज्ञान मिलता रहा। श्री त्रिगुणा जी के फूफा जी जो औड़ नामक ग्राम, तहसील नवाँशहर में अपने क्षेत्र के प्रसिद्ध वैद्य थे उन्होंने पिता जी को परामर्श दिया कि बृहस्पति देव को आयुर्वेद पढ़ाया जाय, जो ज्योतिष कर्मकाण्ड के साथ अधिक उपयोगी रहेगा और वंश परम्परा में चली आ रही आयुर्वेद चिकित्सा का भी प्रचलन बना रहेगा। पिता जी के कुछ ग्रन्थ अभी भी जीर्णावस्था में सुरक्षित हैं, जिनमें शार्ङ्गधर, अमृत सागर, सुश्रुत तथा वाग्भट सूत्रस्थान तथा कुछ हस्तलिखित जीर्ण पन्ने अभी पड़े हैं। फूफा वैद्यराज लाहौरी राम जी लुधियाना में ब्राह्मण सभा द्वारा संचालित आयुर्वेद विद्यालय के स्नातक थे, जो लुधियाना के प्रतिष्ठित यशस्वी राजवैद्य पं. गोक़ुलचन्द्र के पूज्य पिता द्वारा स्थापित किया गया था। यह आयुर्वेद विद्यालय जालंधर तथा लुधियाना जिले में अनेकों विद्यार्थियों को आयुर्वेद भूषण तथा वैद्यराज की उपाधि देकर कुशल सिद्धहस्त प्राणाभिसर वैद्य बना चुका था, तब त्रिगुणा जी को इसमें आयुर्वेद अध्ययन के लिए प्रवेश कराया गया।

प्रधानाध्यापक राजवैद्य पं. गोकुलचन्द्र जी की छत्रछाया में ही विद्यालय को उच्चस्तर प्राप्त था, तथा वैद्यराज पं. चन्द्रशेखर शास्त्री तथा आचार्य वैद्यराज सुदामाराम, वैद्यराज कृष्ण दत्त तथा अन्य विद्वान् आचार्य वर्गीय वैद्यों का गुरु शिष्य परम्परा के अनुसार आयुर्वेदाभ्यास होता रहा, आचार्य राजवैद्य पं. गोकुलचन्द्र जी के निजी चिकित्सालय में प्रतिदिन तीन सौ की संख्या से अधिक रोगी लाभ उठाते थे। इसी कारण औषध निर्माण की इनकी अपनी प्रयोगशाला में रस, भस्म, कूपीपक्व, अवलेह, घृत, तैल, वटी, चूर्ण अन्यान्य लेप आदि का प्रचुर मात्रा में निर्माण होता था। अतः त्रिगुणा जी को औषध निर्माण का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ तथा गुरु जी की उपस्थिति में रोगी

परीक्षण का अभ्यास होता रहा, नाड़ी परीक्षा का ज्ञान वहीं से ही बहुत अंशो में प्राप्त हुआ । पं. गोकुलचन्द्र जी दिल्ली में स्थित बनवारी लाल आयुर्वेद विद्यालय के भी स्नातक रहे थे, जिसके प्रधान आचार्य वर स्वनाम धन्य चिरंजीवी राजवैद्य पं. मनोहर लाल जी थे जिन्होंने १०५ वर्ष की आयु में स्वर्गारोहण किया । वे अपने समय के दिल्ली वैद्य समाज के शिरोमणि एवं गुरु पदासीन सौम्यवृत्ति कंण्ठस्थसम्पूर्ण अग्निवेश संहिता तथा सदैव प्रसन्न कोमलचित्त, मृदुभाषी देववाणी के प्रकांड पंडित पीयूषपाणि साक्षात् भगवान् पुनर्वसु रूप थे ।

लुधियाना से गुरुजी की आज्ञा के अनुसार बनवारी लाल विद्यालय में प्रवेश के लिए एक सहपाठी राम गोपाल जी लोंगोवाल जिला-संगरूर (पंजाब) के निवासी के साथ वृहस्पतिदेव जी दिल्ली आ गये । शिक्षा आरम्भ हुई । गुरुदेव शंकर देव की कृपा से द्रव्यगुण तथा अन्य ग्रन्थों का पुनर्पठन चलने लगा, चरक संहिता बड़े गुरु जी से अध्ययन करते थे । बड़े गुरु जी राजवैद्य पं. मनोहर लाल जी अपने चारों ओर अलग-अलग श्रेणियों के विद्यार्थियों को बैठाकर बिना संहिता देखे पढ़ाया करते थे । यह उनकी एक विशेषता थी । क्योंकि अग्निवेश संहिता, सुश्रुत, वाग्भट आदि उन्हें कण्ठस्थ थे । उनके मुखारविन्द से संहितायें बड़ी स्फुटित तथा सुशोभित उपस्थित होती थी । छात्र त्रिगुणा जी केवल ६-१० महीने के अध्ययन काल में वैद्य विशारद दोनों खंडो की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए । यहां औषधि निर्माण नहीं होता था तथा दैनिक चिकित्सा के लिए श्याम सुन्दर धर्मार्थ औषधालय नियत था जो इसी आयुर्वेद विद्यालय का एक अंग था । जिसमें वैद्य सत्यव्रत जी चिकित्सक का कार्य संभालते थे । रोगियों की संख्या अधिक नहीं थी, इन कुछ विशेष परिस्थितियों को देखकर त्रिगुणा जी का मन नहीं लगा । तब गुरुदेव राजवैद्य पं. गोकुलचन्द्र जी से आज्ञा लेकर लुधियाना में उच्च ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की । उनकी स्वीकृति मिलने पर पुनः लुधियाना में वृहत्त्रयी से इतर संहिताओं का अवलोकन एवं स्वाध्याय तथा कर्माभ्यास में अधिक उपलब्धियां मिलीं । दिल्ली में अध्ययन काल में बड़े भाई रामनाथ जी, जो इन दिनों दिल्ली में ही निवास करते थे, उनका विशेष सहयोग प्राप्त रहा ।

चिकित्सा कार्य आरम्भ एवं गृहस्थ जीवन

विद्याध्ययन के पश्चात् आप जन्म ग्राम बड़ापिण्ड में चिकित्सा कार्य आरम्भ करने की तैयारी में लगे । निवास स्थान के पास काफी जगह थी जिसमें औषध निर्माण के लिए भट्टियों आदि का निर्माण तथा आसवों के निर्माण का कक्ष व चूर्ण वटिका के लिए खरल आदि के प्रबंध किये गये । औषध निर्माण के लिए दो कार्यकर्ता चूर्ण आदि के कूटने के लिए एवं निकटवर्ती शहर फगवाड़ा से कांच की शीशियाँ एवं औषध निर्माण हेतु पात्रादि का शुभ प्रबंध होते ही बाजार में अपनी एक दुकान, जिसमें पिता जी बैठते थे उसके सामने एक और दुकान किराये पर ले ली गयी उसको सुसज्जित किया गया । पिता जी को एवं अन्य निकटवर्ती सजातीय एवं कुटुम्ब के लोगों को इस औषधालय के खोलने का बड़ा चाव था । कार्यारम्भ का मुहूर्त देखकर विधिवत् पूजनादि करके कार्य आरम्भ किया गया । औषधालय के उद्घाटन के समय काफी जन समूह जिसमें अपने सजातीय लोग तथा गांवों के गणमान्य व्यक्ति सरपंच, नम्बरदार, मंदिरों के पुजारी, गुरुद्वारों के ग्रन्थी एवं मुसलमानों के अग्रणी लोग एवं आस पास के देहात के लोगों की उपस्थिति बड़ी ही

उत्साह वर्धक थी। पिता जी अपने क्षेत्र में यशस्वी एवं साधन सम्पन्न माने जाते थे। उनके यश एवं सद्व्यवहार से चिकित्सा क्षेत्र में दिन प्रतिदिन उन्नति एवं प्रसिद्धियाँ मिलती गयीं। थोड़े ही दिनों में पूरे क्षेत्र से रोगी आने लगे, तभी पिता जी की विशेष हार्दिक इच्छा त्रिगुणा जी के विवाह के लिए जाग्रत हुई। उनके मन का भाव बनते ही विवाह के लिए लोगों से पूछताछ शुरू हो गयी। कुण्डली मिलान आदि के होते ही अपनी ही तहसील फिलौर के अन्तर्गत प्रतापपुरा ग्राम निवासी पं. धनीराम जी जो कि अपने क्षेत्र में अच्छे साधन सम्पन्न एवं जमींदार थे बड़ा परिवार तथा सात्विक विचारों से युक्त सम्बन्धियों वाले स्वयं भजनानन्दी थे। इनके चार पुत्र तथा दो बेटियाँ, जिनमें से छोटी बेटी जिसका पिता के घर का नाम सरस्वती था, के साथ सम्बंध निश्चित हुआ और कुछ ही दिनों में विवाह सम्पन्न हुआ। इस शुभ मुहूर्त कार्य में वैद्य जी की दादी जी जिसने बड़े कठिन परिश्रम से पौत्र-पौत्रियों का लालन पालन किया था, को विशेष सान्त्वना प्राप्त हुई और उन्हें अपनी सुशील एवं दक्ष पौत्रवधू से गृहस्थ कार्यों में बहुत सहयोग मिला।

दिल्ली प्रस्थान की पृष्ठ भूमि

श्री त्रिगुणा जी की विद्यार्थी अवस्था से ही देश में हो रहे स्वतन्त्रता संग्राम में रुचि एवं लगन थी। चिकित्सा कार्य के साथ-साथ जैसे-२ जन सम्पर्क बढ़ता गया, वैसे ही देश सेवा के निमित्त गतिविधियाँ बढती गयीं, जिससे क्षेत्रीय जनता के मध्य त्रिगुणा जी का एक आदरणीय एवं अग्रणी स्थान बनता चला गया। पिता जी का अपना निजी व्यवसाय देशी खाण्ड निर्माण के कुटीर उद्योग का था। तथा सरकारी रजिस्ट्री कागजों के प्रमुख विक्रेता भी थे।कुछ खेती योग्य थोड़ी जमीन भी थी। इन सब कार्यो में युवक त्रिगुणा जी पिता जी के साथ सहयोग भी करते थे कुछ दिनों बाद अपने कुटुम्ब के भाई पं. कृष्णदत्त जी के साथ कपड़े का व्यवसाय उन्हीं की देखरेख में शुरू करवा दिया। इसी काल में देश के नेताओं द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति की घोषणा हुई पंजाब प्रान्त का विभाजन हुआ, पश्चिमी पंजाब से हिन्दू इधर पूर्वी पंजाब में आने लगे, उनके पुनर्वास के लिए त्रिगुणा जी का सहयोग दूसरे कार्यकताओं को प्राप्त होने लगा, चिकित्सा कार्य में समय कम दिया जाने लगा, सामाजिक कार्यों की ओर संलग्नता ज्यादा हो गयी। उस हिन्दू मुस्लिम स्थानान्तरण में बहुत विनाश कारी दुर्घटनायें हुईं। श्री त्रिगुणा जी उन दिनों स्वास्थ्य की दृष्टि से अपने क्षेत्र के बलवान् युवकों में माने जाते थे, ६ फुट लम्बा शरीर एवं सौ किलोग्राम से अधिक भार सिंह स्कन्ध बड़ा दर्शनीय एवं प्रभावी था। कुछ लोग त्रिगुणा जी की बढ़ती हुई धन सम्पत्ति, यश एवं सामाजिक सेवाओं से उपलब्ध कीर्तियों को देखकर ईर्ष्या करने लगे। उन्हीं दिनों दूर पड़ोस में दैवयोग से एक दो ब्राह्मण युवकों को मार दिया गया, जिससे पिता जी त्रिगुणा जी की बढ़ती हुई सामाजिक गतिविधियों तथा क्षेत्र में हुई इन दुर्घटनाओं से चिन्तित हो गये। उन्होंने अपने मन में इन्हें दिल्ली भेजने का निश्चय किया और मथुरा, वृन्दावन की यात्रा के बहाने परिवार सहित भेज दिया। यात्रा से वापसी दिल्ली आने पर बड़े भाई पं. रामनाथ जी के द्वारा यह संदेश मिला कि अभी आपको कुछ दिनों देहली में ही रहना होगा, इस आदेश का पालन वैद्य जी के लिए कठिन एवं दुविधा जनक था। उन दिनों बाकी भाई भी यहीं दिल्ली में ही थे, सबके कहने एवं समझाने पर यह स्वीकार करना पड़ा कि भोगल (जंगपुरा) में एक नया औषधालय जैन समाज की ओर से खुल रहा है,

जिसमें एक वैद्य की आवश्यकता है। बड़े भाई पं. रामनाथ जी जैन समाज के सेक्रेट्री से पहले ही बात कर चुके थे, वेतन भी तय हो चुका था, दो दिन के बाद औषधालय का उद्घाटन हुआ और उसमें, मुख्य चिकित्सक के रूप में नियुक्ति हुई, चिकित्सा कार्यारम्भ हुआ। दैव इच्छा से चार दिन बाद ही प्रबन्धकों से मतभेद होने के कारण कार्य मुक्ति हो गयी। भला स्वतंत्र वृत्ति का स्वाभिमानी जन-धन-बल से सम्पन्न व्यक्ति किसी के बंधन में कैसे पड़ सकता है।

दिल्ली में स्वतंन्त्र चिकित्सा कार्य का श्रीगणेश

भाई साहब दुखी एवं नाराज भी थे पर कुछ कहा नहीं, पहले पंजाब छूटा फिर नौकरी गयी यह सब उन्हें अभिशाप दिखायी दे रहा था। पर यही अभिशाप कालान्तर में वरदान सिद्ध हुआ। तब त्रिगुणा जी ने उनके मन के भाव को भापकर उनसे प्रार्थना की कि आप इसी भोगल में और भोगल रोड पर ही कोई स्थान (दुकान) किराये पर देख लें मैं अपना स्वयं चिकित्सा कार्य आरम्भ करूंगा। आप विश्वास रखिये आपके लिए कोई अपमान जनक स्थिति नहीं आने दूंगा। दूसरे ही दिन इसी बाजार में एक दुकान १७ रुपये मासिक किराये पर ली गयी और बड़ी शीघ्रता से इसको सुसज्जित किया गया। जन्म गाँव से कोई घर में पड़ी हुई औषधियां नहीं मगायी गयीं ताकि किसी को मालूम न पड़े कि दिल्ली में कार्य आरम्भ किया जा रहा है। बहुत थोड़े से समय में थोड़ी ही औषधियों के संचय से शुभ मुर्हुत देखकर ६ अक्टूबर १९५० को औषधालय का शुभ मुहूर्त देखकर चिकित्सा कार्य आरम्भ हुआ। त्रिगुणा जी को पूरा भरोसा था, चार दिन वह जैन औषधालय में काम करके कुछ रोगियों को लाभ पहुंचा कर भोगल बस्ती की जनता पर एक अच्छे वैद्य की छाप लगाकर अपना कार्य आरम्भ कर रहे थे। औषधालय उद्घाटन के समय शहर के लोग तथा अपने सम्बन्धी भाई एवं मित्र एकत्रित थे, उस समय की एक घटना उल्लेखनीय है त्रिगुणा जी के बड़े भाई पं. धनीराम जी ने कहा कि तुम ग्राम वासियों के वैद्य हो, शहर में आकर चिकित्सा कार्य आरम्भ कर रहे हो, त्याग रूपी तप से ही अच्छी सफलता ले पाओगे, तब अपने दोष का त्याग करो तभी सफल हो पाओगे। त्रिगुणा जी ने कहा हर आदमी अपने आपको निर्दोष मानता है भले ही दूषित क्यों न हो दूसरे लोग अन्य लोगों के गुण दोषों को जानना, उनकी परीक्षा करना, उनसे लाभ उठाना जानते है एवं उनकी निन्दा करते हैं, परन्तु आप मुझे मेरे दोष के प्रति अवगत कराइये, मुझे इस भरी सभा में कोई संकोच नहीं होगा। यह सुनने पर, बड़े भाई ने कहा कि तुम सिगरेट बहुत पीते हो इसको छोड़ दो। यह बात सत्य है कि त्रिगुणा जी जब दिल्ली पढ़ते थे, तो अपने भाई रामनाथ जी के पास जाते थे, जो कि हुक्का व सिगरेट पिया करते थे तो उनके पीछे चोरी-चोरी एकाध घूंट भर लेते थे, धीरे-धीरे यह व्यसन नित्य का बन गया। उन दिनों कैंची सिगरेट की लाल डिबिया जो कि १ रूपये की पाँच आया करती थीं, वही सिगरेट वह मित्रो के साथ पीते थे। जीवन में किसी भी नशे का त्यागना बड़ा ही दुरूह कार्य है। परन्तु दृढ़ प्रतिज्ञा प्रारम्भ से ही त्रिगुणा जी के स्वभाव का अंग है। अपने भाई जी की ओर से इसके त्याग करने की बात पर तत्काल जेब से सिगरेट निकाल दिये और फिर कभी अपने स्वभावानुसार धूम्रपान का नाम नहीं लिया। इस प्रकार क्षण भर में पूरी आयु के लिए एक दोष से मुक्ति मिली।

इसके कुछ ही देर बाद औषधालय में पहला रोगी अर्द्धावभेदक शिरो रोगी था, जिसके घर वाले बुलाने आये थे तो उनके साथ घर में जाकर रोगी को देखा। १० दिनों से रोगी सोया नहीं था सिर में तीव्र वेदना, जैसे-किसी ने सिर में कील गाड़ दी हो, चिल्ला रहा था, उसको देखने के बाद घर वालों ने दो रूपये फीस भेंट करने की इच्छा प्रगट की जिसे त्रिगुणा जी ने यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि गुरुदेव द्वारा फीस न लेने की गुरुदक्षिणा के रूप में प्रतिज्ञा दिलवायी गयी है। फीस न लेने की इस दृढ प्रतिज्ञा पर आज भी श्री त्रिगुणा जी स्थिर है। यद्यपि अब वह ऐसी स्थिति में आ गये है कि एक हजार रुपये भी फीस रख लें तब भी उनके सामने रोगियों की एक लम्बी प्रतीक्षा सूची रह सकती है।

औषधालय में आकर देखा कि कौन सी औषधि तत्काल लाभकारी होगी लेकिन उस समय ऐसी औषधि औषधालय में दिखायी नहीं दी। वैद्य जी आसन पर बैठे सोच रहे थे कि वह लोग औषधि लेने आने वाले ही होंगे तब तक उन्हें सड़क के दूसरी पार एक आक का पौधा दिखाई दिया इसको परमेश्वर की कृपा कहिए कि त्रिगुणा जी उसी वक्त उठ करके वहां गये तुरन्त आक के ४ पत्तों को तोड़कर ८-१० बूंद दूध आकके पत्ते पर टपकाकर ही ले आये और औषधालय में आकर काली मिर्च डालकर पीस कर बारीक नस्य बना ली, इतने में रोगी के घर वाले आ गये, गोदन्ती भस्म चार र. महालक्ष्मी विलास रस १ रत्ती पुड़िया बनाकर दे दिया और उनको कहा यह नस्य घी में मिलाकर एक-एक बूंद नाक में डाल दीजिये और उनसे एक आना पुड़िया के हिसाव से ४ आने पैसे प्राप्त हुए। आयुर्वेद का चमत्कार, भाग्य का उदय होना, शाम्भवी वैद्य दीक्षा का संयोग कि रोगी की तीव्र पीड़ा क्षण मात्र में शांत हो गयी। जो रोगी कुछ दिनों से सोया नहीं था निद्रा की गोद में चला गया। यह खबर सारे शहर में तेजी से फैल गयी, उस दिन पहली ही बैठक में दोपहर तक १० रोगी आये कुछ ईर्ष्यालु दो तीन चिकित्सकों ने बात उड़ा दी कि कोई नशे की दवाई दे दी है, इस कारण रोगी बेहोश पड़ा है। घर वाले भी पास-पड़ोस की बातों में आ गये और कहने लगे वह अभी तक जागा ही नहीं है। वैद्य जी ने समझाया कि वह बहुत दिनों से अनिद्रित था। औषधि से उसे तत्काल आराम मिला है, इसलिए उसे आप जगाइये नहीं, साथ ही आप घबड़ाइये नहीं। उन्होंने कहा कि आप चलकर देखिये लोग हमें नाना प्रकार की शंका करके डरा रहे हैं, तब वैद्य जी उनके साथ गये थोड़ी सी पूर्वोक्त नस्य भी साथ लेते गये। उन्होंने जाते ही नाड़ी देखी जो कि निरोग और पुष्ट नाड़ी थी, तब निर्भय होकर नस्य सुंघा दी तत्क्षण छोटी सी छींक आई और रोगी की नींद खुल गई। उसने तुरन्त वैद्य जी के चरण स्पर्श किये। तत्काल रोगी ने भोजन करने की इच्छा प्रकट की। तब वैद्य जी के परामर्शानुसार देशी घी का सूजी का हलुवा सोंठ और गिरी बादाम डाल करके बनाकर खिलाया गया। इसके बाद सोंठ, असगंध की चाय बनाकर पिलाई गयी। रोगी के परिवार के लोग बड़े धनाढ्य एवं साधन सम्पन्न थे। दिल्ली के प्रसिद्ध डाक्टर एवं वैद्यों की चिकित्सा करवा चुके थे।इस रोगी के चमत्कार पूर्ण स्वास्थ्य लाभ से वैद्य जी की बहुत प्रतिष्ठा बढी।

इस काल में पूर्व जन्म, पारिवारिक एवं अध्ययन काल में गुरु प्रदत्त संस्कारों के प्रभाव से प्राप्त इष्ट साधना में कुछ समय व्यतीत होने लगा जो शनैः शनैः आध घण्टे से बढ़ता दो घण्टे तक पहुंच

गया, कुल देव द्वारा मार्ग प्रदर्शन, एवं इष्टदेव द्वारा मनोबल बढ़ने लगा, प्रातः सात बजे से दोपहर १ बजे तक चिकित्सा कार्य बड़ी लगन-प्रवृति से चलने लगा। दोपहर का भोजन लेने के बाद आधा घण्टा विश्राम तदुपरांत निकटवर्ती अरावली क्षेत्र एवं यमुना का तटवर्ती जंगल नित्य की भ्रमण स्थली के रूप में फलदायी हुआ। भोगल बस्ती में प्रायः भवन निर्माण में काम आने वाले बदरपुर रेत तथा अन्य सामग्री के विक्रेता बहुत हैं। जिनके माल ढोने के ट्रक सैकड़ों की गिनती में नित्य पहाड़ी क्षेत्र बदरपुर से तथा यमुना से रेत लाने के लिए चलते रहते हैं। ड्राइवर लोग काफी परिचित हो गये थे। उनके साथ वैद्य जी जाकर जब तक वह अपना ट्रक भरवाते थे, तब तक उतनी ही देर में आस-पास के जंगल से कुछ जड़ी बूँटियों का चयन कर बोरी भरकर उनके साथ ही वापस लौटकर आ जाते। ट्रक के साथ मजदूरों, क्लिनरों, ड्राइवरों का सहयोग भी प्राप्त होता था इस प्रकार शाम को पुनः चिकित्सा कार्य होता था। रात्रि शयन के पहले ताजी जड़ी बूटियों को रस्सियों में लटका करके फैला दिया जाता और पहली सूखी हुई औषधियों का संचय अलग-२ बोरियों में भर दिया जाता। इस प्रकार कुछ ही दिनों में काफी संग्रह हो गया। अब रात्रि में एक घण्टा चूर्ण को कूटने का स्वयं प्रयास किया। देहबल एवं उत्साह तथा भविष्य के भाग्योदय का सहारा, थकावट का नाम नहीं होता था। पर्वतीय क्षेत्रों में और नदी तट, पर्वतीय भाग से प्राप्त होने वाली कुछ औषधियाँ यथा वरुण छाल, सिरस, रोहितक, कुटज, बबूल, सेमल, पलास, निम्ब, उदुम्बर, वट, जामुन, आम आदि बड़े वृक्षों की छाल, पत्र, फल, गोंद प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते थे। लघु कंटकारी, बड़ी कंटकारी, शतावर, गोखरू, गिलोय, भृंगराज, भूमि आमलकी, बहुफली, छोटी व बड़ी मयूर शिखा, बला, खरैटी, वासा, के दोनों भेद गोखरू बड़ा, शंखपुष्पी, पुनर्नवा, दोनों एरंडमूल, गुंजामूल, श्वेत फूल की कंटकारी (लक्ष्मणा) हिरणखुरी पर्पट, अपामार्ग, गिलोय, अश्वगंधामूल, शरपुंखा, चक्रमर्द, धतूर, अर्कमूल त्वक्, शोभान्जन, इमली, बहेड़ा आदि वनस्पतियाँ भी पर्याप्त मात्रा में मिलती थी।

नदी क्षेत्र की यवासा, कुशा (कांस), इक्षु, मुस्तक (मोथा), शरकण्डा, शालिमूल, ब्राह्मी, जलपिप्पली, जलनीम, सम्भालू, अतिबला, गोरखपान (मीनाक्षी), विजया आदि-आदि अनेक छोटी-बड़ी बूटियों का संग्रह वैद्य जी के लिए वरदान के रूप में प्राप्त था। कुछ द्रव्य दिल्ली खारीबावली बाजार की प्रसिद्ध दुकानों से खरीद लिये जाते थे। पारद, गंधक, विष, टंकण, गोदन्ती, हरताल, शख, कौड़ी, मुक्ताशुक्ति, प्रवाल, स्वर्णगैरिक, हींग, वंशलोचन आदि असली उत्तम मिल जाते थे, कस्तूरी, केशर, अम्बर और मोती आदि भी चिकित्सा में प्रयोगार्थ खरीदे जाने लगे, कुछ रसों यथा मृत्युन्जय, संजीवनी, अश्वकंचुकी, त्रिभुवनकीर्ति, समीरगज केसरी, शंखोदर आदि का निर्माण भी करने लगे। दुकान के पीछे कुछ खुली जगह थी। जिसमें गोदंती, शंख, वराटिकादि साधारण भस्मों का निर्माण कर लिया जाता था। मुख्यतया उपार्जित जड़ी बूटियों के चूर्णों का उपयोग अधिक मात्रा में किया जाने लगा। चिकित्सा ख्याति के साथ दिल्ली में औषधि निर्माताओं के एजेन्ट भी आने लगे। औषधियाँ आवश्यकतानुसार उनसे ले ली जाती थीं। इस प्रकार कच्ची औषधियों के मुख्य विक्रेता भी औषधियों की सप्लाई देने लगे। कार्य बढने लगा। दो भृत्य औषधि कूटने एवं औषधि व्यवस्था के लिए रख लिये गये। रोशन लाल नाम का एक

कर्मचारी बड़ा ही साहसी उद्यमी एवं बुद्धिमान् सहयोगी था। इस प्रकार निरंतर दिन रात के अथक परिश्रम से दक्षिणी दिल्ली क्षेत्र में एक अच्छे चिकित्सक के रूप में स्थिति हो गई। इस अवधि में जो धन संचय हुआ उसमें से १०,००० रुपया पिता जी को भेज दिया गया। क्योकि गांव की दुकान कुछ जीर्ण हो चुकी थी। उसका पुनर्निर्माण करवाया गया। पिता जी की इच्छा थी अपने परिवार को देहली ले जाये, ताकि उनकी प्रारंम्भिक पढ़ाई का ठीक प्रबंध हो सके। उनकी आज्ञानुसार बच्चों को दिल्ली ले आये। अपने औषधालय के पीछे ही रहने के लिए स्थान पर्याप्त था। तथा व्यवस्था ठीक होने पर एक गाय का प्रबंध कर लिया गया। जहां परिवार द्वारा कुछ औषधि निर्माण आदि में सहयोग भी प्राप्त होने लगा। गत दो वर्ष में बड़े भाई और छोटे भाइयों के सहयोग से भोजनादि की व्यवस्था का पूर्ण प्रबंध रहने पर बड़ा ही आनंदमय परिवारिक सुख प्राप्त था। जन्म गांव तथा आस-पास परिचित व्यक्तियों के, स्वजातियों एवं संबंधियों के दिल्ली आगमन पर उनके आतिथ्य का सौभाग्य भी प्राप्त होता था।

इन्हीं दिनों इस क्षेत्र के एक प्रसिद्ध संत श्री किशोरशरण जी महाराज जो सूरदास बाबा जी के नाम से प्रसिद्ध थे उनके चरणों में बैठने का तथा उनका आशीर्वाद वरदान रूप में प्राप्त होने लगा। वे आयुर्वेद के बड़े ही भक्त एवं ज्ञाता भी थे। मुख्यतया संकीर्तन श्रीमद्भागवत सप्ताह तथा मंदिरों के निर्माण में अधिक रुचि रखते थे। उनके आदेशानुसार विशेषतः यमुना नदी के तटवर्ती ग्रामों तथा आस पास के अन्य स्थानों में बीसों मंदिरो के निर्माण हुए और इन समारोहों में भाग लेने के शुभ अवसर प्राप्त हुए। इस प्रकार धार्मिक सभा सोसायटियों में, सामाजिक गोष्ठियों में प्रेम पूर्वक सादर निमंत्रण भी आने लगे। जन्म ग्राम में किये हुए कार्यों के बीज यहां भी अंकुरित होने लगे। वैद्य व्यवसाय का जीवन समाज के हर वर्ग में सम्मिलित होने का साधन है उसी निमित्त हर जाति धर्म पार्टियों संस्थाओं से मेल जोल बढ़ता गया। कुछ सहयोगी धार्मिक सज्जनों जिसमें पंडित मंगत राम जी वशिष्ठ, लाला चमन लाल, लाला अनूप सिंह, लाला कालूराम, पं. द्वारिका दत्त जी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके परामर्श से एक मानव कल्याण समिति नाम की संस्था को पंजीकृत करवाया गया जिसके पहले प्रधान श्री त्रिगुणा जी थे, समिति का मुख्य लक्ष्य धार्मिक प्रचार सुधार एवं सामाजिक रीतिरिवाजों में कुरीतियों के प्रति संशोधन तथा अन्य मंदिर निर्माणादि के कार्यों को बढ़ावा देना, अपने धार्मिक पर्व मनाना, दूसरे धर्मावलम्बियों के पर्वों में सहयोग देना, विद्या का प्रचार आदि कार्यो का लक्ष्य था। समिति द्वारा भोगल के मध्य में एक भव्य मंदिर का निर्माण हुआ। पार्श्ववर्ती जंगपुरा के कई स्थानों में ६-७ अन्य मंदिरों का निर्माण भी हुआ। शिक्षा संस्थायें, सनातनधर्म मिडल स्कूल, डी.ए.बी. हायर सेकेण्ड्री स्कूल तथा अन्य कई निजी बाल मंदिरों की स्थापना हुई। कृष्ण जन्माष्टमी, श्री रामनवमी, शिवरात्रि आदि के पर्वों पर जूलूस आदि के भव्य समारोह होने लगे। पांच वर्ष की अवधि के बाद अपना निजी एक निवास बनाने की धारणा मन में बनी। परिवार में भाइयों से सलाह ली गई कि पार्श्ववर्ती ग्रामों में रिहायशी मकान बनाया जाये। कारण भोगल का औषधालय "अहर्निशम् सेवामहे" था, अर्थात् २४ घण्टे रोगियों को चिकित्सा परामर्श एवं औषधि उपलब्ध होती थी। उन्हीं दिनों में दिल्ली में कामला रोग का भयानक प्रकोप हुआ था। उन दिनों रोगियों की संख्या इतनी बढ़ गई थी कि भोजन एवं विश्राम

का समय कम मिलता था । पास पड़ोस के लोग अर्द्धरात्रि को भी जगाकर ले जाते, औषधि चिकित्सा के लिए लोग संकोच नहीं करते थे । निकटवर्ती भोगल के साथ लगे हुए ग्राम सराय काले खाँ के नम्बरदार चौ. दिलीप सिंह बुलाकर ले गये । और एक-दो जगह दिखाई वहीं पर ही चौ. रतन सिंह, जो इस ग्राम के सबसे बड़े जमींदार थे, ने जिस स्थान पर आज त्रिगुणा जी का निवास है वह जगह दिखाई ।

उसमें उस समय फूलों की खेती उगी हुई थी । उस जगह का पूर्व जन्म के संस्कार और उस जगह से हर प्रकार के लाभ की प्राप्ति तथा सामने वाली खाली जमीन पर दृष्टिपात होते ही ऐसा एक भविष्य का रूप, देव स्थान, गोशाला, वाटिका, औषध निर्माण शाला एवं अतिथि गृह आदि का एक अंकुर जो मन में संचित कर्मों के फल का प्रतीक था उभर आया । चौधरी साहब वह जगह बिना मूल्य देना चाहते थे, त्रिगुणा जी ने आग्रह करके उन्हें आधा वीघा जमीन के चार हजार रुपया लेने पर राजी कर लिया और कुछ ही दिनों में वहां भवन का निर्माण हो गया । साथ ही संलग्न कुछ भूमि अन्य तीन भाइयों के लिए ले ली गयी । सामने वाली जमीन पर एक ऊंचा सा स्थान था । किंवदन्ती थी कि यहां पहले कोई देव स्थान था तब मस्जिद मोठ निवासी श्री सम्पन्न पंडित लीलाराम के पुत्र पंडित प्रेमराज ने जो कुछ दिन के लिए त्रिगुणा जी के घर में ही निवास किये हुए थे एक शिवलिङ्ग की स्थापना वहां कर दी । आस-पास की भूमि में सुधार होने लगा गांव के लोगों में भी धार्मिक भावना जागी उनका सहयोग प्राप्त हुआ, लगभग एक बीघा जमीन पर विधिवत् मंदिर स्थापना की योजना बनी ।

त्रिगुणा जी स्वयं ओंकारेश्वर (मध्यप्रदेश) से नर्मदेश्वर शिवलिङ्ग लाने के लिए वहां गये, वहां पर एक विशेष घटना हुई जब वे वहां से वापसी नाव द्वारा ओंकारेश्वर से नर्मदा जी को पार कर रहे थे तो उन्हें आकाश वाणी के रूप में शब्द सुनायी दिये कि जिस लिंग की स्थापना के लक्ष्य से आप यहां आये हैं वह शिवलिङ्ग वाणासुर क्षेत्र, जो यहां से २० मील, जिधर से नर्मदा आ रही हैं, धारणी ग्राम के पास है । वहां नर्मदा नदी के बहाव क्षेत्रान्तर्गत अनगिनत कुण्ड बने हुए हैं जिसमें नर्मदा नदी का जल गिरता है, वाञ्छनीय शिवलिंग प्राप्त होगा । पौराणिक गाथा है वाणासुर नित्यप्रति एक लाख शिवलिंग बनाकर उस कुण्ड में प्रवाहित किया करते थे, इसलिए वहां से प्राप्त शिवलिंग को वाणलिंग भी कहते हैं । अतः वैद्य जी महाराज बड़े कठिन परिश्रम से वहां कुण्ड से स्वयं शिवलिङ्ग लाये, जिनकी स्थापना के शुभ अवसर पर अनन्त श्री शंकराचार्य कृष्ण बोधाश्रम तथा स्वामी करपात्री जी महाराज एवं अन्य सिद्ध पुरुष, वेदपाठी, कर्मकाण्डी ब्राह्मणों द्वारा स्थापना सम्पन्न हुई और स्थान का नाम त्रिगुणेश्वर महादेव मंदिर रखा गया । वाणलिंग स्वयं सिद्धलिंग है, जिसकी स्थापना प्राण प्रतिष्ठा आदि की आवश्यकता नहीं होती । जिसका चरणामृत भी लिया जाता है

इसके पश्चात् इसी ग्राम सराय काले खां के सुधार की तरफ श्री त्रिगुणा जी का ध्यान गया । प्रारम्भ में अपने प्रभाव से सरकार का सहयोग प्राप्त कर गाँव की गलियों में खरंजा लगवाया गया पुनः प्रयास करके सारे गाँव में बिजली लगवाई गयी, सरकारी पानी की सप्लाई की व्यवस्था कराई गई । दिल्ली प्रशासन के कार्यकारी पार्षद डा० रामलाल वर्मा द्वारा पार्श्ववर्ती बरसाती नाले

की मेडों तथा अण्डर ग्राउण्ड सीवर का भी इसी काल में प्रबन्ध होने से पानी, बिजली, सड़के आदि से युक्त ग्राम एक सर्व सुविधा सम्पन्न बस्ती बन गया।

कार्यव्यस्तता में भी पारिवारिक समायोजन

चिकित्सा कार्य के लिये प्रातः-सायं भोगल स्थित औषधालय पर नित्य प्रति नियम बद्ध वैद्यजी पैदल जाते थे, दक्षिण दिल्ली क्षेत्रान्तर्गत वैद्य चिकित्सकों का एक मण्डल बनाने की योजना बनायीं।

लगभग ४०-५० वैद्यों को आमंत्रित कर एक छोटी वैद्य सभा का संगठन किया गया और इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा को वार्षिक सम्बद्धता शुल्क देकर प्रान्तीय सभा के साथ सम्बन्धित किया गया। महीने में एक बार गोष्ठी होने लगी रोग एवं रोगियों पर चर्चायें शुरु हुई इस प्रकार नित्य चिकित्सा कार्य तथा तद्विद्यसम्भाषा गोष्ठियों का नियमित कार्यक्रम चलने लगा। इस समय तक श्री वैद्य जी की सभी सन्तानें शिक्षा प्राप्तकर विवाह योग्य आयु के समीप आ रही थी अतः वैद्य जी का ध्यान गृहस्थ के इस परम पुनीत कर्तव्य की ओर गया।

सन् १९५८ में बड़ी पुत्री गीता का सम्बन्ध ग्राम सेहरा तहसील राजपुरा के शास्त्री श्री नन्दलाल जी के इकलौते पुत्र श्री मदनलाल जी के साथ निश्चित हुआ। उन्हीं दिनों वैष्णवदेवी की यात्रा से लौटते हुए ज्वाला जी, कांगड़ा की बज्रेश्वरी देवी, चामु डादेवी, नन्दिकेश्वर, शिव एवं चिन्ता पूर्णी होते हुए दिल्ली वापस आये तदोपरान्त पुत्री का विवाह सम्पन्न हुआ। दूसरी बेटी सीता देवी का विवाह उसके दो वर्ष बाद पंजाब प्रान्त के संगरूर शहर में श्री कृष्णलाल शर्मा के साथ सम्पन्न हुआ । तथा तीसरी बेटी संयुक्ता का सम्बन्ध वैद्यराज आचार्य दुर्गादत्त शास्त्री लाहौर वाले जिनका दिल्ली में करौल बाग में अपना निजी घर एवं औषधालय था उनके पुत्र महेश दत्त से किया गया।

इन्हीं दिनों बडें पुत्र नरेन्द्र कुमार जो सिविल इन्जीनियर की बी. टेक. आई. आई. टी. हौजखास, नई दिल्ली से डिग्री प्राप्त करके आ चुके थे, विवाह योग्य हो चुके थे।

इनका सम्बन्ध सहारनपुर उ. प्र. के पं. घनश्याम दास सारस्वत की पुत्री राजकुमारी रजनी के साथ तय हो गया और विवाह महोत्सव बड़े हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। इस दम्पत्ति के दो कन्याएं और एक पुत्र, बड़ी कन्या का नाम कुमारी शिवानी उससे छोटी अल्पना तीसरी सन्तान पुत्र कपिल है। दूसरे पुत्र देवेन्द्र कुमार दिल्ली के आयुर्वेद एवं यूनानी तिब्बिया कालेज, जो दिल्ली यूनीवर्सिटी से सम्बन्धित है आचार्य धनवन्तरि की उपाधि प्राप्त कर प्रातः काल अपने पिताजी के साथ बैठकर उनको सहयोग देते, सायं काल भोगल के अन्दर मस्जिद रोड पर अपने निजी औषधालय में चिकित्सा कार्य करने लगे।

इनका विवाह पूर्वी पंजाब में लुधियाना शहर के पं. द्वारिका दास जी की पुत्री कुमारी प्रतिभा (नीलम) के साथ सम्पन्न हुआ, कुछ समय पश्चात चौथी कन्या विनोद कुमारी का विवाह श्री ओम प्रकाश ऋषि के सुपुत्र श्री चन्द्र ऋषि के साथ सम्पन्न हुआ जिसका व्यवसाय, निजी निवास एवं सम्पत्ति कानपुर में हैं। देवेन्द्र कुमार की दो पुत्रियां बड़ी नन्दिनी दूसरी राधा तथा तीसरी पुत्री, जिसका जन्म होते ही, देवेन्द्र की छोटी बहन विनोद कुमारी ने इसे गोद ले लिया और कानपुर ले गयीं।

आयुर्वेद प्रचार प्रसार हेतु कार्य एवं उपलब्धियां

इस समय तक श्री त्रिगुणा जी चिकित्सा क्षेत्र में जहाँ आयुर्वेद समाज में एक अच्छे सिद्धहस्त वैद्य के रूप में माने जाने लगे, वहाँ समस्त दिल्ली के नगर उपनगर तथा आस-पास के हरियाणा, उ.प्र., राजस्थान के समीप वर्ती जिलों एवं प्रान्तों में जनता में प्रसिद्ध प्राणाभिसर चिकित्सक के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे । रोगियों की संख्या प्रतिदिन सैकड़ों होने पर भी सुव्यवस्थित रोगी निरीक्षण, औषधि वितरण एवं निजी औषधि निर्माण का कार्य अपने विशिष्ट वैद्यत्व गुणों का परिचायक रहा ।

इस समय उनके मन में यह भाव उदय हुआ कि जिस आयुर्वेद के कारण दिनोदिन यश एवं श्री में वृद्धि हो रही है, उसके ऋण से उऋण होने के लिये कर्तव्य करना अभीष्ट हैं । उस समय के दिल्ली के प्रसिद्ध बैद्य श्री ओंकार प्रसाद शर्मा तथा अन्य प्रमुख वैद्यों के आग्रह एवं प्रेरणा पर १९६८ में श्री इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा के प्रधान बने । उनके साथ इन पंक्तियों के लेखक वैद्य गौरीलाल चानना प्रधान मंत्री बने ।

१९ अक्टूबर १९६८ धनवन्तरि जयन्ती समारोह माननीय श्री बी. एस. मूर्ति मन्त्री केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंन्त्री की अध्यक्षता में अभूतपूर्व उल्लास एवं सफलता से सम्पन्न हुआ ।

अगस्त १९७० में इन्द्रप्रस्थीय आयुर्वेद सम्मेलन पत्रिका के सम्पादन का निश्चय किया गया । वैद्यराज श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा सर्व सम्मति से प्रधान सम्पादक निर्वाचित हुये । पत्रिका प्रवेशांक अगस्त १९७० में प्रकाशित हुआ ।

१७ नबम्बर १९७३ श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा द्वारा आयोजित हृदय रोग सेमिनार किया गया । संयोजक श्री त्रिगुणाजी सभा के प्रधान वैद्य गौरीलाल चानना, सभा के प्रधान मन्त्री श्री भुवन चन्द्र जोशी थे । उद्घाटन कर्ता श्री केदारनाथ साहनी महापौर दिल्ली, श्री कृष्णस्वरूप कार्यकारी पार्षद स्वास्थ्य मुख्य अतिथि थे, स्वागताध्यक्ष श्री रतन चन्द्र बर्मन थे ।

२६ नबम्बर १९७४ को रक्तचाप सेमिनार सम्पन्न हुआ । स्वागताध्यक्ष श्री त्रिगुणाजी, उद्घाटन कर्ता डॉ श्री कर्ण सिंह केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री, अध्यक्ष कविराज आशुतोष मजूमदार, मुख्य अतिथि माननीय ए. पी. शर्मा केन्द्रीय राज्यमन्त्री आपूर्ति एवं उद्योग थे । श्री त्रिगुणा जी के सुझाव पर सभी उपस्थित विद्वानों की सहमति से रक्तचाप के लिये 'व्यान बल वृद्धि ' शब्द के प्रयोग का निश्चय हुआ ।

दिनांक २१,२२,२३ जनवरी १९७९ मानसरोग सेमिनार इन्द्रप्रस्थीय वैद्यसभा द्वारा आयोजित किया गया । इस समय श्री त्रिगुणा जी पुनः श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष पद पर आसीन थे, प्रधान मंत्री श्री शान्ति प्रसाद जैन, संयोजक वैद्य गौरीलाल चानना थे । उद्घाटन कर्ता माननीय श्री मोरारजी देसाई प्रधान मंत्री भारत सरकार, अध्यक्ष माननीय श्री जगदम्बी प्रसाद यादव केन्द्रीय स्वास्थ्य राज्य मन्त्री, मुख्य अतिथि माननीय केदार नाथ साहनी मुख्य कार्यकारी पार्षद, अतिथि माननीय श्री मदन लाल जी खुराना कार्यकारी पार्षद स्वास्थ्य थे ।

१० अगस्त १९८० कामला रोग सेमिनार आयोजित हुआ। इसमें स्वागताध्यक्ष वैद्यराज श्री त्रिगुणा जी, उद्घाटन कर्ता श्री निहाररञ्जन लस्कर राज्यमन्त्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, अध्यक्ष माननीय श्री विक्रम चन्द्र महाजन ऊर्जा राज्य मन्त्री भारत सरकार, विशिष्ट अतिथि श्री यशपाल कपूर, संयोजक वैद्य गौरीलाल चानना, सभा प्रधान श्री दौलत राम शर्मा जी थे।

३ अक्टूबर १९८२ मधुमेह सेमिनार का उद्घाटन माननीय बी. शंकरा नन्द केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री ने किया। सरंक्षक श्री त्रिगुणा जी, संयोजक वैद्य गौरीलाल चानना, स्वागताध्यक्ष श्री वृजेन्द्र कुमार शर्मा वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, प्रधान श्री नानक चन्द्र शर्मा, अध्यक्ष माननीय श्री विक्रम महाजन-ऊर्जा राज्यमन्त्री भारत सरकार, मुख्य अतिथि माननीय श्री ए. पी. शर्मा केन्द्रीय संचार मंत्री थे।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष निर्वाचित

इस अवधि में माननीय वैद्य जी की चिकित्सा एवं विद्वत्ता की ख्याति पूरे देश में व्याप्त हो चुकी थी। प्रदेश सरकारों एवं केन्द्रीय सरकार के मंत्री गण एवं उच्च शासक वर्ग अधिकांश संख्या में उनकी चिकित्सा क्षमताओं से परिचित हो चुके थे। परिणामतः सभी प्रदेशों के शीर्षस्थ विद्वानों एवं प्रदेश सम्मेलनों के अधिकारियों का अनुरोध तथा आग्रह हुआ और वह सर्व सम्मति से दिनांक १९,२०,२१ जून १९८३ को सम्पन्न ५१वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष पद पर आरूढ़ हुए। बम्बई के प्रमुख वैद्य पं० श्रीराम शर्मा महासम्मेलन प्रधानमंत्री निर्वाचित हुए। इस महाधिवेशन का उद्घाटन सीरी फोर्ट सभागार, नई दिल्ली में तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह जी ने किया, इस महाधिवेशन के स्वागताध्यक्ष श्री रतन चन्द्र वर्मन, स्वागत मन्त्री वैद्य गौरीलाल चानना, उद्घाटन समारोहाध्यक्ष माननीय श्री बी. शंकरानन्द केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री, मुख्य अतिथि माननीय श्री प्रकाश चन्द्र सेठी केन्द्रीय गृह मंत्री, विशिष्ट अतिथि माननीय श्री हरिहर नाथ मिश्र ग्रामीण विकास राज्य मंत्री, विशिष्ट अतिथि माननीय श्री अर्जुन सिंह मुख्य मंत्री मध्य प्रदेश, विशिष्ट अतिथि माननीय श्री बूटासिंह केन्द्रीय आवास एवं निर्माण मंत्री थे।

दिनांक १८,१९ मई १९८६ को अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का ५२ वां महाधिवेशन परमपावन तीर्थ हरिद्वार में हुआ। तत्कालीन केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती मोहसिना किदवई ने इस महाधिवेशन का उद्घाटन किया। उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता उत्तर प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री श्री पंडित लोक पति त्रिपाठी ने की। मध्य प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र प्रसाद शुक्ला तथा हरियाणा प्रदेश की स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती करतार देवी इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि थे।

वैद्यराज त्रिगुणा जी ने इस अधिवेशन में दोबारा सर्व सम्मति से महासम्मेलन के अध्यक्ष का पदभार सम्भाला। तथा महासम्मेलन प्रधान मंत्री के पद पर इन पंक्तियों के लेखक कविराज गौरीलाल चानना सर्व सम्मति से निर्वाचित हुए।

२० जून १९८९ को अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का ५३ वां महाधिवेशन कुरुक्षेत्र, में हुआ। उद्घाटन कर्ता माननीय श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह प्रधान मंत्री भारत सरकार, अध्यक्ष माननीय श्री बनारसी दास गुप्त मुख्य मंत्री हरियाणा, मुख्य अतिथि माननीय श्री मुरली मनोहर जोशी वर्तमान अध्यक्ष भारतीय जनता पार्टी, माननीय श्री धनिक लाल मण्डल हरियाणा राज्यपाल,

माननीय श्री यज्ञदत्त शर्मा राज्यपाल उड़ीसा तथा स्वास्थ्य मंत्री हरियाणा प्रदेश थे । इस महाधिवेशन में वैद्यराज श्री त्रिगुणाजी ६ वर्ष के अनवरत कार्य काल के बाद महासम्मेलन अध्यक्ष के पद भार से मुक्त हुए और आचार्य श्रीराम शर्मा बम्बई नये अध्यक्ष निर्वाचित हुये, प्रधान मंत्री कविराज गौरीलाल चानना निर्वाचित हुए।

धार्मिक यात्राएं

सनातन धर्म विचार वाले पवित्र वंश तथा संस्कृत पाठशालाओं संस्कृत की पढ़ाई तथा तपस्वी एवं विद्वान् आचार्यों के सान्निध्य से प्राप्त संस्कारों के कारण त्रिगुणा जी का तीर्थ स्थानों, देव स्थानों, सिद्ध पीठों के प्रति बड़ी श्रद्धा होने से वर्ष में एक-दो बार तीर्थ यात्राओं का क्रम उनके जीवन का एक अंग रहा है।

मथुरा, वृन्दावन निकट वर्ती गोकुल, बरसाना, गोवर्धन आदि में तो जब भी मन आता चले जाते थे। हरिद्वार ऋषिकेश आदि स्थानों में गंगा स्नान के लिये जाते रहते । गढ़ गंगा, शुक्रताल, स्वर्गाश्रम के निकट भी शुभ पर्वों पर चले जाते। ऋषिकेश में लक्ष्मण झूला के समीप गंगा के उस पार एक सुरम्य पहाड़ी पर गंगा तट से कोई १५०० फुट ऊंचाई पर उनका अपना एक सादा किन्तु निवास की सर्व सुविधा सम्पन्न स्थान है जहां वह यदा कदा अपने धार्मिक मित्रों के साथ अथवा एकाकी चले जाते हैं । कभी कभी किसी पर्व त्योहार के अवसर पर आस पास के ग्रामीणों एवं ब्राह्मणों के लिये ब्रह्म भोज का भी आयोजन करते हैं ।

तीर्थ यात्रा की मनोकामना ब्राह्मण वंश के संस्कारों में सहज ही विद्यमान रहती है पर वृद्ध पिता एकाकी तीर्थ यात्रापर कैसे जायें ? त्रिगुणा जी के संवेदन शील मन को ऐसा जोखिम उठाना कदापि स्वीकार न था । उधर चिकित्सा कार्य में अधिक व्यस्तता की भावना से मन कभी मुक्त न हो पाता था । परन्तु उन्होंने कर्तव्य को भावना से सदैव ऊपर माना है । वृद्धावस्था में पूज्य पिताजी की अनेकों लम्बी एवं दुष्कर तीर्थ यात्राओं में उनकी सेवा सुश्रुषा देखभाल के लिये सदैव उनके साथ रहे, बद्रीनारायण की यात्रा में सपत्नीक उनके साथ गये । दूसरी बार श्री अमर नाथ की यात्रा,तीसरी यात्रा उत्तर काशी तथा गंगोत्तरी से वापसी पर देव प्रयाग आदि तीर्थ स्थानों में स्नान किया, वद्री नारायण तीर्थ साढ़े दस हजार फीट की ऊँचाई पर एक पावन स्थल है, केदार नाथ साढ़े ग्यारह हजार फीट की ऊँचाई पर जहाँ भगवान आदि शंकराचार्य जी का पावन समाधि स्थल है और निकट में ब्रह्म सरोवर जिसमें ब्रह्म कमल उत्पन्न होते हैं । गंगोत्तरी की ऊँचाई भी करीब ग्यारह हजार फुट है, गंगाजी उद्‌गम स्थल निकट ही १४ किलोमीटर गौमुख, जिसके पास नन्दन कानन विश्व का रमणीक स्थल है, बद्रीनाथ मार्ग में पाण्डुकेश्वर से १० मील की दूरी पर हेमकुण्ड नाम का एक प्रसिद्ध तीर्थ है जिसके निकट ही पुष्प वन (सेकिंड वैली आफ फ्लावर) है बड़ा ही रमणीक शान्त स्थल है ।

सिख पन्थ के दशम गुरु श्री गोविन्द सिंह जी महाराज ने अपने पूर्व जन्म में वहाँ तपस्या की थी । इस निमित्त वहाँ एक छोटा गुरुद्वारा भी बना है ।

उत्तराखण्ड की शक्ति पीठों में से वैष्णवी देवी, बज्रेश्वरी देवी, चामुण्डा देवी, ज्वालाजी, चिन्तापूर्णी देवी, चन्द्रवदनी देवी, कलकत्ता में कालिका देवी एवं राजस्थान में करोली स्थित भगवती माँ मन्दिर, अम्बा देवीजी का सिद्ध पीठ, कोल्हापुर में महालक्ष्मीजी का पीठ तथा आन्ध्र प्रदेश में श्री शैल स्थित दुर्गापीठ आदि-आदि शक्ति पीठों की यात्रा का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पिताजी को गंगा सागर की यात्रा पर ले गये वहाँ से वापसी पर श्री भगवान जगन्नाथ जी के दर्शन करते हुए, दक्षिण में श्रीरामेश्वर में पूजा एवं गंगाजल का स्नान करवाया, एक बार दक्षिणी यात्रा में कन्याकुमारी के दर्शन हुए, वहाँ पवित्र साधना स्थल में कुछ देर ध्यानस्थ रहे। इस यात्रा में इस लेख के लेखक वैद्य गौरीलाल चानना भी साथ थे तथा इस यात्रा में तिरुपति के भव्य दर्शन एवं पूजन का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।

एक समय अपने छोटे दामाद चन्द्र ऋषि के साथ द्वारिका पुरी में समुद्र के मध्य में तथा द्वारिका में भगवान कृष्ण के दर्शनों का पुण्य लाभ हुआ, यात्रा में वापसी पर सोमनाथ भगवान के पूजन दर्शन का पुण्यावसर प्राप्त हुआ। भगवान कृष्ण के पैर में देंदीप्यमान पद्ममणि का चिन्ह था। भील ने दूर से उस मणि को हिरण का नेत्र समझ कर आखेट के उद्देश्य से शर संधान किया। वह तीर भगवान कृष्ण के पैर में लगा और उनके देह त्याग का निमित्त बना। यह भील बाली का अवतार था यह स्थान सोमनाथ के समीप आज भी एक दर्शनीय स्थल है। वैद्य जी को अपनी तीर्थ यात्रा में इसे भी देखने का अवसर मिला, लेखक भी इनके साथ था।

भगवान शंकर के द्वादश ज्योर्तिलिङ्गों में केदारनाथ जी, काशीपति विश्वनाथ जी, वैद्यनाथ धाम, ओंकारेश्वर, अम्लेश्वरम्, त्र्यम्बकेश्वर, श्रीशैलेमल्लिकार्जुन, हिमालय के देवादारु के वन में नागेशम् दारुकावने, सोमनाथ जी, महाकालेश्वर, उज्जैन में पूर्व जन्म के फलस्वरूप पूजन दर्शनों का लाभ मिला।

मध्य प्रदेश के मन्दसौर स्थित चार मुखी शिवलिङ्ग के दर्शन तथा नेपाल यात्रा में पशुपति नाथजी के दर्शन एवं पूजन का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

श्री वैद्यजी की धारणा है कि मन्दसौर का शिव लिङ्ग जो चार मुखी और नेपाल में पशुपतिनाथजी जो पञ्चमुखी हैं एक ही वर्ण ऊँचाई और मोटाई के होने से उन दोनों की किसी एक ही शैवधर्म के अनुयायी राजा द्वारा इन मन्दिरों में स्थापना हुई।

श्री त्रिगुणाजी ने चारों कुम्भों का स्नान नासिक, उज्जैन, हरिद्वार तथा प्रयाग राज दो-दो, तीन-तीन बार किया, प्रायः अर्द्धकुम्भियों में स्नान किया, भगवान श्री राम जी की पावन जन्म भूमि अयोध्याजी की यात्रा सरयू में स्नान के साथ सातों पुरियों की यात्रा का पुण्य प्राप्त किया।

पावनी नर्मदा नदी के उद्गम स्थल अमरकंटक में शिवपूजन करते समय भगवान् शिव द्वारा श्री राम मंत्र की साक्षात्रूप में दीक्षा मिली, यात्राओं में बहुत चमत्कारिक उपलब्धियों में यह एक विशेष उपलब्धि उन्होंने बतायी। पुष्कर तीर्थराज की यात्रा के समय ब्रह्माजी के मन्दिर में पूजा दर्शन का लाभ मिला।

सिद्ध-पुरुष-दर्शन

आपकी इन्हीं यात्राओं से सम्बन्धित सिद्ध पुरुषों के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिनमें श्री किशोरी शरण जी महाराज सूरदास तिलपत वाले, श्री शंकराचार्य स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज (ज्योतिष पीठाधीश्वर), श्री शंकराचार्य स्वामी विष्णुदेवानन्द सरस्वती जी महाराज, श्री शंकराचार्य महाराज निरञ्जन देवजी तीर्थ, दक्षिण भारत में काञ्ची कोटि पीठ के शंकराचार्य जी महाराज तथा साक्षात् भगवती स्वरूपा आनन्दमयी मां, श्री करपात्री जी महाराज, श्री शंकराचार्य कृष्णबोधाश्रम महाराज, नालागढ़ के बड़े ब्रह्मचारीजी एवं स्वामी अमृत वाग्भवाचार्य से तांत्रिक दीक्षा ली।

वृन्दावन में एक चमत्कारिक बाबा के दर्शन हुए थे। परमपूज्य सांई बाबा जो वर्तमान समय में संसार को अपनी सिद्धियों से वरदान देते हैं, उनके दर्शन दिल्ली में न्यायमूर्ति श्री भगवती चीफ जस्टिस सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीमकोर्ट) के निवास स्थान पर करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

स्वामी मुक्तानन्दजी महाराज गणेश पुरी वाले निकट बम्बई विष्णुतीर्थजी महाराज देवास वाले जो कुण्डली जागरण के विशेषज्ञ थे तथा शुक्र ताल वाले स्वामी कल्याण देव जी जिनकी गणना आज के चिरंजीवियों में है और आयु इस समय ११६ वर्ष के करीब है तथा परमपूज्य श्री अखण्डानन्दजी महाराज तथा हरिहर बाबा जी आदि सिद्ध सन्तों का आशीर्वाद तथा वरदहस्त व संरक्षण प्राप्त हुआ।

एक विशेष प्रकरण भी उल्लेखनीय हैं जब एक बार श्री त्रिगुणाजी लुधियाना में विराजमान, जो आज सिद्धपीठ के नाम से प्रख्यात हैं वहाँ साक्षात् शिव रूप एक चिरंजीवी दण्डी स्वामीजी के दर्शनों के लिये गये थे।

उन दिनों लुधियाना में एक सनातन धर्म सम्मेलन हो रहा था। जिसमें महाराज करपात्रीजी एवं महामण्डलेश्वर संत पधारे हुए थे, दण्डी स्वामीजी को कुछ उन दिनों श्वास कष्ट था, वैद्यजी के मौसेरे भाई जगदीश स्वामीजी की सेवा में रहते थे। स्वामीजी के सामने बैठे हुए त्रिगुणा जी ने कहा कि महाराज ये आपका श्वास कष्ट आपकी आज्ञा हो तो कुछ मिन्टों में निवृत्त हो जायेगा। उन्होंने ने हंसकर स्वीकृति दे दी। तब एक पका हुआ तरबूज मंगवाया गया गूदे में से रस निकाल कर कुछ खांड मिलाकर स्वामी जी को पिलाया। क्षणभर में स्वामी जी श्वास कष्ट से निवृत्त हो गये तथा उन्होंने कुछ निद्रा भी ली। दण्डी स्वामी के निजी चिकित्सक डॉ० पाठक जी उस समय उपस्थित थे, स्वामी जी कुछ देर बाद बैठ गये बहुत प्रसन्न थे, कुछ और भी भक्त लोग थे। त्रिगुणा जी के मन में एक जिज्ञासा थी कि कुण्डलिनी के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न करूं। परन्तु स्वामी जी ने पहले ही कहना शुरू किया कि वैद्य बहुत अच्छे हैं आयुर्वेद के ज्ञान को तथा नाम को बढ़ाकर विश्वख्याति प्राप्त करेंगे परन्तु जो जिज्ञासा लेकर मेरे पास आये हैं, वो यदि पुस्तकों से पढ़कर चर्चा मात्र करनी है तो करपात्री जी तथा कृष्ण बोधाश्रम जी आदि संत आये हैं उनसे जा के शास्त्र चर्चा कर लें। यदि प्रत्यक्ष योग की इच्छा है तो इनसे संकल्प करवाओ यहीं गृहस्थ छोड़ दें और ये वस्त्र उतार कर नया वस्त्र पहन लें, आचमन आदि से शुद्ध होकर मेरे सामने बैठाओ मूलाधार से सहस्रार

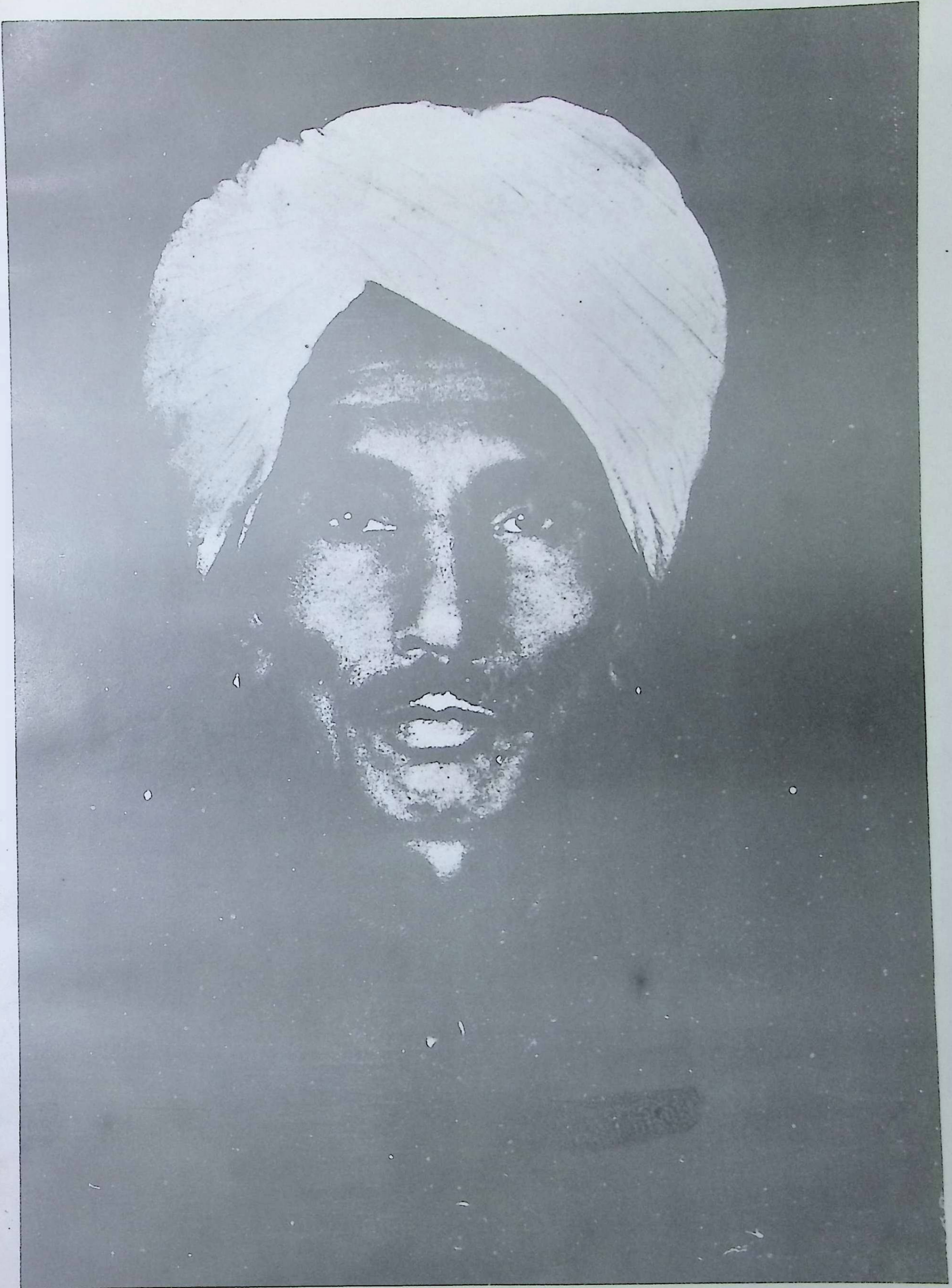
महापद्म में सुश्वेत शिव दर्शन करा देता हूँ, जब वो यह बात कह रहे थे एक प्रभावी तेज पुञ्ज उनके चारों ओर घूमता हुआ त्रिगुणा जी को दिखायी दिया जो तेज पुञ्ज एक बार पाण्डिचेरी में योगिराज अरविन्द की समाधि स्थल में मस्तिष्क स्पर्श करने पर प्रकट दृश्य हुआ था वही प्रभाव त्रिगुणा जी को अनुभव हुआ तब करबद्ध प्रार्थना की कि महाराज गृहस्थ की जिम्मेदारियों से भागना नहीं चाहता तथा आयुर्वेद क्षेत्र का जो आपने अभी वरदान दिया है उससे भी रुग्ण विश्व को सान्त्वना हो ऐसा परिश्रम करना है तब दण्डी स्वामी जी ने प्रसन्नता पूर्वक "यही ठीक है" ऐसा कह करके अपने कर कमल से त्रिगुणा जी के सिर पर स्पर्श किया।

नैनीताल से आगे अल्मोड़ा रानीखेत मार्ग पर कैंची नामक एक सिद्ध तपस्थली है जिसमें नीमकरौली वाले बाबा अपनी चमत्कारिक सिद्धियों से भक्तों को तथा दीन दुखियों को उपकृत करते थे। उनकी एक घटना भी यहां उल्लेखनीय हैं श्री त्रिगुणा जी ने बताया कि दो वर्ष से निरन्तर उनके पास से बहुत रोगी देश के विभिन्न प्रान्तों से तथा दिल्ली के मंत्रीगण अधिकारी वर्ग भी आते। बाबा जी का नाम लेकर कहते थे कि उन्होंने बताया है कि दिल्ली में एक त्रिगुणा नामक वैद्य है उनसे परामर्श एवं चिकित्सा लें। वैद्य जी के मन में उनके दर्शनों की जिज्ञासा बहुत दिनों से थी। अचानक एक दिन जन्माष्टमी की प्रातः काल उनके दर्शनों के लिए उनकी साधना स्थली को चल पड़े, कार में घर से चले ही थे कि कोटला ग्राम का गुलजारी लाल बजाज हाथ जोड़कर सामने खड़ा हो गया जो साथ जाने को उत्सुक था उसे भी साथ बैठा लिया। सौ कदम चलने पर अपने ही गांव का एक चौधरी ज्ञानचंद्र भी साथ जाने के लिए आग्रह करने लगा। उसको भी गाड़ी में ले लिया। लगभग मध्याह्नोत्तर आश्रम से कुछ मील पहले भुवाली नामक एक छोटा ग्राम जो ताजे सेवों की मंडी है वहां से एक पेटी सेवों की ली और दोनों साथियों को कहा कि तुम लोग भी कुछ फल आदि ले लो उन्होंने कहा कि एक ही काफी है। तब आगे चले आश्रम में पहुंचने पर देखा, स्थानीय लोगों तथा विभिन्न प्रान्तों तथा विदेशों के लोगों की बड़ी भीड़ हो रही थी। पूछने पर पता लगा कि महाराज ४ बजे अपनी कुटिया से बाहर आयेंगे। ठीक चार बजे बाबा बाहर आये, एक तख्त पर बैठ गये बड़ी ही तेजस्वी ओजस्वी एवं प्रसन्न मुद्रा लिए। आप दिल्ली से आये हो आओ। मेरे पास बैठ जाओ। वैद्य जी ने फलों की पेटी खोलकर उनके सामने भूमि पर रख दी तो एक हाथ वैद्य जी के सिर पर फेरते रहे दूसरे हाथ से फल उठा-उठाकर भक्तों की ओर फेंकने लगे। बड़े प्रेम पूर्वक कुछ बाते कहने व पूछने लगे। वैद्य जी उनके इस प्यार से बहुत ही प्रभावित हुए एवं भरपूर अशीर्वाद से मुग्ध हो गये। तब अचानक कहने लगे अच्छा अब आप दिल्ली जाओ। वैद्य जी बड़े घबराये कहा कि महाराज मार्ग की थकावट ही पहले बहुत है तथा रात्रि की यात्रा भी सुरक्षित नहीं लगती। बाबा बोले अच्छा तुम नैनीताल चले जाओ कुछ देर नैनीताल का पर्यटन करो वहां एक कृष्ण मंदिर है वहां कृष्ण जन्म उत्सव मनाना तथा कुछ देर विश्राम करने के बाद सूर्योदय के पहले पहाड़ से उतर जाना, मैंने तो तुम्हारे मन की जिज्ञासा जानकर बुलाया है। ये तुम्हारी और हमारी पहली और अंतिम भेंट है। ये सुनते ही मन भयार्त एवं दुविधाजनक हो गया और आगे कुछ न कहते हुए चरणों में प्रणाम किया, आशीर्वाद मिला वहां से चल पड़े। नैनीताल में आकर ताल के एक-दो चक्कर लगाने पर भी सुरम्य पर्यटक स्थल का सौन्दर्य एवं भव्यता का प्रभाव

मन के अंदर हो रही उथल-पुथल अर्थात् प्रथम और अंतिम मिलन है, को शांत नहीं कर सके तब देव मंदिर में जाकर जन्माष्टमी उत्सव में पूजन किया, उस दिन जन्माष्टमी उपवास था। अतः २-३ घण्टे विश्राम करके वापस चल पड़े। सूर्योदय से पहले ही काठगोदाम आकर एक मंदिर धर्मशाला में स्नान, विश्राम किया। कुछ जलपान किया, इतने में खबर मिली कि ऊपर से आती हुई एक बस दुर्घटना ग्रस्त हो गई है। मन अशांत था वापस दिल्ली आकर अपने चिकित्सा कार्य में भी मन नहीं लगता था, बार-बार वही बात सामने आती थी कि अब तुम्हारी और हमारी अंतिम भेंट है। ४-५ दिन के बाद मन अधिक चिन्तित होने पर देवदर्शन यात्रा का निमित्त बनाकर वृन्दावन में दो दिन मंदिरों के दर्शन किये परन्तु मन अशांत रहा। वहां से वापस प्रातः ६ बजे चले और ८ बजे देहली आ गये। घर के सामने जब कार से बाहर पैर रखा ही था कुछ रोगी खड़े थे। उनमें से ३-४ रोगी वैद्य जी के पास आये और कहा कि हमें नीम करौली बाबा जी ने भेजा है कि आपसे चिकित्सा करायें परन्तु दुःख का समाचार है कि बाबा जी शरीर छोड़ गये और उन्होंने वृन्दावन में आकर ही शरीर छोड़ा जबकि वैद्य जी उसी दिन ही वृन्दावन पहुंचे थे। यह सुनते ही एकदम वह अंतिम भेंट वाली गुत्थी सुलझ गयी जिसको कि बाबा ने अंतिम भेंट बतलायी थी। बाबा ने देहली में एक हनुमान जी का मंदिर जौनापुर में महरौली की तरफ बनवाया हुआ था वहां कुछ लोग उनके दस दिन के बाद के कार्य क्रम में उपस्थित थे उस दिन वैद्य जी भी वहां गये तो उस मूर्ति में साक्षात्कार हुआ। बाबा कह रहे थे उस शरीर की अंतिम भेंट थी, परन्तु अब आगे तुम्हारी हमारी भेंट होती रहेगी, वरदहस्त मुद्रा में उस मूर्ति ने बाबा का रूप धारण करके ही आशीर्वाद भी दिया।

अनन्त श्री विभूषित, परम श्रद्धेय, युगसंत, विश्ववन्द्य, समस्त वेद विद्याओं की उपलब्धियों से परिपूरित, जितात्मन्, भावातीत ध्यान साधकानाम्, पितृवत्शरण्य, बुद्धि, स्मृति, ज्ञानतपोनिवासः, मुनीन्द्र विद्याधर सिद्धसेवित, वेदलोकार्थ तत्वज्ञ, ब्रह्मचारीगण परिवृत, उदारकीर्ति, परमार्थवितभूतहितेरतपरावरज्ञः, ब्राह्म्याश्रियान्वितः, महर्षि परम्पराओं के संरक्षक श्री गुरुचरणानुरागी महर्षि महेश योगी राज जी का सान्निध्य, पूर्वजन्म के संस्कारों से, संबन्धित वैद्य जनों की एक संगोष्ठी सम्पन्न करने के लिए इन पंक्तियों के लेखक वैद्य गोरी लाल चानना एवं वैद्य श्री त्रिगुणा जी का आह्वान किये जाने पर साक्षात् भेंट के समय पूर्ण आयुर्वेद के प्रकाशनार्थ बीजारोपण सिद्ध हुआ, वह एक ऐसा दृश्य था महर्षि जी की गम्भीर चिन्तन शील मुद्रा में ऐसा लग रहा था कि महर्षि जी संसार के समस्त प्राणियों के रोग समूह से आक्रान्त किसी दृश्य का अवलोकन कर रहे हो। कुछ ही क्षणों में महर्षि जी की मुख मुद्रा प्रसन्नता में परिवर्तित होती हुई बड़ी ओजस्विनी वाणी से प्रकट हुई।

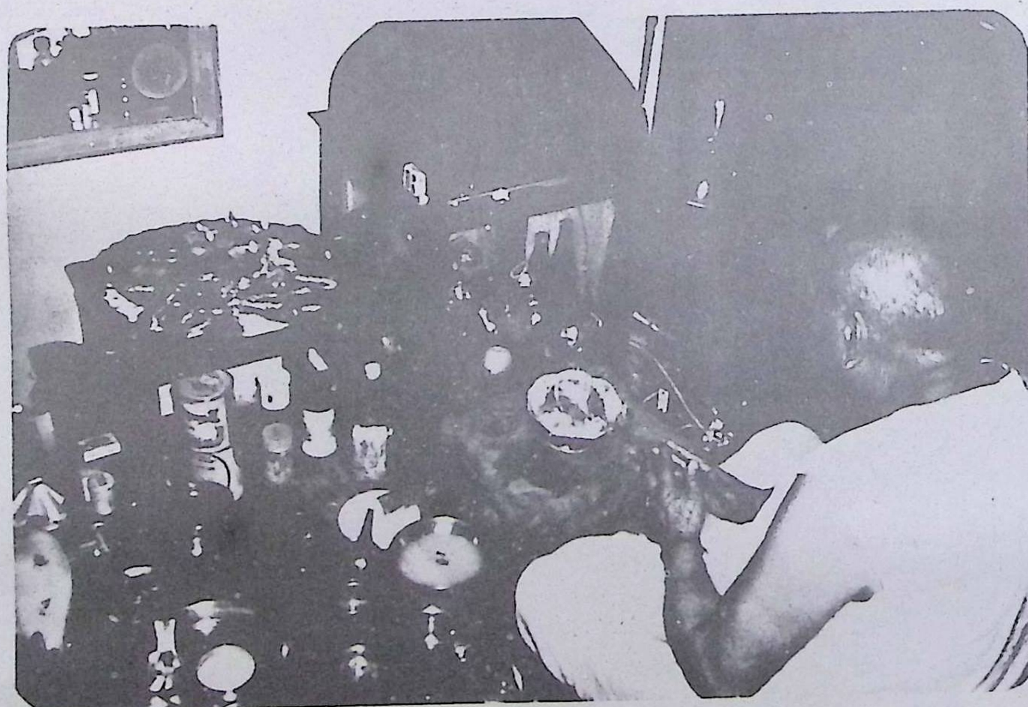
बड़े सौम्य ओर प्रिय मृदु भाव लिये हुए महर्षि जी बोले त्रिगुणा जी – आज विश्व का मानव रोगाक्रान्त दीन एवं असहाय प्रतीत हो रहा है।भावातीत ध्यान साधना से मानसिक शान्ति एवं आभ्यान्तरिक मनोमय कोष सवल एवं दुःख विमुक्त तो हो रहा है परंच यह आधार रूप शरीर अस्वस्थ होने से साधक का सर्वांगीर्ण विकास नहीं हो रहा है। इसके लिये अमृत विद्या, ब्रह्म विद्या ही एक उपाय है प्राण विद्या भी इसी का पर्याय है। तब महर्षि जी के इन हृदय स्पर्शी शब्दों से श्री त्रिगुणा जी ने "आयुर्वेदोऽमृतानाम्" की याद दिलायी। महर्षि जी ने विभोर एवं प्रोत्साहित



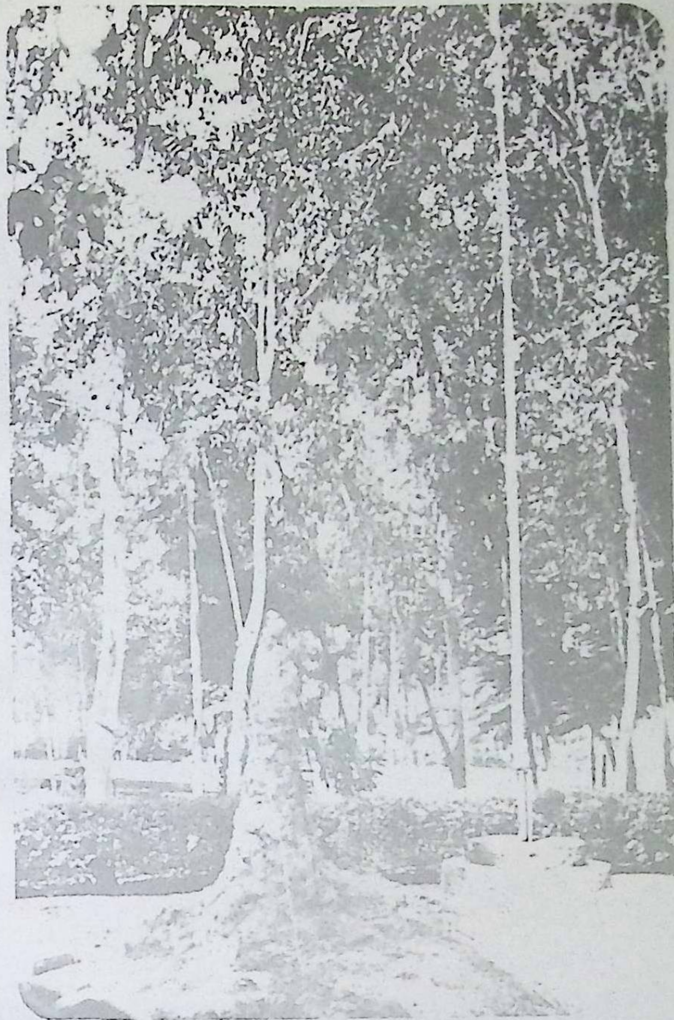
राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के पूज्य पिता स्वनामधन्य स्व० श्री पं० चानन राम जी त्रिगुणा।



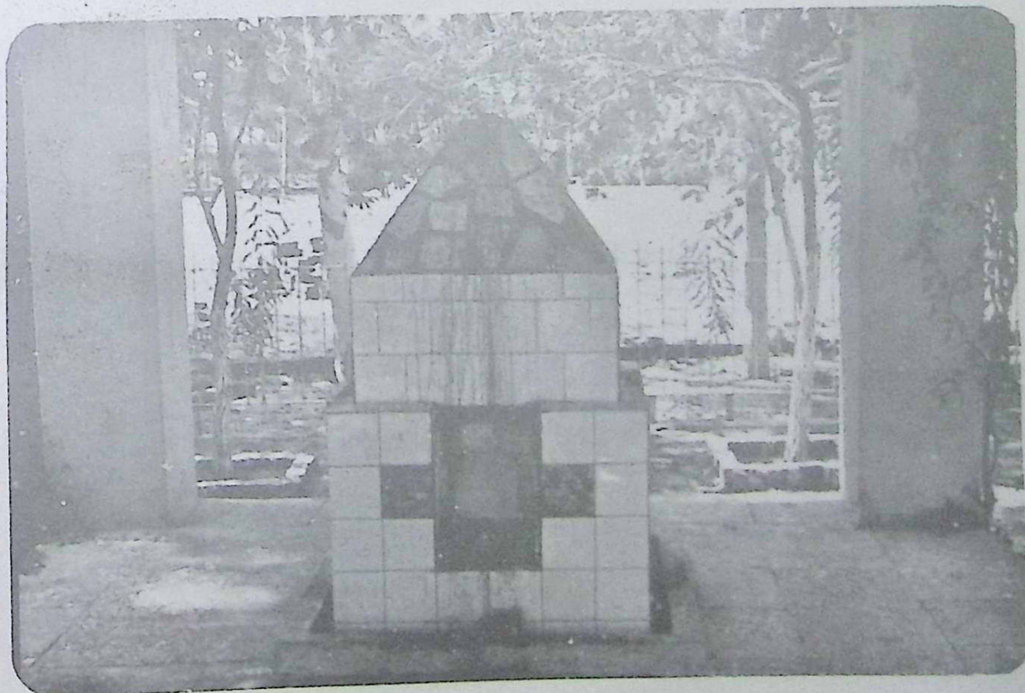
वैद्य श्री त्रिगुणा जी की धर्म परायणा पत्नी स्वनामधन्या श्री मती सोहन देवी



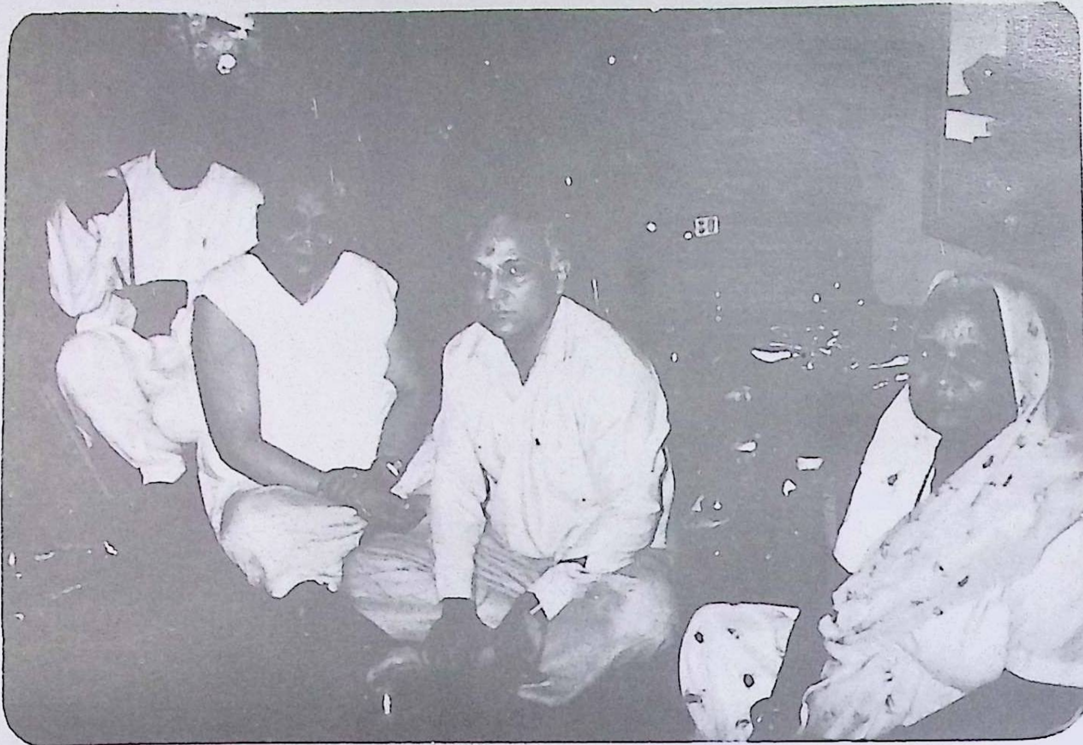
वैद्य श्री त्रिगुणा जी उपासना के समय भक्ति भाव के साथ



वैद्य श्री त्रिगुणा जी के कुल देवता बाबा चूहड़ स्थान



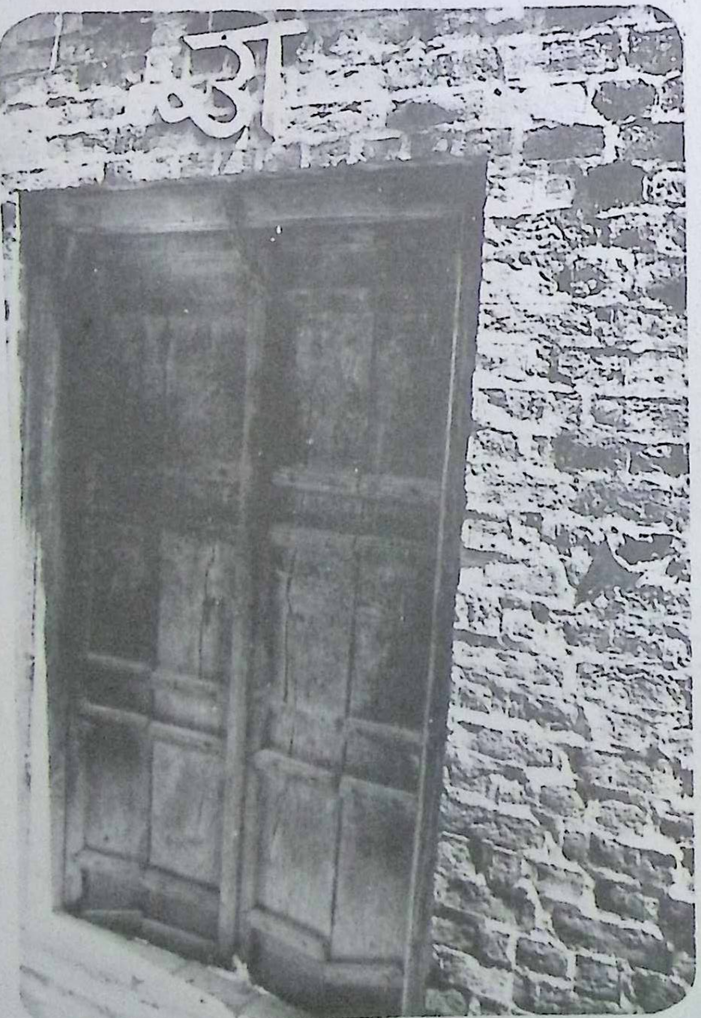
वैद्य श्री त्रिगुणा जी की कुल देवी दादी महासती मंदिर



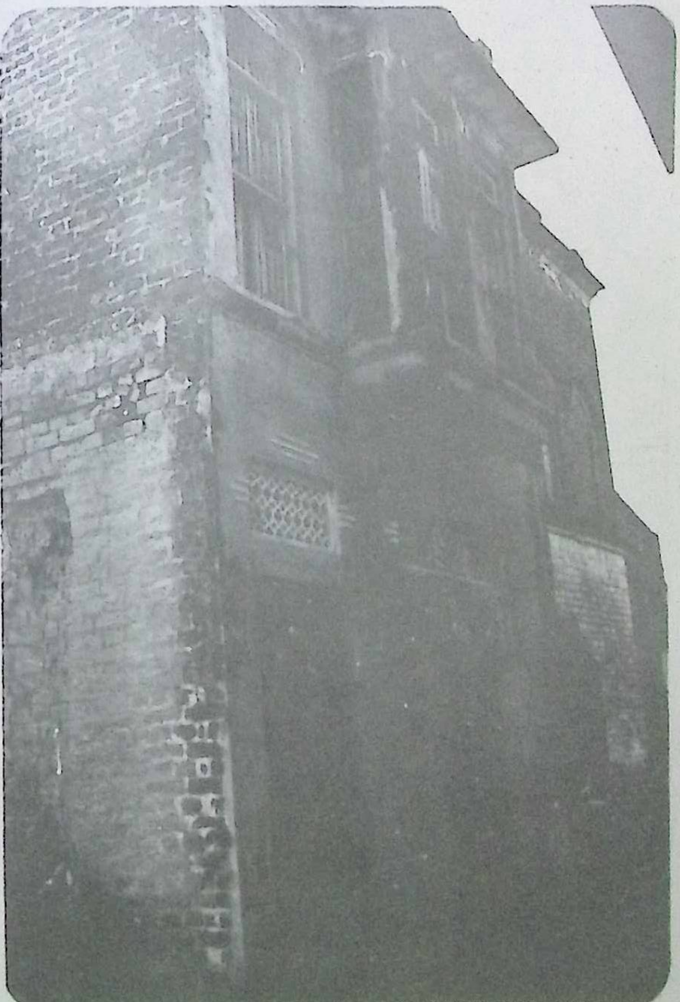
वैद्य श्री त्रिगुणा जी अपने दोनों पुत्रों तथा धर्मपरायणा पत्नी श्री मती सोहन देवी के साथ पूजा गृह में



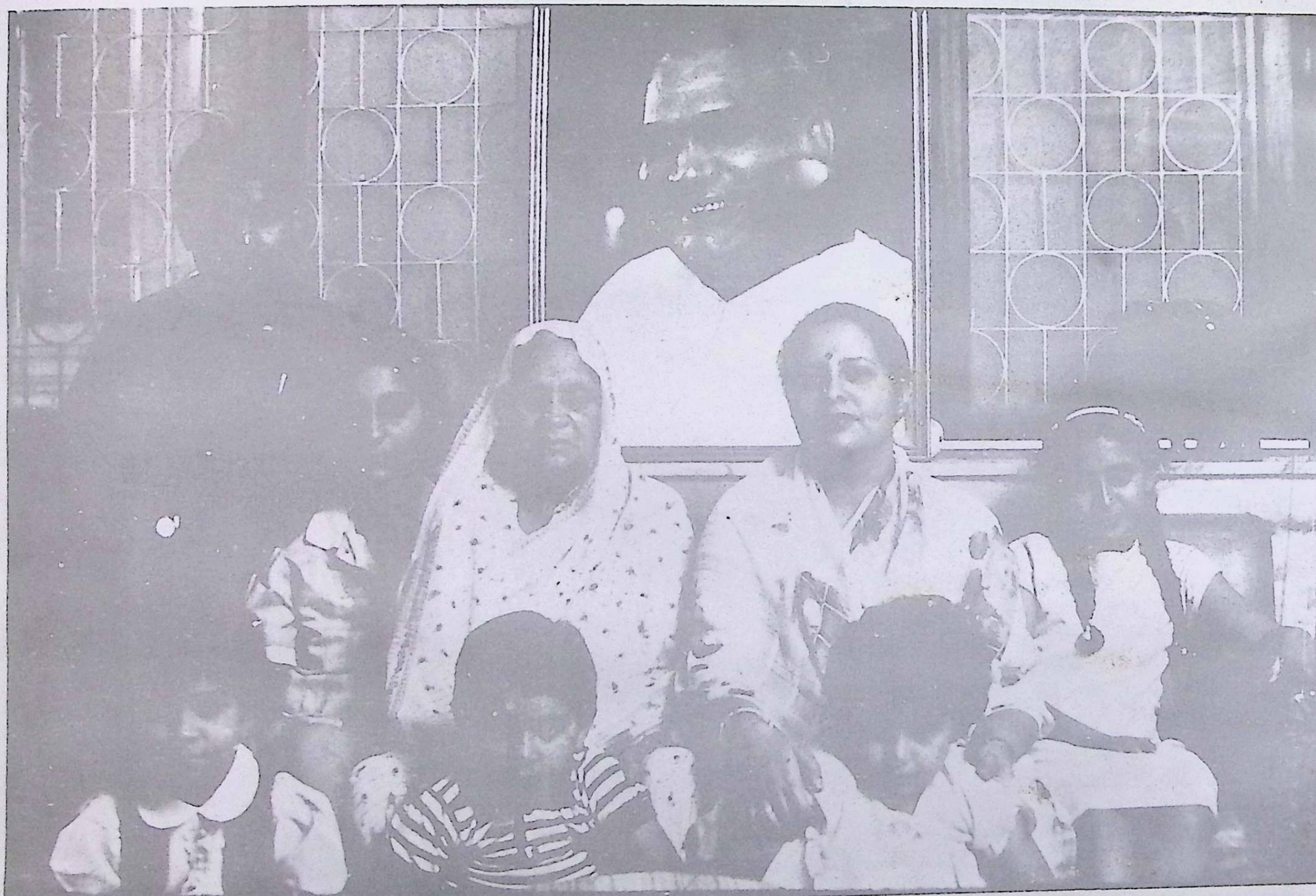
वैद्य श्री त्रिगुणा जी के ज्येष्ठ पूत्र श्री नरेन्द्र त्रिगुणा के पुत्र चि. कपिल त्रिगुणा पुत्री अल्पना



वैद्य श्री त्रिगुणा जी के मूल ग्राम गृहस्थान बड़ा पिण्ड जिला जालन्धर का दुर्लभ चित्र



वैद्य श्री त्रिगुणा जी के वैद्यक कार्य का व्यवसाय स्थल (पूर्व)



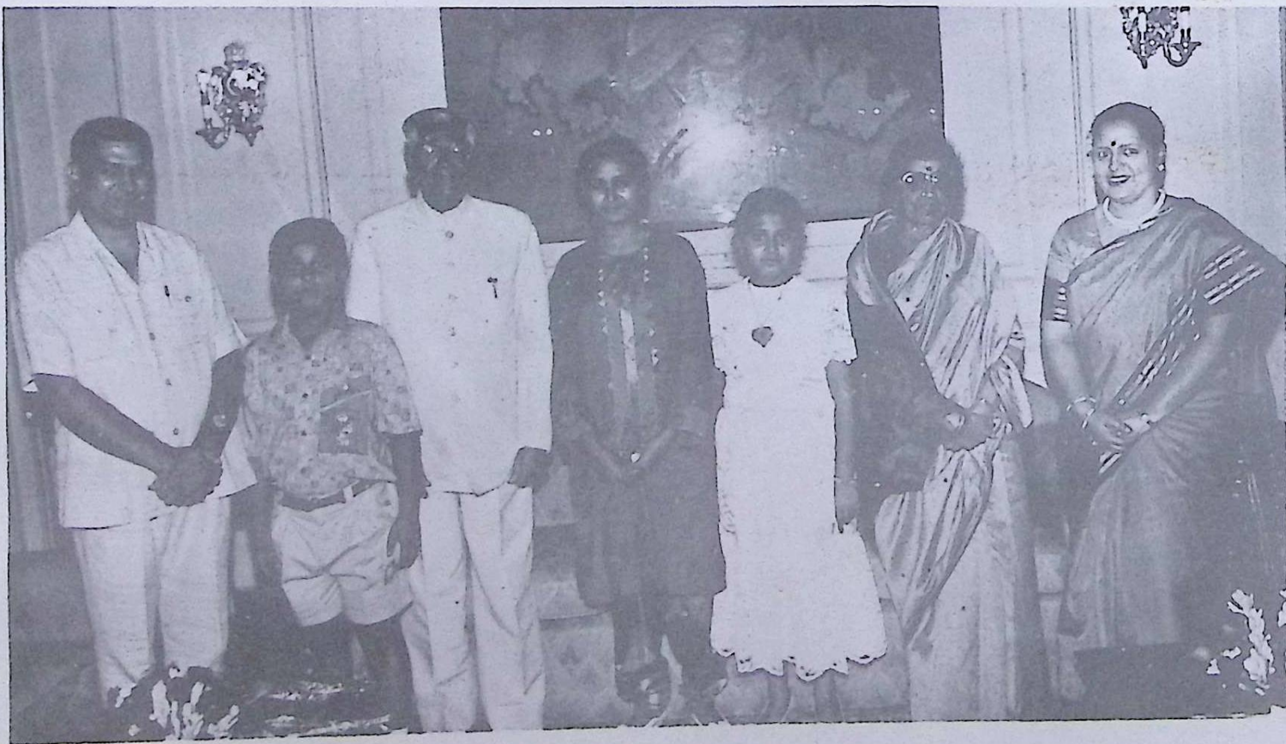
राजवैद्य श्री त्रिगुणा जी प्रसन्न मुद्रा में अपने पूरे परिवार पत्नी पुत्र बधू तथा पौत्री, पौत्रों के साथ



वैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणाजी के ज्येष्ठ पुत्र श्री नरेन्द्र त्रिगुणा प्रवंध इन्जीनियर



वैद्य श्री त्रिगुणा जी के कनिष्ठ पुत्र श्री देवेन्द्र त्रिगुणा महामहिम राष्ट्रपति श्री वैंकट रमण उपराष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा तथा प्रधान मंत्री श्री पी. वी. नरसिंहाराव जी के साथ



वैद्य श्री त्रिगुणा जी के कनिष्ठ पुत्र श्री देवेन्द्र त्रिगुणा अपने परिवार के साथ राष्ट्रपति महामहिम श्री वेंकटरमण के परिवार के साथ

अवस्था में स्थिर चित्त होकर "आयुर्वेदोऽमृतानाम्" का तीन बार उच्चारण किया, ऐसा लगा जैसे उनकी इच्छा की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त हो रहा है। तब त्रिगुणा जी ने महर्षि जी के सामने आयुर्वेद द्वारा मानव जीवन को पूर्ण स्वस्थ करने का एक मात्र उपाय, रसायन योगों, द्रव्यों एवं प्रकृति के नियमानुसार दिनचर्या, रात्रि चर्या, ऋतुचर्या तथा युक्ताहारविहार के द्वारा समस्त प्रज्ञापराध जन्य रोगों को दूर करने का साधन विद्यमान है अतः आप समस्त आयुर्वेदज्ञ एवं अन्य वेद विद्याओं के सिद्ध पुरुषों को एक मंच पर एकत्रित करें। इस वार्तालाप में महर्षि जी द्वारा समस्त भारत के विद्वान् सिद्धहस्त चिकित्सकों को बुलाने का मन बना।

वह समय आयुर्वेद की सुप्तावस्था से जागृति का शुभ मूहूर्त बन गया अतः तत्क्षण एक लम्बी सूची वैद्य महानुभावों की निखिल भारत वर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन से दूरभाष द्वारा प्राप्त कर ली गयी, महर्षि जी के आदेशानुसार समस्त देश में दूरभाष द्वारा जिनको जो साधन प्राप्त हों, हवाई जहाज, प्रथम श्रेणी रेल गाड़ी द्वारा तथा निकटवर्ती प्रान्तों से कार द्वारा भारत की राजधानी में पहुंचने के लिए आह्वान किया गया, वैद्य समाज की ओर से इस आह्वान का सोत्साह सहर्ष स्वागत हुआ तथा उनका आगमन शुरू हो गया, समागत वरिष्ठ वैद्यों में से कुछ नाम उल्लेखनीय हैं।

आचार्य हरिदत्त शास्त्री बम्बई, आचार्य श्रीराम शर्मा बम्बई, आचार्य गुलराज मिश्र नागपुर, आचार्य शिवकरण छंगाणी जी नागपुर, वैद्य गौरी लाल चानना दिल्ली, आचार्य श्री वासुदेव द्विवेदी जामनगर, आचार्य श्री दीक्षित जी वाराणसी, वैद्य धर्मदत्त जी बरेली स्वास्थ्य मंत्री उत्तर प्रदेश, आचार्य दयाराम अवस्थी लखनऊ, आचार्य श्री सीताराम जी मिश्र जयपुर आदि।

लगभग डेढ़ सौ वैद्य महानुभाव सम्मिलित हुए। इस वैद्य समूह के मध्य तत्कालीन ज्योतिर्मठाधीश परमपूज्य शंकराचार्य श्री विष्णुदेवानन्द सरस्वती जी के सान्निध्य में महर्षि जी के मन में रस विधान को पूर्णतया सिद्ध करने की बलवती इच्छा जागृत हुई। तत्कालीन श्रीमद्परमहंस परिव्राजकाचार्य, श्रीमद् गोविन्द भगवत् पाद विरचित, रस हृदय तंत्र के अनुसार पारद संस्कार सिद्धहस्त, रसाचार्य की देख-रेख में इस अमृत विद्या को, जो विद्या महर्षि जी की पूर्व परम्पराओं से प्राप्त है जो प्रायः गुप्त लुप्त हो चुकी है, श्री त्रिगुणा जी के द्वारा पूर्वारम्भ किया गया।

इस प्रकार प्रारम्भ में समस्त भारत वर्ष से रससिद्धों, सिद्धहस्त रसायनाचार्यों तथा कुशल औषध निर्माताओं का चयन किया गया, जिसमें सर्व प्रथम आदरणीय वैद्य स्व० मूलशंकर वासुदेव द्विवेदी जी जामनगर वालों को इस कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए नियुक्त किया गया।

यहाँ से ही भारतीय आयुर्वेद को विश्व - आयुर्वेद बनाने का अभियान आरम्भ हुआ। उन्हीं दिनों महर्षि जी द्वारा दिल्ली के बहुत विद्वान् आचार्यों, संस्कृत विद्यालय के कुलपतियों, ज्योतिर्विदों को भी सादर निमन्त्रित कर सम्मानित किया गया।

त्रिगुणा जी की ख्याति देश के सुदूर प्रान्तों में प्रचार प्रसार पा चुकी थी ऐसे ही समय में श्रद्धेय महर्षि जी ने देश के मूर्धन्य वैद्यों का एक सम्मेलन आमंत्रित किया। इसमें महर्षि जी ने सौम्य भाव से बड़े प्रभावशाली शब्दों में त्रिगुणा जी को कहा कि अब आपके आयुर्वेद प्रचार प्रसार के विश्व व्यापी अभियान में उत्तरदायित्व पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। यह गुरुतर भार आपको

ही उठाना होगा तब श्री त्रिगुणा जी ने विनम्र शब्दों में कहा कि मान्य महर्षि जी आपका आदेश शिरोधार्य है मैं आयुर्वेद सेवा के लिये इस अभियानहित पूर्णतया सन्नद्ध एवं समुद्यत हूँ।

विदेश यात्रायें

इसके पश्चात् आपकी विदेश यात्रायें समारम्भ हुई। सर्वप्रथम २७-७-७८ को आपने हालैण्ड पहुंच कर वहां के राजनेताओं वरिष्ठ उच्चाधिकारियों से सम्पर्क स्थापित कर आयुर्वेद के सिद्धान्तों से उन्हें अवगत कराया। एकत्रित जनसमुदाय को आयुर्वेद सिद्धान्तों से परिचित कराने हेतु आप के कई अभिभाषण वहां हुए। दिनांक ११-८-७८ को आप जर्मनी के प्रमुख नगर म्यूलहायम पहुँचे। वहां स्वास्थ्य सम्बन्धी एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। वहां नगर के गण्यमान्य व्यक्ति उच्च पदाधिकारी डॉक्टर इंजीनियर आदि उपस्थित थे। इस सभा में वैद्य जी ने यह सिद्ध किया कि आयुर्वेद ही पूर्ण स्वास्थ्यप्रद चिकित्सा पद्धति है। अन्य चिकित्सा पद्धतियों में वे विशेष सिद्धान्त नहीं हैं जो कि आयुर्वेद में हैं। यहीं पर उनके सम्मान में स्वल्पाहार की व्यवस्था की गयी थी किन्तु वैद्य जी ने यह कहकर उनके पात्रों में जलपान करना अस्वीकार कर दिया कि आप आमिष आहारी हैं। मैं शाकाहारी हूँ, इसी प्रसंग में प्रश्नोत्तर होने लगे उन्होंने कहा कि आमिष और दुग्ध में कोई अन्तर नहीं ये सभी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। ग्रहण करने की विधियां अलग हैं। वैद्य जी से सत्रह प्रश्न किये गये किन्तु इनके उत्तर से उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने कहा आप स्पष्ट रूप से समझाने की कृपा करें कि दोनों के हानि-लाभ में क्या अन्तर है। वैद्य जी ने उनको स्पष्ट समझाने के लिये यह सत्य उद्घाटित किया कि जब कोई भी पशु बध के लिये बूचड़ खाने में ले जाया जाता है तब उसे उस समय कितनी यान्त्रिक यंत्रणा व पीड़ा दी जाती है जो कि रोंगटे खड़े कर देने वाली होती है। वधिक अधिक आमिष की लालसा से उन पर उष्ण जल प्रक्षेप सतत यन्त्रचालित वेतों का प्रहार, तदनन्तर अकस्मात् स्वचालित क्षुरिका प्रहार से पशु का प्राणान्त होता है। इस दुष्प्रक्रिया में पशु सहमा सहमा भयभीत व क्रोधान्वित रहता है। यह भय और क्रोध के भाव उस पशु के मांस में अन्तर्निहित रहते हैं, जो कि इसे भक्षण करने वालों में यथावत् अवतरित होते हैं, जबकि दूसरी ओर किसी दुग्धवती धेनु के समक्ष उसका वत्स छोड़कर दूध निकाला जाता है, तब वात्सल्यमयी दृष्टि बारम्बार उसके वत्स पर रहती है। वात्सल्य के यह सभी सात्विक भाव उस धेनु के दुग्ध में विद्यमान रहते हैं जो इस दूध को पीने वाले के शरीर में पहुँचते हैं।

उपस्थित सभी आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं ने यह बात स्वीकार कर ली और उसी समय २५० लोगों ने अपने हाथ उठाकर यह प्रतिज्ञा की कि आज से वे आमिष भक्षण नहीं करेंगे और वे सभी वैद्य जी के अनुयायी बन गये। अब तक भी प्रतिवर्ष इनके पास उनके सन्देश आते रहते हैं। ऐसा ही प्रसंग इनके घनिष्ठ मित्र पं० मंगतराम जी के पुत्र के वहां घर पर भी जब ये चिकित्सार्थ गये तो उपस्थित हुआ। उनको भी इस प्रवृत्ति से दूर रहने का परामर्श दिया और स्वकीय निकटस्थ सम्बन्धी अमृतसरिया राम जी के यहां आहार ग्रहण किया।

१९७९ में आपने नेपाल काठमाण्डू की यात्रा वहां के राजवैद्य जी के आमंत्रण पर सम्पन्न की। राज परिवार और सम्पूर्ण नेपालस्थ वैद्य समाज द्वारा आपको सम्मानित किया गया। आपके आयुर्वेद सम्बन्धी पुष्ट विचारों को सुनकर वहां के आयुर्वेद चिकित्सक अति प्रभावित हुए उसी समय आपने वहां विश्व प्रसिद्ध अपने आराध्य देव शंकर भगवान् पशुपति नाथ के दर्शन कर आत्मतुष्टि का अनुभव किया।

१९८० में स्विटजरलैण्ड की विदेश यात्रा के पूर्व प्रसंग में नई दिल्ली में पूज्यपाद महर्षि जी द्वारा समाहूत महर्षि जी के विदेशी भक्तों की एक विशाल जनसभा श्री रामनाथ गोयनका के सानिध्य में इंडियन एक्सप्रेस के विशाल सभागार में सम्पन्न हुई इसमें करीब ५००० विदेशी व्यक्ति सम्मिलित थे। वैद्य जी का वहां समागत महानुभावों के सम्मुख आयुर्वेदोत्थान के लिये प्रभावी भाषण हुआ। इस समायोजन में करीब १००० व्यक्ति यात्राजन्य व ऋतुदोषज रुग्णता से सामूहिक रूपेण अस्वस्थ हो गये। उन्हें अस्पताल ले जाने के लिये सोचा जा रहा था कि श्री त्रिगुणा जी ने उन्हें रोककर अपनी विशुद्ध आयुर्वेदीय चिकित्सा से उपचार प्रदान कर सभी को रोग मुक्त किया। पश्चात् वैद्य भुवन चन्द्रजी जोशी; वैद्य गौरी लाल चानना एवं कुछ अन्य वैद्यों के एक दल की स्थाई रूप से नियुक्ति कर दी जो प्रतिदिन वहां जाकर अस्वस्थ अतिथियों में औषधि वितरण और उनके स्वास्थ्य की देखभाल करते थे।

स्विटजरलैण्ड में आपके साथ वैद्य श्री हरिदत्त शास्त्री श्री राम शर्मा एवं वेणीमाधव जी बम्बई आदि प्रसिद्ध वैद्य थे। यहां पर सिलिसबर्ग में प्रायः सम्पूर्ण विश्व के देशों से सभी चिकित्सा पद्धतियों के चिकित्सक विचार विमर्श हेतु वहां की सरकार द्वारा आमंत्रित किये गये थे। सभी ने अपने विचार व्यक्त किये। आयुर्वेद चिकित्सकों को सबसे पीछे विचाराभिव्यक्ति का अवसर दिया गया। वैद्य श्री त्रिगुणा जी द्वारा नाड़ी निदान विषयक प्रकरण समुद्धरित करने पर वहां के एक विशिष्ट व्यक्ति ने अपना नाड़ी परीक्षण करवाया। त्रिगुणा जी ने उसके दोषदूष्य संकल्पना का विश्लेषण करके उसकी सारी व्याधि की व्यथा कथा बतायी और यह स्पष्ट रूपेण कहा कि आपके कोई सन्तान नहीं है। पास में बैठी उसकी पत्नी अचम्भित हो कर कह उठी कि सारी स्थिति यही है। उपस्थित जन समूह इस नाड़ी परीक्षण के चमत्कार को प्रत्यक्ष देखकर आश्चर्यान्वित हुए बिना न रह सका और वहां प्रतिदिन नाड़ी निदान और उपचार के लिए हजारों व्यक्तियों की पंक्ति प्रतीक्षारत रहने लगी। इसी प्रसंग में १९८१ में भी पुनः आपने स्विटजरलैण्ड की यात्रा की।

१९८३ में आपको अफ्रीकी देश कीनिया के प्रसिद्ध उद्योग पति श्री जयन्ती भाई शाह ने अपने परिवार के एक कष्ट साध्य रोगी को आयुर्वेदीय उपचार देने के लिए नेरोबी में आमन्त्रित किया।

यहां पर करीब दो लाख भारतीय मूल के निवासी हैं। जब जयन्ती भाई शाह के परिवार के उस कष्ट साध्य रोगी को स्वास्थ्य लाभ होते हुए देखा तो वहां नित्य प्रति रोगी जनों की पंक्ति लगने लगी उनका भी उपचार किया गया। नामधारी सन्त श्री प्रतापसिंह जी भी वहीं थे। उन्होंने वैद्यजी से भेंट की। उन्हीं दिनों महर्षि जी भी वहीं पर विराजमान थे उनका सानिध्य भी प्राप्त हुआ। २८-दिसम्बर, १९८४ को हालैण्ड यात्रा का वह समारम्भ हुआ कि अब तक वैद्य जी इस देश की १३

बार यात्राएं कर चुके हैं। इस यात्रा का प्रथम दिन २९-दिसम्बर वह पावन दिवस था जिस दिन से श्री महर्षि जी सोपवास मौन सहित एकान्तवास में ध्यानावस्थित रहते हैं। एक सप्ताह तक किसी को भी दर्शन लाभ प्राप्त नहीं होता। इस एक सप्ताह के अन्तर्गत करीब एक हजार हालैण्ड वासियों ने श्री वेद्य जी से अपना रोग निदान व चिकित्सोपचार प्राप्त कर स्वास्थ्य लाभ किया।

इसी सुभावसर पर ७ हजार भावातीत ध्यान साधकों का जन समूह वैद्य जी के साथ हर्षोल्लसित था जब श्री महर्षि जी ने सप्ताहान्त में अपना मौन एकान्तवास सबके समक्ष प्रकट होकर समापन किया। इसमें सर्वप्रथम वक्ता वैद्यजी ही थे।

वहां से आपने प्रस्थान करके उसी दिन वांशिगटन में समायोजित श्री महर्षि जी के जन्म दिवसोत्सव के भव्य आयोजन में भी भाग लिया और रोगी निरीक्षण भी किया। आपके चिकित्सा कौशल से प्रभावित वहां के जन प्रतिनिधियों, मंत्रियों राजनेताओं द्वारा आपको बारम्बार आमंत्रित किया गया और अब तक आप अमरिका में न्यूयार्क, लासएन्जल्स, फेयर फील्ड आदि अमेरिका के प्रमुख नगरों की आयुर्वेद चिकित्सा संदर्भ में १० यात्राएं कर चुके हैं वहां का स्वास्थ्य मंत्रालय आपके चिकित्सा कौशल से प्रभावित हुआ है। इस देश में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में आपका बड़ा योग दान रहा है।

तद्वत इंग्लैण्ड की भी आपने बारम्बार ११ यात्राएं की हैं। इंग्लैण्ड की राजधानी लन्दन आपका चिकित्सा क्षेत्र रहा वहां अनेक राष्ट्र नायकों से राजनेताओं से आपका निकट का सम्पर्क रहा है।

१९८५ में ही आप स्विटजरलैण्ड, जेनेवा स्थित विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के मुख्यालय पर समस्त विश्व के स्वास्थ्य मंत्रियो के सम्मेलन के अवसर पर भी पधारे। इसमें आपने विभिन्न देशों के स्वास्थ्य मंत्रियों से मिलकर आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार हित पूर्ण प्रयास किया। इससे विश्व में आयुर्वेद के प्रति निष्ठा व श्रद्धा जगी।

जुलाई १९८५ में इन पंक्तियों के लेखक कविराज गौरी लाल चानना वैद्य श्री राम शर्माजी आदि प्रसिद्ध वैद्य विद्वानों के साथ अमेरिका तथा यूरोप के कुछ देशों की यात्रा एक मास तक की गई। साथ में सांसद श्री रामचन्द्र विकल एवं पी० राधाकृष्ण सदस्य राज्यसभा (आन्ध्र) भी थे। यह यात्रा आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से अति महत्व पूर्ण रही। विश्व के विभिन्न देशों में जाकर आयुर्वेद के सिद्धान्तों की समीक्षा करके वहां जन मानस को आयुर्वेद की ओर प्रवृत्त करना इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य रहा। वैद्य महानुभावों का सहयोग, सांसद सदस्यों का सानिध्य इसमें अति उपयोगी व फल प्रद रहा।

महर्षि जी के निजी विमान "राजहंस" की इस यात्रा का एक सुखद संस्मरण आज भी त्रिगुणाजी की तथा उनके साथी यात्रियों की स्मृति पथ पर आकर इन्हें भावान्दोलित कर देता है। सभी आधुनिक सुख सुविधाओं से सुसज्जित प्रथक् कक्षीय इस विमान पर आरूढ़ सभी संभ्रान्त जन अमेरिका की यात्रा पर थे कि सारा सहयोगी सहयात्री वृन्द निद्रा देवी की सुखद गोद में सो रहा था। तभी "यानिशा सर्व भूतानाम् तस्यां जागर्ति संयमी" के अनुसार श्री त्रिगुणाजी और श्रद्धेय महर्षि जी के बीच विचार विमर्श चल रहा था। ज्ञान और ध्यान योग विषयक परिप्रेक्ष्य में "योगस्थः कुरु

कर्माणि" पर गहन चिन्तन मनन हुआ। श्री महर्षि जी के यह पूछने पर कि त्रिगुणा जी आप इस ध्यान योग के संबन्ध में किस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, श्री त्रिगुणा जी का तत्काल यह उत्तर था कि–

न किञ्चित् क्रियते यत्र, न किञ्चित् ज्ञायते ऽपिवा ।
ईष्यते नापि वा किञ्चित् स योगः परमोऽस्ति नः ॥

ज्ञान योग क्रियायोगौ, इच्छायोगोऽपिवापुनः ।
यत्र सम्पूर्णताम् याति स योगः परमोऽस्ति नः ॥

तत्काल प्रस्फुरित इस व्याख्यायित सिद्धान्त से महर्षि जी अति प्रसन्न हुए। उनकी अजस्र मधुर प्रवाहमय ध्यान योगिक विचार धारा की शब्दावलि से आज भी त्रिगुणाजी का मानस सम्प्लावित हे। तत्कालीन उन क्षणों को ये दैवी संयोग ही मानते हैं।

१६८६ में मारिशस की यात्रा वहां की तत्कालीन सरकार के निमन्त्रण पर सम्पन्न की गयी। वहां के प्रधान मंत्री, स्वास्थ्य मंत्री व विभिन्न विभागों के मंत्रियों ने आपका भव्य स्वागत सत्कार किया और मारिशस में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसारार्थ उपायों पर विचार विनिमय करके आपका मन्तव्य जानना चाहा। इस प्रसंग में आपने दिशा निर्देश दिया कि आप भारत सरकार से सम्पर्क करके वहां के परामर्शानुसार अपने देश में आयुर्वेदोत्कर्ष की योजना बनाएं। वहां की सरकार ने तदनुसार सम्बन्ध स्थापित किया। परिणामतः आज मारीशस में आयुर्वेद फल-फूल रहा है। अच्छे विद्वान् वैद्य वहां कार्य रत हैं। मारिशस में ५५ प्रतिशत भारतीय मूल के लोग हैं। आयुर्वेद चिकित्सा को विधिवत् मान्यता प्रदान करने संबन्धी कानून जब मारीशस की संसद में प्रस्तुत हुआ, इस शुभावसर पर मारीशस सरकार द्वारा वैद्य श्री त्रिगुणाजी को पुनः वहां आमन्त्रित किया गया। किन्तु कार्यवश आप वहां नहीं जा सके। इस लेख के लेखक वैद्य गौरी लाल चानना प्रधान मंत्री अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, तथा वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा ने वहां पहुंचकर उनका प्रतिनिधित्व किया।

१६८६ में ही आपने आस्ट्रेलिया में ध्यान प्रशिक्षुओं की एक एसम्बली को आयुर्वेद और स्वास्थ्य के विषय में सम्बोधित किया, जिसमें आपके साथ डॉ. श्री दीपक चोपड़ा, वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा जी आदि भी थे। चार दिन तक यहां विभिन्न शिक्षण संस्थाओं, अस्पतालों एवं यहां के उच्चाधिकारियों से विचार बिमर्श चलता रहा। नाड़ी निदान व चिकित्सा कार्यक्रम भी तद्वत् चले।

यहीं से आपने चीन की राजधानी पेकिंग के लिये प्रस्थान किया। वहां तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री तथा उच्चाधिकारियों से मिलकर आयुर्वेद के प्राचीन गौरव को पुनःस्थापित करने के लिए उद्‌बोधन दिया। स्वास्थ्य मंत्री जी ने स्वयं का नाड़ी निदान करवाया, वह चकित रह गये जब श्री त्रिगुणाजी ने सभी दोषदूष्यों का नाड़ी द्वारा प्रतिपादन करके व्याधि का निदान किया।

आप १६८७ में पुनः जेनेवा पहुँचे वहां से जापान, मिश्र आदि देशों की यात्राएं सपन्न की। १६८८ में यू. एस. ए. में पुनः न्यूयार्क, वाशिंटन आदि नगरों की आयुर्वेद यात्रा सम्पन्न कर ब्राजिल पहुँचे। वहां वैद्य श्री मदन मोहन जी पाठक, वैद्य श्री विजय मोहन जी पाठक एवं उनके सहयोगी वैद्य जी भी आपके साथ थे।

इस यात्रा से पूर्व १९८६ में आप यहां आये थे और इस देश के विभिन्न राजनेताओं से उच्चाधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करके आयुर्वेद के लिए ऐसा वातावरण तैयार कर दिया था कि यहां पञ्च कर्म चिकित्सा केन्द्र कई जगह स्थापित किये जा चुके थे। वनौषधी अन्वेषण परीक्षाणार्थ वैद्य श्री बलराज महर्षि जी भी यहां आ चुके थे और महर्षि प्रतिष्ठान द्वारा ही श्री एच. एस. कस्तूरे जी, श्री लाटाजी एवं रामेश बैदी जी भी यहां आयुर्वेद चिकित्सा में रत थे। ब्राजील के एक प्रान्त में श्री त्रिगुणाजी ने एक साधन संपन्न आयुर्वेद चिकित्सालय का उद्घाटन किया जिसमें भारतीय राजदूत श्री भरत राज भी सपरिवार सम्मिलित हुए।

इसी वर्ष पुनः हालैण्ड होते हुए त्रिनिडाड, बारवैडोज, टोबेको आदि वेष्टइण्डीज द्वीपों की यात्रा की। प्रमुख राष्ट्राध्यक्षों को श्री महर्षिजी के आदेशानुसार अमृत कलश भेंट किये। इससे वहां जन जागृति उत्पन्न हुई इसी वर्ष इस यात्रा की श्रृंखला में ही मैक्सीको में समायोजित स्वास्थ्य समारोह में भाग लिया और दो दिन तक वहां यथाक्रम आयुर्वेद के सिद्धान्तों के संबन्ध में व्याख्यान दिये।

१९८९ में श्री वैद्यजी ने कनाडा की यात्रा की इस यात्रा में भारतीय राजदूत श्री छतवाल जी का पूर्ण सहयोग रहा। स्वास्थ्य मंत्रालय के साथ सम्पर्क स्थापित किया गया। वहां के स्वास्थ्य मंत्री ने आपका स्वागत करते हुए आशा व्यक्ति की कि कनाडा में आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार आप जैसे योग्य वैद्य विद्वानों के द्वारा ही सफल होगा। आपने यहां का विश्व प्रसिद्ध न्याग्रा जलप्रपात भी देखा। मौन्ट्रीयल नगर के भव्य मंदिरों के दर्शन भी किये तथा वहां पर एकत्रित जन सभाओं को भी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहने के लिए उद्बोधन दिया।

१९८९ में आपने थाईलैण्ड, बैंकाक की यात्रा की इसमें आपके साथ डॉ० दीपक चोपड़ा तथा वहां के स्थानीय ध्यान प्रशिक्षक श्री चरणराज पार्क भी थे यहां आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार पहले से ही है। यहां के मूल निवासी भी कई अच्छे आयुर्वेद चिकित्सक हैं और आयुर्वेद में निष्ठावान् हैं। कई आयुर्वेद चिकित्सालय भी कार्यरत हैं। यहां विभिन्न जनसभाओं को वैद्य जी ने सम्बोधित किया।

१९९० में वैद्य जी की साम्यवादी देशों की यात्रा अति महत्वपूर्ण रही। इस वर्ष आपने तुर्की से चेकोसलवाकिया, हंगरी, यूगोस्लाविया पोलैण्ड आदि देशों में सर्वत्र आयुर्वेद की पताका फहराने का भरसक़ प्रयास किया। सर्वत्र नाड़ी निदान व आयुर्वेद चिकित्सा चमत्कार की सराहना की गई। सभी जगह हर्षोल्लास से वैद्य जी को सम्मान प्राप्त हुआ।

इससे पूर्व १९८९ में आप सोवियत रूस की राजधानी मास्को की यात्रा वहां के स्वास्थ्य मंत्रालय के आमंत्रण पर डॉ० श्री दीपक चोपड़ा व सम्मान्य ब्रह्मचारी श्री नन्द किशोर जी के साथ कर चुके थे। वहां के स्वास्थ्य मंत्री उच्चाधिकारी तथा मेडिकल कालेजों के प्रोफेसरों के समक्ष आपका भाषण अति प्रभावी रहा। स्वास्थ्य मंत्रालय ने आयुर्वेद चिकित्सा और भावातीत प्रशिक्षण के लिये विशेष आग्रह किया। वहां अब जगह-जगह आयुर्वेद स्वास्थ केन्द्र, भावातीत ध्यान केन्द्र संचालित किये जा रहे हैं। मास्को में श्री वैद्य जी का टेलीविजन पर साक्षात्कार भी प्रसारित किया गया।

आपकी अधुनातन यात्रा १५-४-९१ की रही, जिसमें आप अमेरिका के वाशिंगटन, न्यूयार्क, फेयर फील्ड, महर्षि इण्टर नेशनल युनिवर्सिटी, एम. आई यू. पहुँचे। जहां पर आपकी प्रभावशील वक्तृता से आयुर्वेद के पुष्ट सिद्धान्तों को पुनः पुष्टता प्राप्त होकर इसके प्रचार-प्रसार में निरन्तर वृद्धि हो रही है। यहां के भी कई नगरों में आपका साक्षात्कार दूरदर्शन पर प्रसारित हुआ। लौटते समय लन्दन होते हुए हालैण्ड में श्रद्धेय महर्षि जी के सान्निध्य में यह शुभ यात्रा सम्पन्न कर भारत लौटे हैं। आपने अब तक विश्व के विभिन्न देशों की ७१ यात्रायें सम्पन्न की हैं। आपकी ये यात्रायें आयुर्वेद प्रचार संदर्भ में स्मरणीय एवं भावी पीढी के लिये मार्ग दर्शक सिद्ध होंगी। अब भी आप पुनः इस वर्ष विभिन्न देशों के आमन्त्रण पर दूरस्थ देशों में आयुर्वेद प्रचार के उद्देश्य की पूर्ति हित जाने को सन्नद्ध व समुत्सुक हैं। आपकी ये यात्रायें मंगलमय सुखद सफल हों यह आयुर्वेद जगत् की कामना है।

॥शुभास्तेपन्थानः सन्तु॥

श्रद्धेय श्री त्रिगुणा जी से मेरा प्रथम सम्पर्क

वैद्य श्री त्रिगुणा जी १९५० में दिल्ली आये थे। जब उन्होंने अपना स्वतंत्र चिकित्सा कार्य आरंभ किया तो वह कच्चे द्रव्य एवं निर्मित औषधियां लेने खारी बावली आने लगे। में, उस समय पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी की खारी बावली, दिल्ली स्थित शाखा में प्रबंधक के रूप में कार्य कर रहा था। वे निर्मित औषधियां लेने के लिये कभी-कभी मैरे पास भी आते थे। कभी औषधियों के संबंध में, आयुर्वेद के संबंध में प्रसंगवश बात हो जाती। जैसे-जैसे वैद्य जी का चिकित्सा कार्य बढ़ने लगा वह सप्ताह में तीन-चार बार मेरे पास आने लगे। धीरे-धीरे यह सामान्य संपर्क व्यक्तिगत मित्रता का रूप लेने लगा। संस्कृत में मित्र शब्द "ञिमिदा" स्नेह ने धातु से बना है। इस शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार तब से आज तक मुझ पर उनके स्नेह की जो अनवरत वर्षा होती रही उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं।

मुझे अच्छी प्रकार स्मरण है कि उन दिनों यद्यपि उनकी स्थिति एक सामान्य चिकित्सक जैसी थी, तथापि उनके हृदय में आयुर्वेद की उन्नति, उसके महत्व की भावनाएं सदैव तरंगित रहती थीं। इन विषयों में विचारों की प्रायः समानता के कारण यह मित्रता दृढ़ से दृढ़तर होती गयी। उस समय हम दोनों की रुचि आयुर्वेद के राजनीतिक पक्ष में तनिक भी नहीं थी।

वैद्य श्री त्रिगुणा जी प्रारंभ से ही बड़े अध्ययनशील स्वभाव के हैं। वह पत्र-पत्रिकाओं एवं आयुर्वेद ग्रन्थों का स्वाध्याय करते। मैं भी उन दिनों स्वामी हरिशरणानन्द जी के मासिक पत्र आयुर्वेद विज्ञान का सम्पादक था। प्रतिमास सम्पादकीय लेख लिखता। आयुर्वेद विषयों पर भी मेरे कई लेख उस समय की पत्रिकाओं में छपते रहते थे। जब हम मिलते तो आयुर्वेद संबंधी उनके विषय परस्पर वार्तालाप का केन्द्र बिन्दु रहते। आज वैद्य जी को सैकड़ों रोगी प्रति दिन देखने पड़ते हैं और इस कारण उनका जीवन अत्यंत व्यस्तता से पूर्ण है। मुझे व्यक्तिगत रूप से यह ज्ञात है कि उनका स्वाध्याय का अभ्यास इसके बावजूद भी न केवल यथावत् चल रहा है, प्रत्युतः पहले से भी अधिक है, हां, स्वाध्याय का स्तर अवश्य ऊँचा हो गया है।

१९६८ तक वैद्य जी की चिकित्सा कार्य में पर्याप्त ख्याति हो चुकी थी और उनकी गणना उस समय के प्रख्यात आयुर्वेद चिकित्सक वैद्य बी. एन. सरकार तथा कविराज आशुतोष मजूमदार के समकक्ष हो गयी थी। कई रोगियों पर इन चिकित्सकों का मेल होता। इस प्रकार परस्पर मित्रता हो गयी। वैद्य श्री सरकार सदैव श्री त्रिगुणा जी के चिकित्सा कौशल की सराहना करते।

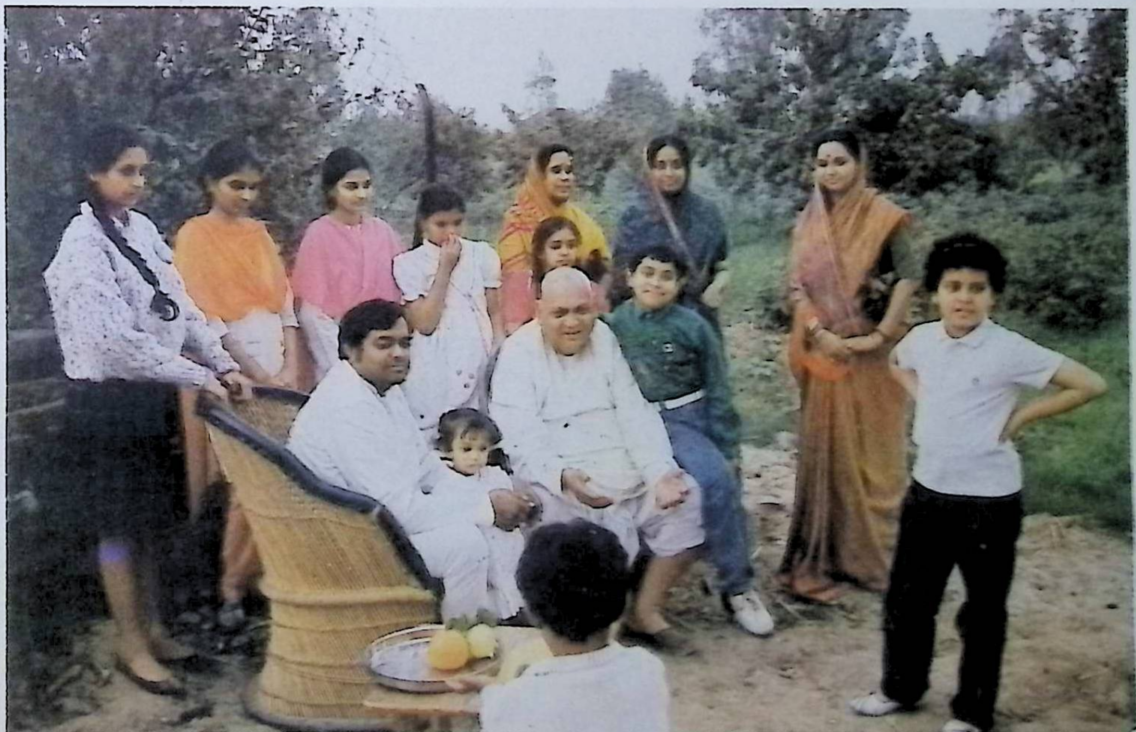
श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष निर्वाचित

दिल्ली में वैद्यों का संगठन "श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा" देश की प्राचीनतम सभाओं में से है। इस सभा के इतिहास में दिल्ली के मूर्धन्य चिकित्सक सदैव इस सभा से संबद्ध रहे हैं। उन दिनों मारवाड़ी औषधालय के वयोवृद्ध वैद्य पं. ओंकार नाथ शर्मा वैद्य सभा के प्रमुख नेता थे। उनके अतिरिक्त स्व. पं० शिवनाथ शर्मा, स्व० वैद्य गुरुदत्त, एम. एस. सी. स्व० केशव प्रसाद आत्रेय तथा कविराज आशुतोष मजूमदार, वैद्य शान्ति प्रसाद जैन, वैद्य भुवनचन्द्र जोशी, डा० जागेराम गुप्ता, तथा पंजाब से आये वैद्य कविराज खजान चन्द जी, स्व० वैद्य रामलाल मल्होत्रा, कविराज ब्रह्म स्वरूप, स्वर्गीय प्राणनाथ पुष्करणा,वैद्य ज्ञानचन्द दुआ आदि अनेक वैद्य इस सभा से संबंधित थे। तब तक मेरी और त्रिगुणा जी की घनिष्ठ मित्रता दिल्ली के वैद्य समाज में सुविदित हो चुकी थी। मुझे पं. ओंकार प्रसाद शर्मा का संदेश आया कि इस बार त्रिगुणा जी को वैद्य सभा का अध्यक्ष बनाया जाए। वह मुझे साथ लेकर श्री त्रिगुणा जी के पास गये परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। वैद्य समाज में उन्हें इस पद पर आसीन करने की प्रबल भावना विद्यमान थी। पं० शंकर देव जी विद्याध्ययन काल में त्रिगुणा जी के अध्यापक रह चुके थे अतः वैद्य ओंकार प्रसाद जी उन्हें तथा मुझे साथ लेकर पुनः त्रिगुणा जी के पास गये। गुरु को आया देख वह कुछ असमंजस में पड़ गये परन्तु अपने विनम्र स्वभाव के अनुसार बिना ननुनच के उन्होंने गुरु आज्ञा को शिरोधार्य किया। और इस प्रकार वे उस वर्ष सर्वसम्मति से श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। मुझे उनके साथ सभा का प्रधानमंत्री मनोनीत किया गया। यहीं से आयुर्वेद क्षेत्र में हम दोनों के सामाजिक जीवन का प्रारंभ हुआ। आज ३८-४० वर्ष के बाद भी इस क्षेत्र में हमारा यह साहचर्य उतनी ही निकटता एवं सद्भावना के साथ चल रहा है, जैसा प्रारंभ हुआ था। जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ इसका रहस्य यह है कि वैद्य सभा के कार्यों में श्री त्रिगुणा जी सदैव स्वार्थपरक एवं क्षुद्र दृष्टिकोण से ऊपर रहे हैं। उन्होंने अपने सहयोगियों को सदा न केवल प्रोत्साहन दिया प्रत्युत उन्हें बराबर का सम्मान दिया। यही कारण है कि जो वैद्य महानुभाव उनके निकट संपर्क में आये वह सदा के लिये उनके समर्थक तथा प्रशंसक बनकर रहे।

हम दोनों उस वर्ष के ऐसे अधिकारी थे जो पहले सभा में किसी पद पर नहीं रहे थे। अतः हमारी कार्यशैली एवं क्षमता के प्रति सभी सदस्यों की दृष्टि लगी थी। सौभाग्य से उस वर्ष का कार्य अच्छा रहा। उस कार्य में परंपरा से हटकर सभा के राजनीतिक पक्ष की अपेक्षा आयुर्वेद की वैज्ञानिक गतिविधियों यथा-अनुभूत गोष्ठियां एवं शास्त्र चर्चा सभाएं, आदि पर अधिक ध्यान दिया गया जिसे सदस्यों ने पसंद किया। इस काल में दिल्ली के कुछ उत्कृष्ट आयुर्वेदज्ञों एवं कार्यकर्ताओं का सान्निध्य हमें प्राप्त हुआ।



महामहिम राष्ट्रपति श्री वैंकटरमण के जन्म दिवस पर दीर्घायुष्य तथा स्वास्थ्य की कामना करते वैद्य श्री त्रिगुणा जी (अभिषेक करते हुये) साथ में महर्षि आयुर्वेद के निदेशक श्री आनन्द श्रीवास्तव तथा मन्त्रोच्चारण के साथ महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ के वैदिक पंडितगण



श्री त्रिगुणा महर्षि आयुर्वेद के प्रमुख श्री अजय प्रकाश श्रीवास्तव के परिवार के साथ अवकाश के क्षणों में

"अखिल भारतीय सद्भावना सम्मेलन का आयोजन"

हमारे इस कार्यकाल की एक घटना विशेष उल्लेखनीय है। पूर्व के कुछ वर्षों में महासम्मेलन के कुछ दिग्गजों स्व. वैद्यरत्न पं० शिव शर्मा तथा पं० राम नारायण जी शर्मा (बैद्यनाथ) एवं स्वामी हरिशरणानन्द जी में परस्पर अदालती अभियोग चलते रहे थे जिसके कारण महासम्मेलन के क्षेत्रों में पक्ष-विपक्ष की राजनीति एवं विवाद का वातावरण व्याप्त था। इस समय तक वह अभियोग तो समाप्त हो चुके थे, परन्तु उच्च क्षेत्रों में परस्पर कटुता एवं क्षोभ की भावनाएं अभी शेष थीं। महासम्मेलन के सामान्य सदस्य महानुभाव यह अनुभव करने लगे थे कि संगठन के हित में इस वातावरण को समाप्त किया जाना चाहिए। श्री त्रिगुणा जी ने समय के स्वर को पहचाना। श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से सद्भावना सम्मेलन के नाम से महासम्मेलन का एक विशेषाधिवेशन आमंत्रित किया। यह सम्मेलन हिन्दु महासभा भवन, नई दिल्ली में दो दिन तक हुआ, जिसमें सभी पक्षों के सदस्यों को मुक्त रूप से अपनी भावनायें व्यक्त करने का अवसर मिला। सभी ने अपना दिल हल्का कर लिया जिसके परिणामस्वरूप सम्मेलन के मूल लक्ष्य की सिद्धि में पूर्ण सफलता मिली। सम्मेलन सद्भावना एवं हर्ष के अभूतपूर्व वातावरण में समाप्त हुआ। तथा इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के इस कार्य एवं प्रधान श्री त्रिगुणा जी की सूझबूझ की सराहना अखिल भारतीय स्तर पर की गई। इस सम्मेलन के आयोजन में स्व. वैद्य ओंकारनाथ जी शर्मा तथा महासम्मेलन के तत्कालीन वरिष्ठोपाध्यक्ष स्व. वैद्य केशव प्रसाद आत्रेय मे विशेष भूमिका का निर्वाह किया।

इससे पूर्व सभा में वार्षिक चुनाव प्रायः दो-तीन वर्ष में होते और कुछ जाने पहचाने व्यक्ति ही प्रति बार प्रमुख पदों एवं कार्यकारिणी सदस्य के रूप में थोड़े परिवर्तन के साथ मनोनीत किये जाते थे। सभा में नवीनता की भावना का अभाव रहता जिससे सदस्यों की रुचि कम होने लगी थी। इस कार्यकाल में माननीय त्रिगुणा जी के नेतृत्व के गुणों का विकास प्रारंभ हुआ। अपने निकट सहयोगियों एवं कार्यकर्ताओं के साथ विचार बिमर्श में यह निश्चय किया गया कि चुनाव नियमपूर्वक एक वर्ष के अनन्तर हों तथा प्रति वर्ष नये लोगों को सभा का नेतृत्व करने का अवसर दिया जाये इस निर्णय का सभा के प्रायः सभी क्षेत्रों में स्वागत हुआ और सदस्यों में एक नवीन स्फूर्ति का संचार हुआ। उसके पश्चात् कई वर्षों तक इस परंपरा का निर्वाह किया गया और हमारे सभी साथी यथा- पं० भुवन चन्द्र जोशी, वैद्य दौलत राम शर्मा, स्व० प्राणनाथ पुष्करणा, कविराज महाराज कृष्ण, वैद्य शान्ति प्रसाद जैन, डा० जागे राम गुप्ता, पं० नानक चन्द शर्मा वैद्य जगदीश प्रसाद शर्मा और मैं स्वयं, सभी एक-एक करके सभा के प्रधान पद पर आरूढ़ हुए। कई वर्ष के इस पूरे काल में सभा का नेतृत्व प्रायः त्रिगुणा जी के हाथ में रहा, क्योंकि उनमें ये विशेषता थी कि अपने प्रधानत्व काल में जो कार्य किया, अन्य सहयोगियों के कार्यकाल में उसमें भी बढ़कर रुचि ली जिसके परिणामस्वरूप उनके बाद में आने वाले प्रधानों के कार्यकाल में स्वयं उनके कार्यकाल से भी अधिक व्यापक कार्य हुआ। संक्षेपतः यह पूरा काल उनकी संगठन के प्रति निस्स्वार्थ, उदार एवं सक्षम कार्यकर्ता के रूप का प्रतिबिम्ब था।

इसी काल में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा द्वारा विचार गोष्ठियां (सेमिनार) आयोजित करने की एक श्रृंखला का शुभारंभ भी हुआ। हृदय रोग, रक्तचाप, मधुमेह, कामला, मानसिक रोग तथा ब्लड यूरिया आदि चिकित्सकोपयोगी विषयों पर प्रति वर्ष भव्य समारोह के रूप में आयोजन हुए। इन सारी विचार गोष्ठियों के मूल में त्रिगुणा जी के प्रेरणादायी व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती थी। प्रत्येक सेमिनार में कोई न कोई राजनेता, मंत्री अथवा उच्चाधिकारी आते। इन समारोहों में विशिष्ट व्यक्तियों को लाने और इनके लिए पर्याप्त धन व्यवस्था करने में मुख्य रूप से उन्हीं का योगदान रहता। उनका चिकित्सा क्षेत्र इस समय तक उच्च सरकारी क्षेत्रों में पहुंच चुका था। धन, वह स्वयं भी उदारतापूर्वक दते और अन्य अपने धनाढ्य श्रद्धालु रोगियों से इसकी व्यवस्था कराते थे। सभा का प्रधान व मंत्री कौन है उन्हें इसकी चिन्ता न होती। उन्हें एक ही धुन सवार रहती है कि यह आयुर्वेद का समारोह है अतः इसका उत्कृष्टतम रूप जनता के समक्ष आना चाहिए। जैसे-जैसे चिकित्सा क्षेत्रों में उनका वर्चस्व बढ़ता गया, उनकी यह मूल भावना दृढ़ से दृढ़तर होती गयी कि आयुर्वेद के ऋण से उऋण होने के लिये आयुर्वेद उत्कर्ष के कार्य करना, उनका कर्तव्य है। इस प्रकार कई वर्षों तक इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा में उनका वर्चस्व रहा। पश्चात् उनकी गणना आयुर्वेद के अखिल भारतीय स्तर के स्तम्भों में होने लगी। ये महासम्मेलन के उपाध्यक्ष पद पर भी सुशोभित हुए।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष निर्वाचित

सन् १९८३ में वह पहली बार सर्वसम्मति से अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए। इस सम्मेलन का उद्घाटन तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह ने किया। दिल्ली में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के आमंत्रण पर इससे पूर्व भी महासम्मेलन के अधिवेशन हुए थे परन्तु इस बार इस सम्मेलन की भव्यता कुछ निराली ही थी। पहली बार भारत के राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैलसिंह महासम्मेलन समारोह में उद्घाटनार्थ आये। उनके साथ केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री, केन्द्रीय गृह मंत्री तथा कई अन्य मंत्री महोदय इस समारोह में उपस्थित थे। १९८६ के हरिद्वार अधिवेशन में वह सम्मेलन के दोबारा अध्यक्ष चुने गए और उनकी अध्यक्षता का यह कार्यकाल १९८३ से प्रारम्भ होकर १९८९ में कुरुक्षेत्र अधिवेशन के अवसर पर सम्पूर्ण हुआ।

आयुर्वेद के कार्यों में उनकी रुचि, सम्मेलन में उनके पद पर कभी भी आधारित नहीं रही। आज भी जबकि वह महासम्मेलन के किसी पद पर नहीं हैं वह अंतराष्ट्रीय आयुर्वेद महासम्मेलन के आयोजन में उसके लिए धन जुटाने में, राष्ट्रपति आदि उच्चाधिकारियों की उपस्थिति से उसकी गौरव वृद्धि करने में तथा अन्य हर प्रकार की छोटी-बड़ी व्यवस्था में उनका वरद हस्त एवं सक्रिय सहयोग महासम्मेलन अधिकारियों के साथ है।

कुछ व्यक्तिगत संबंधों के विषय में

जैसा कि मैं पूर्व कह चुका हूँ कि मुझे माननीय वैद्यशिरोमणि त्रिगुणा जी के स्नेह एवं सान्निध्य का सौभाग्य लम्बे काल तक प्राप्त हुआ है। इस काल में मुझे उनको बहुत निकट से देखने का अवसर मिला है। सभी व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समस्याओं पर यथा अवसर परस्पर

विचार विमर्श होता रहा है। देश विदेश की अनेक यात्राओं में कई-कई दिनों तक उनके साथ रहने का भी अवसर मिला है। उनके मानवीय गुणों को देखकर मैं सदैव बहुत प्रभावित हुआ हूँ। प्रातः ब्राह्म मुहूर्त दो घण्टे का ध्यान, दैनिक अर्चन, पूजन, सरल जीवन एवं उच्च सात्विक विचार उनकी दिनचर्या का अभिन्न अंग है। १९५० से लेकर अब तक उनके व्यक्तिगत प्रभाव क्षेत्र में जो असाधारण परिवर्तन उत्कृष्टता की दिशा में आया है, उसका मूल कारण उनका यह मानीवय गुण ही है। उनके इसी गुण के कारण प्रत्येक व्यक्ति जो उनके संपर्क में आता है यही भाव लेकर जाता है कि शायद वह उनका सर्वाधिक निकटस्थ व्यक्ति है। यह सत्य भी है कि वह प्रत्येक स्नेही विशेषतः वैद्य समुदाय के प्रत्येक सदस्य को मनसा वाचा कर्मणा समान रूप से अपना आत्मीय जन मानते हैं।

वह अत्यधिक व्यवहार कुशल, गुणज्ञ एवं संवेदनशील व्यक्तित्व के धनी हैं। इस काल में उनका व्यक्तित्व एक सामान्य चिकित्सक से उठकर विश्वव्यापी प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है। प्रभु की कृपा से धन-धान्य एवं सभी प्रकार की सुख सुविधाओं से भरपूर होने पर भी विशेषता यह है कि अभिमान व अहंकार उनको छू तक नहीं गया। किसी भी स्नेही जन को कष्ट हो और उन्हें उसका ज्ञान हो जाए तो उनका संवेदनशील मन बेचैन हो उठता है। मेरे प्रत्येक पारिवारिक एवं व्यक्तिगत सुख-दुःख में इस लम्बी अवधि में वह सदैव मेरे सबसे बड़े सम्बल रहे हैं। कई ऐसी घटनाएं हैं जब मेरे प्रति उनकी आत्मीयता ने मुझे आनन्द विभोर किया है। उदाहरणार्थ एक घटना का उल्लेख यहाँ करता हूँ।

१९७५-७६ की बात है, मैं किसी विशेष कठिनाई में पड़ गया। उनसे चर्चा की तो सहजभाव से कहा कि कोई उपाय देखेंगे। दो-तीन दिन बाद उन्होंने टेलीफोन पर मुझे तत्काल अपने पास बुलाया। दिन के १०-११ बजे का समय था, उस समय वह अपने चिकित्सा कार्य में अत्यधिक व्यस्त होते हैं। मैं पहुँचा तो एक विशिष्ट व्यक्ति बैठे प्रतीक्षा कर रहे थे। उनसे पंजावी में मेरा परिचय कराते हुए कहा कि शर्मा जी! यह मेरे वह मित्र हैं जिनके शरीर को गर्म हवा भी छू जाये तो उसका संताप मेरे शरीर तक पहुँचता है। इनकी कठिनाई का समाधान हो, इन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो, इस विषय में आपकी सहायता अपेक्षित है। इससे अधिक मैं आपसे क्या कहूं। मैं उनके ये आत्मीयतापूर्ण शब्द सुनकर भाव विभोर हो गया। वह अपने चिकित्सा कार्य पर जाकर बैठ गए। शर्मा जी ने मेरी बात सुनी और अंत में समस्या का यथेष्ट समाधान हुआ। मेरे सभी पारिवारिक कार्यों यथा-पुत्र-पुत्रियों के विवाह, मकान के भूमि पूजन आदि में उनका सक्रिय सहयोग और वरद हस्त मुझ पर रहा। इन अवसरों पर मात्र उनकी औपचारिक उपस्थिति ही नहीं रहती थी वरन पूर्ण समारोह के आयोजन में उनका मार्गदर्शन मिलता रहा। १९६३ में जब मैंने खारी बावली की दुकान में अपना कार्य शुरू किया तब से उनका जो मार्गदर्शन और सहायता मिली उसका मूल्यांकन करना मेरी सामर्थ्य से परे है। कोई कठिनाई आई और उनसे चर्चा कर दी तो उसके समाधान का चिन्तन उन्होंने सदैव अपने ऊपर लिया। मैंने ऐसा अनुभव किया है कि एक अंग्रेजी लेखक के शब्दों में वह मेरे लिए (Friend philosopher and guide) अर्थात् मित्र, चिन्तक एवं मार्गदर्शक हैं। जब हमारा प्रारंभिक संपर्क हुआ था तब से

उनका व्यक्तित्व इतना महान् हो चुका है कि मेरी उनसे कोई तुलना ही नहीं। इस पर भी उनके कृपाभाव, स्नेह, सौजन्य एवं सम्मानपूर्ण व्यवहार में कहीं कमी नहीं आई। उनका यह सौजन्य मुझ तक ही सीमित हो, ऐसी बात नहीं। वस्तुतः जिस किसी का उनसे निकट सम्पर्क हुआ उसने ऐसा ही अनुभव किया।

अपने चिकित्सा कौशल के प्रताप से वरिष्ठतम राजनेताओं, उच्चाधिकारियों, एवं शासन व समाज के सभी वर्गों में वह महान् श्रद्धा एवं आदर के पात्र हैं। अभी पद्म भूषण से सम्मानित होने पर वैद्य समाज एवं उनके असंख्य श्रद्धालु जनों ने व्यापक रूप से अपने हर्ष की अभिव्यक्ति की।

अंग्रेजी साहित्यकार शेक्सपियर का कथन हैः-

(Gentleman is he who gives to the society more than what he takes from it.)

अर्थात् सज्जन पुरुष वह है जो समाज से जितना लेता है उस से अधिक समाज को देता है। त्रिगुणा जी को निस्सन्देह समाज से भरपूर आदर एवं स्नेह मिला है परन्तु आयुर्वेद, जन साधारण, दीन दुःखियों, साधु सन्तों की सेवा के रूप में उस से कहीं अधिक उन्होंने समाज को दिया है। महर्षि चरक ने ऐसी ही आयु को "हितायु" की संज्ञा दी है। मेरी कामना है कि उन की यह हितायु चिरायु हो ताकि वह चिरकाल तक आयुर्वेद विज्ञान की यशोवृद्धि करते रहें तथा मानव मात्र को स्वास्थ्य एवं जीवन दान देकर पुण्यार्जित करते रहें।

"जीवेमः शरदः शतम्"

मानद उपाधियां एवं प्रशस्ति पत्र

१. २१ दिसम्बर १९८१ महर्षि एवार्ड, वर्ल्ड गवर्नमेण्ट आफ दी एज आफ इनलाइटेनमेण्ट मानद उपाधि द्वारा सम्मानित किया गया।

२. १२-११-८१ नगर वैद्य सभा मेरठ, आयुर्वेद शिक्षा प्रसार समिति मेरठ श्री धन्वन्तरि आयुर्वेद महाविद्यालय गढ़ मार्ग द्वारा-अभिनन्दन पत्रम् मानद उपाधि।

३. दिनांक १६ जून १९८४, आयुर्वेद रत्न मानद उपाधि नवा नगर हुबली कर्नाटक द्वारा प्रदत्त।

४. दिनांक ८ अप्रैल १९८५, अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन बिहार द्वारा "आयुर्वेद रत्नाकर" की मानद उपाधि से सम्मानित किया।

५. दिनांक १४-७-८५, श्री राजस्थान प्रदेश जयपुर द्वारा, आयुर्वेद शिरोमणि की मानद उपाधि द्वारा सम्मानित किया गया।

६. दिनांक १०-११-८५, हरियाणा प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन द्वारा, "आयुर्वेद पुनर्वसु" मानद उपाधि से सम्मानित।

७. दिनांक १६ अगस्त १९८५, मध्य प्रदेश आयुर्वेद मण्डल द्वारा प्रदत्त, "पीयूष-पाणि" की मानद उपाधि से सम्मानित।

८. दिनांक १२ अगस्त १९८५, श्री मुम्बई वैद्य सभा-बम्बई द्वारा प्रदत्त, प्रशस्ति पत्र मानद उपाधि से सम्मानित।

९. दिनांक २-३-८६ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा प्रदत्त, सम्मान-पत्र से सम्मानित किया।

१०. दिनांक १ फरवरी १९८६, जनपद आयुर्वेद सम्मेलन अलीगढ़ की ओर से, अभिनन्दन-पत्र।

११. दिनांक २ नवम्बर १९८७, उत्तर प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन की ओर से, अभिनन्द-पत्र से सम्मानित।

१२. दिनांक २२-६-८७, द्वितीय आयुर्वेद साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रदत्त, अभिनन्दनदलम् मानद उपाधि।

१३. दिनांक ३०-३१ अक्टूबर १९८८, जनपद आयुर्वेद सम्मेलन सहारनपुर उत्तर प्रदेश द्वारा आयुर्वेद शिरोमणि की मानद उपाधि प्राप्त।

१४. दिनांक २२-११-८८, नगर पालिका परिषद् गौरेला एवं पेण्ड्रा जिला विलासपुर म.प्र. अभिनन्दन पत्र द्वारा सम्मानित किया गया।

१५. दिनांक ३० अप्रैल १९८९, परिक्रमा चिकित्सक संघ श्यामली एवं दूरदर्शन ज्ञान दीप मंडल-६६०, श्यामली उत्तर प्रदेश द्वारा प्रदत्त, अभिनन्दन पत्र।

१६. १२-५-९०, श्री राजस्थान वैद्य सम्मेलन द्वारा प्रशस्ति पत्र आयुर्वेद-पंचानन मानद उपाधि द्वारा सम्मानित।

१७. दिनांक १५ मार्च १९९१, अखिल भारतीय ब्राह्मण प्रतिनिधि सम्मेलन द्वारा विशिष्ट ब्राह्मण विभूति आर्य गौरव, मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

१८. १२ फरवरी १९९२, बुधवार, आयुर्वेद बृहस्पति की मानद उपाधि अलीगढ़ जनपद आयुर्वेद सम्मेलन द्वारा अभिनन्दन पत्र।

१९. १९-१-९२, जनपद आयुर्वेद सम्मेलन गाजियाबाद (उ.प्र.) शाखा हापुड़ द्वारा, आयुर्वेद बृहस्पति की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

२०. ९-२-९२, अखिल भारतीय ब्राह्मण सभा पंजीकृत स्वर्ण जयंती वसंत पंचमी पर प्रशस्ति-पत्रम् मानद उपाधि।

२१. जनपद आयुर्वेद सम्मेलन अलीगढ़ द्वारा, भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से अलंकृत किये जाने पर उनके सम्मान में, समर्पित ताम्र पत्र दिनांक १२-२-९२

२२. भारत के राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण से अलंकृत होने पर महर्षि गंधर्ववेद विश्व विद्यापीठ की ओर से, अभिनन्दन पत्र समर्पित किया। दिनांक १८-२-९२

२३. श्री राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन द्वारा प्रशस्ति पत्र आयुर्वेद मार्तण्ड मानद उपाधि।

२४. अभिनन्दन पत्र उ.प्र. आयुर्वेदिक एवं यूनानी ड्रग मैन्यूफैक्चरर्स एसोसियेशन, आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधि व्यवसायी समिति, गोरखपुर उ.प्र.,

२५. बुलन्दशहर जनपद आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा प्रशस्ति पत्र, आयुर्वेद मार्तण्ड की मानद उपाधि।

२६. महानगर वैद्य सभा मेरठ द्वारा प्रदत्त अलंकरण पत्र आयुर्वेद वृहस्पति की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

हैमन्तिकं दोषचयं वसन्ते,
विशोधयन् ग्रीष्मजमभ्रकाले ।
घनात्यये वार्षिकमाशुसम्यक् ।
प्राप्नोति रोगान् ऋतुजान्नजातु ॥

"वाग्भट"

भारत में श्री त्रिगुणा जी की आयुर्वेद विजय यात्राः-

लेखक वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी
कार्यकारिणी सदस्य
अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन।
चिकित्सक महर्षि आयुर्वेद महर्षिनगर गा. बाद (उ.प्र.)

प्रतिभा के प्रदीप्त प्रभाकर, पाण्डित्य के अपार पारावार, आयुर्वेद के अप्रतिम गौरव राजवैद्य श्री वृहस्पति देव त्रिगुणा जी ने अपने शैशवकाल से लेकर वर्तमान काल तक पारिवारिक परिस्थितियों के झंझावात में अपने उज्वल चरित्र, आदर्श कर्तव्य, देशभक्ति तथा समाज सेवा को सर्वोपरि महत्व देते हुये आतुर तथा रुग्ण व्यक्तियों को रोगमुक्त करने का जो संकल्प पूरा किया है वह अपने में एक अनुकरणीय आदर्श है।

आपने रुग्ण समाज को रोग मुक्त करने का उस समय संकल्प लिया था जब स्वातन्त्र्योत्तर काल में पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति अपने पूर्ण वैभव व विकास पर थी जिसे राजाश्रय का भी अभाव नहीं था वह चिकित्सा पद्धति एक ओर जहां बहुत मंहगी थी वही दूसरी ओर ग्रामीण अंचलों में बसे लोगों को अप्राप्य थी, चोरों तरफ जीवन रक्षा के लिए, स्वास्थ्य रक्षा के लिए भाग-दौड़ मची थी, तभी आपने ग्रामों में पायी जाने वाली विभिन्न जड़ी बूटियों तथा औषधियों द्वारा उन्हे तत्काल नया जीवन प्रदान किया ऐसे सैकड़ों उदाहरण आपके जीवन के विभिन्न संस्मरणों के रूप में जाने जाते हैं, जिन पर एक वृहदग्रन्थ लिखा जा सकता है। आदर्शों के प्रति निष्ठा, सामाजिक हितों के लिए उत्सर्ग की भावना, रुग्ण समाज के प्रति दया का भाव तथा आयुर्वेद के प्रति सतत विकास का भाव जो श्री त्रिगुणा जी में है वह राष्ट्र के लिए एक गौरव की बात है। ऐसे आयुर्वेद कुलभूषण, क्षीरो दधि की भांति विहंसते व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति के प्रति लोक श्रद्धा का भाव अनायास ही जन्म ले लेता है। एक ओर आपने गुरु परम्परा में जहां आयुर्वेद, वेद, उपनिषद, ज्योतिष तथा संस्कृत का सांगोपांग अध्ययन पूरा करने में कोई कसर नहीं छोड़ी वही दूसरी ओर जंगलों में जाकर जड़ी बूटियों के चयन तथा दुर्लभ औषधियों के निर्माण आदि में कोई शिथिलता नहीं की। परम्परा से ही आप आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रति निष्पक्ष तथा पूर्ण दृढ़ रहे आपका कहना है कि आयुर्वेद पूर्ण वैज्ञानिक है जहां तक वैद्यकीय सिद्धान्तों का सम्बन्ध है आयुर्वेद संसार के सब वैद्यों का गुरु है। आर्ष तथा ऋषिप्रणीत है इसके सम्बन्ध त्रिकाल शाश्वत है। स्वस्थवृत्त आयुर्वेद की विशेषता हैं और सद्वृत्त उसका अद्वितीय अंग है।

राजवैद्य वृहस्पति देव त्रिगुणा जी ने अपने प्रयत्नों और परिस्थितियों से अनवरत संघर्ष कर भारत में आयुर्वेद विजय की जो पताका फहरायी है उसके यदि एक अंश पर भी मैं अपना कुछ प्रकाश डाल कर उनकी उपलब्धियों को उजागर कर सकूं तो यह मेरी तूलिका का सफल प्रयास होगा।

यूं तो आपने अपने जीवन में देश के विभिन्न भू-भागों में हजारों सम्मेलनों संगोष्ठियों तथा संस्थाओं मो आयुर्वेद का प्रतिनिधित्व कर उसके विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालकर आयुर्वेद को पूर्ण वैभव तथा विकास की ओर पहुंचाकर उसे हर स्थान पर प्रमुखता प्रदान की है। जिसका पृथक्-पृथक् यदि उल्लेख किया जाय तो सम्भव नहीं होगा।

सूक्ष्म रूप से वैद्य श्री भुवन चन्द्र जोशी जी द्वारा हमें जो जानकारी मिली है वह इस प्रकार है। यह कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक ओर जहां आपको अपने परिवार के संचालन में व्यग्रता थी वहीं उनका दूसरा लक्ष्य आयुर्वेद के विकास हेतु उसके समझने के लिये मनन तथा अध्ययन की आवश्यकता प्रमुख थी। जिस लक्ष्य को पूरा करने कराने के लिए आपने १९६८ में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की अध्यक्षता के साथ १९७० में इन्द्रप्रस्थीय आयुर्वेद सम्मेलन पत्रिका का सम्पादन कार्य कर गुरुतर दायित्व का निर्वाह किया। इसी श्रृंखला में १९७३ में हृदयरोग सेमिनार में भाग लेते हुए आपने हृदयरोगों पर विस्तृत प्रकाश डाला। तत्पश्चात १९७४ में रक्त चाप १९७९ में मानसरोग सेमिनार की अध्यक्षता की जिसका उद्घाटन भारत सरकार के प्रधान मंत्री श्री मोरारजी देशाई ने किया था। इसी प्रकार अगस्त १९८० में कामलारोग सेमिनार १९८८ में मधुमेह सेमिनार की अध्यक्षता की जिसका उद्घाटन स्वास्थ्य परिवार कल्यांण मंत्री श्री विक्रम महाजन तथा माननीय श्री वी०शंकरानन्द ने किया जिसमें अन्य मंत्री तथा आयुर्वेद के विद्वानों ने भी अपनी महत्व पूर्ण उपस्थिति देकर आयुर्वेद गरिमा का संवर्धन किया।

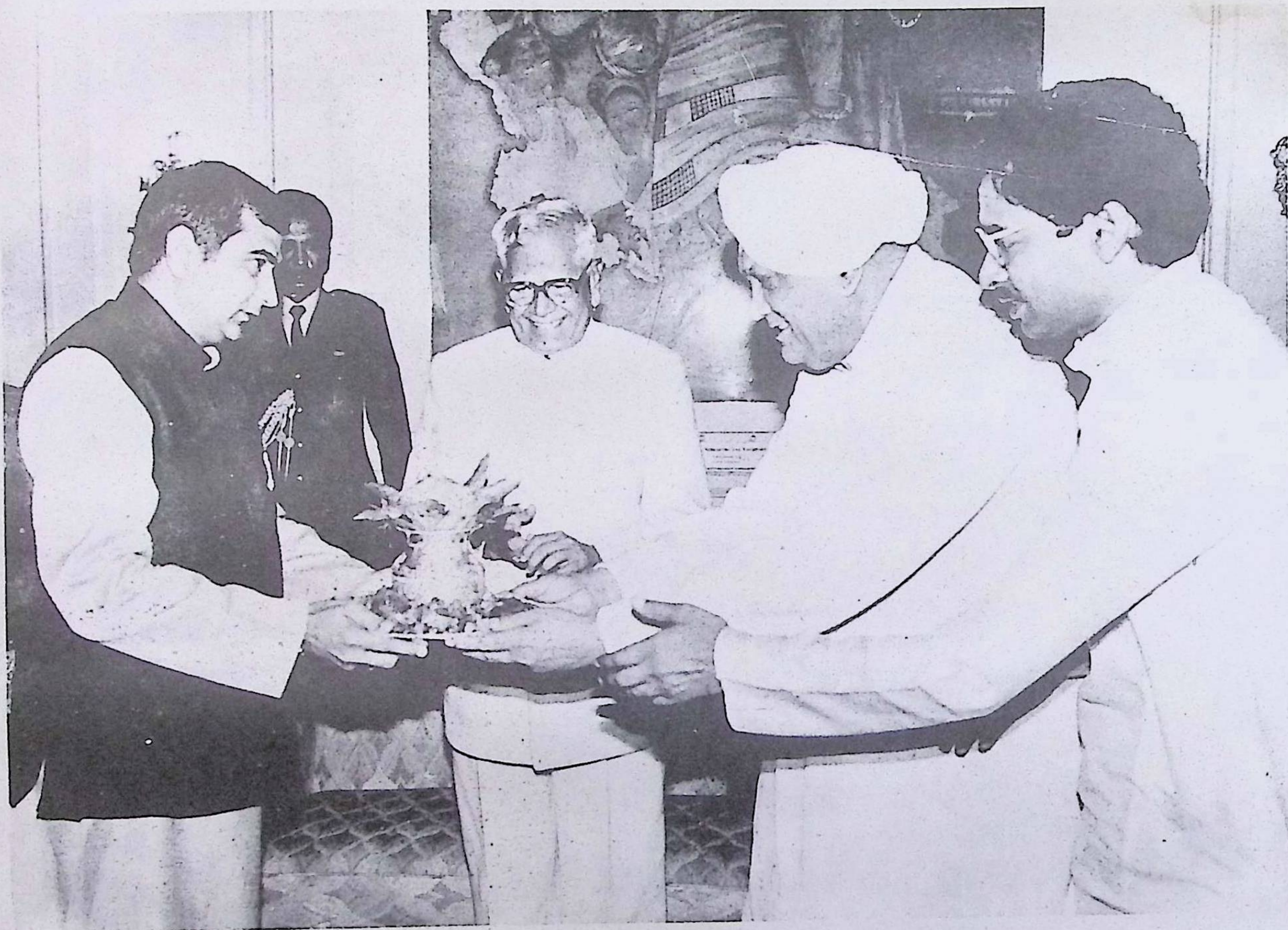
श्री त्रिगुणा जी की आयुर्वेद की विजय श्री इन्हीं सेमिनारों तथा संगोष्ठियों तक सीमित नही थी। मई १९८५ में आपने हरियाणा प्रान्त के आयुर्वेद संगठन की शिथिलता को दृष्टिगत रखते हुये वैद्य श्री गौरी लाल चानना के साथ रोहतक में अपनी उपस्थिति के साथ श्री हरिराम गौतम को हरियाणा प्रदेश सम्मेलन आयुर्वेद का अध्यक्ष निर्वाचित कर उन्हे हरियाणा आयुर्वेद सम्मेलन की वागडोर थमा दी।

देश के वृहद् अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन १९८० तथा २१ जून १९८३ को ५१ वां महाधिवेशन देश की राजधानी दिल्ली में आयोजित किया जिसका उद्घाटन देश के राष्ट्रपति महामहिम श्री ज्ञानी जैल सिंह तथा अध्यक्षता माननीय श्री शंकरानन्द ने की उक्त अधिवेशन के मुख्य अतिथि केन्द्रीय गृह मंत्री श्री प्रकाश चन्द्र सेठी थे। इसके अतिरिक्त उक्त अधिवेशन में मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री माननीय श्री अर्जुन सिंह, माननीय बूटा सिंह तथा बलराम जाखड़ आदि वरिष्ठ नेता भी उपस्थित थे। जहां वैद्य श्री वृहस्पति देव त्रिगुणा जी को सर्वसम्मति से अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का अध्यक्ष चुना गया।

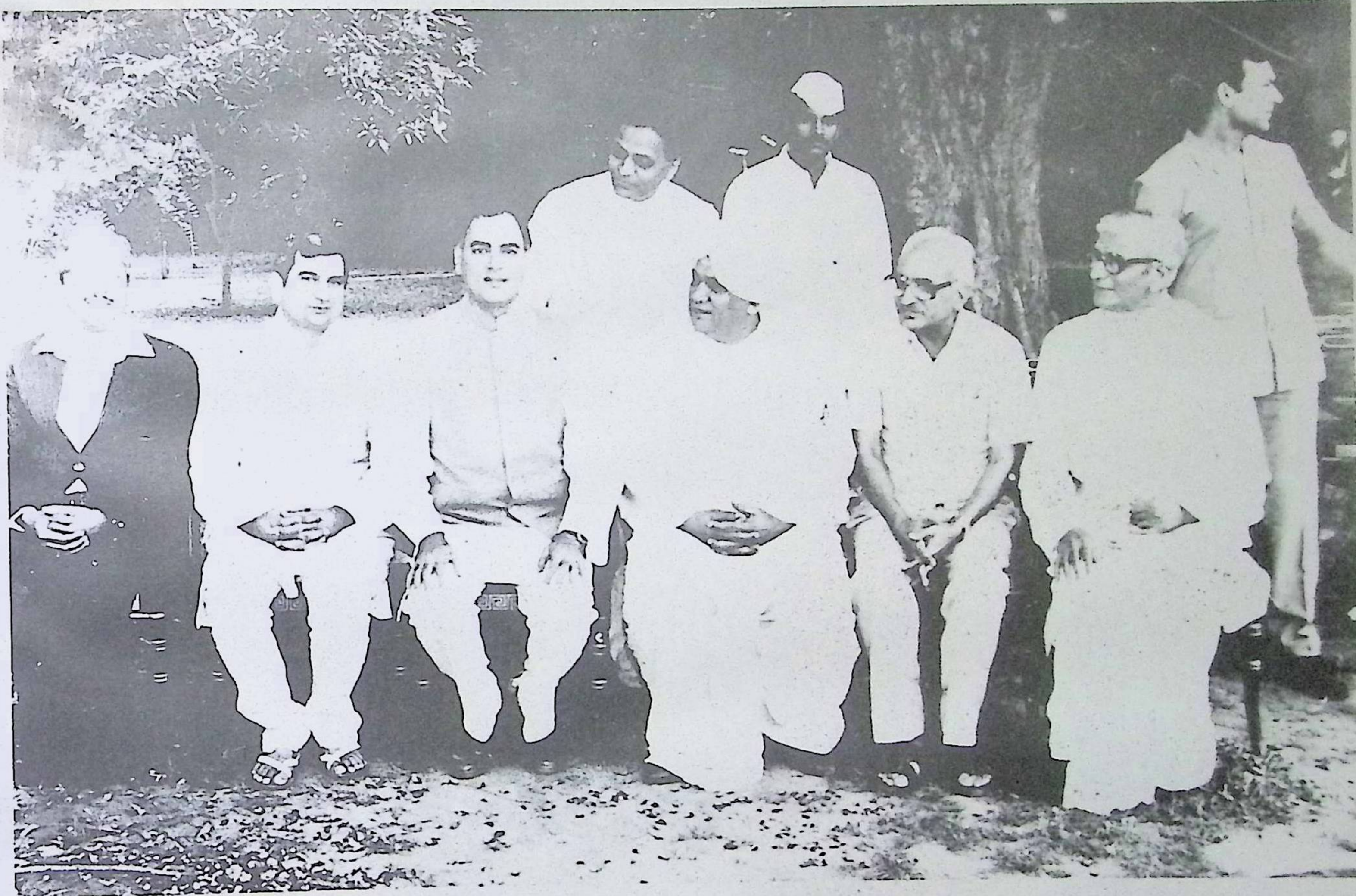
कालान्तर में पुण्य सलिला भगवती भागीरथी के सुरम्य तट की पवित्र भूमि हरिद्वार में १८ एवं १९ मई १९८६ को ५२ वां अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन आयोजित किया गया जिसका उद्घाटन केन्द्रीय स्वास्थ्य परिवार कल्यांण मंत्री माननीय मोहसिना किदवई ने किया। तथा अध्यक्षता प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री श्री लोकपति त्रिपाठी ने की। जिसमें हरियाणा स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती कर्तार देवी म.प्र. विधान सभा अध्यक्ष श्री राजेन्द्र शुक्ल आदि विशिष्ट अतिथि के रूप में



राजवैद्य श्री वृहस्पतिदेव त्रिगुणा आयुर्वेद विजय यात्रा पर निकलते हुए ।



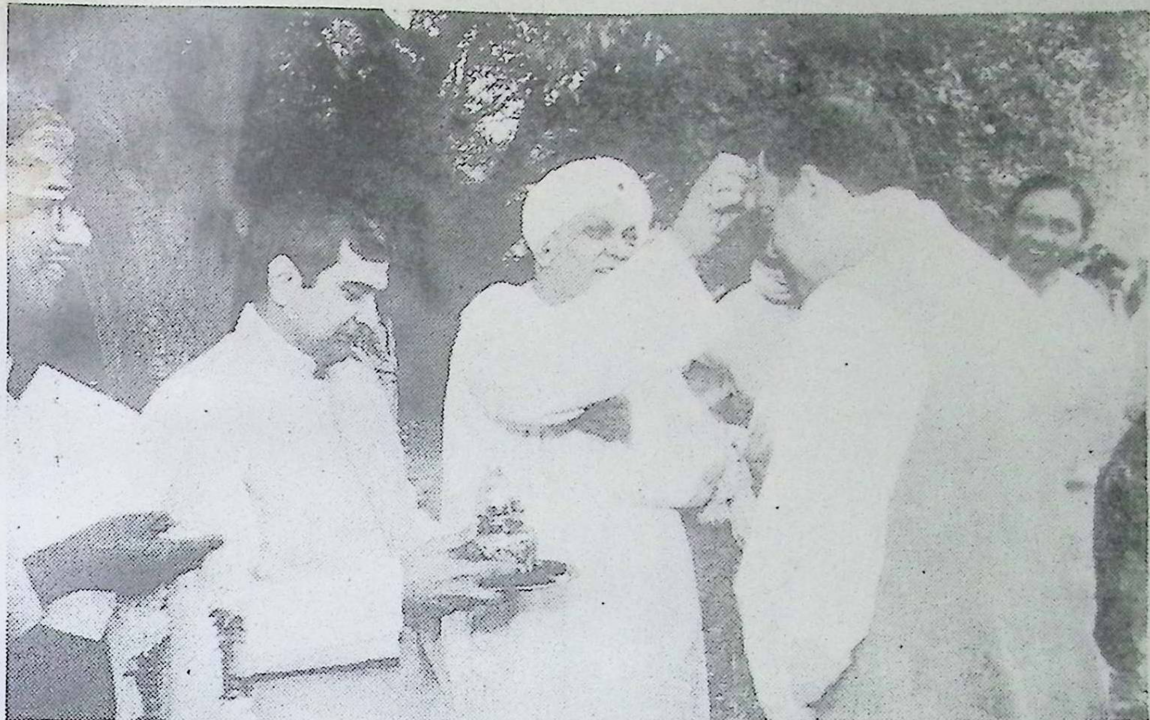
महर्षि आयुर्वेद के निदेशक श्री आनन्द श्रीवास्तव तथा वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा के साथ श्री त्रिगुणा जी, महामहिम राष्ट्रपति जी को अमृतकलश भेंट करते हुए ।



पीयूष पाणि वैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के नेतृत्व में एक शिष्ट मंडल स्व. श्री राजीव गांधी से दि. ८-११-८८ को भेंट करते समय साथ मे हैं वैद्य श्री गौरीलाल चानना वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा

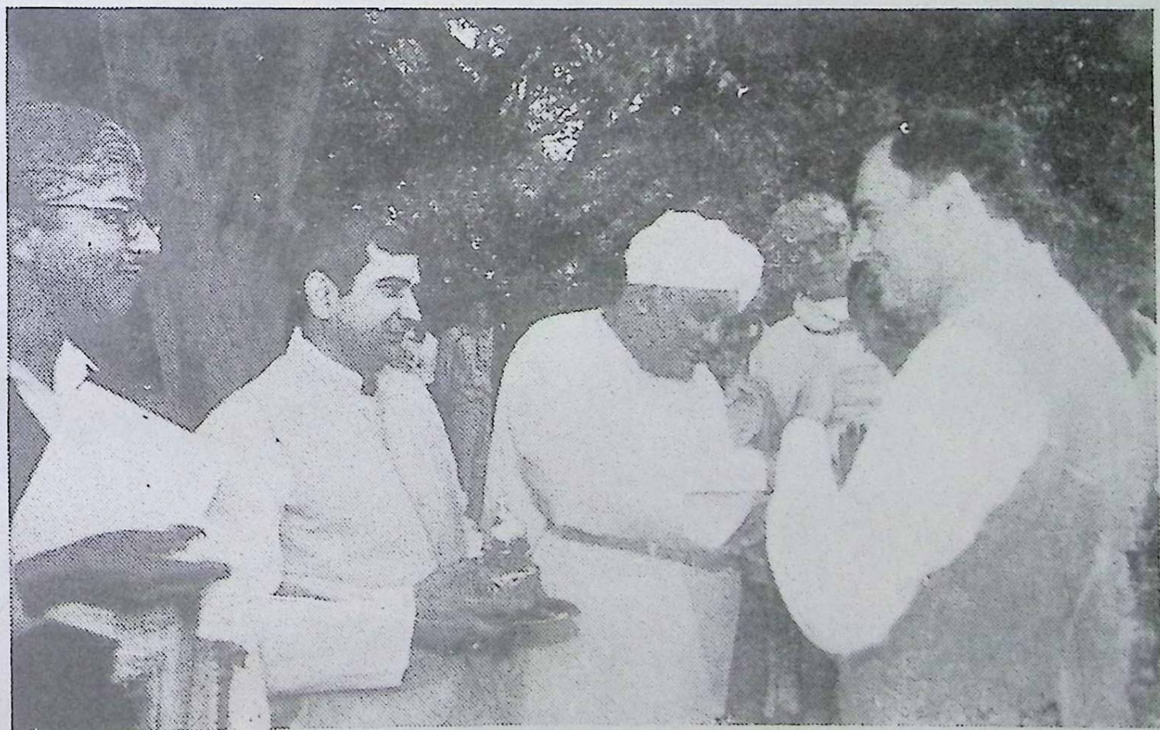


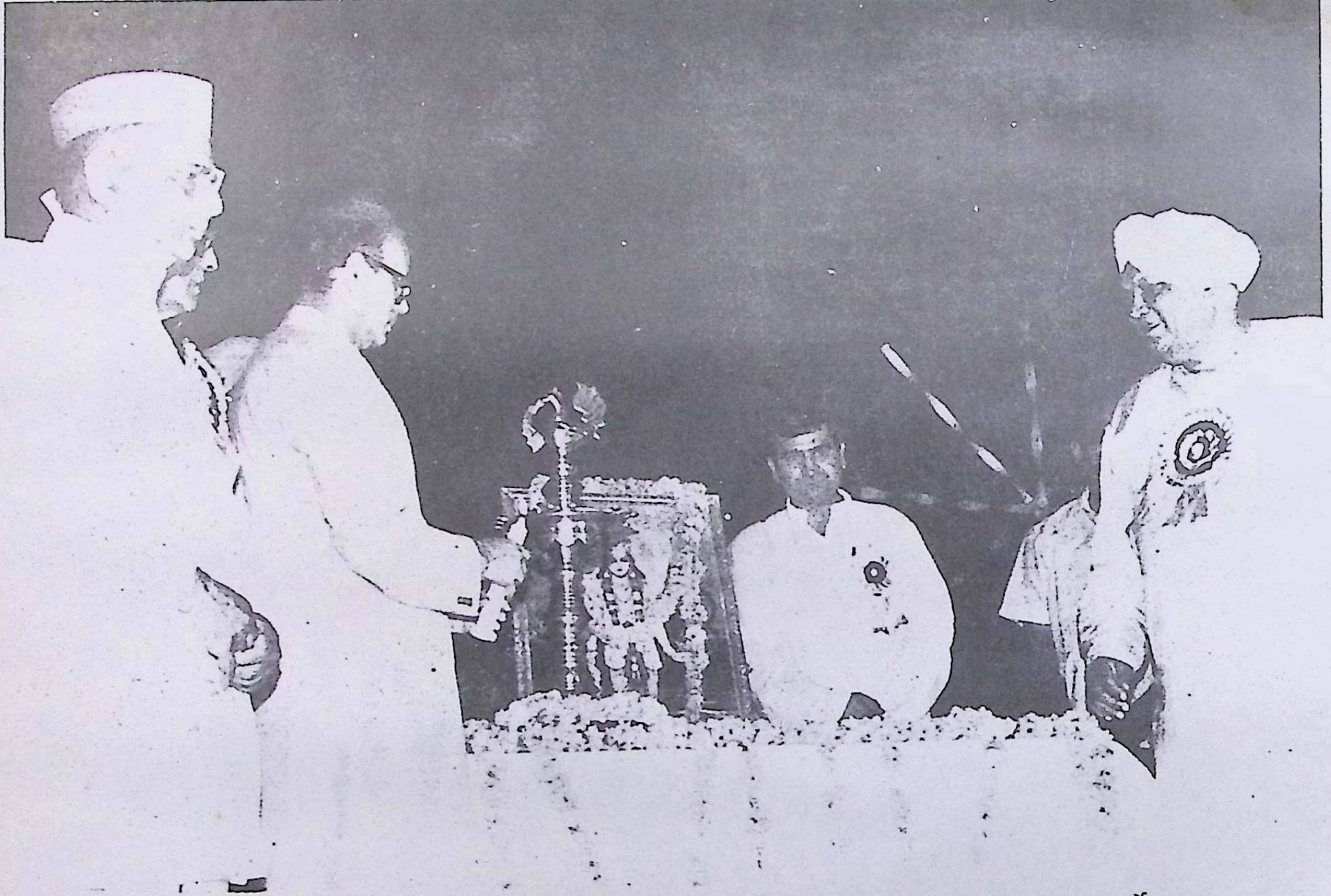
वैद्य श्री त्रिगुणा जी के कनिष्ठ पुत्र श्री देवेन्द्र त्रिगुणा पूर्व प्रधान मंत्री भारतरत्न
स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ ।



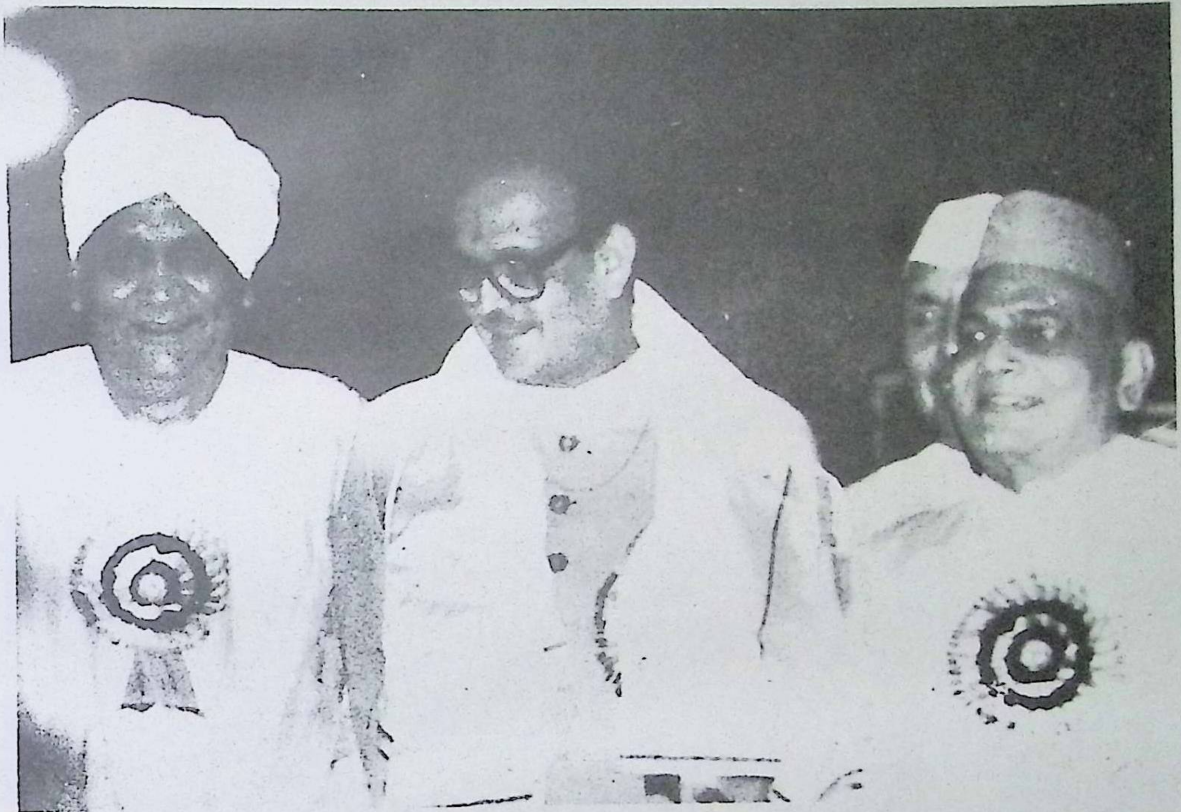
(ऊपर) महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यराज वृहस्पति देव जो त्रिगुणा माननीय प्रधान मंत्री को तिलक करते हुए, साथ में वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा हाथ में स्वर्ण रंजित रौप्यमय कलश लिए खड़े हैं।

(नीचे) महासम्मेलनाध्यक्ष प्रधानमंत्री को कलावा बांधते हुए, उनके मध्य में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष कवि० रामनाथ गुप्ता खड़े हैं।





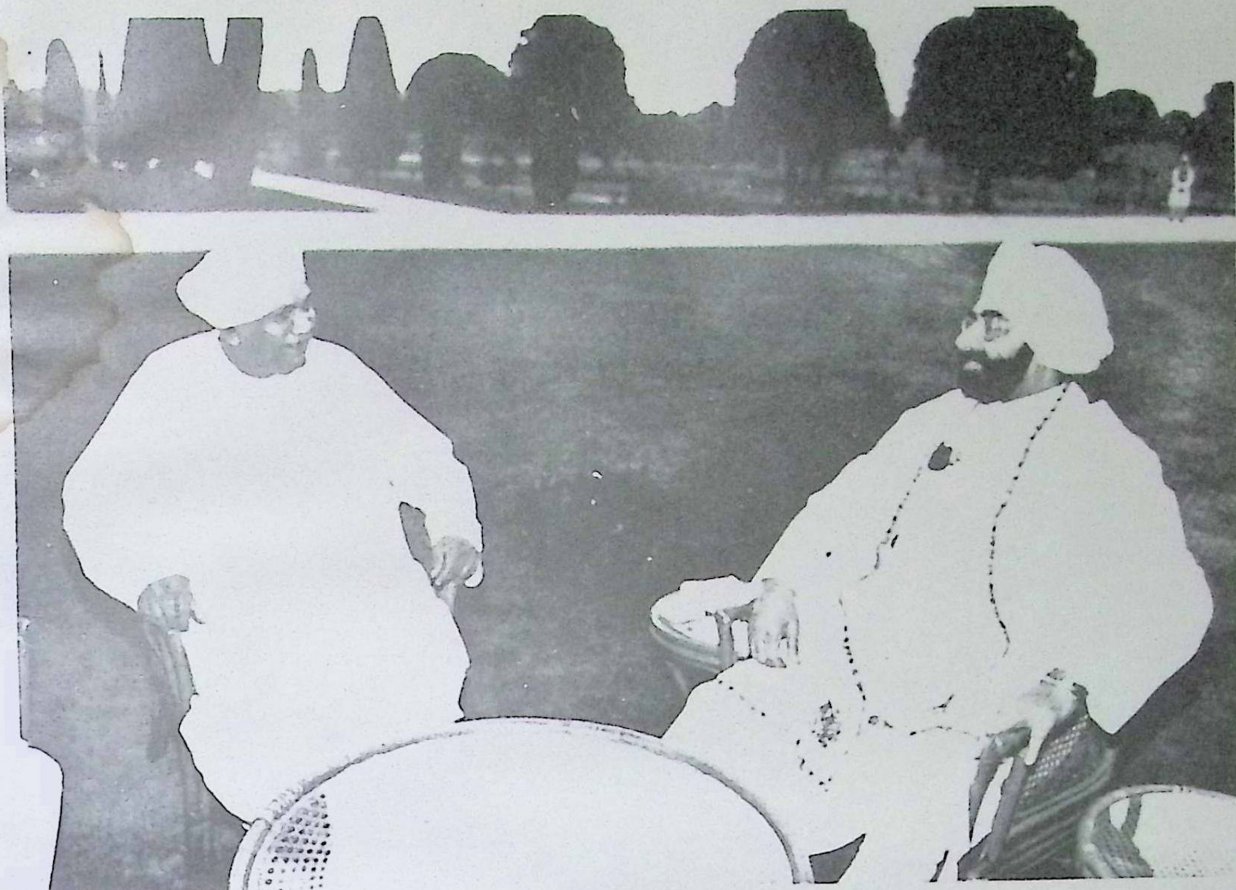
प्रधानमंत्री माननीय श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह दीप प्रज्ज्वलित करके ५३वें अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का उद्घाटन करते हुए। चित्र में बाईं ओर नवनिर्वाचित महासम्मेलनाध्यक्ष श्री श्रीराम शर्मा तथा दाहिनी ओर निवर्तमान महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्य शिरोमणि श्री बृहस्पतिदेव त्रिगुणा, मध्य में धन्वन्तरि चित्र के साथ श्री देवेन्द्र त्रिगुणा जी खड़े हैं।



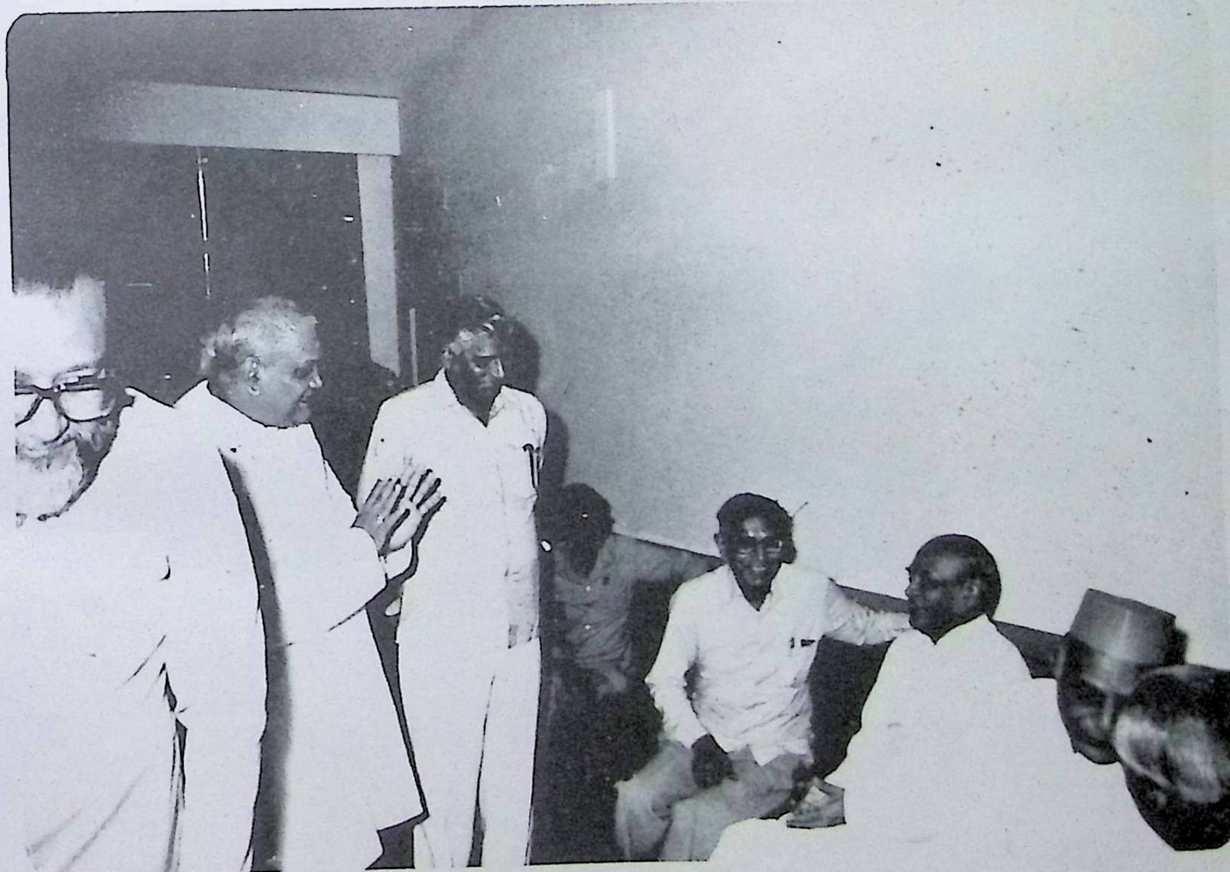
बांये से - निवर्तमान महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्य शिरोमणि बृहस्पतिदेव त्रिगुणा, भारत के प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह जी, नवनिर्वाचित महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्य श्री श्रीराम शर्मा एवं उनके पीछे स्वागताध्यक्ष पद्मश्री श्री घनश्याम दास गोयल दिखाई दे रहे हैं।



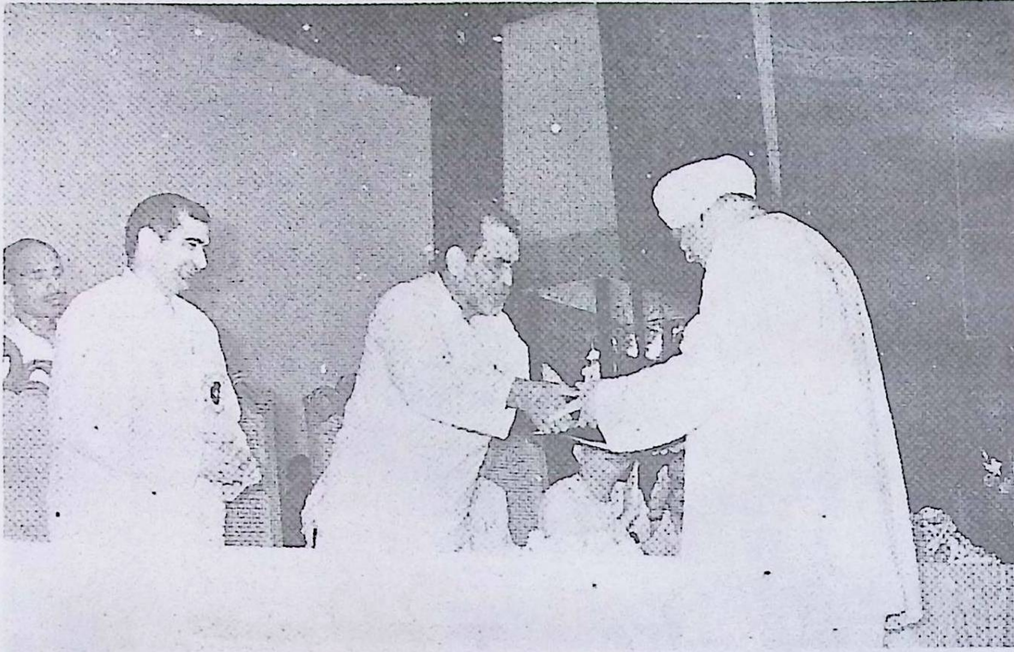
उद्घाटनावसर पर मंचासीन (बायें से) नवनिर्वाचित महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्य श्रीराम शर्मा निवर्तमान सम्मेलनाध्यक्ष श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा, हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री बनारसी दास गुप्त, प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह, हरियाणा के राज्यपाल श्री धनिक लाल मण्डल।



राजवैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा पूर्व राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह के साथ।



राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा भारत के प्रधान मंत्री श्री पी. वी. नरसिंहाराव से आयुर्वेद पर चर्चा करते हुये।



वैद्यराज बृहस्पति देव जी त्रिगुणा का , रौप्य निर्मित रथ प्रदान कर सम्मान करते हुए माननीय
श्री चन्द्रशेखर जी (प्रधानमन्त्री भारत सरकार) । चित्र में बायीं ओर श्री देवेन्द्र त्रिगुणा खड़े हैं



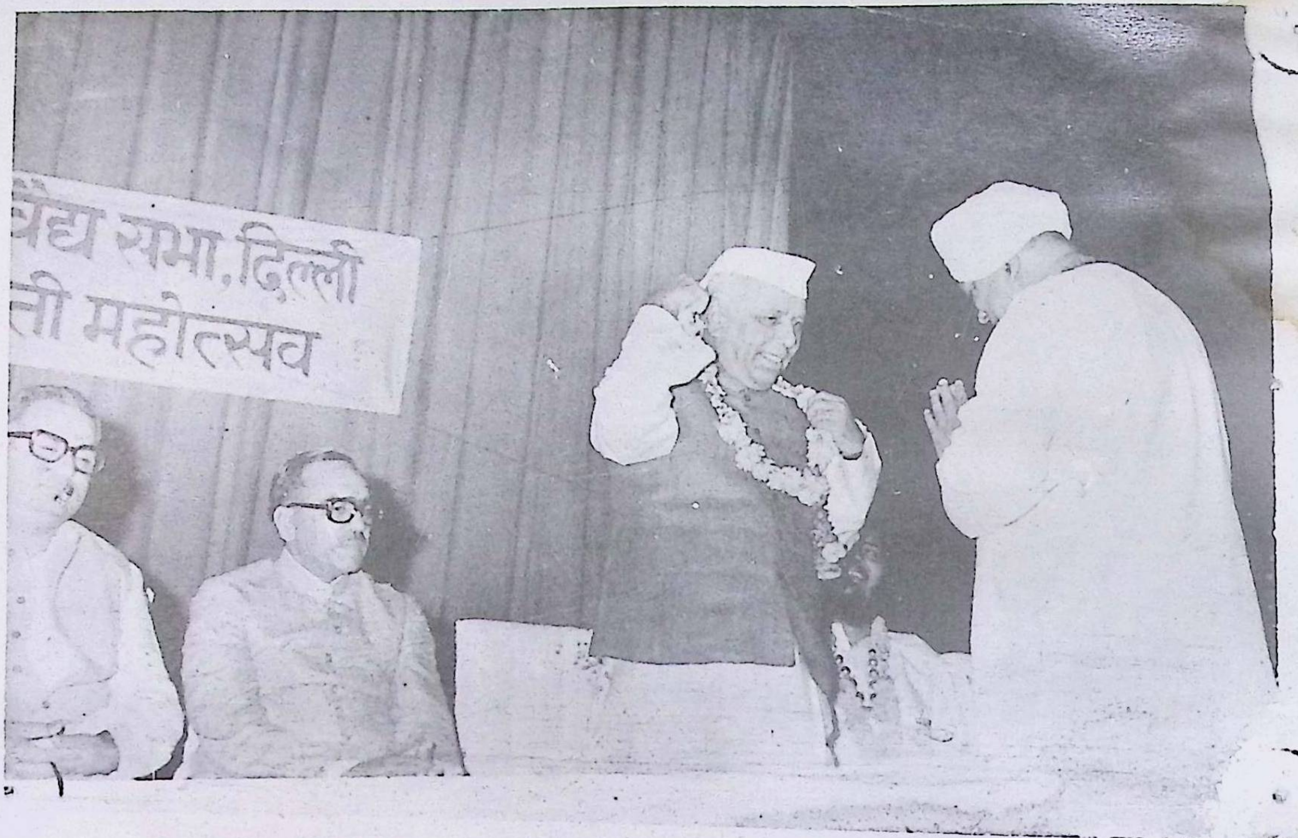
"सहस्त्र योगम्" नामक पुस्तक का विमोचन करते हुए माननीय श्री चन्द्रशेखर जी,
उनके दायीं और वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा, श्री आनन्द श्रीवास्तव,
वैद्य ओ०पी० वशिष्ठ, वैद्य सतीश शर्मा



राष्ट्रपति भवन में वेदानुसंधान संगोष्ठी पर कार्यवाहक राष्ट्रपति महामहिम
श्री बी. डी. जत्ती के साथ श्री त्रिगुणा जी ।



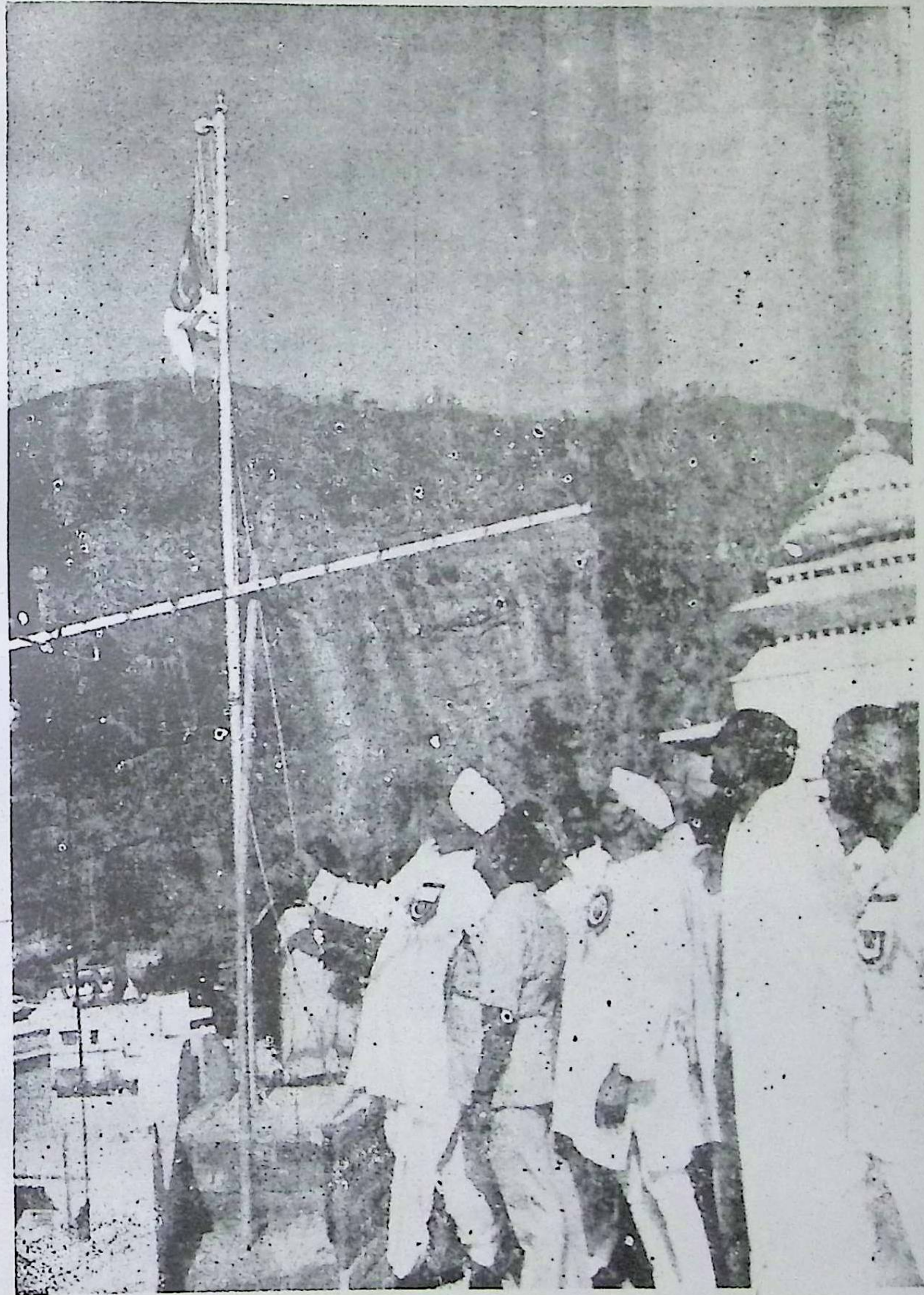
इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा दिल्ली द्वारा आयोजित सेमिनार का उद्घाटन करते पूर्व प्रधान
मंत्री श्री मोरार जी देसाई के साथ वैद्य श्री त्रिगुणाजी ।



वैद्य श्री त्रिगुणा जी पूर्व केन्द्रीय गृहमंत्री वाई. वी. चौहान के साथ



केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री राज नारायण को अमृत कलश भेंट करते हुये
वैद्य श्री त्रिगुणा जी



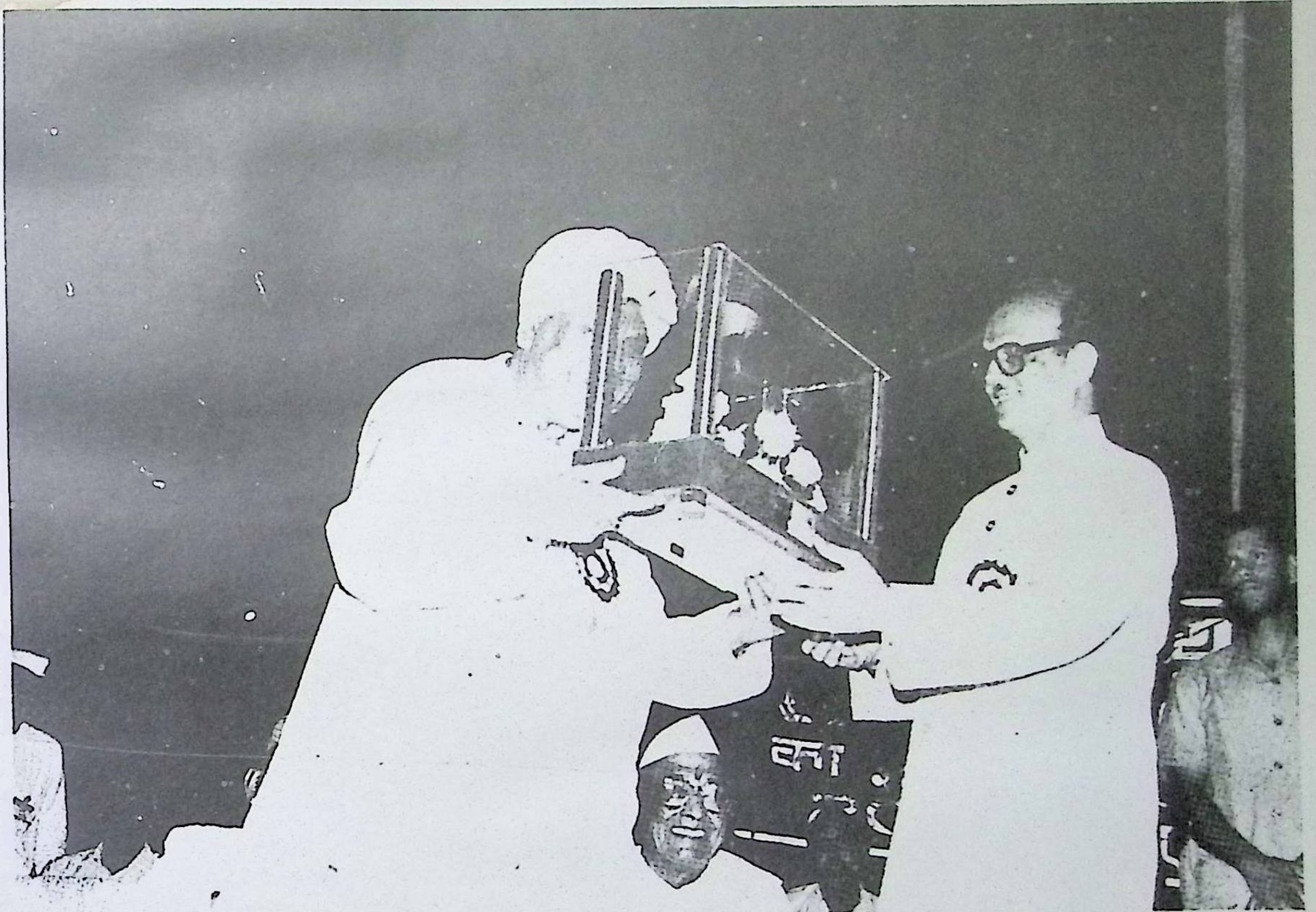
५२ वें अधिवेशन के अवसर पर धन्वन्तरि ध्वजोत्तोलन करते हुए
महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यराज श्री बृहस्पति देव जी त्रिगुणा।



५२ वें महाधिवेशन के अवसर पर उद्घाटन भाषण देते हुए माननीया श्रीमती मोहसिना किदवई जी, मंच पर (बायें) श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा, श्री लोकपति त्रिपाठी श्री धर्मदत्त वैद्य एवं महासम्मेलन प्रधान मंत्री वैद्य श्रीराम शर्मा।



दिल्ली में आयोजित अखिलभारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन में महामहिम राष्ट्रपति श्री ज्ञानी जैल सिंह, केन्द्रीय स्वस्थ्य मंत्री श्री वी शंकरानन्द तथा गृह मंत्री श्री प्रकाश चन्द्रसेठी के साथ



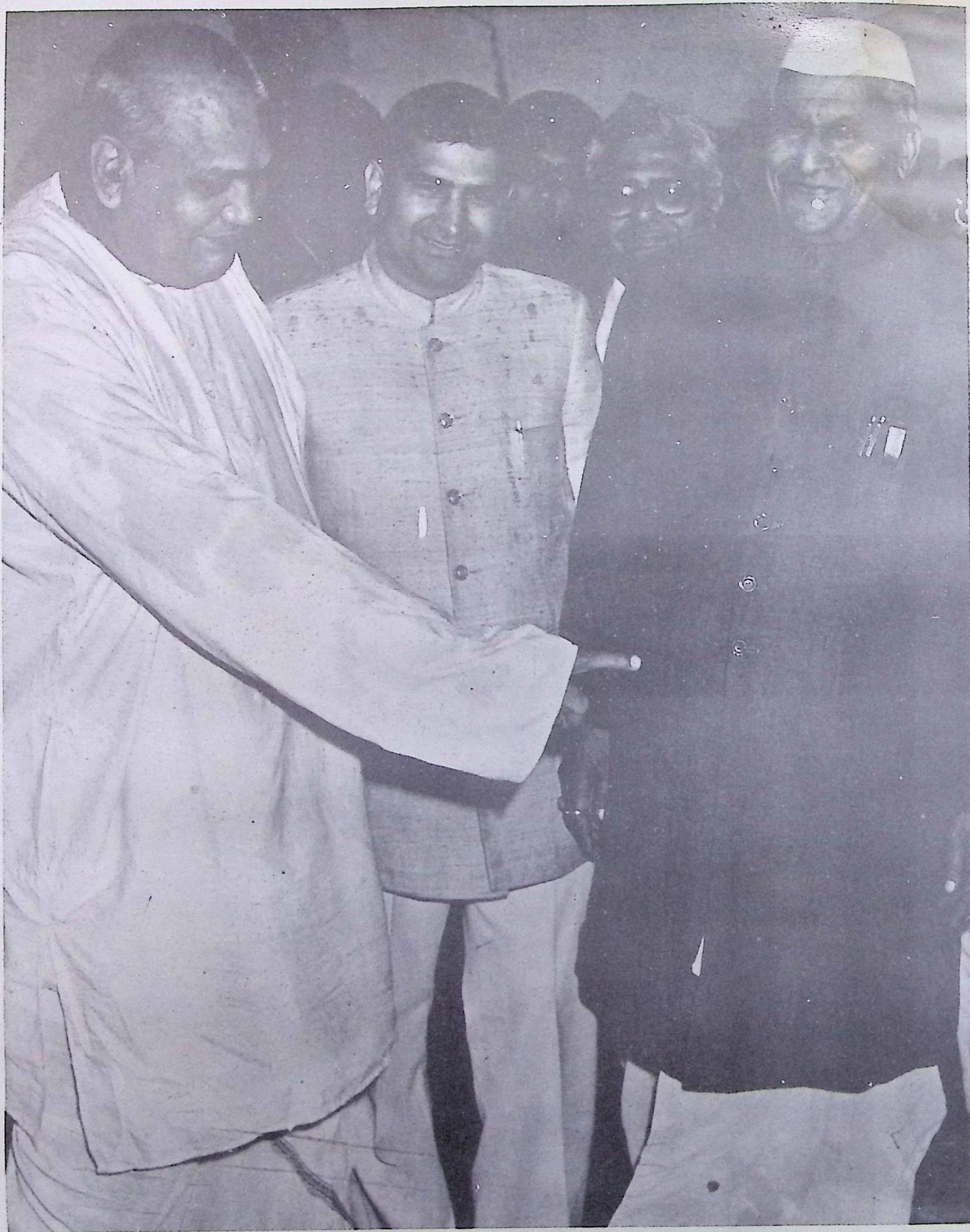
प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह जी आयुर्वेद विज्ञान की विशिष्ट सेवाओं के उपलक्ष्य में महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यराज श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा को रौप्य निर्मित रथ भेंट करते हुए। उनके मध्य में गांधी टोपी पहने उद्घाटन समारोहाध्यक्ष श्री बनारसी दास गुप्त मुख्यमंत्री हरियाणा।



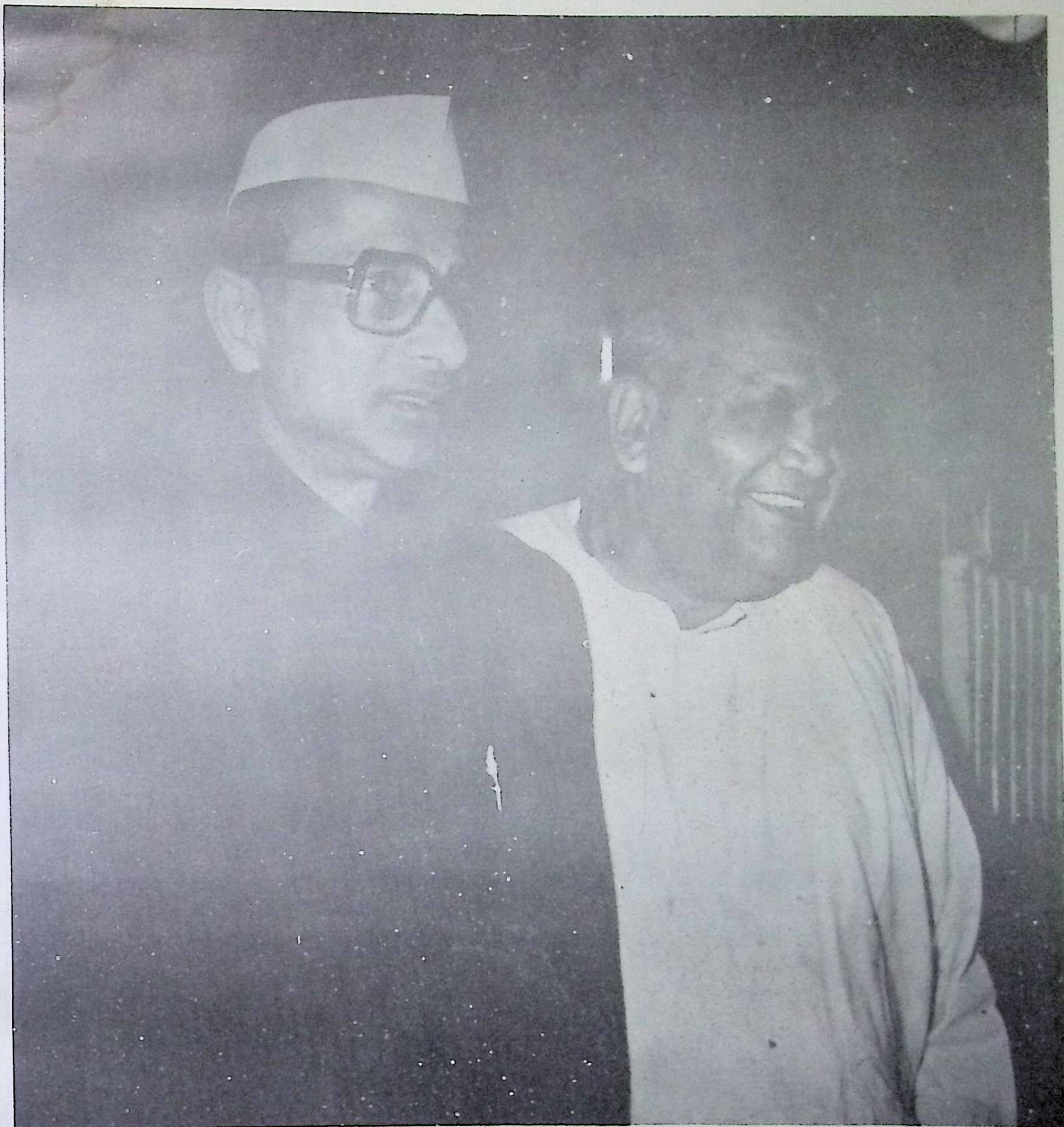
महासम्मेलनाध्यक्ष वैद्यराज श्री बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा प्रधानमंत्री जी को उत्तरीय भेंट करते हुए।



पूर्व प्रधान मंत्री भारत सरकार श्री चन्द्रशेखर जी, श्री श्यामलाल जी पूर्व मंत्री तथा
श्री रामचन्द्र विकल राज्य सभा सदस्य वैद्य श्री त्रिगुणा जी के साथ



पूर्व केन्द्रीय मंत्री श्री अनन्त प्रसाद शर्मा राजवैद्य श्री त्रिगुणा जी के साथ



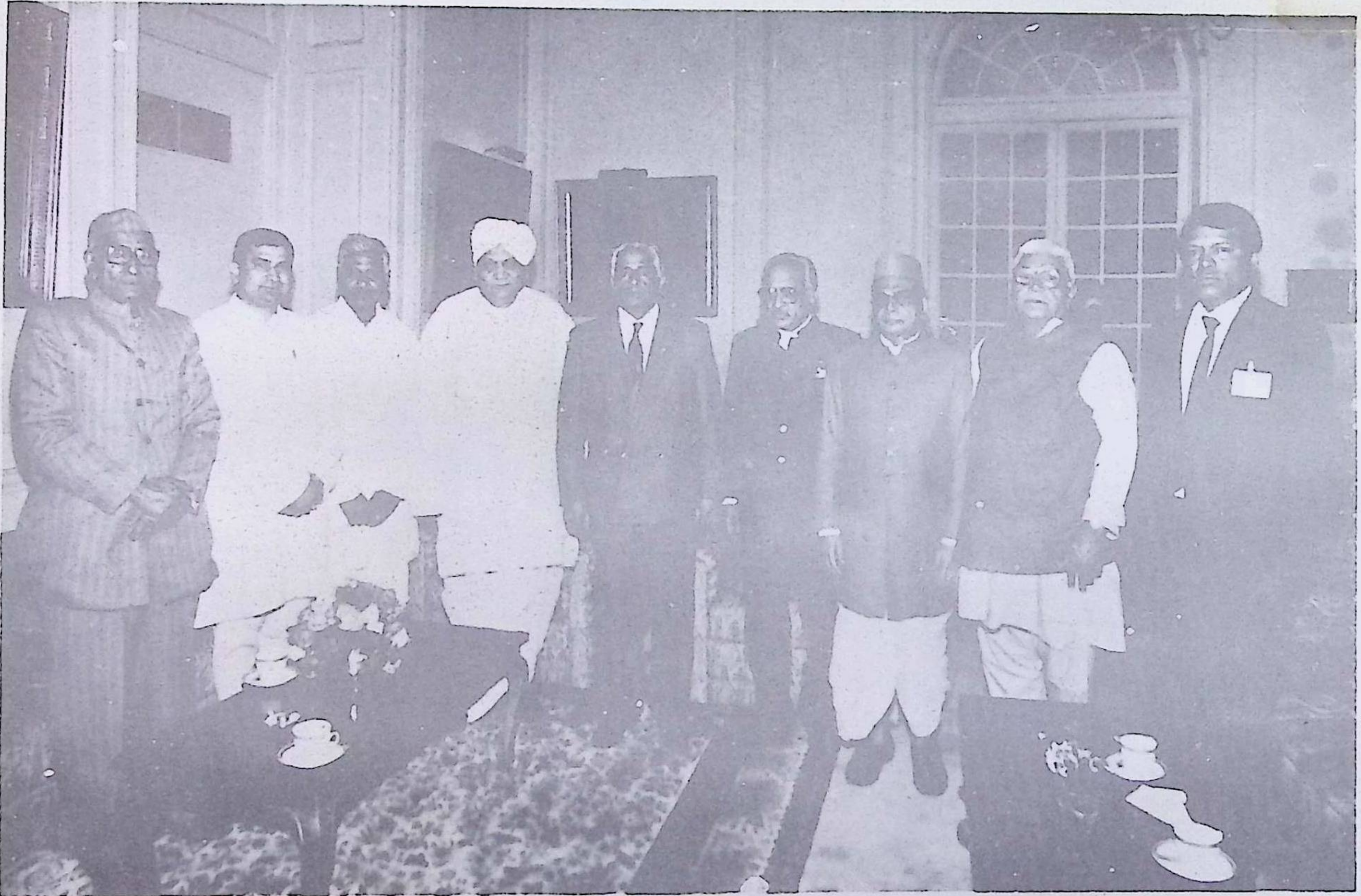
वैद्य श्री त्रिगुणा जी पूर्व मंत्री श्री भीषम नारायण सिंह के साथ

राष्ट्रीय महत्व के रोगों पर आयुर्वेद विशेषज्ञों की अध्ययन गोष्ठी-कार्यवाही

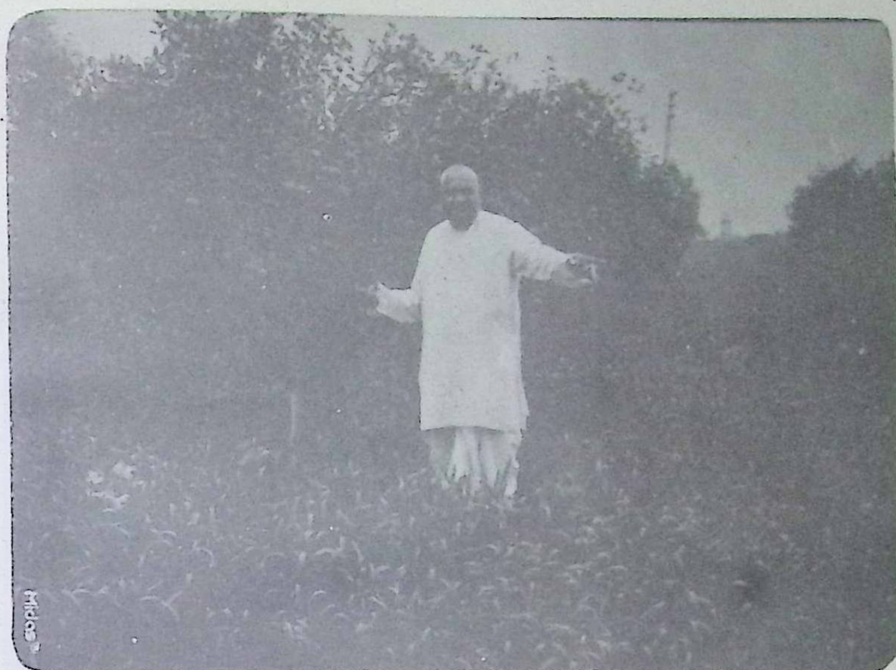




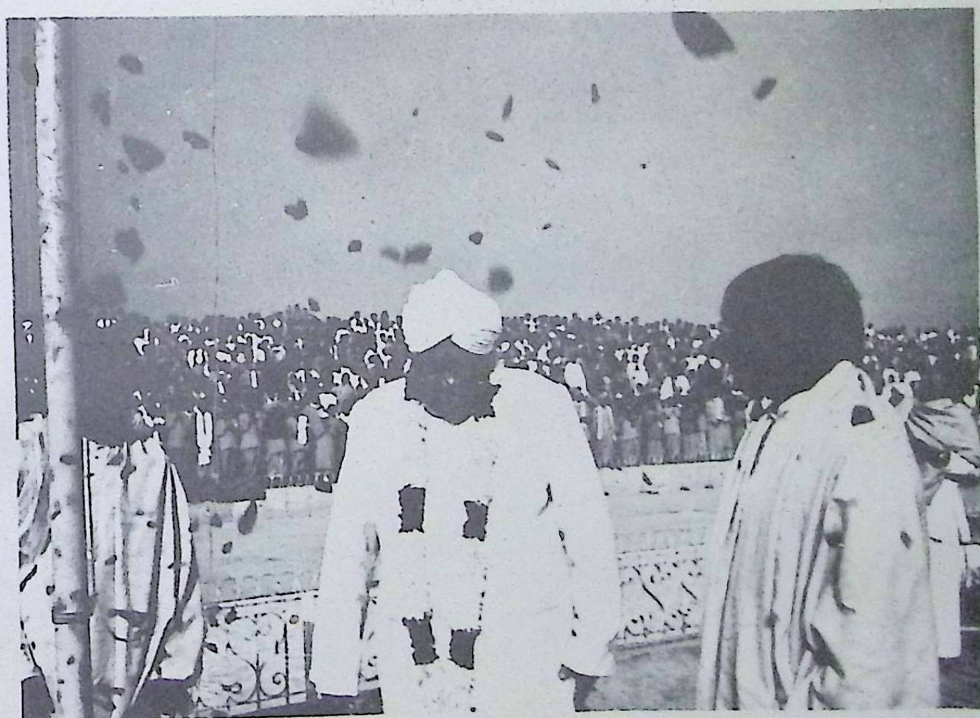
अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन के ५१ वें महाधिवेशन में विशिष्ट अतिथि म. प्र. के मुख्य मंत्री श्री अर्जुन सिंह का स्वागत करते वैद्य श्री त्रिगुणा जी



मारीशस के प्रधानमंत्री के साथ राजवैद्य श्री त्रिगुणा जी अपने अन्य साथियों के साथ।



वैद्य श्री त्रिगुणा जी द्रव्यगुण वाटिका में औषधियों का चयन करते हुये



महर्षि वेद विज्ञान विश्व विद्यापीठ, महर्षिनगर गाजियाबाद (उ.प्र.) परिसर में गणतंत्र दिवस पर ध्वजारोहण के समय श्री त्रिगुणा जी



महासम्मेलनाध्यक्ष स्वास्थ्यमंत्री को अमृतकलश भेंट करते हुए।



हरियाणा सरकार के मुख्य मंत्री चौधरी भजन लाल के साथ श्री त्रिगुणा जी

उपस्थित हुये थे। आयुर्वेद की उत्कृष्ट सेवाओं के प्रति आभार व्यक्त करते हुये सर्वसम्मति से श्री त्रिगुणा जी को अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का पुनः अध्यक्ष चुना गया। अध्यक्ष पद को सुशोभित करते हुये अपने भाषण में आपने कहा कि जून १९८३ में महासम्मेलनाध्यक्ष पद का गुरूतर दायित्व मुझे जो सौंपा गया था वह मैंने आप सबके सहयोग से यथा शक्ति वहन किया मेरी यह इच्छा थी कि इस बार मुझसे अधिक विद्वान् प्रवीण आयुर्वेदज्ञ को सम्मेलन का नेतृत्व दिया जाय, किन्तु आप सब का स्नेह तथा आदेश मुझे शिरोधार्य है। अन्त में आपने कहा कि सन् २००० तक सभी के लिये स्वास्थ्य लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में भारतीय वैद्य समाज की सेवाओं के लिए मैं अपने आपको अर्पित करता हूं। वैद्य जन केवल रोग निवारण एवं रोग चिकित्सा के ही नहीं वरन् दिनचर्या, ऋतुचर्या तथा देश कालानुसार आहार विहार सम्बन्धी निर्देश देकर देश वाशियों के स्वास्थ्य संवर्धन में भी पूर्ण सहायक सिद्ध होंगे।

हरिद्वार में सम्पन्न ५२ वें महाधिवेशन के पश्चात ३ वर्ष की अवधि के बाद २० जून १९८९ को धर्मक्षेत्र कुरूक्षेत्र की पावन स्थली कुरूक्षेत्र विश्व विद्यालय के महानसभागार में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन का तिरपनवां अधिवेशन आयोजित हुआ जिसका उद्घाटन भारत सरकार के प्रधान मंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने किया तथा अध्यक्षता मुख्य मंत्री हरियाणां श्री बनारसी दास ने की। मुख्य अतिथि के रूप में भारतीय जनता पार्टी के नेता तथा वर्तमान राष्ट्रीय अध्यक्ष डा. मुरली मनोहर जोशी भी उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त विशिष्ट अतिथि के रूप में हरियाणा के राज्यपाल महामहिम श्री धनिक लाल मण्डल उड़ीसा के राज्यपाल महामहिम श्री यज्ञदत्त शर्मा आदि ने भी अपनी उपस्थिति से आयुर्वेद सम्मेलन को गौरवान्वित किया। उक्त महाधिवेशन में श्री त्रिगुणा जी ने अपने अध्यक्ष पद के ६ वर्ष के कार्यकाल के बाद महासम्मेलन अध्यक्ष का पदभार आचार्य श्री राम शर्मा (बम्बई) को प्रदान कर निर्वाध रूप से आयुर्वेद की सेवा करने का संकल्प किया।

उक्त अवसर पर श्री त्रिगुणा जी ने कहा कि श्री राम शर्मा आज के वैज्ञानिक युग में आयुर्वेद की जीवन शास्त्र की महत्ता को बढ़ाने में सफल तथा प्रयत्न शील रहेंगे। आपकी सेवाभावी वृत्ति वैद्य समाज में पहले ही सराहनीय रही है। इससे पहिले कि मैं पुण्य प्राप्त करूं आपके समक्ष त्रुटियों की क्षमा याचना करता हूं। आशा है आप मुझे आशीर्वाद देकर प्रोत्साहित करेंगे।

इसके अतिरिक्त श्री त्रिगुणा जी की आयुर्वेद की उत्कृष्टतम सेवाओं में एक नया आयाम उस समय जुड़ गया जबकि भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा दिनांक ६.९.१९९० पत्रांक संख्या ए. १२०३४३३९० सी एच एस द्वारा राजवैद्य वृहस्पति देव त्रिगुणा जी को महामहिम राष्ट्रपति भारत सरकार का चिकित्सक नियुक्त किया गया। उक्त समाचार से सारे आयुर्वेद मनीषियों में एक नये हर्ष का संचार हुआ।

आयुर्वेद के प्रति बढ़ती निरंतर सेवाओं का गहन प्रवाह उनकी अवस्था तथा आयु को देखते हुये भी ठहराव की ओर कदापि बिचलित नही हुआ इस सुधा स्रावणी अजस्रधारा ने नव वर्ष में एक नयी ज्योति के रूप में एक नयी आभा को जन्म देकर आयुर्वेद के सपनों को उस समय साकार

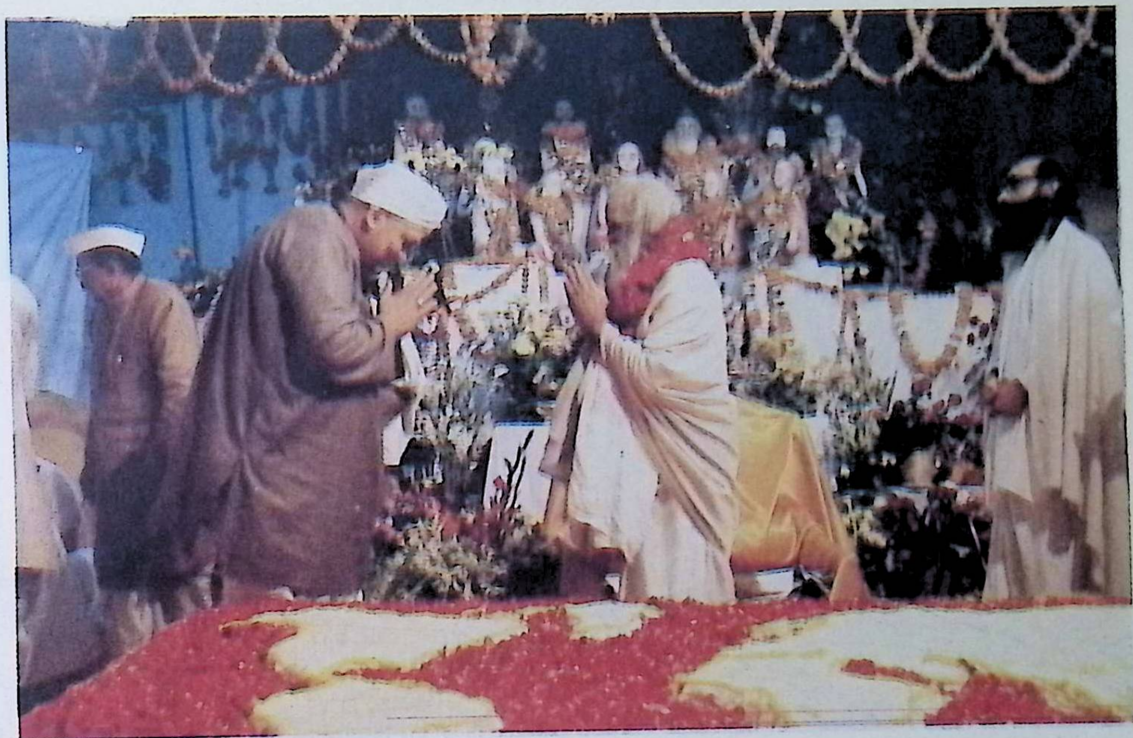
कर दिया जब आपको महामहिम राष्ट्रपति श्री बैंकट रमण जी ने २६ जनवरी १९९२ को उन्हें पद्मभूषण से अलंकृत किया। पद्मभूषण अलंकरण के सम्मान में देश के विभिन्न प्रान्तों तथा जनपदों आदि ने उनके सम्मान में विभिन्न समारोहों का आयोजन भी किया जिनका विस्तृत वर्णन करना उपरोक्त लेख में सम्भव नहीं होता।

यह छोटा सा अंश श्री त्रिगुणा जी की महानता तथा उदारता का द्योतक है। आयुर्वेद सम्मेलन के गुरुतर दायित्व के बिना भी आपने आयुर्वेद की दिशा में अनुसंधान शिक्षा तथा औषधि निर्माण आदि के चतुर्मुखी विकास में अपना पूरा ध्यान केन्द्रित किया, समय-समय पर महामहिम राष्ट्रपति जी से मिलना, प्रधान मंत्री जी से मिलना तथा उनसे सम्पर्क रखना उनका प्रमुख कार्य रहा। जिसमें राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ की स्थापना में उच्चशिक्षा व्यवस्था उत्तर प्रदेश में स्वतंत्र आयुर्वेद विश्व विद्यालय की स्थापना उनकी एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। जो २४ नवम्बर १९९१ को उत्तर प्रदेश के प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन के विशेषाधिवेशन में प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री कल्याण सिंह ने अपने विचार व्यक्त करते हुए घोषणा की कि गुजरात की तरह ही अष्टांग आयुर्वेद के विकास को दृष्टिगत रखते हुये एक स्वतंत्र आयुर्वेद विश्व विद्यालय स्थापित किया जायेगा जिसमें प्रदेश के सभी आयुर्वेद विश्व विद्यालय सम्बद्ध होंगे।

आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार तथा विकास में देश के जहां विद्वान् वैद्यों ने अपना अप्रतिम योगदान दिया है वहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर में "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः" वैदिक सिद्धान्त को दृष्टिगत रखते हुये परम पूज्य महर्षि महेश योगी जी ने निरोग समाज निर्माण का संकल्प श्री त्रिगुणा जी के कर कमलों में सौंपते हुये आयुर्वेद की अजस्रधारा विदेशों में प्रबाहित की है। विश्व के क्षितिज में आयुर्वेद की सिंदूरी सुषमा अपने पूर्ण प्रखर आलोक से आलोकित है। जिसमें मारीसस, कनाडा, स्विटजरलैण्ड, जर्मनी, हालैण्ड, पोलैण्ड, यूगोस्लाविया, जापान, मास्को तथा अमेरिका आदि देशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के सिद्धान्तों के अनुसार नाड़ीज्ञान, चिकित्सा तथा आयुर्वेदीय औषधि आदि का प्रचार प्रसार हो रहा हैं। इन विद्वान् वैद्यों की श्रृंखला में जामनगर विश्व विद्यालय के विद्वान् वैद्य श्री सी.पी. शुक्ल, वैद्य वासुदेव जी लाटा कविराज भुवनचन्द जोशी दिल्ली, वैद्य प्रियवृत शर्मा तथा श्री रमेश वेदी दिल्ली आदि प्रमुख हैं। जिन्होंने आयुर्वेद के विराट स्वरूप को प्रतिपादित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। इस दिशा में श्री त्रिगुणा जी का निरन्तर सहयोग तथा मार्ग दर्शन प्राप्त हो रहा है।

भगवान् त्रिगुणेश्वर शंकर जी से हम यह प्रार्थना करते हैं कि उनकी अनुकम्पा तथाकृपा दृष्टि से यह आयुर्वेद मार्तण्ड प्रकाश पुञ्ज शाश्वत रूप से अपनी दिव्य प्रतिभा से सदैव हम सभी को आलोकित करता रहे। आयुर्वेद के विकास तथा प्रचार प्रसार में श्री त्रिगुणा जी का निरंतर सहयोग इनका मार्ग दर्शन पूर्ववत समग्र वैद्य समाज को मिलता रहे जिससे आपके पद चिन्हों पर हम चलते रहें किंकर्तव्यमूढ़ न हों। ईश्वर आपको दीर्घायुष्य तथा सदैव स्वस्थ रखें।

।। जय गुरूदेव ।।



पूज्य महर्षि जी राजवैद्य श्री त्रिगुणा जी को शुभाशीर्वाद देते हुये

वैद्य शिरोमणि श्री त्रिगुणा जी की आयुर्वेद के निमित्त अन्तर्राष्ट्रीय यात्रा

लेखक कविराज गौरीलाल चानना

१९८३ के अखिलभारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन का ५१ वां महाधिवेशन नई दिल्ली में सम्पन्न हुआ जिस का उद्घाटन तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम ज्ञानी जैल सिंह ने किया इस अधिवेशन में श्रद्धेय त्रिगुणा जी सर्व सम्मति से अ. भा. आयुर्वेद महा सम्मेलन के अध्यक्ष पद पर पदासीन हुए तो सर्वप्रथम उनका ध्यान आयुर्वेद महासम्मेलन के लक्ष्य एवं उद्देश्यों में से एक उद्देश्य की ओर गया जो इस प्रकार है कि विदेशों की आयुर्वेदिक संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करना तथा आयुर्वेद चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का गठन करना, उनके निर्माण में सहायता-सहयोग देना तथा उनमें भाग लेना। भूतकाल में भी महासम्मेलन यथाशक्य इस उद्देश्य की पूर्ति की दिशा में प्रयत्नशील रहा है।

नेपाल एवं श्री लंका के आयुर्वेद संगठन महासम्मेलन के निमन्त्रण पर उसके महाधिवेशनों में आप सम्मिलित होते रहे हैं। महासम्मेलन के प्रतिनिधि मण्डल भी सम्भवतः इन देशों में जाते रहे। श्री भण्डारनायके एवं श्रीमती मावो भण्डारनायके के प्रधान मन्त्रित्वकाल में श्री लंका में आयुर्वेद अनुसन्धान संस्थान की नींव रखी गई, जिसकी सारी योजना महासम्मेलन के प्रमुख नेता प. शिवशर्मा ने तैयार की और उसे कार्यान्वित करने हेतु श्री लंका सरकार के परामर्श दाता के रूप में उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारत के तत्कालीन लोकप्रिय प्रधानमंत्री पं. जबाहर लाल नेहरु ने इस संस्थान का उद्घाटन किया। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि श्री लंका वर्तमान युग में भारत से भी अधिक आयुर्वेद का केन्द्र बनने वाला है। पं. शिव शर्मा को परमात्मा ने ऐसी ओजस्वी एवं प्रभावशाली वक्तृत्वशक्ति प्रदान की थी कि वह कुछ ही क्षणों में श्रोता को, चाहे वह कितना ही महान् व्यक्ति क्यों न हो, मन्त्र-मुग्ध सा कर देते थे। उन्हें अपने जीवन काल में अमेरिका, जापान, आस्ट्रेलिया जैसे समुन्नत देशों में भाषण मालाओं के लिए निमन्त्रण प्राप्त हुये और वे अपनी वाक् शक्ति के बल पर उन्होंने आयुर्वेद को इन देशों में भी चर्चा का विषय बना दिया। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विद्वान् वैद्य जैसे कविराज श्री आशुतोष मजूमदार वात-व्याधि सम्बन्धी गोष्ठियों में भाग लेने कई बार विदेश गये। श्री वैद्य शिव कुमार मिश्र परामर्श दाता आयुर्वेद भारत सरकार, श्री चन्द्रशेखर गणेश जोशी पूना, श्री एल. वी. गुरु वाराणसी, वैद्य भगवान दास, श्री रामरक्ष पाठक तथा श्री दुर्गा प्रसाद शर्मा आदि कई अन्य वैद्य महानुभाव भी योरुप, अमेरिका तथा एशियाई देशों में विचार गोष्ठियों में यदा कदा सम्मिलित होते रहे। और इस प्रकार इन देशों में भी आयुर्वेद के प्रति रुचि जागृत हूई।

अधुना, गत कुछ वर्षों में महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान के माध्यम से अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष आयुर्वेद शिरोमणि वैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयुर्वेद प्रचार की दिशा में अभूतपूर्व सफल प्रयास किये हैं। आदरणीय त्रिगुणा जी ने १९७९ से लेकर अब तक आयुर्वेद के अन्य मूर्धन्य विद्वानों के साथ इस उद्देश्य के लिये अनेकों बार विदेश यात्रायें की हैं। अनेकों स्थानों पर आयुर्वेद सम्बन्धी भाषण किये तथा विभिन्न देशों में रोगी निरीक्षण में अपने नाड़ी ज्ञान का आश्चर्य जनक परिचय देकर विदेशियों की दृष्टि में आयुर्वेद को समादृत करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह सारा कार्य महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान के तत्वावधान में हुआ है। अतः यहां इस संस्थान का परिचय देना भी प्रासंगिक होगा।

महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान

पूज्यपाद महर्षि महेश योगीजी का नाम आज किसने नहीं सुना? उन्होंने आज से जगमग ३० वर्ष पूर्व वेद विज्ञान एवं योग को आधार बनाकर योरुप तथा अमेरिका के विभिन्न देशों में सैकड़ों केन्द्र स्थापित किये। भावातीत ध्यान की अनुपम विधि का आविष्कार कर आपने सहस्त्रों की संख्या में अपने शिष्य विदेशों में बना लिये और उन्हीं के माध्यम् से उक्त केन्द्रों का संचालन होने लगा। महर्षि जी के विदेशी शिष्यों में सामान्य व्यक्तियों की संख्या बहुत कम है, अधिकतर बड़े-बड़े डाक्टर, उच्च विज्ञान वेत्ता, राजनीतिज्ञो, वकील, प्रफेसर आदि उच्च बुद्धिजीवी वर्ग के लोग हैं। महर्षिजी के प्रति इन लोगों की अगाध श्रद्धा देखकर वास्तव में आश्चर्य होता है। इन शिष्यों का दैनिक ज़ीवन महर्षि जी के द्वारा प्रदत्त संस्कारों से पूर्ण रूप से रंजित है, वैदिक संस्कृति का उन पर वह रंग चढ़ा है कि वह इस विषय में भारतीयों को भी मात दे गये हैं। पश्चिम के विलासिता पूर्ण एवं भौतिकवादी समाज की उपज यह शिष्य मण्डली, अपने खान-पान एवं व्यवहार में पूर्ण रूप से भारतीयता से ओत-प्रोत है। विशुद्ध निरामिष, सात्विक भोजन, भावातीत ध्यान का नियमित अभ्यास इन केन्द्रों की विशेषता है। यही नहीं, पूज्य महर्षि जी ने करोड़ों रुपया व्यय करके मध्य अमेरिका के आयोवा राज्य के फेयर फील्ड कस्बे में महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना कुछ वर्ष पूर्व की। इस विश्वविद्यालय में गणित, भौतिकी, रसायन शास्त्र तथा इलैक्ट्रोनिक जैसे आधुनिक विज्ञान विषयों की उच्चतम शिक्षा व्यवस्था अन्य सामान्य विषयों की शिक्षा के अतिरिक्त है। इस विश्वविद्यालय के भीतर करोड़ों रुपये की लागत से बनी हूई अनुसन्धान एवं प्रयोगशालाएं तथा आधुनिकतम कम्प्यूटर विभाग हैं। इस विश्वविद्यालय की गणना अमेरिका के कतिपय सर्वोत्तम विश्वविद्यालयों में होती है। विशेषता यह है कि यहां के अध्यापकों व छात्र-छात्राओं के आचार व्यवहार, खान-पान में भारतीय संस्कृति की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है।

जहां तक मुझे ज्ञात है, वेद के परम उपासक महर्षिजी का ध्यान पहले पहल १९७९ में वेद के उपांग आयुर्वेद की ओर गया। उनके पावन मन में यह भाव जागृत हुआ कि आयुर्वेद का प्रचार-प्रसार भी सम्पूर्ण विश्व में होना चाहिये। इसी लक्ष्य से उन्होंने महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान की स्थापना की। पं. देवशर्मा के सुझाव पर उन दिनों आयुर्वेद शिरोमणि श्री त्रिगुणा जी एवं मुझसे प्रथम सम्पर्क हुआ। अल्प वार्तालाप के अनन्तर श्री त्रिगुणा जी के सुझाव पर भारत के १००-१५० विशिष्ट आयुर्वेद विद्वानों को टेलीफोन व तार आदि से तुरन्त निमन्त्रण भेजे गये तथा वायुयान, रेल आदि

द्वारा दो दिन में ही बहुत से विद्वान वसन्त विहार, नई दिर्ल्ली में एकत्रित हो गये। इन विद्वानों का मार्ग व्यय तथा अन्य सभी व्यय आदि महर्षि जी ने वहन किया। इस सम्मेलन में आयुर्वेद के विदेशों में प्रचार-प्रसार, पंचकर्म तथा पारद संस्कार जैसे गहन विषयों की गम्भीरतापूर्वक चर्चा हुई। जिसके परिणाम स्वरूप वैद्य श्री त्रिगुणा जी, श्री वासुदेव मूल शंकर द्विवदी, वैद्य श्रीराम शर्मा, बम्बई वैद्य श्री हरिदत्त जी शास्त्री, वैद्य वेणी माधव शास्त्री बम्बई आदि तथा कुछ अन्य विद्वानों ने स्विट्जरलैण्ड की यात्रा की ओर मोलिसवर्ग नामक स्थान पर कई दिनों तक इन्हीं विषयों की चर्चा होती रही। पश्चात् योरुप ओर अमेरिका के कई देशों में भारत के गणमान्य विद्वान् वैद्य महानुभाव यथा वैद्य वासुदेव एम. द्विवेदी, श्री वैद्य सी.पी. शुक्ला, जामनगर, डॉ. एच. एस. कस्तूरे आदि वहां के डाक्टरों को आयुर्वेद के मौलिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त प्रशिक्षण देने के लिए वहां भेजे गये। स्थान-स्थान पर स्वास्थ्य संरक्षण केन्द्र किये गये, इन केन्द्रों में भारतीय विशेषज्ञों की देख रेख में पंचकर्म की भी व्यवस्था की गई। इसी प्रकार ब्राजील देश में वैद्य दामोदर सिंह शास्त्री तथा बाद में वैद्य भुवन चन्द्र जी जोशी दिल्ली तथा पं. मदन मोहन जी पाठक चण्डीगढ़ ने भी कई मास तक ब्राजील में निवास कर इन स्वास्थ्य केन्द्रों तथा डॉक्टरों को आयुर्वेद प्रशिक्षण देने के कार्य को आगे बढ़ाया।

वैद्य वासुदेव शास्त्री लाटा को ऐसे केन्द्र स्थापित व संचालित करने भेजा गया। यह केन्द्र इन देशों में थोड़े ही समय में इतने लोकप्रिय हो गये कि उनमें लम्बी-लम्बी प्रतीक्षा सूचियां बन गई। इस सारे कार्यक्रम में मूलतः वैद्य श्री त्रिगुणा जी की प्रेरणा ही कार्यरत रही। महर्षि जी की मान्यता थी हस्तामलकवत् चिकित्सा चमत्कार ही विदेशों में आयुर्वेद की स्थापना का सर्वश्रेष्ठ साधन है। अतः उनकी पेनी दृष्टि ऐसे चिकित्सकों की खोज में लग गई। सिद्धहस्त वैद्य श्री त्रिगुणा जी के रूप में उन्हें ऐसा चिकित्सक दृष्टिगोचर हुआ, जिसे उन्होंने आधुनिक धन्वन्तरि तक के विशेषण से सम्बोधित किया। उन्हीं के परामर्श व निर्देशन में अमेरिका, हालैण्ड, इटली, इंग्लैण्ड, स्विटजरलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, ब्राजील आदि देशों में आयुर्वेदिक स्वास्थ्य संरक्षण केन्द्रों की स्थापना हुई, और श्री त्रिगुणा जी ने कई बार इन केन्द्रों में जाकर अपने नाड़ी ज्ञान द्वारा रोग निदान एवं चिकित्सा के चमत्कार से आयुर्वेद में विदेशियों की आस्था दृढ़ की। इसके साथ वेद, आयुर्वेद एवं भावातीत ध्यान, ज्योतिष, खगोल आदि विषयों पर सम्मेलन एवं चर्चायें आयोजित की जात्ती रहीं।

इसी प्रसंग में पूज्य महर्षिजी ने दिनां ९-७-८५ से १९-७-८५ तक अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन सें वैदिक विज्ञान विश्व सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन का एक सत्र आयुर्वेद एवं स्वास्थ्य के विषय पर भी रखा गया। महर्षि जी के निमन्त्रण पर महासम्मेलनाध्यक्ष आयु. मार्त्तण्ड श्री त्रिगुणा जी के नेतृत्व में महासम्मेलन अधिकारियों का एक दल इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए वाशिंगटन गया। इस दल में महासम्मेलनाध्यक्ष के अतिरिक्त वैद्य श्रीराम शर्मा (प्रधानमन्त्री), वैद्य सोमेश्वर मायाशंकर भट्ट (उपाध्यक्ष) एवं लेखक अर्थात् कविराज गौरी लाल चानना (मन्त्री) सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त एक निमन्त्रण महर्षि यूरोपियन यूनिवर्सिटी के रिसर्चनिर्देशक डा. उलरिंच बोहोफर का मिला था, जिसमें कहा गया था कि आप अमेरिका,

कैनेडा, ब्राजील, स्विटजरलैण्ड, पश्चिमी जर्मनी, जापान आदि देशों का दौरा करके विश्व के विभिन्न देशों में आयुर्वेद को प्रतिष्ठित करने की सम्भावनाओं का पता लगायें।

इस यात्रा में कुछ समारोहों में भाग लेने के अतिरिक्त विभिन्न देशों में महर्षिजी द्वारा स्थापित आयुर्वेदिक केन्द्रों एवं उनमें आयुर्वेद की गतिविधि देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उसका दिग्दर्शन वैद्य महानुभावों के लिए रोचक एवं प्रेरणाप्रद होगा।

विदेश यात्रा का प्रारम्भ

दिनांक ४-७-८५ को महर्षि जी के निजी सुसज्जित वायुयान में दिन के २-३० बजे इस शिष्ट मण्डल ने नई दिल्ली से प्रस्थान किया। अन्यों के अतिरिक्त श्री लंका के आयुर्वेद मन्त्री श्री डब्लू. एम. जे. लोकूबण्डारा तथा राज्य सभा के सदस्य श्रीराम चन्द्र विकल (कांग्रेस आई०) एव श्री पी० राधाकृष्ण (आन्ध्र) भी हमारे साथ थे। महर्षि जी के परम श्रद्धालु एवं विद्वान् शिष्य डॉ० जी. महापात्रा एम० डी० भी पूरी यात्रा भर हमारे साथ रहे। लगभग ४-१५ बजे तक अरब सागर पार करके विमान सऊदीअरब की मरुभूमि के ऊपर उड़ने लगा। डेढ़ घण्टे तक नीचे देखने पर विशाल मरुभूमि के अतिरिक्त कहीं कुछ दिखाई न पड़ता था। यदा कदा कहीं - आबादी का चिन्ह दिखाई देता था। पश्चात् लाल समुद्र से होकर स्वेज खाड़ी तथा पश्चात् सिनाई मरुभूमि के ऊपर होता हुआ ९-०५ बजे मिश्र की राजधानी काहिरा के हवाई अड्डे पर पैट्रोल लेने के लिये उतरा। काहिरा में उस समय ५-५० बजे थे। और ऐसा प्रतीत होता था कि सूर्यास्त में अभी १-१-१/२ घण्टा शेष है।

ऊपर लाल समुद्र का नाम आया है। मैं नहीं कह सकता कि इस नामकरण का आधार क्या है? क्योंकि हवाई जहाज से देखने पर इस समुद्र का वर्ण गहरा नीला दिखाई देता था। कहीं जल उथला था तो कहीं हरित नील वर्ण दिखाई देता था।

विमान पौन घण्टा तक काहिरा हवाई अड्डे पर रुका, पर हमारे पास मिश्र के वीजा न होने के कारण हम मिश्र की धरती पर पैर न रख सकते थे, विमान के भीतर ही रहे, काहिरा से प्रस्थान करते ही विमान भूमध्य सागर के ऊपर उड़ान भरने लगा। सूर्यास्त का समय समीप था। दूर आकाश तक सूर्य के नारंगी वर्ण के प्रकाश का दृश्य इतना मनोहारी था कि तुलसी के शब्दों में "नयन विनु वाणी" उसका वर्णन शब्दों में कठिन है। यूनान एवं योगास्लाविया के ऊपर से होता हुआ विमान लगभग रात के ११-४५ बजे हालैण्ड के मैसट्रिकट हवाई अड्डे पर उतरा। उस समय दिल्ली में रात के २-४५ बजे होंगे।

महर्षि जी का केन्द्र व्लोड्राप इस हवाई अड्डे से १-१/२ घण्टे का मोटर का मार्ग है। घने जंगल के मध्य अत्यन्त शान्त एवं स्वच्छ वातावरण में स्थित यह एक रमणीक भवन है। पश्चिम जर्मनी की सीमा यहां से केवल २००-३०० मीटर की दूरी पर है। प्रातः स्नान आदि व फलों एवं फलों के रस के प्रातराश के बाद श्री त्रिगुणा जी द्वारा रोगी निरीक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। हम लोग भी इस कार्यक्रम में सदा उनके साथ ही रहते थे। ढाई बजे इस कार्यक्रम से निवृत होकर विशुद्ध भारतीय ढंग का भोजन हुआ। भोजन के समय अमरावती निवासी डा० गोगटे और श्रीमती डॉ० ईशदया गोगटे से भैंट हुई, जो उस समय महर्षि जी के हालेंण्ड के आयुर्वेद केन्द्रों में कार्यरत

थे। उसके पश्चात् पुनः रोगी निरीक्षण कार्यक्रम चला। शाम के लगभग ६ बजे श्री गैरार्ड रिक्टर की अमेरिकन गाड़ी में समीप ही स्थित रियरमोण्ड नगर देखने गये। वहां की झील एवं एक प्राचीन गिरिजाघर देखा।

रात्रि ६-३० बजे फ्लोड्राप के सभा भवन में विश्व आयुर्वेद संघ का उद्घाटन समारोह हुआ जो ११-३० बजें तक चला। इसमें लगभग ५०० व्यक्ति उपस्थित थे। आयुर्वेद शिरोमणि श्री त्रिगुणा जी, वैद्य श्री श्रीराम शर्मा तथा वैद्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी के भाषण हुये। डा० जी० महापात्रा ने सभा का संचालन किया। राज्य सभा के सदस्य श्री रामचन्द्र विकल एवं श्री पी० राधाकृष्ण इस समारोह में उपस्थित थे और उन्होंने भी संक्षिप्त भाषण दिये।

कुछ हालैण्ड (नैदरलैण्ड) के विषय में

हालैण्ड एक छोटा सा परन्तु साफ-सुथरा देश है, इसे यदि फूलों का देश कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। नगर से बाहर निकले तो मीलों लम्बे शीशे के फ्रेमों में ढ़के रंग-विरंगे फूलों के खेत देखने को मिलेंगे। वर्फ गिरने की ऋतु में भी यह शीशे के भीतर सुरक्षित फूल खिले रहते हैं। यहां आस्ट्रेलिया के ऊन के बहुत बढ़िया कम्बल बनते हैं। लकड़ी के जूते बनते हैं। टेलीविजन, टेपरिकार्ड, कार एवं ट्रक यहां के प्रमुख उद्योग हैं। फाकर फ्रैण्डशिप नाम के प्रसिद्ध हवाई जहाज भी हालैण्ड का उत्पाद है। ब्रिटेन की तरह यहां भी वर्तमान में महारानी शासनाध्यक्ष हैं। यहां के निवासी डच कहलाते हैं।

इटली के लिये प्रस्थान

दिनांक ६-७-८५ को प्रातः ८-३० बजे स्नानादि से निवृत होकर हम पुनः मैसट्रिक्ट हवाई अड्डे पर पहुंचे। वहां महर्षि जी का ८ सीट वाला छोटा जैट विमान हमारी प्रतीक्षा में था। यह विमान यद्यपि आकार में छोटा था, पर क्षमता में किसी प्रकार से बड़े विमानों से कम नहीं था। ३०००० फुट की ऊँचाई पर ६०० कि० मी० प्रति घण्टे की तीव्र गति से उड़ने की क्षमता इसमें है। यह विमान योरुप के प्रसिद्ध आलप्स पर्वत माला को पार कर ज्युरिक (स्विटजरलैण्ड की राजधानी) एवं फ्रैकफर्ट (पश्चिम जर्मनी) के ऊपर से उड़ान भरता हुआ लगभग ११-३०पर इटली के मालपनसा हवाई अड्डे पर उतरा। उड़ान के समय बादलों का ऐसा सुहावना दृश्य था, मानो रुई के बड़े-बड़े ढेर तश्तरियों में सजाकर रखे हुये वायुमण्डल में हिलोरें ले रहे हैं।

इटली की प्रशासनिक राजधानी रोम है, पर मिलानों इसकी आर्थिक व औद्यौगिक राजधानी समझी जाती है। मिलानों के हवाई अड्डे का नाम माल पनसा है वह इस हवाई अड्डे पर श्री एवं श्रीमती कार्लो ने अगवानी की। श्रीमती कार्लो बड़ी विनम्र एवं मृदुभाषी महिला है तथा श्री कार्लो एक अत्यन्त सुसंस्कृत युवक है, वह व्यवसाय से शिक्षक है, परन्तु अब पति-पत्नी दोनों महर्षि जी की ब्रूनाते स्थित अकादमी के संचालन का उत्तरदायित्व वहन कर रहे हैं और पूरा समय इसी कार्य में लगाते हैं।

हालैण्ड से इटली की यात्रा में श्री रुवर्टो नामक एक युवक गाईड के रूप में हमारे साथ थे। वार्तालाप से ज्ञात हुआ कि वह इटली के एक प्रसिद्ध भवन निर्माता के पुत्र हैं। परन्तु यह युवक महर्षिजी के विचारों से इतने प्रभावित है कि उन्होंने अपना पूरा समय महर्षि जी के प्रति समर्पित कर रखा है। यह पूछने पर कि क्या आपकी इस जीवन धारा से आपके माता-पिताप्रसन्न है। उस युवक का उत्तर उसी के शब्दों में (You Know people in the west have different Oetlook Different meaning Materialistec) अर्थात् आपको विदित है कि पश्चिम के लोगों का दृष्टिकोण कुछ भिन्न अर्थात् भौतिकबादी है। अतः प्रारम्भ में तो वह सन्तुष्ट नहीं थे, परन्तु अब वह धीरे-धीरे इस परिवर्तन के अभ्यस्त हो गये हैं।

मालपनसा हवाई अड्डे से कोमो नगर लगभग १ घण्टे का कार मार्ग है। यह सारा मार्ग बड़ा हरा-भरा है। एक लाख जनसख्या वाला पहाड़ी की तलहटी में बसा कोमो एक प्राचीन परन्तु बड़ा मनोरम-नगर है। यहां से लगभग ५ कि० मी० दूर इसी पहाड़ी की चोटी पर २२०० फुट की ऊँचाई पर ब्रूनाते नाम का एक कस्बा है, जहां महर्षि जी की एकादमी स्थित है। बिजली के आविष्कारक बोल्टा कोमो नगर में जन्मे और बाद में ब्रूनाते में जाकर रहे। हमारे स्वर्गीय प्रधानमन्त्री की पत्नी सोनिया गांधी का जन्म स्थान तोरीनो यहां से लगभग २०० कि०मी० की दूरी पर है। कोमो नगर के समीप ही कोमो झील है और उससे थोड़ी दूरी पर लागो मेंजोरा नाम की बड़ी झील है जिसके किनारे पर एस्कोना नगर वसा हैं। इटालियन भाषा में झील को (Lags) कहते हैं। इटली का सिक्का लीरो हमारे एक पैसे से भी कम मूल्य का है। १६० लीरो हमारे एक रुपये (१००पैसे) के बराबर हैं।

कार में ब्रूनाते पहुंचने पर श्रद्धालुओं की एक बड़ी भीड़ देखने को मिली। थोड़े से विश्राम एवं अतिस्वादिष्ट भोजन के पश्चात् रोगी निरीक्षण का कार्य आरम्भ हुआ। रोगियों की एक लम्बी सूची थी, परन्तु लगभग ५० रोगी देखते-देखते तीन बज गये और हमारे वापस जाने का समय हो गया। इटली वासियों का रंग-रूप भारत के लोगों से मिलता-जुलता हैं। श्री त्रिगुणाजी से रोग परीक्षण कराने सम्बन्धी उनकी आतुरता उनके चेहरों व हाव-भाव एवं अनुनय-विनय से स्पष्ट झलक रही थी, परन्तु समय की मजबूरी थी। प्रत्येक रोगी जानना चाहता था कि उसके शरीर में कौन सा दोष प्रधान है। अनेकों ने महर्षिजी के दर्शनों की लालसा की चर्चा की और इस बात पर खेद प्रकट किया कि कई वर्षों से महर्षि जी यहां नहीं पधारे। वास्तव में यहां के लोगों की आयुर्वेद के प्रति अपार रुचि एवं महर्षिजी के प्रति अगाध श्रद्धा देखकर आश्चर्य होता था।

यह आश्वासन देकर कि त्रिगुणा जी कुछ मास बाद पुनः यहां आयेंगे, हम वापस मालपनसा हवाई अड्डे पर पहुंचे और ४-४५ पर उसी जैट विमान में बैठकर लगभग ७ बजें बेलजियम के ब्रूसेल्स हवाई अड्डे पर उतरे। वहां पर भारत से आया वही बोइंग विमान मिल गया जिसमें बैठकर टोरेन्टो के लिए हवाई यात्रा आरम्भ हुई। लगभग एक घण्टे में विमान इंग्लैण्ड के ऊपर से होता हुआ अन्ध महासागर पर उड़ान भरने लगा। उस समय कुछ बादल छा रहे थे। विमान बादलों से ऊपर उड़ रहा था। बादल धुन्ध की तरह दिखाई देते थे। कहीं-कहीं बीच में समुद्र जल की नीली झलक सी दीख जाती थी। बादलों एवं समुद्र के इस मिश्रित दृश्य पर सूर्य की छटा अपना निराला रंग दिखा रही थीं।

PHOTOS

OF

SHRI B.D.TRIGUNA JI'S

INTERNATIONAL ACTIVITIES



महर्षि वर्ड प्लान फार परफेंक्ट योजना का श्री गणेश करते हुए राज वैद्य श्री बृहस्पति त्रिगुणा जी



राजवैद्य श्री त्रिगुणा जी, डा॰ नीलपेटरसन तथा डा॰ महापात्रा के साथ हालैण्ड में एक संगोष्ठी में जाते हुए ।



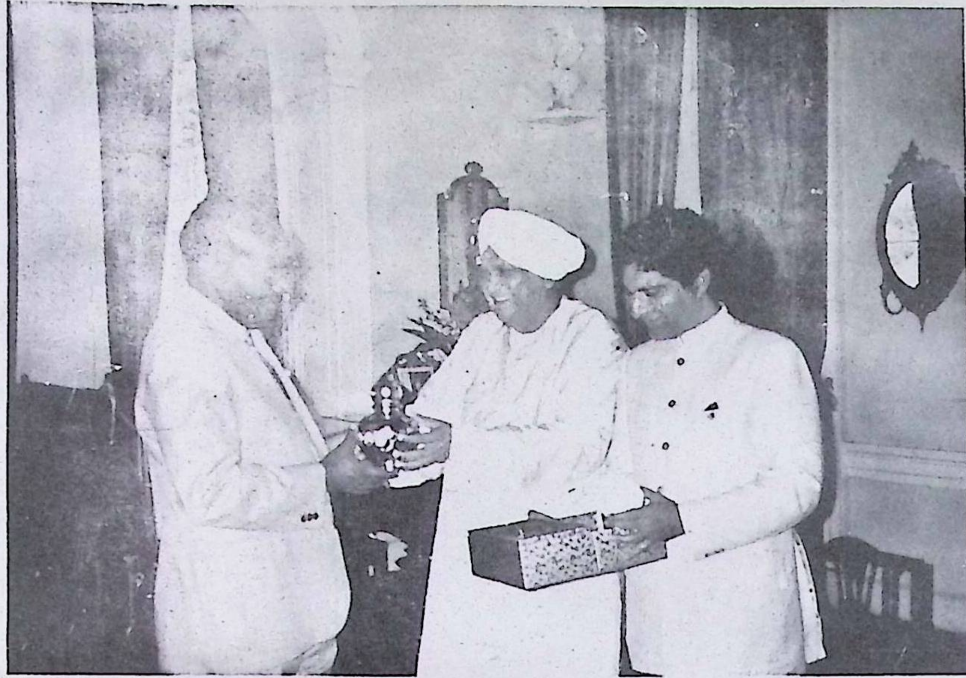
अमेरिका मे डॉ. ज्ञानेन्द्र महापात्रा तथा अमेरिकन डाक्टर्स के मध्य श्री त्रिगुणा जी



ट्रिनिडाड के मंत्री महोदय को अमृत कलश भेंट करते हुये श्री त्रिगुणा जी



ट्रिनिडाड के एक मंत्री को अमृत कलश भेंट करते तथा महर्षि आयुर्वेद की ओषधियों का परिचय देते श्री त्रिगुणा जी



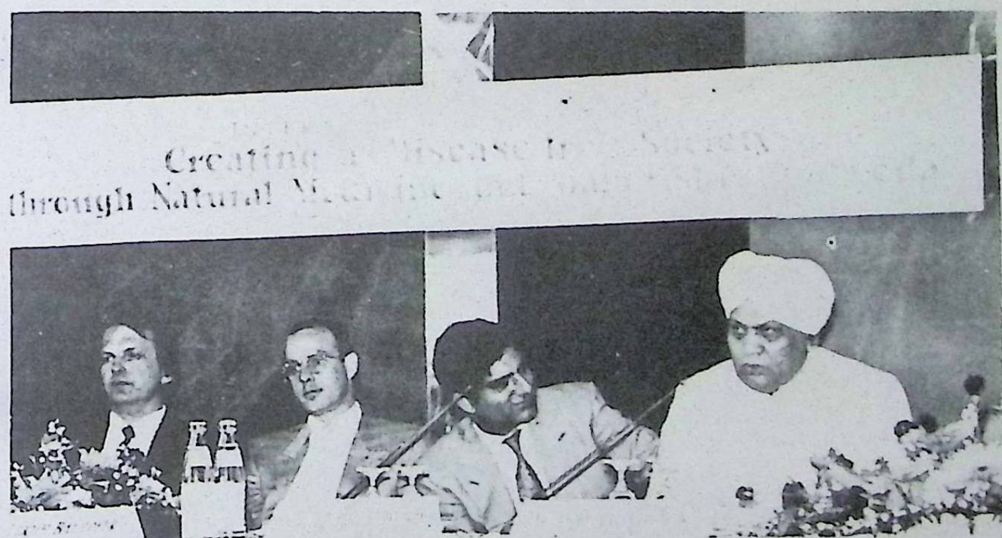
वेस्टइण्डीज के राष्ट्रपति को अमृत कलश भेंट करते हुये श्री त्रिगुणा जी



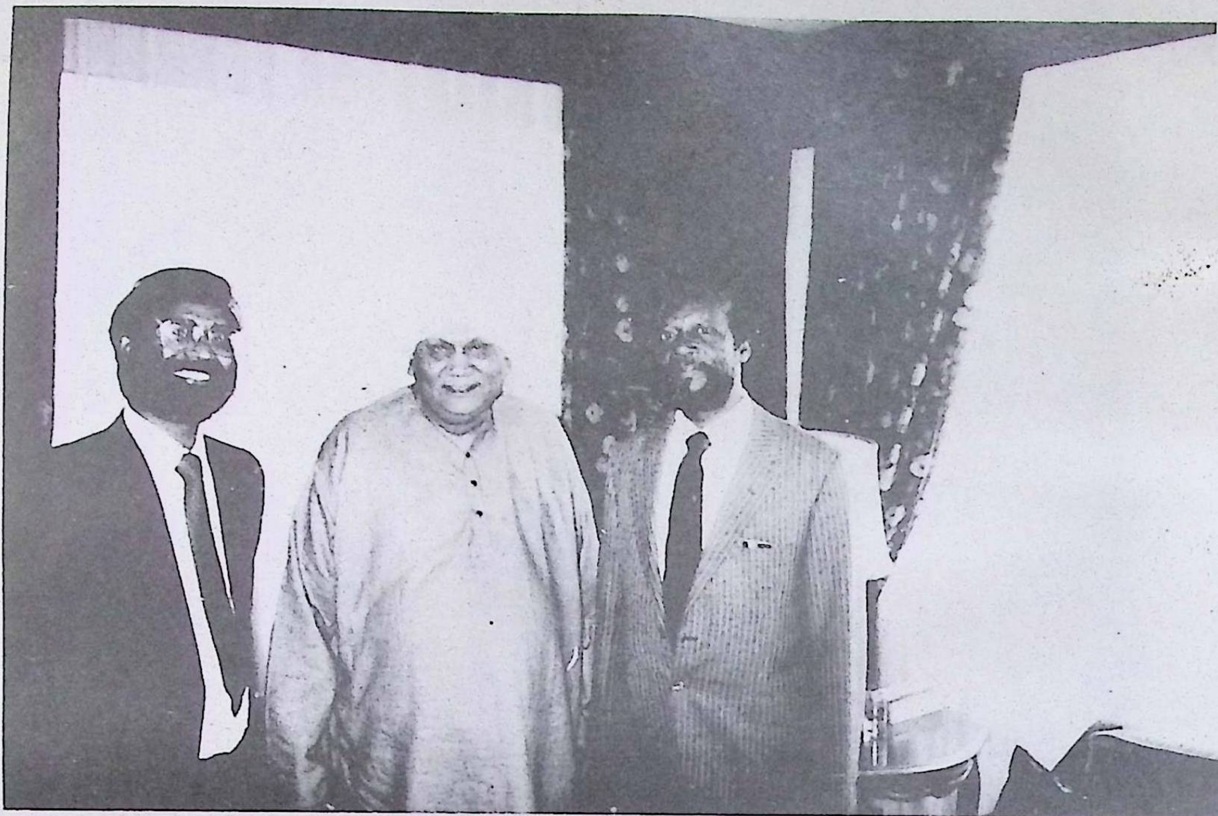
मारीसस के स्वास्थ मंत्री को अमृत कलश प्रदान करते श्री त्रिगुणा जी मध्य में हैं श्री आनन्द श्रीवास्तव महर्षि आयुर्वेद के निर्देशक तथा श्री गौरी लाल चानना ।



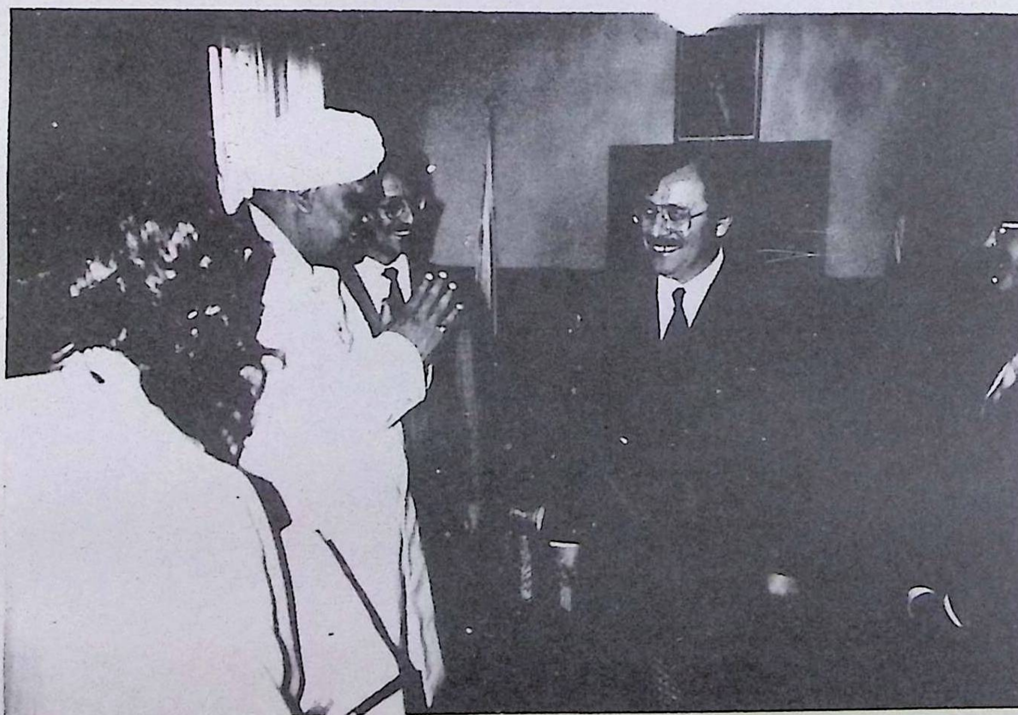
जापान के उप स्वास्थ्य मंत्री मि० कोडा के साथ श्री त्रिगुणा जी साथ में ब्रह्मचारी श्री नन्दकिशोर जी तथा वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा ।



जनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय नीरोग समाज निर्माण योजना में प्रतिनिधित्व करते हुये श्री त्रिगुणा जी



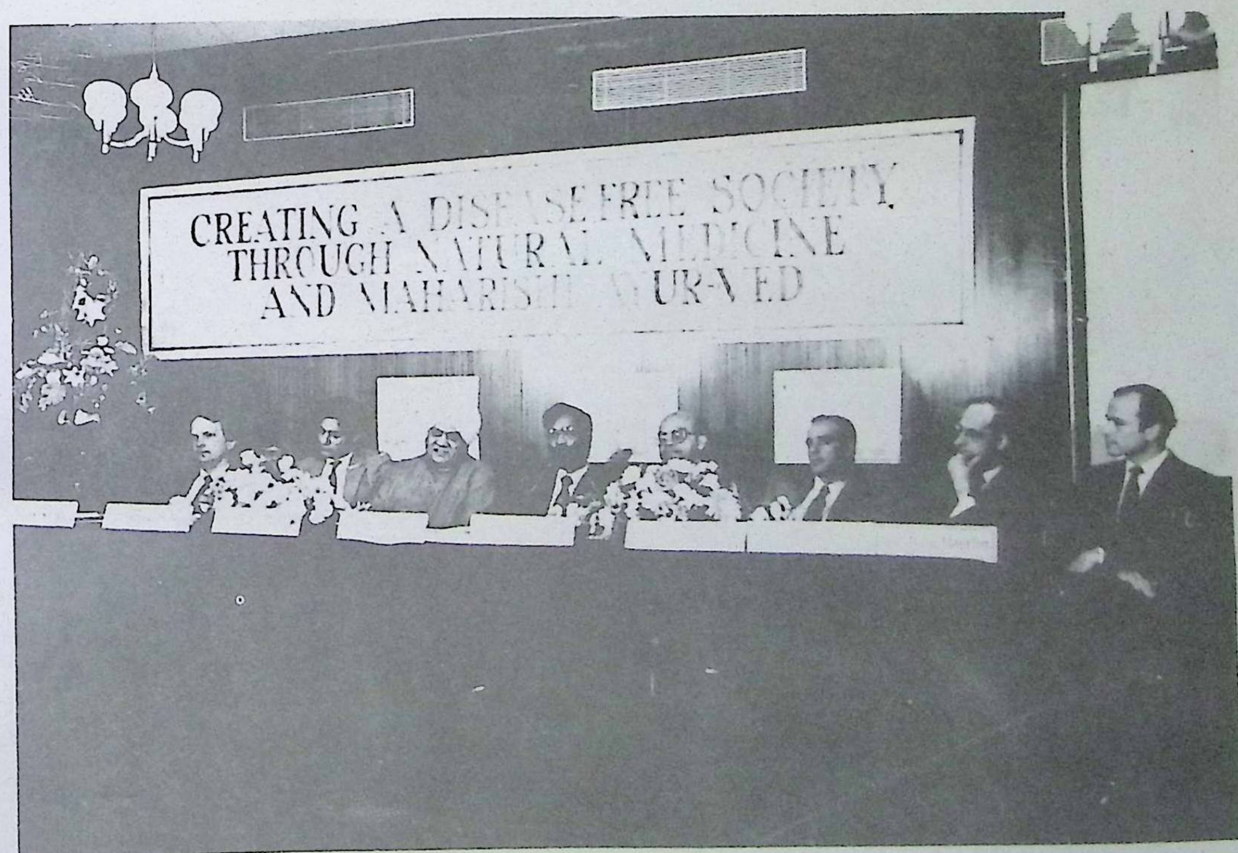
बार्वेडोज के प्रधान मंत्री के साथ श्री त्रिगुणा जी



पोलैण्ड के स्वास्थ्य मंत्री के साथ श्री त्रिगुणा जी



स्विटजरलैण्ड में आयुर्वेद पर चर्चा करते हुये श्री त्रिगुणा जी



विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा आयोजित आयुर्वेद सम्मेलन जनेवा में भाग लेते हुये श्री त्रिगुणा जी



महर्षि आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डालते विदेशी अतिथियों के साथ श्री त्रिगुणा जी
यूगाण्डा में डॉ. चौपड़ा तथा अन्य विद्वान डॉक्टरों के साथ श्री त्रिगुणा जी

ब्रुसेल्स से चले लगभग ५ घण्टे हो गये पर सूर्य की स्थिति लगभग वैसी ही थी, थोड़ा ही अस्ताचल की ओर गया होगा। कारण विमान भी सूर्य के साथ-साथ पश्चिम दिशा की ओर बढ़ रहा था। सायं ८.५० पर विमानटोरन्टी नगर के वार्नेयर हवाई अड्डे पर उतरा। वार्नेयर एक विशाल एवं सुन्दर हवाई अड्डा है। यहां से पुनः हमारा दल तथा दोनों संसद सदस्य दो छोटे जेट विमानों में बैठकर अमरीका के लिये रवाना हुए। विमान बदलने का कारण यह था कि अमेरिका के कोलाहल प्रदूषण सम्बन्धी नियमों के कारण हमारा बोइंग वहां नहीं जा सकता था। कोई ३५ मिनट की उड़ान के बाद दोनों विमान अमेरिका के प्रथम हवाई अड्डे डैट्रायट सिटी पर उतरे जहां वीजा आदि सम्बन्धी औपचारिकतायें पूरी की गई। पश्चात् विमानों ने मध्य अमेरिका के फेयरफील्ड कस्बे के लिए पुनः उड़ान भरी। रात के १२-३० बजे फेयरफील्ड म्यूंसपल एरोड्रम पर उतरे। महर्षि जी द्वारा स्थापित महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय इस अड्डे से केवल १० मिनट के कार मार्ग की दूरी पर स्थित है। इसी विश्वविद्यालय के नवनिर्मित अत्यन्त आधुनिक एवं सुसज्जित अतिथि गृह में हमारे ठहरने की व्यवस्था थी। यह ६ जुलाई, १९८५ की रात्रि थी।

महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय (एम,आई,यू ,) का दीक्षान्त समारोह

७-७-८५ को प्रातः एक स्वागत समारोह में भाग लेने के बाद दोपहर १-३० बजे विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह समारोह विश्वविद्यालय के प्रांगण में महर्षि पातञ्जलि के नाम पर बने एक भव्य एवं विशाल सुनहरे गुम्बदनुमां भवन के भीतर सम्पन्न हुआ, जिसमें लगभग १५०-२०० स्नातकों को विज्ञान, कला, राजनीति आदि विषय की बी० ए० एवं, एम० ए० की उपाधियां दी गई। समारोह के आरम्भ में स्नातक छात्र-छात्रायें बादामी रंग के सुन्दर गाऊन पहने अपने तेजस्वी चेहरों पर गर्व की झलक लिये, जिस शालीनता और अनुशासन से जुलूस के रूप में हाल में प्रविष्ट होकर अपने-अपने स्थानों पर बैठे वह भी एक स्मरणीय दृश्य था। अमेरिकी राष्ट्रगान के अनन्तर न्यायाधीश थॉमस ए० क्लार्क ने अति मार्मिक दीक्षान्त भाषण पढ़ा श्रीलंका के स्वास्थ्य मन्त्री श्री लोकू बण्डारा के भाषण तथा आयुर्वेद शिरोमणि बृहस्पतिदेव जी त्रिगुणा के आर्शीवाद के बाद उपाधि वितरण का कार्यक्रम हुआ और इस प्रकार यह समारोह सम्पन्न हुआ।

शोध शाला का अवलोकन

उपरोक्त समारोह से हम सीधे एम०आई०यू० की प्रयोगशाला देखने गये, जो एक बड़े एक मंजिला भवन में स्थित है। इस प्रयोगशाला के कम्प्यूटर विभाग में अनेकों प्रकार के छोटे-बड़े कम्प्यूटर रखे हैं जिनका संचालन उच्च शिक्षा प्राप्त अमेरिकी वैज्ञानिक करते हैं। एक बड़ा कम्प्यूटर अकेला ही ६५ लाख रुपये का है। छोटे कई शोध कार्य में प्रयुक्त हो रहे हैं। अन्य भी कई प्रकार के अत्याधुनिक मूल्यवान् उपकरण इस प्रयोगशाला में हैं।

शरीर क्रिया विज्ञान और विकृति विज्ञान के विषय पर वहां बड़े सूक्ष्म अनुसन्धान हो रहे हैं जो नितान्त नवीन दिशा के सूचक हैं। उदाहरणतः वहां इस बात का अध्ययन किया जा रहा है कि भावातीत अध्ययन एवं पंचकर्म से डी०एन०ए०

* स्मरण रहे कि डी० एन० ए० आहार की प्रोटीनों के शरीर के भीतर टूटकर उनसे पुनः शरीर को प्रोटीनों के संश्लेषण अर्थात् नवीन कोषाओं के निर्माण व उनके पोषण सम्बन्धी अति संकुल रासायनिक प्रक्रियाओं में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। जो आजकल और आगे अनुसन्धानों का विषय बनी हुई है।

पर नाड़ी कोषों के भीतर होने वाली क्रियाओं पर क्या अन्तर पड़ता है। मानव शरीर की प्रकृति एवं दोषों की अंशांश कल्पना का कम्प्यूटर द्वारा ठीक-ठीक अध्ययन करने के प्रयत्न भी हो रहे हैं। निःसंदेह यह अपने ढंग के अद्वितीय अनुसंधान है और इनकी सफलता में आयुर्वेद के भावी विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन आने की सम्भावनायें निहित हैं।

इस प्रयोगशाला से हम फेयर फील्ड का वह आयुर्वेदिक केन्द्र देखने गये, जिसमें पचकर्म तथा आयुर्वेद के सिद्धान्तानुसार मनुष्य के प्रकृति आदि का परीक्षण कर स्वास्थ्य संरक्षण सम्बन्धी निर्देश देने तथा एतदर्थ कुछ रसायन योगों के वितरण की व्यवस्था है। इस केन्द्र के निरीक्षण में अहमदाबाद के वैद्य श्री एच०एस० कस्तूरे तथा कुछ अन्य भारतीय वैद्य भी हमारे साथ थे। इन केन्द्रों में पंचकर्म की व्यवस्था करने के लिये वैद्य कस्तूरेजी ने कई अमेरिकी डाक्टरों को प्रशिक्षण कोर्स दिया है। केन्द्र की प्रबन्ध व्यवस्था बहुत अच्छी थी।

यह केन्द्र देखने के बाद थकान इतनी अधिक हो गई थी कि वापस जाकर ५-३० सायं विश्राम के लिये लेटे तो ऐसे सोये कि प्रातः हमें ज्ञात हुआ कि हमारे सोये होने के कारण ८-३० बजे रात्रि का एक कार्यक्रम रद्द कर दिया गया।

वाशिंगटन के लिये प्रस्थान

८-७-८५ को प्रातः स्नानादि से निवृत हो नौ बजे हम पुनः फेयर फील्ड म्यूसपल एयरपोर्ट पर पहुंचे। यह एक छोटा सा साफ-सुथरा हवाई अड्डा है, जिसके साथ उस समय मकई के हरे-भरे खेत लहलहा रहे थे।

हम छोटे जैट विमान में १०-४० बजे फेयर फील्ड से उड़े। ११-४५ बजे के लगभग विमान शिकागो नगर का हवाई सर्वेक्षण कराने के बाद हवाई अड्डे पर उतरा। शिकागो अमरीका का एक बहुत पुराना एवं भव्य नगर है। इसका हवाई अड्डा तीन ओर से समुद्र से घिरा है। हवाई अड्डे पर पहले से ही दो बड़ी कारों का प्रबन्ध था। उनमें नगर के कुछ भाग का भ्रमण करने के पश्चात् हम सीयर्ज टावर नामक भवन में पहुंचे जो पर्यटकों के देखने का मुख्य आकर्षण है। यह ११० मंजिला भवन १४५४ फुट ऊंचा है। इसके ऊपर दो एण्टीना टावर बने हैं, उनके साथ इसकी कुल ऊंचाई १७०७ फुट है।

इसके निर्माण में ७६००० टन इस्पात का प्रयोग हुआ है। नीचे के आधे भाग में स्वयं सीयर्ज कम्पनी के दफ्तर हैं। ऊपर का आधा भाग विभिन्न कार्यालयों को किराये पर दिया है। बिल्डिग का बाहरी भाग काले एलूमीनियम के फ्रेम में जड़े शीशे से बना है। इसमें लगी लिफ्ट १०३ मंजिल तक पहुंचने में केवल एक मिनट लगाती है। १०३ वीं मंजिल पर चारों ओर घूमकर देखने

के लिए चबूतरा बना है, जिस पर कुछ दूरवीन भी लगे हैं। यह भवन देखने के बाद हम पुनः हवाई अड्डे वापस जाकर अपने विमान में बैठकर वाशिंगटन के लिये चल पड़े। २-५० पर विमान वाशिंगटन नैशनल एयर पोर्ट पर पहुंचा। महर्षि जी के वाशिंगटन स्थित महर्षि वैदिक विश्वविद्यालय के लोगों ने गुलदस्तों एवं पुष्पों से अभिनन्दन किया और प्रतीक्षा कर रही कारों में बैठकर हमं उपरोक्त विश्वविद्यालय में पहुंचे। यह स्थान वाईट हाउस से लगभग १-११/२किलोमीटर दूरी पर वाशिंगटन के बहुत योग क्षेत्र में स्थित हैं। यह ११ मंजिला भवन है और महर्षि यूनिवर्सिटी की निजी सम्पत्ति है।

वेद विज्ञान विश्व सम्मेलन

वाशिंगटन कनवेन्शन सेण्टर ऐसा ही एक विशाल आधुनिक भवन है जैसा नई दिल्ली में विज्ञान भवन है। यह भवन महर्षि जी के विश्वविद्यालय भवन के सामने सड़क के उस पार स्थित है। यह सम्मेलन इसी भवन में सम्पन्न हुआ। इस बार अमरीका के राष्ट्रपति रीगन का शपथ ग्रहण समारोह भी इसी भवन में हुआ था।

प्रातः १० बजे महर्षि जी के वीडियो टेप भाषण से इसका समारम्भ हुआ। अमरीका तथा योरुप के विभिन्न देशों से आये लगभग ५५०० प्रतिनिधियों ने कोई

११/२-२ घण्टे का यह भाषण पूरी तन्मयता से सुना। इस बीच में कोई व्यक्ति उठकर बाहर नहीं गया और खामोशी का वह समय थां। कि सुई गिरने की आवाज भी सुनाई दे, इस अधिवेशन में वैद्य त्रिगुणा जी, वैद्य श्रीराम शर्मा जी तथा श्री लंका के आयुर्वेद मन्त्री श्री लोकुबण्डार तथा अन्यों के प्रभाव शाली भाषण हुये। ११-३० बजे महर्षि विश्वविद्यालय के सभागार में टेलीफोन एवं टेलीविजन पर महर्षि जी ने एक पत्रकार सम्मेलन को सम्बोधित किया एवं प्रश्नोत्तर भी हुये। ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे महर्षि स्वयं वहां विराजमान प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं।

९ जुलाई से लेकर १७ जुलाई तक इस सम्मेलन के दो-तीन अधिवेशन प्रतिदिन चलते रहे, परन्तु हमारा कार्यक्रम अब से आगे आयुर्वेद पर ही केन्द्रित हो गया।

वास्तव में वैद्य शिरोमणि श्री त्रिगुणाजी के आने की सूचना यहां बहुत पहले से पहुंच चुकी थी और उनसे परामर्श करने को लालायित सैकड़ों रोगियों की सूचियां पहले से तैयार थी। अतः प्रतिदिन प्रातः ९ बजे से २ बजे तक रोगी निरीक्षण का कार्यक्रम चलता जो कभी भोजन के अनन्तर पुनः भी चालू रहता। इसमें श्री त्रिगुणा जी के साथ हम तीनों वैद्य भी उपस्थित रहते और रोगी परामर्श में भाग लेते तथा उनकी सहायता करते। डॉ० रिक एवैर बैंक, एम० डी० और डॉ० स्टुअट रुथन वर्ग यह दो अमेरिकन डाक्टर भी इस कार्यक्रम में सदैव हमारे साथ रहे। इन दोनों का इतना घनिष्ठ साहचर्य था कि हम लोग इन्हें अश्विनी कुमार कहते थे और मित्र मण्डली में इन्हें जुड़वां भाई कहकर सम्बोधित किया जाता था। आयुर्वेद में इनकी गम्भीर निष्ठा थी। यह आयुर्वेद प्रशिक्षण व्याख्यानों द्वारा आयुर्वेद के मौलिक सिद्धान्तों का परिचय प्राप्त कर चुके थे तथा पंचकर्म का प्रशिक्षण भी डॉ० वासुदेव मू० द्विवेदी एवं डॅ० एच०एस० कस्तूरे से ले चुके थे।

रोगियों में जो बात विशेष देखने को मिली वह यह थी कि वह सब आयुर्वेद के सत्व, रज, तम, वात, पित्त, कफ, दोष, प्रकृति आदि प्रचलित पारिभाषिक शब्दों से सम्यक् रूपेण परिचित थे। प्रायः सभी यह जानना चाहते थे कि उनकी प्रकृति में कौन सा दोष प्रधान है उनका रोग किस-किस दोष की न्यूनाधिकता से हुआ है। और उनका उपचार किस सिद्धान्त के आधार पर करना चाहिये। आयुर्वेद के सम्बन्ध में इतनी अन्तर्दृष्टि तो भारतीयों में भी कदाचित् ही देखने को मिलती हैं। यह सब उन प्रशिक्षण व्याख्यानों का फल था। जिनकी व्यवस्था महर्षि जी ने बीसों मूर्धन्य वैद्य विद्वान् भेजकर कई-कई मास तक उन्हें वहां रखकर की थी। इन व्याख्यानों से अमेरिका के अनेक एलोपैथिक डाक्टरों ने भी स्वयं को लाभान्वित किया। उसी के परिणामस्वरूप इस समय अमरीका में ५० से ऊपर आयुर्वेद स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र खुल चुके हैं और उनमें से कई अमेरिकन प्रशिक्षण एलोपैथिक डाक्टरों द्वारा स्वतन्त्र रूप से संचालित हो रहे हैं।

आयुर्वेद का चमत्कार :-

भोजनोपरान्त कभी-कभी विशिष्ट व्यक्तियों में आयुर्वेद के सम्बन्ध में श्री त्रिगुणा जी व अन्य वैद्यों से भेंट करने की व्यवस्था की जाती थी। इन विशिष्ट व्यक्तियों में एक सेनेटर श्री पैल अमेरिका के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान के उपनिर्देशक डॉ० मेलानो तथा वाशिंगटन के महापौर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

श्री त्रिगुणा जी, डॉ० जी० महापात्रा वैद्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी और सेनेटर पेल के सरकारी कार्यालय में उनसे मिले, आयुर्वेद के विषय में वार्तालाप से वह सन्तुष्ट हुए और श्री त्रिगुणा जी से अलग, कमरे में नाड़ी परीक्षण कराने की इच्छा व्यक्त की। नाड़ी परीक्षा के बाद उन्होंने हम सबके सामने यह कहा कि मैं नाड़ी परीक्षा द्वारा रोगनिदान के इस अनुभव से दंग रह गया हूँ।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान में जब हम गये तो दिल्ली निवासी डॉ० दीपक चोपड़ा, एम० डी० जो इस समय बोस्टन युनिवर्सिटी मेडीकल कालेज में सहायक प्रोफेसर हैं और अमेरिकन एसोसियेशन आँफ आयुर्वेदिक मेडीसिन के अध्यक्ष हैं, वह भी हमारे साथ थे। वह महर्षि जी के पूर्ण श्रद्धालु होने के साथ आयुर्वेद के प्रति भी पूर्ण निष्ठावान हैं। उनकी विषय प्रतिपादन की शैली बड़ी प्रभावशाली है, जब वह आयुर्वेद के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करते हैं तो अनायास पं० शिव शर्मा की स्मृति आ जाती है। डा० चोपड़ा, त्रिगुणा जी व श्री रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी तथा अन्यों के वार्तालाप से संस्थान के उप-निदेशक डा० मिलानी बड़े प्रसन्न हुये और उन्होंने भी अलग कमरे में नाड़ी परीक्षा कराने की इच्छा प्रकट की। नाड़ी दिखाकर जब वह बाहर आये तो उन्होंने दोनों हाथ उठाकर कहा- I am surprised how he could know about all this " मैं चकित हूं कि वह यह सब (अर्थात् रोग का विवरण) कैसे ज्ञात कर सकें। डा० मिलानों ने इस आश्वासन के साथ हमें विदा किया कि वह अपने संस्थान में आयुर्वेद का विभाग भी प्रारम्भ करेंगे। यह संस्थान विश्व की विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के बारे में खोज कार्य करता है और इसका करोड़ों डालर वार्षिक बजट है।

इस भेंट के दो दिन बाद वह वाशिंगटन कन्वेन्शन सेण्टर में आयोजित आयुर्वेद सम्मेलन में सम्मिलित हुये और अपने भाषण में उपरोक्त घटना की चर्चा मंच से सार्वजनिक रूप में की तथा आयुर्वेद की बहुत अच्छे शब्दो में सराहना की।

समूह चित्र (Group photo)

दिनांक ११-७-८५ को कैपीटोल (अमेरिकन संसद-भवन) के सामने के विशाल मैदान में सम्मेलन में आये महर्षि के सभी ५५०० अनुयायियों की एक ग्रुप फोटों हुई, जिसके सम्बन्ध में वहां के प्रसिद्ध समाचार पत्र वाशिंगटन पोस्ट ने अगले दिन लिखा कि वाशिंगटन के इतिहास में यह सबसे बड़ी ग्रुप फोटो है। इस फोटो में त्रिगुणाजी हम तीनों वैद्य, हमारे दोनों संसद सदस्य तथा अन्य भारतीय सबसे अगली पंक्ति के मध्य में कैमरे के ठीक सामने खड़े हैं। इस प्रसंग में पाठकों को यह बता देना उचित होगा कि महर्षि जी के प्रत्येक आयोजन में भारतीयों एवं भारतीयता की प्रमुखता रहती है। हमारी पूरी यात्रा में जितने भी आयोजन हुये, सभी में मंच के सर्वप्रमुख स्थान पर हम सबके लिये सीट सुरक्षित रहती थी। यह महर्षि जी की कार्य शैली की विशेषता है।

वाशिंगटन में दो सप्ताह के निवास काल में २-३ दिन के लिये वैद्य श्री राम शर्मा अपने किसी मित्र से मिलने हाऊस्टन चले गये। उनके आने पर मैं अपने सम्बन्धियों से मिलने तीन दिन के लिये १६ जुलाई को कैनेडा चला गया। वाशिंगटन से विमान द्वारा मैं बफेलो (Buffalo) पहुंचा। यह अमेरिकन नगर, अमेरिका कैनेडा सीमा पर स्थित है। इस नगर के पास ही सीमा पर विश्व प्रसिद्ध न्याग्राफाल (Niagra fall) है। मेरे सम्बन्धी बफेलो हवाई अड्डे पर मुझे लेने पहुंच गये थे। मैं दिन के १२ बजे वहां पहुंचा। थोड़ी देर हम बफेलो नगर की मार्केट में गये भोजन किया और पश्चात रात्रि ९ बजे तक न्याग्रा फाल के मनोहारी दृश्य का आनन्द लेते रहे, नौका द्वारा गिरते पानी के नीचे तक नदी में भ्रमण किया। रात्रि ९ बजे कार द्वारा चलकर रात १२-३० बजे हम अपने गन्तव्य स्थान ओरिलिया (Orillis) पहुंचे। अगले दिन शाम को ओरिलिया से मैं दूसरे सम्बन्धी के पास टोरण्टो का भ्रमण करने के पश्चात् बफेलो हवाई अड्डे पर वह मुझे अपनी कार में छोड़ गये। और मैं विमान से १८ जुलाई को सायं वाशिंगटन वापस पहुंचा। स्वच्छता एवं सौन्दर्य में कैनेडा भी किसी प्रकार अमरीका से कम नहीं, वरन् उससे इक्कीस ही होगा। वहां झीलें अधिक हैं। और झील के किनारे बसे नगरों में झील तटों (Water face) को बहुत संवारकर रखा गया है। वहां के निवासी इन स्थानों पर मनोरंजन, सैर एवं नौका बिहार के लिये आते हैं। यदि मैं एक दिन और वहां रुक सकता तो मेरे एक सम्बन्धी ने कैनेडा टेलीविजन पर आयुर्वेद के सम्बन्ध में मेरी भेंटवार्ता का प्रबन्ध कर दिया था, परन्तु मुझे वापस आने के लिये वाशिंगटन से टेलीफोन आ गया और मैं रुक नहीं सका।

आयुर्वेद कर्माभ्यास (Practice of Ayurved) पर गोष्ठी

दिनां १९-७-८५ को महर्षि वैदिक युनिवर्सिटी के सुसज्जित सभागार में उपरोक्त विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसका शुभारम्भ पूज्य महर्षि जी के आयुर्वेद एवं विज्ञान विषय पर वीडियो टेप भाषण से हुआ। इस भाषण में अन्य चिकित्सा पद्धतियों के मुकाबले आयुर्वेद के पक्ष का प्रतिपादन अत्यधिक प्रभावशाली ढंग से हुआ। यह टेप प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है और प्राप्त होने पर मूल अंग्रेजी भाषण तथा इसका अनुवाद आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के माध्यम से पाठकों तक पहुंच सकेगा। इस सभा में वैद्य श्री त्रिगुणाजी, डा० एच० एस० कस्तूरे

तथा श्री रघुवीर प्रसार त्रिवेदी के भी भाषण हुए इस बीच वैद्य श्री राम शर्मा, कविराज गौरी लाल चानना एवं वैद्य सोमेश्वर भयाशंकर भट्ट के भी अंग्रेजी में भाषण हुये। हम तीनों को उसी समय फ्लोरिडा (Florida) जाना था, अतः हम अपने भाषण करने के बाद ३-३० बजे सभा की कार्यवाही के मध्य ही उठकर चले गये।

वाल्ट डिजनी वर्ल्ड की यात्रा

अमरीका के प्लोरिडा प्रदेश में डिजनी वर्ल्ड (Disney World) एक विश्व प्रसिद्ध ज्ञान-वर्धक एवंमनोरंजन स्थल है, जो ४३ वर्ग मील के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह वाशिंगटन से २-१/२ घण्टे की विमान मार्ग की दूरी पर स्थित है। हम तीन वैद्य, हमारे दोनों संसद सदस्य उपरोक्त गोष्ठी से उठकर वाशिंगटन नेशनल एयर-पोर्ट पर पहुंचे। विमान ६ बने सायं उड़कर ८-१/२ बजे डिजनी वर्ल्ड के समीप एक छोटी सी एयर पोर्ट किस्सीमी (Kissimmee) पर उतरा। यहां से डिजनी वर्ल्ड लगभग आधे घण्टे का मोटर मार्ग है। रात्रि को अमरीका के प्रसिद्ध पांच सितारा होटल रमादा रिसोर्ट (Ramada Resort) में ठहरने की व्यवस्था थी।

२०-७-८५ को प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त हो टेक्सी द्वारा हम डिजनी वर्ल्ड पहुंचे।

दिन भर इस मनोरंजक पार्क में भ्रमण के पश्चात रात्रि ९ बजे यहां से निकलकर होटल से सामान उठा, हम ९-१/२ बजे विमान से चलकर २० जुलाई रात्रि १२ बजे वाशिंगटन वापस पहुंच गये।

२१-७-८५ को प्रातः यथा पूर्व दोपहर २ बजे तक श्री त्रिगुणा जी के साथ रोगी निरीक्षण कार्यक्रम चला। भोजन के पश्चात १-२ घण्टे के लिये वाशिंगटन के कुछ दर्शनीय स्थल देखने श्री सुशीलधर के साथ गये। यह वाशिंगटन में हमारा अन्तिम दिन था। यहां से हमारी वापसी यात्रा का प्रारम्भ होता है।

पुनः फेयर फील्ड को

सायं ७-४५ छोटे जैट विमान से हम चारों वैद्य वाशिंगटन नेशनल एयरपोर्ट से फेयर फील्ड के लिये रवाना हुये। डा० स्टुअर्टरूथनबर्ग, डा० रिक एवर बेक (पूर्वोक्त अश्विनी कुमार द्वय) तथा डा० महापात्र भी हमारे साथ थे।

वाशिंगटन में उन दिनों ८-३० बने सूर्यास्त होता था, परन्तु वाशिंगटन से पश्चिम की ओर स्थित होने के कारण फेयर फील्ड में ९-३० बजे। ऊंचे आकाश में उड़ते हुये दूर पश्चिम में अस्ताचल को जाते हुये सूर्य द्वारा फैलाये जा रहे लाल रंग के प्रकाश का सुन्दर दृश्य भी एक अविस्मरणीय दृश्य था।

तिथि २२,२३,२४ जुलाई प्रतिदिन यथावत् रोगी निरीक्षण कार्यक्रम चला। २२-७-८५ सायं काल डा० रिक एवं डा० स्टूअर्ट के साथ फेयर फील्ड से २०-३० किलोमीटर दूर क्योसौकिआ (Keo Sauqua) नामक झील तथा ग्रामीण क्षेत्र का भ्रमण किया। तिथि २३-७-८५ सायं डा० रिक एवं डा० स्टुअर्ट के आग्रह पर उनके घर जाकर उनके परिवारों से भेंट करने का सुअवसर मिला। दोनों

परिवारों ने बड़ी आत्मीयता से स्वागत सत्कार किया। २४ जुलाई को रोगी निरीक्षण के बाद मध्याह्न में महर्षि जी के भावातीत ध्यान के सिद्धों की सभा में सम्मिलित होकर प्रश्नोत्तर एवं कथनोपकथन में भाग लिया। इसी सायं ६-४५ पर विमान द्वारा यहां से प्रस्थान कर रात्रि ६-३० बजे न्यूयार्क के हवाई अड्डे पर उतरे।

न्यूयार्क की यात्रा

हवाई पट्टी पर उतरने से पहले चालक ने विमान को शहर के ऊपर चारों ओर घुमाकर हवाई सर्वेक्षण कराया। बिजली की बत्तियों के प्रकाश में न्यूयार्क का दृश्य वास्तव में बड़ा सुन्दर चित्ताकर्षक एवं दर्शनीय था। न्यूयार्क अमरीका का सबसे बड़ा एवं शानदार नगर है। यह अपने ऊचे-ऊंचे भवनों के लिये सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। इसकी आबादी एक करोड़ दस लाख है। इसके पांच मुख्य क्षेत्र हैं, जिनके नाम मनहट्टन, क्वीन्स, वुकलिन आदि हैं।

इनमें मनहट्टन व्यापार का बड़ा भारी केन्द्र है। अधिकांश बड़े-बड़े रेस्टोरेंट और सिनेमा घर भी इसी में हैं। जगत प्रसिद्ध वाल स्ट्रीट (Wall Street) जो विश्व में सम्भवतःस्टाक एकसचेंज का सबसे बड़ा केन्द्र है, वह भी यहीं पर हमारे होटल के समीप ही है।

मन हट्टन में अधिकांशबहुमंजिला भवन हैं, जो आकाश से बातें करते प्रतीत होते हैं। १०२ मंजिल ऊची एम्पायर स्टेट बिल्डिंग ४० वर्ष पूर्व तक विश्व की सबसे ऊंची बिल्डिंग रही। अब तो मन हट्टन में ही इससे भी ऊंचे एक दो भवन बन गये हैं। शिकागो का सियर्ज टावर भी ऊंचाई में इससे अधिक है। परन्तु अभी भी पर्यटक बड़े चाव से एम्पायर स्टेट बिल्डिग को देखने आते हैं। इसे देखने का टिकट ३ डालर है। हमें भी यह भव्य भवन देखने का अवसर मिला।

पूर्वी नदी(East River) और हडसन नदी (Hudson River) इनका संगम न्यूयार्क नगर के मध्य में है। संगम पर स्वतन्त्रता की प्रतिमां (Statue of Liberty)लगी है जो फ्रांस में बना और बाद में फ्रांस वासियों ने उपहार रूप में इसे अमरीका को भेंट किया।

हमारे ठहरने का प्रबन्ध मनहट्टन क्षेत्र स्थित १६ मंजिला डोरल टावर (Doral Tower) नामक होटल में था। हम जब हवाई अड्डे से होटल में आये तो मार्ग में सड़क का २-३ मील लम्बा भाग हडसन नदी के नीचे से गुजरता था। यह पुल भी अमेरिकी इंजीनियरों का एक कमाल है।

संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) कार्यालय का ३८ मंजिला मुख्य भवन पूर्वी नदी के किनारे पर स्थित है। ३८ वीं मंजिल पर सेक्रेटरी जनरल का कार्यालय है। यह स्थान हमारे होटल से पैदल १५ मिनट का मार्ग है। हम इस भवन को देखने गये तो भारतीय दूतावास के एक वरिष्ठ अधिकारी श्री हरीशचन्द्र शुक्ला ने साथ चलकर हमें इस भवन के कुछ ऐसे भाग भी दिखाये जो सामान्यतः दर्शको के लिये वर्जित है।

मनहट्टन में बहुत बड़े-बड़े स्टोर हैं, जहां आवश्यकता की हर वस्तु मिल सकती है। एच०सी० मैसी स्टोर नाम का एक स्टोर तो एक १० मंजिला विशाल भवन की सभी १० मंजिलों में फैला हुआ है।

न्यूयार्क के क्वीन्स क्षेत्र में जैकसन हाईट नाम का व्यापार केन्द्र है, जहां भारतीयों की कई दुकाने हैं। हमने भी २-३ घण्टे लगाकर इस मार्किट से साड़िया तथा कुछ अन्य आवश्यकता की वस्तुयें खरीदीं।

हम २४ जुलाई की रात न्यूयार्क पहुंचे। २५ और २६ को प्रातः से दोपहर तथा इसके भी बाद तक रोगी परामर्श कार्य में व्यस्त रहे, क्योंकि परामर्शार्थियों की संख्या बहुत अधिक थी और हमें २६ की रात्रि को अवश्य वहां से प्रस्थान करना था। परिणामतः अधिकांश समय होटल के भीतर इसी कार्य में बीता और नगर में भ्रमण का बहुत कम समय मिला। वैसे भी यात्रा का मूल उद्देश्य तो कार्य विशेष ही था। भ्रमण तो बचा हुआ समय बिताने का उपाय मात्र ही था।

योरूप के लिये प्रस्थान

२६ जुलाई रात्रि ११-३० बजे न्यूयार्क की तीतर बर्रो एयरपोर्ट (Teetar Burrough Airpoart) से हमारा छोटा जैट टोरण्टो के लिये उड़ा और १२-४५ बजे टोरण्टो हवाई अड्डे पर उतरा। वहां पुनः हम उसी बोइंग विमान में बैठे, जिसके द्वारा हम भारत से टोरण्टो पहुंचे थे। रात्रि २ बजे इस विमान ने लन्दन के लिये प्रस्थान किया। अभी तक हम नींद नहीं ले पाये थे। अब विमान तेजी से पूर्व की ओर बढ़ रहा था, अतः केवल १ घण्टे बाद अर्थात् कोई तीन बजे दिन का उजाला शीशों में से छनकर विमान के भीतर आ गया। कुछ देर अच्छी निद्रा ले सकें, इसलिये विमान के शीशों को पर्दो से ढकना पड़ा।

लन्दन के स्टांस्टेड हवाई अड्डे पर

६-१/२ घण्टे की निरन्तर उडांन के पश्चात प्रातः ८-३० (अमेरिकन टाइम) हम लन्दन के एक छोटे स्टांस्टेड (Stansted) हवाई अड्डे पर उतरे। लन्दन में उस समय २७ जुलाई दोपहर का डेढ़ बजा था। इस विमान को स्विट्जरलैण्ड जाना था, परन्तु वैद्यों के लिये लन्दन में भी परामर्श का कार्य पहले से ही नियत था। अतः हम चारों वैद्य और डा० जी महापात्रा अपना भारी सामान उसी विमान में छोड़कर दो दिन लन्दन प्रवास के लिये आवश्यक वस्त्रादि लेकर विमान से उतरे। बाहर आते समय कस्टम के अधिकारी उस थोड़े से सामान की भी जांच करना चाहते थे, हमें इसमें आपत्ति न थी, परन्तु समय की कमी के कारण इस औपचारिकता को निंभाने में हमें कुछ संकोच हो रहा था। इतने में हमारी अगवानी को आये एक अंग्रेज सज्जन ने आगे बढ़कर कस्टम अधिकारी से कहा कि मैं इन सभी व्यक्तियों को जानता हूँ और इनके सामान में कस्टम की कोई वस्तु नहीं। उसके इतना कहने मात्र से कस्टम अधिकारी ने बिना जांच किये हमें सामान ले जाने की अनुमति दे दी। बाहर प्रतीक्षा कर रही कारों में बैठकर हम तुरन्त महर्षि जी के स्थान कैनसिंगटन ग्रीन पैलेस पर लगभग सायं ४ बजे (लन्दन का समय) पहुंचे। स्नान, अल्पाहार के पश्चात् लन्दन बिजनेस स्कूल रोगी निरीक्षण के लिये पहुंचे गये और रात्रि ११ बजे तक इस कार्य में व्यस्त रहे।

श्री त्रिगुणा जी तथा वैद्य श्री रामजी पहले २-३ बार लन्दन आ चुके हैं। परन्तु श्री सोमेश्वर भाई की और मेरी यह प्रथम लन्दन यात्रा थी। अतः २८ जुलाई को स्नानादि नित्य कर्म से निवृत हो श्री त्रिगुणा जी व वैद्य श्री राम जी तो रोगी निरीक्षण के लिये डॉ. महापात्र जी के साथ लन्दन

बिजनेस स्कूल चले गये और दोपहर देर तक उसमें व्यस्त रहे। परन्तु श्री सोमेश्वर भाई और मैं श्री डेविड लाईनर व श्री फ्रांसिस के साथ कार में लन्दन दर्शन के लिये चले गये।

भ्रमण के पश्चात अपने स्थान पर पहुंचकर भोजन किया। श्री त्रिगुणा जी तो भोजनोपरान्त भी रोगी निरीक्षण कार्यक्रम में व्यस्त रहे, पर हम तीनों वैद्य श्रीराम शर्मा जी के एक मित्र श्री बलवन्त मारू के साथ उनके घर चले गये।

२९-७-८५ सोमवार प्रातः स्नानादि करके वैद्य श्रीराम जी, वैद्य सोमेश्वर भाई भट्ट तथा मैं, हम तीनों श्री स्टीवेन्सन की गाड़ी में श्री मारू के घर पहुंचे तथा उनके साथ एकाध घण्टा मार्किट देखकर लन्दन के हीथ्रो हवाई अड्डे पर पहुंच गये तथा ब्रिटिश एयरवेज की उड़ान द्वारा ज्यूरिक (स्विट्ज़रलैण्ड) चले गये। श्री त्रिगुणा जी ने दो घण्टे बाद वाली उड़ान से आना था। अतः वह अलग पीछे रह गये।

युवक स्टीवेन्सन महर्षि जी एवं आयुर्वेद के प्रति गहरी श्रद्धा और रुचि रखते हैं। वह भारतीय संस्कृति के बड़े प्रशंसक है। उनके कथनानुसार पश्चिम की तमोगुण प्रधान संस्कृति की तुलना में सतोगुण प्रधान भारतीय वैदिक संस्कृति कहीं अधिक महान् है।

स्विट्ज़रलैण्ड की यात्रा

लन्दन से ज्यूरिक केवल १-१/४ घण्टे का हवाई मार्ग है। हमारा विमान १-३० बजे ज्यूरिक पर उतरा। तो ज्ञात हुआ कि मेरा कुछ सामान जो लन्दन बुक कराया था, हमारे साथ नहीं पहुंचा। सम्बन्धित काउण्टर पर पूछताछ के लिये गये तो वहां वैठी एक युवती ने कम्प्यूटर पर उंगलियां चलाई और एक मिनट में बता दिया कि आपका सामान एक भूरे रंग के बक्से में हीथ्रो हवाई अड्डे पर रखा है और २ घण्टे बाद अगली उड़ान में यहां आ जायेगा। यह दो घण्टे का मध्यान्तर हमने हमारी अगवानी के लिये आई गाड़ी द्वारा ज्यूरिक नगर भ्रमण में विताया। लिमाड (Limdt) नामक नदी के दोनों किनारों पर बसा यह अत्यन्त सुन्दर व स्वच्छ नगर है। पर यहां मंहगाई अन्य योरूपीय देशों से बहुत अधिक है।

रक्त केन्सर के रोगी से भेंट :-

कुछ देर तक नगर भ्रमण के उपरान्त, हवाई अड्डे वापस पहुंचे तो श्री त्रिगुणा जी भी वहां मिल गये। पश्चिम जर्मनी के एक रोगी ने लन्दन में ही त्रिगुणा जी से टेलीफोन पर ज्यूरिक हवाई अड्डे पर उनसे परामर्शार्थ भेंट निश्चित कर ली थी। यह रोगी रक्त कैंसर से पीड़ित था और आयुर्वेदिक औषधि का सेवन कर रहा था। भेंट में उसने वताया कि तीन मास तक औषधि सेवन से उसकी शोणवर्तुलीन (Hemoglobin) ५% से बढ़कर ६.५% तक आ गई है और उसे काफी लाभ है। स्वाभाविक रूप से हम सभी वैद्यों को इस कथन पर सन्तोष एवं गर्व का अनुभव हुआ। मेरा सामान पहुंचने मेंअभी कुछ और देर थी। इसलिये एक व्यक्ति को सामान लाने के लिये छोड़कर हम सभी कार द्वारा सीलिसबर्ग (Seelisberg) चले गये। ज्यूरिक से सीलिसबर्ग १-१/२ घण्टे का कार मार्ग हरियाली से भरपूर पर्वतों से घिरा सुरम्य तथा नेत्राहलादक दृश्य उपस्थित कर रहा था।

सीलिसवर्ग महर्षि यूरोपियन रिसर्च युनिवर्सिटी (MERU) का केन्द्र स्थान है। यह स्थान चारों ओर से सुरम्य पहाड़ियों से घिरा है। इसके ठीक २५००-३००० फुट नीचे विशाल ल्यूजर्म झील है, जिसमें दिन भर लोग नौका विहार करते दिखाई देते हैं। चारों ओर व्याप्त अनुपम सौन्दर्य इस स्थान की विशेषता है। हम यहां रात्रि ७-३० बजे के लगभग पहुंचे। भोजनोपरान्त विश्राम के लिये अपने अपने कमरों में चले गये। यह २९ जुलाई की रात्री थी।

तिथि ५-८-१९८५ को हरिद्वार में अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्थाई समिति की बैठक आयोजित थी। हम सबको उस बैठक में सम्मिलित होना था। अतः हम १ अगस्त सायंकाल तक दिल्ली पहुंचना चाहते थे। इसलिये स्विट्जर लैण्ड में ३०-३१ केवल दो दिन ठहरने का कार्यक्रम था कार्यक्रमानुसार यह दो दिन विश्राम के लिये थे, परन्तु त्रिगुणा जी के पास इन दिनों भी रोगी आते रहे और वह प्रायः इसी कार्य में व्यस्त रहे। हम भी कभी उनके साथ रहते, कभी भ्रमण को निकल जाते।

महर्षि जी की प्रायोगशाला का निरीक्षण।

मध्याह्न के भोजन के अनन्तर हमने महर्षि जी की वह प्रयोगशाला देखी, जो १९७९ से ही श्री वैद्य वासुदेव एम० द्विवेदी जी की देख-रेख में चल रही है। आदरणीय द्विवेदी जी स्वयं भी साथ थे। इस प्रयोगशाला में विशेष प्रकार के मशीनी खरल, बाल मिल, कूपीपक्वरस उतारने की बिजली की भट्टी तथा पारद संस्कार करने के विशेष उपकरण रखे हैं, जो अपनी आवश्यकतानुसार स्वयं तैयार करवाये गये हैं। अमेरिका एवं योरूप के सभी देशों में वायु प्रदुषण का बहुत अधिक ध्यान रखा जाता है। स्विट्जरलैण्ड में इस पर और अधिक विशेष बल दिया जाता है। भस्मों की भट्टियों पर एगज्हास्ट फैन (Exhavst fan) वाली ऊंची चिमनी लगी थी। गन्धक युक्त धुयेंके लिये पानी में गुजरकर ऊपर जाने की व्यवस्था थी, जिससे गन्धक पानी में ही घुल जाये और बाहरी वायु मण्डल में मिलकर उसे दूषित न करे। उपले वहां उपलब्ध नहीं, इसलिये पुटें लकड़ी के कोयले से दी जाती थी। स्वर्णमाक्षिक सत्व एवं अभ्रक सत्व पातन भी यहां श्री द्विवेदी जी की देखरेख में होता था। श्री द्विवेदीजी के स्वर्गारोहण के बाद दूसरे मूर्धन्य वैद्यों की देखरेख में ये रसशलायें चल रही हैं। मुक्ता भस्म, मकरध्वज, कस्तूरी, अम्बर आदि के ऐसे मूल्यवान दुर्लभ रस भस्म पर्याप्त मात्रा में यहां तैयार होते हैं, जिनका निर्माण आजकल किसी आयुर्वेदिक फार्मेसी में नहीं किया जा रहा। ये औषधियां महर्षिजी द्वारा स्थापित विभिन्न देशों के आयुर्वेद केन्द्रों में प्रयुक्त होती है।

स्विटजरलैण्ड में वायु प्रदूषण एवं स्वच्छता के प्रसंग में यहां थोड़ी और अधिक चर्चा करना उचित होगा। सड़कों पर जाते समय हर ५-१० किलोमीटर पर ऊंची-ऊंची चिमनियां दिखाई देती हैं। पूछने पर ज्ञात हुआ कि इन चिमनियों में कूडा कर्कट जलाने की ऐसी व्यवस्था है, जिससे उनका धुआं तथा दुर्गन्ध वातावरण को दूषित न करने पाये। प्लास्टिक आदि कुछ वस्तुओं की राख अन्य कुछ उद्योगों में काम आती है। अतः इस प्रकार की उपयोगी वस्तुओं को सामान्य कूड़े कर्कट से छांटकर उनकी राख अलग तैयार की जाती है।

स्विट्जर लैण्ड के मुख्य उद्योग औषधियां, रसायन (कैमिकल) रंग, बड़े-बड़े ट्रक एवं विमान निर्माण करना आदि हैं।

हिमाच्छादित पर्वत शिखर का भ्रमण -

सीलिसबर्ग से ४०-५० किलोमीटर की दूरी पर टिटलिस (Titlis) नामक एक पर्वत शिखर है, जो देशी विदेशी पर्यटकों का प्रमुख आकर्षण है। तिथि ३१-७-८५ को हम कार द्वारा इस स्थल के भ्रमण के लिये गये मार्ग में स्टांस नामक कस्बे में स्थित एक विशाल स्टोर लैण्डर पार्क देखा, कुछ खरीददारी भी की। यहां स्टोर बड़े स्वच्छ एवं सुव्यवस्थित होते हैं। उनमें कार्य भी बड़ी कुशलता, फुर्ती एवं शालीनता पूर्वक होता है। इस स्टोर में विदेशी मुद्रा विनिमय का बैंक भी था, जिसमें किसी भी देश की मुद्रा के बदले स्विसमुद्रा लेकर खरीददारी की जा सकती थी।

टिटलिस शिखर समुद्र तल से ३०२० मीटर (९८०० फुट) की ऊंचाई पर है। हम टिटलिस शिखर पर पहुंचे तो हल्का-हल्का हिमपात हो रहा था। चारों ओर जहां तक दृष्टि जाती थी बर्फ की चादर बिछी दिखाई देती थी। वैद्य श्री राम जी और मैं दोनों थोड़ी दूर तक बाहर घूमे। कुछ लोगों को बर्फ पर स्केटिंग (स्कअतनिग) करते भी देखा। थोड़ी देर बाद पुनः बिजली की ट्रालियों से नीचे पहुंचे और कारों द्वारा वापिस चल पड़े।

स्वदेश वापसी की तैयारी

३१-७-८५ को रात्रि टिटलिस भ्रमण से वापस पहुंचे तो ज्ञात हुआ कि दिल्ली में महर्षि जी के विमान के उतरने की अनुमति मिलने की कुछ औपचारिकतायें अभी पूरी नहीं हो पाई। उसी दिन श्री ललित माकन की हत्या के कारण सरकारी काम-काज भी अस्त-व्यस्त रहा। यदि आगामी १-२ दिन भी यह पूरी न हो सकी तो हमारा हरिद्वार की मीटिंग से पूर्व दिल्ली पहुंचना कठिन होगा, इसलिये हम चारों वैद्यों के लिये कमर्शल विमान से ३-८-८५ के लिये सीटें बुक करा ली गई। महर्षि जी का बोइंग विमान बेजल (Basel) हवाई अड्डे पर खड़ा था और उसमें हमारा कुछ सामान भी था। जिस विमान से ३-८-८५ के लिये हमारी सीटें सुरक्षित थी, वह ज्यूरिक से जाने वाला था। अतःमैं २-८-८५ को ३ बजे कार द्वारा बेजल के विमान से अपना सामान लाने गया। बेजल पहुंचने पर विमान चालक ने बताया कि उसे सीलिसबर्ग से अभी टेलीफोन पर सूचना मिली है कि भारत में विमान उतारने की अनुमति मिल चुकी है। अतः सभी लोग दो घण्टे में यहीं पहुंच रहे हैं, सामान वापिस ले जाने की आवश्यकता नहीं। मैं जिस कार में आया था, उसे श्री ल्यूकस (Mr. Lucas) चला रहे थे। उनका शैशव बेजल में ही गुजरा था और वह इस नगर से भली-भांति परिचित थे। यह दो घण्टे का मध्यान्तर श्री ल्यूकस ने बेजल भ्रमण में बिता दिया।

योरूप की प्रसिद्ध राईन (Rhine) नदी के दोनों किनारों पर बसा हुआ बेजल एक प्राचीन ऐतिहासिक नगर है। सिवा (Ciba) और सेण्डोज (Sandoz) आदि विश्व प्रसिद्ध औषध निर्माताओं की निर्माण शालायें यहीं पर हैं। कई प्राचीन भवन गिरिजा घर आदि इस देश की तत्कालीन वास्तुकला का अच्छा नमूना प्रस्तुत करते हैं। यहां फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी और स्विट्जरलैण्ड तीनों देशों की सीमायें मिलती हैं। बेजल का हवाई अड्डा तो फ्रांस की भूमि पर स्थित है। कोई पट्टे या किराये की व्यवस्था दोनों देशों में इसके सम्बन्ध में है।

सायं ८ बजे सीलिसवर्ग से भी सभी लोग बेजल पहुंच गये। परन्तु विमान की बत्तियां खराब हो जाने के कारण रात्रि ९ बजे की उड़ान प्रातः ६ बजे तक के लिये स्थगित करनी पड़ी। कुछ लोगों ने विमान के भीतर ही रात्रि बिताई, परन्तु सभी वैद्यों एवं महर्षि जी के सर्वप्रमुख अनुयायी श्री ब्रह्मचारी नन्द किशोर जी को नगर के एक पांचसितारा होटल में विश्राम के लिये ले जाया गया। ३-८-८५ को प्रातः ६ बजे हम होटल से वापस हवाई अड्डे पर पहुंच गये, परन्तु विमान ८ बजे बेजल से प्रस्थान कर पाया। मार्ग में एक घण्टे के लिये बहराईन पर तैल लेने के लिये उतरा। फिर नई दिल्ली के लिये अन्तिम उड़ान भरी और रात्रि १० बजे चमचमाती बत्तियों के बीच पालम हवाई अड्डे पर उतरा

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी

का महत्व मालूम हुआ और इसकी पावन धरती को पुनः स्पर्श करके मन में एक उल्लास भरी सान्त्वना मिली और हम कह उठे :-

हे मातृ भूमि ! वसुधे विशाल ।
हे वेद भूमि ! तुमको प्रणाम ।

'शुभम्' ।



विहंसते व्यक्तित्व तथा बहुमुखी प्रतिभा के धनी वैद्य श्री त्रिगुणा जी

आनन्द श्रीवास्तव
महर्षि आयुर्वेद
ए-२१४ न्यू फ्रेण्ड्स कालोनी
नई दिल्ली

त्रिगुणाजी के दर्शन का पहला मौका १९७८ में मिला था। उसके पहले उनके बारे में काफी सुना था और कुछ इस प्रकार सुना था कि मन में विचार बैठ गया था कि ये अवश्य ही सिद्ध पुरुष हैं जिन्हें कोई चमत्कारिक सिद्धि प्राप्त है। जो केवल नाड़ी में हाथ रख कर ही बता देते हैं कि व्यक्ति को क्या बीमारी है।

अपना परिचय जब भेजा तो उन्होंने तुरन्त बुला लिया और हम एक तरफ बैठ गये। कमरे में कई रोगी थे और बाहर काफी भीड़ थी रोगी आते वैद्यजी नाड़ी में हाथ रखते और कुछ सेकेंड में ही रोग का पूरा विवरण लिखाकर उपचार लिखा देते। पथ्य अपथ्य इत्यादि मिला कर सब कुछ में अधिक से अधिक २ मिनट लगते और रोगी संतुष्ट होकर चला जाता।

सुना तो बहुत था अब अपनी आंखों से देखा तो उस दिव्यपुरुष के प्रति श्रद्धा हो गई चुपचाप चरण स्पर्श किया और बाहर आ गये। पर उनके कक्ष में जो समय बिताया उसका बहुत गहरा असर मन पर पड़ा। पता नहीं क्यों वहां बैठ कर बहुत अच्छा लगा। फिर तो उनके पास अक्सर जाते और एक कोने में काफी देर चुपचाप बैठे उनको रोगी का परीक्षण करते देखते रहते। एक दिन किसी कारण से भीड़ अधिक नहीं थी वैद्यजी ने आयुर्वेद के प्रचार हेतु कुछ बातें छेड़ दीं बात-बात में अपनी जिज्ञासा हमने भी व्यक्त की कि आपकी यह जो चमत्कारिक सिद्धि कैसे प्राप्त हुई और क्या आप इसे किसी को सिखा सकते हैं।

मन्द मुस्कान के साथ वैद्य जी बोले बेटा यह सारा ब्रह्माण्ड प्रकृति के नियमों से चलता है छोटी से छोटी क्रिया से लेकर बड़ी से बड़ी घटना के पीछे प्रकृति के नियम हैं। अर्थात चमत्कार कहीं नहीं होते हैं। व्यक्ति जब किसी क्रिया से प्रकृति के नियमों को नहीं जोड़ पाता है तो उसे चमत्कार कहने लगता है जब सारा ब्रह्माण्ड प्रकृति के नियमों के द्वारा संचालित है तो अवश्य ही मनुष्य का शरीर भी उसके द्वारा ही संचालित होता है। सारे शरीर का कण-कण एक दूसरे से संबन्धित है और उसका सारा स्पंदन नाड़ी में दिख जाता है। अब वैद्य के ऊपर निर्भर करता है कि वह कितने सूक्ष्म स्तर पर उस स्पंदन को ग्रहण करता है और किस प्रकार उन स्पंदनों का विश्लेषण कर के उचित निदान करता है।

इसमें कुछ भी चमत्कारिक नहीं है। सब कुछ इतना वैज्ञानिक और निश्चित है जैसे गणित में २ और २ चार ही होता है।

वैद्यजी के ये शब्द सुनकर उनके प्रति श्रद्धा की भावना सैकड़ों गुना बढ़ गई और साथ ही साथ भारत के इस महान ज्ञान आयुर्वेद के प्रति अगाध श्रद्धा पैदा हो गई। कितना वैज्ञानिक है सब कुछ और कितने सरल हैं इस विज्ञान के वैज्ञानिक। इसी महान ज्ञान का अंग्रेजों ने क्वैकरी कह कर मजाक उड़ाया था और तिरस्कृत कर के नष्ट करने का प्रयास किया था। वे नहीं समझ सकते कि अपने थोड़े से व्यावसायिक लाभ के लिये उन्होंने कितना बड़ा पाप किया जिसको नई-नई बीमारियों के रूप में आज सारा विश्व भुगत रहा है।

वैद्य जी से जब भी विश्व में फैल रही नई-नई बीमारियों के बारे में चर्चा हुई उन्होंने सदैव ही कहा कि इन सबका इलाज है। यह सुनकर मन में शंका हुई कि ये कैसे उन सब बीमारियों का उपचार हो सकता है जो उस समय थी भी नहीं और आज जब बड़े डाक्टर और वैज्ञानिक इनका उपचार ढूंढने में असफल रहे हैं इस शंका का निवारण भी वैद्यजी ने उसी प्रकार मुस्कुराहट के साथ किया कि आयुर्वेद में रोग को रोग के रूप में नहीं देखते हैं रोगो के कारणों की खोज करते हैं।

उन्होंने कहा कि :- आयुर्वेद उच्चउद्देश्य, उच्चपरम्परा तथा उच्च संस्कृति के साथ अवतीर्ण हुआ है जिसे कि महर्षियों ने संहिता वद्ध किया है। वे सारी संहितायें संस्कृत भाषा में लिपिवद्ध हैं। जिन्हें केवल संस्कृत प्राविण्य ही खनित्र कर सकता है । क्योंकि आयुर्वेद के चारों ओर वेद, स्मृति, पुराण तथा उपनिषदों की भूमि है और इसकी मिट्टी से ही आयुर्वेद का भूगर्भ बना है। जिसके उत्खनन तथा जन जीवन के ज्ञान हेतु आज संस्कृत प्राविण्य की आवश्यकता है। जिसकी पूर्ति के लिये वेद उपनिषदों तथा स्मृतियों का ज्ञान कराने का अलौकिक कार्य जो पूज्य महर्षि महेश योगी जी ने देश के कोंने-कोने में महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ स्थापित कर पूरा किया है, वह वहुत ही स्तुत्य है। वैद्यजी ने कहा कि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति की आधारशिला धर्म है। और धर्माचरण ही व्यक्ति को निरोगी कर सकता है। क्योंकि स्वस्थ वृत तथा सदाचार का प्रतिपादन आयुर्वेद में ही सन्नहित है। स्वस्थ वृत्त में रोगों के विविध कारणों का, उनके प्रतिबन्धन के उपायों का, दीर्घ जीवन एवं स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए आवश्यक रहन-सहन का अत्यन्त सूक्ष्म विचार किया है। इस सम्बन्ध में वाग्भट्ट ने कहा है :-

आयुः कामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम् ।
आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरम् ।।

वैद्य जी के ये अमूल्य बिचार मैं शांत तथा निश्चल भाव से बैठा सुनता रहा और आयुर्वेद के प्रति मेरी जिज्ञासा तथा ज्ञान साधना निरन्तर बढ़ती रही। वैद्य जी का आत्मीयता भरा प्यार तथा सच्चा मार्गदर्शन पाकर हृदय गद्‌गद् हो गया। उनके इन विचारों से मेरे मन पर गहरा असर हुआ मैने सोचा समग्र स्वास्थ्य रखने में जितना योगदान शरीर सम्बन्धी सुव्यवस्थाओं का है उसके हजार गुना प्रभाव मनः स्थिति का होता हैं। मनुष्य के सुख-दुःख तथा स्वास्थ्य धन वैभव पर टिके हुये नहीं होते, वरन उनकी सुदृढ नीव उत्तम विचार होते हैं। जो मन पर केन्द्रित है असंयम,

कुरुचिपूर्ण आहार विहार अपनाने के लिये शरीर नही मन ही उछल कूद मचाता है। अतः एक दिशा में मन तथा चित्त की चंचलता की एकाग्रता के लिये भावातीत ध्यान की आवश्यकता है वहीं दूसरी ओर स्वस्थ तथा हृष्ट पुष्ट शरीर के लिये उत्तम आहार विहार की।

शरीर और मष्तिष्क को स्वस्थ सुरक्षित बनाये रखने के लिए व्यक्ति को समाज को ऐसे आधार अपनाने की आवश्यकता है जो चिन्तन की निकृष्टता से और कर्तृत्व में भ्रष्टता से उसे बचा सके। यह प्रयोजन निश्चित ही आयुर्वेद दृष्टिकोण अपनाने से पूरे होंगे। जिसे आस्तिकता, अध्यात्मिकता एवं धार्मिकता का तत्व दर्शन कहा जाता है।

इस तरह जब भी मेरे मन में जिज्ञासा तथा ज्ञान पिपासा का अन्तर्द्वन्द उठता मैं बराबर वैद्य जी के निवास पर नत मस्तक हो जाता था। वैद्य जी मेरी जिज्ञासाओं को अपने असीमित ज्ञान राशि से बराबर परितृप्त करते रहते और उनकी इस सनुकम्पा से मुझे कई बार उनके साथ देश विदेश में आयोजित स्वास्थ्य संगोष्ठियों मे भाग लेने का सुअवसर मिला जिसे मैं अपना पूर्व चिर संचित पुण्य कर्मो का फल समझता हूँ।

इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष वैद्य श्री भुवन चन्द्र जोशी जी ने राज वैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के सम्मान में अभिनन्दन ग्रन्थ सम्पादित करने का जो पुनीत कार्य किया है, उसके लिये मेरी ओर से उन्हें बहुत-बहुत साधुवाद है।

वैद्य जी के रुग्ण समाज सेवा से लगे हुये अमूल्य समय से दिया गया अल्पकालिक अंश मेरे जीवन का एक चिर मधुर संस्मरण है। जो अनायास ही मुझे उनके प्रति श्रद्धा भक्ति तथा आत्मीयता से आप्लावित कर देता है। भगवान शंकर से मैं प्रार्थना करता हूँ कि वह उन्हें सदैव स्वस्थ तथा सुखी रखें तथा उनके आयुर्वेद का उद्घोष शाश्वत रूप से दिग्दिगन्त में निनादित होता रहे।

जय गुरुदेव

नित्यं हिताहारविहारसेवी,
समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावान्,
आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः॥

"चरक"

राजराजेश्वरी त्रिपुरा के अनन्य उपासक आचार्य श्री त्रिगुणा जी

ले. वैद्य शिव करण शर्मा छांगाणी
(शिवानन्द नाथ)
नागपुर

करधात्रीकृतनतजनकरधात्रीकृतपरात्परविद्याम् ।
धात्री धात्रीमेकामनाथधात्रीं भजे जगद्धात्रीम् ।।

आदिशक्ति ललितेश्वरी की अहैतुकी अनुकम्पा से हमारे चरित्रनायक आचार्य श्री त्रिगुणा जी के विमल चरित्र के एक अछूते बिन्दु का चित्रांकन करने का सौभाग्य प्राप्त कर अपने आपको कृत-कृत्य समझ रहा हूँ।

संसार में मानव जीवन दुर्लभ है, केवल जन्म जन्मांतरों के सुकर्म सुफल स्वरूप यह 'चदरिया' उपलब्ध होती है, उसे कालिमा से बचाकर करोड़ों में कोई कबीर पैदा होता है जो :-

"ज्यों की त्यों धरदीन चदरिया"

उस रूप में आज हमें आचार्य श्री दिखाई दे रहे हैं उनके इस स्वरूप का दर्शन कोई ही कर पाये हैं । पाठकों को इस गोपनीय रहस्य के उजागर भाव प्रदर्शन की सूक्ष्म झांकी का किंचित् दर्शन ही इन पंक्तियों का उद्देश्य है जिसके बिना उन्हें समझना सुकर नहीं ।

त्रिगुणा उपनाम क्यों ?

यह बड़ी ही विलक्षण बात है कि आचार्य श्री त्रिगुणा के नाम से संसार में विख्यात हैं । सारा विश्व त्रिगुणा में ही समाविष्ट है, बिना तीन के सब शून्य है, सद्गुरु के बिना इस अत्यंत झीने मार्ग का बोध संभव नहीं । बिना इष्ट के कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता कहा भी है :-

"इष्ट बिना सब भ्रष्ट है ज्योतिष वेद पुराण" इसी संदर्भ में अवधूताचार्य ब्रह्मनिष्ठ मेरे गुरुवर्य श्री निरंजन ने भवानी शतक में लिखा है :-

बड़े भाग्य से मानुषी देहपाते ।
बड़े भाग्य से राम का नाम पाते ।।
बड़े भाग्य से पादुका भी पुजाती ।
परंब्रह्मरूपां भवानीं भजामि ।।

जो भाग्य हीन होते हैं उन्हें संसार में सब कुछ दिखाई देने पर भी नहीं मिलता कहा है :-

घट में रमते राम घट-घट में ज्योती जले ।
पग-पग पर रसधाम भाग्यहीन पावे नहीं ।

ज्ञान-गरिमा की गंगोत्री का नाम ही गुरु है जिन्हें पात्रता प्राप्त विरला साधक ही उपलब्ध कर पाता है और पात्रता अनेक जन्मों की साधना द्वारा सौभाग्य से अर्जित होती है। हमारे सत्कार मूर्ति श्री त्रिगुणाजी परम सौभाग्यशाली हैं जिन्हें मां की ही कृपा से अवधूतशिरोमणि आगम-निगम मर्मज्ञ श्री अमृत वाग्भवाचार्य जैसे सद्गुरु से दीक्षा मिली जिन्होंने त्रिगुणमय पात्रमें अमृत उंडेल दिया, उन्होंने कहा कि तीन को समझो फिर कुछ समझना शेष नहीं रहेगा। मां के त्रिगुणमय स्वरुप को प्रगट करते हुए कहा कि :-

देवानां त्रितयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरा स्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रि ब्रह्मवर्णाश्रिययंत्किंञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गादिकं तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्वतः ।।

अर्थात् मां त्रिपुरा का अर्थ ही जिसमें विश्व की संपूर्ण विविध वस्तुओं का समावेश हो यथा-देवताओं मे तीन ब्रह्मा-विष्णु महेश, गुरुओं में तीन-गुरु, परमगुरु, परमेष्ठी गुरु। अग्नियों में तीन-गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि, आवहनीय। हृदय-ललाट-शिर ज्योतित्रय। शक्तित्रयइच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति या ब्राह्मी-माहेश्वरी वैष्णवी। त्रिस्वरा-उदात्त-अनुदात्त-स्वरित। त्रैलोक्य-स्वर्ग-मृत्यु-पाताल। त्रिपदी-जालंधर-कामरूप-उड्डीयान। नादत्रयी-गायत्री संज्ञक त्रिपदी। त्रिपुष्कर-शिर-हृदय-नाभिकमल। त्रिब्रम्ह-इडा, पिंगला, सुषुम्णा। वर्णत्रय-एँः क्लीं, सौः। त्रिवर्ग-धर्म-अर्थ, काम।

जितने त्रयात्मभाव हैं वे मतत्रय, मुद्रात्रय, वृक्षत्रय, सिद्धित्रय आदि सब त्रिपुरा में सन्निहित हैं। जगत की सृष्टि, स्थिति, लय भी इसी में स्थित है। इसी शक्ति से अर्थमयी, शब्दमयी, चक्रमयी एवं देहमयी सृष्टि उत्पन्न हुई। विस्तारमय से अधिक विवेचन न करते हुए केवल इतना ही पर्याप्त है कि परांबा के कृपापात्र आचार्य श्री त्रिगुणा जी त्रिगुण बिंदु के रूप में प्रकटित हैं जिन्हों ने ममतामयी त्रिपुरांबा के नित्यार्चनादि क्रियाओं से राजराजेश्वरी के अभेदत्व के समीप उपस्थित कर लिया है।

आयुर्वेद गणतंत्र के राष्ट्रपति

वर्तमान में धन्वन्तरि स्वरूप चरित्र नायक त्रिगुणा जी ने अपनी नाड़ीज्ञान की विचक्षण चमत्कृतियों से समस्त विश्व के प्रांगण में आयुर्वेद पताका फहरा कर उसकी स्वच्छ तरंग प्रवाह का प्रत्यक्षी करण दे जनमानस को निर्मल कर प्राचीन नाड़ी ज्ञान के प्रति विश्वास जागृति का महत्कार्य संपादन किया है। वे वस्तुतः हमारे आयुर्वेद गणतंत्र के सबल-सक्षम राष्ट्रपति हैं।

नाड़ीज्ञान

कई लोग वर्तमान युग में नाड़ीज्ञान को अविश्वसनीय दृष्टिकोण से देखते हैं, किन्तु जिन्होंने श्री त्रिगुणा जी को रुग्णनिदान करते समय नाड़ीज्ञान द्वारा रोगनिर्णय देते देखा है उनकी शंकाएं स्वयं दूर हो जाती हैं।

सचमुच आयुर्वेद का नाड़ीज्ञान बहुत ही गहन ज्ञान है इस नाड़ीज्ञान को कभी नकारा नहीं जा सकता। हां उसकी उपलब्धि केवल वे ही कर सकते हैं जिन्होंने गुरुमुख से आयुर्वेद शास्त्र का

प्रगाढमर्म समझकर त्रिगुण-त्रिदोष के सूक्ष्म तत्वों का साक्षात्कार कर-षट्चक्र-नाड़ीतंत्र का ज्ञान गुरुकृपा से कुंडलिनी जागृति द्वारा किया और हमारे चरित्रनायक इस घेरे के बीच चतुर्दिक् दृष्टि फैलाये देख रहे हैं अतः उनका नाड़ीज्ञान असंदिग्ध है, शंका को स्थान ही नहीं। इस संबंध में स्वयं त्रिगुणाजी का कथन है कि :- नाड़ीज्ञान अपने आप में एक बहुत बड़ा विज्ञान का भाग है आयुर्वेद का गहन अध्ययन-चिंतन-मनन-शास्त्र अनुशीलन एवं अनेक रुग्णों के परीक्षण अनुभव से ही प्राप्त किया जा सकता है।

भोग-मोक्ष-समन्वय

एक ओर जब ऐसा व्यक्ति, जो महाराज श्री के साधन बिन्दु से अपरिचित है, देखता है कि पूज्यश्री साधनतप्त कांचन देहधारी ऋषिकल्प विराजमान हैं। वहीं दूसरी ओर निहारने पर आचार्य श्री के महान् वैभव, विद्या-कान्तिमान सुवैद्य सुपुत्र-परिवार, दिग्दिगन्त यश, कीर्ति, समस्त सुख साधन सम्पन्नता, सन्मान, आदर, श्रद्धा, आस्था, निष्ठा, अटूट विश्वास, सहजभक्तिभाव, निच्छलस्नेहधारा के अनूठे प्रवाह, सुमधुररसास्वाद आशीर्वाद की अभिलाषा लिए पंक्तिबद्ध जन समूह, उसके मन में विचार उठते हैं भोग और मोक्ष का समन्वय कैसे संभव है? वहीं साधक मन कह उठता है, यह निश्चय ही संभव है। मां राजराजेश्वरी के साधकों को शास्त्रों ने उच्चारा है :-

यत्रास्तिभोगो नहितत्र मोक्षः। यत्रास्ति मोक्षो न च तत्र भोगः ।।
श्री सुन्दरी पूजनतत्पराणाम्। भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ।।

अभिनंदन के आनंदोल्लासअवसर पर "त्रिपुराम्बा" से प्रार्थना है कि आयुर्वेद एवं हम सब पर आचार्य श्री त्रिगुणा जी की छत्र छाया बनाये रखें।

"धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यंमूलमुत्तमम् ।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ।।"

"दोषान् प्रवृद्ध कुपितान् सहजान्नराणाम्
स्पष्टं करोति बलकाल-प्रदेशजान् यः,
नाड्यावधारितगुणं त्रिगुणं गुणाब्धिम्
तं नौमि वैद्य-कुल-भूषण-भूषिताङ्गम् ।"

"वैद्य तारा चन्द्र शर्मा"

आयुर्वेद जगत् में स्वर्णाक्षरांकित वैद्य श्री त्रिगुणा जी

वैद्य नित्यानन्द सारस्वत,
महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान
महर्षिनगर

आयुर्वेद के आधुनिक इतिहास में वैद्यराज त्रिगुणाजी का नाम निर्विवाद रूप से स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। वेशभूषा और शरीर-सम्पदा के कारण हम उन्हें सैकड़ों की भीड़ में पहिचान लेंगे, त्रिगुणा जी ने जिनको जीवन-दान दिया उनकी संख्या लाखों में है और उन्होंने करोड़ों मानवों तक आयुर्वेद का सन्देश पहुंचाया है।

"चरक" के अनन्य भक्त

महर्षि-नगर का महर्षि वेद मन्दिर दर्शनीय है, इसमें त्रिगुणा जी का कमरा अलग से सजा है। इस में जहां आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थों की आलमारियां हैं, वहीं बाजू में त्रिगुणा जी की चरक-संहिता अलग से रखी मिलेगी। यह मोटे अक्षरों में मूल-संहिता है।

त्रिगुणाजी का कथन है कि महर्षि चरक का मन्तव्य इतना स्पष्ट है कि उसे किसी टीका की आवश्यकता ही नहीं है। चिकित्सा कार्य में व्यस्त रहने पर भी वे चरक-चिन्तन का अवसर निकाल लेते हैं। संहिता के महत्व-पूर्ण विषयों के अध्याय और श्लोक-संख्या तक उन्हें कण्ठस्थ हैं। वैद्य लोग जब तक विषय-सूची पलटने लगेंगे, तब तक वे प्रकरण ही बता देंगे।

त्रिगुणाजी के जन्मदिवस पर एक बार परम पूज्य महर्षि जी ने उन्हें आधुनिक धन्वन्तरि कहा था। चरक-संहिता के परम-भक्त होने के कारण वे वर्तमान-काल के चरक प्रतीत होते हैं।

आयुर्वेद का चिन्तन

परमपूज्य महर्षिजी के प्रवचन के समय जब आदेशपाल चुपके से आकर, परम-सुगन्धित फूलों की दो मालाएं सामने रख देते थे, तो हम लोग समझ लेते थे कि त्रिगुणा जी कुटिया में पहुंच गये हैं। उनके आते ही श्री महर्षि जी उठते, समस्त विद्वत्समाज उठता और त्रिगुणाजी का सहज-अभिनन्दन हो जाता और साथ ही महर्षि आयुर्वेद की चर्चा प्रारम्भ हो जाती।

स्वाभाविक रूप से यह चिन्तन आयुर्वेद के किसी अंग या उपांग पर केन्द्रित होती। त्रिगुणाजी यह भी बताते कि महर्षि आयुर्वेद का अभिप्राय क्या है ? और महर्षिजी का मेरी ओर संकेत होता कि संक्षेप में लिख डालें। ऐसे संक्षिप्त विवरणों की अनेक फाइलें हमारे यहां उपलब्ध हैं, जिन में विभिन्न विषयों पर त्रिगुणाजी के मन्तव्य अंकित हैं। जो माननीय मन्तव्य इस प्रकार है।

"समंत्रं ज्योतिषं योगं यज्ञयागादिकन्तथा ।
वेदौ स्थापत्यगन्धर्वौ आयुर्वेदे समाहिताः ।।
आयुर्वेदे धनुर्वेदमपि ज्ञेयं सदाबुधैः ।।"
"आयुर्वेदोयदेशेषु विधेयः परमादरः"
शुभम् भूयात्

पद्म भूषण वैद्य श्री बृहस्पति देव जी त्रिगुणा के व्यक्तित्व की एक झलक

१. वैद्य पूर्णमल मिश्र

२. वैद्य रामदत्तशास्त्री

चिकित्सक परामर्श दाता

महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ महर्षि नगर, (उ.प्र.)

आयुर्वेद जगत् के प्रख्यात मूर्धन्य विद्वानों में अग्रगण्य मान्य वैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणाजी का व्यक्तित्व वह अथाह समुद्र है जिसका पार पाना कठिन है, किन्तु उनके अगाध गांभीर्य की लहराती तरङ्गों में से एक "कामये दुःख तप्तानां प्राणिनामर्ति नाशनम्" की उद्वेलित वीचि इतनी प्रस्फुरित है कि कुछ लिखने का प्रयास कर रहे हैं। प्रतिदिन रुग्जीर्ण शतशः कृच्छ्रसाध्य रोगी, आपकी चिकित्सा से रोग विमुक्त होकर आपकी यशः पताका को यत्र तत्र सर्वत्र फहराते हुए यह कहते नहीं अघाते कि वैद्य श्री के पीयूषवर्षी कर कमलों में वह चमत्कार है कि नाड़ी का स्पर्श करते ही रोगी अपनी व्यथा-कथा से आश्वस्त हो लाभांश की अनुभूति प्राप्त करने लगता है।

आपकी वहुश्रुत कीर्ति से, तथा जयपुर में सम्पन्न आयुर्वेद महा सम्मेलन के समय में प्रत्यक्षतः दर्शनलाभ से हम कृतार्थ तो थे ही तदनन्तर वह शुभावसर भी उपस्थित हुआ कि आपका नियमित सान्निध्य हमें प्राप्त हुआ। यह समय सन् १९८७ का प्रारंभिक मास जनवरी था।

महामहिम सम्मान्य महर्षि जी के आह्वान पर विश्व के कई देशों के एलौपैथ डाक्टरों को आयुर्वेदीय प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम आपके सान्निध्य में समायोजित किया गया था। इस ३ महीने के आयुर्वेद प्रशिक्षण कोर्श में एशिया, यूरोप अमेरिका आष्ट्रेलिया अफ्रीका के कई देशों से डाक्टर उत्सुकता पूर्वक सम्मिलित हुए। उनकी प्रवल इच्छा यही रही कि आयुर्वेद के दोष दूष्यों के सिद्धान्तों को किसी भी प्रकार समझ कर विश्व क्षितिज पर आयुर्वेद की पताका फहराएं।

आपने उन दिनों उस जनवरी की शीतकालीन रात्रिकक्षाओं में दिल्ली से महर्षि नगर आकर वैद्य श्री प्रभुदत्तजी के साथ जिस प्रकार उन एलौपैथ डाक्टरों को डॉ० श्री महापत्रा के आङ्गलभाषान्तरित अनुवाद से व्याख्यायित, आयुर्वेदीय मूल सिद्धान्तों को हृदयङ्गम कराया, वह आयुर्वेद ज्ञान आज विश्व के कोने-कोने में पुष्पित व पल्लवित हो रहा है।

हमने अफ्रीका प्रवास के दौरान देखा कि वहाँ का एक प्रख्यात डाक्टर व ध्यानशिक्षक आपको बहुत स्मरण कर रहा था। हालैण्ड से आये डॉ० वेनी व लुइस तो इतने प्रशिक्षित व अभ्यस्त हो गये थे कि दोषदूष्यों की अंशाश कल्पना भी करने लगे थे। नाड़ी ज्ञान का उन्हें इतना अभ्यास था कि दूसरों को सिखाने में रुचि लेते थे। यह सब आपकी नाड़ी निदान की प्रवीणता, सहृदयता, उदारता और चिकित्सा कौशल का ही फल है कि, विश्व के प्रत्येक देश में आज महर्षि आयुर्वेद की दुन्दुभि प्रतिध्वनित हो रही है और आयुर्वेद चिकित्सा के प्रति वहाँ का समाज समाकृष्ट है, क्योंकि

एलोपैथ औषधियों के कुप्रभाव से वे बचना चाहते हैं और आयुर्वेदीय सौम्य स्वभाववाली औषधियों से पञ्चकर्म विधान से, वे अपना चिकित्सोपचार करवाना चाहते हैं।

आपके वैदुष्यपूर्ण कर्मनिष्ठ व्यक्तित्व से अनुष्ठान व ज्योतिष के भी प्रचार प्रसार में बड़ा योगदान मिला है। वहाँ के जागरूक जन अपने अनिष्टों के निवारणार्थ रत्नों उपरत्नों का धारण करना चिकित्सा का आवश्यक अङ्ग समझने लगे हैं। ज्योतिष के द्वारा भविष्यत् में होने वाली घटनाओं को समझ कर वे अपने सुन्दर भविष्य की कल्पनाओं को साकार कर रहे हैं।

आप जैसे धन्वन्तरिकल्प सुपुष्ट सौम्य व्यक्तित्व के दर्शन जब होते हैं तो सभी जन एक सुखदशान्ति का अनुभव करते हैं। विश्व के बहुत से देशों में आप चिकित्सार्थ कई यात्राएं सम्पन्न कर चुके हैं। परमादरणीय श्रद्धास्पद महर्षिजी का वरदहस्त आप पर सदैव बना रहा है। आपकी आयुर्वेदज्ञता, चिकित्सा कौशल, सद्व्यवहार, उदात्त भावनाओं से ओत-प्रोत स्वभाव एवं सहृदयता से सभी जन लाभान्वित होकर अपने को कृतार्थ समझते हैं।

आपका चिकित्सा चातुर्य चमत्कार हमने दिनांक १५ मार्च ९२ को देखा। जब हम आपके चिकित्सालय पर पहुँचे तो रोगियों की प्रतीक्षारत बड़ी संख्या को देखकर वैद्य श्री के प्रभावोत्पादक चिकित्सा कौशल को देखकर प्राणाभिसर चिकित्सक के चरकोक्त वे गुण स्मृति पथ पर आये कि,

य इमे कुलीनाः पर्यवदातश्रुताः परिदृष्ट कर्माणो, दक्षा शुचयः जितहस्ताः जितात्मानः सर्वोपकरणवन्तः सर्वेन्द्रियोपपन्नाः प्रकृतिज्ञाः प्रतिपत्तिज्ञास्ते प्राणानामभिसराः रोगाणामपहन्तारः प्राणाभिसरवैद्याः, इत्यर्थः।

प्रयोगज्ञान विज्ञान सिद्धिसिद्धाः सुखप्रदाः ।
जीविताभिसरा ये स्यु वैंद्यत्वं तेष्ववस्थितम् ॥
ये शास्त्रविदो दक्षाः शुचयः कर्मकोविदाः ।
जितहस्ता जितात्मानस्तेभ्यो नित्यंकृतंनमः ॥

च. सू. अ. ११.

ये अपने विशुद्ध आयुर्वेदीय प्रयोगों द्वारा जनसामान्य से लेकर महामहिम राष्ट्रपति व प्रधान मन्त्री तक प्रभावशील हैं। प्रतीक्षा रत पंक्ति में साधन सम्पन्न व्यक्ति भी थे तो सामान्यजन भी थे।

महर्षि नगर में आप द्वारा निर्दिष्ट सिद्धान्तानुसार वात पित्त कफीय विंग बनी हुई हैं, तदनुसार बनौषधि वाटिकाओं का निर्माण किया जा रहा है। आप जैसै आदर्श चिकित्सक से भारत देश गौरवान्वित है। महामहिम राष्ट्रपति जी द्वारा "पद्म भूषण अलङ्कार से सम्मानित" आप से आयुर्वेद जगत् गौरवान्वित हुआ है। आपके सहयोग पूर्ण दिशानिर्देश की आकांक्षा रखते हुए हम आपके दीर्घायुष्य की मङ्गल कामना करते हैं तथैव -

भिषजां साधुवृत्तानां, भद्रमागमशालिनाम् ।
अभ्यस्तकर्मणां भद्रं, भद्रं भद्राभिलाषिणाम् ॥



फोनः ३०१२६९२
३०१९०८०
३०१९७६२
३०१९६०६

अखिल भारतीय किसान कांग्रेस (इ)

रामचन्द्र विकल, पूर्व सांसद
चेयरमैन
किसान कांग्रेस. अ०भा०का०क० (इ)

24, अकबर रोड,
नई दिल्ली-110011

एक संस्मरण

वैद्य नहीं सन्यासी हैं सच्चे भारत वासी हैं।

वैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी साधारण परिवार में पैदा हुए। इनके माता-पिता का धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने ऐसे पुत्र को जन्म दिया जो अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में भारत का बहुत नाम कर रहे हैं। इनके पिता श्री चाननराम जी हैं। भारत की पुरानी संस्कृति तथा आयुर्वेदको वैद्य जी ने पुनर्जीवित किया।

मैंने स्वयं अपने ऊपर भी उनका अनुभव किया। नाड़ी ज्ञान की लुप्त हो रही भारत की इस अलौकिक नीति को त्रिगुणा जी ने चार चांद लगाए हैं।

अमेरीका तथा अन्य कई देशों में तो विदेशी लोग इस बात से आश्चर्य चकित रह जाते थे कि वैद्य जी बिना किसी मशीन या यंत्र के नाड़ी पर हाथ रखते ही व्यक्ति के शरीर के भीतर की सारी संरचना और स्थिति कैसे जान लेते हैं? इस बात पर सारी दुनिया आश्चर्यचकित रहती थी और विदेशों में तो विस्मय से भरे दांतों तले उंगुली दबाए लोगों की लम्बी-लम्बी कतारें लगती थी।

वैद्य जी ने सारी दुनिया में भारत की प्राचीन संस्कृति को पुनः प्रचारित किया है। संस्कृति और सभ्यता और आयुर्वेद को सारी दुनिया में फैलाने का श्रेय श्री त्रिगुणा जी को ही है।

स्विट्ज़रलैण्ड में वैद्य जी एक गोष्ठी में देर से पहुंचे मगर वैद्य जी का नाम वक्ताओं की सूची में नहीं था। गोष्ठी के अध्यक्ष की नाड़ी देखते ही वैद्य जी ने बता दिया कि गोष्ठी के अध्यक्ष निस्संतान हैं।

तभी तहलका मचा कि भारत से एक ऐसा वैद्य आया है जो सब कुछ नाड़ी ज्ञान में बता देता है। बस अगली कार्यवाही समाप्त, वैद्य जी उस गोष्ठी के केन्द्र बिन्दु बन गए।

उनका पुत्र देवेन्द्र त्रिगुणा राणा बहुत सहयोगी है। सराय काले खाँ, निजामुद्दीन रेलवे स्टेशन के नीचे, रेलवे क्रांसिंग पर गाड़ियाँ छोड़-छोड़ कर जाने के लिए ऐसी भीड़ होती है जैसे सुबह-सुबह का पोलिंग स्टेशन।

लोग नम्बर लेने के लिए कई दिन पहले से वैद्य जी को फोन करते हैं और वह नम्बर देते हैं। मेरे जैसे व्यक्ति पर सिफारिश लेकर जाते हैं। कुछ मेरा नाम लेकर, कुछ बिना नाम लिये ही वैद्य जी से मिलते हैं।

मुझे यह जानकारी है कि सारे संसार में छाछ पीने वालों की उम्र लम्बी होती है। वैद्य जी की तन्दरुस्ती और स्वास्थ्य का राज है छाछ पीना। गाय पालना उनका शौक है।

वैद्य जी पूजा बहुत करते हैं। सनातन धर्मी हैं। पूजा में उनकी श्रीमती जी सहयोग करती हैं। मट्ठा, छाछ और नंगे बदन पूजा करने के लिए घर से बाहर मन्दिर में जाते हैं। एक रेशमी सा कपड़ा पहन जब वह बाहर निकलते हैं तो वे एक वैद्य नहीं बल्कि संत लगते हैं। उनकी छवि उस समय एक महात्मा और संत जैसी बन जाती है।

"यश-अपयश विधि हाथ" - यह कहावत मुझे उस समय फीकी लगने लगती है जब मैं वैद्य जी का यश देखता हूँ। स्वर्गीय मुंशी खचेडू सिंह जो मेरे रिश्तेदार हैं। मेरे साथ वैद्य जी के बहुत दर्शन किए हैं। बड़े हंसमुख थे। वैद्य जी उनकी बातें बड़े ध्यान से सुनते थे। मुंशी जी बहुत मजाकिया तबीयत के व्यक्ति थे।

मुंशी जी ने एक दिन उनके पुत्र राणा की प्रशंसा भी बड़े व्यंगात्मक अन्दाज में मेरे सामने ही की। मजाक में मुंशी जी वैद्य जी से बोले, "अच्छा मेरे जैसे मामूली आदमी की नब्ज पर अपनी उगुलियों से बाजा बजाने के बजाय राणा को लगाते हैं और विकल जी जैसे बड़े आदमी की नब्ज पर खुद बाजा बजाते हो"। सब यह बात सुनकर खूब हँसे।

मेरे हर जन्म-दिवस पर वैद्य जी अमृत कलश अवश्य लाते हैं। एक बार मैंने वह कलश किसी अन्य व्यक्ति को दे दिया तो वे नाराज हो गये। कारण यह था कि वैद्य जी वह कलश पूजा करके सिर्फ मेरे लिए ही लाते हैं।

सच्चा गुरु अपने शिष्य को आगे बढ़ते हुए देख कर खुश होता है और माता-पिता अपने पुत्र की तरक्की देख कर खुश होते हैं। राणा की तरक्की देखकर वैद्य जी भी बहुत खुश हों यही कामना है। वैद्य जी का जन्मस्थान ग्राम बड़ा पिण्ड, जालंधर, पंजाब भी मेरी निगाह में एक पूजनीय स्थान है जहाँ ऐसा महापुरुष पैदा हुआ।

वैद्य जी के घर लोगों की मिलने के लिये वैसेही लाइन लगती है और उत्सुकता से मिलना चाहते हैं जैसे प्रधान मंत्री व राष्ट्रपति महोदय के यहां-

मेरी माताजी जो १०६ वर्ष की होकर स्वर्गवासी हुई। १ जनवरी सन १९७८ को कभी दवा नहीं खाई अन्तिम समय जब विवश हुई तो हमने दवाई खाने को जोर दिया तो कहने लगी यदि दवाई खिलाना ही चाहते हो तो सराय वाले मोटे वैद्य जी को बुलाओ - वैद्य जी मेरे घर गये और माताजी को दवाई दी।

नक्तंदिनानि मे यान्ति कथंभूतस्य सम्प्रति ।
दुखभाङ्न भवत्येवं नित्यं सन्निहितस्मृतिः ।।

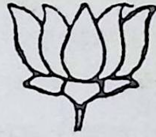
"वाग्भट"

मेरे संस्मरण

भुवन चन्द्र जोशी

वैद्य त्रिगुणा जी से मेरा सम्बन्ध लगभग तीन दशक से चला आ रहा है। जबसे वे दक्षिण दिल्ली में चिकित्सा कार्य करते थे। उनके नाड़ी ज्ञान और सफल चिकित्सा के सम्बन्ध में मैं सुना करता था। इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के कार्यकलाप में जब उन्होंने भाग लेना प्रारंभ किया तभी से मेरा उनसे निकट सम्बन्ध स्थापित हुआ। उनमें मुझे नेतृत्व की प्रतिभा दृष्टिगोचर हुई। उनके आने से सभा की गतिविधि उत्तरोत्तर बढ़ती गई। सर्व प्रथम सेमिनारों का क्रम प्रारम्भ हुआ। हृद्रोग, रक्तचाप, कामला आदि पर प्रत्येक वर्ष अच्छे स्तर के सेमिनार सम्पन्न हुये। धन्वन्तरि जयंती का भी विशाल विशालतर रूप होने लगा। इस महानगर में आयुर्वेद की आवाज बुलन्द हुई। जयपुर महासम्मेलन के अधिवेशन के उपरान्त उनका महासम्मेलन से निकट सम्बन्ध स्थापित हुआ। उनमें अच्छे संगठन कर्ता के गुण विद्यमान हैं अतः महासम्मेलन के संगठन में रुचि लेकर उन्होंने उसे क्रमबद्ध किया जिससे कार्य शैली में सुधार हुआ। उनके कार्य काल में सभागार का भवन जिससे मैं भी सम्बद्ध था पूरा हुआ, एक और नये भवन की नींव पड़ी जिसका निर्माण चल रहा है। महासम्मेलन की बिगड़ती आर्थिक दशा उनके ही प्रयासों से आज सुदृढ़ हुई है। शासकीय परामर्शदातृ समितियों में चयन होकर उन्होंने आयुर्वेद की गतिविधि को तीव्र किया है। फलतः आज आयुर्वेद विकासोन्मुख प्रतीत होता है। यह अत्यन्त हर्ष की बात है कि उनकी आयुर्वेद सेवाओं के लिये इसी वर्ष उनको पद्मभूषण सम्मान से अलंकृत किया गया है। त्रिगुणा जी को आयुर्वेद से इतना लगाव है कि उनका अधिक समय इसी चिंतन में रहता है कि कैसे आयुर्वेद अपने प्राचीन गौरव को प्राप्त करे। देश-विदेश में भ्रमण कर उन्होंने आयुर्वेद का संदेश कोने-कोने में पहुंचाया है। अपनी कुशल चिकित्सा से उन्होंने समाज के सभी वर्गों को प्रभावित किया है। मेरे देखते-देखते उनका व्यक्तित्व बहुत ऊंचा उठ गया है और यही समय है जब उनके वर्चस्व से हम आयुर्वेद की सर्वांगीण उन्नति की दिशा में बढ़ रहे हैं। योग्य गुरु साधक को आत्म दर्शन कराता है। कुशल सेना नायक सेना को विजय श्री दिलाता है। सुयोग्य नेता देश को उन्नति पथ पर ले जाता है। नेता सदा नहीं जन्म लेते। वे बड़े समय के अन्तराल से उपलब्ध होते हैं। त्रिगुणा जी का नेतृत्व संयोग से हमको मिला है। उनके निदेशों से हमको लाभ उठाने चाहिए। हम आशा करते हैं कि वे चिरायु रह कर आयुर्वेद को उन्नति के पथ पर अग्रसर करेंगे। भावी पीढ़ियां उसे विश्व मान्य बनावेंगी।

विद्यया वपुषा वाचा
नरः प्राप्नोति मान्यताम ।
त्रिभिरेतैः समाश्लिष्टैः
व्रह्मणा त्रिगुणा कृतः ॥



भारतीय जनता पार्टी

वैद्य श्री त्रिगुणाजी का एक समर्पित व्यक्तित्व

वैद्य शिरोमणि पं० बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी को सम्मानित करने का निर्णय स्तुत्य है। मेरा उनका संबंध इतना घनिष्ठ और पारिवारिक है कि उनके महान व्यक्तित्व के बारे में कुछ लिखते हुए संकोच होता है कि कहीं उसे अतिशयोक्ति ही न समझ लिया जाए। तीन चार घटनाओं का उल्लेख मात्र करना ही उपयुक्त होगा।

बात १९७३ की है। उन दिनों मैं दिल्ली का महापौर था। डेढ़ दो वर्षों से लगातार सिर में हल्का-हल्का दर्द रहता था। काम के प्रति अरुचि भी रहती थी। दिल्ली नगर निगम के अपने अस्पताल भी थे और उनमें हर रोग के विशेषज्ञ चिकित्सक भी। उनका इलाज चलता रहा किन्तु लाभ नहीं हुआ। रोग किसी की समझ में नहीं आया। तीन दिन तक हस्पताल में भर्ती रखकर कई तरह की पड़ताल की गई। किन्तु, सब परीक्षणों के बाद भी कष्ट का सही निदान नहीं हो पाया। जब नाक का एक्सरे लिया गया तो तस्वीर कुछ धुन्धली सी आई। निष्कर्ष निकला कि शायद धमनियों में जुकाम जम गया है। नाक में छेद कर उसमें से पानी डाल मार्ग का प्रक्षालन किया गया। परन्तु जब उससे विशेष लाभ नहीं हुआ तो सुझाया गया कि कुछ दिनों बाद बड़ा आप्रेशन करना होगा। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में एक वर्ष से अधिक समय लगा।

संयोग ऐसा हुआ कि उसी दिन हस्पताल से लौटते ही त्रिगुणा जी एक व्यक्ति को उसके निगम सम्बन्धी काम में सहायतार्थ मेरे पास लाए थे। जब मैंने उन्हें विनोद से कहा कि उनके रहते मुझे डेढ़ वर्ष से ऐसा कष्ट तो नहीं होना चाहिए था तो उन्होंने अपनी बात बीच में ही छोड़ दी और मेरे बार-बार मना करने पर भी साथ आए व्यक्ति को बाहर भेज दिया। मेरी नाड़ी पर हाथ रखते ही उसी क्षण उन्होंने कहा कि यह तो बिगड़ा हुआ है जुकाम। कष्ट के सम्बन्ध में तब तक मैंने तो उन्हें कुछ भी नहीं बताया था। अगले दिन मेरे एक मित्र के हाथ उन्होंने दवा भिजवा भी दी। ८-१० दिनों में ही मेरा डेढ़ वर्ष पुराना सिर दर्द ठीक हो गया। इसे त्रिगुणा जी और आयुर्वेद विज्ञान क चमत्कार ही मानना चाहिये कि विशेषज्ञ चिकित्सकों को जिस रोग का पता लगाने में डेढ़ वर्ष लगे उसे आधे मिनट से भी कम समय में त्रिगुणा जी ने खोज निकाला।

उसके कुछ मास बाद अचानक मेरे बाएं कन्धे के पास ऐसी भयंकर पीड़ा उठी कि मेरे लिए उठना बैठना तो दूर हिलना तक संभव नहीं रहा। पुनः सभी विशेषज्ञ चिकित्सक आए। टीके, गोलियां, मालिश और बिजली के आधुनिकतम उपकरणों द्वारा उपचार के बाद भी कुछ लाभ नहीं हुआ। विशेषज्ञों का निदान था कि रीढ़ की हड्डी की एक घुण्डी थोड़ी टेढ़ी हो गई है और वही इस अपार पीड़ा का कारण है। त्रिगुणा जी को किसी ने मेरे अस्वस्थ होने का समाचार दिया तो वह घर पर मेरा हाल पूछने आ गए। नाड़ी देखते ही उन्होंने कहा कि इलाज भलेही मैं विशेषज्ञों से करवाता रहूं किन्तु वह उन विशेषज्ञों के निदान से बिलकुल सहमत नहीं हैं। उन्होंने विनोद में यह भी कहा कि एक्सरे की जिस प्लेट के कारण विशेषज्ञों ने यह परिणाम निकाला है उसे कूड़े की टोकरी में फेंक देना चाहिए, उनका कहना था कि पीड़ा, दिमाग की थकावट के कारण उससे

संबन्धित एक सिरा में सूजन आ जाने की वजह से है। उन्होंने उसी समय मुझे यह भी कहा कि ठीक तो मैं उनकी दवा से ही हूंगा और वह भी आठ दिनों के अन्दर। जब ४८ दिन बीत गए और पीड़ा नहीं गई तो स्वयं डाक्टरों ने ही कहा कि वैद्य जी की दवा लेकर भी देख लेना चाहिए। त्रिगुणा जी से दवा मंगवाई और ठीक ७ दिन बाद वह दर्द गायब हो गया। उस दिन के बाद मैंने कभी किसी और से दवा नहीं ली।

१९७८ में महानगर पार्षद श्री सोम नाथ की पत्नी के बहुत बीमार होने का समाचार मिला तो मैंने उन्हें त्रिगुणा जी के बारे में बतलाते हुए सलाह दी कि यदि वह उचित समझें तो उनकी पत्नी को त्रिगुणा जी के पास ले चलते हैं। उन्होंने पत्नी से पूछकर उत्तर देने की बात कही। उनकी पत्नी ने सम्भवतः आयुर्वेदिक चिकित्सा करवाना स्वीकार नहीं किया। कोई ३-४ मास बाद मालूम हुआ कि उनकी पत्नी अति नाजुक स्थिति में पं० पन्त हस्पताल में भर्ती हैं। मैं उन्हें देखने गया तो वह बहुत कष्ट में थीं। डाक्टरों ने जवाब दे दिया था और श्री सोम नाथ को सलाह दी कि वह उन्हें घर ले जाएं। कमरे से बाहर निकलने पर श्री सोम नाथ मुझसे अनुरोध करने लगे कि मैं उनकी पत्नी को वैद्यराज त्रिगुणा जी को दिखा दूं। धर्म संकट यह था कि हस्पताल में भर्ती हुए रोगी के उपचार के लिए कोई वैद्य तो क्या बाहर का कोई डाक्टर भी नहीं आ सकता था। इसी मामले में परामर्श के लिए हस्पताल ने दिल्ली के ३-४ अन्य चिकित्सा विशेषज्ञों को बुला रखा था। मुझे उन्होंने अपनी सर्वसम्मत राय बताई कि रोगी के जिगर का कैन्सर है और वह इतना बिगड़ चुका है कि अब उसे बचाने के लिए दवा से अधिक दुआ की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में चिकित्सा अधीक्षक ने वैद्य जी के बुलाए जाने पर आपत्ति नहीं की। त्रिगुणा जी मेरे अनुरोध को टाल नहीं सके और अनिच्छा से क्यों न हो, किन्तु तुरन्त हस्पताल आ गए। डाक्टर अभी भी मेरे पास खड़े बातें कर रहे थे। वैद्य जी रोगी को देखकर जब कमरे से बाहर निकले तो पर्याप्त दुखी थे। उनका कहना था कि उन्हें बहुत विलम्ब से बुलाया गया है। उन्होंने बहुत विनम्रता से उपस्थित डाक्टरों से कहा कि वह उनके निदान से पूर्णतः असहमत हैं। उन्होंने कहा कि किसी को उनके साथ दवा लेने के लिए भेजा जाए और पहली खुराक तुरन्त दे दी जाए। यदि उस से थोड़ा भी लाभ प्रतीत हुआ तो रोगी अवश्य बच जाएगा। श्रीमती सोमनाथ ५-६ दिनों में भली चंगी हो गई। १४ वर्ष बाद अब वह अपना गृहस्थ अच्छी तरह चला रही है।

१९७८ में लन्दन से मेरे एक मित्र श्री प्रताप भाई सपत्नीक दिल्ली आए थे। उन्हें पेट का बहुत पुराना रोग था। स्व० वैद्यराज श्री रामगोपाल शास्त्री जी के उपचार से वह ठीक हो गए किन्तु उपचार अभी जारी था। अनेक बार चर्चा में श्री त्रिगुणा जी के नाम तथा उनके गुणों का उल्लेख आना स्वाभाविक था। उन्होंने आग्रह किया कि उनकी पत्नी का परीक्षण श्री त्रिगुणा जी से करवाया जाए। मैं उन्हें श्री त्रिगुणा जी के पास ले गया। उनकी पत्नी की नाड़ी पर हाथ रखते ही त्रिगुणा जी ने कागज पर कुछ लिखना प्रारम्भ कर दिया। जब लिख चुके तो प्रताप भाई की पत्नी को उन्होंने अपनी बीमारी के बारे में बतलाने को कहा। श्रीमती प्रताप भाई जब अपनी बात पूरी कर चुकी तो त्रिगुणा जी ने कागज पर जो लिखा था, वह उन्हें पढ़कर सुनाया। वैद्यराज ने उन्हें जो कुछ बतलाया वह सुनकर प्रताप भाई और उनकी पत्नी दोनों चकित रहे। वास्तव में त्रिगुणा जी ने

श्रीमती प्रताप भाई के रोग के बारे में जो कुछ लिखा था वह न केवल स्वयं उन द्वारा बताई बात से कहीं अधिक था बल्कि उन्होंने तो यह भी बतला दिया था कि रोग कुछ वर्ष पुराना भी था और प्रसूति के उपरान्त शुरू हुआ था। यह पूर्णतः सच था। २५-३० वर्षों से इग्लैण्ड में रहने वाले प्रताप भाई जो लन्दन के विभिन्न आधुनिकतम-सुविधा युक्त हस्पतालों से परीक्षण करवा चुके थे, इस चमत्कार से दंग रह गए।

वैद्य शिरोमणि पं० बृहस्पति देव त्रिगुणा का उल्लेख आने पर मुझे प्रसिद्ध बांगला उपन्यासकार ताराशंकर बन्द्योपाध्याय द्वारा रचित उनके उपन्यास "आरोग्य निकेतन" के नायक उन "वैद्यराज" का स्मरण हो आता है जो आयुर्वेद की साक्षात् प्रतिमूर्ति थे। प्रभु भक्ति और सन्त सेवा में लीन, दरिद्र नारायण की सेवा में सतत रत, विनम्रता की मूर्ति, विद्वता का अभिमान जिन्हें रति भी छू नहीं पाया, ऐसे हैं त्रिगुणा जी। उन्होंने आयुर्वेद, हिन्दु धर्म और भारतीय संस्कृति की महानता की पताका को विश्वभर में फहराने के अपने भागीरथ प्रयत्नों में कभी अवरोध नहीं आने दिया। वैद्यराज त्रिगुणा जी एक निष्काम योगी की तरह अपनी साधना में लगे हैं। प्रभु उन्हें अपने व्रत को निभाने का सार्मध्य प्रदान करें

भवदीय,

Amin

(केदारनाथ साहनी)
11, अशोक रोड, नई दिल्ली-110001
● दूरभाष : 3782163, 384531

भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ।
चिकित्सितस्य निर्दिष्टं प्रत्येकं तच्चतुर्गुणम् ॥

वैद्य श्री त्रिगुणा जी से सम्बद्ध कुछ स्मृतियां

वैद्य जागे राम गुप्ता

वैद्य शिरोमणि बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के ग्रंथ में, उनके संबन्ध में अपने संस्मरण देने में मुझे हार्दिक प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। त्रिगुणा जी से मेरा निकट संबन्ध लगभग तीन एक दशक से रहा है। जब वे भोगल में चिकित्सा कार्य करते थे में उनके नाड़ी ज्ञान और कुशल चिकित्सा के संबन्ध में सुनता रहता था। उन्होंने जब से श्री इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा में भाग लेना प्रारम्भ किया मैं उनके संपर्क में आया। उनमें मैने बहुमुखी प्रतिभा का अनुभव किया और वे कभी न कभी प्रसिद्धि प्राप्त करेंगे ऐसा मेरे मन में विचार आता था। उनकी सूझबूझ, संगठन शक्ति, सक्रियता को मैं देखा करता। उनकी कर्मठता से मैं प्रभावित था। इन्द्र प्रस्थीय वैद्य सभा को इस महानगर में एक महान् संस्था का रूप देने में उनका बहुत बड़ा योगदान है। १९४७ के विभाजन के बाद वैद्य सभा को सुसंगठित कर उन्होंने उसको उत्तरोत्तर विशाल बनाने में अथक परिश्रम किया। सभा के कार्यकलाप को विविधता दी। सेमिनारों की परंपरा डाली जिसके अंतर्गत हृदय रोग, रक्तचाप, कामला, मधुमेह आदि पर विद्वत्तापूर्ण और ज्ञानवर्धक चर्चा हुई। धन्वन्तरि जयंती को इस महानगर में एक विराट उत्सव का स्वरूप दिया। उनके कार्यकाल में जनता पार्टी के शासनकाल में चिकित्सक दल इस प्रांत से बाहर देश के पूर्वांचल और मध्य भारत में अभिन्यास ज्वर व कामला के प्रकोप के चिकित्सार्थ गये और सफलता प्राप्त की जिसकी प्रशंसा स्वयं भूतपूर्व प्रधानमंत्री मान्यवर मोरारजी देसाई ने की।

आयुर्वेद महासम्मेलन से संबन्धित होकर तथा दो बार अखिल भारतवर्षीय अध्यक्ष पद सुशोभित कर उन्होंने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। प्रांतीय संगठनों को क्रियाशील बनाया तथा जिला सम्मेलनों की परंपरा प्रारंभ की। आज जिले-जिले में सम्मेलन होने लगे हैं जिससे आयुर्वेद का शंखघोष जन जन तक पहुंच रहा है। उनके कार्यकाल में महासम्मेलन की स्थिति सुदृढ़ हुई है। केन्द्रीय शासन ने उनकी योग्यता और कुशल चिकित्सा से प्रभावित होकर उनको केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर की गवर्निंग बाडी में मनोनीत किया जहां रहकर उन्होंने आयुर्वेद को प्रगति के पथ पर ले जाने का प्रयत्न किया और अब भी कर रहे हैं। उनको आयुर्वेद में उत्कृष्टता के लिये इसी वर्ष पद्मभूषण सम्मान से सम्मानित किया गया।

मैं तो उहें एक कर्मयोगी मानता हूँ। उन्होंने कर्म के तत्व को समझा है। उनमें सब कुछ कर सकने का सामर्थ्य है, ऐसा मुझे प्रतीत होता है।

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु सयुक्तः कृत्स्न कर्म कृत् ।।

उनके संबन्ध में भगवद गीता का यह कथन चरितार्थ होता है। त्रिगुणा जी के मधुर स्वभाव, विनम्रता, कार्य शक्ति, शालीनता ने उन्हें लोकप्रिय बनाया है। वे युवकों के प्रेरणा स्रोत रहे हैं। वैद्य समाज को उनसे बड़ी आशाएं हैं। वे शतायु रहकर आयुर्वेद को गौरवान्वित करेंगे, ऐसी मुझे पूर्ण आशा है।

पूर्वाभिभाषी सुमुखः सुशीलः करुणामृदुः ।
नैकः सुखी न सर्वत्र विश्रब्धो न च शङ्कितः ।।
"वाग्भट"

आचार्य पं० बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के सान्निध्य में :-

प्रो. सी. बी. दुबे डी. ए. वाई. एम. पी. एच. डी.
आयुर्वेद एवं यूनानी सेवा निदेशालय,
उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

अविस्मरणीय संस्मरणनाम से ही बृहस्पति हैं जो, त्रिगुणात्मक शक्ति को आत्मशात् कर लिया है जिसने ऐसे आचार्य प्रवर, पीयूषवाणी वैद्य श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा जी के विषय में कुछ कहना मेरे जैसे अल्पज्ञ के लिए छोटा मुंह बड़ी बात होगी। त्रिगुणा का सानिध्य मुझे प्रथम १९७४-७५ में देवरिया, गोरखपुर में फैली महामारी हतौजस (मस्तिष्क ज्वर) जापानी वाइरल इनकेफलाइरिस के रोगियों के उपचार एवं चिकित्सा के सम्बन्ध में हुआ था। उस समय आयुर्वेद के चिकित्सकों में फैले अनेक भ्रमों का निराकरण आचार्य जी ने किया तथा जो शास्त्र सम्मत उपचार उन्होंने सुझाये उससे अनेक रोगियों को लाभ हुआ। इसमें लखनऊ राजकीय आयुर्वेदिक कालेज की टीम, दिल्ली से आये अनेक विद्वान् जैसे आचार्य भगवान दास, वैद्य श्री गौरी लाल चानना जी तथा लखनऊ से स्वयं मैं, वैद्य आर० के० मिश्र, वैद्य श्री डी० एस० बाजपेई, उपनिदेशक आयुर्वेद, गोरखपुर मेडिकल कालेजके प्रधानाचार्य, वरिष्ठ चिकित्सक इत्यादि ने भाग लिया, किन्तु सभी का पथ प्रदर्शन आचार्य जी ने ही किया। तत्पश्चात् आचार्य जी से वाराणसी, हरिद्वार, लखनऊ एवं लखनऊ के सी० डी० आर० आई में आयोजित कामला पर हुई विद्वत् परिषद् गोष्ठी में भी हमेशा कुछ न कुछ सीखने, ज्ञानने को मिला। केन्द्रीय औषधि अनुसन्धान संस्थान में आचार्य प्रवर ने अपने मुख श्री से विद्वतापूर्ण जो भाषण दिए, जिसे सुनकर संजय गांधी स्नातकोत्तर चिकित्सा संस्थान के विद्वान्, किंग जार्ज मेडिकल कालेज के विद्वान् अनेक आयुर्वेद के विद्वान्, अन्वेषक, वरिष्ठ चिकित्सक भी आश्चर्यचकित रह गये।

आचार्य प्रवर की आयुर्वेद में निष्ठा, कर्मठता, विद्वत्ता मात्र भारत में ही नहीं बल्कि संसार के अनेक देशों में विख्यात है। इस समय जबकि आयुर्वेद :- आयुर्वेद लोगों से ही गतिहीन, दिशाहीन हो रहा है ऐसे व्यक्तित्व की आयुर्वेद को आवश्यकता है। इन्होंने आयुर्वेदीय चिकित्सा को एक दिशा दी है। भूत भावन भगवान् भूतनाथ से प्रार्थना है आयुर्वेद के रक्षार्थ महान्, आदरणीय व्यक्ति को दीर्घायु प्रदान करें।

27/1/92

(प्रो० सी० बी० दुबे)
डी०एवाई०एम० पी०एच०डी०
अपर निदेशक (शिक्षा)
आयुर्वेदिक एवं यूनानी सेवाएँ, उ० प्र०
लखनऊ

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानञ्च तञ्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥
"चरक"

वेद और आयुर्वेद

राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान के तत्वाधान में कोयम्बटूर में आयोजित वैदिक सम्मेलन में राजवैद्य श्री वृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी ने वेद और आयुर्वेद के सम्बन्ध में अपना सारगर्भित अध्यक्षीय भाषण प्रस्तुत किया था । जिसे हम पाठकों के ज्ञार्नाजन हेतु राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान के सौजन्य से साभार प्रकाशित कर रहे है । उक्त लेख में श्री त्रिगुणा जी ने वेद और आयुर्वेद के बहुत सूक्ष्म से सूक्ष्म तत्वों को सामञ्जस्य स्थापित करते हुए प्रस्तुत किया है ।

–सम्पादक

सर्व प्रथम मैं समस्त आयुर्वेद जगत् की ओर से वेद विद्या प्रतिष्ठान के मेम्बर सेक्रेटरी श्रद्धेय श्री किरीट जोशी जी का अभिवादन करता हूँ । आपके हृदय में विद्याओं की अधिष्ठात्रीं भगवती सरस्वती का निवास है । वाग्वादिनी की पवित्र मानसिक प्रेरणा से 'वेद और आयुर्वेद सम्भाषा परिषद्' आयुर्वेद समाज के लिये अमृत विद्या 'आयुर्वेदो ऽमृतानां' की सार्थक जिज्ञासा का आविर्भाव कराना है । परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री मंडन मिश्र जी द्वारा मुझे इस परमपुनीत वेद और आयुर्वेद सम्भाषा परिषद् में सम्मिलित होने का प्रोत्साहन प्राप्त हुआ । प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित यह तद्विद्य सम्भाषा परिषद् सराहनीय एवं शोभनीय प्रयास है ।

तदविद्य संभाषाहि ज्ञानाभियोग सहर्षकरी भवति (चरक) सम्पूर्ण विद्याओं के मूल स्रोत वेद ही हैं । परम्परा से प्राप्त प्रचलित आयुर्वेदिक चिकित्सा विज्ञान का उद्गम स्रोत भी वेद ही है । 'परं च आयुर्वेद सनातन अपौरुषेय' है यह ज्ञान ईश्वरीय है, सदैव सत्य एवं शाश्वत है । 'सत्यं ज्ञानं' अनन्तं ब्रह्म यह प्राण विद्या, जीवन विद्या बहु प्रकार से घोषित ब्रह्म विद्या है । आयुर्वेद विद्या की स्रोतस्विनी ब्रह्ममुख से ही प्रवाहित हुई ।

ब्रह्मणा हि यथाप्रोक्तम् आयुर्वेदं प्रजापतिः
जग्राह निखिलेनादौ अश्विनौ तौ पुनस्ततः ।। चरक १-१-४-५

इह खलु आयुर्वेदो नाम उपांगम् अथर्ववेदस्यानुत्पाद्यैव प्रजाः
श्लोकशतसहस्रमध्यायसहस्रं च कृतवान् स्वयम्भूः ।।

सुश्रुतमतानुसार आयुर्वेद अथर्ववेद का उपांग सिद्ध होता है, जबकि ब्रह्ममुख से उपस्थित एक हजार अध्यायों और एक लाख श्लोकों की रचना इस समृद्ध सृष्टि की उत्पत्ति से पहले ही हुई । लगभग छः हजार श्लोक और कुछ हजार गद्य पंक्तियों युक्त अथर्ववेद का उपांग कैसे माना जाये 'अंगमेव अल्पत्वाद् उपांगम्' इस उक्ति से भी आयुर्वेद एक महान् भण्डार होने से उपांग कैसे ?

साधारणतया वेदांग का प्रयोग शिल्प, कला, व्याकरण, छंद ज्योतिष और निरुक्त इन छः अंगों के अर्थ में जाना जाता है । वृहद् वाग्भट के मतानुसार आयुर्वेद उपांग नहीं अपितु उपवेद है ।

अष्टांग संग्रह १-१-८ पर महाभारत में चार उपवेदों का वर्णन है यथा-आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्ववेद तथा अथर्ववेद । ब्रह्मवैवर्त पुराण में ऋगयजुः सामाथर्व चार वेदों की रचना के बाद स्वयं ब्रह्मा द्वारा पंचमवेद आयुर्वेद की रचना हुई ।

ऋग्यजुः सामाथर्वाख्यान् दृष्ट्वा वेदान् प्रजापतिः
विचिन्त्य तेषां अर्थं वै आयुर्वेदं चकार हि
कृत्वा तत् पंचमं वेदं भास्कराय ददौ विभुः
स्वतंत्र संहितां तस्माद् भास्करश्च चकार सः ।।

ब्र.वै.अ. १६ अरोग्यंभास्करादिच्छेत् ।

चरक ने आयुर्वेद को वेदों में श्रेष्ठ, स्वतंत्र वेद प्रतिष्ठित किया है । आयुर्वेद जीवन प्रदान करता है । यह जीवन ही सारे भोगों, सुख एवं ब्रह्म के ज्ञान का आधार है ।

भास्तमः सत्यमनृतं वेदाः कर्म शुभाशुभम् ।
नस्युः कर्ता च बोद्धा च पुरुषो न भवेद् यदि ।।
नाश्रयो न सुखं नार्तिर्न गतिर्नागतिर्नवाक् ।
न विज्ञानं न च शास्त्राणि न जन्म मरणं न च ।।
न बन्धो न च मोक्षः स्यात् पुरुषो न भवेद् यदि ।
कारणं पुरुषस्तस्मात् कारणज्ञैरुदाहृतः ।।

चरक सं०

अतः सर्वतः जीवन 'पुरुष' के ब्रह्मज्ञान का प्रतिष्ठान होने से जीवन का लक्षण अनामयता, चिरजीवन का देने वाला आयुर्वेद ही है । 'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' के अनुसार शरीर ही लोक-परलोक का मूल आधार है । अतः आयुर्वेद को निःसंदेह प्राण देने वाला सर्वमान्य पंचमवेद ही मानना युक्तिसंगत है । अन्य वेदों में सह अस्तित्व रखने से एवं संबन्धित होने से वेदों का उपांग मानने की प्रथा बन गई है । यहां वेदों में तंत्र, मंत्र, यज्ञ, अनुष्ठान से रोग निवारण की विशेष साम ग्री है । वहां आयुर्वेद में रोगोपचार के लिये औषधि चिकित्सा एवं दीर्घायु की प्राप्ति के लिये रसायनों का भरपूर प्रयोग है ।

१. स्वयम्भुः ब्रह्मा प्रजाः सिसृक्षुः प्रजानां परिपालनार्थं आयुर्वेदमग्रे असृजत ।

काश्यप सं. निदान स्थान

२. तस्मात् ब्रूमः ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेदेभ्यः पंचमोऽयं आयुर्वेदः (काश्यप सं.)

वेदानां अतीव पुराणत्वं अद्यापि सर्वेषां पुरातत्वविदां समाजेन न प्रमाख्यातम् धार्मिक भारतीया आर्यास्तु सकल विद्यानिधानं यत्ज्ञानज्योति ःसर्गादौ परमेश्वरेण मनुष्यहिताय आदि ऋषि द्वारा प्रकाशितं आसीत् तद् एव वेद इति मन्यन्ते, एवं च वेदानां महत्वं सकलमानवजातिहिताय वर्तते । वेदा एव सर्वजगत् व्याप्तज्ञानानां निधिभूता मूलभूताश्च । वेदान् सनातना मन्यमाना केवलं प्रतिसर्गं प्रतियुगं ऋषिभिः तेषां दर्शनं मन्यन्ते नोत्पत्तिम् ।।

ऋग्वेद, अथर्ववेद के एक-एक मन्त्र आयुर्वेद हैं। यजुः साम भी आयुर्वेद के लिये बहुत सामग्री रखते हैं। निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता है कि यत्र तत्र प्रकीर्ण रूप से आयुर्वेद का वर्णन उपलब्ध है। यद्यपि रोगों का वर्गीकरण चरक सुश्रुत के समान प्राप्त नहीं होता। यथा-निदान, इन्द्रिय, चिकित्सा, कल्पस्थान आदि। अतः उपरोक्त ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित चारों वेदों में उपस्थित समस्त जीवन विद्या अर्थात् प्राण विद्या को पंचमवेद के रूप में स्थापित किया।

पुनश्च आयुर्वेद में आहार विहार से उत्पन्न व्याधियों के लिये उपचार, औषध द्रव्य से बतलाया गया है। तथा अधर्म, पाप, अभिशापजनित व्याधियों के लिये विशेषतया अथर्ववेद ऋग्यजुः साम में भेषज उपचार वर्णित है। उदाहरणतया चरक भेषज द्वारा दोनों प्रकार की व्याधियों की चिकित्सा कहते हैं क्योंकि भेषज प्रायश्चित का पर्यायवाची शब्द है। आयुर्वेद में आयु, औषध, पथ्य का मानव शरीर पर प्रभाव एवं अनुभव सिद्ध क्रियाओं का मुख्यतया वर्णन है।

रोगों की सामान्य सम्प्राप्ति

द्विप्रकाराः व्याधयः, आहारनिमित्ताः अशुभनिमिताश्चेति ।
तत्र आहारसमुत्थानां आयुर्वेदः अधर्म समुत्थानां शास्त्रमिदं उच्यते ।।

कौशिक सूत्र २५-२ पर दारूल भट्ट की टीका में यह वर्णन है।

यदातु रक्तवाहीनि रससंज्ञावहानि च पृथक् पृथक् समस्ता वा स्रोतांसि कुपितामलाःमलिनाहारशीलस्य रजोमोहावृतात्मनः प्रतिहत्यावतिष्ठन्ते जायन्ते व्याधयस्तदा ।।

(च.सू.अ.२४ में २५-२६)

रोगस्तु दोषवैषम्यम् दोष साम्यमरोगता !!

विकारो धातुवैषम्यं, साम्यं प्रकृतिरुच्यते सुख संज्ञकमारोग्यं विकारो दुःखमेव च ।।

चरक सूत्र अ. ९ श्लोक ४

रुजति पीडयति इतिरोगः न. विद्यते रोगो यस्य इति अरोगः अरोगस्य भावं आरोग्यम् । इदं च धर्मार्थकाममोक्षाख्य चर्तुविध पुरुर्षार्थ सिद्धेः प्रधानं कारणं आरोग्यैकसाध्यत्वात् तेषां ।।

श्रेयस्कामेन अतो अवश्यं अध्येयोऽयम् आयुर्वेदः अतः 'आरोग्यं मूलमुत्तमम्' ।।

पुनश्च- आयुः कामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम्।
आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः ।।

रोग दोष प्रकोप जन्य विकार है। व्याधि, दुःख, आमय, आतंक, गद, यक्ष्म ये शब्द रोग के पर्यायवाची हैं।

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ।।

सु.सू.अ.१५

इसके विपरीत यह जीवन अस्वस्थ अथवा रोगी कहलाता है।

वेदों में आयुर्वेद के अष्टांग विभाग-

ब्रह्मा द्वारा उपदिष्ट आयुर्वेद शल्य, शालाक्य, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतंत्र, रसायन, वाजीकरण नामक आठ अंगों में विभक्त किया गया है।

१. शल्य :- शल्य शब्द शल् धातु से निष्पन्न होता है। अर्थात् जिससे शरीर और मन को कष्ट हो उन सभी को शल्य कहते हैं। मनः शरीरआबाधकराणि शल्यानि सु.सू. ७-४ इनका उपचार औषधि एवं शस्त्रकर्म आदि द्वारा बताया गया है।

२. शालक्य तंत्र :- ऊर्ध्वाङ्ग-आँख, कान और गला आदि में स्थित रोगों का शल्यकर्म एवं चिकित्सा की जाती है।

३. कायचिकित्सा :- काय शब्द का अर्थ अग्नि होता है। प्रचलित में देह को भी काया कहते हैं। अतः शरीर संबन्धी व्याधियों की चिकित्सा का वर्णन है।

४. भूत विद्या :- इस में भूत, पिशाच, राक्षस, ग्रह आदि द्वारा उत्पन्न व्याधियों की चिकित्सा है। इस चिकित्सा को दैव-व्यपाश्रय चिकित्सा भी कहते हैं।

५. कौमारभृत्य :- इस में बाल चिकित्सा, बालकों के सभी रोगों का समावेश करके उनके निदान चिकित्सा का वर्णन है।

६. अगदतंत्र :- इसके अन्तर्गत स्थावर, जंगम एवं कृत्रिम विषों से उत्पन्न रोगों की चिकित्सा है।

७. रसायन तंत्र :- यज्जरा व्याधिविध्वंसि भेषजं तद् रसायनम्।
दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः।
पभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलं परम्।।

वाक्सिद्धिं प्रणतिं कान्तिं लभते ना रसायनात्।
लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम्।।

रसायन विद्या से जरा अर्थात् बुढ़ापा एवं व्याधि को रोकना अभिप्राय है। बल, पुष्टि, वर्ण, परमहर्षयुक्त दीर्घ जीवनप्रद औषधियों के प्रयोग का उल्लेख है।

८. वाजीकरण :- "वाजः शुक्र" अवाजी वाजीक्रियते येन तद् वाजी करणम्" -वाजीकरण में वाज का अर्थ शुक्र है। शुक्ररहित अवाजी को शुक्र संपन्न वाजी बनाना ही वाजीकरण है। अर्थात् पुंस्त्व, शक्ति एवं वीर्यवर्द्धक चिकित्सा का उल्लेख है।

आयुर्वेद क्या है :-

उपनिषदों तथा वेदों में आयुर्वेद नाम से कोई शब्द उपलब्ध नहीं। प्राण विद्या, ब्रह्म विद्या

आदि शब्द प्राप्त हैं। अतः आयु संबन्धी ज्ञान होने से आयुर्वेद की पृथक् सत्ता की उपस्थिति ही इसका कारण है। यह भी पूर्ण सत्य है कि अथर्ववेद आयुर्वेद के समान चिकित्सा के रूप में फलदायी है। अग्निवेश संहिता में आयुर्वेद शब्द का अर्थ आयुष् का ज्ञान है।

Perfect knowledge of life. A sensible way of living based on Knowledge.

हिताहितं सुखं दुःखं आयुस्तस्य हिताहितम्
मानं च तच्च यत्रोक्तम् आयुर्वेदः स उच्यते ।।
आयुर्वेदयति इति आयुर्वेदः च.सू.अ. ३०

आयुर्हिताहितं व्याधिं निदानं शमनं तथा
विद्यते यत्र विद्वद्भिः आयुर्वेद स उच्यते ।।

इस तरह चरक में आयु को चार प्रकार विभक्त किया गया है। सुखायुः, दुःखायुः, हितायुः, अहितायुः। समस्त प्राणियों की हितेच्छा, सत्यवादी, परिश्रमी, परधन, परस्त्री की इच्छा न रखना, सर्व प्राणियों में आत्मवत्भाव रखना, सदाचार, शिष्टाचार का पालन, दानी, विद्वज्जनों का सेवक, मधुरभाषी ऐसी आयु हितायु होती है। इन सबके विपरीत अहितायु कही जाती है।

सुखायु :- जो आयु शारीरिक, मानसिक व्याधियों से पीडित नहीं होती एवं बल, वर्ण, परमहर्ष पुष्टियुक्त होती है वही सुखायु होती है इसके विपरीत दुःखायु है।

इन चारों आयुओं का पूर्ण ज्ञान तथा आयु का मान निश्चित करना ही आयुर्वेद है।

हेतुलिङ्गौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम् त्रिसूत्रम् शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः ।।
च.सं. १-१-२४-२५

सोऽनन्तपार त्रिस्कन्ध आयुर्वेद है। अतः जीवन सम्बन्धी पूर्ण ज्ञान ही आयुर्वेद है।

विश्व में प्राणियों को रुग्ण देखकर भारद्वाज आदि महर्षियों द्वारा प्रचलित प्राप्त आयुर्वेद विद्या को इन्द्र से ग्रहण करके प्रकाशित किया गया।

धर्मार्थं नार्थकामार्धम् आयुर्वेदो महर्षिभिः ।
प्रकाशितो धर्मपरैरिच्छद्भिः स्थानमक्षरम् ।।
च.चि.र.अ.४ श्लोक ५७

अतः वर्तमान आयुर्वेद को महर्षि आयुर्वेद कहना ही यथार्थ सम्मत हैं।

अष्टांग आयुर्वेद विशेषज्ञ :-

धन्वन्तरि, अश्विनी कुमार, सुश्रुत और भालुकी शल्य, शालक्यके विशेषज्ञ, कश्यप, कौमारभृत्य अगदतन्त्र के विशेषज्ञ, भारद्वाज, पुनर्वसु आत्रेयकायचिकित्सा विशेषज्ञ, गार्ग्य गालव और निमिविदेह शालक्य तन्त्र के विशेषज्ञ थे। इस प्रकार अलग-अलग तन्त्रों के विशेषज्ञों का वर्णन प्राप्त है।

जहां आयुर्वेद के आठ अंगों में से सात अंगों की उत्तमता को आज का वैज्ञानिक युग स्वीकार करता है वहां आयुर्वेद के प्रचलित पठन-पाठन में शल्य शालाक्य का स्थान नगण्य ही है। ऐसा इसलिये है कि शताब्दियों से इस विद्या के विशेषज्ञों की उपलब्धि न होने से आयुर्वेद विद्यार्थी निपुण नहीं हो पाया है। जबकि वेदों में प्राप्त सामग्री यथा :-

शापवश अन्धे ऋजाश्व को नेत्र प्रदान किया। ऋग्वेद १-११६-१५

अंग भंग में लोहे के अंग बनाकर उसका संयोग करना अश्मरी विद्रधि जलोदर पूयनिर्हरण, शोधन दुर्नाम (अर्श) अंग भंग आदि शल्य शालाक्य कर्म का उल्लेख उपलब्ध है जो आज की नवीन चमत्कारिक शल्य शालाक्य चिकित्सा से कम नहीं है। महाभारत में भीष्म पितामह बाणशय्या पर रणभूमि में पड़े थे। दुर्योधन शल्य शालाक्य चिकित्सा में प्रवीण वैद्यों को वहां ले गये थे, ये वर्णन प्राप्त हैं।

कुछ दिन पूर्व भारत सरकार द्वारा राष्ट्रिय आयुर्वेद विद्यापीठ (नेशनल एकैडमी आफ आयुर्वेद) की स्थापना हुई है। इसके द्वारा गुरुशिष्य प्रणाली शल्य शालाक्य के आचार्यों को प्रोत्साहित कर शल्य शालाक्य अंग में कुशल अनुभवी धन्वन्तरियों को कर्म क्षेत्र में उतारेगी।

चिकित्सा सम्प्रदाय :-

अथर्वण एवं अङ्गिरस नाम के दो सम्प्रदायों का चिकित्सा में प्रधान स्थान था। अन्य भी दैवी, प्राकृतिक, मानसिक आदि कुछ पद्धतियाँ प्रचलित थी।

अङ्गिरस सम्प्रदाय :- महर्षि अंगिरा के अनुयायी, वे शरीर के बाह्य आभ्यन्तर, सभी अंगों तथा संपूर्ण क्रियाओं का नियंत्रण एवं उनको समावस्था में रखने का ज्ञान रखते थे। अतः ये सम्प्रदाय सिद्ध अनुभवी औषध निर्माता भी थे।

अथर्वण :-

आदि उद्गाता अथर्वा ऋषि इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। मंत्रों द्वारा एवं स्पर्श ज्ञान से तथा मानसिक शक्ति, जलप्रोक्षण, आशीर्वाद आदि से प्रायः रोग मुक्त कराते थे। परंच आज चरक तथा सुश्रुत पद्धतियों एवं रस चिकित्सा का विशेष प्रचलन है।

जीवन क्या है :-

शरीरेन्द्रियसत्त्वात्मसंयोगो धारिजीवितम्।
शरीरं सत्व संज्ञं च व्याधीनां आश्रयोमतः ॥
च.सू. १-४२

तथा सुखानां, निर्विकारः परस्तु आत्मा।

अर्थात् शरीर, इन्द्रिय मन, और आत्मा के संयोग का नाम जीवन है। जब तक यह संयोग बना रहता है उन वर्ष, मास, दिन आदि की गिनती का नाम आयु या जीवन है। जन्म के गत वर्षमासादि को वय (आयु) कहते हैं।

आयुर्वेद शास्त्र की प्रामाणिकता :-

वेदों की प्रामाणिकता के तथ्यों की भान्ति ही यह ज्ञान पूर्णतया विश्वसनीय आप्त पुरुषों द्वारा रचित हुआ। आयुर्वेद के चिकित्सा संबन्धी निर्देश इस तथ्य के कारण प्रामाणिक माने जाते हैं कि वे आप्त पुरुषों के निदेश तो हैं ही साथ में उनके अनुभव सिद्ध होने के कारण प्रत्यक्ष फलप्रद हैं। अनन्त काल से औषधियों के गुण, धर्म, स्वभाव आदि स्थिर एवं अपरिवर्तनीय हैं। यह अलौकिक ज्ञान व्याधियों और उनके उपचार के संबंध में एवं दीर्घायु की प्राप्ति के लिए परिपूर्ण समर्थवान् है। वर्तमान काल में जिसे वैज्ञानिक युग कहा जाता है संसार में रोग ग्रसित प्राणी अन्य विकसित चिकित्सा पद्धतियों की उपलब्ध औषधियों के दुष्परिणामों से भयभीत है। अतः रुग्ण मानव भारतीय आयुर्वेद की ओर आकर्षित हो रहा है क्योंकि यह निरापद है।

भेषज अथवा औषध :-

इसका उल्लेख अथर्वेद ५-२९-१, ६-२१-२ में तथा ऋग्वेद १-८९-४ तथा २-३३-२ में प्राप्त है। अन्य भी ब्राह्मणों एवं उपनिषदों में पर्याप्त वर्णन है।

चिकित्सितं व्याधिहरं, पथ्य साधनमौषधम्।
प्रायश्चितं प्रशमनं प्रकतिस्थापनं हितम्॥

यह भेषज के पर्यायवाची शब्द हैं। भेषज दो प्रकार की होती है।

औषधं द्रव्य संयोगम् ब्रुवते दीपनादिकम्। हुतव्रततपोदानं शान्ति कर्म च भेषजम्॥

(काश्यप संहिता)

स्वस्थस्योर्जस्करं किंचिंत् किंचित् आर्तस्य रोगनुत्। च.चि.प्र.अ.प्र.पाद्य श्लोक ३-४

प्रयोगः शमयेद् व्याधिम्, योन्यमन्यमुदीरयेत न स शुद्धः विशुद्धस्तु शमयेद् यो न कोपयेत्।

अच्छी औषधि वही है जो स्वास्थ्य को बढ़ाये और रोग दूर करे तथा अन्य किसी रोग को उत्पन्न न करे।

पुनः तदेव युक्तं भेषज्यं यदारोग्याय कल्पते।

भेषज कल्पना एवं संग्रह :-

वैद्य अपनी औषधि स्वतः ही बनाता था। औषधियों का क्रय विक्रय भी होता था। भेषज संग्रह भी उत्तम भूमि और ऋतुओं के अनुसार ही किया जाता था।

त्वं भिषग् भेषजस्यासि कर्ता। शो.५-२९-१
इमा यास्तिस्त्रः पृथिवीस्तासां ह भूमिरुत्तमा।
तासामधि त्वचो अहं भेषजं समुजग्रभम्॥ शौ.६-२१-१

आयुर्वेद में औषधि संग्रह का निषेध :-

गंदे जल के स्थान में उत्पन्न तथा बल्मीक के पास उत्पन्न, श्मशान ऊषर भूमि, मार्ग में उत्पन्न, जन्तुओं से व्याप्त, अग्नि से जली हुई तथा हिम व्याप्त औषधियां रोग निवारण में अश्रेष्ठ हैं।

बल्मीककुत्सितानूप श्मशानोषर-मार्गजा, जन्तुवह्निहिम व्याप्ता नौषध्यः कार्यसाधिकाः ।।

च.क.अ. १२/५३-५४

नये योगों का निर्माण :-

कुर्यात्संयोग-विश्लेषकाल-संस्कार-युक्तिभिः ।
स्वबुद्धयैवं सहस्त्राणि कोटीर्वापि प्रकल्पयेत् ।।

अर्थात् रस, गुण, वीर्य, विपाक, स्वभाव का ज्ञान ही औषध गुण, धर्म के निर्माण का नाम भैषज कल्पना है। इसमें विशेषज्ञ वैद्य शास्त्रोक्त योगों में संशोधन परिवर्तन प्रवर्धन कर सकता है।

यथाः- तेभ्यो भिषग् बुद्धिमान् परिसंख्यातमपि यद् यद् द्रव्यं अयौगिकम् मन्येत त्ततत् अपकर्षयेत् यद्यद् च अनुक्तमपि यौगिकं वा मन्येत तत्तत् विदध्यात् । वर्गमपि वर्गेणोप संसृजेत्-एकमेकेनानेकेन वा युक्तिं प्रमाणी कृत्य।

वुद्धिमतां अल्पं अपि अनल्पज्ञानायतनं भवति ।
मंद वुद्धेस्तु यथोक्तान् अनुगमनं एव श्रेयः ।।

भिषक् :-

श्रेष्ठ वैद्य कर्म कुशल, सत्यशील, आचारवान् को अथर्ववेद में भिषक्तम कहा गया है।

यश्चकार स निष्कर्ता स एव सुभिषक्तमः ।
स एव तुभ्यं भेषजानि कृणवद् भिषजा शुचिः ।।

शा. २-९-५

एवं

स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् ।। च.सू. १-३४ वैद्य के लिए प्राणाचार्य तथा प्राणाभिसर नाम से चरक में प्राप्त नामों का उल्लेख है। निम्नलिखित श्लोक च.भ.अ. ६., श्लोक १७ का उल्लेख पठनीय है।

सर्वरोगविशेषज्ञः सर्वकार्यविशेषवित् ।।
सर्वभेषजतत्वज्ञो राज्ञः प्राणपतिर्भवेत् ।।

याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरेधातवः समाः ।
सा चिकित्सा विकाराणाम् कर्म तद् भिषजाम् मतं ।।

सब विकारों के निग्रह के लिए वैद्य के लिए एक सामान्य सूत्र :-

संशोधनं संशमनं निदानस्य च वर्जनम् ।

एतावद्भिषजा कार्यं कार्यं रोगे रोगे यथा विधि ।। च.भ.अ. ७, श्लोक ३४

वेदों में देव वैद्यों के नाम यथा-ब्रह्मा, रुद्र भास्कर, प्रजापति, इन्द्र, अश्विनीकुमार, वरुण, धन्वन्तरि आदि का वर्णन उपलब्ध है।

आयुर्वेद का लक्ष्य :-

प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं, आतुरस्य विकारप्रशमनं च ।। च.सू.अ.२६

षड्धातु पुरुष को स्वस्थ रखना ही आयुर्वेद कालक्ष्य है। क्योंकि स्वास्थ्य ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का मूल है । जीवन का ध्येय ही निरोगता है । शरीर को स्वस्थ रखने के लिए आहार-विहार में दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या, प्रभृति नियमों का पालन आयुर्वेद में यथोचित लब्ध है। आहार-विहार संबंधी नियमों का पालन करना ही स्वस्थवृत है। जहां आयुर्वेद में सभी व्याधियों की उत्पत्ति दोषों से होती है वहां अथर्ववेद में रोगोत्पत्ति में विषों की प्रधानता लक्षित होती है, चाहे शरीर के अन्तस्थ विष हो या बाह्य। अथर्ववेद ६-८-१० पर-

यक्ष्मणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं स्वत् ।।

अतः एव समस्त रोगों का कारण विष ही है। उपरोक्त मंत्र का अर्थ मैं समस्त रोगों के विषों को तेरे अंदर से दूर करता हूँ।

त्रिविध रोग विज्ञानम् :-

तद् यथा-आप्तोपदेशः, प्रत्यक्षं, अनुमानञ्च इति

तत्राप्तोपदेशोनाम-आप्तवचनम् । आप्ता ह्यवितर्कस्मृतिविभागविदो निष्प्रीत्युपतापदर्शिनश्च । तेषामेवंगुणयोगाद्यद्वचनं तत्प्रमाणं, अप्रमाणं पुनर्मत्तोन्मत्तमूर्खवृत दृष्टादृष्टवचनमिति ।

प्रत्यक्षं तु खलु तत्-यत्स्वयमिन्द्रियैर्मनसा वोपलभ्यते ।।
अनुमानं खलु-तर्को युक्त्यपेक्षः ।। च.सूं.अ. श्लोक ४-५-६

नाड़ी परीक्षा :-

गदाक्रान्तस्य देहस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत ।
नाड़ीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्द स्पर्शदृगाकृतिम्।। (रावण कृत नाड़ी)

वैद्य समाज में पुरातन काल से ही आयुर्वेदीय नाड़ी परीक्षा का रोग ज्ञान के उपायों में बहुत महत्व माना गया है। हृदय स्फुरण से धमनियों का स्फुरण होता है। अतः शरीर तथा हृदयस्थायी मन से स्वास्थ्य का प्रभाव हृदय के स्फुरण से शरीर के सुख और दुख का परिज्ञान होता है । शरीरिक सुख-दुख, मानसिक हर्ष और विषाद आदि का ज्ञान हृदय की परीक्षा से ही हो सकता है । दुख-सुख, हर्ष-विषाद आदि मनोभावों का प्रभाव हृदय और इसके स्फुरण पर पहुंचता है । हृदय चेतना स्थान है, सर्वभावों का निधि है । शरीर की रुग्णता से हृदय की गतियों में कुछ असाधारणता पाई जाती है ।

शरीर में नाड़ी गति दो प्रकार की है:- आहत, अनाहत ।

अनाहत :- हृदय की स्वभाव सिद्ध गति अनाहत नाड़ी स्वस्थ नाड़ी है।

आहत :- मानसिक शारीरिक विकृति से प्रभावित नाड़ी दोषों द्वारा आहत होती है वह अस्वस्थ नाड़ी है।

तेषां सिरा-धमनी स्त्रोतों रसवाहिनी-नाड़ीनां वात-पित्त श्लेष्माणः प्रदुष्टाः दूषयितारो भवन्ति।

च. विमान - ५

धमनीभिश्श्रिताः दोषाः हृदयं सम् प्रीडयन्ति हि। सुश्रुत शारीर में तथा चरक में नाड़ी परीक्षा के मूल सिद्धान्तों का वर्णन मिलता है। कुपित अकुपित वातपित्त कफ और रक्त वहन, नाड़ी द्वारा होता है। सुचिर अभ्यास से नाड़ी की अवस्था का समदोष पृथक् या मिलित वातादि दोषों का स्वरूप भेद जाना जा सकता है।

कुपितानां हि दोषाणां शरीरे परिधावताम् ।
यत्र दोषोपसंगः स्यात् व्याधि स्तत्रोपजायते ।।

निम्नलिखित ग्रन्थों में नाड़ी परीक्षा का पूर्ण वर्णन है :- नाड़ी प्रकाश, नाड़ी-विज्ञान, रावणकृत नाड़ी परीक्षा, शार्ङ्गधर, वैद्य भूषण, सु. संहिता, चरक संहिता, कणादकृत नाड़ी विज्ञान, वृहद्हारीत।

आजकल नये स्नातक तो नाड़ी परीक्षा के ज्ञान से अनभिज्ञ ही हैं। पर कुछ वैद्य भी शास्त्रों का अवलोकन न करने के कारण एवं अनभ्यास से नाड़ी परीक्षा का संकुचित हृदय से विरोध करते हैं। और भी लोकोक्ति है :- जो वैद्य मर्मज्ञ न हो मंदबुद्धि हो उसके लिये प्रसिद्ध शब्द अनाड़ी है।

आचार्य सत्यदेव वशिष्ठ, भिवानी (हरियाणा) द्वारा लिखित नाड़ी ज्ञान सम्बन्धी पुस्तक इस विद्या में विशेष उपलब्धियां लिये हुए है।

रोग परीक्षा में प्रायः दर्शन-स्पर्शन-प्रश्नैः-परीक्षेताथ रोगिणम्। स्पर्शनं च पाणिना।

अथर्ववेद -४-१३-६ में वैद्य अपने जिस हाथ से नाड़ी स्पर्श करता है उसके प्रति कथन -

अयं मे हस्तो भगवान् अयं मे भगवत्तरः ।
अयं मे विश्व भेषजो, अयं शिवाभिमर्षणः ।।

जिज्ञासुः प्रकृतिस्थेन पाणिना केवलम् अस्यशरीरम् स्पृशेत् विमर्शयेद्वा ।

च. इ. स्थान।

आतुर शरीरे इमेभावा तत्रतत्रावबोधव्या भवन्ति ।

तद् यथा, सततम् स्पंदमानानाम् शरीर देशानाम् स्तम्भ, उष्ण, शीत, मृदु, दारुण-श्लक्षण-खरत्वम् आदिः।

यच्चान्यतोऽपि किञ्चित्-ईदृशम् स्पर्शाणाम् लक्षणम् निमित्तम् स्यात्। उदाहरणतया-तस्य चेन्मन्ये परिमृश्यमाने न स्पन्देयातां परासुरितिविद्यात् ।

च.(इन्द्रिय)

अतः स्पर्श ज्ञान में धमनी स्पन्दन द्वारा विशेष उपलब्धियां रोग ज्ञान निमित्त प्राप्त होती हैं। चरक में स्पर्शज्ञान का महत्व।

यथा–

स्पर्शनेन्द्रियसंस्पर्शः स्पर्शोमानस एवहि द्विविधा सुखदुःखानां वेदनानां प्रवर्तकः ।
उपादत्ते हि सा भावान् वेदनाश्रय-संज्ञकान् स्पृश्यते नानुपादाने नास्पृश्ये वेत्तिवेदना ।।
च. शरीर. १।१३३।१३४ ।

सिरा धमनियों के मार्गों के कुपित या अवरुद्ध होने से शरीर के धातु अपने-अपने आशय में रुग्ण हो जाते हैं । उनके रुग्ण होने पर पुनः दूसरे मार्ग या आश्रय प्रकुपित हो जाते हैं ।

धातुओं और स्त्रोतों के कुपित होने का कारण वात,पित्त, कफ हैं क्यों कि दोष स्वभाव से ही दूषित हैं । चरक – ५।९।१३।१४

सुश्रुतेऽपि नाड़ी परीक्षाया मूलम् शोणितक्षये धमनी शैथिल्यम् – सु.सू. स्थान-१५।९

अति प्रवृद्धेरक्ते सिरापूर्णत्वम् सु. सू. १५।१४

धमनीततः प्रलापी – सु.शा. – अ. ४।६५

एतेन स्पष्टम् उपपद्यते यत् नाड्याःस्रोतसाम् समतासमत्वम् ज्ञात्वा, यथा दोषं धातूनाम दूषणम् लब्ध्वा, धातुविशेषम् अधिकृत्य, रोगं, यथा लक्षणोद्देशम् वक्तुं शक्नोति, यथा शार्ङ्गधर में नाड़ी गति से रोग का ज्ञान–

मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाड़ी मंदतरा भवेत् । रक्तपूर्णा भवेत् कोष्णा ।

नाड़ी गति दो प्रकार से होती है –

गतिभेदेन नाड़ी द्विविधा भवति ।
तत्रैका स्वस्थस्य सुखसमाचारन्विता स अनाहत नाद इव ।
यतो हृदयस्य स्वभावसिद्धस्य गतिमत्वात् धरायास्फुरणम् भवति ।।

आधि-व्याधिभ्याम् शोक क्रोधादिमानसदोषात् ज्वरातिसारादि-शरीर-व्याधि योगाद् वा या गतिरुपपद्यते स रोगैः आहतमिव हृदयं स्वभाविकीम् गतिम् अतिक्रम्य हृदयं धामयति आहतनाद इव ।

सा धमनी गतिः उपलक्ष्यते तत्र समस्तभावेन नादविज्ञानमेव नाडीविज्ञानम् तत् नाड़ी विज्ञानम् इति उच्यते ।

यथा चाह भगवान् पुनर्वसुः आत्रेयः–

सर्वेषामेव भावानां हृदयं स्थानमुच्यते ।
यत्तद्धि स्पर्श विज्ञानं धारि तत्तत्र संश्रितम् ।।

अतः धमनी गतम् स्पंदन-धर्मम् अनुभूय रोगं लक्षणानि च वदेत्–

हृदय स्पन्दन से मानसिक, मन के रोगों का ज्ञान का मूल, हृदयं मानसः स्थानम्,
अष्टांङ्ग हृदय सू. १२।१५

पुनः-

मूर्धानमस्य संसीव्यादथर्वा हृदयं च यत् ।
मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत् पवमानोऽधिशीर्षतः ।।

अथर्व. १०।२।२६

नाड़ी से रोगों का ज्ञान करते समय रोगी के रोग का वैविध्य ध्यान पूर्वक चिन्तनीय है- प्रकृति वय, बल, शरीर, सत्व, अग्नि, देश, काल, दोष, व्याधिस्थान, व्याधिविशेष को लक्ष्य में रखना चाहिए।

दोषों की समावस्था, प्रवृद्धावस्था, कुपितावस्था के लक्षण का ज्ञान आवश्यक है।

दोर्षाः प्रवृद्धाः स्वं लिङ्गं दर्शयन्ति यथाबलम् ।
क्षीणा जहति स्वं लिङ्गं समाः स्वं कर्म कुर्वते ।।

चरक. सूत्र. १७।६१

स्पर्श विज्ञान में स्पर्शवान् वायुः इति सिद्धान्तः, अतः स्पर्शनञ्चत्वगाश्रितम्।

इस विधान से नाड़ी स्पन्दन से नानाविध रोगों से प्रभावित नाड़ी गति तत् तत् रोगों के शब्दरूपी रोग लक्षणों का प्रत्यक्षीकरण करती हैं, यथा हि शब्दे वक्तुराकारो निहितो भवति तथैव शारीर मानसिक समुद्भूतानाम् रोगाणाम् लक्षणानि प्रकाशयति।

शरीर के समस्त ज्ञान की ज्ञानेन्द्रियों कर्मेन्द्रियों से सम्बन्धित त्वचा से ही अनुभूति होती है, कर्ण में शब्द का स्पर्श होने से शब्द का ज्ञान, जिह्वा में रस का स्पर्श होने रस ज्ञान, आदि-आदि, उदाहरणतः- दूरभाष पर सहस्रों कोशों पर से सुना शब्द अपने किसी प्रिय का मन में दर्शन कराता है और दूरभाष में सुने शब्द से पूर्व परिचित व्यक्ति का स्वरूप,वाणी में हास्य या क्रोध युक्त नाना प्रकार के भावों का ज्ञान हो जाता है इसी प्रकार पुनः-पुनः नाड़ी स्पर्शन का अभ्यास करने से रुग्ण की नाड़ी द्वारा स्पन्दन के शब्दों का स्पर्श चिकित्सक को स्पर्शद्वारा उस रोग के भावों का मन के प्रति ज्ञान का वहन होता है, वही मन स्पर्श द्वारा प्राप्त रोग चिन्हों को वाणी द्वारा प्रकट करता है। कर्मेन्द्रियाणां ज्ञानेन्द्रियाणां च परस्परयोः सम्बन्ध-अतः भाव अभ्यसन् हि अभ्यासः अतः निरन्तर अभ्यास से ही नाड़ी परीक्षा का ज्ञान स्थिर हो सकता है।

ज्ञान बुद्धिप्रदीपेन यो नाविशति तत्त्ववित् ।
आतुरस्यान्तरात्मानं न स रोगांश्चिकित्सति ।।

च. वि. अ. ४।१५।

आयुर्वेद की विविध रोग ज्ञान चिकित्सा तथा अन्य कुछ विशेषतायें -
सम्पूर्ण रोगों का कारण, मिथ्या, आहार, बिहार, तयोर्मूलम् प्रज्ञापराधः।

सम्प्राप्तिः-

यदा तु रक्तवाहिनी रससंज्ञावहानि च पृथक्-पृथक् समस्ता वा स्रोतांसि कुपिता मलाः।

मलिनाहारशीलस्य रजोमोहवृतात्मनः ।
प्रतिहत्यावतिष्ठन्ते जायन्ते व्याधयस्तदा ।।

सू. स्थान. श्लोक २५।२६ अ.२४

व्याधि प्रशमनम्-

संशोधनं संशमनं निदानस्य च वर्जनम् ।
एतावद्भिषजा कार्यं रोगे रोगे यथाविधिः ।।

च. वि. अ. ७।३४

अष्टौ महादोषकराः उच्चैर्भाष्यं रथक्षोभमतिचङ्क्रमणासने ।
अजीर्णाहितभोज्ये च दिवास्वप्नं च मैथुनम् ।।

तज्जादेहोर्ध्वसर्वाधोमध्यपीडामदोषजाः ।
श्लेष्मजाः क्षयजाश्चैव व्याधयः स्युर्यथाक्रमम् ।।

च. सिद्धिस्थान अ. १२।१२।१३

सदातुरा :-

अथाग्निवेशः सततोऽन्तरान्तरा हितं च पप्रच्छ गुरुस्तदाह च सदातुराः श्रोत्रियराजसेवकास्तथैव वेश्याः सह पण्यजीविभिः ।।

द्विजो हि वेदाध्ययनव्रताह्निकक्रियादिभिर्देहहितं न चेष्टते ।
नृपोपसेवी नृपचित्तरक्षणात्परानुरोधाद्बहुचिन्तनाद्भयात् ।।

नृचित्तवर्तिन्युपचारतत्परा मृजाविभूषानिरता पणाङ्गना ।
सदासनादत्यनुबन्धविक्रयक्रयादिलोभादपि पण्यजीविनः ।।

सदैव ते ह्यागतवेगनिग्रहं समाचरन्ते न च कालभोजनम् ।
अकालनिर्हारविहार सेविनो भवन्ति येऽन्येऽपि सदातुराश्च ते ।।

च. सिद्धि. अ. ११।२६,२८,२९,३० ।

देशभेदसे सात्म्यम् ।
बाह्लीकाः शाद्वलाश्चीनाः शूलीका यवनाः शकाः ।
मांसगोधूममाध्वीकशस्त्रवैश्वानरोचिताः ।।
मत्स्यसात्म्यास्तथा प्राच्याः क्षीरसात्म्याश्च सैन्धवाः ।
अश्मकावन्तिकानां तु तैलाम्लं सात्म्यमुच्यते ।।
कन्दमूलफलं सात्म्यं विद्यान्मलयवासिनाम् ।
सात्म्यं दक्षिणतः पेया मन्थश्चोत्तर पश्चिमे ।।
मध्य देशे भवेत्सात्म्यं यवगोधूम-गोरसाः ।
तेषां तत्सात्म्यमुक्तानि भैषजान्यवचारयेत् ।।

च. सं. अ.३०। श्लोक १७।१८।१९।२० ।

ऋतुभेदसे -दोषज रोग-

वसंतेश्लेष्मजारोगाः शरत्काले तु पित्तजाः ।
वर्षासु वातजाश्चैव प्रायः प्रादुर्भवन्ति हि ।।

च. चि. ३०।३१०

दोषजारोगा- रोगी को रोचक पथ्य-

सातत्यात्स्वाद्वभावाद्वा पथ्यं द्वेष्यत्वमागतम् ।
कल्पनाविधिभिस्तैस्तैः प्रियत्वं गमयेत्पुनः ।
मनसोऽवानुकूल्याद्धि तुष्टिरूर्जा रूचिर्बलम् ।
सुखोपभोगता च स्याद् व्याधेश्चातो बलक्षयः ।।

च.सू.अ.३०। श्लोक-३२,३३,३४

आतुरालय :-

अथर्ववेद ८-२-२५ में स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये भेषजोपचार परिधि बनाया जाता है वहीं ये भी स्पष्ट है कि उपचार चिकित्सालय में रखकर करना चाहिए। वहां पर पूर्ण रूप से औषध संग्रह हो, स्थान, जल, वायु भी शुद्ध हो, सेवक तथा चिकित्सक कुशल हों ऐसा आतुरालय बनाकर रोगी परिचर्या का विधान मिलता है। चरक में भी रोगी के लिये सुव्यवस्थित कक्ष के निर्माण का विधान लिखा है। यथा :-

दृढं निवातं प्रवातैकदेशं सुखप्रविचारमनुपत्यकं धूमातपजलरजसामनभिगमनीयमनिष्टानां च शब्दस्पर्शरूपरसगन्धानां सोदपानोदूखलमुसलवर्चः स्थानभूमिमहानसोपेतं वास्तुविद्याकुशलैः प्रशस्तं गृहमेव तावत्पूर्वमुपकल्पयेत्।। च.सू.अ. १५-६

तथा वहीं आठवें में उपचारक परिचारक सूपोदनपाचक स्नापक संवाहक उत्थापक संवेशक औषधपेषक अनातुरादौग्घ्रीगां शैयासनादि उपयोगीपात्राणि उपकरणानि शस्त्राणि तुलां औषधद्रव्याणि यच्चान्यदपि उपकरणं विद्यात् तत् तद् उपकल्पयेत् इस प्रकार आतुरालय सर्वांग परिपूर्ण हो, रोगी को आश्वासन मिलता है कि मैं पूर्ण स्वस्थ हो जाऊँगा।

यद् भेषजं तद् अमृतम् । यद् अमृतम् तद् ब्रह्म ।।

ऐसे आतुरालयों की रोगियों के प्रति दृढ़ घोषणाएं एवं आश्वासन अथर्ववेद में यथा :-

सो अरिष्टं-न मरिष्यसि न मरिष्यसि मा विभेः

न वै तत्र म्रियन्ते नो यान्त्यधर्मतः ।।
सर्वे वै तत्र जीवन्ति गौरश्वः पुरुषः पशुः ।
यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधि जीवनायकम् ।।

अथर्ववेद काण्ड-८ सू. २

आहार :-

सर्वंद्रव्यं पाञ्चभौतिकम् द्रव्य संभवः आहारः ।
देहोहि आहार संभवः । रोगस्तु आहार संभवः ।
हिताहार मूलं हि जीवितम्। प्रकृत्यैव हिततमं भुञ्जानानां भवति तत्।
तत्र इदं आहार विधिविधानं अरोगाणां आतुराणां च ।

यथा :-

उष्णं स्निग्धं मात्रावत् जीर्णे वीर्याविरुद्धे इष्टे देशे इष्ट सर्वोपकरणं नाति द्रुतंनाति विलम्वितम् अजल्पन् अहसन् तन्मना भुन्जीत।

आत्मानं अभिसमीक्ष्य सम्यग् तन्मना भुन्जीत । च.वि. १/३२

हिताशी स्यात् मिताशीस्यात् कालभोजी जितेन्द्रियः। नित्यं षड्रसाभ्यासः। एककालभोजनं सुखपरिणामकराणाम् प्रमिताशनं कर्षणीयानां, अनशनं आयुषो ह्रास कराणाम्।

आहार मात्रा पुनरग्निबलापेक्षिणी, विरुद्धाशन, अध्यशन प्राणाः प्राणभृतामन्नम् वर्णः प्रसादः सौस्वर्यं जीवितं प्रतिभा सुखम्।

तुष्टिः पुष्टिर्बलं मेधा सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम्।। १।३४७,३४८ सूत्र स्थान चरक अ. २६

हितोपचारमूलम् जीवितम्।

राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान के प्रति सुझाव संदेशः :-

समस्त वेद विद्याओं के प्रति प्रतिष्ठान की प्रयासोपलब्धियां और भी सुदृढ़ हो सकेंगी यदि अन्य राष्ट्रीय विद्यापीठों यथा ज्योतिष आयुर्वेद स्थापत्यवेद की मिलित गोष्ठियाँ एवं प्रचार व्यवस्था में तथा विद्वत्जनों की एक परामर्शदात्री स्थायी समिति का गठन किया जाय तथा समय समय पर जन सम्पर्क समितियां बनाकर तद् तद् उपदेश तद् तद् उद्देश्यों के लिए विचारों का अदान-प्रदान हो सके तभी हम वेद का सही रूप में प्रचार कर पायेंगे। जिससे संसार के बिगड़ते वातावरण का सुधार हो सके। मुझे आशा है कि श्री किरीट जोशी जी तथा उनके सहयोगी पूज्य विद्वान् प्रयत्नशील होगे।

।। शुभम्।।

SHRI B.D.TRIGUNA JI'S

INTERNATIONAL ACTIVITIES

समाचारों पत्रों के परिदृश्य में वैद्य श्री त्रिगुणा जी

प्रस्तोता :- वैद्य विजय मोहन पाठक
महर्षि आयुर्वेद विभाग महर्षि नगर
गाजियाबाद

आयुर्वेद के प्रति समर्पित बहुमुखी प्रतिभा के धनी वैद्य श्री त्रिगुणा जी के सान्निध्य तथा सेवा का अवसर यूं तो मेरा बहुत ही अल्प कालिक रहा, किंतु वह अल्प कालिक सान्निध्य मेरे जीवन का संस्मरण बन गया। पूज्य पिता श्री मदन मोहन पाठक जी के साथ आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में देश विदेश में जब-जब मुझे बाहर जाने का सौभाग्य मिला तब-तब आयुर्वेद तपस्वी कर्मनिष्ठ मनीषी श्री त्रिगुणा जी के सान्निध्य का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। देश-विदेश में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में जो भी उन्होंने अपना योग दान दिया वह अपने में एक अद्वितीय है।

आपके इस महत्व पूर्ण योगदानों की दिशा में अन्तर्राष्ट्रीय जगत में जो कीर्ति आलोकित हुयी है। उसमें देश-विदेश के विभिन्न समाचार पत्रों ने आयुर्वेद के विभिन्न विषयों, समस्या, स्थितियों, परिस्थितियों तथा रचनात्मक आन्दोलनों की जो परिदृश्यावलि समाज के समक्ष प्रस्तुत की है उसके प्रति मैं समग्र आयुर्वेद जगत की ओर से आभार व्यक्त करता हूँ।

उनके इस अप्रतिम योगदानों को विभिन्न समाचार पत्रों की कटिंग के रुप में पाठकों की जानकारी के लिये विभिन्न पृष्ठों पर संकलित किया गया है। कटिंग तथा मुद्रण में होने वाली अशुद्धियों तथा त्रुटियों के लिये क्षमा का आकांक्षी हूँ।

VAIDYA SHRI TRIGUNA JI'S IMPORTANT COVERAGES BY INTERNATIONAL MEDIA

संडे मेल साप्ताहिक
नयी दिल्ली: १३ अक्तूबर, १९९१

रूसी, जापानी और अमरीकी शोधों पर खरी उतरीं आयुर्वेदिक औषधियां


वैद्यराज वृहस्पति देव त्रिगुणा

संतोष सिंह/वीरेंद्र मिश्र

आरोग्य का सर्वस्वीकृत नया सिद्धांत और रणनीति यह है कि शरीर में व्यापने वाले विभिन्न रोगों के उपचार और रोगों के हिसाब से नयी-नयी औषधियों के निर्माण की बजाय रोगों की रोकथाम की जाये. रोगों की रोकथाम के दो उपाय हैं. पहला यह कि रोग उत्पन्न करने वाले बाह्य कारणों यथा पर्यावरण, प्रदूषण आदि को नियंत्रित किया जाये और दूसरा सबसे अधिक महत्व का यह कि शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता में इतनी वृद्धि हो कि रोगाणु शारीरिक तंत्र को प्रभावित न कर पायें.

इस विश्व स्वास्थ्य नीति के तहत आधुनिक तथा एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति के तहत विभिन्न रोगों से शरीर को बचाने के लिए टीके और ड्राप्स का प्रयोग और चलन बढ़ रहा है. लेकिन टीके और ड्राप्स से शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के संबंध में यह आशंका लगातार उग्र होती जा रही है कि आखिर ऐसे कितने टीके बनाये जायें और फिर टीकों की यह गारंटी भी नहीं है कि यह एक रोग पर काबू रख कर दूसरा नया रोग खड़ा न कर देंगे.

आयुर्वेदिक इस समस्या का एक मात्र समाधान है. आयुर्वेद, योग, यज्ञ ज्योतिष, अनुष्ठान के मध्य से न केवल रोग-विहीन जीवन शैली का रास्ता प्रशस्त करता है बल्कि पूर्ण शास्त्रीय विधान और शुद्धता से तैयार इसके एक-एक औषधि योग और रसायन अनेकानेक रोगों की रोकथाम और उपचार में सक्षम है.

यह आयुर्वेद का कोरा गौरव गान नहीं बल्कि पश्चिम की आधुनिक प्रयोग और शोध शालाएं भी इसे स्वीकार कर रही हैं. चार वर्ष पूर्व देश के शीर्षस्थ आयुर्वेद विशेषज्ञों ने 'एम-४' और 'एम-५' नाम से एक वनौषधियोग और एक रसायन तैयार किया और शोधन के लिए उसे अनुकूल नक्षत्रों में २४ फुट ऊंचे स्तंभ पर छह महीने तक रखा था. अमृतकलश (मैक) के रूप में ख्यात इन औषधि योगों को पहले अमरीका और यूरोप के विभिन्न शोध संस्थानों तथा अस्पतालों में जांचा आजमाया गया. ओहियो आयुर्विज्ञान विश्वविद्यालय में एनाटामिक पैथालोजी विभाग के निदेशक प्रो. हरि शर्मा और साउथ डकोटा फार्मेसी विश्वविद्यालय में उनके एक सहयोगी ने जब चूहों पर प्रयोग करते हुए देखा कि 'एम-४' और एम-५' स्तन कैंसर को दूर करता है तो विश्व स्तर के अनेक शोध संस्थानों में लगभग तीन दर्जन शोध एक साथ शुरू हो गयी. इनमें से जापान के तोसाशिमिजू अस्पताल के नोवा रोग प्रतिरोधक संस्थान में हुई शोध के परिणाम 'एम-४' और 'एम-५' से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि की पुष्टि हुई है. हार्टकेयर फाउंडेशन आफ इंडिया के उपाध्यक्ष डा. के.के. अग्रवाल के अनुसार डा. यूको नोवा विश्व के चोटी के रोग प्रतिरोधक विशेषज्ञों (इम्यूनोलाजिस्ट) में से एक हैं उन्हें जापान के छह मेडिकल कालेज अपने विषय पर सलाह मशविरे और प्रशिक्षण के लिए आमंत्रित करते हैं. डा. अग्रवाल बताते हैं कि डा. नोवा ने रेडिकल इम्यूनोलाजी के आधार पर मनुष्य की श्वेत रक्त कणिकाओं के साथ 'एम-४', 'एम-५' की क्रिया कराके 'मैक' के कैंसर रोधी प्रभाव की प्रक्रिया की जांच करने पर पाया एक मैक शरीर के विभिन्न रोगों के लिए उत्तरदायी मुक्त रेडिक्ल्स के उन्मूलन की अब तक की सर्वश्रेष्ठ औषधि है. दो-मैक, कैंसर और बुढ़ापे के लिए जिम्मेदार कारकों यथा अतिरिक्त वृद्धि


डॉ. के.के. अग्रवाल

(इनफामेशन) और अतिरिक्त रोग प्रतिरोधक (इम्यून) रिस्पांस को कम करता है.

मुक्त रेडिकल्स ऐसी प्रतिक्रियात्मक आक्सीजन प्रजातियां हैं जो शरीर में खतरनाक चेन रियेक्शन उत्पन्न करते हैं. मुक्त रेडिकल्स सामान्य अणुओं से

—संडे मेल १३ अक्तूबर, १९९१

सभी चित्र : संजय निगम

सोवियत संघ के चिकित्सक, जिन्होंने आयुर्वेदिक औषधियों व। स्वीकार किया

संयुक्त होकर उन्हें भी मुक्त रेडिकल्स के रूप में परिवर्तित कर देते हैं. यह क्रिया कोशिकाओं को नष्ट करती है, जेव-रासायनिक क्रियाओं को अस्त-व्यस्त कर देती है और अनेक शारीरिक तंत्रों की क्रिया को गड़बड़ा देती है. मुक्त रेडिक्ल्स (फ्री-रेडिकल्स) कैंसर, बुढ़ापे अनेक अतिरिक्त वृद्धि वाले रोगों, पर्यावरणीय विष, कड़ी धमनियों रियुमेट्वाइड अर्थ्राइटिस हार्स क्रोनरोग, हैप्टाइटिस और म्यूकोसा तथा त्वचा के अलसर जैसी बीमारियां उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं. डा. नीवा ने अपने शोध अध्ययन में देखा कि 'एम-४' और एम-५' प्रभावी रूप से मुक्त रेडिकल्स से जुडता है तथा उसे शारीरिक तंत्र से निकाल बाहर करता है.

बीमारियों के लिए जिम्मेदार दूसरा जैव रासायनिक कारक लिक्विड पैराक्साइड है जो उस वक्त उत्पन्न होता है जब मुक्त रैडिकल्स, वसा अणुओं से संयुक्त होते हैं लिक्विड पैराक्साइड की हृदयरोगों में अहम भूमिका है. जब ये रक्त वाहनियां में परिसंचरित होते हैं तब ये रक्तवाहनियों की दीवारों को नुकसान पहुंचाते हैं तथा ऐसा रासायनिक परिवर्तन करते हैं जो धमनियों को कड़ा करते हैं. 'एम-४' और 'एम-५' मुक्त रेडिकल्स की सफाई करके लिक्विड पैराक्साइड का बनना रोकते हैं अर्थात एथ्रिरोसिरोसिस और अन्य बीमारियों की रोकथाम में मदद करते हैं. पैथोलाजी विभाग के निर्देशक डा. हरिशर्मा ने इंडियन यूनीवर्सिटी मेडिकल सेंटर, यूनीवर्सिटी आफ कंसास मेडिकल सेंटर, साउथ डकोटा कालेज आफ फार्मेसी और हिल टाप रिहैबलीटेशन सेंटर ग्रांड जंक्शन (कोलोरोडो) के सहयोग से हृदय, मस्तिष्क तथा खून पर 'अमृतकलश' से पड़ने वाले प्रभावों तथा उससे कैंसर थंब्रोसिस, एथ्रोसिरोसिस, तथा पुनर्वास, दिमागी आघात तथा एड्स में होने वाले फायदों पर शोध अध्ययन किये हैं. जिसमें उन्हें प्रभावकारी परिणाम मिले हैं. डा. के.के. अग्रवाल ने बताया कि शोध में देखा गया है कि 'अमृतकलश' (मैक) मस्तिष्क के आपोयह रिसेप्टरो और उसके रक्षक यौगिकों नेलाक्सोन और नैलेक्ट्रक्सोन को मार्फीन जैसे नशीले द्रव्यों का गुलाम नहीं होने देता. अपनी इस प्रक्रिया में वह मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले दो प्राकृतिक पदार्थों इंडोरफिन और इनसेफालिसस के

(डा. हरिशर्मा ओहियो विश्वविद्यालय) एक तुलनात्मक अध्ययन में चूहों के दो वर्ग बनाये. एक जिन्हें केवल कैंसर उत्पन्न करने वाला भोजन दिया गया तथा दूसरा जिन्हें ऐसे भोजन के साथ 'एम-४' और 'एम-५ औषधि योग भी दिये गये. एक निश्चित समय के बाद देखा गया कि पहले वाले वर्ग के ९५ फीसदी चूहें कैंसर के शिकार हो गये जब कि दूसरे वर्ग के केवल ५ प्रतिशत चूहें. इस शोध के परिणाम जहां मैक से शरीर के कैंसर के खिलाफ रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता के द्योतक हैं, वहीं साउथ डकोटा स्टेट यूनिवर्सिटी कालेज आफ फार्मेसी की स्तन कैंसर पर शोध उसकी उपचारगत उपयोगिता के शोधों के अनुसार मैक इस तंत्र के विभिन्न अंगों यथा रक्त, वाहनियों और हृदय के साथ उनकी क्रियाओं पर भी अनुकूल प्रभाव डालता है. रक्त में जहां यह शरीर की रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता के लिए जिम्मेदार श्वेत रक्त कणिकाओं की संख्या में वृद्धि करता है वहीं धमनियों को कड़ी करने में उत्प्रेरक की भूमिका निर्वाह करने वाली प्लैटलेट रक्त कणिकाओं के उत्पादन को नियंत्रित करता है. मैक से शरीर की रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता में वृद्धि को ब्लोड्राप (हालैंड) में एड्स प्रथमवास्था के १५ रोगियों पर उत्साहजनक सुधार के रूप में दर्ज किया जा चुका है. विश्व में आयुर्वेदिक औषधियों को लोकप्रिय बनाने वाले आनंद श्रीवास्तव बताते हैं कि इन शोधों के अलावा महर्षि अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय फेयरफील्ड में भी मैक पर शोध हुई हैं और उनसे यह बात प्रकाश में आयी है कि मैक सर्दी, सिरदर्द, पीठ का दर्द, पाचन, कम वजन, चिंता और एलर्जी आदि को दूर करने में भी सहायक सिद्ध होता है.

आयुर्वेदिक औषधियों की इन क्षमताओं और आयुर्वेद के अन्य अंगों योग गंधर्ववेद, ज्योतिष, अनुष्ठान,

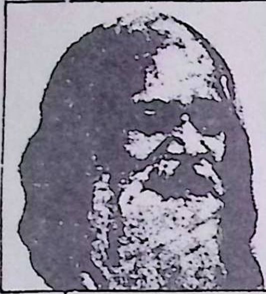

आनंद श्रीवास्तव

स्थापत्य और यज्ञ के विज्ञान सम्मत प्रभावों के आधार पर महर्षि महेश योगी ने अपनी विश्व स्वास्थ्य योजना के अंतर्गत प्रत्येक राष्ट्र को रोग रहित बनाने का अभियान शुरू किया है. उनके इस अभियान में आयुर्वेद मार्तंड बृहस्पतिदेव त्रिगुणा और द्रव्यगुण विशेषज्ञ बालराज महर्षि जैसे शीर्षस्थ वैद्य विशारदों की वाहिनी के अलावा सुप्रसिद्ध इंडो काइनोलाजिस्ट डा. दीपक चोपड़ा और डा. हरिशर्मा जैसे ऐसे हजारों एलोपैथिक चिकित्सकों की मदद भी मिल रही है जिन्हें आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की पोलपट्टी पता चल गयी है ☐

परिवर्तन समय की मांग जून, 1991 मूल्यः 8 रुपया

न्यूज इंडिया

स्वास्थ्य



स्वास्थ्यः महर्षि आयुर्वेद

विश्व स्वास्थ्य व्यवस्था नाजुक दौर से गुजर रही है। उसकी वजह यह है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की नित-नई शोधों के बावजूद एक ओर यदि आये दिन नई प्राणघातक बीमारियां जन्म ले रही हैं तो दूसरी ओर नागरिकों को स्वस्थ रखना महंगा होता जा रहा है। ऐसे में विश्व भर के लोगों में किसी ऐसी वैकल्पिक स्वास्थ्य रक्षण प्रणाली के प्रति छटपटाहट बढ़ी है जो भरोसेमंद, कम खर्चीली और हानिकारक साइड इफैक्ट से मुक्त हो।

विश्व स्वास्थ्य व्यवस्था में इसी नये विचार के चलते रोगोपचार की बजाय रोगों की रोकथाम को केंद्र में रखा गया है। रोगों की रोकथाम में टीकों और ड्राप्स के आधुनिक चिकित्सा विज्ञानी प्रयोगों की भी अपनी सीमायें तथा आशंकायें मुखर हुई हैं। ऐसे में विश्व की प्राचीतम भारतीय स्वास्थ्य पद्धति आयुर्वेद के पूर्ण और मौलिक रुप महर्षि आयुर्वेद ने स्वास्थ्य जगत में नई आशा और विश्वास का संचार किया है।

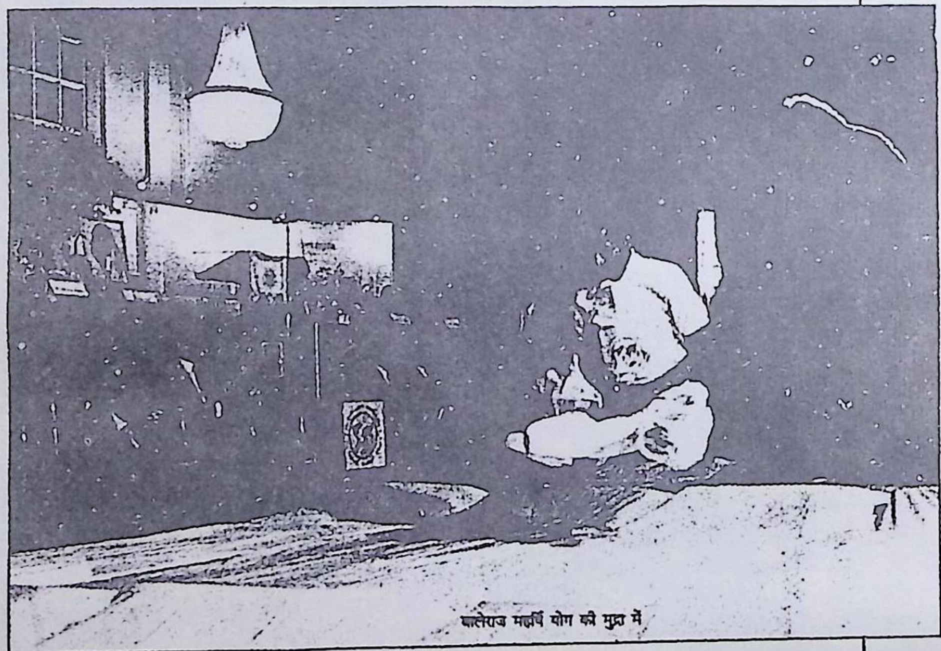
महर्षि आयुर्वेद जिसमें वनौषधि पक्ष के अलावा योग, यज्ञ, ज्योतिष, अनुष्ठान, गंधर्व वेद और स्थापत्य वेद भी शामिल हैं, अन्य चिकित्सा पद्धतियों की तरह लाक्षणिकता में भटकता न रह कर रोगों के मूल कारण, उनकी रोकथाम और उपचार का रास्ता प्रशस्त करता है।

समग्र स्वास्थ्य के लिये महर्षि आयुर्वेद के बीस अभिगम हैं। इन अभिगमों में जीवन के मूल चेतना में आयी मलीनता को दूर करने के लिए योग की सबसे सुगम ... भावातीत ध्यान और सिद्धि कार्यक्रम भी है। महर्षि आयुर्वेद चेतना के स्तर पर शारीरिकी, आचरण एक पर्यावरण के सिद्धांत और व्यवहार का प्रतिपादन करता है और शरीर तथा मन के बीच पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर समग्र स्वास्थ्य को यथार्थ में प्रस्तुत करता है।

महर्षि आयुर्वेद की ये विशेषताएं अब वैदिक संहिताओं का ही विषय नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय आधुनिक शोध शालायें भी उनकी पुष्टि कर रही हैं। सत्ताइस देशों के हावर्ड, येल, कैलीफोर्नियां और स्टैनफोर्ड जैसे 160 विश्वविद्यालयों और शोध शालाओं में सोवियत तंत्रिका विज्ञानी प्रोफेसर निकोलाई निकोलाइविच लुबीमोव, अमेरिकी शरीर विज्ञानी डा.आर. कीथ वालेस, लेबनानी मूल के डा. टोनी आबू नादर तथा भारतीय मूल के डा. हाशिर्मा सहित अनेक शोध शास्त्रियों ने महर्षि आयुर्वेद के विभिन्न पक्षों पर से 500 से भी अधिक शोध किये हैं।

इन शोधों के निष्कर्षों से प्रभावित होकर अनेक देशों की सरकारें, सवास्थ्य मंत्रालयों और संगठनों ने महर्षि आयुर्वेद को मान्यता तथा अनेक प्रकार की सहूलियतें दी हैं। दी है जो नियमित रुप से भावातीत ध्यान और सिद्धि कार्यक्रम का अभ्यास करते हैं। सोवियत संघ में वहां के जन स्वास्थ्य मंत्रालय ने महर्षि आयुर्वेद के विभिन्न पक्षों पर शोध के लिये मास्को में एक अलग शोध संस्थान ही स्थापित किया है।

महर्षि आयुर्वेद की इन्हीं सब विशेषताओं का कमाल है कि पांच साल से भी कम समय में 29 देशों के अंदर सौ से भी अधिक महर्षि आयुर्वेद क्लीनकें वहां के लोगों को सफलतापूर्वक लाभ करा रही हैं। अमेरिका, कनाडा, यूरोप, दक्षिण अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और जापान सहित अनेक देशों के हजारों मैडिकल डाक्टर और टैक्नीशियन वैद्यक में प्रशिक्षत हो रहे हैं। ब्राजील, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया और हंगरी सहित कितने ही देशों की सरकारें आयुर्वेद के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों को प्रायोजित करा रही हैं।

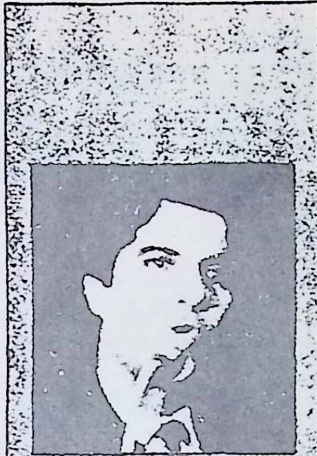


मालेराज महर्षि योग की मुद्रा में

अमेरिका में महर्षि आयुर्वेद की वनौषधि एन-4 और एम-5 पर वहां के राष्ट्रीय कैंसर संस्थान का कीमोप्रिवेंशन विभाग विशेष शोध करा रहा है तो राष्ट्रीय स्वास्थ्य संगठन की नयी सूची के अनुसार महर्षि आयुर्वेद के सम्मेलनों और संगोष्ठियों में भाग लेने वाले ...क्टर अपने मेडिकल लाइसेंस का समय ब...ने के हकदार हो गये हैं।

...र्षि ...युर्वेद के योग पक्ष को मान्यता देते हुए हालैंड की ... बीमा ...नी "स्टरपोलिस इंश्योरे... ...पनी" ने उन ... की प्रीमियन राशि में 40 फीसदी को रियायत

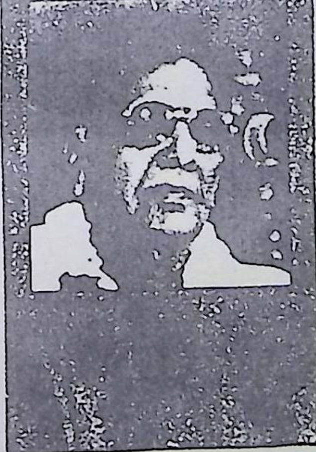
शोध विज्ञानियों का संक्षिप्त परिचयः प्रोफेसर निकोलाई निकोलाइविच लुबीमोवः- सोवियत स्नायुविज्ञानी लुबीमोव मास्को में ब्रेन रिसर्च मैडिकल साइंस अकादमी ... न्यूरो साइबर नेटिक्स शोधशाला ... निदेशक हैं। इसके अलावा वे मास्को विद्यालय में न्यूरोफिजियोलाजी और एक्सपेरीमेंटल न्यूरोला... के प्रोफेसर हैं। सोवियत संघ के बाहर प्रोफेसर लुबीमोव यूगोस्लाविया के

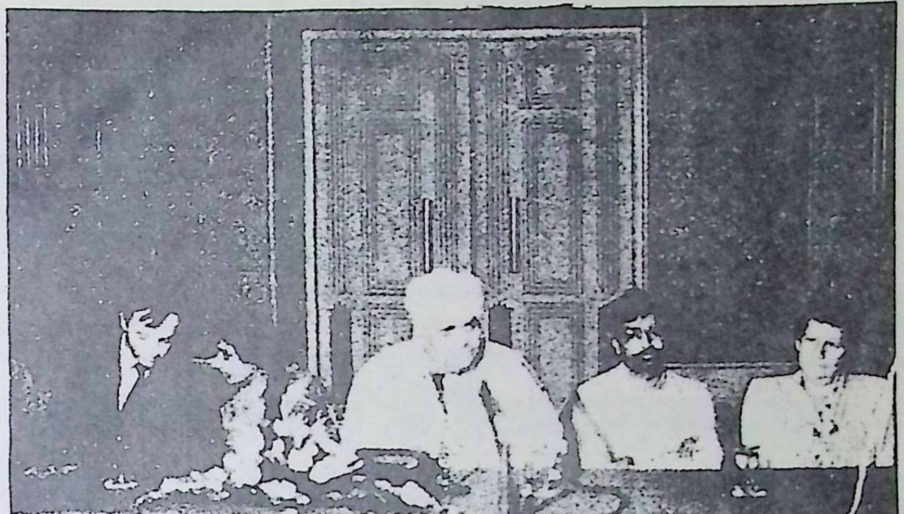


डा. दीपक [illegible]



वैद्यराज बृहस्पति देव त्रिगुणा





भारत में सोवियत वैज्ञानिक और डाक्टर्स के साथ आनन्द श्रीवास्तव और वैद्यराज बृहस्पति देव त्रिगुणा

ब्रैलग्रेल विश्वविद्यालय में भी अवैतनिक प्रोफेसर हैं। श्री लुबीमोव ने पिछले तीस वर्षों में रोगियों और स्वस्थ व्यक्तियों की मस्तिष्क क्रिया के संबंध में विभिन्न अध्ययन एवं शोध किए हैं। उनकी सबसे ताजा शोध भावातीत ध्यान और भावातीत धान सिद्धि कार्यक्रम के मस्तिष्क को क्रिया पर पड़ने वाले प्रभाव पर है। प्रो. एस. सरासमुसी और डा. आर.के. वालेस के साथ मिल कर की इस शोध में उन्होंने "टोपोग्रैफिकलब्रेन मैपिंग टैक्नीक" का प्रयोग करके यह पता लगाया है कि भावातीत ध्यान और भावातीत ध्यान कार्यक्रम का मस्तिष्क के कार्टेक्स भाग और दोनों अर्धभागों की परस्पर क्रिया पर क्या प्रभाव पड़ता है। उल्लेखनीय है कि टोपोग्रैफिकल ब्रेन मैपिंग टैक्नीक कार्टेक्स की विद्युत क्रिया जांचने की अत्याधुनिक कम्प्यूटर टैक्नोलाजी है और भावातीत ध्यान तथा सिद्धि कार्यक्रम के प्रभाव को परखा है। भावातीत ध्यान और सिद्धि कार्यक्रम महर्षि आयुर्वेद का अभिन्न अंग है।

प्रोफेसर आर. कीथ. वालेस:- सुप्रसिद्ध अमेरिकी शरीर विज्ञानी प्रोफेसर वालेज फेयरफील्ड आयोबा स्थित महर्षि अंतर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में मानवीय चेतना की फिजियोलाजी और न्यूरोसाइंस में शोध कार्यक्रम के निदेशक हैं। वे योग की सबसे सुगम शैली भावातीत ध्यान पर शोध करने वाले विश्व के पहले शरीर विज्ञानी हैं जिन्हें कैलिफोर्नियां विश्वविद्यालय ने डाक्टरेट की उपाधि दी। उनकी भावातीत ध्यान से शरीर की [illegible]चय दर पर पड़ने वाले प्रीव की शो[illegible] प्रेरित होकर ही बाद में इस दिशा में पांच सौ से भी अधिक शोधें हुई। डा. वालेस ने अपनी नवीतम शोध सोवियत शोध शास्त्री लुबीमोव के साथ मिलकर की है जिसमें उन्होंने सोमेटोसेंसरी रिसपोंसिज पर भावातीत ध्यान और सिद्धि कार्यक्रम के प्रभाव को परखा है। भावातीत ध्यान और सिद्धि कार्यक्रम महर्षि आयुर्वेद का अभिन्न अंग है।

प्रोफेसर टोनी आबूनादर, एम.डी., पी.एच.डी.:- लेबनानी मूल के डा. नादर महर्षि अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय अमेरिका में मेडीसिन के प्रोफेसर हैं तथा महर्षि आयुर्वेद इन्टरनेशलन प्रोग्राम एवं महर्षि आयुर्वेद हेल्थ सेंटर लकास्टर (अमेरिका) के निदेशक हैं। प्रोफेसर नादर ने अपनी पी.एच.डी. विश्व के सुप्रसिद्ध मैस्साच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नॉलाजी में हासिल की है। उनकी सबसे ताजा शोधें महर्षि आयुर्वेद की वनौषधियों एम-4 तथा एम-5 से कैंसर और बुढ़ापे पर पड़ने वाले प्रभावों पर है जिसने स्वास्थ्य जगत में तहलका मचा दिया है। इसके अलावा उन्होंने अलग-अलग भोजन से व्यक्ति के मन और व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों पर भी शोध की है। डा. नादर आजकल हार्वर्ड मेडिकल स्कूल में न्यूरोलाजिकल असंतुलन पर पोस्ट डौक्टोरल शोध कर रहे हैं।

हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक
हिन्दुस्तान

नई दिल्ली, शनिवार, ९ मार्च, १९९१ ई. नगर फाल्गुन १८, शक १९१२ पृष्ठ

'शरीर परमाणुओं के सतत प्रवाह व गति का परिणाम'

(हमारे कार्यालय संवाददाता द्वारा)

नई दिल्ली, ८ मार्च। शरीर वह नहीं है जो स्थूल आकार हम देखते हैं। वास्तव में यह परमाणुओं के सतत प्रवाह व गति का परिणाम है। शरीर में परिवर्तन की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। पेट के भीतरी भागों की मांसपेशियां हर पांच दिन में नई आ जाती हैं। प्रत्येक पांच हफ्तों में त्वचा बदल जाती है, छः हफ्ते में डी.एन.ए. बदल जाते हैं, छः हफ्तों में पूरा कंकाल बदल जाता है और एक-डेढ़ वर्ष में पूरा शरीर ही बदल जाता है। शरीर के परमाणुओं के और छोटे कणों में ऊर्जा की हलचल रहती है। शरीर का ९९ प्रतिशत से भी अधिक भाग शून्यवत है। शरीर की बुनियादी इकाई वह छोटी इकाई है, जो पूरे शरीर का प्रतिबिंब है। मस्तिष्क भी एक स्थान पर नहीं वरन ऐसे छोटे हर कोष में स्मृति के रूप में। शरीर मस्तिष्क धारणा के इन दिलचस्प पहलुओं के बारे में जानकारी आज यहां अमरीका के भारतीय मूल वाले चिकित्सक डा. दीपक चोपड़ा ने दी।

डा. दीपक चोपड़ा ने एक व्याख्यान में उक्त जानकारी दी जिसका विषय था 'जल्दी स्वास्थ्य लाभ में मन व शरीर में सामंजस्य का महत्व तथा आयुर्वेद'। एक दिवसीय व्याख्यान का आयोजन हार्ट केयर फाउंडेशन आफ इंडिया व महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठानम् ने संयुक्त रूप से किया। सुप्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य वैद्यराज बृहस्पति देव त्रिगुण ने व्याख्यानमाला की अध्यक्षता की।

डा. दीपक चोपड़ा ने, जो आयुर्वेद चिकित्सा की अमरीका में एसोसिएशन के अध्यक्ष भी हैं, कहा कि अगर आयुर्वेद के नियमों का पालन किया जाए तो मानव शरीर स्वयं भी शरीरजन्य व बाह्य— दोनों प्रकार के रोगों को जल्दी दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। इसके लिए मन व शरीर के बीच समुचित सामंजस्य होना अनिवार्य है। डा. चोपड़ा ने इस सिद्धांत— क्वांटम हीलिंग— पर एक पुस्तक भी लिखी है। उनके अनुसार जब मन दृढ़ व सशक्त अर्थात इच्छाशक्ति प्रबल होती है तो शरीर पर उसका सकारात्मक व अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा शरीर का विकार जल्दी दूर होता है। इसके लिए योगाभ्यास व ध्यान लगाकर बैठना बहुत लाभप्रद है।

उन्होंने कहा कि आधुनिक एलोपैथिक पद्धति केवल रोग का इलाज करती है जबकि सदियों पुरानी प्रतिष्ठित आयुर्वेदिक पद्धति रोगी की सम्पूर्ण स्थिति को ध्यान में रखकर इलाज करती है। उन्होंने कहा कि योगाभ्यास, सादा भोजन से गंभीर हृदय रोगों से भी मुक्ति मिल सकती है क्योंकि योगाभ्यास से रक्त धमनियों में अवरोधक तत्व समाप्त होकर आक्सीजन के मुक्त प्रवाह का मार्ग साफ होता है तथा हृदय ठीक प्रकार चलता है।

इस अवसर पर अमरीका के सुप्रसिद्ध स्नायुविज्ञानी डाक्टर कीथ वालेस, हार्ट केयर फाउंडेशन के डा. के. एल. चोपड़ा, डाक्टर टोनी अबु नादर व रूस के डाक्टर निकोलई ल्यूबीमोव ने भी इसी तरह के विचार व्यक्त किए।

वीर अर्जुन

महानगर ३ वीर अर्जुन, १० मार्च, १९९१

प्रज्ञा अपराध ही रोग के मूल कारण : डा. त्रिगणा

—कार्यालय संवाददाता—

नई दिल्ली, ९ मार्च। चेतना का एक हिस्सा मन है और दूसरा हिस्सा शरीर। मन की चेतना शरीर में बदलाव लाती है। महर्षि आयुर्वेद का सिद्धांत है कि मन हमारे शरीर पर बहुत गहरा प्रभाव डालता है। रोग से छुटकारा इस बात पर निर्भर करता है कि हम अपनी चेतना से किस प्रकार सम्पर्क करते हैं उससे किस प्रकार से सामंजस्य स्थापित करते हैं।

उक्त बात कल यहां तानसेन मार्ग स्थित फिक्की कमीशन रूम में महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान और हार्ट केयर फाउंडेशन आफ इंडिया के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित एक सेमिनार में अमेरिका के भारतीय मूल के चिकित्सक तथा अमेरिकन एसोसिएशन आफ मेडिसिन के अध्यक्ष डा. दीपक चोपड़ा ने कही।

डा. चोपड़ा ने कहा कि यद्यपि हमें अपना शरीर ठोस लगता है लेकिन यह शरीर नदी के समान है जो निरंतर बदलती रहती है। प्रति पांच दिन में एक बार पेट के अंदर की झिल्लियां बदल जाती है। हमारी त्वचा हर पांच सप्ताह में बदल जाती है और एक साल में हमारे शरीर के भीतर अणुओं का जो समूह है उसका स्थान दूसरे अणु ले लेते हैं। इस निरंतर बदलाव में आयुर्वेदिक दवायें अपनी अहम् भूमिका अदा करती है। उन्होंने कहा कि आयुर्वेदिक दवाओं का प्रभाव सर्वांगीण है। यह शरीर के अन्दर ही रोग से लड़ने की क्षमता प्रदान करती है। आधुनिक दवायें जहां रोगी के रोग का उपचार करते है वही आयुर्वेदिक औषधियां रोग के लक्षण को जानकर उपचार करते है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध स्नायु विज्ञानी डा. कीथ वैलेस ने भावातीत ध्यान और मानसिक क्रियाओं पर चर्चा करते हुए कहा कि उनके द्वारा किये गये अनेक अध्ययनों से ऐसे परिणाम सामने आये है जो इंगित करते है कि भावातीत ध्यान दिमाग की क्रियाशीलता को बढ़ाने में मदद [illegible] व्यक्ति की [illegible]त्मक क्षमता को काफी हद तक बढ़ा देता है।

इस गोष्ठी के अन्य वक्ता डा. केएल चोपड़ा ने जो मूलचन्द अस्पताल नई दिल्ली में हृदय रोग विभाग के विभागाध्यक्ष है, कहा कि महर्षि अमृत कलश न केवल हृदयरोग और कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों को ठीक करने में मददगार है बल्कि यह मनुष्य के शरीर की क्रियाओं को संतुलित करके शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। यह उस क्रिया को रोकता है जिससे दिल के दौरे पड़ने की सम्भावना रहती है।

सेमिनार की अध्यक्षता करते हुए वैद्यराज एवं विश्व विख्यात नाड़ी विशेषज्ञ डा. बृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने कहा कि प्रज्ञा अपराध ही रोग के मूल कारण है। व्यक्ति इस अपराध को जानबूझ कर करता है

सेहत

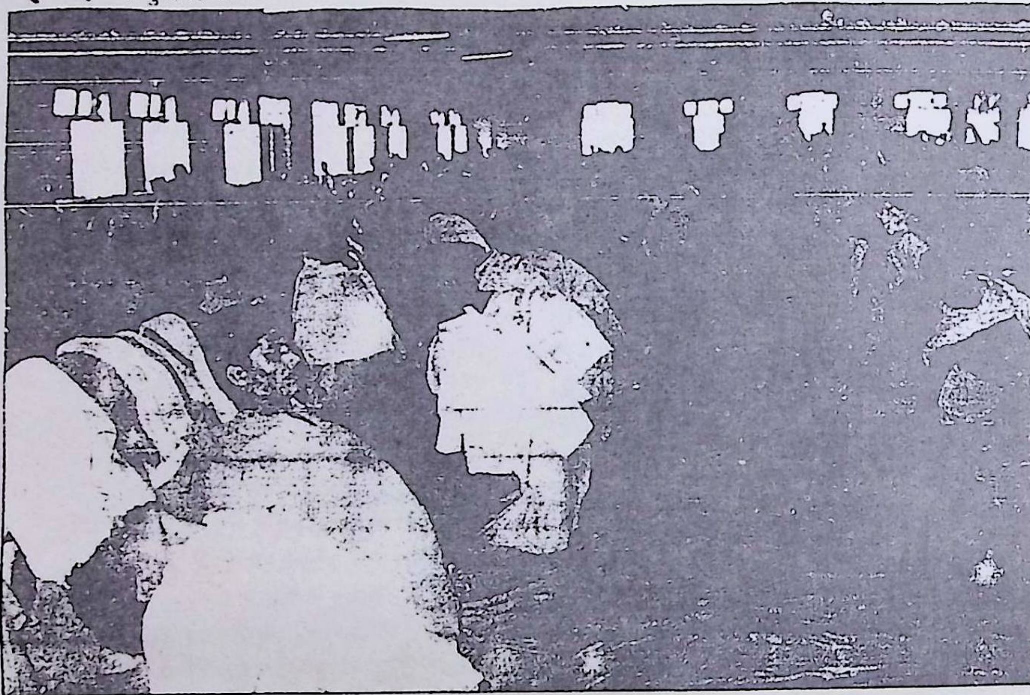
संडे मेल (साप्ताहिक)
वर्ष ३-अंक १८ नयी दिल्ली, ५ मई, १९९१

विश्व स्वास्थ्य : प्रज्ञापराध और आयुर्वेद

पंचकर्म: रोग-विकार दूर करने का जादुई इलाज

संतोष सिंह/वीरेंद्र मिश्र

विश्व स्वास्थ्य व्यवस्था इस समय बहुआयामी चुनौतियों के दौर से गुज़र रही है. विकसित देश



सभी चित्र : वीरेंद्र मिश्र

आयुर्वेद का एक अंग योग भी है

यदि एड्स और हृदयरोगों की विभीषिका से हड़बड़ाये हुए है, तो विकासशील देशों में कुपोषण और जरूरी दवाओं की कमी से होने वाली मौतों का सिलसिला जारी है. हालात की नाजुकता का तकाजा है कि डब्लू.एच.ओ. को भी समझ में आ गया है कि स्वस्थ और नीरोग समाज की स्थापना टोटल इंग्रीडिएंट वाली नयी ऐलोपैथिक दवाओं और आधुनिक चिकित्सा संयंत्रों के बूते की बात नहीं. इस लक्ष्य को रोगों की रोकथाम पर केंद्रित करके ही प्राप्त किया जा सकता है.

डब्लू.एच.ओ. (विश्व स्वास्थ्य संगठन) का यह सोच उसके 'वर्ष दो हजार तक सबको स्वास्थ्य' कार्यक्रम में खुलकर परिलक्षित हुआ है. डब्लू.एच.ओ. की नीति में यह बुनियादी परिवर्तन इस बात की स्वीकृति है कि विश्व की प्राचीन स्वास्थ्य पद्धति में आयुर्वेद का 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम' का सिद्धांत अजेय है और इसे अपनाकर व्यक्ति समाज और विश्व दीर्घायु और निरायु होने का सपना साकार कर सकता है.

सवाल उठता है कि यदि आयुर्वेद में इतनी सामर्थ्य होती तो लोक स्वास्थ्य सरक्षण में भारत सबका अगुआ न होकर बीमार देशों की श्रेणी में अग्रणीय क्यों है, जबकि केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय के आंकडे यही कहते है कि देश मे अस्सी फीसदी लोगों की सेहत का रख-रखाव अभी भी आयुर्वेद से ही होता है.



शव-आसन में वेदपाठी

भारत में आयुर्वेद की इन विफलताओं पर प्रकाश डालते हुए अमरीकी आयुर्वेद एसोसियेशन के अध्यक्ष डा. दीपक चोपडा कहते है कि भारत में आयुर्वेद की विफलताओं का कारण यह है कि हमने आयुर्वेद को एक तो वनौषधियों तक केंद्रित कर दिया है और इन वनौषधियों की शुद्धता और गुणवत्ता भी सोलह आने खरी नहीं है.

संडे मेल
साप्ताहिक

डा. चोपड़ा के मन में असल आयुर्वेद वनौषधियों में बहुत व्यापक है और इसमें व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक दोनों तरह के स्वास्थ्य रक्षण की व्यवस्था होती है. अमरीकी आयुर्वेद ऐसोसियेशन के अध्यक्ष की नजर में इस दिशा में सदी का सबसे महत्वपूर्ण काम महर्षि महेश योगी के नेतृत्व में चल रही महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना कर रही है

'महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना ने आयुर्वेद को उसके मौलिक रूप में प्रकाशित करते हुए कहा है कि संपूर्ण आयुर्वेद वनौषधियों की पोटली मात्र नहीं है बल्कि इसमें यज्ञ, योग, और ज्योतिष, अनुष्ठान, गंधर्ववेद और स्थापत्य वेद आदि ६ और अभिन्न अंग है.

महर्षि स्वास्थ्य योजना ने आयुर्वेद की अपनी अवधारणा को प्रचलित आयुर्वेद से अलग करते हुए महर्षि आयुर्वेद को संज्ञा दी है और दावा किया है कि महर्षि आयुर्वेद वैयक्तिक ही नहीं सामूहिक स्वास्थ्य के रख रखाव में भी सक्षम है.

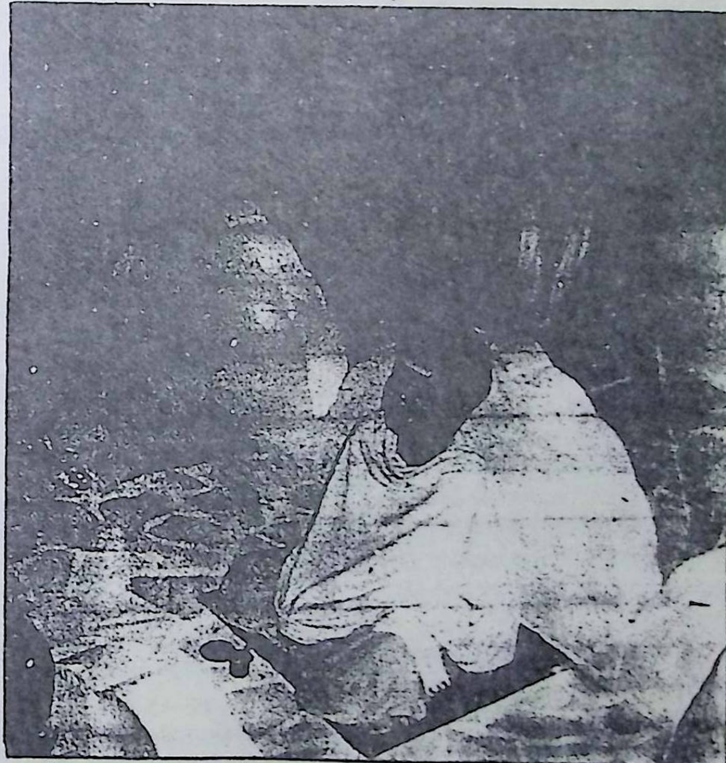
महर्षि आयुर्वेद की अवधारणा के बारे में सुप्रसिद्ध नाड़ी विशेषज्ञ आयुर्वेद मार्तंड राजवैद्य ब्रहस्पतिदेव त्रिगुणा का कहना है, यह अवधारणा मौलिक आयुर्वेद के सिद्धांतो के ही अनुरूप है. महर्षि आयुर्वेद में जो योग और गंधर्ववेद को शामिल किया गया है, वह ठीक ही है. चरक संहिता में रोगों के मूल कारण में 'प्रज्ञापराध' को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है उनकी राय में योग और गंधर्ववेद से व्यक्ति की प्रज्ञा इतनी निर्मल और प्राकृतिक नियमानुसारी हो जाती है, परिणामस्वरूप उसकी दिनचर्या ऐसी रहती है जिससे रोग पास नहीं फटकते

योग और स्वास्थ्य के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी देते हुए अजेय भारत निर्माण योजना के अध्यक्ष ब्रह्मचारी शैलेंद्र गहलौत कहते है कि महर्षि महेश योगी द्वारा प्रतिपादित योग की सबसे सरल शैली भावातीत ध्यान आध्यात्मिक पुनरुत्थान के साथ-साथ असाध्य और साध्य दोनों तरह के रोगों की रोकथाम और उपचार में सहायक होता है. ब्रह्मचारी गहलौत के अनुसार यह बात किसी अटकलबाजी पर आधारित नहीं है बल्कि पिछले बीस साल में २७ देशों के १५० स्वतंत्र शोध संस्थानों में हुई चार सौ से भी अधिक शोधों पर आधारित है. इन शोध संस्थानों में हारवर्ड मेडिकल स्कूल, ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी, एम.आई.टी मैस्साच्युरोट्स, कैलीफोर्निया यूनीवर्सिटी स्वीडन, इंस्टीट्यूट ला राच्फउकौल्ड फ्रास तथा यार्क विश्वविद्यालय कनाडा शामिल है ये शोधें और अध्ययन अंतरराष्ट्रीय ख्याति के साइंस जर्नलो जैसे लानसेट, साइंटिफिक अमरीकन, अमरीकन जर्नल फिजियोलाजी, कनाडियन मैडिकल एसोसियेशन जर्नल, जर्नल आफ माइंड एंड बिहेवियर, इंटरनेशनल जर्नल आफ न्यूरो साइंस, साइको सोमेटिक मैडीसिन तथा फारमेकोलाजी, बायोकैमिस्ट्री और बिहेवियर में प्रकाशित तथा स्वीकृत हो चुकी है.

गहलौत के अनुसार शोधों और अध्ययनों से साबित हुआ है कि भावातीत ध्यान से हृदयरोग उच्चरक्त दाब, श्वसनी दमा, नेत्र रोग, श्रवण क्षमता, मोटापा, कैंसर, मानसिक रोग, मौसमी एलर्जी और नशाखोरी आदि की रोकथाम और उपचार हो सकता है. शोधें कहती है कि जो लोग पांच साल से लगातार भावातीत ध्यान कर रहे होते है उनकी शारीरिकी न केवल अपनी उम्र से बारह-पंद्रह साल वाले कम युवा की तरह आदर्श होती है बल्कि उन लोगों में हृदय रोग की संभावनाएं ८३ फीसदी, कैंसर की ५५ फीसदी, मानसिक रोगों की ८७ फीसदी और संक्रामक रोगों की ३० फीसदी कम हो जाती है. श्री गहलौत इन्हीं सब कारणों से भावातीत ध्यान को स्कूलों, कालेजों और कारखानों दफ्तरों और कारगारों की नियमित दिनचर्या का अंग बनाने की सिफारिश करते है.

रोगी का प्रज्ञा या चेतना के स्तर पर वरिष्ठ वैद्य इंद्रासन पांडेय कहते है कि आयुर्वेद रोगोत्पत्ति के लिए वात, पित्त और कफ की संहिता में असंतुलन को मानता है. श्री पांडेय के विश्लेषण में अलग-अलग रोग की प्रकृति की तरह हरेक स्वर की भी अलग-अलग प्रकृति होती है. तय करने की बात यह है कि पूरे रोग की प्रकृति कैसी बनेगी और उसमें गायक या वाद्ययंत्र में कौन प्रभावकारी स्पंदन पैदा कर सकेगा

वैद्यराज पांडेय ने इस संबंध में सैद्धांतिक रूप से कुछ रोगों के लिए खास रोगों की सारिणी भी तैयार की है जिस पर लंकास्टर (बोस्टन) अमरीका स्थित महर्षि आयुर्वेदिक अस्पताल में शोध अध्ययन हो रहे हैं. इस अस्पताल के निदेशक डा. दीपक चोपड़ा के अनुसार हम रोगो में 'प्रिमोडियन साउंड्स' के असर को परख रहे हैं. हमें प्रारंभिक स्तर पर सफलताएं भी मिली हैं. सामवेद का गायन और गंधर्ववेद के कुछ राग रोगियों के त्वरित उपचार में सहायक सिद्ध हुआ है. डा. चोपड़ा के अनुसार इस क्षेत्र में अभी बहुत शोध की गुंजाइश है और हम उस कार्य में लगे हुए भी हैं.



भावातीत ध्यान करते वेद पाठी

उपचार करने में योग के बाद सबसे महत्वपूर्ण भूमिका सामवेद और उसके उपवेद गंधर्ववेद की है. यह बात तो सभी जानते मानते है कि संगीत में मानसिक शांति प्रदान करने की अपार क्षमता है लेकिन उसका रोगोपचार में भी सफल प्रयोग हो सकता है, यह बात थोड़ी नयी है सैद्धांतिक स्तर पर इस कार्य में लगे आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय, गया (बिहार) के पूर्व उपकुलपति और महर्षि आरोग्य धाम के

मानसिक शुचिता के साथ-साथ आयुर्वेद में ग्रह नक्षत्रों और पारिस्थिकी की भी कम महत्वपूर्ण भूमिका नहीं है एक ही [illegible] बराबर के रोगियों में एक पर वहां उप[illegible] व्यवस्था असर करती है और दूसरा बेअसर रहता है इसके कारणो पर जाते हुए महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ में ज्योतिष संकाय के अध्यक्ष स्वामी विशुद्धानंद कहते हैं, यह सब ग्रह नक्षत्रों का खेल है जो व्यक्ति के जन्म से

संडे मेल साप्ताहिक

ही उसके साथ लग जाते हैं.

विशुद्धानंद जी के अनुसार विभिन्न रत्नादि को धारण कर तथा ग्रह शांति के अनुष्ठानों से व्यक्ति का स्वास्थ्य बिगडने के पूर्व ही साधा जा सकता है. स्वामीजी अनुष्ठानों की शास्त्रीय शुद्धता पर बल देते हैं और कहते हैं कि विद्यापीठ में ऐसे विशेषज्ञों का निर्माण हो रहा है जिससे आगे चलकर स्वास्थ्य जगत को योग्य ज्योतिषियों और समर्थ याज्ञिकों की कमी नहीं रहेगी.

स्वास्थ्य रक्षण में पर्यावरण शुद्धता का अपना अलग महत्व है. महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ के कुलपति डा. ज्ञानेंद्र महापात्र का इस मामले में कहना है, दुनिया के वैज्ञानिक पर्यावरण प्रदूषण के खतरों से बार-बार आगाह कर रहे हैं. ओजोन का स्तर घट रहा है. ब्लैक होल दिखायी पड रहा है. ऋतुओं में साम्यता मिट रही है. ठंडे मुल्क गर्म हो रहे हैं और गर्म ठंडे. अजीब तरह की उथल-पुथल. यह सब प्राकृतिक नियमानुसारी जीवन का उल्लंघन करने का परिणाम है. लेकिन भयाक्रांत होने की जरूरत नहीं है. यज्ञों और सामूहिक योग साधना से समस्त सृष्टि को संतुलित करना संभव हो गया. प्रणीत भावातीत ध्यान और भावातीत ध्यान सिद्धि कार्यक्रम में पारंगत सात हजार साधकों के नियमित सामूहिक साधन समस्त विश्व का जीवन प्राकृतिक नियमानुसारी बनाने में समर्थ हैं.

पर्यावरण शुद्धीकरण स्थापत्य का अपना अलग महत्व है गगनचुंबी इमारतों प्राकृतिक नियमों का विरोधी वास्तुकला तथा हरीतिमा से रहित शहरों की बाढ़ ने भी आम आदमी के स्वास्थ्य को बुरी तरह से प्रभावित किया है. इस दिशा में भारतीय स्थापत्य और जीवन शैली स्वास्थ्य संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह कर सकती है. महर्षि हैविन आंन अर्थ डिवलपमैंट कारपोरेशन के भारत स्थित प्रवक्ता के अनुसार उनके संगठन ने इस दिशा में प्रतीक स्वरूप विश्व में ४९ मृत्युंजय शहरों का निर्माण कराने की योजना बनायी है. यह निर्माण कार्य कनाडा और अमरीका से शुरू होगा.

इन सबका मतलब यह नहीं है कि महर्षि आयुर्वेद में रोगी के शारीरिक विकार को नजरंदाज किया गया है. शारीरिक विकारों का शमन करने के लिए जहां एक ओर रोगों की रोकथाम के लिए 'पंचकर्म' को पूर्ण रूप में जागृत किया गया है, वहीं उपचार के लिए शास्त्रीय रूप से शुद्ध औषधियां भी तैयार की जा रही हैं. विज्ञान सम्मत तथ्यों पर यकीन करने वालों के लिए यह शुभ सूचना है कि प्रारंभिक स्तर पर ही पंचकर्म और आयुर्वेदिक औषधियां आधुनिक मानदंडों पर खरी उतरी हैं.

फेयरफील्ड आयोवा और मैस्साच्युसेट्स क्लीनिक में रोगियों पर किये गये पंचकर्म शोध अध्ययनों से यह तथ्य सामने आया है कि पंचकर्म ऊर्जा, स्फूर्ति भूख बढ़ाने और कायाकल्प में समर्थ है.

महर्षि आयुर्वेद प्रोडक्ट की पूर्ण शास्त्रीय ढंग से तैयार औषधियों में से एक विशिष्ट औषधि 'महर्षि अमृत कलश' पर हुई शोध ने यह धाक जमा दी है कि आयुर्वेद की औषधियां ऐलोपैथिक औषधियों से ज्यादा प्रभावशाली किफायती और हानिकारक साइड इफैक्ट से मुक्त हैं.

दिल्ली के प्रसिद्ध मूलचंद अस्पताल में हृदयरोग के विशेषज्ञ (कर्नल) डा. के.एल. चोपड़ा के अनुसार अमृत कलश हृदय की बार-बार बाईपास सर्जरी से निजात दिलाने में सक्षम है. जापान के यूकोनीवा संस्थान में हुए शोध का हवाला देते हुए वे कहते हैं कि धमनियां आक्सीजन के फ्री रैडिकल्स अर्थात मुक्त अणुओं को उत्पात मचाने के कारण क्षतिग्रस्त हो रही हैं और महर्षि अमृत कलश इन्हीं फसादी अणुओं को निष्क्रिय करता है.

अमरीका के ओहियो विश्वविद्यालय ने एनाटामिक पैथोलाजी के प्रोफेसर डा. हरिशर्मा का अपने शोध अध्ययन के बाद कहना है कि अमृत कलश हृदय रोग ही नहीं स्तन कैंसर, मौसमी एलर्जी, रक्त का थक्का बनने, नशाखोरी, स्नायुरोगों और नेत्ररोगों की उपचार और रोकथाम में भी सहायक हो सकता है.

महर्षि महेश योगी के निर्देशन में चल रही संस्थाएं इस तरह आयुर्वेद के सिद्धांत और शोध के स्तर पर पुनः प्रतिष्ठा स्थापित करने के साथ मूर्त रूप में भी कुछ काम कर रही हैं. इन कार्मो में जहां एक ओर भारत सहित विश्व के अनेक हिस्सों में आयुर्वेदिक अस्पताल आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय और शोध संस्थान खुलना है, वहीं उन देशों में आयुर्वेद को सरकारी स्तर पर मान्यता दिलाना है जहां स्वास्थ्य मंत्रालय की अनुमति बिना कोई नयी पद्धति से रोगियों का उपचार नहीं कर सकता है.

महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना एक शीर्षस्थ अधिकारी श्री अजय प्रकाश के अनुसार दिल्ली के पास सरकारी कारणों से विलंबित १२ सौ शैय्या के आयुर्वेदिक महर्षि आरोग्य धाम के साथ अब तक २९ देशों में ५६ महर्षि आयुर्वेद रोकथाम केंद्र खोले जा चुके हैं. पहले चरण में सौ महर्षि आरोग्य मंदिर खोलने का लक्ष्य है. महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना के तहत इन आयुर्वेदिक अस्पतालों में काम करने के लिए भारत के श्रेष्ठ वैद्यों और आयुर्वेद विशेषज्ञों ने उत्तरी अमरीका के १२ मेडिकल (ओलोपैथिक) डाक्टरों को महर्षि आयुर्वेद की विभिन्न विधाओं में प्रशिक्षित किया है. आजकल सोवियत संघ में भी एक हजार डाक्टरों को महर्षि आयुर्वेद में प्रशिक्षित किया जा रहा है.

श्री अजय प्रकाश के अनुसार इसके अलावा उनके संगठन ने ब्राजील, मारीशस, श्रीलंका, जापान, सोवियत संघ, हंगरी, पोलैंड, हालैंड, जर्मनी, स्वीडन, डेनमार्क, स्विटरजलैंड, अमरीका और कनाडा में आयुर्वेदिक पद्धति और वनौषधियों के प्रयोग की पूर्ण या सीमित अनुमति प्राप्त की है.

आयुर्वेद की बढ़ती हुई मांग के संदर्भ में सवाल उठाया जाता है कि भविष्य में क्या इस देश में इतनी जड़ी बूटियां बची रहेंगी कि समस्त विश्व की मांग को पूरा किया जा सके. इस संबंध में महर्षि आयुर्वेद प्रोडक्ट्स निदेशक श्री आनंद श्रीवास्तव का कहना है, कि हम इस बात के लिए सजग हैं. हमने इसी को ध्यान में रख कर अपने ब्लाक स्तर की योजना में हर आरोग्यधाम के साथ एक वनौषधि उद्यान लगाने की योजना तैयार की है.

इसके अलावा हमें उन दक्षिण अमरीकी देशों से भी आमंत्रण मिला है जहां वनौषधियों का अपार भंडार है. श्री आनंद श्रीवास्तव के अनुसार उनके संगठन को बालराज महर्षि जैसे वनौषधि सम्राट और उनके शिष्यों का सहयोग प्राप्त है जिन्हें इस पृथ्वी में उगने वाली किसी भी वनस्पति की पहचान और उसके औषधि गुणों की जानकारी है. □

डाबर द्वारा प्रकाशित आयुर्वेद-विकास

मई 1991

राजधानी में आयुर्वेद पर गोष्ठी

राजधानी में पिछले महीने एक अत्यंत महत्व की घटना हुई। यह घटना अशोक रोड, राजेन्द्र प्रसाद रोड और अकबरपुर रोड स्थित राजनीतिक दलों की चुनावी सरगर्मी से अलग।

इस घटना का सबंध सत्ता से नहीं, बल्कि सत्ता को भी दुरुस्त रखने वाले स्रोत से था। स्वास्थ्य के मौलिक, प्राचीन और पूर्ण ज्ञान-विज्ञान से था, आयुर्वेद से था। घटना-स्थल भी देश का सर्वोच्च स्वास्थ्य संस्थान अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान था और भाग लेने वालों में स्वयम् प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर, वैद्य-शिरोमणि बृहस्पति देव त्रिगुणा जी, उड़ीसा के राज्यपाल यज्ञ दत्त शर्मा, विदेशों में आयुर्वेद की धूम मचाने वाले महर्षि महेश योगी के प्रतिनिधि महर्षि आयुर्वेद के निदेशक आनन्द श्री वास्तव तथा मारीशस के राजदूत आनन्द प्रेम जैसे दिग्गज लोग थे। इन्द्र प्रस्थीय वैद्य महासभा और महर्षि आयुर्वेद के तत्वाधान में आयोजित समारोह, जो बाद में स्पेण्डलाइटिस पर आयुर्वेदीय शोध सम्मेलन में तब्दील हो गया, इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा, क्योंकि पहली बार आयुर्वेद के महत्व और समस्याओं पर इस ज्ञान के संरक्षकों और शीर्ष सत्ताधीश के बीच प्रत्यक्ष और कारगर संवाद हुआ।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासभा के अध्यक्ष श्री राम शर्मा और पूर्व अध्यक्ष श्री त्रिगुणा ने प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर, राज्यपाल यज्ञदत्त शर्मा तथा उनके साथ आये नौकरशाहों का ध्यान स्वतन्त्रता के बाद भी आयुर्वेद के साथ की जा रही ज्यादतियों की ओर खींचा।

श्री शर्मा ने चिंता जताई कि उन्हें समझ में नहीं आता कि देश की तीन चौथाई जनता के स्वास्थ्य की रखवाली आयुर्वेद करता है लेकिन उस पर स्वास्थ्य-बजट का मुश्किल से ढ़ाई फीसदी खर्च होता है। त्रिगुणा जी ने स्वास्थ्य मंत्रालय की चुटकी लेते हुए बताया कि हमें अपने शोध संस्थान राष्ट्रीय विद्यापीठ संस्थान के लिए जमीन पिछले 6 साल से आश्वासनों में ही मिल रही है।

समारोह में उपस्थित वैद्य-समुदाय की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हुए पण्डित यज्ञदत्त शर्मा ने कहा कि हालांकि ज्ञान का दर्जा सत्ता से बहुत ऊंचा है लेकिन उसकी बेल को फैलने के लिये सत्ता का सहारा चाहिये।

श्री शर्मा ने आधुनिक विज्ञानियों की आयुर्वेद के बारे में निम्न धारणा को गलत करार देते हुए प्रमाण प्रस्तुत किया। सांख्य पर ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व विक्रम की नौवीं शताब्दी में जन्मे आचार्य वाचस्पति मिश्र के फोटो स्टेट्स पन्ने दिखाते हुए उन्होंने ललकारा कि आधुनिक विज्ञान के तीरंदाज देख लें कि शोध के बारे में देश की मौलिक सोच क्या है ?

श्री शर्मा ने आधुनिक विज्ञान की कलई खोलते हुए कहा कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान ने अपनी शोध-विद्या के तहत एक भी ऐसी एण्टीबायोटिक औषधि तैयार नहीं की, जिससे उपद्रव न होते हों, साइड इफेक्ट न होते हों।

उन्होंने कहा कि अमेरिका के अस्पतालों के तीस फीसदी बिस्तर इन्हीं उपद्रवों से ग्रस्त रोगियों के हैं। प्रधानमंत्री के समक्ष आयुर्वेद का पक्ष प्रस्तुत करते हुए स्वागताध्यक्ष और महर्षि आयुर्वेद के निदेशक श्री आनन्द श्री वास्तव ने बताया कि अब हमारे वैद्यों को इस बात के लिये बगलें नहीं झांकने हैं कि उनका ज्ञान आधुनिक विज्ञान से प्रमाणित नहीं है।

श्री आनन्द ने कहा कि विश्व की शीर्षस्थ शोध-शालायें आयुर्वेद की श्रेष्ठता सिद्ध करती जा रही है और आधुनिक विज्ञान के शीर्ष देशों की सरकारें सोच रही हैं कि क्यों न आयुर्वेद को अपनाकर कम कीमत पर देश की स्वास्थ्य-व्यवस्था को मजबूत किया जाय।

महर्षि आयुर्वेद के निदेशक ने प्रधानमंत्री को बताया कि आयुर्वेद को तहेदिल से अपनाकर भारत न केवल स्वास्थ्य-व्यवस्था, बल्कि अर्थव्यवस्था को भी मजबूत कर सकता है। आयुर्वेद से ही अपने व्यापार-घाटे को पूरा कर सकते हैं। श्री आनन्द ने कहा कि उनका दावा अतिशयोक्ति नहीं है, बल्कि पिछले कुछ वर्षों में विश्व में आयुर्वेद के बढ़ते प्रभाव और आयुर्वेदिक औषधियों के कई गुणा निर्यात पर आधारित है, लेकिन आयुर्वेद को केवल वनौषधियों तक सीमित रख कर हम फिर एक भूल करेंगे। उन्होंने योग, गंधर्ववेद, यज्ञ, अनुष्ठान, ज्योतिष और स्थापत्य को आयुर्वेद का अभिन्न अंग बताया। ज्ञान के प्रत्युत्तर में सत्ता की ओर से भी वही उत्तर मिला जिसकी आशा होनी चाहिए। प्रधानमंत्री ने ज्ञान को नमस्कार करते हुए कहा कि सत्ता विलुप्त हो जाती है लेकिन ज्ञान नहीं। इसलिए ज्ञान के पुजारियों को धैर्य रखना चाहिए। प्रधानमंत्री ने दुख व्यक्त किया कि गांधी जी के उपदेशों के बावजूद पश्चिम का अंधा अनुकरण राष्ट्रीय कर्त्तव्य बन गया है। उन्होंने कहा कि इसके बावजूद हमें घबराना नहीं है, क्योंकि हम जानते हैं कि अतीत को संजोये बिना भविष्य उज्वल नहीं बन सकता।

अतीत के संबंध में श्री चंद्रशेखर ने भारत और चीन के महान ज्ञान की चर्चा की और कहा कि आज का विज्ञान इन देशों के रहस्य ज्ञान में भौतिकशास्त्र के बीज ढूंढ़ रहा है।

प्रधानमंत्री ने कहा कि भारतीय स्वास्थ्य ज्ञान में सौ वर्ष की आयु की उपलब्धि थी, कामना नहीं। स्वास्थ्य के पेशे पर अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होने कहा कि यही एक पेशा है, जो दोस्त और दुश्मन में फर्क नहीं करता।

प्रधानमंत्री ने कहा कि भारतीय ज्ञान की विशेषता यह है कि वह जीवन का संदेश देता है और उसे बनाये रखने हेतु शोध-शालाओं की अट्टालिकाओं को जरुरी नहीं बनाता। उसका शोध और विकास तो खुले जंगल में होता है।

भारतीय संस्कृति आरण्य संस्कृति की पूजक है, महलों की नहीं। प्रधानमंत्री ने माना कि आयुर्वेद के साथ वह सद्व्यवहार नहीं हुआ, जो जरुरी था, लेकिन वैद्य समुदाय धीरज रखें।

कुमार राजेन्द्र
(पी० ई० एन०)



काशी गुरुवार चैत्र शुक्ल ५ ता० २१ मार्च १९९१

आयुर्वेद की जान है नाड़ीज्ञान

हमारी चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद प्रकृति के नियमानुसार जीवन जीना तो सिखाती ही है साथ ही वनौषधियां बिना किसी पार्श्व प्रभाव के असाध्य बीमारियों को मूल से ठीक करनेवाली हैं। यहां तक कि आयुर्वेद से अब तो कैंसर, टिटेनस, एड्स जैसी खतरनाक और जानलेवा बीमारियों से भी बचा जा सकता है। नाड़ी का ज्ञान तो कोई जवाब हीं नहीं है।

एलोपैथी चिकित्सा पद्धति में बहुत से प्रयोग करने के बाद शरीर की व्याधि का पता बमुश्किल से हो पाता है, जबकि आयुर्वेद में नाड़ी ज्ञान एक ऐसी पद्धति है जिसमें वैद्य हाथों को नाड़ियों का स्पर्श, शरीर की स्थिति को देखकर और प्रश्न पूछकर किसी भी बीमारी के बारे में पता लगा लेते हैं। नाड़ी ज्ञान में नाड़ी का स्पन्दन, बीमारी, उसका मस्तिष्क और हृदय पर प्रभाव बड़ी आसानी से पता चला जाता है। वास्तव में हमारा शरीर तीन दोषों से भरा पूरा एक पिण्ड है। वात, पित्त और कफ। ये त्रिदोष पूरे शरीर की क्रियाओं को संचारित तो करते ही हैं, साथ ही यदि कभी भी इनमें असंतुलन हो जाता है तो उसी के अनुसार शरीर में व्याधियां जन्म ले लेती हैं। नाड़ी ज्ञान का ज्ञाता इन रोगों को स्पर्श मात्र से जान लेता है। ऐसे में यदि रोगी अपने रोग को छिपाता भी है तो वह वैद्य के नाड़ी ज्ञान से छिपा नहीं पाता। इस ज्ञान में तो ऐसी तकनीक छिपी हुई है कि मस्तिष्क का रोग कैंसर एड्स या अन्य कोई भी भयावह बीमारी हो उसका पता चल जाता है। वैद्यराज बृहस्पति देव त्रिगुणा अ.भा. आयुर्वेद कांग्रेस अध्यक्ष अपने इस ज्ञान के लिये आज विश्व विख्यात हो चुके हैं। विदेशों में जब भी वह जाते हैं तो रोगियों की लम्बी कतारें जो छः महीने पहले से ही अपना पंजीकरण करा चुके होते हैं उनके सामने होती हैं।

ऐसे में बहुत से एड्स और कैंसर के रोगी भी आते हैं। जिनके हाथ की नाड़ी का स्पर्श करते और उनके शरीर का दर्शन करके ही वह उस व्यक्ति से अलग कर देते हैं। एड्स के रोगी को तो अलग ले जाकर उसकी बीमारी के बारे में उसको जानकारी दे देते हैं फलस्वरुप रोगी अपने शरीर की व्याधि की जानकारी पाकर इलाज कराना आरंभ कर देता है।

जबकि शरीर की इन व्याधियों का पता लगाने के लिये एलोपैथी चिकित्सा पद्धति में नाना प्रकार के परीक्षणों से रोगी को गुजरना पड़ता है। तब कहीं जाकर उसे अपने सही रोग के बारे में जानकारी हो पाती है!

भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में नाड़ी का ज्ञान का कोई मुकाबला नहीं है। अपने इस नाड़ी ज्ञान पर महर्षि च्यवन कलश जैसी औषधियों के बलबूते पर ही इस चिकित्सा विज्ञान को अलख आज समूचे विश्व में प्रस्फुटित होती जा रही है।

यहां तक कि चीन, जापान सोवियत संघ आदि देशों के लोग भी आयुर्वेद के प्रति जागरूक हो रहे हैं। अमरीका और पश्चिमी जगत में तो आयुर्वेद और इसके पंचकर्म चिकित्सा के लिये तो लोगों में भागमभाग मची है।

– वीरेंद्र मिश्र

दैनिक जागरण

पैसे नई दिल्ली, रविवार 10 मार्च 1991

प्रज्ञा अपराध ही रोग के मूल कारण –डा. त्रिगुणा

राजधानी संवाददाता

नई दिल्ली, ९ मार्च। चेतना का एक हिस्सा मन है और दूसरा हिस्सा शरीर मन की चेतना शरीर में बदलाव लाती है। महर्षि आयुर्वेद का सिद्धांत है कि मन हमारे शरीर पर वहुत गहरा प्रभाव डालता है। रोग से छुटकारा इस वात पर निर्भर करता है कि हम अपनी चेतना से किस प्रकार संपर्क करते है उससे किस प्रकार से सामंजस्य स्थापित करते है।

उक्त बात कल यहां तानसेन मार्ग स्थित फिक्की कमीशन रूम में महर्षि आयुर्वेद प्रतिष्ठान और हार्ट केयर फाउंडेशन आफ इंडिया के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित एक सेमिनार में अमेरिका के भारतीय मूल के चिकित्सक तथा अमेरिकन एसोसियेशन आफ मेडिसिन के अध्यक्ष डा. दीपक चोपड़ा ने कहा।

डा. चोपड़ा ने कहा कि यद्यपि हमें अपना शरीर ठोस लगता है लेकिन यह शरीर नदी के समान है जो निरंतर बदलती रहती है। प्रति पांच दिन में एक वार पेट के अंदर की झिल्लियां वदल जाती है। हमारी त्वचा हर पांच सप्ताह में वदल जाती है और एक साल में हमारे शरीर के भीतर अणुओं का जो समूह है उसका स्थान दूसरे अणु ले लेते हैं। इस निरंतर बदलाव में आयुर्वेदिक दवायें अपनी अहम भूमिका अदा करती है। उन्होंने कहा कि आयुर्वेदिक दवाओं का प्रभाव सर्वांगीण है यह शरीर के अंदर ही रोग से लड़ने की क्षमता प्रदान करती है। आधुनिक दवायें जहां रोगी के रोग का उपचार करत है वहीं आयुर्वेदिक औषधियां रोग के लक्षण को जानकर उपचार करते हैं।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध स्नायु वैज्ञानिक डा. कीथ वैलेस ने भावातीत ध्यान और मानसिक क्रियाओं पर चर्चा करते हुए कहा कि उनके द्वारा किये गये अनेक अध्ययनों से ऐसे परिणाम सामने आये है जो इंगित करते हैं कि भावातीत ध्यान दिमाग की क्रियाशीलता को बढ़ाने में मदद कर व्यक्ति की रचनात्मक क्षमता को काफी हद तक बढ़ा देता है।

इस गोष्ठी के अन्य वक्ता डा. के.एल.चोपड़ा ने जो मूलचंद अस्पताल नई दिल्ली में हृदयरोग विभाग के विभागाध्यक्ष है, कहा कि महर्षि अमृत कलश न केवल हृदयरोग और कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों को ठीक करने में मददगार है बल्कि यह मनुष्य के शरीर की क्रियाओं को संतुलित करके शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। यह उस क्रिया को रोकता है जिससे दिल के दौरे पड़ने की संभावना रहती है।

सेमिनार की अध्यक्षता करते हुए वैद्यराज एवं विश्व विख्यात नाड़ी विशेषज्ञ डा. वृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने कहा कि प्रज्ञा अपराध ही रोग के मूल कारण हैं। व्यक्ति इस अपराध को जानबूझ कर करता है और विभिन्न प्रकार के रोग को आमंत्रित करता है।

जालंधर, दिल्ली और अम्बाला से प्रकाशित
रजि नं. D/DN/363

भारत का सर्वाधिक प्रकाशित हिन्दी दैनिक
संस्थापक : अमर शहीद लाला जगतनारायण जी

फोन : 7181133, 7187248, 7184610
फैक्स : 91-11-7187700

विश्व-दर्पण संस्करण

पंजाब केसरी

The Daily PUNJAB KESARI, Delhi.

वर्ष 9 अंक 307

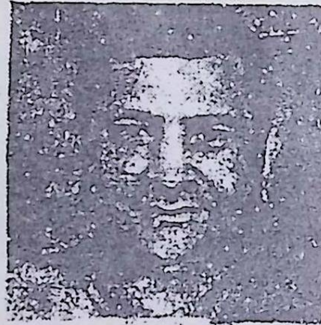
सोमवार, 4 नवम्बर, 1991 तदनुसार 19 कार्तिक, 2048 मूल्य 1 रुपया 50 पैसे

स्वास्थ्य विसंगतियों के लिए आधुनिक चिकित्सा पद्धति दोषी

स्वस्थ रहना अब एक चुनौती बनता जा रहा है । ऐसे परिवारों की संख्या अब गिनती में होगी जो पूरी तरह निरोग हों । परिवारों में बच्चे यदि मौसमी रोगों से पीड़ित हो जाते हैं तो बूढ़े, बुजुर्गों में पुरानी और जानलेवा बीमारियों का अनुपात लगातार बढ़ता जा रहा है । आमतौर पर इसके लिए स्वास्थ्य सेवाओं की कमी को दोषी ठहरा दिया जाता है, लेकिन जहां स्वास्थ्य सेवाएं मुस्तैद हैं वहां बसर करने वाले लोग कहां बड़े स्वस्थ हैं ? बड़े शहरों में स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता के कारण आकस्मिक मृत्यु की घटनाएं भले कम होती हों लेकिन मंद-मृत्यु के शिकार होने वाले लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है ।

इस भयावह स्वास्थ्य परिदृश्य के बारे में इन्द्रप्रस्थीय वैद्य महासभा के अध्यक्ष डा. देवेन्द्र त्रिगुणा का कहना है कि समूची विसंगतियों के लिए हमारी मौजूदा जीवन शैली और उस जीवन शैली की सोच से निकली आधुनिक चिकित्सा पद्धति उत्तरदायी है । इस जीवन शैली और चिकित्सा पद्धति का दोष यह है कि यह प्राकृतिक नियमों के टकराव के रास्ते में उपजी है । प्राकृतिक नियमों से टकराव अल्पकालिक राहत भले महसूस हो, लम्बे समय में वह तरह-तरह के दैविक, दैहिक और भौतिक ताप देने वाली है ।

विश्व में महर्षि आयुर्वेद को पताका फहराने वाले अखिल भारतीय वैद्य महा सम्मेलन के संस्थापक अध्यक्ष श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा की राय में समग्र आयुर्वेद ही ऐसी जीवन शैली का प्रतिपादन करता है जो जीवन को प्राकृतिक नियमानुसारी बनाती है । आयुर्वेद मार्तंड के मत में प्रचलित आयुर्वेद केवल वनौषधियों और शारीरिक रोगों को दूर करने तक सीमित हो गया है । त्रिगुणा जो इस सिलसिले में गर्व से महर्षि महेश योगी द्वारा प्रतिपादित महर्षि आयुर्वेद का उल्लेख करते हैं जिसमें वनौषधियों के साथ योग, पञ्चकर्म, यज्ञ, ज्योतिष, अनुष्ठान, मंत्रोपचार, गंधर्व वेद एवं स्थापत्य वेद अनिवार्य रूप से शामिल हैं । वैद्य महासम्मेलन के संस्थापक अध्यक्ष के विचार में महर्षि आयुर्वेद वनौषधियों से केवल शरीर के जड़ दोषों और रोगों की रोकथाम और उपचार का ही प्रबंध नहीं करता बल्कि मानसिक रोगों को ठीक करने के साथ दैविक एवं भौतिक तापों एवं आपदाओं को दूर करने की गारंटी देता है । महर्षि आयुर्वेद के योग, यज्ञ, गंधर्ववेद, स्थापत्यवेद, ज्योतिष एवं अनुष्ठान वैयक्तिक स्वास्थ्य के साथ सामूहिक स्वास्थ्य की भी व्यवस्था करते हैं ।



वैद्य देवेंद्र त्रिगुणा

जहां तक महर्षि आयुर्वेद को वैज्ञानिक पुष्टि की बात है तो वह आधुनिक एवं प्राचीन दोनों विज्ञानों से प्रमाणित है । महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना के प्रमुख श्री आनंद श्रीवास्तव के अनुसार 28 देशों में 150 से भी अधिक विश्व स्तरीय शोध संस्थानों में हुई लगभग 400 वैज्ञानिक शोधों ने महर्षि आयुर्वेद को शत-प्रतिशत वैज्ञानिक ठहराया है ।

कैलोफोर्निया, हावर्ड, लुडविज, ओहियो, स्वीडन, एम.आई.यू. लमोला विश्वविद्यालयों, मैस्साच्यूस्टेट्स, मेडिकल सेंटर आफ साऊथ डकोटा, कालेज आफ फार्मेसी, यूकोनोवा एवं हिलटाप रिहैबिलीटेशन सेंटरों जैसे संस्थानों ने शारीरिक मानसिक एवं वैयक्तिक-सामूहिक स्वास्थ्य रक्षण में महर्षि आयुर्वेद के विज्ञान सम्मत चमत्कारी प्रभावों की पुष्टि की है ।

महर्षि अमृत कलश पर अमरीका, कनाडा और जापान के शोध संस्थानों में हुई आधुनिक शोधों और क्लीनिकल परीक्षणों से यह साबित हुआ है कि अमृत कलश हृदय रोगों के उपचार और रोकथाम, कैंसर रोगों क्षमता और स्तन कैंसर के उपचार तथा मानसिक रोग एवं नशेड़ियों के पुनर्वास में सक्षम है । उल्लेखनीय है कि हृदय रोग एवं कैंसर विश्व की सर्वाधिक खतरनाक बीमारियों में हैं । पिछले कुछ वर्षों में उनका मौत का तांडव तेज होता ही जा रहा था । आनंद श्रीवास्तव के अनुसार हृदय रोग के अलावा एलोपैथिकों के लिए चुनौती अन्य रोगों पर भी आयुर्वेदिक वनौषधियों के प्रभावों को आधुनिक मानदंडों में परखना शुरू किया गया है । मधुमेह तक अम्तोमेप एवं लिवोमेप औषधि पर हुई प्रारम्भिक आधुनिक वैज्ञानिक शोधों और क्लीनिकल परीक्षणों में इस बात के पुष्ट प्रभाव मिले हैं कि ये औषधियां डायबीटीज (मधुमेह) अस्थमा (दमा) एवं यकृत संबंधी दोषों को दूर करने में सहायक हैं । इस संदर्भ में सवाल उठता है कि फिर आयुर्वेदिक औषधियों की प्रतिष्ठा क्यों घटी ? महर्षि आयुर्वेद की आर. एंड. डी. के निर्देशक डा. बावा की राय में आयुर्वेदिक औषधि निर्माण में शास्त्रीयता और शुद्धता की जांच के लिए एक पूर्ण वैज्ञानिक तंत्र का न होना ही वनौषधियों की घटती प्रतिष्ठा का महत्वपूर्ण कारण रहा है । डा. बावा कहते हैं कि जब औषधि निर्माण वैद्यों के हाथ से दवा कम्पनियों के हाथ में आया तो यह जांच करना ही चुनौती भरा काम हो गया कि विभिन्न स्रोतों से उनके पास जो जड़ी-बूटियां आ रही हैं वे पूर्ण गुणवत्ता वाली हैं भी या नहीं । डा. बावा का मानना है कि अभी तक शायद ही कोई ऐसी आयुर्वेदिक दवा कम्पनी रही हो जिसमें इस पर उचित ध्यान दिया हो या प्रबंध किया हो ।

महर्षि आयुर्वेद के शोध निर्देशक बताते हैं कि उन्होंने अपनी कम्पनी में जड़ी-बूटियों की गुणवत्ता की जांच करने का अत्याधुनिकतम संयंत्र लगाया है और उसी का परिणाम है कि अमृत कलश सहित अन्य वनौषधियां आधुनिक शोधशालाओं और क्लीनिकल परीक्षणों में अपनी धाक जमा रही हैं । इसी के कारण पिछले वर्ष ही उनकी कम्पनी के अमृत कलश वनौषधि के निर्यात से 15 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा की प्राप्ति हुई । जड़ी-बूटियों की शुद्धता की परख के अलावा आयुर्वेद पर समय-समय पर वैज्ञानिक गोष्ठियों का होना भी जरूरी है ।

इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के अध्यक्ष श्री देवेन्द्र त्रिगुणा कहते हैं कि उनकी संस्था ने इसी काम को आगे बढ़ाने के लिए पिछले दिनों मन्यास्तम्भ (सरवाइकल स्पोंजाइटस), कामिल रोग, व्यानवल, मधुमेह तथा वृषक रोग पर गोष्ठियां हुई जिन्हें प्रधानमंत्री सहित कई अन्य केन्द्रीय मंत्रियों ने भी अपनी उपस्थिति से और महत्वपूर्ण बनाया है । वैद्य देवेन्द्र जी की राय में लेकिन मंत्री गण जब अपनी नीतियों में भी आयुर्वेद को वरीयता देंगे तभी भगवान धन्वन्तरि द्वारा विश्व को दिया गया स्वास्थ्य अमृत मानवता को निरोग और अमर कर पाएगा । (ए.ड.एन. फीचर सेवा)

जनसत्ता

नगर नई दिल्ली: मंगलवार, २६ मार्च १९९१ रु. १.३० दिल्ली, चंडीगढ़ और मुंबई से प्रकाशित

आयुर्वेद से ही स्वस्थ रह सकता है आदमी- त्रिगुणा

नई दिल्ली, २५ मार्च। विश्व में आयुर्वेद के प्रति उत्सुकता बढ़ रही है। आयुर्वेद से ही आदमी पूरी तरह स्वस्थ रह सकता है। जाने-माने वैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा ने आज यह बात कही। उन्होंने कहा कि आयुर्वेद के पूर्ण और मौलिक रूप महर्षि आयुर्वेद ने स्वास्थ्य जगत में नई आशा और विश्वास का संचार किया है।



THE TIMES OF INDIA

NEW DELHI: TUESDAY, JUNE 30, 1987

AYURVEDIC DELEGATION

A delegation of Ayurvedic physicians led by Vaidya B. D. Triguna left for Italy on Sunday to participate in a three-day seminar on health.

Dr Triguna will inaugurate the seminar to be attended by prominent physicians of Italy, America and Germany including Dr Deepak Chopra, Dr Keith Wallace, and Dr Ulrish Bowhalfar.

Besides, Dr Triguna will also address a press conference in Milan (Italy) on "Maharishi Ayurveda" and will meet the British health minister at the Royal Palace of Physicians in London.

नवभारत टाइम्स

नई दिल्ली, मंगलवार, ३० जून, १९८७

वैद्य त्रिगुणा रोम का

नई दिल्ली, २९ जून (स)। वैद्यराज ब्रहस्पतिदेव त्रिगुणा के नेतृत्व में आयुर्वेदिक वैद्यों का एक शिष्ट-मंडल कल रात यहां से मिलान और रोम के लिए रवाना हुआ।

जनसत्ता

नई दिल्ली: रविवार, १० दिसंबर १९८९

मारीशस में आयुर्वेद चिकित्सा को मान्यता मिली

नई दिल्ली, ९ दिसंबर (जनसत्ता)। मारीशस की संसद में आयुर्वेद बिल आमराय से पास हो गया। इस बिल के द्वारा मारीशस में आयुर्वेद एवं होम्योपैथी आदि चिकित्सा पद्धतियों को मान्यता मिल गई। अभी तक वहां केवल एलोपैथी ही मान्य चिकित्सा पद्धति थी। भारत के कतिपय विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक समय-समय पर वहां जाते रहे। उनके प्रयत्नों से जनता में आयुर्वेद चिकित्सा के प्रति रूचि जागृत हुई। मारीशस के प्रधानमंत्री, उपप्रधानमंत्री और अन्य मंत्रिगण व अनेकों उच्चाधिकारी भी प्रभावित हुए और इस पद्धति को देश में मान्यता देने की चर्चा चली। इस बीच वैद्य पं. जगदीश प्रसाद शर्मा तथा अंतरराष्ट्रीय सहयोग संस्था के श्री बालेश्वर अग्रवाल, दिल्ली की प्रेरणा

सहायता से ह्यूमन सर्विस ट्रस्ट ने एक आयुर्वेद औषधालय स्वामी कृष्णानंद जी महाराज के कालवास स्थित आश्रम में चालू कर दिया। ट्रस्ट के मंत्री श्री धनदेव बहादुर तथा अन्य अधिकारियों ने उसे चलाने के लिए स्तुत्य प्रयास किए। मारीशस में तत्कालीन भारत के उच्चायुक्त श्री प्रेम सिंह ने भी इस योजना को आगे बढ़ाने के भरसक प्रयास किए। श्री वैद्यनाथ भवन ने लगभग दो वर्ष तक औषधियां निःशुल्क भेजीं और इंडियन एयर लाइंस ने बिना किराए के उन्हें मारीशस पहुंचाया। तीन वर्ष पूर्व अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष एवं विश्व विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक वैद्य शिरोमणि बृहस्पति देव त्रिगुणा को मारीशस सरकार ने अपने देश में आयुर्वेद को मान्यता देने संबंधी परामर्श के लिए बुलाया। इस प्रसंग में वैद्य देवेंद्र त्रिगुणा भी मारीशस सरकार के निमंत्रण पर गए। सरकार ने विधिवत बिल पास करके इस पद्धति को मान्यता देने का निश्चय किया।

२१ नवंबर को संसद में उक्त बिल प्रस्तुत करने का कार्यक्रम बना। संसद में पक्ष-विपक्ष दोनों ओर से बिल का स्वागत और समर्थन किया गया। डेढ़ घंटे की चर्चा के बाद बिल आमराय से पास हो गया। अगले दिन भारतीय हाई कमिश्नर के कार्यालय में एक संवाददाता सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें भारतीय हाई कमिश्नर शरद सबरवाल ने मारीशस सरकार को आश्वासन दिया कि वे मारीशस में आयुर्वेद के विकास के लिए भारत सरकार से अधिक से अधिक सहयोग दिलाने की कोशिश करेंगे।

जनसत्ता

नई दिल्ली: सोमवार, ११ दिसंबर १९८९

मारीशस में आयुर्वेद सम्मेलन मई में

नई दिल्ली, १० दिसंबर (भाषा)। मारीशस में एक अंतरराष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन अगले साल मई में होगा।

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति मारीशस में अत्यंत लोकप्रिय हो रही है। मारीशस की संसद ने पिछले महीने आयुर्वेद विधेयक आमराय से पास किया जिसमें आयुर्वेद और होम्योपैथी चिकित्सा पद्धतियों को भी मान्यता मिल गई है।

मारीशस में अभी तक एलोपैथी चिकित्सा पद्धति का ही प्रचलन था। भारत के कई विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सकों की पिछले कुछ वर्षों में मारीशस यात्रा से इस संबंध में वहां रुचि जागृत हुई। और इसे मान्यता देने की बात चली।

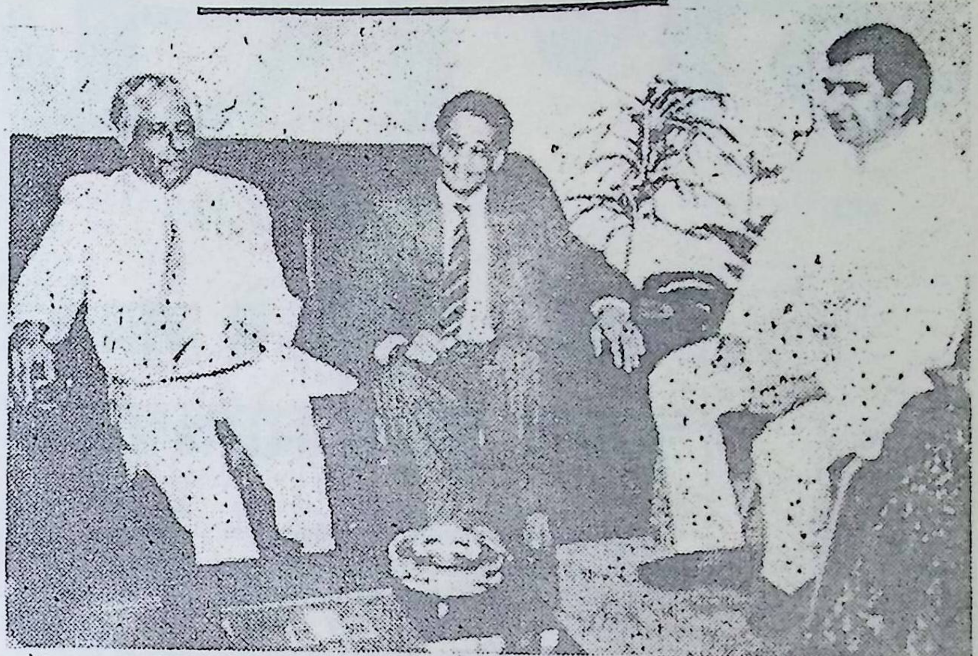
एक स्वयंसेवी संस्था ह्यूमन सर्विस ट्रस्ट द्वारा वहां एक आयुर्वेदिक औषधालय चल रहा है और सैकड़ों रोगी इस औषधालय से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर चुके हैं।

मारीशस सरकार द्वारा पारित आयुर्वेद विधेयक की रूपरेखा विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक बृहस्पति देव त्रिगुणा ने तैयार की है।

हिन्दुस्तान

नई दिल्ली, सोमवार, मार्गशीर्ष शुक्ल १४, सं. २०४६

नई दिल्ली, सोमवार, ११ दिसम्बर, १९८९ ई.



मौरीशस सरकार के निमंत्रण पर भारत के सुप्रसिद्ध वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा अपनी यात्रा के दौरान मारीशस के प्रधानमंत्री श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ, उपप्रधानमंत्री श्री लक्ष्मी विष्णु नारायण एवं वित्त मंत्री से मिले।

मारीशस में आयुर्वेद को सरकारी मान्यता मिली

(हमारे कार्यालय संवांददाता द्वारा)

नई दिल्ली, १० दिसंबर। मारीशस की सरकार ने आयुर्वेद को सरकारी मान्यता दे दी है। यह बात सुविख्यात भारतीय वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा ने बताई है।

त्रिगुणा ने बताया है कि गत माह .शस की संसद में आयुर्वेद बिल सर्वसम्मति से पारित कर दिया गया। इस बिल के द्वारा मारीशस में आयुर्वेद एवं होम्योपैथी आदि अन्य चिकित्सा पद्धतियों को मान्यता प्राप्त हो गई है।

उल्लेखनीय है कि तीन वर्ष पूर्व अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष एवं विश्व विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक वैद्य शिरोमणि बृहस्पतिदेव त्रिगुणा को मारीशस सरकार ने अपने देश में आयुर्वेद को मान्यता देने संबंधी परामर्श के लिए आमंत्रित किया था। इस अवसर पर वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा भी मारीशस सरकार के निमंत्रण पर वहां गए और कई मंत्रियों को अपनी चिकित्सा से प्रभावित किया। परिणाम स्वरूप सरकार ने विधिवत बिल प्रास करके इस पद्धति को देश में मान्यता देने का निश्चय किया। इस बिल की रूपरेखा तैयार करने के लिए मारीशस सरकार के अनुरोध पर स्वास्थ्य मंत्रालय में आयुर्वेद के सलाहकार वैद्य शिव कुमार मिश्र वहां गए और बिल का प्रारूप तैयार किया। यह प्रारूप वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा के माध्यम से महासम्मेलन के पास विचार एवं टिप्पणी के लिए आया।

गत २१ नवम्बर को संसद में उक्त बिल प्रस्तुत करने का कार्यक्रम बना। महासम्मेलनाध्यक्ष को मारीशस सरकार से संदेश प्राप्त हुआ कि उस दिन वे स्वयं अथवा उनका कोई प्रतिनिधि संसद में उपस्थित हो तथा बिल पास करने में सरकार की सहायता करे। वैद्य श्री त्रिगुणा को व्यक्तिगत रूप से वहां के उप-प्रधानमंत्री श्री लच्छमी नारायण ने इसी प्रसंग में आमंत्रित किया। काफी विचार-विमर्श के बाद संसद में बिल रखा गया और उसे पारित कर दिया गया।

वैद्य श्री देवेन्द्र त्रिगुणा के अनुसार एक अंतरराष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन मारीशस में अप्रैल-मई १९८९ में आयोजित किया जाएगा जिसका उद्घाटन वहां के प्रधानमंत्री करेंगे। मारीशस में ह्यूमन सर्विस ट्रस्ट इस सम्मेलन का आयोजन कर रहा है।

स्मरणीय रहे अभी तक मारीशस में केवल एलोपैथी ही मान्य चिकित्सा पद्धति थी। गत कई वर्षों से भारत के कतिपय विख्यात आयुर्वेदिक चिकित्सक समय-समय पर वहां जाते रहे और उन्होंने अपने चिकित्सा कौशल से वहां की जनता में आयुर्वेद चिकित्सा के प्रति रुचि जागृत की। मारीशस के प्रधानमंत्री, उप-प्रधानमंत्री तथा अन्य मंत्रिगण व अनेकों उच्चाधिकारी भी रोगोन्मूलन में आयुर्वेद की सफलता से प्रभावित हुए और इस पद्धति को देश में मान्यता देने की चर्चा चली। इस बीच पं. जगदीश प्रसाद शर्मा तथा अंतरराष्ट्रीय सहयोग संस्था के श्री बालेश्वर अग्रवाल, दिल्ली की प्रेरणा व सहायता से ह्यूमन सर्विस ट्रस्ट ने एक आयुर्वेद औषधालय स्वामी कृष्णानंद जी महाराज के कालनास स्थित आश्रम में चालू कर दिया। ट्रस्ट के मंत्री श्री धनदेव बहादुर तथा अन्य अधिकारियों ने उसे चलाने के लिए स्तुत्य प्रयास किए। मारीशस में तत्कालीन भारत के उच्चायुक्त श्री प्रेम सिंह ने भी इस योजना को आगे बढ़ाने के भरसक प्रयास किए। श्री वैद्यनाथ भवन ने लगभग दो वर्ष तक औषधियां बिना मूल्य सप्लाई कीं तथा भारतीय उच्चायुक्त महोदय के प्रयास से इंडियन एयरलाइंस ने बिना किराये के उन्हें मारीशस पहुंचाया। सहस्त्रों रोगियों ने इस औषधालय से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया।

जनसत्ता

नगर | नई दिल्लीः मंगलवार, १८ जुलाई १९८९ | १.१० पैसे | दिल्ली, चंडीगढ़ और

महर्षि आयुर्वेद में अपने रोगों का इलाज ढूंढेगा सोवियत संघ

जनसत्ता संवाददाता

नई दिल्ली, १७ जुलाई। मास्को में एक सोवियत महर्षि आयुर्वेद संस्थान खोला गया है। सोवियत रिसर्च सेंटर फार प्रिवेंटिव मेडिसिन और महर्षि आयुर्वेद फाउंडेशन इंडिया ने मिल कर इसे खोला है। उद्देश्य है समाज की स्वास्थ्य समस्या का कारगर समाधान खोजना। यह जानकारी सोवियत शिष्टमंडल के नेता डा. अनातोली इग्नातेव ने दी। प्रतिनिधिमंडल महर्षि आयुर्वेद का प्रशिक्षण लेने भारत आया है। उन्होंने कहा कि सोवियत संघ के लोगों के सामने तीन विकट स्वास्थ्य समस्याएं हैं—पहली धूम्रपान, दूसरी मोटापा और तीसरी मद्यपान की आदत। महर्षि आयुर्वेद इन तीनों की रोकथाम सक्षम ढंग से कर सकता है।

इग्नातेव ने कहा कि जब हम महर्षि आयुर्वेद का जिक्र करते हैं तो इसका मतलब होता है समग्र और मौलिक आयुर्वेद। इस समय आयुर्वेद के नाम पर जो स्वास्थ्य पद्धति प्रचलित है इसमें केवल वनोषधियां ही रह गई है जबकि महर्षि आयुर्वेद में वैयक्तिक के साथ सामूहिक स्वास्थ्य, शरीर और मन के विकार, उन विकारों के आंतरिक और बाहरी कारणों का अध्ययन और उन के निवारण के उपाय भी शामिल हैं।

मास्को में सोवियत महर्षि आयुर्वेदिक संस्थान खोलने का फैसला इसी साल मार्च महीने में लिया गया था। विभिन्न प्रयोग परीक्षणों और अध्ययन निष्कर्षों का हवाला देते हुए शिष्ट मंडल के अन्य प्रतिनिधियों ने बताया कि सिर्फ बाइस महीने में ही योग और ध्यान सिद्धि कार्यक्रम के जरिए घोर नशेड़ियो की संख्या २७ फीसदी से घट कर पांच छह फीसदी और सामान्य तथा बिलकुल कम नशा करने वालों की संख्या चार और ६.४ प्रतिशत रह गई है। यह अध्ययन उन १८६२ लोगों पर किया गया जिन्होंने भावातीत ध्यान का अभ्यास शुरू किया ही था।

अखिल भारतीय वैद्य महासम्मेलन के अध्यक्ष और नाडी विशेषज्ञ बृहस्पति देव त्रिगुणा ने कहा कि भारत में करीब अस्सी प्रतिशत लोग आयुर्वेद दवाओं से ही अपनी बीमारियां ठीक करते हैं। हालांकि एलोपैथी चिकित्सा का प्रसार हो रहा है, लेकिन गांवों, कस्बों और शहरों में भी लोग जहां तक संभव होता है आयुर्वेदिक पद्धति ही अपनाते हैं। उन्होंने कहा कि विदेशों में भी आयुर्वेद की लोकप्रियता बढ़ रही है और हमारा दायित्व हो जाता है कि हम समग्र आयुर्वेद को विश्व समाज के सामने रखें।

हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, मंगलवार, १९ जुलाई, १९८८

एड्स का उपचार आयुर्वेद से

नई दिल्ली, १८ जुलाई (वार्ता)। 'एड्स' जैसे भयानक रोग का उपचार अब विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से प्रारंभ हो गया है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष बृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैंड में 'एड्स' के मरीजों का उपचार भारत के आयुर्वेद विशेषज्ञों ने शुरू कर दिया है। उन्होंने बताया कि करीब पैंतीस मरीजों को जड़ी-बूटियां दी गई हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले हैं। श्री त्रिगुणा हाल में विदेशों में वहां के डाक्टरों को आयुर्वेद चिकित्सा का प्रशिक्षण देकर लौटे हैं।

उन्होंने बताया कि अभी इन मरीजों को पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सका है किंतु इस रोग के प्रारंभिक लक्षण दूर हो गए हैं। उन्होंने दावा किया कि अगर आयुर्वेद अनुसंधान के लिए देश में सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करे तो एक वर्ष के भीतर अपसगिक शेव ('एड्स' का आयुर्वेदिक नाम) के उपचार के लिए नुस्खा तैयार किया जा सकता है। उन्होंने इस सिलसिले में देश में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार की सरकार से मांग की।

आज

इलाहाबाद गुरुवार ८ जून १९८९ सौर २५ ज्येष्ठ सम्वत २०४५ वि



'आयुर्वेद' पहुंचा सोवियत संघ

पिछले दिनों सोवियत संघके स्वास्थ्य विशेषज्ञोंने सोवियत संघमें महर्षि आयुर्वेदकी क्लीनिक खोलनेकी घोषणा की क्योंकि यह पद्धति दुनियाकी सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक स्वास्थ्य चिकित्सा पद्धति है।

महर्षि आयुर्वेदके सोवियत संघमें क्लीनिक खोले जानेके सम्बन्धमें निर्णय महर्षि आयुर्वेद फाउण्डेशन और सैकड़ों सोवियत स्वास्थ्य विशेषज्ञों तथा उप स्वास्थ्य मंत्री सोवियत संघकी तीन दिनके विचार विमर्शके बाद लिया गया।

सोवियत संघमें होनेवाली इस बैठकमें महर्षि आयुर्वेद से सम्बद्ध राजवैद्य वृहस्पति देव त्रिगुणा अध्यक्ष अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस और विश्वके सुविख्यात नाड़ी ज्ञान विशेषज्ञ तथा डा. दीपक चोपड़ा अध्यक्ष अमेरिकन एसोसियेशन आफ आयुर्वेदिक मेडिसिन बतौर भारतीय प्रतिनिधि उपस्थित थे।

मास्को रवाना होनेके पहले इस प्रतिनिधि मंडलके वैद्यराज वृहस्पति देव त्रिगुणा और डा. दीपक चोपड़ाने प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधीको महर्षि आयुर्वेदके विस्तारकी जानकारी दी, मास्कोमें महर्षि आयुर्वेद क्लीनिक खोलनेके सम्बन्धमें प्रधानमंत्रीने नैतिक समर्थन दिया और उसके कार्योंकी सराहना की।

महर्षि आयुर्वेदके इस प्रतिनिधि मडलको निरोधात्मक औषधि शोध केन्द्र, सोवियत संघके निर्देशक डा. राफेल जी. ओगनो और अन्तरराष्ट्रीय वैज्ञानिक कार्यक्रम विभागके मुख्य डा. ओलेग के. मोलोस्टोवने इस प्रतिनिधि मण्डलका स्वागत किया और उन्हें वहांकी जनतासे परिचित कराया। इस सम्बन्धमें वहांके शोध केन्द्र और मानसिक स्वास्थ्य संस्थान मास्कोकी एक सभाको वैद्यराज वृहस्पति देव त्रिगुणा और डा. दीपक चोपड़ाने सम्बोधित भी किया। उस सभामें सैकड़ोंकी संख्यामें वैज्ञानिकों, डाक्टर्स, आदिके अलावा मास्को विश्वविद्यालयके प्रोफेसर छात्र आदि उपस्थित थे।

महर्षि आयुर्वेदके इस प्रतिनिधि मंडलकी एक बैठक सोवियत संघके उप स्वास्थ्य मंत्री श्री एलेक्जेंडर आई. कोपड्रोसेव और सोवियत यूनियनके प्रमुख प्रभारीके अलावा विशेषज्ञोंके बीच लम्बी वार्ताके बाद यह निर्णय लिया गया कि जुलाई तकमें मास्कोमें एक आयुर्वेदिक क्लीनिक खोल दी जायेगी, जिसे सोवियत संघ महर्षि आयुर्वेद संस्थानका नाम दिया गया है। इस संस्थानमें वैद्यराज त्रिगुणा और डा. दीपक चोपड़ाकी देख रेखमें लगभग ५० सदस्य, जिनमें भारतीय वैद्यों सहित गंधर्ववेद, स्थापत्य वेद योग ज्योतिष और महर्षि महेश योगी प्रणीत भावातीत ध्यान सिखाने वाले आदि विद्वान भी शामिल होंगे।

यही नहीं इस महर्षि आयुर्वेदिक क्लीनिकके बाद पूरे सोवियत संघवासी असाध्य बीमारियोंका इलाज करवायेंगे और बीमारियोंसे बचनेके लिए इस पद्धतिका सहारा लेंगे। इस औषधालयमें नाड़ी देखकर रोगका पता लगाया जायेगा। फिर जड़ी बूटियोंसे बनी औषधियोंसे हृदयरोग, रक्तचाप गठिया मधुमेह आदि रोगोंका इलाज किया जायेगा।

वैद्यराज वृहस्पति देव त्रिगुणाने तो एक मुलाकातमें बताया है कि सोवियत वासी महर्षि आयुर्वेद जैसे विशाल ज्ञानके क्षेत्र और स्वास्थ्य पद्धतिकी मिलने वाली सुविधाके प्रति बड़े ही लालाश्रित हैं और वे इस तकनीकीके प्रति जागरूक भी हैं। क्योंकि स्वास्थ्य मंत्री डा. ओगनेवने जब यह घोषणाकी कि धूम्रपान शराब और नशेकी दवाओं आदिका शरीर और मनपर इतना घातक प्रभाव पड़ता है फिर भी उनसे बचनेका कोई आसान रास्ता नहीं मिल पाया है। ऐसी स्थितिमें महर्षि आयुर्वेदने इस क्षेत्रमें व्यापक उपलब्धि हासिलकी है। अकेले भावातीत ध्यान करनेसे ही नशेसे छुटकारा मिल जाता है। इसका लाभ सोवियत वासियोंको भी अब मिलेगा तो वहांके निवासियोंमें चारों ओर खुशीकी लहर दौड़ गई।

एक सभामें तो वैद्यराजसे नाड़ी दिखाकर रोगकी जानकारी जानेवालोंकी भीड़ बनी रही और दो घंटेसे भी अधिक समय तक उनसे सोवियत वासी अपनी समस्याओंका समाधान पूछते रहे। वैद्यराज त्रिगुणा और डा. दीपक चोपड़ाने उन सभीको सन्तुष्ट किया।

सोवियत संघ वासियोंके बीच डा. दीपक चोपड़ाने महर्षि आयुर्वेदको क्वांटम हीलिंगके साथ जोड़कर भी समझाया जिसके तहत शरीर और मन एक समयपर किस स्तरपर कितना मिल जाते हैं उसका प्रभाव क्या पड़ता है इसके बारेमें उन्हें बताया।

वैद्यराज त्रिगुणाके मुताबिक महर्षि आयुर्वेद रूस पहुंचा है तो जल्द ही अब चीन और पोलैण्डमें भी इसका विस्तार आरम्भ होगा। (ए.इ.एन.)

जनसत्ता, १८ जुलाई, १९८८

आयुर्वेद सम्मेलन पोर्ट लुई में

नई दिल्ली १७ जुलाई (वार्ता) अंतरराष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन अगले साल मारीशस की राजधानी पोर्ट लुई में होगा। इस सम्मेलन में देश-विदेश के करीब एक हजार प्रतिनिधि भाग लेंगे।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष वृहस्पति देव त्रिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि यह सम्मेलन पोर्ट लुई के महात्मा गांधी संस्थान में आयोजित किया जाएगा, जिसका उद्घाटन मारीशस के प्रधानमंत्री करेंगे। उन्होंने बताया कि अगले साल फरवरी-मार्च में राजधानी में राष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। इसका आयोजन केंद्रीय आयुर्वेद, अनुसंधान और शोध संस्थान करेगा। इसके लिए सरकार ने ८ लाख रुपए भी मंजूर किए हैं।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि दुनिया के करीब २० देशों में इस समय आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली का प्रसार अभियान चल रहा है।

उन्होंने बताया कि विश्व स्वास्थ्य योजना के तहत जापान, इटली, ब्राजील, चीन, अमरिका और कनाडा जैसे देशों में अब तक कुल एक सौ भारतीय वैद्य वहां के डाक्टरों को ट्रेनिंग देने के लिए भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना १९८२ में शुरू की गई थी।

दैनिक विश्व मानव 18 जुलाई 1988

एड्स का आयुर्वेद से इलाज संभव

नयी दिल्ली, 17 जुलाई (वार्ता)। एड्स जैसे भयानक रोग का उपचार अब विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से प्रारम्भ हो गया है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष वृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैंड में एड्स के मरीजों का उपचार भारत के आयुर्वेद विशेषज्ञों ने शुरू कर दिया है। उन्होंने बताया कि करीब पैंतीस मरीजों को जड़ी बूटियां दी गयी हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले हैं। श्री त्रिगुणा हाल में विदेशों में वहां के डाक्टरों को आयुर्वेद चिकित्सा का प्रशिक्षण देकर लौटे हैं। उन्होंने बताया कि अभी इन मरीजों को पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सका है। किन्तु इस रोग के प्रारंभिक लक्षण दूर हो गये हैं। उन्होंने दावा किया कि अगर आयुर्वेद अनुसंधान के लिये देश में सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करे तो एक वर्ष के भीतर आपसर्गिक शेव (एड्स का आयुर्वेदिक नाम) के उपचार के लिये नुस्खा तैयार किया जा सकता है। उन्होंने इस सिलसिले में देश में आयुर्वेद के प्रचार प्रसार की सरकार से मांग भी की।

नवजीवन, लखनऊ, सोमवार, १८ जुलाई सन् १९८८

आयुर्वेद से 'एड्स' के उपचार में सफलता

नयी दिल्ली, १७ जुलाई (वार्ता)। 'एड्स' जैसे भयानक रोग का उपचार अब विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से प्रारम्भ हो गया है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष बृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैंड में 'एड्स' के मरीजों का उपचार भारत के आयुर्वेद विशेषज्ञों ने शुरू कर दिया है। उन्होंने बताया कि करीब पैंतीस मरीजों को जड़ी बूटियां दी गयी हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले हैं। श्री त्रिगुणा हाल में विदेशों में वहां के डाक्टरों को आयुर्वेद चिकित्सा का प्रशिक्षण देकर लौटे हैं।

उन्होंने बताया कि अभी इन मरीजों को पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सका है किन्तु इस रोग के प्रारम्भिक लक्षण दूर हो गये हैं। उन्होंने दावा किया कि अगर आयुर्वेद अनुसंधान के लिये देश में सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करे तो एक वर्ष के भीतर औपसंगिक शेव ('एड्स' का आयुर्वेदिक नाम) के उपचार के लिये नुस्खा तैयार किया जा सकता है। उन्होंने इस सिलसिले में देश में आयुर्वेद के प्रचार प्रसार की सरकार से मांग भी की।

नवभारत जबलपुर दिनांक १८ जुलाई १९८८

एड्स का उपचार आयुर्वेद से

नई दिल्ली। 'एड्स' जैसे भयानक रोग का उपचार अब विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से प्रारंभ हो गया है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष बृहस्पतिदेव तिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैण्ड में 'एड्स' के मरीजों का उपचार भारत के आयुर्वेद विशेषज्ञों ने शुरू कर दिया है उन्होंने बताया कि करीब तीस मरीजों को जड़ी बूटियां दी गयी हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले है श्री तिगुणा हाल में विदेशों में वहां के डॉक्टरों को आयुर्वेद चिकित्सा का प्रशिक्षण देकर लौटे है।

उन्होंने बताया कि इन मरीजों को पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सकता है किन्तु इस रोग के प्रारंभिक लक्षण दूर हो गये है उन्होंने दावा कि कि अगर आयुर्वेद अनुसंधान के लिये देश की सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करें तो एक वर्ष के भीतर 'एड्स' का आयुर्वेदिक नुस्खा तैयार किया जा सकता है। उन्होंने इस सिलसिले में देश में आयुर्वेद के प्रचार प्रसार की सरकार से मांग भी की।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं
पंजाब केसरी
दिल्ली, 18 जुलाई, 1989 तदनुसार 3 श्रावण, 2046

विदेश में भी आयुर्वेद की धूम

विशेषज्ञ वैद्यराज वृहस्पति त्रिगुणा ने आज यहां कहा कि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का लोकप्रिय नहीं होने का मुख्य कारण लोगों को उसके बारे में सही जानकारी नहीं होना है।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि आयुर्वेद औषधियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनका प्रतिकूल असर नहीं पड़ता। इसी कारण आज अमरीका, रूस कनाडा, हालैंड आदि देशों में लोग आयुर्वेद उपचार पद्धति को अपना रहे हैं।

युगधर्म
स्वयमेव मृगेन्द्रता

जबलपुर सोमवार १८ जुलाई १९८८

बीस देशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का प्रसार

प्रतिवर्ष १ करोड रु. मूल्य की औषधि का निर्यात

नई दिल्ली १७ जुलाई। विश्व के करीब बीस देशों में इस समय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रचार प्रसार का अभियान चल रहा है। इसके तहत वहा केए हजारडाक्टरों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष वृहस्पति देव त्रिगुणा ने पत्रकारों को बताया कि विश्व स्वास्थ्य योजना के तहत जापान, अमरीका इटली, ब्राजिल चीन और कनाडा जैसे देश में अब तक कुल एकसौ भारतीय वैद्य वहां के डाक्टरों को प्रशिक्षण कराने के लिए भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना १९८२ में शुरू की गई थी।

उन्होंने बताया कि भारतीय वैद्य विदेशी डाक्टरों को ६महीने का प्रशिक्षज देते हैं यह चिकित्सा पद्धति वहां क लोगों में काफी लोक प्रिय होती जा रहीहै ब्राजीलसरकार ने तो इसचिकित्सा पद्धति को मान्यता भी दे दी है और मोरीशित श्रीलंका नेपाल और बंगलादेश की सरकार इसके लिए आर्थिक सहयोग भी दे रही।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि इंग्लैण्ड और अमरीका कीकुछबीमा कंपनिया आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से उपचार कराने वाले मरीजों को प्रीमियम में तीस प्रतिशत की छूट भी दे रहीहै। वाशिंगटन के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान के आयुर्वेदिक आहारों को मगाने के लिएआर्डर भी दे रहा है। भारत प्रत्येक वर्ष विश्व में ५० लाख से एक करोड रु० की आयुर्वेदिक दवाइयों का निर्यात करता है।

उन्होंने बताया कि उनका संगठन जेनेवा में मई में लगने वाले स्वास्थ्य संगठन के वार्षिक मेले में आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति का प्रचार प्रसार करता है। इस मेले में देश विदेश के प्रतिनिधि भाग लेतेहै आफ्रीकी देशों के प्रतिनिधि इस चिकित्सा पद्धति में अधिक रुचि लेते हैं। उन्होंने सरकार से मांग की कि भारत महोत्सव जैसे कार्यक्रमों में भी आयुर्वेद की प्रचारप्रसारकरने को अनुमति दी जाए क्योंकि यह चिकित्सा पद्धति हमारी संस्कृति का एक अंग है।

दैनिक विश्व मानव 18 जुलाई

विश्व भर में लोकप्रिय हो रहा है आयुर्वेद

नयी दिल्ली 17 जुलाई (वार्ता)। विश्व के करीब बीस देशों में इस समय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रचार-प्रसार का अभियान चल रहा है इसके तहत वहां के एक हजार डाक्टरों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष वृहस्पतिदेव ने आज यहा पत्रकारों को बताया कि विश्व योजना के तहत जापान अमरीका, इटली, ब्राजील, चीन, अमरीका, कनाडा जैसे देशों में अब तक कुल एक सौ भारतीय वैद्य वहां के डाक्टरों को प्रशिक्षित करने के लिये भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना 1982 में शुरू की गई थी।

उन्होंने बताया कि भारतीय वैद्य विदेशी डाक्टरों को छह महीने का प्रशिक्षण देते हैं। यह चिकित्सा पद्धति वहां के लोगों में काफी लोकप्रिय होती जा रही है। ब्राजील सरकार ने तो इस चिकित्सा पद्धति को मान्यता भी दे दी है और मारीशस, श्रीलंका, नेपाल और बंगलादेश की सरकार इसके लिये आर्थिक सहयोग भी दे रही है।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि इंग्लैंड और अमरीका की कुछ बीमा कंपनियां आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से अपना उपचार कराने वाले मरीजों को प्रीमियम में तीस प्रतिशत तक की छूट भी दे रही है।

उन्होंने बताया कि वाशिंगटन के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान ने आयुर्वेदिक पौष्टिक आहारों को मंगाने के लिये आर्डर भी दे रखा है। उन्होंने बताया कि भारत प्रत्येक वर्ष विश्व में पचास लाख से एक करोड़ रुपये मूल्य की आयुर्वेदिक दवाइयों का निर्यात करता है।

उन्होंने बताया कि उनका संगठन जेनेवा में मई में लगने वाले विश्व स्वास्थ्य संगठन के वार्षिक मेले में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का प्रचार प्रसार करता है।

हिन्दुस्तान

नई दिल्ली, रविवार, ११ सितम्बर, १९८८ ई.

आयुर्वेद पर अमरीका मोहित

(हमारे कार्यालय संवाददाता द्वारा)

नई दिल्ली, १० सितम्बर। कनाडा और अमरीका सहित अनेक लातीनी और उत्तरी अमरीकी देश अब आयुर्वेद को अपनी स्वास्थ्य व्यवस्था का आधार बनाने में तत्परता दिखा रहे हैं।

महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना के एक प्रवक्ता के अनुसार अखिल भारतीय वैद्य महासम्मेलन के अध्यक्ष वैद्यराज श्री बृहस्पति देव त्रिगुणा के नेतृत्व में एक शिष्टमंडल ब्राजील, त्रिनदाद, बारवाडोस, डोमिंकन, सूरीनाम, मैक्सिको, कनाडा और उत्तरी अमरीकी आदि अनेक देशों के निमंत्रण पर आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के बारे में जरूरी जानकारी देने के लिए वहां गया हुआ है।

लगभग तीन सप्ताह की इस यात्रा के प्रथम चरण में वैद्यराज श्री त्रिगुणा ने ब्राजील सरकार के निमंत्रण पर उनके लिए आयुर्वेद कालेज की रूपरेखा तैयार की है, क्योंकि ब्राजील सरकार जल्द ही एक आयुर्वेद विश्वविद्यालय खोलने के लिए कटिबद्ध है।

आज

मंगलवार, १९ जुलाई १९८८ सौर ३ श्रावण सं० २०४५ वि०

ब्राजील और हालैण्डमें आयुर्वेदिक रीतिसे एड्सका इलाज

नयी दिल्ली, १८ जुलाई (वा.)। अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेसके अध्यक्ष डा. बृहस्पतिदेव त्रिगुणने यहां पत्रकारोंको बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैण्डमें एड्सके मरीजोंका उपचार भारतके आयुर्वेद विशेषज्ञोंने शुरू कर दिया है। करीब पैंतीस मरीजोंको जड़ी बूटियां दी गयी हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले हैं।

उन्होंने बताया कि अभी इन मरीजोंको पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सका है किन्तु इस रोगके प्रारम्भिक लक्षण दूर हो गये हैं। उन्होंने दावा किया कि अगर आयुर्वेद अनुसंधानके लिये देशमें सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करें तो एक वर्षके भीतर ओपसर्गिक शोव (एड्सका आयुर्वेदिक नाम) के उपचारके लिये नुस्ख तैयार किया जा सकता है।

डा. त्रिगुणने बताया कि विश्वके करीब बीस देशोंमें इस समय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिके प्रचार-प्रसारका अभियान चल रहा है। इसके तहत वहांके एक हजार डाक्टरोंको प्रशिक्षित किया जा रहा है। डा. त्रिगुणने पत्रकारोंको बताया कि विश्व स्वास्थ्य योजनाके तहत जापान, अमेरिका, इटली, ब्राजील, चीन और कनाडा जैसे देशोंमें अबतक कुल एक सौ भारतीय वैद्य वहांके डाक्टरोंको प्रशिक्षित करनेके लिये भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना १९८२ में शुरू की गयी थी।

उन्होंने बताया कि यह चिकित्सा पद्धति विदेशोंमें काफी लोकप्रिय होती जा रही है। ब्राजील सरकारने तो इस चिकित्सा पद्धतिको मान्यता भी दे दी है और मारीशास, श्रीलंका, नेपाल और बंगलादेशकी सरकार इसके लिये आर्थिक सहयोग भी दे रही है।

श्री त्रिगुणने बताया कि इंगलैण्ड और अमेरिकाकी कुछ बीमा कम्पनियां आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिसे अपना उपचार करानेवाले मरीजोंको प्रीमियममें तीस प्रतिशततककी छूट भी दे रही है। डा. त्रिगुणने बताया कि भारत प्रत्येक वर्ष विश्वमें पचास लाखसे एक करोड़ रुपयेकी शल्यकी आयुर्वेदिक दवाइयोंका निर्यात करता है।

जनसत्ता, १९ जनवरी, १९८७

हर मर्ज का इलाज है आयुर्वेद में

नई दिल्ली, १८ जनवरी (भाषा)। दुनिया म मशहूर राज वैद्य ब्रहस्पतिदेव त्रिगुणा ने इस बात मर जोर दिया कि लोगों को आयुर्वेदिक औषधियों की उपयोगिता बताई जाए। इसमें देश व समाज दोनों की भलाई है। क्योंकि ये औषधियां आसानी से और कम कीमत पर सब जगह मिल जाती हैं।

श्री त्रिगुणा ने कल यहां इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में 'आयुर्वेदिक औषधियों की उपयोगिता' पर बोलते हुए कहा कि वे दवाइयां सबसे अच्छी मानी जाती हैं, जो बीमारी तो दूर करें, लेकिन किसी तरह का दूसरा नुकसान न करें। आयुर्वेद की सभी औषधियों में यह खूबी है।

उन्होंने कहा कि आयुर्वेद के तीन सिद्धांत हैं: निरोग जीवन, प्रज्ञा अपराध और लम्बी उम्र। अगर आदमी इन सिद्धांतों का ध्यान रखे तो वह आसानी से सुखी जिंदगी बिता सकता है।

श्री त्रिगुणा ने कहा कि आयुर्वेद में जीवन को स्थिर नहीं माना जाता है। इसे किस तरह और बढ़ाया जाए इस बात का ज्ञान आयुर्वेद में है। उन्होंने कहा कि विदेशों में भी अब आयुर्वेद औषधियों को तेजी से मान्यता मिलती जा रही है। इसकी खास वजह यह है कि वहां पर ज्यादातर दवाइयां खराबी पैदा करने लगी हैं। अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान, सोवियत संघ, ब्राजील, सिंगापुर ब्रिटेन और प. जर्मनी आदि देशों में आयुर्वेदिक दवाइयां काफी लोकप्रिय हो चुकी हैं।

श्री त्रिगुणा ने इस बात पर अफसोस जाहिर किया कि हमारे देश में सरकार की ओर से आश्वासन के बाद भी आयुर्वेदिक औषधियों के विकास और प्रचार में जो काम किया जाना चाहिए था अभी तक नहीं हो पाया है। आज भी स्वास्थ्य के लिए तय राशि का सिर्फ तीन प्रतिशत ही आयुर्वेदिक औषधियों के विकास और प्रचार पर खर्च किया जाता है।

श्री त्रिगुणा ने कहा कि अगर सरकार सन दो हजार तक सभी लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करना चाहती है तो उसे देश में आयुर्वेदिक दवाइयों के विकास और प्रचार की ओर ज्यादा ध्यान देना होगा।

स्वास्थ्य मंत्रालय के प्रमुख सलाहकार एसके मिश्र ने समारोह की अध्यक्षता करते हुए कहा यह बात सही है कि इस दिशा में जितनी रकम आज खर्च की जा रही है वह काफी नहीं हैं। श्री मिश्र ने कहा कि देश में लोगों को आयुर्वेदिक दवाइयों की उपयोगिता की जानकारी कम होने की खास वजह यह है कि आजादी से पहले आयुर्वेदिक औषधियों की उपयोगिता को हमेशा न सिर्फ नकारा गया बल्कि उसे कतई ही मान्यता नहीं दी गई। आजादी के बाद भी सरकार इस तरफ और विशेष ध्यान दे रही है।

हिन्दुस्तान, सोमवार, १९ जनवरी, १९८९

जनता को आयुर्वेद की ज्यादा जानकारी दें : त्रिगुण

नई दिल्ली, १८ जनवरी (भाषा)। विश्वविख्यात राज वैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुण ने इस बात पर जोर दिया कि लोगों में आयुर्वेद औषधियों की उपयोगिता की जानकारी बढ़ाई जानी चाहिए। इसमें देश और समाज दोनों के हित हैं, क्योंकि ये औषधियां आसानी से और कम मूल्य पर सब जगह उपलब्ध हो जाती है।

श्री त्रिगुण ने कल यहां इंडियन इंटरनेशनल सेंटर में दिए गए आयुर्वेदिक औषधियों की उपयोगिता विषय पर अपने व्याख्यान में कहा कि वे औषधियां उतम मानी जाती हैं, जो रोग का निवारण करे, लेकिन किसी भी प्रकार के दूसरे विकार न करें। आयुर्वेद की सभी औषधियों में यह गुण पाया जाता है।

उन्होंने कहा कि विदेशों में भी अब आयुर्वेद की औषधियों को तेजी से मान्यताएं मिलती जा रही है। उसका मुख्य कारण यह है कि वहां पर अधिकांश दवाएं विकार उत्पन्न करने लगी है। अमरीका, आस्ट्रेलिया, जापान, सोवियत संघ, ब्राजील, सिंगापुर, ब्रिटेन और प. जर्मनी आदि देशों में आयुर्वेद की औषधियां काफी लोकप्रिय हो चुकी हैं।

श्री त्रिगुण ने इस बात पर गहरा दुःख व्यक्त किया कि हमारे देश में सरकार द्वारा कई बार आश्वासन देने के बाद भी आयुर्वेद औषधियों के विकास ओर प्रचार में जो कार्य किया जाना चाहिए था अभी तक नहीं हो पाया है। आज भी स्वास्थ्य के लिए निर्धारित राशि का केवल तीन प्रतिशत ही आयुर्वेदिक औषधियों के विकास और प्रचार पर खर्च किया जाता है।

भारत का सर्वाधिक प्रकाशित हिन्दी दैनिक

Regd. No DIDN1363

फोन : 7121133, 7117249
7120619

संस्थापक : अमर शहीद लाला जगतनारायण जी

सिने संस्करण

पंजाब केसरी

वर्ष 5 The Daily PUNJAB KESARI, Delhi अंक 31

दिल्ली, शनिवार 31 जनवरी 1987, तदनुसार : 18 माघ, 2043 : मूल्य 70 पैसे, विमान द्वारा 80 पैसे



राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा मिस्र के राष्ट्रपति श्री मुबारक को अमृतकलश भेंट करते हुए

आयुर्वेद में हर रोग का ईलाज

नई दिल्ली, 30 जनवरी (भाषा): चिकित्सकों का दवा है कि आयुर्वेद में जानलेवा बीमारी एड्स का उपचार खोज लिया गया है । इनका कहना है कि कोई ऐसा रोग नहीं है जिसकी चिकित्सा और रोकथाम आयुर्वेद में न हो ।

कनाडा, अमरीका, भारत, आस्ट्रेलिया और जर्मन चिकित्सकों ने आज राजवैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा की उपस्थिति में एक प्रैस कान्फ्रेंस में यह जानकारी दी । श्री त्रिगुणा ने बताया कि नियमानुसार दिनचर्या, योगध्यान के दैनिक अभ्यास और इसके अन्तर्गत महर्षि महेश की अत्यन्त सुगम और गहन भावातीत ध्यान शैली का प्रभाव इस भयान रोग से मानव जाति को बचा सकता है ।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि भारतीय संस्कृति की जो दिनचर्या, सामाजिक, व्यावहारिक आदर्शों का पालन और शुद्ध आहार-विहार है, वे ही एड्स जैसी भयानक बीमारियों की रोकथाम और चिकित्सा करने में सक्षम है । उन्होंने यही कहा कि हमारे पास हर बीमारी का उपचार है ।

उन्होंने कहा कि यह मानना भूल है कि आयुर्वेद केवल केवल वनस्पति का ज्ञान है । आयुर्वेद के अंग रूप में योग चेतना को पूरा जगा कर ब्राह्मी चेतना में प्रतिष्ठित करती है । आयुर्वेद के अंग रूप ज्योतिष विद्या जीवन के भूत-भविष्य-वर्तमान सभी प्रकार के अनिष्ट एवं अरिष्ट का निवारण करने में समर्थ है । यज्ञ और अनुष्ठानों के वैदिक विधान किसी भी वैयक्तिक और सामाजिक अनिष्टों को समाप्त करने में समर्थ हैं । मंत्र विद्या और गान्धर्व वेद विद्या भी आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति में विशिष्ट स्थान रखते हैं ।

अमृत प्रभात लखनऊ, सोमवार १८ जलाई १९८८

अंतर्राष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन में एक हजार प्रतिनिधि भाग लेंगे

नयी दिल्ली, १७ जून (वार्ता)। अन्तर्राष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन अगले वर्ष मारीशस की राजधानी पोर्ट लुई में होगा, जिसमें देश- विदेश के करीब एक हजार प्रतिनिधि भाग लेंगे।

अखिल भारतीय. आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष बृहस्पतिदेव त्रिगुणा ने यहां पत्रकारों को बताया कि यह सम्मेलन पोर्ट लुई के महात्मा गांधी संस्थान में आयोजित किया जायेगा, जिसका उद्‌घाटन मारीशस के प्रधानमंत्री करेंगे।

उन्होंने बताया कि अगले वर्ष फरवरी- मार्च में राजधानी में राष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। इसका आयोजन केंद्रीय आयुर्वेद अनुसंधान एवं शोध संस्थान करेगा। इसके लिए सरकार ने ८ लाख रुपये भी मंजूर किये हैं।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि राजधानी में एक भी आयुर्वेदिक अस्पताल न होने के कारण मरीजों को भारी दिक्कत उठानी पड़ती है। प्रशासन ने दिल्ली के [illegible]नगर इलाके में २०० शय्याओं का एक आयुर्वेद अस्पताल खोलने का फैसला किया था और इस संबंध में भवन का शिलान्यास भी किया गया, किन्तु उसे मेडिकल अस्पताल में बदल दिया गया।

उन्होंने बताया कि मरीजों की परेशानियों को देखते हुए वह दो-तीन महीने के अंदर एक आयुर्वेद अस्पताल खोलने जा रहे हैं। इसमें मरीजों के असाध्य रोगों की भी चिकित्सा की जा सकेगी। उन्होंने बताया कि बजट में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति पर मात्र १.५ प्रतिशत खर्च किया जाता है, जबकि ८० प्रतिशत जनता इस पद्धति से अपना उपचार कराती है।

बीस देशों में प्रचार- प्रसार अभियान

विश्व के करीब बीस देशों में इस समय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के प्रचार- प्रसार का अभियान चल रहा है। इसके तहत वहां के एक हजार डाक्टरों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि विश्व स्वास्थ्य योजना के तहत जापान, अमरीका, इटली, ब्राजील, चीन, अमरीका और कनाडा जैसे देशों में अब तक कुल एक सौ भारतीय वैद्य वहां के डाक्टरों को प्रशिक्षित करने के लिए भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना १९८२ में शुरू की गयी थी।

उन्होंने बताया कि भारतीय वैद्य विदेशी डाक्टरों कोछह महीने का प्रशिक्षण देते हैं। यह चिकित्सा पद्धति वहां के लोगों में काफी लोकप्रिय होती जा रही है। ब्राजील सरकार ने तो इस चिकित्सा पद्धति को मान्यता भी दे दी है और मारीशस, श्रीलंका, नेपाल और बंगलादेश की सरकार इसके लिए आर्थिक सहयोग भी दे रही है।

श्री त्रिगुणा ने बताया कि इंग्लैंड और अमरीका की कुछ बीमा कंपनियां आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से अपना उपचार कराने वाले मरीजों को प्रीमियम में तीस प्रतिशत तक की छूट भी दे रही है।

उन्होंने बताया कि वाशिंगटन के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान ने आयुर्वेदिक पौष्टिक आहारों को मंगाने के लिए आर्डर भी दे रखा है। उन्होंने बताया कि भारत प्रत्येक वर्ष विश्व में पचास लाख से एक करोड़ रुपये की मूल्य की आयुर्वेदिक दवाइयों का निर्यात करता है।

उन्होंने बताया कि उनका संगठन जेनेवा में मई में लगने वाले विश्व स्वास्थ्य संगठन के वार्षिक मेले में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का प्रचार- प्रसार करता है। इस मेले में देश-विदेश के प्रतिनिधि भाग लेते हैं। अफ्रीकी देशों के प्रतिनिधि इस चिकित्सा पद्धति में अधिक रुचि लेते हैं। उन्होंने सरकार से मांग की कि भारत महोत्सव जैसे कार्यक्रमों में भी आयुर्वेद को प्रचार-प्रसार करने की अनुमति दी जाय, क्योंकि यह चिकित्सा पद्धति हमारी संस्कृति का एक अंग है।

आयुर्वेद से एड्स का उपचार

'एड्स' जैसे भयानक रोग का उपचार अब विदेशों में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से प्रारम्भ हो गया है। श्री त्रिगुणा ने बताया कि गत दिनों ब्राजील और हालैंड में 'एड्स' के मरीजों का उपचार भारत के आयुर्वेद विशेषज्ञों ने शुरू कर दिया है। उन्होंने बताया कि करीब पैंतीस मरीजों को जड़ी बूटियां दी गयी हैं और उनके परिणाम अच्छे निकले हैं। श्री त्रिगुणा हाल में विदेश में वहां के डाक्टरों को आयुर्वेद चिकित्सा का प्रशिक्षण देकर लौटे हैं।

उन्होंने बताया कि अभी इन मरीजों को पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सका है, किन्तु इस रोग के प्रारंभिक लक्षण दूर हो गये हैं। उन्होंने दावा किया कि अगर आयुर्वेद अनुसंधान के लिए देश में सरकार पर्याप्त सुविधा प्रदान करे तो एक वर्ष के भीतर औपसर्गिक शेव (एड्स का आयुर्वेदिक नाम) के उपचार के लिए नुस्खा तैयार किया जा सकता है। उन्होंने इस सिलसिले में देश में आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार की सरकार से मांग भी की।

साप्ताहिक हिन्दुस्तान
वर्ष ३७ अंक ३२
१० से १६ मई '८७

'प्रकृति की सहज कृपा ही आयुर्वेद की संजीवनी है'

—वैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुणा

प्रत्येक चिकित्सा-पद्धति के साथ एक जीवन-दर्शन जुड़ा होता है। भारतीय चिकित्सा में सम्पूर्ण जीवन-पद्धति पर अधिक बल दिया जाता है। साथ ही हर प्रकार की आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक स्थितियों पर भी विचार किया जाता है। इसलिए आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति में तंत्र-मंत्र, दवा, ज्योतिष और साथ-साथ आयुवृद्धि को सुरक्षित करने पर भी बल दिया जाता है। 'आयुर्वेद' पद्धति में इसीलिए समग्र जीवन, आयु और जीवन-पद्धति को भी अपने क्षेत्र में समेट कर चलता है।

प्रस्तुत साक्षात्कार बृहस्पति देव त्रिगुणा, आयुर्वेद मार्तण्ड, अध्यक्ष महर्षि वैदिक यूनिवर्सिटी (यूरोप) एवं अध्यक्ष अखिल भारतीय आयुर्वेदिक कांग्रेस केन्द्रीय आयुर्वेदिक समिति (भारत सरकार) से लिया गया है।

प्रश्न : त्रिगुणाजी, आयुर्वेद की उपेक्षा मुख्य कारण आप क्या मानते हैं ?

उत्तर : मैं तो मानता हूं, देश में आयुर्वेद के प्रति कोई उपेक्षा नहीं है। देश में आयुर्वेद बढ़ रहा है, आयुर्वेद की दवाओं का निर्माण बढ़ रहा है। उनकी मांग ज्यादा हो रही है। साथ ही, आयुर्वेद के चिकित्सक देश में पिछले पांच वर्षों में करीब एक लाख बढ़े हैं। बिना मांग के यह कैसे बढ़ सकते हैं ?

प्र. : आयुर्वेद के विषय में कहा जाता है कि वह रोग को निर्मूल करता है। दूसरे शब्दों में स्वास्थ्य के प्रति उसका दृष्टिकोण सम्पूर्णता का है, इसे कृपया थोड़ा विस्तार से समझाइए ?

उ. : आयुर्वेद वास्तव में वेद-ज्ञान है। इसका सृष्टि के साथ गहरा सम्बन्ध है। आयुर्वेद का सिद्धांत पंच-चिकित्सा पर आधारित है। इस कारण ही आयुर्वेद-चिकित्सा [illegible] उस स्तर पर लाभकारी होती है, जिस [illegible] उसका जन्म होता है। इसी से आयुर्वेद [illegible] औषधियां हानिप्रद नहीं होतीं और रोग को [illegible] करने में समर्थ होती है।

प्र. : शल्य-चिकित्सा का आयुर्वेद में क्या महत्व है ? वस्तुतः यह किसकी देन है ?

उ. : संसार में शल्य-चिकित्सा का प्रादुर्भाव [illegible] आयुर्वेद में हुआ, जिसके आदिप्रवर्तक भगवान धनवन्तरि हैं। जो [illegible]-चिकित्सा में पारंगत है, उसका नाम ही धनवन्तरि होता है। यह एक प्राचीन शब्द है। [illegible] धनवन्तरि और उसके बाद उनके शिष्यों ने इसको आगे बढ़ाया। पुस्तकों में इन शिष्यों [illegible] और उनके औजारों का वर्णन है। शरीर [illegible] के बाद उन्होंने जो अंगों का विकास [illegible] और वर्णन किया, वो सब आयुर्वेद में [illegible] है। इसलिए यह स्पष्ट है कि [illegible] चिकित्सा का आयुर्वेद ही मूल स्रोत है।

प्र. : क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि [illegible] आयुर्वेद को शास्त्रीय पद्धति से [illegible] करने के लिए उपयुक्त वातावरण [illegible] है ? शुद्ध आयुर्वेदिक औषधियां नहीं [illegible] हैं, इसका क्या कारण है ? कुछ लोग मानते हैं कि मशीन से दवा बनाने में भी इसके कारण निहित हैं ?

उ. : नहीं, मशीन से दवा बनाने का इसमें कोई कारण निहित नहीं है, बल्कि हम तो कहते हैं कि यह अच्छा है। एक व्यक्ति हाथ से घुटाई करता है, मशीन भी वही करती है। दवाई-निर्माण में इससे कोई बाधा नहीं आती। साधन पहले से ज्यादा अच्छे होते जा रहे हैं। दवाई बनाने में आज से हजारों वर्ष पहले आयुर्वेद के प्रति हमारा जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण था ओषधि-निर्माण के प्रति, जड़ी-बूटियों के विज्ञान का जो हमारा निरीक्षण था, वह बीच में दो-तीन सौ वर्ष में काफी गिर गया है। इसका कारण यह था कि दूसरी पद्धति को प्रोत्साहन देने की खातिर इस शास्त्र को अपेक्षित राजकीय आश्रय नहीं मिला, जिससे वह बहुत पीछे हट गई। अब आहिस्ता-आहिस्ता हमारी सरकार इस ओर ध्यान दे रही है। इसकी पढ़ाई-अनुसंधान के लिए काम किया जा रहा है। इसकी शिक्षा की पद्धति बना दी गई है। इस सबसे धीरे-धीरे आयुर्वेद उठ रहा है। पर उतना और उस गति से नहीं जितना हम चाहते हैं। वैसे इन दिनों आयुर्वेद अफ्रीका, अमेरिका, ब्राजील, पश्चिम जर्मनी, मिस्र आदि देशों में धूम मचा रहा है। चीन के स्वास्थ्य मंत्री और मिस्र के राष्ट्रपति हुसैनी मुबारक से मैं मिला हूं, उन्हें 'अमृत कलश' दिया है। वहां भी महर्षि आयुर्वेद अब शुरू हो गया है।

प्र. : पहले तो औषधि बनाने के लिए वनस्पतियां पूजन-आह्वान कर के मुहूर्त देख कर लाई जाती थीं.

उ. : ऐसा है कि आयुर्वेद, ज्योतिष और धर्मशास्त्र—ये तीनों ही वेद के अंग हैं और आपस में गहरे सम्बंधित हैं। वास्तव में धर्मशास्त्र जो है, वह एक ऐसा स्रोत था आयुर्वेद के लिए कि उन्होंने इसको धर्मशास्त्र में परिणत कर दिया, ताकि उसके प्रति लोगों की आस्था बढ़े। फिर मंत्र में बड़ी अमोघ-शक्ति होती है। मंत्र की शक्ति से वनस्पति में रोगनाशक शक्ति ज्यादा होती है। इसलिए पहले वैसी मर्यादा थी। आजकल सब लुप्त हो गया है। लोगों को उसका ज्ञान ही नहीं है।

प्र. : सरकारी और गैरसरकारी, दोनों स्तर पर आयुर्वेद के प्रचार के लिए क्या किया जाना चाहिए ?

उ. : आयुर्वेद के लिए केवल जबानी प्रचार करने से कुछ लाभ नहीं होगा। जब तक जनता किसी चिकित्सा-पद्धति को मान्य नहीं करती, वह नहीं बढ़ सकती। जनता का सर्टीफिकेट ही उसकी महत्ता को बढ़ाता है। रोगी आएं, हम दवाई दें और वह ठीक हो जाए तो दस और आएंगे। इसलिए यह भी जरूरी है कि हमारी जो चिकित्सा-पद्धति है, हमारी जो आयुर्वेदिक पढ़ाने की पद्धति है, इन दोनों में आमूल परिवर्तन होना चाहिए। इस परिवर्तन के साथ-साथ, चूंकि हम बहुत पीछे रह गए हैं, इसलिए प्रचार की आवश्यकता भी मैं जरूरी मानता हूं। वैद्य-समाज को चाहिए कि वे बहुत लगन से ये काम शुरू करें, प्रचार भी शुरू करें, साथ में अच्छी औषधियों द्वारा रोगी को चंगा करने के लिए ज्यादा सुविधा बनाएं, पहुंचाएं और सम्भव हो तो घर तक पहुंचे।

प्र. : ऐसा कहा जाता है कि आयुर्वेद स्वास्थ्य की चिंता करता है। फिर धर्म, काम, मोक्ष की प्राप्ति के लिए योगाभ्यास का निर्देश करता है। इसे स्पष्ट करें ?

उ. : योग और आयुर्वेद ये दो चीजें नहीं है। आयुर्वेद का अंग योग है। योग और आयुर्वेद दो नहीं हैं, क्योंकि योग द्वारा भी दुःख का नाश होता है और आयुर्वेद भी दुःख का नाश करता है। जैसे कर्मयोग, ज्ञानयोग, सांख्य योग, राजयोग, भक्तियोग आदि योग हैं, वैसे ही एक योग का नाम है दुःखयोग। योग, दुःख नाश करने के लिए ही है। मैं समझता हूं कि आयुर्वेद से वह भिन्न नहीं है। अगर योग को आयुर्वेद से हटा दिया जाए तो वह किसी वृक्ष की टहनियां काट दिए जाने जैसा होगा। योग का आयुर्वेद से सम्बंध रखना उसका एक स्नेह है, उसका एक शृंगार है। वह उसके लिए सहायक है।

प्र. : सत्व, रजस और तमस गुण वात-पित्त-कफ त्रिदोष से किस तरह सम्बंधित हैं ?

उत्तर : असल में वात-पित्त-कफ जो हैं वो दोष भी हैं, धातु भी हैं। धातु वे तब होते हैं जब देह में वे साम्य अवस्था में होंगे। जब वे संतुलित और नियमित क्षमता में होंगे, तब उसको हम कहते हैं 'धातु'। उन्हें दोष कहते हैं, जब वो असंतुलित हो जाएं। आहार-विहार आदि कारणों से जब वे बिगड़ जाते हैं तब हम उनको दोष कहते हैं। वैसे ये पांच हैं। इनका पंचमहाभूत नाम है। पंचमहाभूतों में से उनको सूक्ष्म करके तीन कर दिया गया। पृथ्वी, जल, आकाश, वायु, अग्नि से दो तत्व एक में करके ऋषियों ने उसको तीन जगह, तीन हिस्सों में बांट दिया। सत्व, रज और तमस में। इन तीनों गुणों के संतुलन से ही स्वास्थ्य बना रहता है। इसी आधार पर आयुर्वेद की बुनियाद रखी गई है।

प्र. : रस-सिद्धि का क्या अर्थ है ?

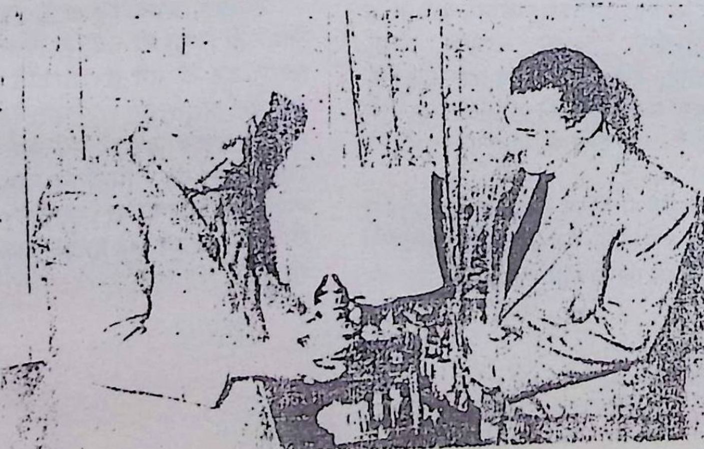
उ. : 'रस विद्यातंत्र' के आधार पर 'रस' नाम पारे का है। उसको सिद्ध करने के कुछ उपाय ग्रंथों में लिखे हैं। जितने रस के ग्रंथ हैं, वे सब सिद्ध हो जाते हैं। उसके दो गुण होते हैं — देय और [illegible] सिद्धि। देह-सिद्धि का अर्थ होता है जो बीमारी में रोग हटाए और मन की शांति दे, यही देह-सिद्धि है। यदि उसको धातु वात में किया जाए, तो उस धातु का प्रयोग पारे आदि से सोना बनाने में होता है। इसलिए उसको धातु-सिद्धि कहते हैं। देह के लिए वह प्रयोग होगी तो अजर-अमर होने की शक्ति पैदा करेगी, और धातु के लिए होने पर उसे स्वर्ण कर देगी।

प्र. : सरकार आयुर्वेद की प्रगति के लिए क्या कर रही है ? आप उसे पर्याप्त मानते हैं ?

उ० : सरकार कोई काम तब ज्यादा करती है जब जनता की मांग बढ़ती है। आज जनता की मांग आयुर्वेद की है, तो सरकार ने भी इधर ध्यान देना शुरू कर दिया। लेकिन सरकार अभी उतना आगे नहीं बढ़ी है, जितना जनता की मांग बढ़ी है। इसमें दोष हमारा है कि हम कटिबद्ध हो कर, इकट्ठे हो कर सरकार को सहयोग नहीं दे रहे हैं। सरकार को जागरूक रखने का प्रयास हम कम करते हैं।

— बी ४/५९, सफदरजंग इंक्लेव, नई दिल्ली

मिस्र के राष्ट्रपति को 'अमृत कलश' भेंट करते हुए वैद्य बृहस्पति देव त्रिगुणा



MESSAGE FROM INDIA

Ayurveda can treat AIDS

AYURVEDA THE ONLY ALTERNATIVE TO FAILING MEDICAL SYSTEMS

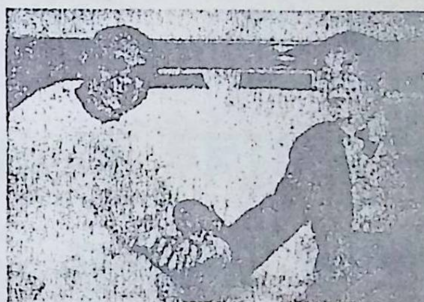
By Piyush Pant

The global failure of medical care indicates a fundamental lack in the prevalent approach to health. At present it is not adequately recognized, that a growing need for doctors and hospitals is actually an expression of the failure of health care. The only way to raise significantly the standard of health and create a society free from illness is to establish a system of health care that is based upon an effective approach to prevention.

Ancient Indians were aware of the existence of the Acquired Immune Deficiency Syndrome—AIDS, and ayurveda could offer a cure for the dreaded disease. The clinical features of AIDS correspond to the description of disease called "Ojakshaya", repeatedly referred to in the ayurvedic treatises of acharyas like Chasaka, Sushruta and Chakrapani Dutta. Based on the findings of the acharyas, effective method of treatment could be evolved.

A SCIENCE OF LIVING

Ayurveda, the ancient Indian system of medicine, greatly fulfils the need Ayurveda, which is a part of Atharva veda, represents the cosmic view of life along with the human life. Ayurveda is not a curative science. Cure is inherent in its process. Ayurveda is the perfect science of life, 'VEDA' or knowledge of 'AYU'—life. It encompasses the full range of life from its unmanifest origin in the Unified Field of all the laws of nature, the field of pure consciousness to all of its manifest expressions in mind, body, behaviour and environment.



Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna with the Health Minister of the People's Republic of China in Beijing, 1986

SYNTHESIS OF MIND AND BODY

Body is the physical reality. Mind is the ever creative and imaginative faculty of the body. At times a contradiction is poised against the both. One who lives a balanced life and follows the disciplines of the natural law is able to satisfy both the urges without any clash or contradiction. A healthy body gets a healthy mind and a healthy mind is a cohesive expression of a pure CHITT.

MAHARISHI'S TECHNOLOGY

All the aberrations are due to the fact that the human mind does not act in accordance with all the laws of nature. Law of nature is derived from the unified field of consciousness i.e. the Yogic Chetana i.e. a Samhita Sakti that unites the mind, the body and the CHITT in one consciousness. It is the unified field of consciousness that restores the balance of all the patterns of behaviour in symmetrical form, says Maharishi Mahesh Yogi. In order to achieve this state of mind, Maharishi has evolved a Technology through Transcendental Meditation (T.M.) and T.M.—Sidhi Programme that develops within oneself. If unified field of conciousness is developed, the entire life pattern will grow smoothly without any tensions and disease, says Maharishi Mahesh Yogi.



Dr. Triguna presenting Amrit Kalash to President Mubarak of Egypt

दैनिक
अवन्तिका
फोन ४४९६
रजि. नं. ४ म.प्र. मालवा
उज्जैन-इन्दौर से प्रकाशित
उज्जैन शुक्रवार १८ जुलाई १९८६ प्रथम संस्करण

महर्षि प्रणीत आयुर्वेद ब्राजील की शिक्षा तथा स्वास्थ्य प्रणाली में शामिल

नई दिल्ली। ब्राजील की सरकार ने अपने देश में महर्षि महेश योगी द्वारा जाग्रत सम्पूर्ण आयुर्वेद को विधिवत मान्यता प्रदान कर दी है और भारत की इस प्राचीनतम स्वास्थ्य प्रणाली को विश्व विद्यालयी पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षण में शामिल किया जा रहा है।

यह जानकारी देते हुए महर्षि विश्व स्वास्थ्य योजना के भारत स्थित एक प्रवक्ता ने बताया कि ब्राजील के स्वास्थ्य मंत्रालय ने इस संबंध में त्रलौषधियों की विस्तृत जानकारी तथा पहली किश्त में अपने यहाँ के लगभग400 डॉक्टरों को आयुर्वेद पद्धति में प्रशिक्षित करने का अनुरोध किया है।

प्रवक्ता के अनुसार ब्राजील के दो प्रान्तों में सात-साढ़ महीने के कोर्स चलाये जा रहे है। 16 जुलाई से ब्राजील की राजधानी में इस संबंध मे एक विशेष सम्मेलन शुरु हो रहा है जिसमें अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस के अध्यक्ष सुप्रसिद्ध नाड़ी विशेषज्ञ राजवैद्य ब्रहस्पति देव त्रिगुणा के नेतृत्व में आयुर्वेद विशेषज्ञों का एक दल 6 जुलाई को सम्मेलन में भाग लेने के लिए रवाना हो गया है।

महर्षि प्रणीत आयुर्वेद में आयुर्वेद के सभी पक्षों रोकथाम (आहार, विहार) उपचार (औषधि) ज्योतिष, संगीत यज्ञादि कर्मकांड तथा योग और उसमें महर्षि महेश योगी द्वारा प्रतिपादित योग की सबसे सरल प्रणाली भावातीत ध्यान तथा सिद्धि को भी शामिल किया गया है।

(ए. इ. एव.)

आज

सोमवार १८ जुलाई १९८८. सौर २ श्रावण सं० २०४५ वि०

तकरीबन २० देशोंमें चल रहा है आयुर्वेदका प्रचार

नयी दिल्ली, १७ जुलाई (वा.)। विश्वके करीब बीस देशोंमें इस समय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिके प्रचार प्रसारका अभियान चल रहा है। इसके तहत वहांके एक हजार डाक्टरोंको प्रशिक्षित किया जा रहा है।

अखिल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष वृहस्पति देव त्रिगुणाने पत्रकारोंको बतायाकि विश्व स्वास्थ्य योजनाके तहत जापान, अमेरिका, इटली, ब्राजील, चीन अमेरिका, और कनाडा जैसे देशोंमें अब तक कुल एक सौ भारती वैद्य वहांके डाक्टरोंको प्रशिक्षित करनेके लिये भेजे जा चुके हैं। यह स्वास्थ्य योजना १९८२ में शुरु की गयी थी।

उन्होंने बतायाकि भारती वैद्य विदेशी डाक्टरोंको छः महीनेका प्रशिक्षण देते हैं। यह चिकित्सा पद्धति वहांके लोगों में काफी लोकप्रिय होती जा रही है। ब्राजील सरकारने तो इस चिकित्सा पद्धतिको मान्यता भी दे दी है और मारीशस श्रीलंका, नेपाल और बंगलादेशकी सरकारें इसके लियेआर्थिक सहयोग भी दे रही हैं।

श्री त्रिगुणाने बतायाकि राजधानीमें एक भी आयुर्वेदिक अस्पताल नहीं होनेके कारण मरीजोंको काफी दिक्कत उठानी पड़ती है। प्रशासनने दिल्लीके हरिनगर इलाकेमें २०० शय्याओंका एक आयुर्वेद अस्पताल खोलनेका फैसला किया था और इस सबंधमें भवनका शिलान्यास भी किया गया किंतु उसे मेडिकल अस्पतालमें बदल दिया गया।

उन्होंने बतायाकि मरीजोंकी परेशानियोंको देखते हुये वह दो तीन महीनेके अंदर एक आयुर्वेद अस्पताल खोलने जा रहे हैं। इसमें मरीजोंके असाध्य रोगोंकी भी चिकित्सा की जा सकेगी।

उन्होंने बतायाकि बजटमें आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिपर मात्र १.५ प्रतिशत खर्च किया जाता है।

नवभारत टाइम्स

नई दिल्ली, ११ दिसम्बर, १९८९

आयुर्वेद-होम्यो. चिकित्सा विधेयक पारित

भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सकों के सहयोग से मॉरिशस की संसद ने 'आयुर्वेदिक एवं होम्योपैथिक चिकित्सा विधेयक' पारित किया है। यह विधेयक गत २१ नवंबर को पारित किया गया। भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सक वैद्य बी.डी. त्रिगुणा और भारत में स्वास्थ्य मंत्रालय के सलाहकार वैद्य एस.के. मिश्र से इस विधेयक के बारे में व्यापक परामर्श किया गया था।

मॉरिशस सरकार ने तीन साल पहले श्री त्रिगुणा को वहां आमंत्रित किया था। उसके बाद उनके पुत्र देवेन्द्र त्रिगुणा को भी वहां बुलाया गया। इन भारतीय चिकित्सकों ने मॉरिशस के कई मंत्रियों का उपचार किया। वहां के प्रधानमंत्री, उपप्रधानमंत्री और अन्य मंत्री व उच्च अधिकारी उस चिकित्सा से प्रभावित हुए। तब वहां की सरकार ने विधेयक पास कर इस पद्दति को विधिवत मान्यता प्रदान करने का निर्णय किया।

विधेयक तैयार करने के लिए भारत के स्वास्थ्य मंत्रालय के सलाहकार वैद्य एस.के. मिश्र मारिशस बुलाए गए। विधेयक का प्रारूप देवेन्द्र त्रिगुणा के माध्यम से अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन को भेजा गया। महासम्मेलन की टिप्पणी के बाद गत नवंबर में मॉरिशास संसद ने यह विधेयक पारित कर दिया।

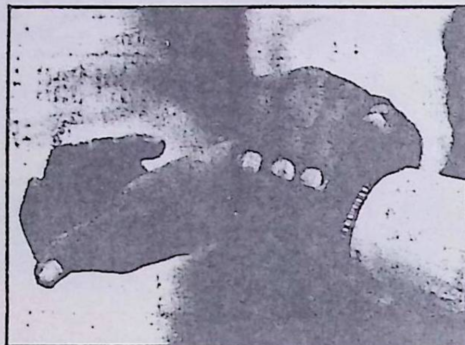
मॉरिशस में 'मानव सेवा ट्रस्ट' के सहयोग से एक आयुर्वेदिक केन्द्र भी खोला गया है। वैद्य देवेन्द्र त्रिगुणा का कहना है कि अगले वर्ष मार्च में मॉरिशस में अन्तरराष्ट्रीय आयुर्वेद सम्मेलन' आयोजित किया जाएगा। वहां के प्रधानमंत्री सम्मेलन का उद्घाटन करेंगे। (एस)

THE  SUN

BALTIMORE, MARYLAND

THURSDAY
AUGUST 17, 1989

VOL. 305 NO. 80



THE SUN/JED KIRSCHBAUM

Dr. B. D. Triguna analyzes the pulse of Raghbur Goyal of Washington.

Meditators convene to trade daily travail for pure consciousness

By Susan Baer
Washington Bureau of The Sun

Washington

The sign says "Silence Beyond This Point." You may smile, you may transcend, but please do not speak.

There are shoes parked in rows outside a curtain, thousands of shoes — loafers and sandals and sneakers and pumps and thongs and docksiders. And clothes, touristy T-shirts and skirts and slacks, hang on a rack.

Peek inside this basement room of the Omni Shoreham Hotel, inside the curtain, inside the minds of the hundreds here, inside the consciousness, the infinite potential, the human awareness and, if you've brought your mantra, you're in luck.

This summer marks the 30th anniversary of Transcendental Meditation's arrival to America, and close to 1,400 meditators from all over the country and abroad have gathered this week for their semiannual TM convention here.

"It's like heaven on earth," says Alan Scherr of Beltsville, a photographer and former Baltimore TM instructor, of these get-togethers. "When you have a thousand people, all radiating who they are, it creates one huge wave of as close to a perfect environment as you can imag-

See TM, 4C, Col. 1

Meditators meet to explore the realm of potential

TM, from 1C

ine. People are just sharing happiness without even speaking."

In the afternoon, there are classes and seminars — subjects like "quantum healing," Vedic music, the holistic approach to health called Maharishi Ayur-Veda, and pulse diagnosis. The morning hours, from 8 to lunch time, are devoted to mega-meditation.

"These people have six months worth of fatigue from work to get rid of," says convention spokesman Jim Gerhard. It is time to unwind.

Trading their street clothes for loose-fitting garments, draped with blankets and divided into two separate areas — for women and men — the participants sit on padded, sheet-covered floors, legs crossed in the traditional lotus position and quietly search for "the deepest state of rest possible, pure consciousness," says Mr. Gerhard.

After a while, a bell signals the start of "yogic flying," an advanced form of TM where meditators actually jump in the air — either leaping forward or in place — while in the sitting position.

"The moment they lift off the ground is the moment of maximum coherence," explains Mr. Gerhard. (Today, the convention is hosting the International Yogic Flying Competition where those from around the world compete in high jump, long jump, dash and hurdles — all done in the cross-legged position.)

Bell signals the start of "yogic flying."

Janette G. Brenner, a retired health care worker from Baltimore, has meditated twice a day for the past 18 years and says it has changed her life. "I don't know how old I am," she says. "According to my birth date I'm a senior citizen. But I feel better than I did when I was a teen-ager. There's no such word in my vocabulary as 'old.'"

Mr. Scherr, who started practicing TM 19 years ago while in his last year at the University of Maryland, says he, too, was a changed man after discovering the program founded by Maharishi Mahesh Yogi in 1957.

"When I walked out the door after that first time, I was a different person from when I walked in. . . . People don't really get a chance to experience what their full potential is. That was the story of my life. My report cards always said, 'Alan isn't working up to his full potential.'"

But after practicing TM, he says, he found the creativity he had always hoped to tap, turned his attention to photography, earned a second bachelor's degree in one year, a master's in two years, and is now "working at what I really love."

At yesterday's session, Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna, the world's leading expert in pulse diagnosis — the technique of detecting existing or forthcoming disease by laying three fingers on one's pulse — performed his quickie exams on a handful of skeptics.

"Hmmm. Nice," said Dr. Triguna, an Indian who sometimes spoke through an interpreter, sometimes in English, while touching first the right wrist, then the left wrist of a "patient." "Nothing wrong with any organs — kidney, liver, heart, all fine. Some pressure in back and lower abdomen. Some tiredness in neck and back. . . . Some hyperacidity . . ."

The next in line was told to stay away from dried fruits, vinegar and hot foods like chili.

Dr. Triguna, who sees up to 800 patients a day at his clinic in New Delhi, says one's pulse speaks to him "like a voice on a telephone. When you hear someone on the telephone, you understand who the person is even without hearing their name. I recognize vibrations just like a voice. It's an easy job."

And, well, somebody's got to do it.

WEEKEND Newstime
Sunday 21 Aug 1988

SPECIAL REPORT

While traditional doctors pore over scanner images and supermicroscopes, Dr Bramas Pati Triguna is content with taking his patients' pulse, on both wrists. For about two minutes he seems to listen intently to a coded message that only he understands.

Then he smiles the reassuring smile of the old family doctor. "Your organs are all well," he tells this reporter, "but the nervous system could be better; you stay up too late at night, you watch too much television." Other comments follow, astounding considering that he has never seen his "patient" before.

No medicines are needed, just "better behaviour," the doctor says. It's a relief since the herbal concoctions he prescribes most often are reputedly quite pungent.

The ride to the doctor's clinic in old Delhi could have accounted for some of the stress the patient felt. Finding the quiet, tree-shaded clinic requires braving crazy traffic – the only rule is that anything goes – and then walking the last half-mile down dirt lanes bordered by tiny shops and where oxes and cows have the right-of-way.

A leading figure in the field of Ayurvedic medicine in India and abroad, Dr Triguna operates with his son, Dr Devinder Triguna, a small clinic that draws hundreds of patients every day from all over India; some even come from foreign countries to try the doctors' natural remedies made from thousands of herbs, precious stones, metals and other minerals.

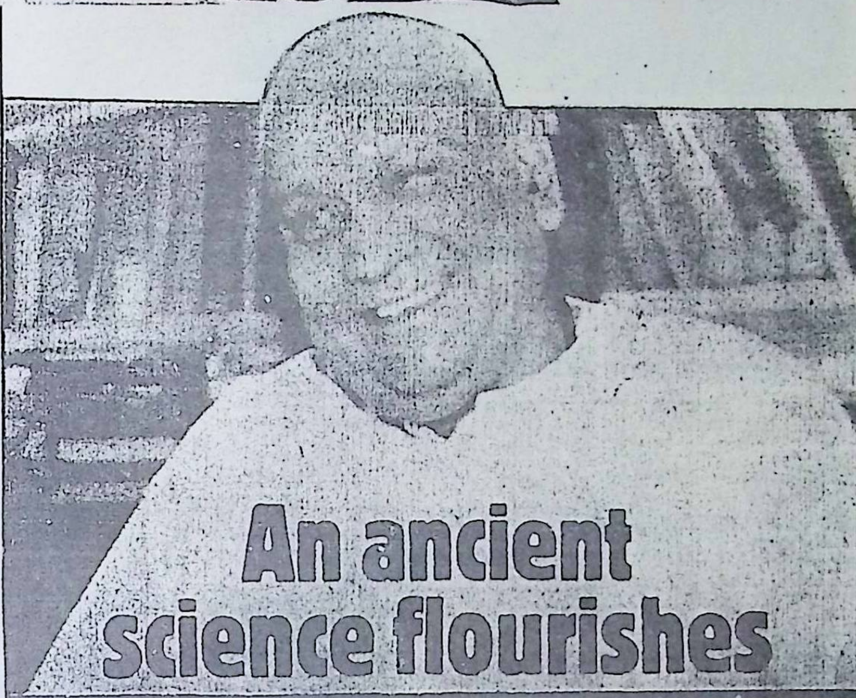
Almost every country has its own homeopathic healing, the young Dr Triguna explained, but Ayurvedic medicine is different because the use of natural remedies was elevated to the rank of science by Indian researchers thousands of years ago.

Rooted in India's Vedic tradition, Ayurveda is considered by some to be the source of modern medicine. Ancient vedic writings show striking similarities in both theory and practice with the Greek Hippocratic tradition.

"We know exactly what part of a specific herb cures what disease," Dr Devinder Triguna explained. "It's all in the books... 'Ayu' is life, and 'veda' is knowledge. It's not a religion, but rather a set of guidelines to help man lead a fuller life by preventing disease, treating it when it happens, and teaching 'good behaviour'."

But don't look for the key to eternal youth, he quips: "It adds life to your years, not years to your life."

Dr Bramas Triguna's recipe for a fuller life is at the same time quite simple and a challenge to modern man, always on the run and cut off from his roots. It's a three-pronged approach focusing on personal



An ancient science flourishes

A leading figure in the field of Ayurvedic medicine in India and abroad, Dr Triguna's small clinic draws hundreds of patients every day from all over the country

habits and family and social interaction.

First, the doctor notes, all individuals are unique, so you must find the diet that suits you (it changes with the seasons and your age and sex) and eat regulated amounts... "All diseases come from misuse of the brain: for example, you know your stomach is full, but still you eat, it's like you see a red light at a road crossing but you go through!" Then, he adds, your life must be regular: eat, sleep at the same time each day... "Today you go to sleep at 10 pm, yesterday at midnight, tomorrow at 1 am. It will give you brain disease." Once you life's rythm follows a regular pattern, it must become part of a family relationship and social life that includes love and respect of the elders... "A man who wants to live a long life, he should be first happy."

Ironically, many of the patients who come to the clinic have little to be cheerful about. They are poor and can pay only a nominal fee for the natural medicines the doctor prescribes; they often suffer from chronic ailments that modern medicine failed to cure. Even terminally ill cancer patients show up. If they come soon enough the problem can sometimes be cleared, the doctors said.

Cases tend to vary with the seasons – in the late fall there are many cases of fever, malaria, jaundice. But there are also the happy occasions "when a young woman comes with her mother-in-law to be told if she is pregnant... I can tell because the little pulse is 5 per cent stronger," the older doctor says. He deplored the fact that prenatal and post-natal care is not available to the majority of Indian women.

Quite willing to cooperate with regular doctors, Dr Bramas Triguna tells parents to have their children vaccinated, but he also reminds older women to pass on to their daughters the knowledge of some traditional remedies.

In modern India city dwellers have better access to health care than farmers, he explained, but chemical pollution of the food chain and the environment is becoming a problem.

Rumour has it that Dr Bramas Triguna has won many battles against illness and pain. The minerals and herbs he uses, some of which he harvests in the Himalayas in the fall and spring, are stored in neatly catalogued jars and cans occupying dozens of shelves at the clinic. Doses are given out in small plastic bags that the patient takes home with specific directives as to how much must be ingested, when and with what ingredient (milk, water, honey...).

Pollution and the destruction of natural habitats in India threaten flora that is very important to Ayurvedic medicine, the Trigunas said, adding that they are working with the department of forestry to protect some species and grow others so they remain available and affordable. Some indigenous plants found in India only are exported to Ayurvedic doctors abroad, especially in Brazil.

Ayurvedic doctors of the 1980s claim to be the repositories of very old scientific knowledge that may well have been lost if it had not become the focus of attention a few decades ago as a byproduct of a renewed interest in ancient philosophies.

Not content with surviving in an age that produces medical discoveries almost everyday, Ayurvedic doctors are looking for expansion and cooperation with medical professionals worldwide. Ayurvedic research centers exist in several locations in the United States and in Brazil, Holland, Germany and Italy. Two states in Brazil recently gave legal status to vedic clinics and pharmacies, and doctors in India and Brazil are cooperating [illegible] the study of Brazilian flora's [illegible]ing properties. Meanwhile, Ayurvedic centers in the US and Europe are contributing to anti-AIDS and cancer research.

Decidedly turned towards the future, the Indian Ayurvedic community is planning the creation of "Veda Land," a 500-acre park that would cost from 10 to 15 million US dollars, Dr Devinder Triguna explained. "People who come will be able to learn about the veda and Indian culture."

India reportedly has about 400,000 vedic doctors, a lot more than when Dr Bramas Triguna started his career 47 years ago. The new generation tends to take regular medical courses besides attending Ayurvedic colleges. There are about 40 of them in India and studies last for 5 and a half years. Some students go on to vedic graduate schools and research institutes.

In almost half a century, Dr Bramas Triguna raised to the top of his profession, being named president of the All India Ayurveda Congress and Honorary Physician of the President of India.

"Practice makes perfect, that, and knowledge of the books," his son notes. Also very important is that "we should not make it a business; a doctor should see the poor people, diagnose the ailment and give proper treatment, but he must treat the patient as a person, not a source of income... We should work for the people so that society can be disease-free and mankind live a happier life."

The younger Dr Triguna has achieved notoriety in his own right; he often attends medical conferences abroad. The trips are his vacations, he said, the rest of his time is spent at the Delhi clinic with his father.

Do they see progress in man's most recent endeavours. The answer is a qualified 'yes.' One problem is that researchers making scientific discoveries are not looking at the side effects and the drawbacks, the two doctors said. Every detail is part of a whole that must be considered. Too often modern scientists have a fragmented view of life.

It's difficult to see progress in the world because there is no common standard, the Trigunas said. Each culture is progressing at its own pace. "You cannot decide whether people are doing right or wrong," Dr Bramas Triguna said. "[illegible] happiness is relative. How would you like to share the [illegible] (crepe) and onion that the poor [illegible]mer eats in his field. [illegible] prays that God give the [illegible] world this sweet and tasty [illegible]."

Helene Bour

India Abroad

Weekly Newspaper • 50 cents • Second Class P.O. Entry

Vol. XVI No. 17 New York, N.Y. Friday, January 24, 1986

Health Expert's Goal: Disease-Free Mankind

Ayurveda

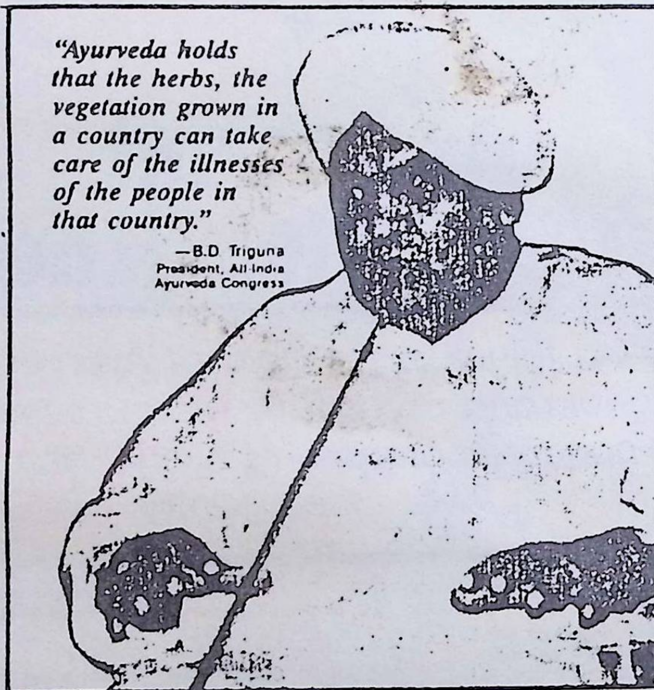
Seeing That All Are Disease-Free

By AZIZ HANIFFA

A well-known expert on ayurveda — the major traditional system of health from India — declared here that "the main purpose of ayurveda is to see that every single individual on this earth should be free from diseases, should be free from suffering and enjoy life in its full glory with bliss."

Dr. B. D. Triguna, the President of the All-India Ayurveda Congress, the foremost expert in the central government of India's Governing Council of Ayurveda explaining the basic concept of the system, said, "Ayur means life, veda means science, and ayurveda is the science of life."

Triguna was recently in Washington to speak to the directors and the staff at the National Institutes of Health about ayurveda and to meet with government officials to present what he said were the practical and scientifically validated applications of ayurveda to help solve the critical problems facing the modern health care system.



"Ayurveda holds that the herbs, the vegetation grown in a country can take care of the illnesses of the people in that country."

—B.D. Triguna
President, All-India Ayurveda Congress

Some Natural Laws

Triguna told reporters, "Ayurveda holds that the herbs, the vegetation grown in a country can take care of the illnesses of the people in that country because natural law has brought the plants and vegetation and the same natural law has brought the animals and man."

Triguna said that ayurveda, which was being revived under the World Plan for Perfect Health launched by Maharishi Mahesh Yogi, who founded the Transcendental Meditation (TM) program 27 years ago, was "in conformity with the slogan of the World Health Organization (WHO), which has said it will give good health to every individual by the year 2080."

Triguna asserted, "It's a fact that any single system of medicine, whether Western or any other system alone cannot give ideal health to every single individual."

100 Colleges In Action

Triguna also pointed out that in India, since Independence, "we have about 100 colleges of ayurveda opened in different parts of the country"

He said that the government had "definitely been trying to encourage this science and has been funding generously for the upliftment of this science."

He said that the government had upgraded the Department of Ayurveda and research in ayurveda was also being conducted.

"There are four ayurvedic universities in India, three councils appointed by the government of India, there is a big research institute in ayurveda which is being built and there is a regional institute in every province in India."

Asked if there were problems in spreading ayurveda in the United States because of the restrictions on the practice of medicine and also in prescribing drugs under the FDA, Triguna said, "Right now, we are not prescribing any ayurvedic medicine in this country."

"What we are trying to do," he said, "is focus attention on the prevention by advising on health education and advising on diets."

Staying Within the Laws

Triguna asserted that "we don't want to do anything illegal and we don't want to violate the national law of any country."

He said "so we are trying to talk to the government and the health officials in the country to convince them of what we can do."

Dr. Deepak Chopra, an endocrinologist and chief of staff at New England Memorial Hospital in Stoneham, Mass., who studied the applications of ayurveda to modern medicine for 10 years, said that Triguna is the world's foremost authority on ayurvedic pulse diagnosis. Chopra said that "Dr Triguna's unique ability, developed over 40 years of clinical experience, is to precisely diagnose any disease in the body within one or two minutes of a consultation."

The Use of Pulse Diagnosis

"This he does," Chopra said, "through the ancient ayurvedic method of pulse diagnosis. Dr Triguna then prescribes traditional ayurvedic curative and preventive procedures whose effectiveness has been scientifically validated."

He said "normally such a diagnosis would take us several hours of testing and using our most sophisticated — and costly — medical technology."

Chopra said that complete, scientifically validated programs in ayurveda would be made available through Maharishi Ayurveda Prevention Centers that were being established in 50 cities in the United States and Canada, including Washington, D.C., Boston, Los Angeles, and Fairfield, Iowa.

"Already, these centers are producing very impressive results," he said, citing the findings from one recent scientific study that was presented on Sept. 5 at the Eighth World Congress of the International College of Psychosomatic Medicine in Chicago.

"The research showed a statistically significant improvement in overall physical and mental health among 150 unselected patients," he said. He also cited initial results from a longitudinal study showing that individuals have decreased their biological age by an average of four years after eight months of the MAPC programs.

Triguna in a presentation to NIH officials and researchers said that ancient vedic science had time-tested procedures to handle all diseases, both mental and physical. He and several Western colleagues also presented scientific research showing that the mind is free from stress and made increasingly healthy through the transcendental meditation program and that the body is strengthened through the preventive measures of ayurveda.

Triguna credited Maharishi with the present restoration of ayurveda.

Ayurveda, Triguna said, could eliminate the three weaknesses of modern medicine — its high cost, its negative side-effects and its fragmented approach that focuses primarily on disease.

Triguna explained that pulse diagnosis, like other aspects of ayurveda, was based on a profound understanding of the three fundamental constituents of the physiology, which in combination determined individual body type. According to body type, he said, ayurveda recommends dietary measures, supplementary nutrition, and daily and seasonal routines to prevent illness and promote perfect health and longevity.



MAHARISHI EUROPEAN RESEARCH UNIVERSITY
Seelisberg, Switzerland, Tel: 043 / 33 11 44

Statement for the Press

Leading Doctors Encourage WHO Member States to Introduce Maharishi Ayur-Ved in order to solve the Problems of Health and Create a Disease-Free Society

Soviets to open Maharishi Ayur-Ved Institute in Moscow

Geneva, 12 May 1989

Health officials in nations around the world are recognising that Maharishi Ayur-Ved - the most sophisticated and clearly understood system of natural health care - is the essential element in resolving the current global crisis in health care and creating a disease-free society in every nation.

During the past week, the world's leading exponents of Maharishi Ayur-Ved have been in Geneva meeting health ministers and other delegates to the 154 nation annual assembly of the World Health Organization. They have presented the comprehensive health care programmes of Maharishi Ayur-Ved, validated by extensive scientific research, and have urged the delegates not to delay in introducing this system in their countries.

Maharishi Ayur-Ved in the Soviet Union

The senior member of the Maharishi Ayur-Ved delegation, Dr B.D. Triguna, President of the 300,000-member All-India Ayurveda Congress, has recently finalized an agreement in Moscow with the Soviet Deputy Minister of Health to open the Soviet Union's first Maharishi Ayur-Ved Institute.

Dr Triguna told newsmen in Geneva today that the goals of the new institute, which will be established under a joint venture between the Maharishi Ayur-Ved Foundation of India and the Soviet National Research Centre for Preventive Medicine, are:

1. To implement a comprehensive system of health care, based on Maharishi Ayur-Ved with emphasis on the prevention of chronic diseases, including cancer, hypertension, cardio-vascular diseases, degenerative diseases and age-related illnesses.

2. To establish an Ayurvedic facility for the treatment of chronic disorders

3. To implement an Ayur-Ved-based system of preventive medicine for the treatment of common risk factors of disease.

4. To teach the Transcendental Meditation technique, founded by Maharishi Mahesh Yogi, to millions of Soviet citizens, to prevent illness and promote perfect health.

Dr Deepak Chopra, President of the Maharishi Ayur-Ved Association of America, who had accompanied Dr Triguna to Moscow, said that the Russians were quick to recognise the value of Maharishi Ayur-Ved. He said his Soviet colleagues were all too well aware of the risk factors for disease, not least the hugely damaging side-effects found with modern drug therapy, and its failure to stop the rising tide of disease. Without Maharishi Ayur-Ved they lacked the technology to address these problems, he said.

The popularity of Maharishi Ayur-Ved in the Soviet Union has risen sharply since 3 May with the airing, of a half-hour nationwide television programme on the subject which was viewed by up to 100 million people.

Dr. Chopra said that after centuries of neglect, Ayur-Ved has been revived in its authentic form in recent years through the collaboration of His Holiness Maharishi Mahesh Yogi with the leading Ayur-Vedic experts of India and the western scientists and doctors.

The Quantum Mechanical Human Body

Dr Chopra described the new framework on which Maharishi Ayur-Ved is based - the Quantum Mechanical Body - which recognises that human physiology is a fluctuation of a basic field of nature which is consciousness itself, a view point which is compatible with the newest discoveries of modern physics.
'Maharishi Ayur-Ved used this model in a practical way through means of diagnosis and treatment which utilize consciousness and its modes of intelligence to create the desired physiological effect', Dr Chopra said.
'Health is based on physiological balance, the end point of complex interactions of the whole mind-body system,' he said. 'The modes of treatment of Maharishi Ayur-Ved re-establish the natural state of balance in the individual and thereby ensure life in perfect health. There are twenty powerful approaches to prevent and cure disease and increase longevity utilizing all aspects of life, including mind, senses, body, behaviour, and environment.'
Dr. Chopra describes this new paradigm for health in three books - Quantum Healing (Bantam 1989), Creating Health, and Return of the Rishi (Houghton Mifflin, 1987 and 1988).

Prevention through Maharishi Ayur-Ved

Professor Hari Sharma, Director of the Anatomic Pathology Division at Ohio State University, USA, described the findings of five studies he has conducted on one of the preventive approaches of Maharishi Ayur-Ved - the herbal preparation Maharishi Amrit Kalash.
Dr. Sharma found that Maharishi Amrit Kalash:
1. Increases lymphocyte production, indicating strengthened immunity and benefits for the prevention of cancer and infections;
2. Enhances the effect of neurotransmitters in the brain which promote the state of well-being;
3. Reduces the incidence of breast cancer in laboratory animals;
4. Inhibits platelet aggregation, thereby reducing the risk of abnormal blood-clotting, leading to reductions in atherosclerosis and heart attacks;
5. Reduces depression

Cure through Maharishi Ayur-Ved

Dr. George Janssen, Director of the Maharishi Ayur-Ved Health Centre for Europe, presented research conducted in collaboration with the largest private health insurance company in Holland (Zilveren Kruis). The study, which will shortly be published in the Dutch Journal for Integrated Medicine, found clear improvements in 79 per cent of patients treated with Maharishi AyurVed for one of ten chronic diseases (including asthma, hybertension, bronchitis, diabetes, migraine, eczema, and arthritis). Another recent health insurance study published in the prestigious US journal, Psychosomatic Medicine, found 50 per cent reduction in the need for medical and surgical care among practitioners of Transcendental Meditation, one of the approaches of Maharishi Ayur-Ved.

Dr. Janssen also cited the growing number of case studies in Europe and the USA indicating the effectiveness of Maharishi Ayur-Ved in the treatment of the Acquired Immune Deficiency Syndrome (Aids). Benefits include a general clinical improvement, increased subjective well-being, and improved functioning of the immune system.

World Doctors' Association Promotes Maharishi Ayur-Ved

Dr. Ulrich Bauhofer, President of the World Medical Association for Perfect Health, which represents 10,000 medical doctors in 25 countries, said that the members of his Association are now convinced on the basis of their clinical experience and over 400 research studies, that Maharishi Ayur-Ved fulfils the urgent need for a system of health care that is holistic, effective, prevention-oriented, without side-effects, cost efficient, and practical.

He said that increasing numbers of physicians are now turning to Maharishi Ayur-Ved and are establishing Maharishi Ayur-Ved Prevention Centres throughout the world.

'Modern medicine is only 200 years old, whereas Ayur-Ved has been practised for thousands of years and is authenticated by historical texts,' Dr. Bauhofer said.

> 'We feel that the results of our research, together with the fact that the Ayur-Vedic medicines have been used for centuries without harmful side-effects, warrants their immediate introduction in every country. It is unfortunate that the same laws in every country which allow the use of newly invented modern drugs with devastating side-effects, are restricting the use of these age-old proven natural medicines which do not have harmful side-effects and are of tremendous benefit for the people.'

He praised the governments that are now implementing Maharishi Ayur-Ved in their countries with the support of the practitioners of the traditional natural medicine. 'Maharishi Ayur-Ved can raise all systems of natural medicine in the world to their completeness and full effectiveness', he said.

End

WORLD MEDICAL ASSOCIATION FOR PERFECT HEALTH
United State of America

1111 H.Street NW Washington, D.C 20005 Tel 202 783-8181 Telex 292 -050

FOR NEWS EDITOR
RELEASE: IMMEDIATE
CONTACT: PRESS OFFICE, (202) 783-8181/628-6445

WORLD EXPERT ON AYURVEDA SPEAKS AT NATIONAL INSTITUTES OF HEALTH OFFERS SOLUTION TO MAJOR PROBLEMS OF MODERN HEALTH CARE.

WASHINGTON, D.C; OCTOBER 15, 1985-

This week a world expert in the oldest science of perfect health offered 60 medical doctors and senior research scientists at the National Institutes of Health a solution to the problems of modern health care.

Dr. B.D. Triguna told NIH officials and researchers that ancient Vedic Science has time-tested procedures to handle all diseases, both mental and physical. He and several Western colleagues presented scientific research showing that the mind is freed from stress and made increasingly healthy through the Transcendental Meditation(TM) program and the body is strengthened through the preventive measures of Ayurveda.

Dr. Triguna credited His Holiness Maharishi Mahesh Yogi, founder of the Trancendental Meditation program, with the present restoration of Ayurveda.

Ayurveda, Dr. Triguna said , could eliminate the three weaknesses of modern medicine-its high cost, its negative side- effects, and its fragmented approach which focuses primarily on disease.

The conference at NIH's Fogarty International Center was chaired by Dr. Thomas E. Malone, Deputy director of the NIH.

Remarkable Diagnostic Skill

Dr. Triguna is president of the All India Ayurveda Council and the foremost authority in Ayurvedic pulse diagnosis. In private meetings at the NIH he demonstrated his ability to detect the pressence of any disorder or any tendency towards future illness, just by feeling a person's pulse for 30 seconds.

Dr. Triguna explained that pulse diagnosis, like the other aspects of Ayurveda, is based on a profound understanding of the three fundamental constitutents of the physiology, which in combination determine individual body type. According to body type, Ayurveda recommends dietary measures, supplementary nutrition, and dialy and seasonal routines to prevent illness

Ayurvèda- Reducing the Cost of Effective Health Care

Dr. R. Keith Wallace, a physiologist who is president of Maharishi Vedic University in Washigton, D.C; and director general of MAPCC, told the NIH doctors that the example set by America's health services is followed by most developing countries.

"The emphasis on costly drugs and complex diagnostic techniques puts proper health care beyond the reach of millions of people," Wallace said."Ayurveda solves this problem by using natural herbs native to the land where it is practiced, and its diagnostic procedures do not need the time and costly equipment required by modern medicine".

Ayurveda- Side- Benefits, Not Side- Effects

"Ayurveda is holistic," Wallace said." It approaches health care in terms of the individual's unique constitution., It recommendations and treatments are based on thousands of years experience, and they produce side- benefits, not side- effects.Ayurveda can completely fulfill every lack in modern medicine, simply because it is the only healthcare system competent to treat the whole man in a balanced way."

MAHARISHI CONTINENTAL CAPITAL OF THE AGE OF ENGLIGHTENMENT FOR NORTH AMERICA

MINISTRY OF INFORMATION AND INSPIRATION

5000 14th Street NW
Washington, D.C. 20011
Tel:(202) 783-8185/8181
Telex 287 553 WPEC UR

Press Office:
Telephone, USA (202) 783-8185/81
Telex 292 050 MIU UR

FOR IMMEDIATE RELEASE

NEWS RELEASE

AYURVEDA, THE SUPREME SCIENTIFIC SYSTEM OF PERFECT HEALTH PRESENTED AT WORLD ASSEMBLY ON VEDIC SCIENCE

July 18, 1985; Washington, D.C.-

According to Dr. B. D. Triguna, India's foremost Ayurvedic physician, Ayurveda focuses on preventing illness, preserving health, and promoting longevity. Dr. Triguna, who is President of the All India Ayurveda Congress and Vice Chancellor of Maharishi Vedic University in Holland, described Ayurveda as "a holistic approach to life that diagnosis and treats the whole personality".

Dr. Triguna has the very rare ability, just by feeling the pulse, to detect any imbalance in the body that is the source of present or future disease. He then restores balance by prescribing Ayurvedic preparations made from herbs in which the required impulses of natural law are lively. Cure is effected, he told the Assembly, by re establishing a lively connection of mind and body to their source in the self- referral unified field of natural law.

Contact: Telephone (914) 439-5408

Maharishi Ayur-Veda Day

Celebrating the Creation of a Disease-Free Society through Maharishi Ayur-Veda

--SPEAKERS--



Rajvaidya
B. D. Triguna



Deepak Chopra,
M.D., F.A.C.P.

PRESS CONFERENCE

Wednesday, August 16, 1989

11:00 AM, Forum Room
Omni Shoreham Hotel
2500 Calvert St., NW

- **Hundreds of MD's from 18 Countries Adopt Bold Resolution to Solve Worldwide Crisis in Health Care through Maharishi Ayur-Veda.**

A new approach is urgently needed. This new approach is completely provided by Maharishi Ayur-Veda, which is holistic, prevention-oriented, free from harmful side effects, and capable of treating disease at its source.

Dr. Triguna, Dr. Chopra, and the national directors of Maharishi Ayur-Veda Medical and Health Centers-U.S. will present the Resolution to the Washington press corps.

Canadian Press
October 7, 1985

Ottawa (CP)

Followers of Maharishi Mahesh Yogi plan to open their first Canadian centre for preventative medicine here later this fall, members of the group told a news conference Friday.

Dr. Ross Michaelson said the centre will open in 6–8 weeks and is modeled on four Maharishi Ayurveda Prevention Centres now operating in the United States.

The centres practise a variety of preventative medicine that had its origin in ancient India. The program involves proper diet, use of herbal preparations, and the reduction of stress and psychosomatic ailments with Transcendental Meditation techniques used by the Indian guru.

Dr. B. D. Triguna, the head of the movement's medical program and a man described as the world's leading expert on pulse diagnosis, and several North American experts in Ayurvedic medicine were present at the news conference.

"We don't want to open any business agencies," Triguna said through an interpreter. "Generally, we want that the world will be free from disease and ailments."

Triguna declined to demonstrate the technique of pulse diagnosis, which enables him to detect a variety of ills through pulse readings at several points on both wrists, during the news conference on grounds of medical ethics. But he offered to give demonstrations in private to individual reporters afterwards.

Good Results

Three of the reporters who accepted the offer said Triguna was accurate in his assessment of common complaints and gave good advice they considered to be sensible, advice such as avoiding spicy foods and drinking more liquids.

One reporter whose doctor had diagnosed a digestive problem as a hiatus hernia several years ago said Triguna's first comment to him was that he had digestive problems and should avoid spicy foods. A second said Triguna's readings on him included a report of a crick in the neck that has been an occasional but recurring problem.

The movement in Canada is represented by the Ayurveda Corporation of Canada, Ltd., in Ottawa. President David K. Grayson said prevention centres like the one planned for Ottawa are also planned for other major Canadian cities.

Ayurvedic medicine, which dates back several thousand years, has not had much recognition outside India. It's proponents say it is part of a tradition of herbal and holistic medicine that is just beginning to be accepted abroad and validated by modern scientific research.

Keith Wallace, a physiologist from Washington, D.C., said half of mankind is still treated by traditional forms of medicine.

THE TRADITIONAL MEDECINE FROM INDIA

AYUR-VEDA IS COMING

This therapy exists since millenaries. It has conquered medical doctors in America, Japan, Russia - and some of them are in Geneva today.

"Creating perfect health with Maharishi Ayur-Veda" - Ayur what ? Ayur-Veda, the indian system of medecine, the latest fashion in "alternative" medecine in USA and the Eastern countries - And now here. Three ayur-vedic centers exist in Switzerland, in Geneva, Lausanne and Seelisberg (Uri).

"If it is a fashion - then it is a 2000 years old fashion" said a panel of specialists who came yesterday to Geneva to speak at the WHO (World Health Organization) annual assembly and to give a press conference. Ayur-Veda is the traditional medecine of India, but it was eradicated by british colonisation. It is present in all kinds of ancient disciplines : acuponcture, herbal medicines, transcendental meditation, positive thinking, musicotherapy, etc.

Ayur-Veda is all this and more. It is a very coherent system that comprehends all these punctual, empirical and diversified knowledges. This system also fits with the latest discoveries of quantum physics

Beware - no panic : let us be simple : at the basis of the whole universe there is what quantum physics calls the unified field - a cosmic super intelligence that is present in everything. And that regulates all the functions of our body.

SELF-HEALING

Ayur-Veda says it can give the means to act on this super intelligence : it can correct all physical and psychological diseases by calling upon the natural ressources of our body. It uses a process that medecine begins to know : in case of intense pain for example, the body spontaneously produces endomorphines - natural pain killer. But how does Ayur-Veda induces this self-healing process ? Because Ayur-Veda is able to cure even if it presents itself as the preventive medecine "par excellence".

The technics used in Ayur-Veda are very simple, easy for anyone to use. They associate herbal preparations, diet, daily routines etc (see below the description of an ayur-vedic consultation). Without forgetting the most important : Transcendental Meditation which precisely allows one to activate the natural defense mecanismes of our body.

RECOGNIZED BY WHO

WHO recognizes this medecine. In USA and Japan the official medical schools teach courses on Ayur-Veda. Today some 2000 doctors are being trained in USSR, Poland, Hungary, Brazil and the USA. More than 10,000 have been trained in the world. Yesterday, Dr A.Y. Ignatyev, from the National Center of preventive medecine of Moscow explained that USSR is very interested in Ayur-Veda : a vast study on the effects of Transcendental Meditation is under way.

For four years scientists from all over the world are studying the validity of the methods. A recent study (published in Journal of Psychosomatic Medicine) - done on a sample of 6000 people shows that those who "practice" visit 50% less their doctor than the others. "Consultations for cardio-vascular diseases have dropped 87%, for tumors 55%", explains Dr Nader from Harward Medical School, a neurologist.

TESTED HERE IN GENEVA

Philippe Gallois, professor of neurology at the Lille Medical School in France brought results showing that these technics help prevent stress. Stress hormones drop significantly in those who practise Ayur-Veda.

Three University Medical Centers in USA have tested an herbal compound used in Ayur-Veda. They found that it stimulates immunitary responses, prevent platelet aggregation that is responsible for artheroschlerosis.

Upon receipt of a major dutch insurance company, Dr G. Janssen followed 123 patients suffering from diverse chronic illnesses - a true nightmare for Western medecine. In three months their state of health was markedly improved. Ten were completely cured.

"In these applications, our method is perfectly compatible with western medicine" concluded Dr B.D. Triguna who is like the "pope" of Ayur-Veda. We want all the populations to benefit from this knowledge".

Danièle WEIBEL

There will be a public lecture on Friday May 11, 1990, at hotel Intercontinental, 8 p.m.

THE MIRACLE OF PULSE DIAGNOSIS

Wearing a turban and a white dress, Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna looks very exotic. But when the pope of Ayurvedic medecine makes his diagnosis : he is infallible. This is how a consultation goes.

Triguna puts his fingers on the wrist veines, like a chinese acuponcture, he uses pulse diagnosis. His son translates : "All the organs are in good shape, but the nervous system is very tired, over loaded".

Easy you might say, to see that someone is stressed ? May be. "You have tensions in the throat, the abdomen and the lower back", he continued.

This patient had just gone through all kinds of tests to see why she had these terrible throat pains and tensions she has been suffering from for months and why her abdomen was so tense. Diagnostic of the physicians : "It is nothing, it must be nervous".

For months she has also been under physiotherapy for lower back pains. X-rays found nothing abnormal. The physician said "It must be the nerves".

Once more Triguna is right when he diagnoses digestive problems and an excess of acidity. Then he says :"MA 303 in the evening, MA 724 morning and evening". His son takes notes. The powders, all herbal compounds, will be sent to the patient from the Ayurvedic center of Seelisberg. The plants are still imported from India but the Center is now working on finding out which of these plants have their equivalent in our countries.

Then there are the practical pieces of advice : a walk in the morning after having eaten a few blanched almonds, no acid food, less TV, less driving ... And let us go for perfect health !

(TO BE PUBLISHED IN PART I. SECTION 2 OF THE GAZETTE OF INDIA

No.A-12034/33/90-CHS.IV
Government of India
Ministry of Health & Family Welfare
(Department of Health)

New Delhi, dated the 6 Sept., 1990

NOTIFICATION

The President of India, Shri R. Venkataraman, is pleased to make the following appointment of Physician on his Honorary Personal Staff with effect from 6th August, 1990:-

HONORARY PHYSICIAN (AYURVED)

Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna
Director
Maharishi World Centre of Ayurved
Maharishi Nagar - 201307.

(P.K. KAPUR)
UNDER SECRETARY TO THE GOVT. OF INDIA

No.V. 26011/1/91-AE
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF HEALTH AND FAMILY WELFARE

New Delhi dated the 3.12.91

ORDER

In terms of rule 6 of the Rules and regulations of the Rashtriya Ayurveda Vidyapeeth, New Delhi, the Government of India , Ministry of Health and Family Welfare is pleased to nominate vaidya B.D. Triguna , an expert member of the Governing body, as President of Governing Body of the Rashtriya Ayurveda Vidyapeeth, until further orders.

(SHYAM JINDAL)

UNDER SECRETARY TO THE GOVT. OF INDIA.

To:

Vaidya B.D. Triguna
Sarai Kale Khan
East Nizamudin
New Delhi.



MAHARISHI INTERNATIONAL UNIVERSITY

Fairfield , Iowa (U.S.A)

President of M.I.U. Recommends to the President of U.S.A. to avail of the expert advice of Shri Triguna for perfect health.

January 17, 1985

The President,
The White House
Washington, D.C;

Dear Mr. President,

At this auspicious time of the inauguration of your second term, His Holiness Maharishi Mahesh Yogi has come to Washington, D.C; to inaugurate Maharishi Vedic University, and has brought with him the greatest Ayurvedic physician in the world, Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna.

Dr. Triguna, who is universally described in India as the Ayurvedic doctor of the rarest skill and ability alive today, is the President of the All- India Ayurvedic Congress, top in the Central Government of India's Governing Council of Ayurveda and a physician of the President of India.

On this woderful occasion of your inauguration as Vice- President for what inevitably will be the greatest four years of American history, naturally we all wish you and the President perfect health to guide the greatness of America to bless the whole world.

Dr. Triguna's presence in Washington, D.C; comes as an extraordinary opportunity to ensure your perfect health.

In just a minute or two, only by feeling the pulse, Dr. Triguna can describe any imbalance or disorder present in the physiology and advise measures to prevent any future sickness.

This phenomenal ability has been displayed in tens of thousands of instances over the past thirty years, which has led Dr. Triguna to his current status as leader in the field of this ancient Indian system of creating perfect health logevity.

Dr. Triguna will be in Washington , D.C; until the 19th of January, and is available to meet you at your convenience.

I am delighted to offer on Maharishi's behalf Dr. Triguna's services to you to ensure your perfect health for these coming years of your leadership in America, and for a long, long life to enjoy the fruits of your magnificent achievements for the United States and the family of nations.

Respectfully yours,
Bevan Morris
President.



MAHARISHI INTERNATIONAL UNIVERSITY

Fairfield , Iowa (U.S.A)

President of M.I.U. Recommends to the Vice President of U.S.A. to avail of the expert advice of Shri Triguna for perfect health.

January 17, 1985

The Vice- President,
The White House
Washington, D.C.

Dear Mr. Vice-President

At this auspicious time of the inauguration of your second term, His Holiness Maharishi Mahesh Yogi has come to Washington, D.C; to inaugurate Maharishi Vedic University, and has brought with him the greatest Ayurvedic physician in the world, Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna.

Dr. Triguna, who is universally described in India as the Ayurvedic doctor of the rarest skill and ability alive today, is the President of the All- India Ayurvedic Congress, top in the Central Government of India's Governing Council of Ayurveda and a physician of the President of India.

On this woderful occasion of your inauguration as Vice- President for what inevitably will be the greatest four years of American history, naturally we all wish you and the President perfect health to guide the greatness of America to bless the whole world.

Dr. Triguna's presence in Washington, D.C; comes as an extraordinary opportunity to ensure your perfect health.

In just a minute or two, only by feeling the pulse, Dr. Triguna can describe any imbalance or disorder present in the physiology and advise measures to prevent any future sickness.

This phenomenal ability has been displayed in tens of thousands of instances over the past thirty years, which has led Dr. Triguna to his current status as leader in the field of this ancient Indian system of creating perfect health logevity.

Dr. Triguna will be in Washington , D.C; until the 19th of January, and is available to meet you at your convenience.

I am delighted to offer on Maharishi's behalf Dr. Triguna's services to you to ensure your perfect health for these coming years of your leadership in America, and for a long, long life to enjoy the fruits of this administration's magnificent achievements for the United States and the family of nations.

Respectfully yours,
Bevan Morris
President.

AYURVEDA IN THE U.S.S.R.

Utilizing the Medicinal Flora of Every Country.

Dr. Triguna said that the principles of Maharishi Ayurved are universal because they are based on natural law, and therefore are applicable to the people and medicinal flora of every country.

"Ayurved states that the plants growing in any country are most effective for maintaining the perfect health of the people of that country", he said.

Dr. Triguna explained that Maharishi Ayurved uses the balancing power of nature within a plant to promote balance in individual physiology, thereby eliminating imbalance, the basic cause of disease. He compared this holistic approach with the fragmented approach of modern medicine, which focuses predominantly on the symptoms of disease rather than their cause.

"Throughout the ages this science has been preserved in India. Now it is being put to practical use in all parts of the world through Maharishi's World Plan for Perfect Health"

'Modern medicine isolates the active ingredient of a plant,' Dr. Triguna said. 'But when it's isolated from the other aspects of the plant, the active ingredient is disconnected from the balancing power of the whole plant and often causes harmful side effects'.

Dr. Triguna told the Soviet doctors that the classical texts and materia medica of Ayurved provide complete knowledge of the principles and procedures for the indentification and optimal use of medicinal plants.

'Throughout the ages this science has been preserved in India,' he said. 'Now Maharishi's insights have inspired the foremost experts in Ayurved to put this precious knowledge to practical use in all parts of the world through Maharish's World Plan for Perfect Health.*

'The traditional skills of Ayurvedic experts in identifying medicinal values in plants and the use of local plants in diffirent countries are completely competent to bring self- sufficiency in health care to any nation,' Dr. Triguna stated.

He added that the medicinal use of its own national flora has the other advantage of stimulating a nation's agriculture.

A Disease- Free Society in Every Nation.

Dr. Triguna emphasised that Maharishi Ayurveda is 'compelte Ayurveda,' in conformity with the ancient Ayurvedic texts and including all areas of life consciousness, physiology, behaviour, and environment. He said that the 20 approaches of Maharishi Ayurveda offer 'perfect health for the individual and also perfect collective health for society, the nation, and all mankind- world health, which necessarily includes world peace, world prosperity, world happiness, and an ideal family of nations.

'Maharishi Ayurved not only handles all these values of individual and collective health in the present, but also secures perfect health for the future,' Dr. Triguna said. 'It offers for the first time in the history of mankind the possibility to create a disease- free society in every country, a world free from suffering, the full sunshine of the Age of Enlightenment, "Heaven on Earth".

Raj Vaidya Triguna visits Australia.

Dear Anand,

The following is the Tribute to Dr. Triguna from Australia

It was our great pleasure to host Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna in Australia during late March and early April 1986. Dr. Triguna was accompanied by his son Vaidya Davinder Triguna, Dr. Deepak Chopra, Br. Nandkishore and Dr. G. Mahapatra. This grand assembly of leading world exponents of Maharishi Ayur-Ved was greeted by 400 practitioners of Transcendental Meditation and T.M Sidhi Program during his historic 4 day easter world peace assembly, held in the cool crisp air of MT Hotham North Victoria.

This occasion represented the official inauguration of Maharishi Ayur-Ved in Australia. The world peace assembly started with an exquisite improptu disitation on Maharishi Ayur-Ved by Dr. Chopra immediately on arriving from his 30 hours of Travel from the US. Australia was then suitably warmed up to appreciate the blessings of Dr. Triguna.

Over 200 course participants consulted with Dr. Triguna that week end. People often remarked that they immediately felt better the moment Dr. Triguna touched their pulse - the sign of a Raj Vaidya, whose mere presence can dissipate disease. The incredible speed and accuracy of his diagnosis was a living testimony to the real value of the vedic wisdom. When the root of the health problem is established in this way, the direction for recovery becomes clear - even just through the knowledge of it. This was the experience of many on that course.

During short excursions around the Mount Hotham facility, Dr. Triguna often commented on the high quality and abundance of the Australian native medicinal flora. A close affinity with Australia soon became apparent in Dr. Triguna who often praised it for its beauty and peacefulness. Exciting romours that the Raj Vaidya was planning the settle in Australia quickly spread.

Following the assembly Dr. Triguna toured the capital cities of Australia and met with members of the Australian press. One reporter from the Daily Telegraph in Sydney summed him up as better than a walking cat scan. Dr. Triguna was also warmly received by university professors and heads of department of major teaching hospitals around Australia. In Canberra he was welcomed by the Secretary and Assistant Director General of the National Health and Medical Research Council of Australia, Dr. Robert Cumming, with whom Dr. Trigunas visit had left a deep impression.

This historic visit became a spring Board for Maharishi Ayur-ved to flourish in Australia. For this Australia will always honour the Raj Vaidya and his contributions to the progress of our nation towards Perfect Health and Heaven on Earth.

With best wishes,

Dr. Tim Carr
Director
Maharishi Ayur-Ved Health Centre
NSW, Australia



DEPARTMENT OF HEALTH & HUMAN SERVICES

Public Health Service

National Institutes of Health
Bethesda, Maryland 20205

December 5, 1985

Dr. Brihaspati Dev Triguna
President, All India Ayurvedic Congress
Vice-Chancellor, Maharishi Vedic University
Station 24
6063 NP Vlodrop
Netherlands

Dear Dr. Triguna:

Although you have by now heard my comments through the modern medium of the "tape recorder", I wish to take this opportunity to formally thank you for the texts on Ayurveda which you presented to the National Institutes of Health. The collection is presently in my office but I have asked Dr. Beaubien of our Fogarty International Center to pursue its placement in our library for purposes of greater accessibility. I have already invited several of our scientists to explore these works of great tradition and history. As time allows, I am doing some reading myself.

As you well know, there are frank differences between orthodox and traditional medicine and research. There are, however, many points of interface and scientific validation. I have been impressed by the willingness of all in your movement to examine the elements of Vedic medicine with the tools of modern science and technology.

Again, I wish to thank you for the very fine library. With warmest personal regards, I remain

Sincerely yours,

Thomas E. Malone

Thomas E. Malone, Ph.D.
Deputy Director

Reversing the Ageing Process

Neuroimmunological and Neurobiological Mechanisms

New research and clinical experience on Maharishi Ayur-Veda

Thursday, 7 September 1989 7.30pm - 9.30pm

Barbican Centre, London EC2

Cinema 2, Frobisher Crescent, Level 9

Admission Free

SPEAKERS

Dr Kozo Niwa, Director, Niwa Immunology Institute, Japan



Rajvaidya Brihaspati Dev Triguna, President, All-India Ayurveda Congress



Professor Hari Sharma, Ohio State University School of Medicine, USA



Dr Deepak Chopra, President, American Association of Ayurvedic Medicine



Dr Roger Chalmers, President, World Medical Association for Perfect Health, Great Britain

Preventing and reversing the ageing process- modern science confirms the ancient approach of Maharishi Ayur-Veda

The conference presents a unique opportunity to become familiar with new scientific findings from leading research instiitutes in Japan and the USA.

Organised by the World Medical Association for Perfect Health - Great Britain, Mentmore, Leighton Buzzard, Bedfordshire, LU7 0QH. Telephone 0296 661726

CHINA'S MINISTER OF PUBLIC HEALTH WELCOMES RAJVAIDYA TRIGUNA AND INDIAN- U.S. DELEGATION

On the 4th April , 1986, an historical meeting took place in Beijing, China in which Rajvaidya Brihaspati Dev Triguna was welcomed by Dr Cuiyun Li, Minister of Public Health of the People's Republic of China, in order to discuss a joint research proposal between the health custodians of China and India.

The research proposal on Ayurveda presents'a model programme for creating perfect health for the individual and society leading to the creation of a world free from suffering and sickness.'

The visit of Rajvaidya Triguna aroused the three thousand years old memory of Ayurveda arriving in China with Buddhist monks.

At this meeting Dr. Bevan Morris, President of Maharishi International University, U.S.A; and Dr. R. Keith Wallace, President of Maharishi Vedic University, U.S.A; presented the Minister of Health with Maharishi's World Plan for Perfect Health which provides a comprehensive and detailed basis for this cooperative health project betwen the two most ancient civilizations, China and India. Also at this auspicious meeting were prominent health officials and research scientists including Dr. G. Mahapatra, President , Maharishi Colleage of Natural law, Bhubaneshwar, India; Tian Jingfu, Director of the Department of Chinese Traditional Medicine; Dr. Gao Kuinai, Vice- Chairman of the China Medical Education Commission and Vice- President of Beijing colleage of Traditional Chines Medicine; and Dr. Chen Chun- ming, President of the Chinese Academy of Preventive Medicine.

Minister Cuiyun Li expressed his appreciation of the research proposal and his desire for the exchange of experts in Chinese Traditional Medicine and Ayurveda. The Minister explained that the Chinese Governement has recently given greater attention and support to the administration of Chinese Traditional Medicine throughout China. Previously the Bureau of Chinese Traditional Medicine was one of thirteen Bureaus in the Ministry of Health, but now its position has been markedly elevated so that it has its own separate status and is administered directly under the Minister of Public Health by the Vice- Minister.

Minister Cuiyun Li spoke at length with Rajvaidya Triguna and his delegation, carefully examining the research conducted on Ayurveda and its recent application in many countries around the world. In response to Rajvaidya Triguna's invitation to India, the Minister of Public Health of China expressed his personal interest to visit India to learn more about the knowledge of Ayurveda and to further discuss the implementation of this joint research project to bring perfect health to China, India and the world.

PROPOSAL FOR A JOINT RESEARCH PROJECT BETWEEN THE HEALTH CUSTODIANS OF CHINA AND INDIA

TO DEVELOP A MODEL PROGRAMME FOR CREATING PERFECT HEALTH FOR THE INDIVIDUAL AND SOCIETY LEADING TO THE CREATION OF A WORLD FREE FROM SICKNESS AND SUFFERING.

Perfect health for the individual and society has been a cherished goal of mankind throughout the ages, however no country in the world has been able to give perfect health to its people. Despite the advancements of western medicine and the relief it has brought to mankind, people everywhere continue to suffer from illhealth, disease and ageing. With all its benefits, western medicine is unable to provide a framework for creating perfect health. It often sucessfully eliminates the symptoms of disease, but falls to overcome the cause of sickness because it is fragmented and predominately symptomatic in its approach.

Moreover, western medicine is forced to accept harmful side effects when treating a disease, with the result that, while present pain may be alleviated, the seeds of future pains are being sown. this compromise presents a growing challenge to the collective health of all nations, and has inevitably led to a tradition of ill-health in the world.

This deplorable tradition is further aggravated by unhealthy life patterns, growing stress and tensions, imbalanced diet, chemical contamination of food, pollution of the air, and other damaging environmental factors.

In addition because of its fragmented and highly specialized approach, western medicine requires both extensive and expensive training in order to acquire even the most rudimentary skills in diagnosis and treatement. This, along with the high cost of allopathic medicines, makes adequate health care unattainable for the majority of the people particularly in developing countries. Finally, western medicine does not provide a comprehensive system of prevention,which is absolutely necessary to create perfectly healthy individuals and a society free from sickness and suffering.

The two most ancient civilizations on earth, China and India, have for thousands of years been the custodins and exponent of the most complete systems of natural medicine in the world. For centuries our beautiful traditions have recognized that perfect health can only come through an approach that emphasises prevention utilizing natural herbs and minerals of the country and prescribing daily and seasonal routines and diets which are in accordance with the laws of nature of the land. Contained within the authentic texts of these two systems are all the principles and practices necessary for any man to prevent disease and enjoy a long, long life in perfect health.

In their compelteness these systems together can fulfill the requirements of a perfect health care system which demands that proper health care be:

1. Natural, holistic, and based on complete knowledge of natural law.
2. Authentic, efficient, and reliable.
3. Free from harmful, side effects.
4. Prevention oriented.

5. Cost effective.
6. Capable of creating collective health.
7. Universally applicable. And
8. Easy to implement.

With the supreme knowledge contained in our precious traditons of natural medicine, it should be possible for China and India together to bestow perfect health not only on the citizens of their own nations, but on the peoples of the whole world. It will be the joy for all those dedicated to the cause of health in China and India to take this responsiblity.

This proposal is to structure a joint research project between the health custodians of China and India for developing a model programme for the prevention of illness, preservation of health, and promotion of longevity of the people of every nation.

This research project will be:

1. To develop comprehensive prevention programmes.
2. To standardize the ancient cures of natural medicine.
3. To develop programmes to prevent ageing and promote longevity . And
4. To take two towns or villages, one in China and one in India, and to apply the principles and practices from Chinese traditional medicine and from Ayurveda both together to create perfect individual and colelctive health in those communities and thereby develop a model for creating perfect health in any part of the world.

I propose that the first step of this project be to have teams of leading experts. In both these systems come together to design the research project.

I wish to extend a warm invitation to the custodians of health in China to join together with the health custodians of India in this cooperative effort to bless mankind with perfect health. I am confident that our mutual cooperation in the field of natural medicine will lead to the creation of a world free from sickness and suffering.

With warmest regards,

Rajvaidya Brihaspati Dev Triguna
President, all India Ayurveda Congress
Member, Central Council for Research on Ayurveda, Government of India
Member, Drug Coucil Government of India
Director, World Centre for Perfect Health, Maharishi Nagar, India.

Appendices

Appendix 1:

Ayurveda-- The traditional Indian system of health.

Ayurveda is the most ancient system of health. It is the science of immortality. It has been recently revived in its complete value by Maharishi Mahesh Yogi. Its principles for prevention of sickness, cure of disease and promotion of longevity are based on natural law which is responsible for the creation and evolution of the life in the universe.

Modern science has glimpsed the unified field of all the laws of nature through the super - symmetric unified field theories of quantum physics, but complete practical knowledge of this unified filed of all the laws of nature is available in the most ancient records of the Veda. Ayurveda, a precious aspect of the Veda presents the complete knowledge of life and creation and in so doing it locates correpondence between the formation of the human nervous system and the physiology of plants and minerals, and prescribes procedures and programmes to use them for the prevention of sickness, cure of disease, preservation of health, and promotion of longevity.

Ayurveda is a universally applicable science of health. It recognizes that the herbs growing in any part of the world are most suited for the people in that area. This makes it clear that the principles and practices of Ayurveda are applicable to the people of all countries.

Raj Vaidya Brihaspati Dev Triguna

Schedule of Meetings with Ambassador and leaders
in Government and Health.

ITINERARY OF CANADA TOUR.

THRUSDAY OCTOBER 3RD, 1985

9:00 a.m. — Dr.Halliday

Place: Room 348 West Block Parliament Buildings

Chairman for a standing committee of members of Parliament for Health and Welfare.

10:00 a.m. — Dr. Listor, Assistant Deputy Minister, Health Protection Branch-Ministry of Health and Welfare

Lionel Payson, member of the committee looking into use of herbs in Canada and preparing a report for the Ministry of Health.

Place: Environmental Health Centre Board Room
Tunney's Pasture.

12:30 p.m — Senator David Walker.

Place: Room 568 Senate.

2.00 p.m. — Dr. David Martin, Director Department of Indian and Inuit Health Services-Ministry of Health and Welfare.

Place: Jeane Mance Building No. 1906
Tunney's Pasture.

5:00p.m. — Douglas Cardinal

Indian Medicine man
Architech for the Musuem of Man in Ottawa

Place: Dr. Tri Guna's Suite-Chateau Laurier Hotel.

7:00p.m. — His Excellency Mr. Chattowal
High Commissioner to Canada from India.

Place: Private meeting at Indian Embassy.

FRIDAY OCTOBER 4TH. 1985.

8:30a.m.	Roy Mac Gregor
	Ottawa Bureau Chief Macleans Magazine
Place:	Dr. Tri Guna's Suite-Chateau Laurier Hotel.
9:00a.m.	Roy Norton.
	Special Assistant to the Minister of External Affairs the Honourable Joe Clark.
Place:	Dr. Tri Guna's Suite-Chateau Laurier Hotel.
10:00a.m.	Press Conference.
Place:	Hotel Holiday Inn (Kent Street)
11.00 a.m.	The Right Honourable George Hees Minister for Veteran Affairs.
Place:	Parliament Buildings.
12:00 noon	Russell J. Wunker
	Chief of Staff to the Right Honourable Jake Epp, Minister of Health and Welfare
Place:	Room 258 Confederation Building.
1:00p.m.	Don Goodwin
	Assistant Deputy Minister Ministry of Indian Affairs
Place:	Dr. Tri Guna's Suite-Chateau Laurier Hotel.
6:00p.m.	Ambassadors Reception
Place:	Chateau Laurier Hotel.

AMBASSADORS RECEPTION

S.N.	NAME	TITLE	COUNTRY
1.	Mr. Kalugalla	Ambassador	Sri Lanka
2.	Mr. Ombegue	Ambassador	Gabon
3.	Mr. Mario Pacheco	Ambassador	Costa Rico
4.	Mr. Vincent vander Mersch	Counsellors	Belgium
5.	Mr. Anwar Kemal	Charge d'Affaires	Pakistan
6.	Mr. Didace Sunzu	Charge d'Affaires	Burgundi
7.	Mr. Sergio Lacayo	Ambassador	Nicaragua
8.	Mr. Onuko Mageto	High Commissioner	Kenya
9.	Mr. K.M. Safiullah	Ambassador	Bangladesh
10.	Mr. Ferdinand Ruhinda	Ambassador	Tanzania
11.	Mr. Joey Bimha	Counsellor	Zimbabwe
12.	Mr. Abdoulaye Sylla	Ambassador	Guinea
13.	Ms. Anna Amailuk	High Commissioner	Uganda
14.	Mr. Wolfgang Behrends	Ambassador	Germany
15.	Mr. Liu	Counsellor-Science and Technolog	China
16.	Mr. Salami	Counsellor	Togo
17.	Mr. Ange lo Palnas	Archbishop	Holy See
18.	Mr. Haghighat	Ambassador	Iran
19.	Mr. Husny Sunkar	Information Officer.	

DR. BRIHASPATI DEV TRIGUNA:

AUSTRALIAN TOUR

March 27th to April 3rd, 1986

Dr. B. D. Triguna, world-famous Ayurveda physician, toured Australia in March and April of 1986, bringing the blessings of Ayurveda to hundreds of patients who received "nadi vigyan" [pulse diagnosis].

Dr. Triguna was received with great love and gratitude by nearly 500 devotees of His Holiness Maharishi Mahesh Yogi who were gathered together in the high mountains of the Victorian Alps for the purpose of a Continental World Peace Assembly.

Raj Vaidya Triguna ji was accompanied by the chief representative of Maharishi, Brahmachari Nandkishore, and by prominent Indian industrialist Mr. G.D. Goel, Dr. Devendra Triguna, and Dr. Mahapatra.

Many fascinating discourses and question and answer periods were given by Raj Vaidya ji to the group of meditators and sidhas, who increased their knowledge manifold about Ayurveda-"the pure knowledge of life"- under his wise guidance.

Later in the course, Dr. Triguna was praised by Dr. Bevan Morris, President of Maharishi International University in the U.S., as the emodiment of the highest knowledge of Ayurveda, "Vedaham".

Returning to Sydney on the 1st of April, Dr. Triguna was joined by the eminent President and Chief of Staff of the New England Memorial Hospital, Dr. Deepak Chopra.

Dr. Chopra, who is also a Clinical Professor of Community Medicine at the prestigious Boston University Medical School, accompanied Dr. Triguna on a round of high-level talks with Australian medical and health authorities.

In his meeting with Professor J.D. Llewellyn-Jones, the Chairman of the Australian Government's Better Health Commission, Dr. Triguna made it clear that Ayurveda was the holistic preventative health technology sought for by the Commission in its endeavor to bring better health to all Australians.

During this extended meeting, the Chairman was very impressed by the evidence Dr. Triguna presented on the effects of Ayurvedic preventative and curative stategies and their effects on difficult diseases.

During a press conference that was attended by television, radio, and newspaper representatives, Dr. Triguna, demonstrated for the cameras his remarkable talent for diagnosing any existing and forthcoming disease or disorder by a gentle touch of the pulse.

Meeting with the Chairman of the Asthma Foundation, Dr. Triguna offered his expertise as a physician who sees up to 50 asthma sufferers per day in his Delhi practice. Raj Vaidya ji told the Chairman that if he opened a wing of Ayurveda in his large hospital, that the patients would be cured in a few weeks, and that he was ready at any time to be called to bring real lasting reief to the patients in the hospital.

In Canberra, the Nation's capital, Dr. Triguna met with the permanent heads of the National Health and Medical Research Council, the Government's policy-making council on matters of public health in Australia, and the whole group was receptive and enthusiastic.

Finally, Dr. Triguna spoke as the Guest of Honour in a reception at the Indian High Commission, making an appeal to Australia's large Indian community to take up and use this precious knowledge and begin to live the words "Ayurveda Amritanam" (Ayurveda is for those who desire long life).

On the 2nd of April, our much-loved and highly-enlightened Raj Vaidya Triguna ji, departed for a conference in the People's Republic of China. His presence in our country brought the blessing of perfect health and the promise of long, long life in the direction of immortality for all Australians.

We offer our gratitude to Dr. Triguna ji, and to our dear Maharishi ji who made his tour possible. We want him to return to Australia as soon as possible, so we can learn more, and so that we can show him how much more we radiate life with the divine blessings of Ayurveda.

JAI GURU DEV

RAJ VAIDYA BRIHASPATI DEV TRIGUNA TAKES AYURVEDA AROUND THE WORLD

During the past three years, Dr Triguna has travelled extensively to many different countries of the world presenting Ayurveda to heads of government, to government ministries and departments, and to conferences at leading medical schools and research institutions. At these presentations he has discussed practical steps for implementing Ayurveda to bring perfect health to the individual and create a disease-free society, and for implementing Maharishi's World Plan for Perfect Health to bring self-sufficiency in health care to every nation.

The profound expertise of Dr Triguna in the field of health, on the basis of the age-old texts of Ayurveda, has been instrumental for Maharishi's insight into natural law to restore and popularize Ayurveda in its completeness.

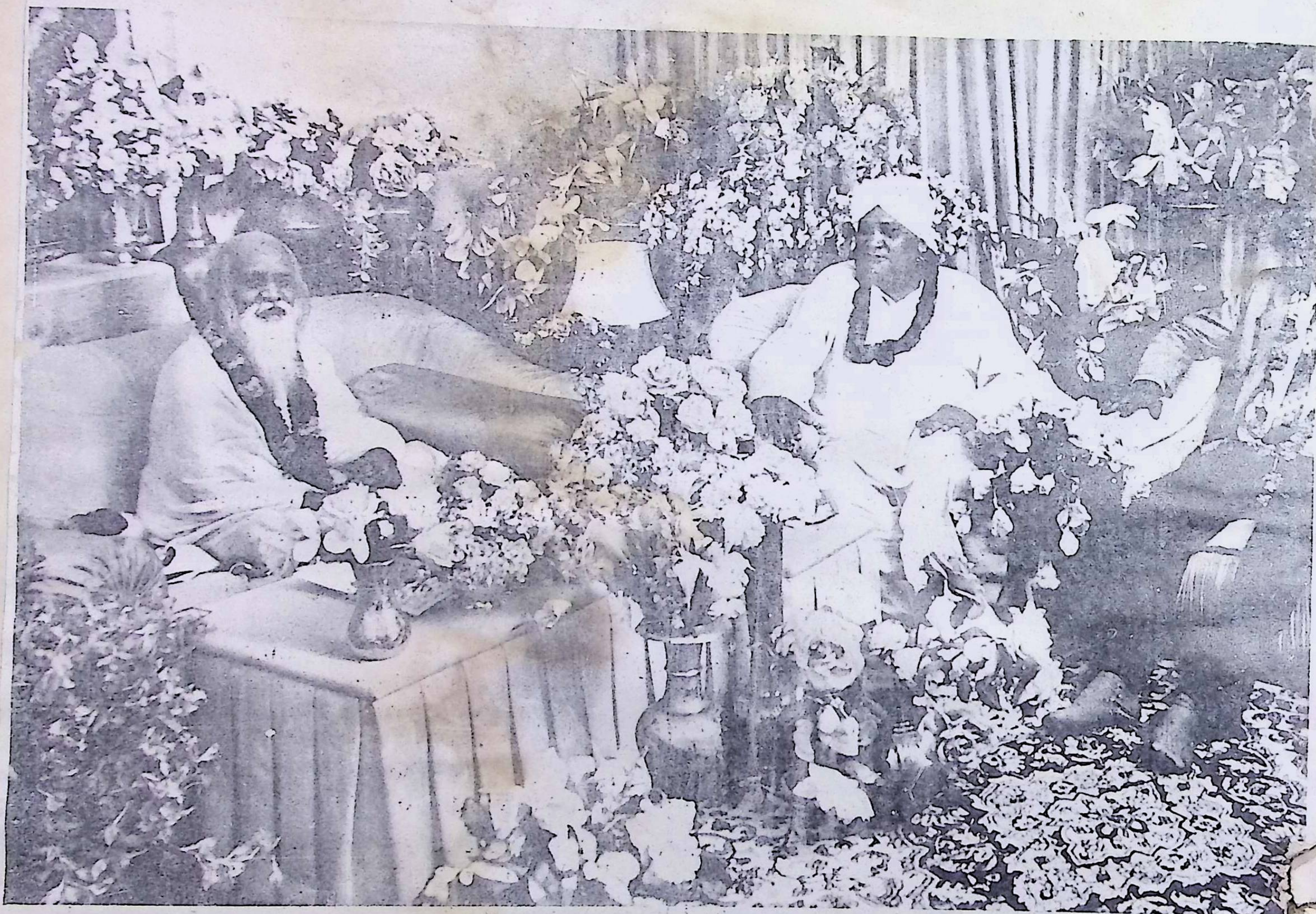
Maharishi Ayurveda stands today as the complete science of perfect health from all possible practical angles of approach. These approaches to perfect health belong to each component of life, such as the approach from the level of consciousness, prana (life breath), senses, mind (psychology), intellect, body (physiology), all fields of behaviour, all fields of matter in creation such as herbs, plants, minerals, and gems, astrological influences (Jyotish), Marma therapy, Music therapy (Gandharva Veda), and primordial sound therapy available in the Vedic literature. The academic presentation of Ayurveda is available in the whole of theVedic literature which has been organized as a complete literature of a perfect science, known as Maharishi's Vedic Science.

Dr Triguna's appreciation of Maharishi's holistic view of life has been so profound that there is now a wave of inspiration throughout India for presenting Ayurveda in its completeness as is authentically recorded in the Vedic texts. This is the first generation after hundreds of years that, under Dr Triguna's leadership, is re-establishing Ayurveda in its proper perspective and full significance to bring perfect health to the whole human race.

Established in the timeless knowledge of Vedic science, the precious, ancient heritage of India--the land of the Veda-- Dr Triguna is providing invaluable guidance to all those leaders who genuinely desire to improve the health and happiness of their people. Dr Triguna's aim for this year, the Maharishi Year of World Peace, is to provide every nation and the world as a whole with the means to enjoy perfect collective health - world peace - through the knowledge of Ayurveda.

Dr Triguna, speaking at the International Conference on Ayurveda in Geneva, Switzerland, in May 1987, during the World Health Organization's annual conference for Health Ministers from all nations, said: 'Health for all by the year 2000, the goal of the World Health Organization, can only be realized if Maharishi Ayurveda is introduced in every country. Otherwise, with the continuing focus on allopathic medicines, W.H.O. will have to face sickness for all before 2000 because of the many harmful side-effects of allopathic medicines.' All governments and the World Health Organization are cordially invited to follow the expert advice of Dr Triguna.

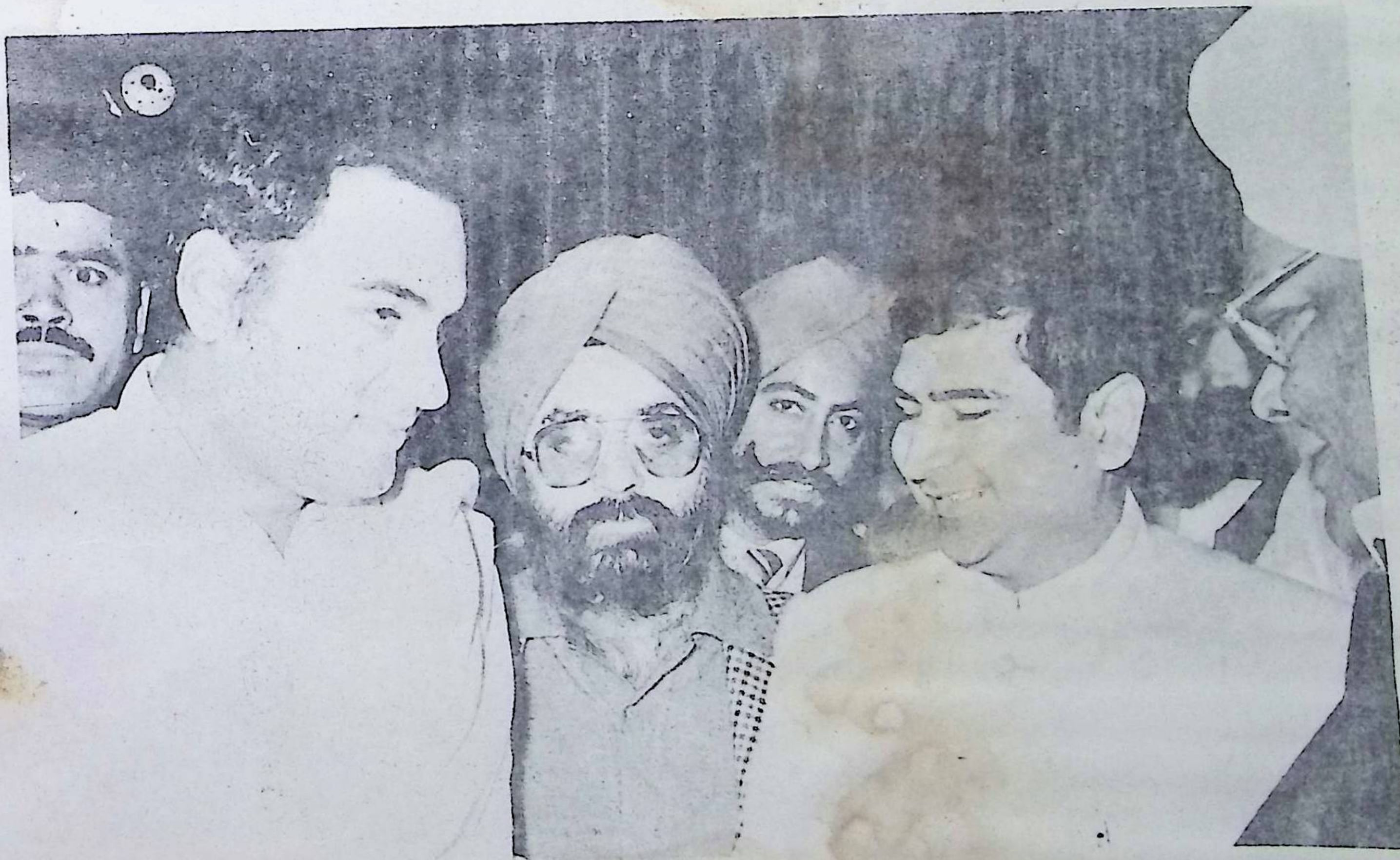
The following pages present some aspects of Dr Triguna's global efforts to make available to every country this beautiful knowledge of perfect health, Maharishi Ayurveda.



Raj Vaidya Triguna with His Holiness Maharishi Mahesh Yogi at the World Centre of Ayurveda (near New Delhi) in India. With the expertise of Dr Triguna, and the leading Ayurvedic physicians and scholars of India, Maharishi has restored the knowledge of Ayurveda as the complete science of perfect health and has developed a world plan to bring perfect health to every individual and every nation through this knowledge.



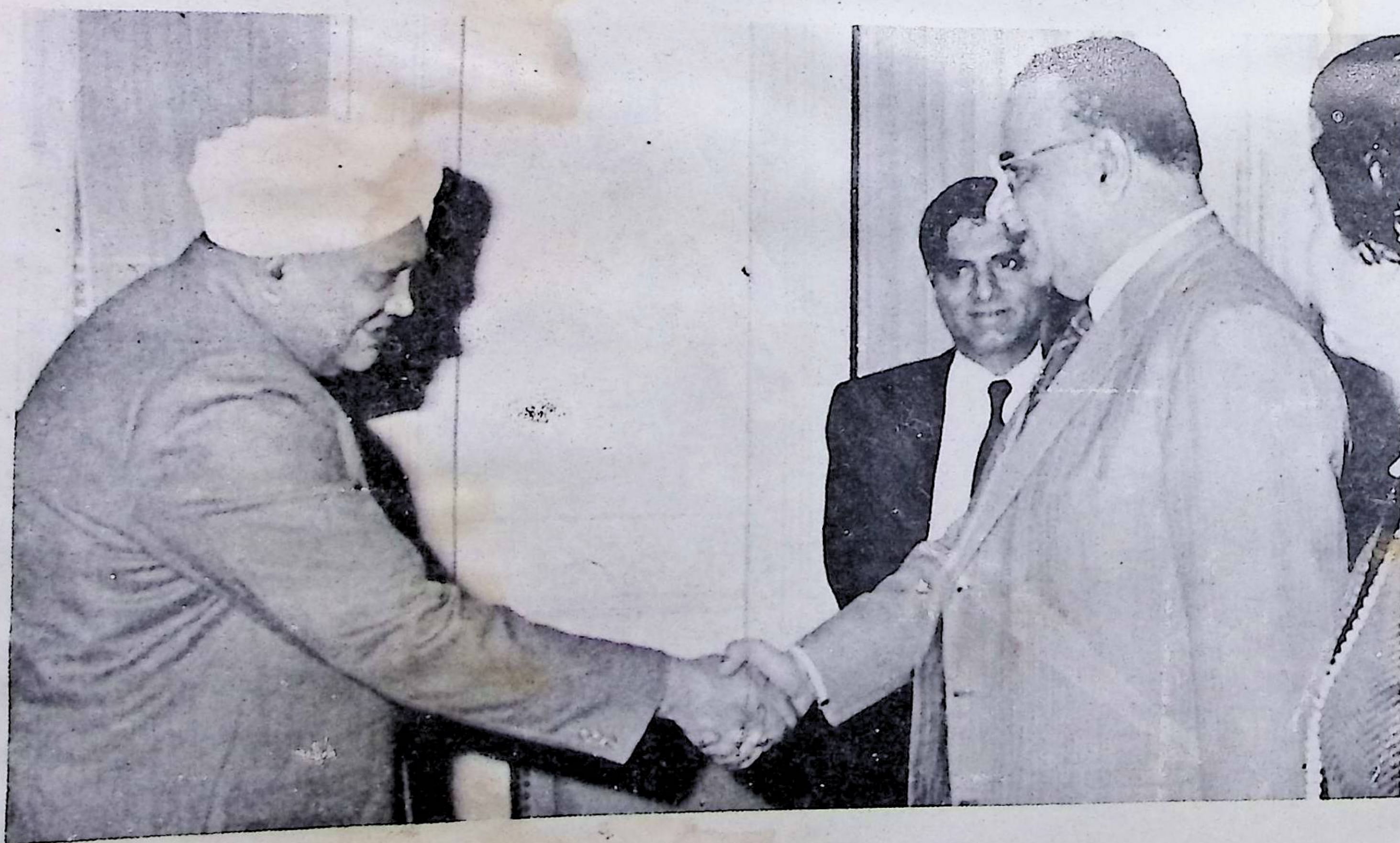
INDIA Dr Triguna presenting President Gyani Zail Singh with a container of Maharishi Amrit Kalash, the Ayurvedic herbal formula for the prevention of illness and promotion of longevity, in October 1986, on Dhanwantari Day, the day of Ayurveda. Dr Triguna expressed to the President that because India is a common friend to all countries, all nations look to India for a new light of wisdom that can create disease-free and problem-free society, a peaceful world, and even heaven on earth.



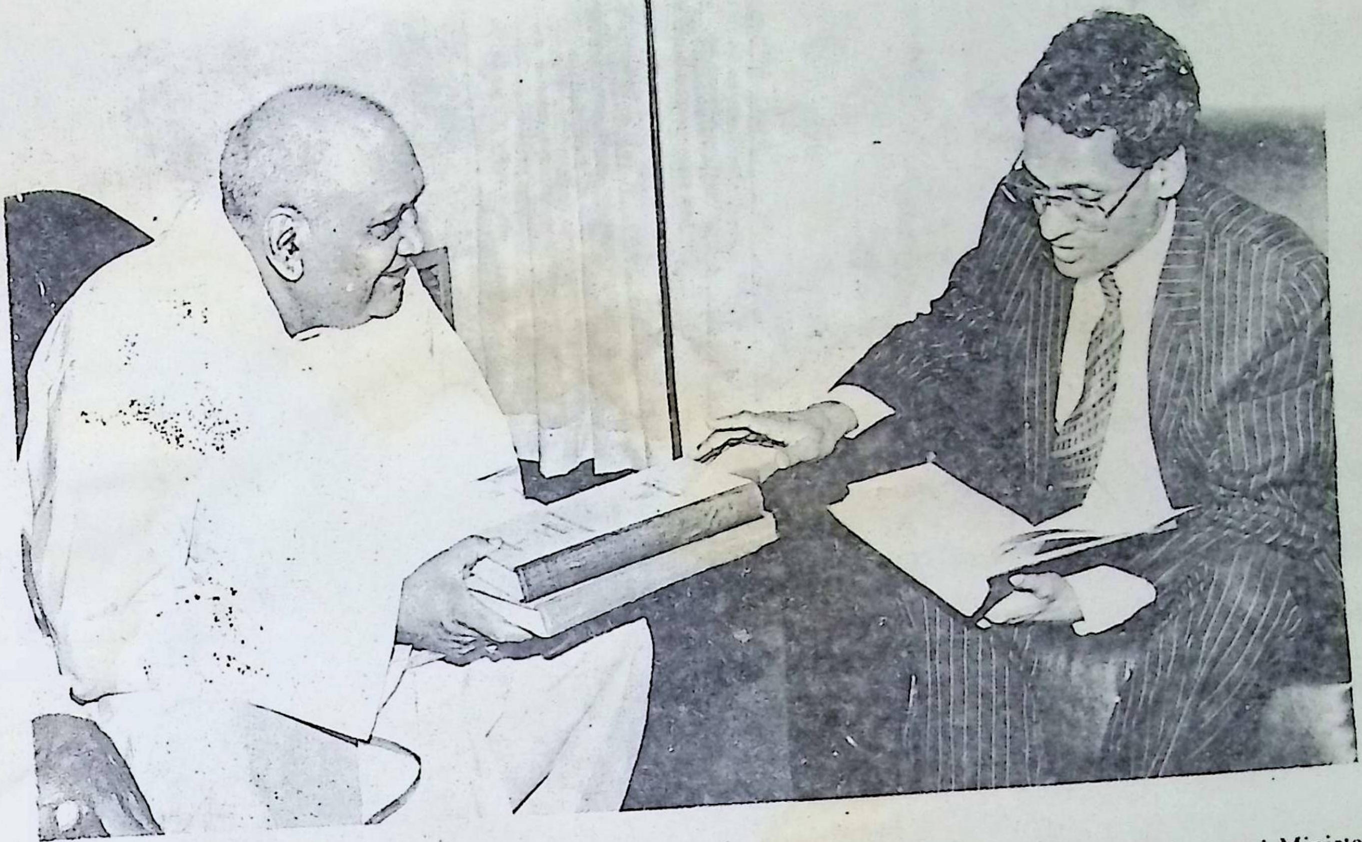
INDIA Dr Triguna's son, Vaidya Davinder Triguna with Prime Minister Rajiv Gandhi. Dr Triguna, in his presentations, explains that the world needs a new direction in health care, and that India, the land of origin of Ayurveda is capable of providing this through Maharishi Ayurveda.



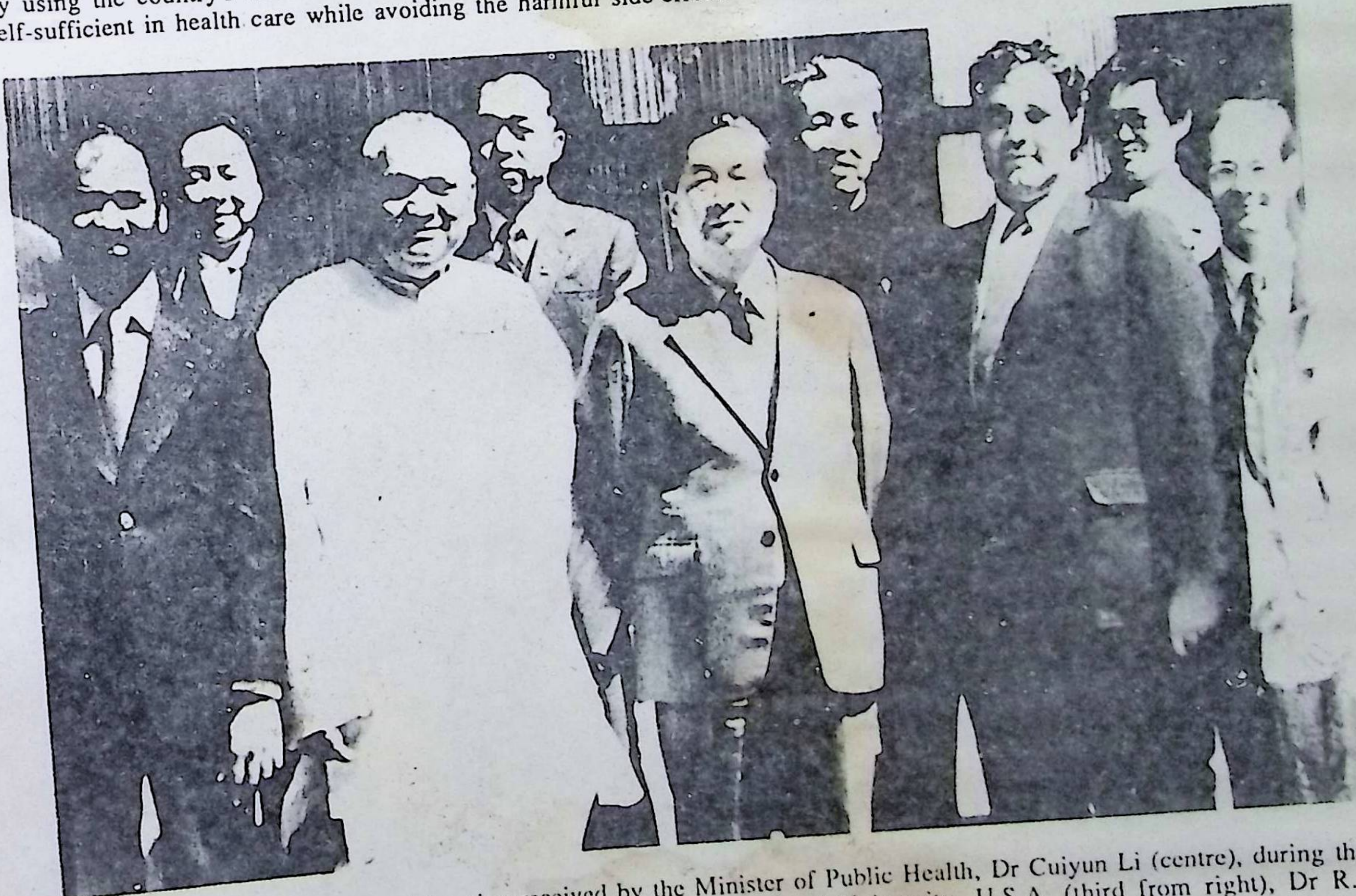
EGYPT Dr Triguna being received by President Hosni Mubarak, presents to him a container of Maharishi Amrit Kalash, in December 1986, during his visit to bring Ayurveda to the government and people of Egypt. The President expressed his interst in Ayurveda and his pleasure in meeting a representative of the wisdom of India, a country with whom Egypt has always maintained very cordial relations.



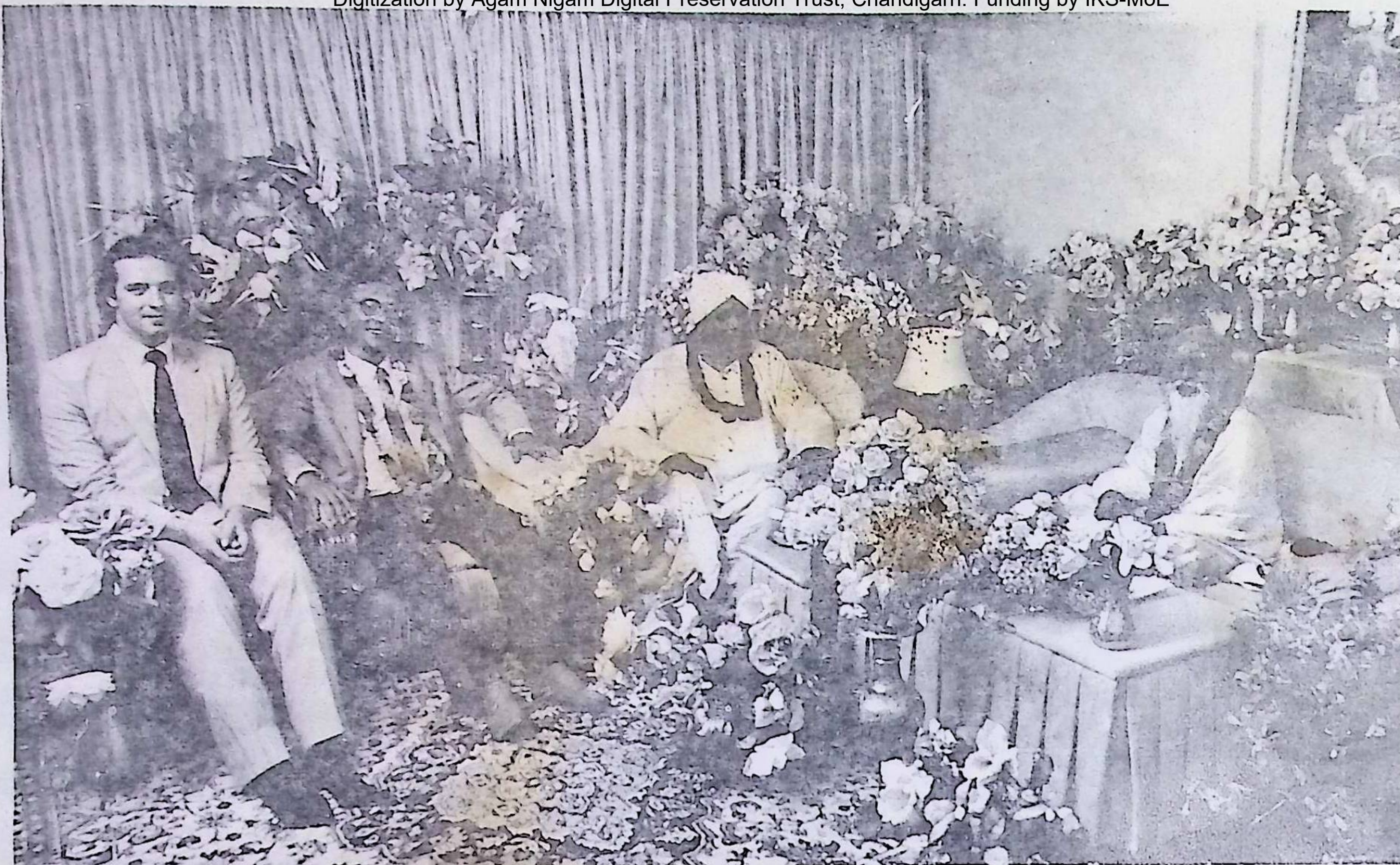
EGYPT Dr Triguna and Dr Deepak Chopra, President, American Association of Ayurvedic Medicine, meet Dr Mohamed Ragad Dweidar, Minister of Health of the Government of Egypt, in Cairo, and discuss with the Minister the urgent need to revive traditional medicine. Dr Triguna told the Minister that Egypt, being a great cradle of ancient civilization and an oasis of hope for the modern world, would especially benefit from the timeless knowledge of Ayurveda, which holds the promise of perfect health for modern man.



MAURITIUS Dr Triguna presents the traditional texts of Ayurveda to the Deputy Prime Minister and Minister of Finance of Mauritius, the Honourable Vishnu Laxman Naidoo. Mr Naidoo was pleased to hear from Dr Triguna that, by using the country's medicinal flora for the preparation of Ayurvedic medicines, even a small nation can become self-sufficient in health care while avoiding the harmful side-effects of costly, imported allopathic drugs.



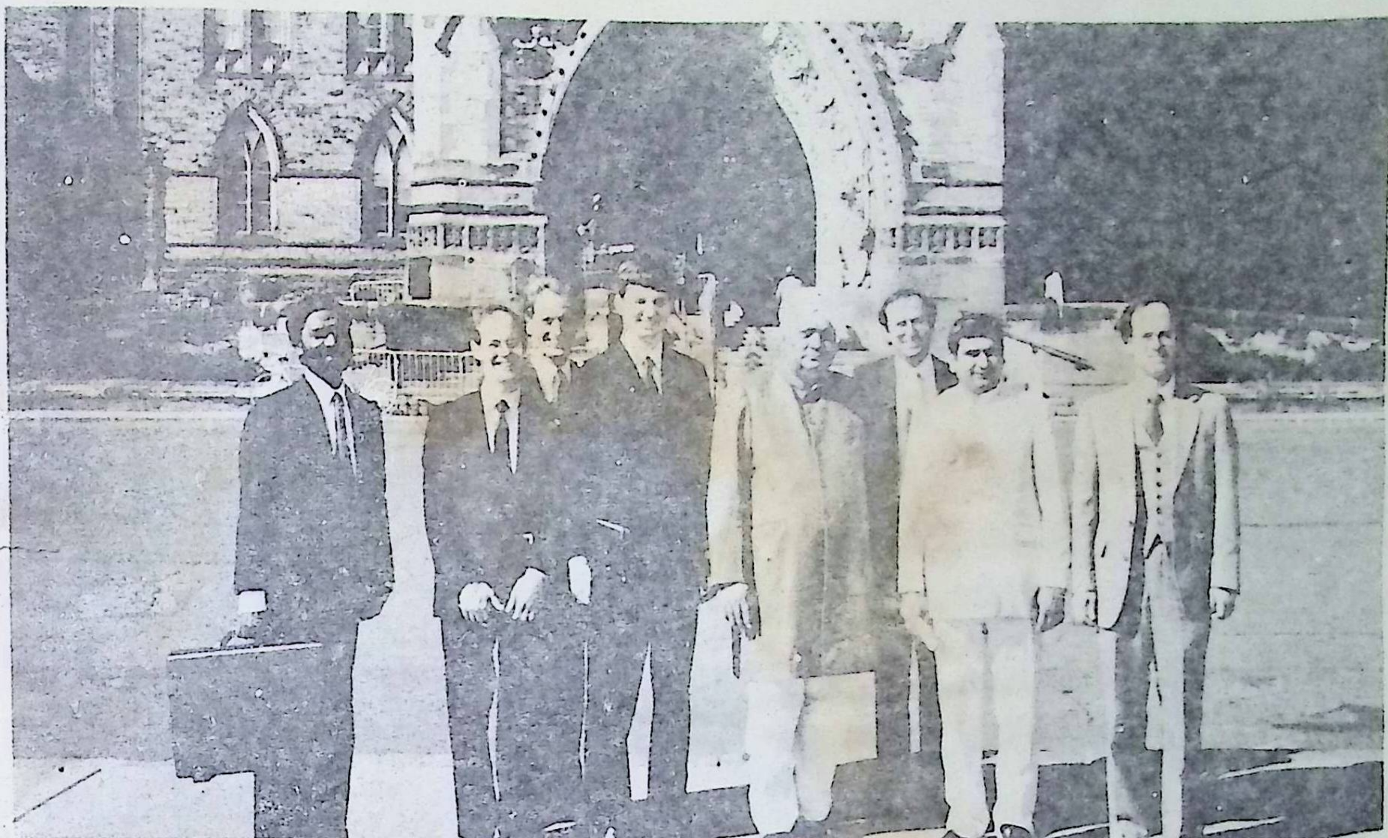
CHINA Dr Triguna and his delegation received by the Minister of Public Health, Dr Cuiyun Li (centre), during their visit to China. Dr Bevan Morris, President, Maharishi International University, U.S.A. (third from right), Dr R.K. Wallace, Professor of Physiology, M.I.U. (far right), and Dr G. Mahapatra, Secretary General, Maharishi World Federation of Ayurveda (far left), accompanied Dr Triguna and discussed steps of mutual cooperation between the Maharishi World Centre of Ayurveda and the Ministry of Health.



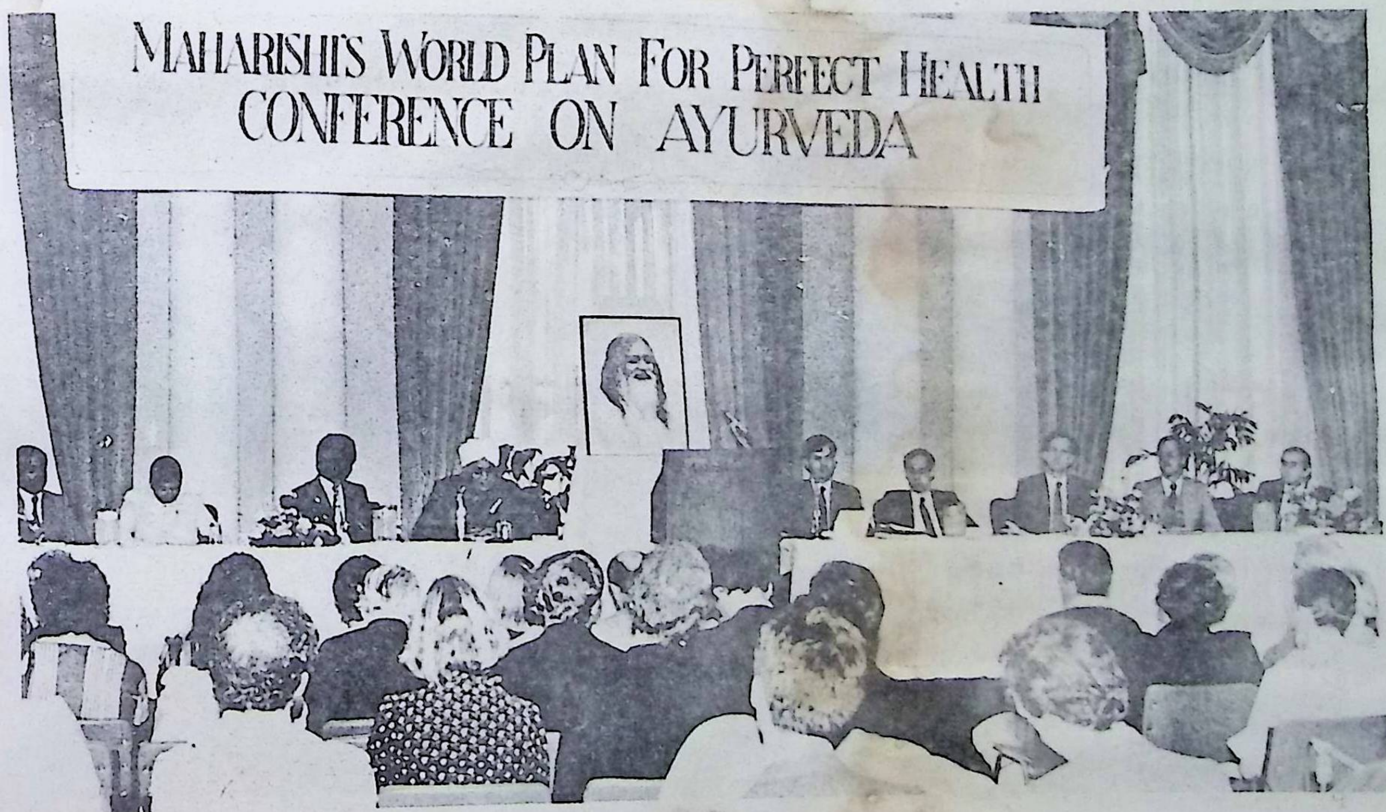
BRAZIL Dr Triguna with Maharishi and Dr Jose Saraiva Felipe (to the left of Dr Triguna), Secretary of Medical Services of the Ministry of Social Welfare of the Government of Brazil, at the Maharishi World Centre of Ayurveda, Maharishi Nagar, India, in September 1986. Dr Saraiva and Mr Jose Luis Alvarez (left), Director of the National Commission for the Implementation of Ayurveda, Ministry of Social Welfare, Brazil, discussed with Maharishi and Dr Triguna the nationwide implementation of Ayurveda to create a disease-free society in Brazil.



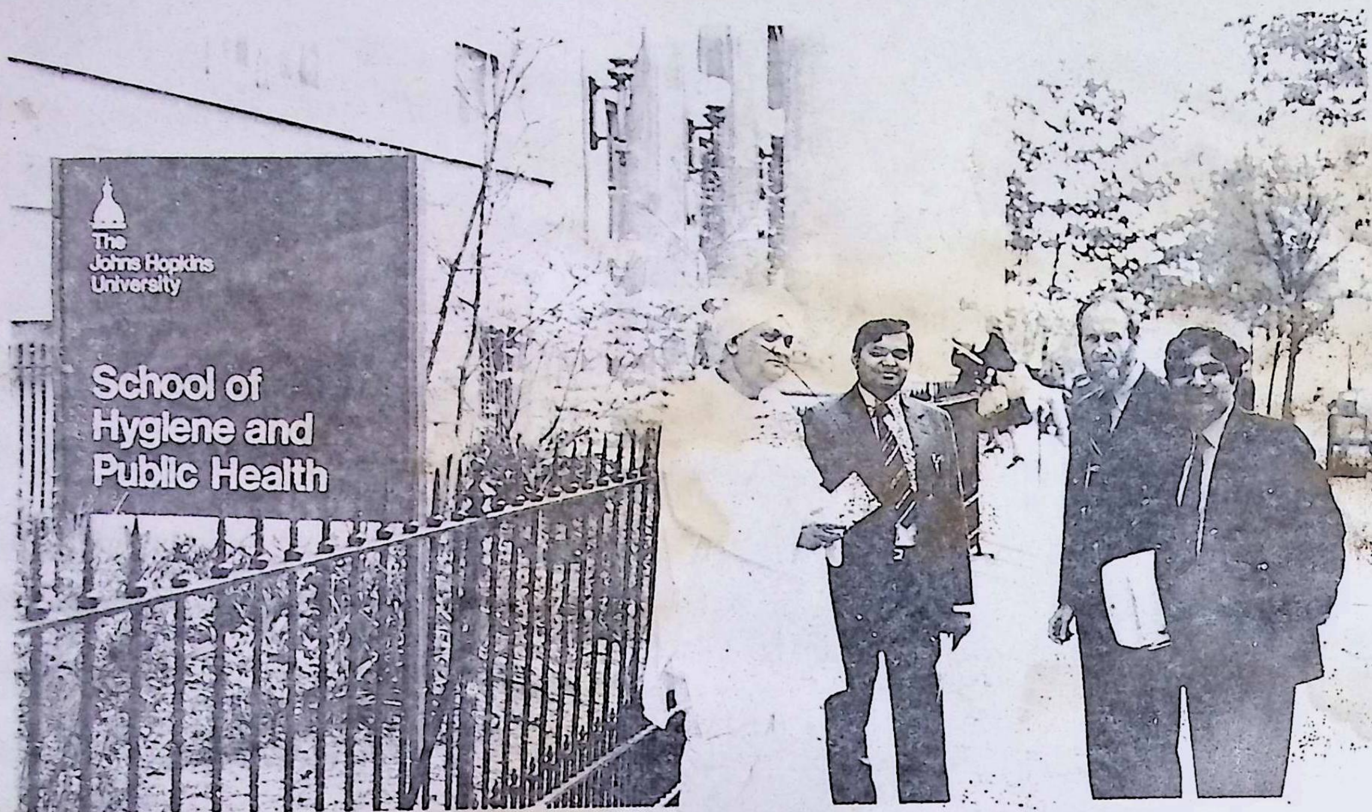
INDIA / SRI LANKA Dr Triguna, in July 1986, with the Minister of Indigenous Medicine of the Government of Sri Lanka, Dr Lokubandhara (second from left), and the Chief Minister of Bihar State, Mr B. Dubey (on Dr Triguna's right). Dr Triguna congratulated the Ministers for their resolve to utilize and popularize Ayurveda for the well-being of their people.



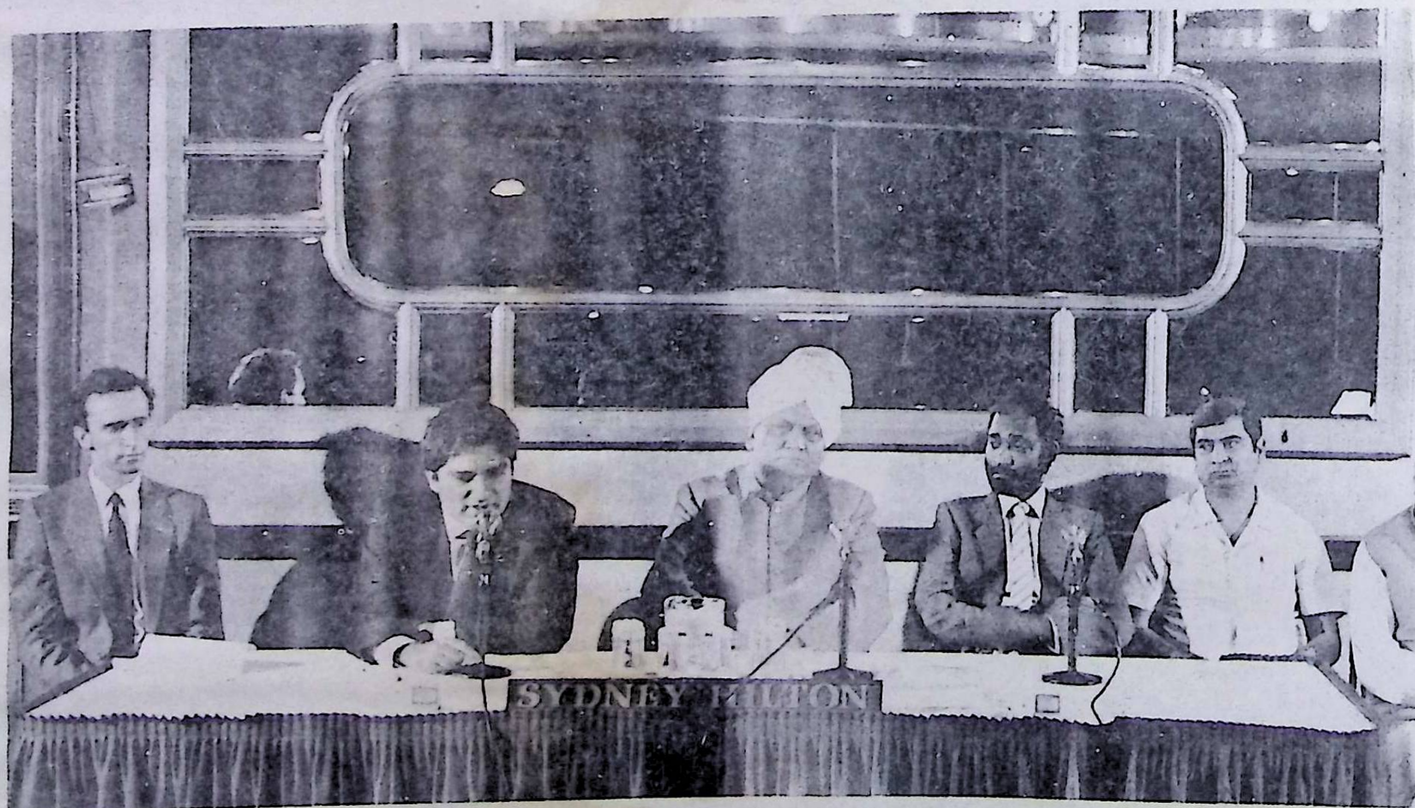
CANADA Dr Triguna and his son, Vaidya Devinder Triguna, with Dr Neil Paterson (centre), Governor General of the Age of Enlightenment for North America, and a delegation of physicians and scientists from Canada and the United States in front of the Canadian Parliament Building in Ottawa, in October 1985. Dr Triguna was received by the Chairman of the Committee on Health of the House of Parliament and met with senators, and leaders in the Ministries of Health and Indian Affairs.



CANADA Dr Triguna at a Conference on Ayurveda in Ottawa, Canada, in 1985. The conference was attended by scientists, physicians and public health officials. Dr Ross Mikelson (third from right), Director of Maharishi Ayurveda Prevention Centres in Canada informed the Conference participants of the widespread interest in the use of natural medicine among the people of Canada and as a result, that there was pending government legislation to allow traditional medicine to be more easily available in the country.



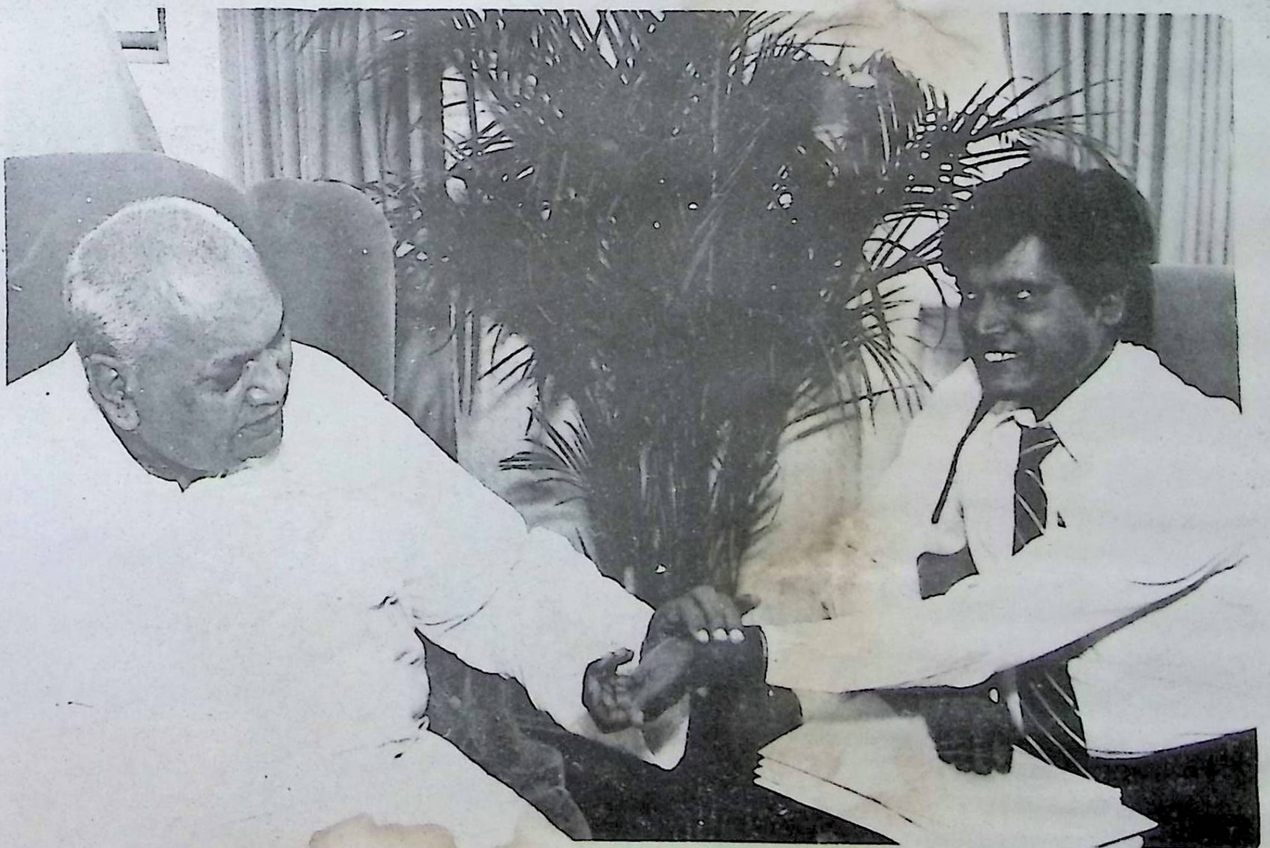
U.S.A. Dr Triguna at the Department of International Health at Johns Hopkins School of Hygiene and Public Health, during his tour of American medical institutions in April and May of 1986. From left: Dr Triguna; Mr Prakash Srivastava, Director of Maharishi Ayurveda Corporation, Ltd.; Dr Timothy Baker, Professor of International Medicine, Johns Hopkins University; and Dr Deepak Chopra, President of the American Association of Ayurvedic Medicine. Dr Chopra has established a unique Ayurvedic clinic near Boston, Massachusetts, for the treatment of all types of diseases including those considered incurable by modern western medicne.

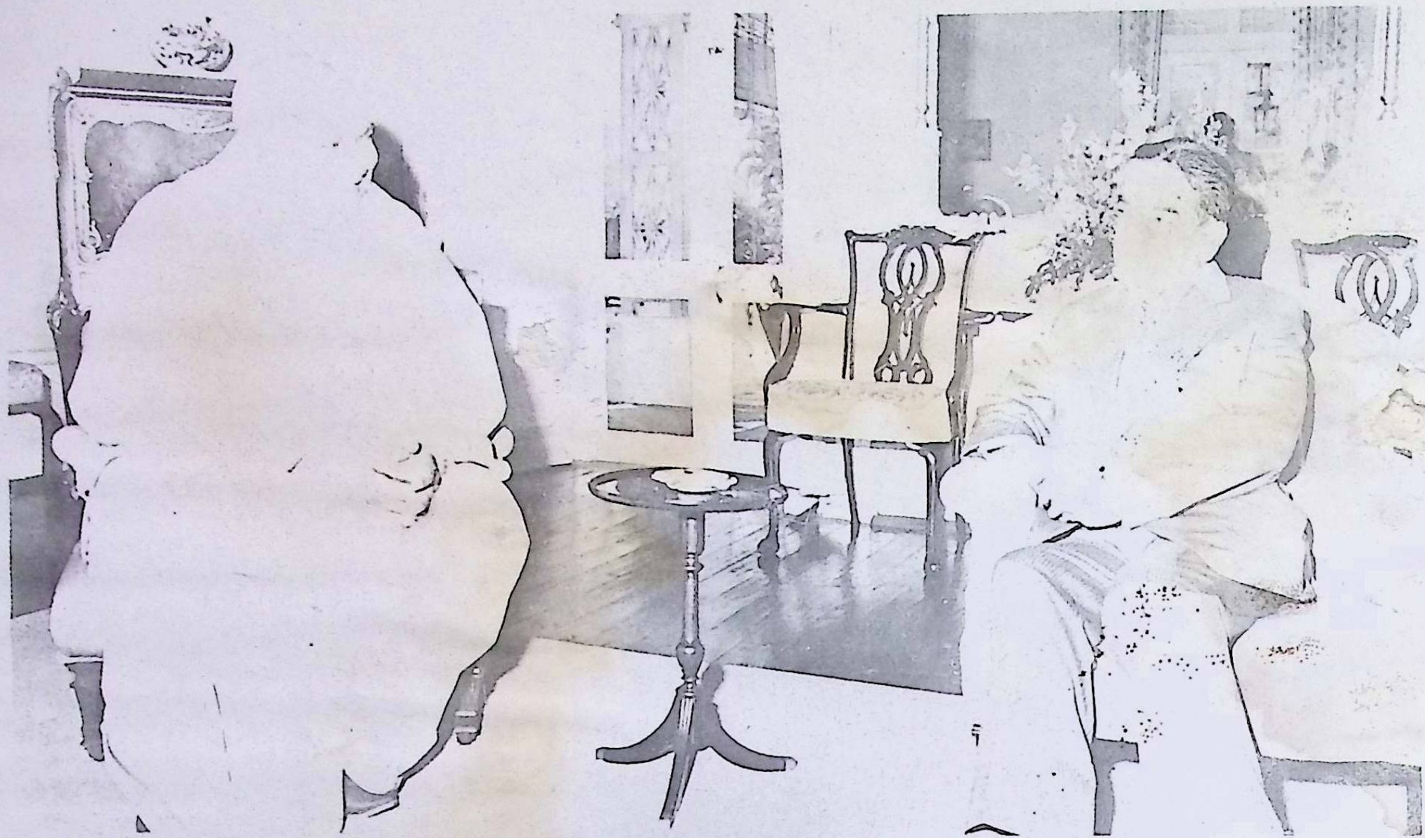


AUSTRALIA Resulting from a press conference in Sydney with Dr Triguna and Dr Chopra, the national media reported how Ayurveda has been widely accepted by physicians in Australia as an ideal method of prevention, the neglected area in health care today. Also speaking at the conference were, from left, Dr Tim Carr (Australia), Dr Mahapatra, and Vaidya Davinder Triguna.



वैद्य श्री त्रिगुणा जी विदेशी अतिथि की नाड़ी देखते हुये

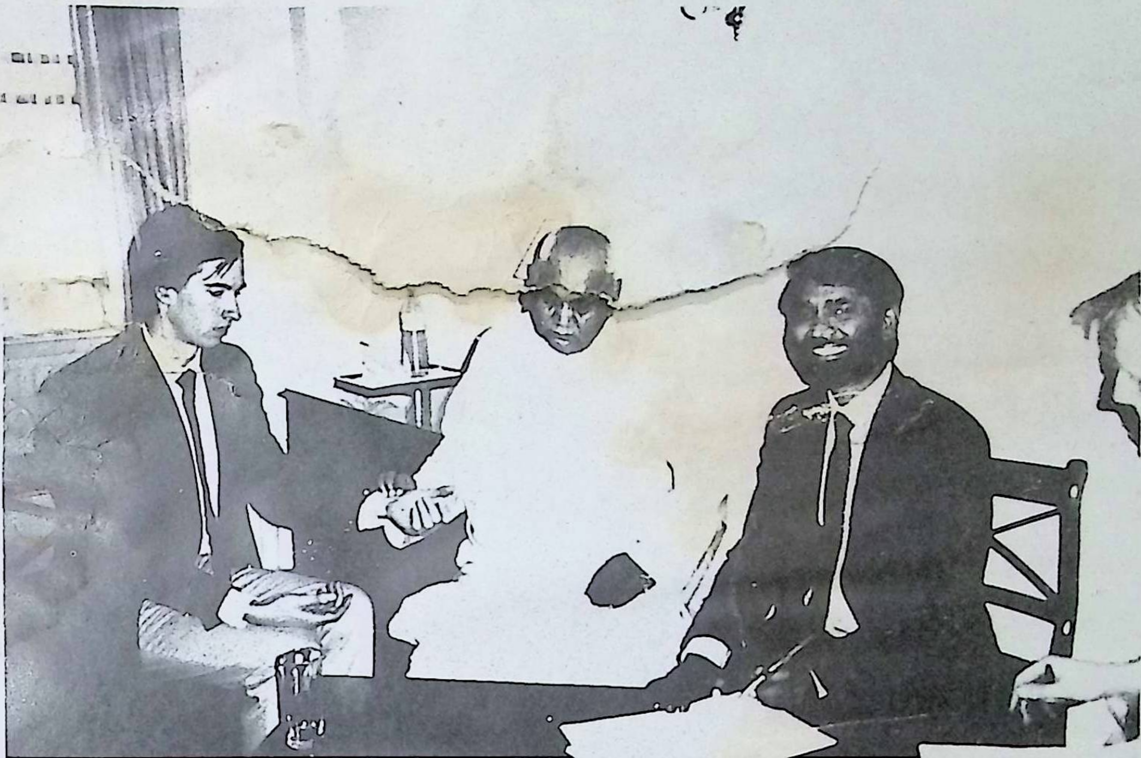




MAURITIUS Dr Triguna with Governor General H.E. Sir Veerasamy Ringadoo during his visit to help establish Ayurveda in the health care system of Mauritius, in September 1986. Dr Triguna assisted in a government plan to upgrade and expand an Ayurvedic dispensary founded by eminent Indian Ayurvedic physicians.



CHINA Dr Triguna demonstrates the procedure of Ayurvedic pulse diagnosis to Dr Cuiyun Li, Minister of Public Health of the People's Republic of China, during his visit to China, in April 1986, to discuss a joint research project between the health custodians of India and China. The proposal on Ayurveda presented a model for creating perfect health for the individual and society, leading to the creation of a world free from sickness and suffering.



वैद्य श्री त्रिगुणा जी महर्षि वेद विज्ञान विद्यापीठ के कुलपति डॉ. ज्ञानेन्द्र महापात्रा के साथ एक विदेशी अतिथि की नाड़ी देखते हुये



सेनेगल के साथ श्री त्रिगुणा जी



विदेशी पत्रकारों की नाड़ी परीक्षण करते हुये वैद्य श्री त्रिगुणा जी

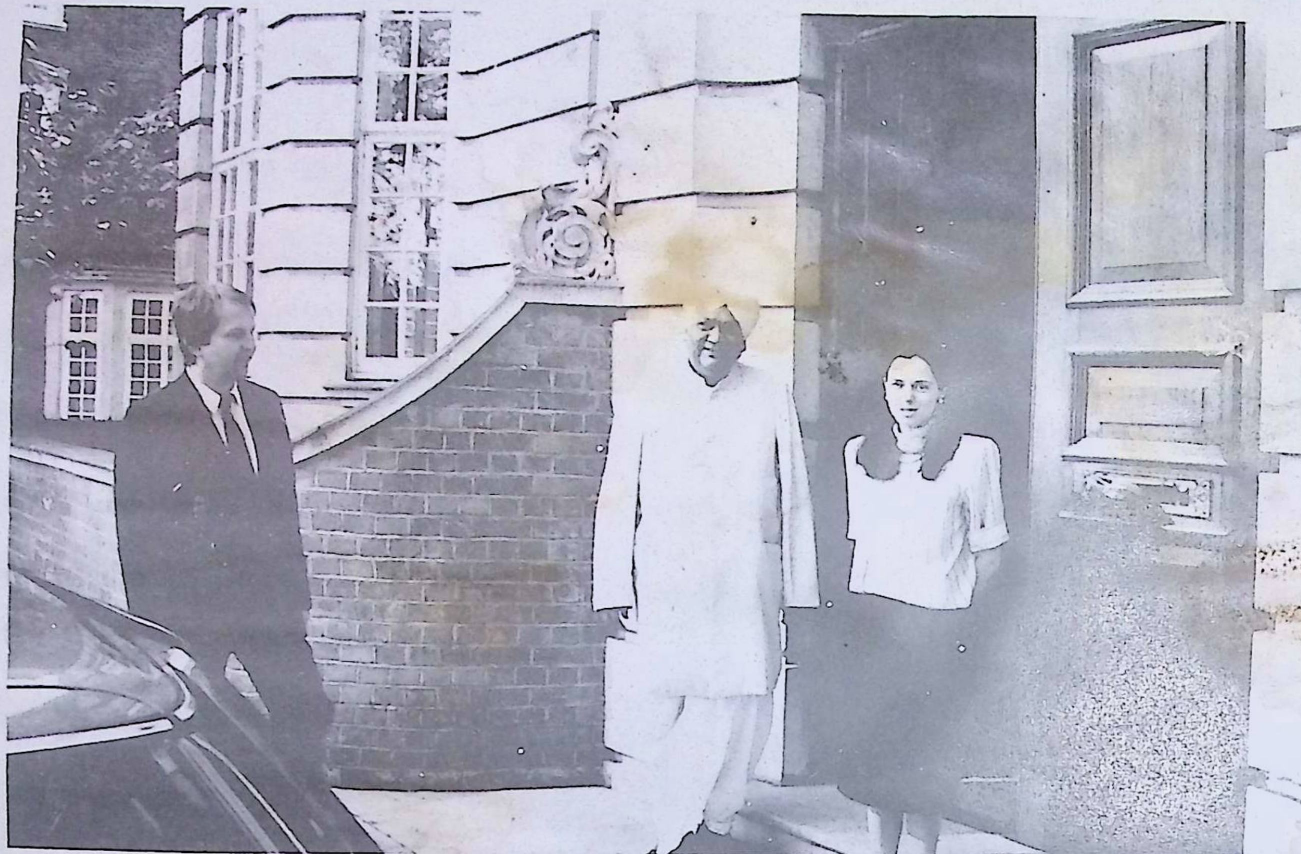




कतार देश (मिडलिइसस्ट) के स्वास्थ्य मंत्री के साथ वैद्य श्री त्रिगुणा जी



पोलैण्ड के उप परिवार कल्याण स्वास्थ्य मंत्री के साथ श्री त्रिगुणा जी



मास्को (रूस) में श्री त्रिगुणा जी



AUSTRALIA Dr Triguna is welcomed by the Secretary and Assistant Director General of the National Health and Medical Research Council of Australia, Dr Robert Cumming, in Canberra, in March 1986. In Dr Triguna's delegation are (left to right), Dr Gyanendra Mahapatra, Dr Deepak Chopra, and Vaidya Davinder Triguna.

आयुर्वेद की प्रगति के चालीस वर्ष

वैद्य श्री शिव कुमार मिश्र
मानद विशेषायुक्त (भा.चि.प.)
स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली

भारत सरकार द्वारा आयुर्वेद की प्रगति का दृढ़ निश्चय १९४६ में चोपड़ा समिति के गठन और १९४८ में इस समिति के प्रतिवेदन के साथ ही प्रारम्भ हो गया था जिसके फलस्वरुप १९५२ में जामनगर में देशी चिकित्सा पद्धतियों के केन्द्रीय अनुसन्धान संस्थान की स्थापना डा. प्राणजीवन मेहता के निदेशकत्व में हुई। आचार्य रामरक्षजी पाठक पं. गणेशदत्त जी सारस्वत, पं. गिरिजादयालु शुक्ल, आचार्य मुकुन्दीलाल जी द्विवेदी आदि जैसे आयुर्वेद जगत के मूर्धन्य विद्वान् और विचारक इस संस्थान की सेवा में समाविष्ट हुए थे। यह आयुर्वेद के नवीन युग का प्रारम्भ था। आयुर्वेद में अनुसंन्धान की पद्धति क्या हो, इसके विनिश्चय के साथ ही पाण्डुरोग, कामला, त्वग्रोग आदि पर अनुसंधान के सूत्रपात से आयुर्वेद जगत् में एक नवीन चेतना का सृजन हुआ। कुछ ही वर्षों बाद भारत सरकार ने आयुर्वेद में स्नातकोत्तर शिक्षा प्रारम्भ करने का निर्णय लिया और इस कार्य के लिये भी जामनगर को ही चुना गया। आचार्य यादव जी त्रिकम जी महाराज इस संस्थान के निदेशक मनोनीत हुए थे परन्तु संस्थान की स्थापना के क्रम में जामनगर में ही उनका निधन हो गया। अस्तु १९५६ में आयुर्वेदीय स्नातकोत्तर प्रशिक्षण केन्द्र जामनगर भी कार्यरत हो गया जिसका नेतृत्व आचार्य भास्कर विश्वनाथ गोखले ने किया। इस जमाने में आयुर्वेद जगत् के जाज्वल्यमान नक्षत्र डा. च. द्वारकानाथ, वैद्य वासुदेव एम. द्विवेदी, आचार्य पं. विश्वनाथ द्विवेदी, आचार्य हनुमत्प्रसाद शास्त्री प्रभृति इस केन्द्र में अध्यापक बने। तब प्रतिवर्ष २५ छात्र स्नातकोत्तर शिक्षा के लिये प्रवेश पाते थे। आयुर्वेद में स्नातकोत्तर शिक्षा के प्रथम ऐतिहासिक वर्ष १९५६ में भी इस केन्द्र में छात्र के रूप में प्रविष्ट हुआ था और इन महान् विद्वानों के सान्निध्य में रहकर जो कुछ सीख सका उससे जीवन की दिशा ही बदल गई। स्नातकोत्तर केन्द्र के साथ हम लोगों को अनुसंधान संस्थान में भी काम करना होता था और डा. प्राणजीवन मेहता जी तो हमारे स्नातकोत्तर केन्द्र के चिकित्सा इतिहास के मानदप्राध्यापक भी थे। आयुर्वेद जगत् के आज के प्रथम पंक्ति के विद्वान् गण श्री विनायक जयानन्द ठाकर आचार्य चन्द्रकान्त शुक्ल प्रभृति तब इस केन्द्र में सहायक प्राध्यापक लगे थे। आचार्य लक्ष्मण स्वरूप भटनागर श्री एम. महादेव शास्त्री, वैद्य वासुदेव लाटा, आचार्य मधुसूदन शास्त्री, पं. हरिशंकर शर्मा, वैद्य श्रीधरन् डा. शिवचरण ध्यानी, आचार्य श्रीकान्त शर्मा प्रभृति आज के आयुर्वेद मनीषियों का सहपाठी बनने का हमें सौभाग्य मिला था। डा. पी. एन. वी. कुरूप, पं. नन्दकिशोर शर्मा, वैद्य बिक्कू सिंह, आचार्य नागेश द्विवेदी, वैद्य भगवान दास, डा. गोरखनाथ चतुर्वेदी, डा. सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी आचार्य बिजय शंकर त्रिवेदी, वैद्य गणपत लाल शर्मा आदि ने तो दूसरे बैच में १९५७ में इस केन्द्र में प्रवेश लिया और ये लोग भी आयुर्वेद के क्षेत्र में

अति महत्वपूर्ण पदों पर पहुँच कर इसकी श्रीवृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान के भागी बने।

भारत सरकार ने इस बीच स्वास्थ्य मंत्रालय में आयुर्वेद के काम के संचालन के लिये पदों की आवश्यकता समझकर प्रथमतः अवैतनिक आयुर्वेद सलाहकार के पद का सृजन किया। कविराज प्रतापसिंह जैसे प्रतापी विद्वान् ने इस पद को सुशोभित किया। फिर देशी चिकित्सा पद्धति के सलाहकार का नियमित पद सृजित हुआ और आयुर्वेदीय स्नातकोत्तर केन्द्र के तत्कालीन प्राध्यापक एवं भारतीय चिकित्सा का राजकीय महाविद्यालय मैसूर के पूर्व प्राचार्य डा. च. द्वारकानाथ १९५९ में, इस पद पर आसीन हुए। आयुर्वेद में नवचेतना सृजित करने के लिये अनेक योजनाओं की प्रस्तुति और कार्यान्वयन का श्रेय इस महान् विचारक और दूरदर्शी विद्वान् को दिया जाना चाहिए। सलाहकार समिति के रूप में केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् की स्थापना, हरिद्वार, तंजौर, रानीखेत आदि में अनुसंधान एककों का सृजन, समस्त भारत में आयुर्वेद के अध्ययन में एकरूपता स्थापित करने के लिये पाठ्यक्रम का निर्माण, १९६३ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दूसरे स्नातकोत्तर प्रशिक्षण एवं शोध संस्थान की स्थापना, १९६३ में ही भारत सरकार के अन्तर्गत आयुर्वेदीय फार्माकोपिया समिति का कर्नल सर रामनाथ चोपड़ा की अध्यक्षता में गठन, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद् के माध्यम से समेकित औषध अनुसंधान योजना का श्री गणेश आदि उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियां रही। अनुसंधान परिषद् तथा भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् की स्थापना का सूत्रपात भी आपने कर दिया था परन्तु इनकी कार्यरूप में परिणति आपके बाद ही हो पाई।

इस अवधि में आयुर्वेद की शिक्षा की पद्धति और स्वरूप एक विवादका विषय बन गया। डा. च. द्वारकानाथ जी आयुर्वेदीय विषयों के साथ आधुनिक चिकित्सा की शिक्षा के भी पक्षधर थे और उनके माध्यम से निर्मित तथा प्रस्तावित पाठ्यक्रम आधुनिक विषयों से ओतप्रोत था। आयुर्वेद के महाविद्यालयों से निकले हुए स्नातक जिनके पाठ्यक्रम में आधुनिक चिकित्सा के विषय भी समाविष्ट थे, अनेक राज्यों में आधुनिक चिकित्सा संबंधी अधिकारों की प्राप्ति के लिये आन्दोलन पर उतर आये और अल्पकालिक पाठ्यक्रम के माध्यम से अपने को आधुनिक चिकित्सा की उपाधि से विभूषित किये जाने के लिये कटिबद्ध हो गये। ऐसा पाठ्यक्रम कई राज्यों में शुरू भी हुआ और अनेक राज्यों में आयुर्वेद के स्नातकों का एलोपैथीकरण प्रारम्भ हो गया। इसी क्रम में किलपौक, मद्रास का प्रसिद्ध देशी चिकित्सा महाविद्यालय आधुनिक चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय में परिवर्तित कर दिया गया और महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय जी द्वारा स्थापित बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का आयुर्वेद महाविद्यालय बन्द कर दिया गया और उसी भवन में चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय शुरू हो गया। एक तरफ जहां आयुर्वेद के वे स्नातक जो अपना क्षेत्र आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में परिवर्तित कर लेना चाहते थे वे इन कदमों से प्रसन्न हुए, वहीं आयुर्वेद के एक बड़े वर्ग को इन क्रियाकलापों से बड़ा आघात लगा। उन्होंने यह मन्तव्य प्रकट किया कि आयुर्वेद के आधुनिकीकरण से यदि इसका परिवर्तन एलोपैथी में हो जाता है तो हमें ऐसे आधुनिकीकरण की आवश्यकता नहीं और आयुर्वेद के क्षेत्र में शुद्ध आयुर्वेद को प्रोत्साहित और पल्लवित करना चाहिये जिससे आयुर्वेद का अस्तित्व बना रहे। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के माध्यम से पं. शिव शर्मा ने इस आन्दोलन को संचालित किया और केन्द्रीय

सरकार के तत्कालीन मन्त्रियों, श्री मोरारजी देसाई, श्री गुलजारीलाल नन्दा आदि ने इसे राजनैतिक समर्थन दिया। इसके परिणाम स्वरूप केन्द्रीय सरकार ने शुद्ध आयुर्वेद का पाठ्यक्रम बनाने और इस सम्बन्ध में दिशानिर्देश के लिये १९६२ में एक समिति का गठन किया। गुजरात के तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री श्री मोहनलाल व्यास इस समिति के अध्यक्ष तथा पं. शिव शर्मा इसके सदस्य सचिव थे। इस समिति का प्रतिवेदन और पाठ्यक्रम १९६४ में प्रस्तुत किया गया जिसे भारत सरकार ने स्वीकृत कर लिया और सभी राज्य सरकारों को इस पाठ्यक्रम के चलाने का आग्रह किया। गुजरात, महाराष्ट्र, केरल, आन्ध्र प्रदेश एवं उड़ीसा ने इस शुद्ध आयुर्वेद के पाठ्यक्रम को अपने राज्यों में चालू कर दिया परन्तु उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल मध्य प्रदेश आदि राज्यों ने अपने अपने स्वतन्त्र पाठ्यक्रम चालू रखे। इससे आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम में विविधता बनी रही।

१९६७ में सम्पन्न लोकसभा के चुनावों में आयुर्वेद के दो महान् विचारक और विद्वान् सर्व श्री पण्डित शिव शर्मा एवं वैद्य पं. अनन्त त्रिपाठी शर्मा लोक सभा के सदस्य बने। आयुर्वेद को अखिल भारतीय स्तर पर संसद में पारित अधिनियम के अन्तर्गत मान्यता दिलाना, आयुर्वेद की शिक्षा के क्षेत्र में एकरूपता स्थापित करना और भारतीय चिकित्सा पद्धति के चिकित्सकों के लिये केन्द्रीय रजिस्टर बनवाना इस परिषद् की स्थापना का मुख्य उद्देश्य था। इनके प्रयत्न सफल हुए और सरकार ने स्वयं भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् की स्थापना से संबधित बिल, संसद में उपस्थित किया जो १९७० में सर्वसम्मति से पारित हुआ। इस अधिनियम के अन्तर्गत १९७१ में भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् का गठन हुआ, जिसके पं. शिवशर्मा जी सर्वसम्मति से अध्यक्ष और कविराज आशुतोष मजुमदार आयुर्वेद समिति के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। इस परिषद् के प्रथम निबन्धक एवं सचिव बनने का गौरव मुझे प्राप्त हुआ था। यद्यपि अतिशुद्ध आयुर्वेदवादी से लेकर परम आधुनिक चिकित्सा भक्त तक विभिन्न वर्गों एवं सम्प्रदायों के विद्वान् इस प्रथम गठित परिषद् के सदस्य थे। परन्तु सभी के मन में आयुर्वेद के लिये प्रेम और निष्ठा की भावना ने उनके अहं को उनसे अलग कर सर्वसम्मति से एक नवीन आयुर्वेद निष्ठ तथा आधुनिक विज्ञान सम्मत पाठ्यक्रम पर उनकी स्वीकृति की मुहर लगाने में सफल हो गई और वह भी केवल तीन वर्षो के अल्पकाल में इससे आयुर्वेद की शिक्षा के क्षेत्र में एक नये अध्याय का प्रारम्भ हुआ और देश के समस्त आयुर्वेद महाविद्यालयों में इस पाठ्यक्रम का प्रचलन होकर एक रूपता स्थापित हो गई। स्नातक स्तर की शिक्षा के साथ परिषद् ने स्नातकोत्तर शिक्षा का भी पाठ्यक्रम तैयार किया और इसे भी सारे स्नातकोत्तर शिक्षण संस्थानों और स्नातकोत्तर शिक्षा के लिये विकसित आयुर्वेद महाविद्यालयों के विभागों में प्रचलित किया जा सका। इस प्रकार इतनी अल्पावधि में परिषद् ने एक महान् सफलता प्राप्त कर ली।

इस अवधि में अनुसंधान के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण प्रगति हुई। अनुसंधान संस्थाओं की निरन्तर बढ़ती हुई संख्या और अनुसंधान मे तेजी लाने के उद्देश्य से १९६९ के दिसम्बर में भारत सरकार ने भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होमियोपैथी की केन्द्रीय अनुसंधान परिषद् की स्थापना की। तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री डा. कर्ण सिंह इसकी शासी निकाय के अध्यक्ष और डा. पी.एन. वी. कुरूप तत्कालीन देशी चिकित्सा सलाहकार परिषद् के निदेशक और शासी निकाय के सदस्य सचिव

बनाये गये। पं. शिव शर्मा इस परिषद् की वैज्ञानिक सलाहकार समिति के अध्यक्ष बनाये गये। कुछ वर्षों में ही परिषद् के क्रियाकलापों का तेजी से विकास हुआ। परिषद् पटियाला और चेरुतुरुथी (केरल) में आयुर्वेद का, हैदराबाद में यूनानी का, मद्रास में सिद्ध का और कोट्टायम में होमियोपैथी का केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान स्थापित करने में सफल हुआ। इसके साथ ही कलकत्ता, भुवनेश्वर, पटना, लखनऊ, जूनागढ़, झाँसी, नागपुर, बंगलोर, त्रिवेन्द्रम, ग्वालियर, विजयवाड़ा, गौहाटी आदि अनेक शहरों में क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थान और केन्द्र स्थापित किये गये। अनेक अनुसंधान एकक भी बने और शोध का काम तेजी से शुरु हुआ। रोग चिकित्सात्मक, औषधियाँ, वनस्पति सर्वेक्षण, औषधमानकीकरण एवं साहित्यिक शोध की अनेक योजनायें बनी और इनका कार्यान्वयन शुरू हुआ। मलेरिया अथवा विषमज्वर के लिये आयुष-६४ अपस्मार के लिये आयुष-५६ का सफल परीक्षण, विभिन्न राज्यों एवं क्षेत्रों में वनस्पतियों की उपलब्धि का ज्ञान, वनस्पतियों के नमूनों का हजारों की संख्या में संकलन, औषधमानकीकरण की दिशा में ४४० औषधि योगों के प्राथमिक मान[illegible]रूप, कुछ महत्वपूर्ण आयुर्वेदीय पाण्डुलिपियों और प्राचीन दुर्लभ ग्रन्थों का सम्पादन और प्रकाशन आदि इस दिशा में उल्लेखनीय हैं।

१९६३ में गठित फार्माकोपिया समिति का समय-समय पर पुनर्गठन होता रहा है। कर्नल सर रामनाथ चोपड़ा के बाद प्रो. अनन्त एन. नामजोशी इस समिति के अध्यक्ष बने। समिति ने एक प्रश्नावली बनाकर सारे आयुर्वेद जगत् का सुझाव आमन्त्रित किया था और इसके प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण के बाद प्रथमतः आयुर्वेदीय योगसंहिता के सम्पादन का निर्णय किया। प्रथम भाग में ४४४ अतिप्रचलित योगों का संकलन वैज्ञानिक पद्धति से पूर्ण कर प्रकाशित किया गया। फिर इसका हिन्दी परिमार्जित संस्करण भी प्रकाशित हुआ। द्वितीय भाग में चिकित्सोपयोगी १९२ योगों का संकलन और सम्पादन कर इसका हिन्दी और अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित किया जा चुका है। फार्माकोपिया बनाने के क्रम में एकौषधियों पर काम शुरू किया गया और ८० औषधियों के विवरण के साथ आयुर्वेदीय फार्माकापिया का प्रथम भाग प्रकाशित हो चुका है। औषधि योगों की फार्माकोपिया निर्माणाधीन है। योगसंहिता के एकौषधियों की फार्माकोपिया के नये अंशो पर भी काम हो रहा है। काम की बहुलता की अपेक्षा साधन और सुविधायें अत्यल्प हैं फिर भी जितना काम हुआ है, वह सराहनीय है।

१९६३ में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में आयुर्वेद के स्नातकोत्तर प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान की स्थापना सुप्रसिद्ध आयुर्वेद महाविद्यालय के वीरान हुए भवन में की गई। प्रारम्भ में तो यह एक अलग संस्थान के रूप में विकसित हुआ परन्तु बाद में इसे चिकित्सा विज्ञान संस्थान के अधीन कर दिया गया। आचार्य प्रियव्रत शर्मा, प्रो. यदुनन्दन उपाध्याय, आचार्य दामोदर शर्मा गौड़ एवं डा. पी. जे. देशपाण्डे जैसे मूर्धन्य विद्वानों ने विभिन्न आयुर्वेदीय विभागों के आचार्य और विभागाध्यक्ष के पदों को सुशोभित किये। डा. के. एन. उडुपा का वरदहस्त चिकित्सा विज्ञान संस्थान के निदेशक के रूप में इन विभागों पर रहा। डा. राम सुशील सिंह, डा. गोरखनाथ चतुर्वेदी, डा. एल. वी. गुरू, डा. सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी, डा. ज्योतिर्मित्र, डा. प्रेमवती तिवारी, डा. झारखण्डे ओझा, डा.रामहर्ष सिंह, डा. एल. एम. सिंह, डा. जी.सी. प्रसाद प्रभृति विद्वान् इस

संस्थान में सहायक प्राध्यापक एवं प्रवाचक के पदों से प्रारम्भ कर अपने अपने विषयों के आचार्य एवं विभागाध्यक्ष के पदों तक पहुँच गये।

आयुर्वेद को आधुनिक चिकित्सा एवं विज्ञान के साथ तालमेल बैठाकर आगे लाने की दिशा में इन विभागों में बहुत अच्छे कार्य हुए और देश विदेश में यहां के शोध पत्र प्रकाशित होते रहे। पिछले कुछ वर्षों से यहां का विकास अवरुद्ध सा हो गया है जिसपर ध्यान देकर और कठिनाइयों को दूर कर यहाँ के क्रिया कलाप को फिर से सुसंचालित करने की आवश्यकता है।

इस बीच १९६० के आसपास जामनगर में भी बड़े परिवर्तन हुए। अनुसंधान संस्थान और स्नातकोत्तर केन्द्र के अतिरिक्त जामनगर में गुलाबकुँवरवा आयुर्वेद समिति भी एक महत्वपूर्ण कड़ी रही है। यह समिति वहां के आयुर्वेद महाविद्यालय का संचालन करती थी। चरक संहिता का अंग्रेजी, हिन्दी एवं गुजराती में अनुवाद के साथ बृहत्तर सम्पादन और छः खण्डों में प्रकाशन इसी समिति के माध्यम से डा. प्राणजीवन मेहता जी के नेतृत्व में जामनगर में हुआ था। यह अनुभव किया गया कि यदि इन तीनों संस्थाओं का विलय कर एक सूत्र में पिरोया जाय तो शायद काम अधिक अच्छा हो। इसी उद्देश्य को लेकर और इन संस्थाओं को मिलाकर आयुर्वेदाध्ययन एवं अनुसंधान संस्थान का गठन किया गया। इसके कुछ वर्षों बाद १९६६ में गुजरात सरकार ने आयुर्वेद का विश्वविद्यालय बनाने के लिये गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय अधिनियम बनाकर आयुर्वेद के क्षेत्र में पहला विश्वविद्यालय स्थापित कर दिया। गुजरात के तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री श्री मोहनलाल व्यास की इस साहसिक कार्य में अग्रणी भूमिका रही। आयुर्वेदाध्ययन एवं अनुसंधान संस्थान इस विश्वविद्यालय का अंग बन गया और क्रमशः गुजरात राज्य के सारे आयुर्वेद महाविद्यालय इस विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हो गये। श्री विनायक जयानन्द ठाकर, श्री मोहनलाल व्यास, आचार्य मुकुन्दीलाल द्विवेदी, वैद्य रसिकभाई पारिख, श्री वसन्त भाई आर. मेहता आदि निष्णात विद्वान् इस विश्वविद्यालय के कुलपति रहे हैं। वर्तमान में श्री बी. टी. त्रिवेदी अवकाश प्राप्त आई. ए. एस. इस विश्वविद्यालय के कुलपति हैं।

भारत सरकार ने केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों और उनके परिवारों की चिकित्सा व्यवस्था के लिये केन्द्रीय सरकार स्वास्थ्य योजना प्रारम्भ की थी। इसका प्रारम्भ एलोपैथी के अस्पताल और औषधालय से हुआ था। परन्तु १९६२ में भारत सरकार ने इसके अन्तर्गत गोल मार्किट, नई दिल्ली में, एक आयुर्वेदीय औषधालय खोलकर आयुर्वेद को भी स्थान दिलाया। इसके बाद से यह क्रम बढ़ता गया और आज केन्द्रीय सरकार स्वास्थ्य योजना के अंतर्गत दिल्ली में २५ बिस्तरों वाला एक अस्पताल, पाँच औषधालय और ९ यूनिट तथा दिल्ली से बाहर कलकत्ता, बंबई, मद्रास, बंगलोर, अहमदाबाद, कानपुर, जयपुर, पटना, मेरठ आदि स्थानों में १५ यूनिट कार्यरत हैं। इस योजना के अंतर्गत प्रायः ८० आयुर्वेदीय चिकित्सक तथा ४ वरिष्ठ चिकित्सक सारे देश में कार्यरत हैं।

१९६४ में एक महत्वपूर्ण निर्णय आयुर्वेद, यूनानी एवं सिद्ध की औषधियों पर नियंत्रण प्रारम्भ करना था। औषधि एवं प्रसाधन अधिनियम १९४० में संशोधन कर बाजार में बेचने के लिये बनाये जाने वाली औषधियों के उत्पादन पर नियंत्रण के लिये लाइसेंस का प्रावधान शुरू हुआ। कानून के

रूप में विभिन्न राज्यों में इस अधिनियम का प्रचलन १९६९-७० में प्रारम्भ हो गया। सही घटकों द्वारा स्वास्थ्य के अनुकूल स्थान में, जानकार वैद्य के नियंत्रण में औषधियों के निर्माण की अनिवार्यता कर दी गई। १९८२ में इस अधिनियम में और भी परिवर्तन कर गलत दवा बनाने वालों के लिये छः वर्ष तक की सजा का प्रावधान कर दिया गया है। आज देश में लाइसेन्स धारक आयुर्वेदीय औषध निर्माताओं की संख्या छः हजार से अधिक हो गई है। एक अनुमान के आधार पर तीन हजार से चार हजार करोड़ की देशी दवायें देश में निर्मित हो रही है। विदेशों में भी आयुर्वेदीय औषधियों की मांग है। शुद्ध और गुणकारी दवायें उपलब्ध हों और घटिया दवाओं के निर्माण पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहे इसके लिये उपयुक्त कदम उठाने की आवश्यकता है।

इसी क्रम में भारत सरकार ने गाजियाबाद में सन् १९६८ में भारतीय चिकित्सा का फार्माकोपिया लेबोरेटरी स्थापित किया था। इस लेबोरेटरी के माध्यम से और फार्माकोपिया समितियों के निदेशन में विभिन्न देशी चिकित्सा पद्धतियों की योग संहिता और भेषज संहिता बनाने का काम प्रगति पर है। आयुर्वेदीय दवाओं के जाँच का काम भी ज्ञात विधियों के आधार पर किया जाता है और अनेक राज्य सरकारों और भारत सरकार ने इस लेबोरेटरी के निदेशक को औषधि विश्लेषक के रूप में नियुक्त कर रखा है।

जामनगर और वाराणसी के स्नातकोत्तर प्रशिक्षण संस्थाओं से प्रतिवर्ष प्रायः ४० विद्वान् स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त कर देश के आयुर्वेद महाविद्यालयों में अध्यापक शोध केन्द्रो में अनुसंधान अधिकारी एवं केन्द्र और राज्य सरकारों में तकनीकी प्रशासकीय पदों पर आसीन होने लगे और आवश्यकता को देखते हुए इनकी संख्या कम पड़ने लगी। फिर निर्णय लिया गया कि अच्छे आयुर्वेद महाविद्यालयों के विभागों को उन्नत कर यहां भी स्नातकोत्तर प्रशिक्षण का कार्य प्रारम्भ कर दिया जाय। भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से इस कार्य के लिये राज्य सरकारों को पूर्ण आर्थिक सहायता दी गई। १९७०-७१ में यह योजना प्रारम्भ हुई और सातवीं योजना के अन्त तक १७ निम्नांकित आयुर्वेद महाविद्यालयों के ३० विभागों को इस कार्य के लिये समुन्नत किया गया।

०१. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, हैदराबाद।
०२. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पटना।
०३. अखण्डानन्द राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, अहमदाबाद।
०४. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, त्रिवेन्द्रम।
०५. देशी चिकित्सा का सरकारी कालेज, मैसूर।
०६. देशी चिकित्सा का सरकारी कालेज, बंगलोर।
०७. पोद्दार राजकीय आयुर्वेदीय मेडिकल कालेज, बंबई।
०८. शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, ग्वालियर।
०९. शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, रायपुर।
१०. गोपबन्धु आयुर्वेद महाविद्यालय, पुरी।

११. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, जयपुर।
१२. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर।
१३. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, पाटियाला।
१४. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ।
१५. ऋषिकुल आयुर्वेद महाविद्यालय, हरिद्वार।
१६. ललित हरि आयुर्वेद महाविद्यालय, पीलीभीत।
१७. श्यामादास वैद्य शास्त्र पीठ परिषद, कलकत्ता।

बाद में अपने खर्च से देश के कुछ अन्य आयुर्वेद महाविद्यालयों में भी स्नातकोत्तर शिक्षा की व्यवस्था शुरु की।

विकास के इस क्रम में १९७६ में भारत सरकार ने राजस्थान सरकार के सहयोग से राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान की स्थापना जयपुर में की। आदर्श स्नातकस्तर एवं स्नातकोत्तर शिक्षा का प्रावधान, अनुसंधान तथा विशिष्ट आयुर्वेदीय चिकित्सा व्यवस्था इस संस्थान की स्थापना का उद्देश्य है। पिछले १५ वर्षों में इस संस्थान का निरन्तर विकास हुआ है। आजकल यहां आठ विभागों में स्नातकोत्तर प्रशिक्षण का प्रावधान है। स्नातकस्तर की शिक्षा के लिये प्रतिवर्ष ६० छात्र प्रविष्ट होते हैं जिनमें १० सीटें छात्राओं के लिये सुरक्षित हैं। २५० शय्याओं वाला अस्पताल और दो औषधालय भी इस संस्थान से सम्बद्ध हैं।

१९७८ में भारत सरकार ने प्रत्येक चिकित्सा पद्धतियों में शोध कार्य को अधिक तेजी से सम्पन्न करने की दृष्टि से चार स्वतन्त्र परिषदों का गठन किया। आयुर्वेद एवं सिद्ध पद्धतियों में शोध कार्य के लिये अलग से परिषद् बन जाने से शोध के क्षेत्र का विस्तार हुआ तथा अनेक नये शोध संस्थान एवं केन्द्र स्थापित किये गये। दिल्ली, बंबई और भुवनेश्वर में केन्द्रीय आयुर्वेदीय शोध संस्थान तथा सिक्किम, ईटानगर, मण्डी आदि स्थानों पर क्षेत्रीय शोध केन्द्र स्थापित किये गये। जनजाति शोध केन्द्र, सामुदायिक स्वास्थ्य अनुसंधान आदि नवीन विषयों पर शोध कार्य का विस्तार किया गया। शोध की उपलब्धियों के प्रचार प्रसार की दृष्टि से अनेक विचार गोष्ठियों का आयोजन, साहित्यसृजन, प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थों का सम्पादन आदि कार्यो में प्रगति हुई।

१९८२ में देशी चिकित्सा की औषधियों के निर्माण के लिये अल्मोड़ा जिले के मोहान में एक निगम की स्थापना एक नवीन उपलब्धि रही। भारत सरकार और कुमायूँ विकास मण्डल निगम के माध्यम से उत्तर प्रदेश सरकार के संयुक्त सान्निध्य में यह निगम विकास के पथ पर है और प्रति वर्ष एक करोड़ से अधिक मूल्य की औषधियां बनाने लगा है। श्री प्रजापति जोशी और वैद्य सतीश शर्मा इसके प्रबन्ध निदेशक रहे हैं। वर्तमान में श्री लक्ष्मी शंकर द्विवेदी प्रबन्ध निदेशक हैं।

१९८६ से १९८९ के वर्षो में आयुर्वेदीय औषधियों के घटक के रूप में उपयोग में आने वाली वनस्पतियों की उपलब्धि की स्थिति और इनकी अधिक मात्रा में खेती और संग्रह कैसे किया जा सकता है, इस पर अधिक ध्यान दिया गया और इस विषय पर जूनागढ़, कोयम्बटूर, गौहाटी एवं

नैनीताल में क्षेत्रीय विचार गोष्ठी एवं नई दिल्ली में राष्ट्रीय विचार गोष्ठी आयोजत की गई। र्यावरण एवं वन, कृषि, विज्ञान एवं तकनीकी मंत्रालयों और कृषि विश्वविद्यालय आदि का भी इस कार्य में सहयोग लिया गया। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय में एकौषधियों के कार्य को संचालित रखने के लिये एक घटक बनाया गया और ४५ वनस्पतियों की एक सूची तैयार की गई जिनकी खेती को प्रोत्साहित करने के लिये आर्थिक सहायता देने की योजना का कार्यान्वयन किया जा रहा है।

१९८९-९० के मध्य का काल आयुर्वेदीय अस्पताल, औषधालय और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में आयुर्वेद का स्थान आदि की दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण रहा। विभिन्न राज्यों में इनकी संख्या में तेजी से वृद्धि हुई और आज देश में १५२० आयुर्वेदीय अस्पताल और १२८५० औषधालय हो गये हैं। अनेक राज्यों में जिला स्तर पर आयुर्वेद का कार्यालय और अस्पताल का बनना और स्वतंत्र निदेशालयों का निर्माण और प्रसार भी महत्वपूर्ण माना जा सकता है। इस अवधि में देश के सारे आयुर्वेद महाविद्यालय विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध हो गये हैं और आज अपने देश के ४५ विश्वविद्यालयों में आयुर्वेद का संकाय स्थापित है।

आयुर्वेद के क्रियाकलाप को संचालित करने के लिये देश के १६ राज्यो में देशी चिकित्सा के स्वतंत्र निदेशालय कार्यरत हैं और शेष कई राज्यों और केन्द्र शासित क्षेत्रों में उपनिदेशक सहायक निदेशक आदि के पद सृजित किये गये हैं। भारत सरकार ने भी अभी हाल में अनेक नये पद सृजित किये हैं और कई पदों के वेतनमान बढ़ा दिये गये हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण पदों और उनके वेतनमान नीचे दिये जा रहे है।

क्र.सं.	पद का नाम	कुल पद	पुराना वेतन मान	नया वेतनमान
१.	विशिष्ट आयुक्त	१	--	७३००-७६००
२.	सलाहकार (आयुर्वेद एवं सिद्ध)	१	४५००-५७००	५९००-६७००
३.	अधीक्षक, आयुर्वेद अस्पताल लोदी रोड, नई दिल्ली	१	३०००-४५००	४५००-५७००
४.	उपसलाहकार (आयुर्वेद)	२	३०००-५०००	३७००-५०००
५.	मुख्य चिकित्सा अधिकारी (आयुर्वेद)	१०	--	३७००-५०००
६.	वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी (आयुर्वेद)	३०	--	३०००-४५००

केन्द्रीय सरकार स्वास्थ्य सेवा योजना के अन्तर्गत सभी आयुर्वेद चिकित्साधिकारी के पदों का वेतनमान एलोपैथी के समकक्ष २२००-४००० कर दिया गया है। इन्हें भी वे सारे भत्ते और सुविधायें दी जा रही हैं जो एलोपैथी वालों को मिलते हैं। इनमें स्नातकोत्तर भत्ता, पुस्तक भत्ता, यात्रा भत्ता, आदि शामिल हैं।

निदेशक आयुर्वेद एवं सिद्ध की केन्द्रीय अनुसंधान परिषद्, निदेशक, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर आदि महत्वपूर्ण पदों के वेतनमान को भी वर्तमान ४५०० – ५७०० से बढ़ाकर ५९००–६७०० कर दिया जाय, यह अनुमोदित है और शीघ्र इसके कार्यान्वयन की आशा है।

राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ की स्थापना श्री त्रिगुणा जी की एक नवीन उपलब्धि है। आयुर्वेद में गुरुपरम्परागत शिक्षा का उच्च स्तर पर संचालन और आयुर्वेद के विभिन्न पक्षों पर कार्य करने वालों की योग्यता का मूल्यॉंकन आदि इसके महत्वपूर्ण कार्य होगें। इस संस्था का निबन्धन तो प्रायः तीन वर्षों पूर्व ही हो गया था। परन्तु अभी हाल में इसके शासी निकाय की बैठक और क्रियाकलापों के निर्धारण का निश्चय हुआ है। भारत सरकार, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने इसके लिये अलग से बजट निर्धारित किया है। देश विदेश में आयुर्वेद की गौरवमयी परम्परा को आगे बढ़ाने में अहर्निश प्रयत्नशील पीयूषपाणि आयुर्वेद चिकित्सक एवं विद्वान् आचार्य बृहस्पति देव त्रिगुणा जी को इस विद्यापीठ के शासी निकाय का अध्यक्ष नियुक्त कर भारत सरकार ने इस विद्यापीठ के भविष्य को सुनिश्चित कर दिया है। आदरणीय त्रिगुणाजी के नेतृत्व में यह संस्था आयुर्वेद की एक सर्वमान्य और अत्युपयोगी शीर्षसंस्था बनेगी, इसका विश्वास है।

नाड़ी परीक्षा की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि और श्री त्रिगुणा जी

डा. विवेकानंद पाण्डेय
निदेशक,
केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद,
एस-१० ग्रीन पार्क एक्स. मार्किट,
नई दिल्ली-११००१६

डा. कृष्ण दत्त शर्मा,
अनुसंधान अधिकारी (आयु.)
प्रलेख एवं प्रकाशन प्रभाग,
डी-५ ग्रीन पार्क,
नई दिल्ली-११००१६

विद्वद्श्रेष्ठ, नाड़ी विशेषज्ञ, वैद्यप्रवर आचार्य बृहस्पतिदेव त्रिगुणा जी के प्रति मै अपना हार्दिक सम्मान एवं स्नेह प्रकट करते हुए अभिनंदन करता हूँ। विगत पंद्रह वर्षों से आपसे मेरी समीपता है। उस समय सराय काले खां जैसे निजामुद्दीन के छोटे से गांव के वातावरण में बैठकर एक साधारण आयुर्वेद चिकित्सक के रूप में अपनी निष्ठा, साधना एवं तपस्या के बल पर आयुर्वेद के निदान चिकित्सा संबन्धी जटिल गुत्थियों को व्यावहारिक पक्ष में समझने का प्रयास किया तथा योगसाधना की तरह नाड़ी का अभ्यास करके विशेषज्ञता प्राप्त की है। आपकी ज्ञान पिपासु प्रवृति, सतत कार्य तत्परता एवं पीयूषपाणि चिकित्सक की गुणावलियों को देखकर राजधानी के छोटे से व्यक्ति से लेकर बड़े-बड़े धनीमानी परिवार तथा राजनेता भी आकृष्ट हुए एवं संपूर्ण भारत से तथा अब तो विदेशों से भी आपसे चिकित्सा परामर्श हेतु काफी लोग आते हैं। आयुर्वेद की इस यशस्वी प्रतिभा ने जनमानस को आकृष्ट किया। आयुर्वेद के चिकित्सक एवं वैज्ञानिक तथा आधुनिक चिकित्सा के विद्वान् भी आपके प्रति सम्मान रखते हैं। भारत के राष्ट्रपति के मानद चिकित्सक के रूप में भी आप वर्षों से कार्यरत हैं। इसके अतिरिक्त अखिल-भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अनेक वर्षों तक आप अध्यक्ष रहकर वैद्यसमाज को प्रेरणा एवं स्फूर्ति प्रदान करते रहे हैं।

आपके बहुआयामी प्रयासों का मूल्यांकन करते हुए भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने आपको केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद की वैज्ञानिक सलाहकार समिति एवं शासी निकाय के सदस्य के रूप में चुना। अनेक वैज्ञानिक गोष्ठियों में आपसे संपर्क हुआ तथा चर्चा में आपके अनुभवों से अनेक शोधपूर्ण सूत्रों का बोध हुआ। जैसे उच्चरक्तचाप के संदर्भ में व्यान बलवृद्धि की उपादेयता, के सिद्धांत पर गवेषणात्मक लेख एक नये चिन्तन का सूत्रपात करते हैं। उनके अभिनन्दन ग्रंथ में उनके प्रिय विषय नाड़ी परीक्षा पर यह लेख लिखकर अपनी श्रद्धा की अभिव्यक्ति मानता हूँ।

नाड़ी परीक्षा आयुर्वेद की सूक्ष्म एवं गहनतम वैज्ञानिक पद्धति है। यद्यपि दुरूह एवं कठिन साधना से उपलब्ध होने वाली तथा कुशाग्र बुद्धियुक्त निष्णात चिकित्सक एवं वैज्ञानिक के लिये ही बोधगम्य है तथापि सामान्य चिकित्सक भी अभ्यास द्वारा दोषों के तारतम्य का बोध करके चिकित्सा में सौकर्य प्राप्त कर सकते हैं। नाड़ी विद्या इतना गूढ़ विषय है कि चिकित्सा विज्ञान नें समर्पित संपूर्ण जीवन की प्रक्रिया युक्त विद्वान् चिकित्सक इसके गांभीर्य में अवतरित होकर चमत्कारिक सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

ऐतिहासिक सिंहावलोकनः-नाड़ी विद्या का सर्वप्रथम आविष्कारक कौन है इसका ठीक-ठीक परिज्ञान करना कठिन कार्य है तथापि शास्त्रानुशीलन से इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यह विद्या अत्यन्त प्राचीन थी तथा वैदिक काल में भी चिकित्सकों को इसका परिज्ञान था। भारतीय साहित्य के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में भी इसका सूत्र उपलब्ध होता है। किन्तु विस्तृत विवरण नहीं मिलता। संहिता कालीन ग्रंथो में भी नाड़ी परीक्षा के प्रचलन का प्रभाव दृष्टिगत नहीं होता किन्तु सूत्र रूप में इसका संकेत अवश्य मिलता है। चरक-सुश्रुत आदि संहिता ग्रंथो में त्रिविध-षड्विध एवं दशविध आतुर परीक्ष्य भावों का वर्णन मिलता है। महर्षि चरक-"दर्शन-स्पर्शन-प्रश्नैः परीक्षेताथ रोगिणम्" के अनुसार स्पर्श परीक्षा में ही नाड़ी परीक्षा का समावेश हो जाता है। आचार्य सुश्रुत ने इस संबन्ध में उल्लेख किया है कि इनके अतिरिक्त पंचेन्द्रिय एवं प्रश्नपरीक्षा भी अनिवार्य है।

१. इयमस्य धम्यते नाड़ी (ऋग्वेद १०-१३५-७)

२. आतुर गृहमभिगम्योपविश्यातुरमभिपश्येत् स्पृशेत् पृच्छेच्च।
त्रिभिरेतैर्विज्ञानोपायै रोगाः प्रायशो वेदितव्या इत्येके।

ततु न सम्यक् षड् विधोहि रोगाणां विज्ञानोपायः तद्यथा पंचभिः श्रोत्रादिभिः प्रश्नेन चेति सु.सू. १०

आचार्य चरक ने इन्द्रिय स्थान में आयुप्रमाण ज्ञान के लिए स्पर्श परीक्षा की प्रधानता बताई है। इसमें समग्र देह के स्पर्श का निर्देश है तथा विशेष रूप से यह देखना है कि मृत्यु की ओर उन्मुख व्यक्ति में सर्वत्र स्पन्दमान प्रदेशों का स्पंदित न होना मुख्य लक्षण बताया है। अतः सर्वदा स्पन्दमान देहांगों अवयवों तथा प्रदेशों का उन्हें सम्यक् बोध था एवं स्पर्श परीक्षा की महत्ता का उन्होने आयु अथवा जीवन के अस्तित्व परिज्ञान हेतु प्रयोग किया था।

अरिष्ट लक्षणों की अवस्था में व्यक्ति जब मृतप्राय हो जाता है तो वह जीवित है या मृत है इसका ठीक-ठीक परिज्ञान करने हेतु दोनों मन्याओं में स्पन्दन क्रिया स्पर्शलभ्य यदि न हो तो गतायु मानना चाहिए। इस प्रकार नाडी अवबोधक संदर्भ इतस्ततः संहिता ग्रंथो में उपलब्ध होते हैं किन्तु नाड़ी द्वारा रोगी परीक्षा का अधिक प्रचलन नहीं था।

शार्ङ्गधरः- तेरहवीं शताब्दी के आचार्य शार्ङ्गधर ने रोगनिदान की दृष्टि से नाड़ी परीक्षा का विधिवत् विवरण दिया है। इसमें साध्यासाध्यता एवं अरिष्ट लक्षणों के साथ-साथ स्वस्थ एवं अस्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी परीक्षा एवं दूतपरीक्षा आदि का स्पष्ट संकेत दिया है जिससे रोगनिदान में सुकरता के साथ-साथ रोग साध्य है या नहीं, रोगी की आयु कितनी शेष है, रोगी का संदेशवाहक (दूत) किस भाव एवं स्वरूप में आया है उससे भी साध्यासाध्यता एवं मारकता की सूचना मिलती है तथा स्वप्न के भी विभिन्न पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किया गया है।

१. स्पर्श प्राधान्येनैवातुरस्यायुषः प्रमाणावशेषं जिज्ञासुः प्रकृतिस्थेन पाणिना शरीरमस्य केवलं स्पृशेत्, परिमर्शयेद्वाऽन्येन।

परिमृशतातु खलु आतुरशरीरमिमे भावास्तत्रतत्रावबोद्धव्या भवन्ति ।

तद्यथाः- सततं स्पन्दमानानां शरीरदेशानामस्पन्दनम्। च.इ. ३/४

तस्यचेत् मन्ये परिमृश्यमाने न स्पन्देयातां परासुरिति विद्यात्। च. इ. ३/६

आचार्य शार्ङ्गधर के समय में नाड़ी विज्ञान अपनी उँचाई पर था । यद्यपि नाड़ी संख्या का विवरण इन्होने नहीं दिया है किन्तु उसकी विभिन्न गति,आयति, स्थान, तथा अवस्थिति के स्वरूप का सूक्ष्म अध्ययन करके चिकित्सा विज्ञान की सफलँता में चमत्कारिक उपलब्धियां प्रस्तुत की हैं तथा दोषों की सूक्ष्मतम अवस्था का परिज्ञानकर निदान के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया है ।

मध्यकाल में रावण-कणाद-वसवराजीय ग्रंथों में नाड़ी विज्ञान का विधिवत् उल्लेख मिलता है । आचार्य सत्यदेव वशिष्ठ के शोध ग्रंथ 'नाड़ी तत्व दर्शनम्' के संपादकीय में यह सूचित किया है कि मद्रास के राजकीय पुस्तकालय में २७ श्लोकों की अश्विनीकुमार कृत नाड़ी परीक्षा नामक पुस्तक मिलती है । इसके अतिरिक्त योगरत्नाकर, रसरत्नसमुच्चय भावप्रकाश, माधव चिकित्सा आदि संग्रह ग्रंथों में नाड़ी परीक्षा का विवरण उपलब्ध होता है । रावण आदि से पूर्व, आचार्य नन्दी ने इस विज्ञान का आविष्कार किया था । वह नन्दी शिवगण है या अन्य यह कहना कठिन है । रसरत्नसमुच्चय में शिव को आयुर्वेद का प्रवर्तक लिखा है

कामशास्त्र के आचार्य भी एक नंदी हुए हैं । संभवतः वे ही नाड़ी विज्ञान के भी आचार्य रहे होंगे । लिंग पुराण के अनुसार भी नंदी को अनेक विद्याओं का पारंगत बताया है । श्री केदारनाथ शर्मा सारस्वत् ने 'नाड़ीतत्वदर्शनम्' के संपादकीय में उल्लेख किया है कि रावण लंकापति नहीं अपितु कोई अन्य वेदशास्त्र का विद्वान रहा होगा । इनके अनुसार नंदी- रावण आदि दाक्षिणात्य विद्वान विक्रम की चतुर्थ अथवा पंचम शताब्दी में हुए हैं । वसवराज भी दाक्षिणात्य ही थे । अतः यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि भारत में प्राचीनकाल से रोग निदान की दृष्टि से तथा साध्यासाध्य-अरिष्ट लक्षण-मुमूर्षु मृत जीवित आदि की परीक्षा दोषों के तारतम्य एवं विभिन्न रोगों की अवस्थाओं तथा लक्षणों का परिज्ञान-नाड़ी परीक्षा द्वारा किया जाता था ।

१. नाभियंत्रमिदं प्रोक्तं नन्दिना सर्वदर्शिना । र.र.समु.

२. लिङ्गपुराण- अ. ४२

महत्ताः- मध्यकालीन युग में नाड़ी विज्ञान के बिना चिकित्सक को महत्वहीन माना जाता था जैसे - शास्त्र के अभिप्राय को जाने बिना किया हुआ अध्ययन, लवण के बिना भोजन,पतिहीन नारी एवं नाड़ीज्ञान के बिना वैद्य निरर्थक माने जाते थे । १

जिस प्रकार वीणा के तार सभी राग तरंगों को प्रगट करते हैं उसी प्रकार से नाड़ी परीक्षा द्वारा सभी रोगों का निदान हो जाता है ।२ नाड़ी ज्ञान का अभ्यास चिकित्सक को योगाभ्यास की तरह करना चाहिए इसके अतिरिक्त करोड़ों उपाय करने पर भी इसका ज्ञान संभव नही है ।३ योग्य गुरु का उपदेश लेकर देवताओं की कृपा से तथा पुण्यकर्म के द्वारा ही इस साधना में सफलता मिल सकती है

नाड़ी क्या है? जो सर्वदा गतिमान रहते हुए नाली की तरह बहती है उसे नाड़ी कहा जाता है। इसके अतिमात्र गमन का परिचय देते हुए गति की निरंतरता का बोध कराया है।

१. बोधहीनं यथाशास्त्रं भोजनं लवणं बिना ।
पतिहीना यथा नारी तथा नाड़ी बिना भिषक् ।। नाड़ी दर्पण १/१०

२. यथावीणागता तंत्री सर्वान्रागान् प्रभाषते ।
तथा हस्तगतानाड़ी सर्वान् रोगान् प्रकाशते ।। नाड़ीदर्पण १/१५

३. नाड़ीगतिमिमांज्ञातुं योगाभ्यास वदेकतः ।
शक्यते नान्यथा वैद्यः उपायैः कोटिशैरपि ।। नाड़ी दर्पण १/ २५

४. सद्गुरोरुपदेशाञ्च देवतानां प्रसादतः ।
नाड़ी परिचयः सम्यक् प्रायः पुण्येन जायते ।। नाड़ी दर्पण १/ २१

५. तस्यातिमात्र गमनात् गतिनित्यतश्च ।
नाड़ी वद् यद् बहति तेन मता तु नाड़ी ।। सु. नि. १०

पर्याय–हिंस्त्रा, स्नायु, वसा, नाड़ी,धमनी, धरा, तंतुकी, जीवितज्ञा, शिरा।

नाड़ी दर्पण में यह भी इंगित किया है कि 'भावीरोगविबोधाय सुस्थनाड़ी परीक्षणम्' भविष्य में आने वाले रोग की जानकारी प्राप्त करने के लिये स्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी की सूक्ष्म परीक्षा की जाती है।

नाड़ी परीक्षा के स्थान

१. बहिर्प्रकोष्ठगा नाड़ी (धमनी)

२. पश्चिम जंघिका धमनी

३. महामातृका धमनी

४. बहिर्मातृका धमनी की नासा मूलगा मौखिकी शाखा

५. उत्तान शंखिका की गंडीय शाखा

६. बहिर्मातृका धमनी की पश्चिम मूलगा शाखा

७. बहिर्मातृका धमनी की पश्चिम रासनी शाखा

८. अंतः शिश्निका या इसके स्थान पर बहिः श्रोणिगा धमनी उभय पार्श्वों की संख्या= १६

१. नाड़ीदर्पण १/ ३६

२. पाणिपात् कंठनासाक्षि कर्ण जिह्वा च भेदगा !
वामदक्षिणतो लक्ष्याः षोडश प्राण प्रबोधकाः । वसवराजीयम्

३. अंगुष्ठ मूल संस्था तु विशेषेण परीक्ष्यते (रावण)

योग्यायोग्य विचारः- नाड़ी परीक्षा की विधि का प्रयोग कहां उपयुक्त है तथा कहां अनुपयुक्त है इसका विचार चिकित्सक को अवश्य कर लेना चाहिए अन्यथा भ्रम उत्पन्न हो सकता है जिसमें निदान दुष्कर हो जाता है।

योग्यरोगीः- मूत्र एवं मल का त्याग करके मानसिक उद्वेग रहित होकर सुखपूर्वक बैठा हो तथा हाथ जानु के अंदर होने चाहिए। १

अयोग्य रोगीः- धूर्त, मार्गगमन से थका हुआ, अविश्वस्त, वैद्य की परीक्षा करने आया, अज्ञात कुलशील, मनोविकार, निद्रातंद्रा, क्षुधा-पिपासा आदि से पीड़ित व्यक्ति नाड़ी परीक्षा के लिए अनुपयुक्त है।

नाड़ी परीक्षा का उपयुक्त कालः- नाड़ी परीक्षा के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय प्रातःकाल का है। इसमें प्रभात काल प्रातः ५-६ बजे से प्रारम्भ करके ९.०० बजे तक लिया जा सकता है। शौचादि से निवृत्त होकर प्रातः शांत चित्त से सुखपूर्वक बैठकर नाड़ी परीक्षा की जानी चाहिए। प्रातःकाल में शरीर एवंमन के क्षोभ की अवस्था नहीं होती। चित्त शांत होता है। ऐसी स्थिति मे रोग की अभिव्यक्ति सम्यक् होती है। चिकित्सक भी शांत सचेष्ट तथा स्वस्थ एवं स्वच्छ मष्तिष्क युक्त होता है। किन्तु आपत्ति काल में तो नाड़ी कभी भी देखी जा सकती है।

१. त्यक्त मूत्र पुरीषस्य सुखासीनस्य रोगिणः।
अंतर्जानु करस्यापि नाड़ीसम्यक् प्रबुध्यते ।। नाड़ीदर्पण

२. धूर्त मार्गस्थ विश्वासरहिताज्ञातगोत्रिणाम्।
बिनाभिसंशनं वैद्यो नाड़ी द्रष्टा च किल्विषी ।। नाड़ीदर्पण

३. प्रातः कृतसमाचारः कृताचार परिग्रहः।
सुखासीनं परीक्षार्थमुपाचरेत् ।। कणाद

४. नाड़ी प्रभात समये प्रहरे परीक्ष्या। योगरत्नाकर

प्रातःकाल में नाड़ी स्निग्ध होती है मध्यान्ह में उष्ण होती है तथा सांयकाल में द्रुतगतियुक्त एवं रात्रि में विश्रामयुक्त अवस्था में होती है। शरीर एवं मन की किसी भी चेष्टा का नाड़ी पर प्रभाव पड़ता है ऐसी स्थिति में रोग की जानकारी ठीक प्रकार से नहीं हो सकती अतः कार्यो के प्रभाव से नाड़ी का मुक्त रहना आवश्यक है। १

प्रमुख रूप से निम्न अवस्थाओं में नाड़ी ज्ञान सम्यक् नहीं हो पाता २ :-

१. स्नान के बाद
२. भोजन के बाद
३. मैथुन के बाद
४. निद्रितावस्था में
५. उपवास काल में
६. तृष्णा में
७. रोते समय
८. भूतावेश

०९. मद्यपान किए हुए　　　　१०. अपस्मार

११. क्लांत देह में　　　　१२. अभ्यंग किये हुए

१३. पवनाभ्यास साधक, स्वरसाधक, प्राणायाम में तथा पवनाभ्यासयुक्त में [३]

१. प्रातःस्निग्धमयी नाड़ी मध्याह्नेचोष्णता भवेत्।
सायाह्ने धावमाना च रात्रौ वेगविवर्जिता ।। कणाद

२. भुक्तस्य सद्यः स्नातस्य निद्रितस्योपवासिनः ।
व्यवायश्रांत देहस्य भूतावेशिनि रोदने ।।

सुन्दरीणांच संयोगे मद्यपानेमतिभ्रमे ।
अपस्मारे श्रांतदेहे नाड़ी सम्यक् न बुध्यते ।। वसवराजीयम्

३. पवनाभ्यास साधके । वसवराजीयम्

नाड़ी संख्या एवं भेद कुल नाड़ी संख्या-

३-१/२ करोड़

७२ हजार स्थूल नाड़ी

७०० नाड़ियाँ सूक्ष्म छिद्र वाली

२४ स्पष्ट नाड़ियां

परीक्षणीय नाड़ी

एक दक्षिण कर चरण मता

१. शत सप्तानां मध्ये चतुराधिकाविंशतिः स्फुटास्तासाम्।
एका परीक्षणीया या दक्षिण करचरण विन्यति ।। (कणाद) नाड़ी विज्ञान श्लोक ७

नाड़ी ज्ञानः- नाड़ी ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में स्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी का ज्ञान चिकित्सक के लिये आवश्यक है । इसके लिए अनेक स्वस्थ व्यक्तियों की नाड़ी का विधिवत् परीक्षण करके अभ्यास करना चाहिए । विभिन्न काल एवं विभिन्न परिस्थितियों में स्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी परीक्षा करने से चिकित्सक नाड़ी विशेषज्ञ बन सकता है ।[१] स्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी स्थिर एवं एक गति से चलती है । इसकी उपमा गंडूपद कृमि (केचुए) से दी है । इसकी गति सर्वदा एक सी रहती है न तो अधिक तीव्र होती है और न ही मन्द होती है, सर्वदा एक सी गति में वहन करती है । यह किसी भी विजातीय पदार्थ-आम, मल इत्यादि से रहित होकर स्वच्छ रक्त का वहन करती है ।[२]

यदि अंगुष्ठ के ऊपर मणिबंध में अंगुष्ठमूलीया धमनी में नाड़ी एक गति से वहन करती है तो उसे निर्दोष नाड़ी कहा जाता है ।[३] वसवराजीय में स्वस्थ नाड़ी की संज्ञा से भी व्यवहृत किया गया है । नाड़ी का सम्यक् स्पष्ट होना, निर्मलता (आम एवं मल से रहित) अपने प्राकृत स्थान (अंगुष्ठ मूल, गुल्फ नासोपान्त, कर्णमूल, ग्रीवा वंक्षण आदि नाड़ियों की अपने स्थान पर अभिव्यक्ति एवं

चंचलता तथा मंदता दोष से रहित होना शुभ या स्वस्थ नाड़ी के लक्षण बताये गए हैं।

१. स्पर्शनादिरभ्यासात् नाड़ीज्ञो जायते भिषक्।
तस्मात् परामृशेन्नाड़ी स्वस्थानामपि देहिनाम्।। (भूधर)

२. भूलता गमन प्रत्या स्वच्छा स्वास्थ्यमयी सिरा।
सुस्थितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती भवेत्।। (रावण)

३. अंगुष्ठादूर्ध्व संलग्ना समा च वहते यदि।
निर्दोषा सा च विज्ञेया नाड़ी लक्षण कोविदैः।। (रावण)

४. सुव्यक्ता निर्मलाचैव स्वस्थानस्थितिरेव च।
अचांचल्यममन्दत्वं सर्वासां शुभ लक्षणम्।। (वसवराजीयम्)

नाड़ी की मूलशक्तिः- हृदय की गति स्वतंत्र रूप से स्वतः प्रचलित होते हुए भी उसकी मूलशक्ति सुषुम्ना शीर्ष के आभ्यंतर भाग में अवस्थित है क्योंकि यही सुषुम्ना नाड़ी की जड़ है। यही नाड़ी हृदय को सर्वदा गतिशील रखने के लिए वात शक्ति प्रेरित करती है। प्राणदा नाड़ी या वागस नर्व का मूल भी सुषुम्ना शीर्ष के आवरण कूर्म (पोन्स) में स्थित चतुर्थ गुहा में है। अतः हृदय को वातशक्ति प्रेरित करने में इस नाड़ी की मुख्य भूमिका है।

सुषुम्ना नाड़ीहृदय को गतिशील बनाती है। इसी से संकोच और विकास होता है। शरीर की कोई भी गतिविधि वातनाड़ियो के बिना नहीं होती अतः नाड़ी स्फुरण का कारण वात है। यह धारणा गलत है कि नाड़ी में रक्त की गति देखी जाती है। वास्तविकता तो यह है कि उसमें वात से प्रवाहित रक्त की गति देखी जाती है।

१. संकोचने बहिर्याति वायुरन्तर्विकासतः।
ततो नाड्यश्चलन्त्यसृग्धारायाः स्फुरणं ततः।। नाड़ी ज्ञान।।

दोष वैषम्य का नाड़ी गति पर प्रभाव

हाथ के अंगूठे के मूल (मणिबंध) में विद्यमान धमनी जीवन की साक्षी होती है। नाड़ी विशेषज्ञ चिकित्सक उसी की चेष्टा से स्वास्थ्य एवं रुग्णता का बोध करते हैं। दोष वैषम्य/प्रकोप अथवा दुष्टि की अवस्थामें उत्पन्न नाड़ी गति का विभिन्न पक्षियों एवं जीव जंतुओं की गमन क्रिया के सादृश्य का उदाहरण चिकित्सक को यथावत् बोध कराने एवं अभ्यास हेतु दिशा निर्देश के रूप में है।

क्र.सं.	दोष कोप/ दुष्टि	नाड़ी गति
१.	वात जलौका,	सर्प
२.	पित्त कुलिंग,	काक, मंडूक
३.	कफ हंस,	पारावत
४.	सन्निपात लाव,	तित्तिर, वार्ताक
५.	द्विदोषज कदाचित्,	मंद कदाचित् वेगवती

दोष वैषम्य की अवस्था के सम्यक् बोध हेतु उपरोक्त प्राणियों की गमन क्रिया का विधिवत् अध्ययन करके निश्चित् मान दंड बनाये जाये ताकि छात्रों एवं अनुसंधाताओं को उनका निश्चित् स्वरूप में बोध कराया जा सके तभी आगे का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।

१. करस्यांगुष्ठ मूले या धमनी जीव साक्षिणी।
तच्चेष्टया सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पंडितैः ।। शार्ङ्गधर ३/१

२. शार्ङ्गधर संहिता

नाड़ी की विभिन्न अनियमिततताओं का प्रभाव

क्र.सं.	नाड़ी गति प्रकार	प्रभाव
१.	स्थानच्युत	मृत्यु
२.	रुक रुक कर चलना	मृत्यु
३.	अतिक्षीण एवं शीत	मृत्यु
४.	उष्ण-वेगवती	ज्वर
५.	काम (स्त्रीप्रसंग)	वेगवाही
६.	क्रोध	वेगवाही
७.	चिन्ता	क्षीण
८.	भय	क्षीण
९.	मंदाग्नि	मंदतरा
१०.	धातुक्षय	मंदतरा
११.	असृक्पूर्णा	कोष्णा
१२.	सामावस्था	गुर्वी
१३.	दीप्ताग्नि	लघु, वेगवती
१४.	क्षुधित	अस्थिर
१५.	भोजनोत्तर	स्थिर
१६.	स्वस्थ में	स्थिर, बलवान

SOME OF THE IMPORTANT TYPES OF THE PULSE IN MODERN MEDICINES.

ARTERIAL PULLSE

1. Radar Pulse
2. Light Pulse
3. Abdominal Pulse
4. Abrupt Pulse
5. Allorrhythmic Pulse
6. Alternating Pulse
7. Anacrotic Pulse
8. Anacrotic Pulse
9. Arachnoid Pulse
10. Auriculovenous Pulse
11. Bigeminal Pulse
12. Bisferiens Pulse
13. Brachial Pulse
14. Cappillary Pulse
15. Caprizant Pulse
16. Carotic Pulse
17. Catacrotic Pulse
18. Catadicrotic Pulse
19. Collapsing Pulse
20. Cordy Pulse
21. Coupled Pulse
22. Decurate Pulse
23. Deficient Pulse
24. Dicrotic Pulse
25. Digitalate Pulse
26. Dropped beat Pulse
27. Entopic Pulse
28. Epiggastric Pulse
29. Febrile Pulse
30. Filiform Pulse
31. Full Pulse
32. Funic Pulse
33. Hard Pulse
34. Hepatic Pulse
35. Hyperdicrotic Pulse
36. Intermittent Pulse/Irregular Pulse
37. Jugular Pulse
38. Mouse tail Pulse
39. Negative Venous Pulse
40. Normal Venous Pulse
41. Paradoxical Pulse
42. Positive Venous
43. Quadrigeminal Pulse
44. Quick rising Pulse
45. Radial Pulse
46. Respiratory Pulse
47. Retroslernal Pulse
48. Running Pulse
49. Sixty Six Pulse
50. Thready Pulse
51. Trigeminal Pulse
52. Unequal Pulse
54. Vagus Pulse
55. Venous Pulse
56. Ventricular Venous Pulse

१. शार्ङ्गधर संहिता म. ३

आधुनिक मतानुसार नाड़ी परीक्षा में नाड़ी की विभिन्न गतियां

क्र.सं.	नाड़ी गति	अंग्रेजी नाम
१.	वेगवती	Frequent
२.	मंदचारिणी	In Freqent
३.	समसंख्यक	Regular pulse
४.	विषम संख्यक	Irregular
५.	हृदयरोग ज्ञापिका	Intermittent
६.	रक्तपूर्णा	Full or Large
७.	रिक्त नाड़ी	Small
८.	क्षीण नाड़ी	Thready pulse
९.	कठिन गति नाड़ी	Hard pulse
१०.	मृदु नाड़ी	Soft pulse
११.	शीघ्रगा नाड़ी	Quick pulse
१२.	मंदगति नाड़ी	Slow

१. नाड़ीविज्ञानम् (कणादकृत) व्याख्याकार डा. इन्द्रदेव त्रिपाठी

२. परिशिष्ट -२चोखम्बा ओरियन्टालिया तृ. सं) १९८७

आधुनिक मतानुसार स्वस्थ नाड़ी की प्रतिमिनट संख्या

क्र.सं.	स्वस्थ अवस्था	प्रति मिनट संख्या
१.	सद्यः जात शिशु	१४०
२.	क्षीरपायी बालक	१२०-१३०
३.	क्षीरान्न भोजी बालक (५-६ वर्ष)	१००
४.	१५ वर्ष का नवयुवक	९०
५.	३५ वर्ष का युवक	७०-७५
६.	३५-५० वर्ष का प्रौढ	७०
७.	अतिवृद्ध	७५-८०
८.	नारी कन्या	१० अधिक
९.	गर्भस्थ शिशु (श्रवण यंत्र से)	१२०

नव्य मत से नाड़ी परीक्षा विधान :-

आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से नाड़ी परीक्षा में निम्न बातें ध्यान में रखी जाती है।

१. गति (रेट) स्वस्थ व्यक्ति की नाड़ी संख्या प्रतिमिनट तथा रोगावस्था में नाड़ी गति की संख्या अंकित की जाती है। पैत्तिक ज्वर में नाड़ी गति प्रति डिग्री ताप पर ८ की दर से बढती है। आंत्रिक ज्वर, विषमज्वर, शीर्ष सौषुम्निक ज्वर, दंडक ज्वर तथा वातश्लेष्मज्वरों में उपरोक्त अनुपात से दर कम हो जाती है। स्वस्थ व्यक्ति के व्यायाम करने पर नाड़ी गति बढ़ती है। लेटने पर खड़े होने की अपेक्षा प्रति मिनट आठ कम होती है। निम्न रक्त भार में श्रम के बाद भी नाड़ी गति अपेक्षाकृत कम बढ़ती है। राजयक्ष्मा में भी गति मंद होती है।

यूनानी मत से नाड़ी स्वरूप

क्र.सं.	नाड़ी गति नाम	सादृश्य
१.	गिजाली	मृग के समान उछलती हुई पित्ताधिक्य (सफरा) से)
२.	मोजी (तरंग)	जलतरंग के समान टेढ़ी मेढ़ी वाताधिक्य (सौदा)
३.	दूदी (कृमि)	कीड़े के समान मंद गति कफ (बलगम)
४.	मिंशारी (आरा)	लकड़ी पर आरा चलाने की तरह
५.	जनबुलफार (चूहे की पूँछ)	चूहे की पूँछ की तरह गति वात पित्त प्रकोप से
६.	नुम्ली (मोर-चीटी)	मृत्यु सूचक
७.	मतली (सलाई)	दोनो ओर पतली मध्य में मोटी (दुर्बलता सूचक)
८.	मतरकी (हथौड़)	पित्तवर्द्धक दाह में हथौड़े की चोट की तरह प्रतीत
९.	जुल्फितरत	चलते-चलते रुकना (दुर्बलता-शोथ)
१०.	वाक अफ्लिवस्त	स्पन्दन भय से पूर्व फड़कना (श्वासाधिक्य)

नाड़ी विज्ञानम् परिशिष्ट । (कणाद)

वैद्य श्री इन्द्र देव त्रिपाठी

रोगों का नाड़ी पर प्रभाव

क्र.सं.	रोग	नाड़ी प्रभाव
१.	ज्वर पूर्व रूप	मंडूकवत् प्लवन् एवंमंथरगति (कणाद)
२.	सामान्य ज्वर	उष्णा वेगवती (कणाद)
३.	वातज्वर	वक्र-चंचल, शीत स्पर्श (रावण)
४.	पित्तज्वर	द्रुत, सरल-दीर्घ-शीघ्र (कणाद)
५.	श्लेष्मज्वर	मंद-सुस्थिर-शीत-पिच्छिल (रावण)

६.	भूतज्वर	अतिवेगवती नदीवत् (कणाद) कामाद् वेगवती
७.	कामज्वर	ससंगा कामजे ज्वरे (कणाद) कामाद् वेगवती
८.	क्रोध ज्वर	संगयुक्ता (कणाद) क्रोधात् वेगवती (कणाद) क्षीणगति (रावण)
९.	अभिशापज्वर	विषम (कदाचित् मंद क्वचित् तीव्र)
१०.	विषमज्वर	पूर्वे मंदा तदनन्तर प्रचण्डा (रावण)
११.	ज्वरे दधि भोजनेन	उष्णत्वं विषमावेगा (कणाद) ज्वरिणं दधि भोजनात्
१२.	ज्वरे कांजि, अम्ल भोजन	मंथरगति (कणाद)
१३.	ज्वरे मैथुन	क्षीण-मंद विकल (कणाद)
१४.	मंदाग्नि	अत्यन्त मंद (कणाद)
१५.	अतिसार	मंद (रावण)
१६.	आमातिसार	पृथुला (चपटी), जड़वत् (कणाद)
१७.	ग्रहणी	मुमुर्षु सर्पवत् मंदवेग (रावण)

१. उद्वेग क्रोध कामेषु भय चिन्ता श्रमेषु च ।
भवेत् क्षीणा गतिर्नाड़ी ज्ञातव्या वैद्यसत्तमैः ।। (रावण)

१८.	अर्श	स्थिर, वक्र, क्वचित् मंद क्वचित् भृजु (रावण)
१९.	रक्तार्श, रक्तक्षये	मन्दतरा (कणाद)
२०.	अजीर्ण	कठिना परितो जड़ाः (कणाद)
२१.	आमदोषे	गुर्वी सामा गरीयसी (कणाद)
२२.	पक्वाजीर्ण	पुष्टिहीन, मंद (कणाद)
२३.	मलाजीर्ण	समा सूक्ष्मा अतिअणुस्पन्दा (कणाद)
२४.	अजीर्ण मुक्तौ	प्रसन्ना, द्रुता शुद्धा-सरिता (कणाद)
२५.	दीप्ताग्नि	लघ्वी-वेगवती (कणाद)
२६.	विसूचिका	विसूच्यां दृश्यते नैव निजस्थानं विमुंचति (भूधर)
२७.	विलंबिका	विषम
२८.	कृमिरोगे	नानाधर्मवती (भूधर)
२९.	अरोचक	कृश, विशुद्ध, चलित-गंभीर, मंद (भूधर)
३०.	छर्दि	विमार्गगामी, परुष, ज्वरयुक्त उष्ण (भूधर)
३१.	तृष्णा	शुष्क, ज्वरयुक्त, विह्वलांगी (भूधर)

३२.	गुल्म	कम्पमान (कणाद)
३३.	आनाह	गरिष्ठ (कणाद)
३४.	उदावर्त	कष्टतर-कठोरगमन् (भूधर)
३५.	शूल	वक्र (कणाद)
३६.	अम्लपित्त	कुटिल-कंपयुक्त, स्थूल, पिच्छिल, मंदगामिनी (भूधर)
३७.	यकृत प्लीहावृद्धि	विशीर्ण-सूक्ष्म, शुष्क (भूधर)
३८.	जलोदर	पूर्ण स्थूल अत्यंत बलहीन, शीतल, कभी-कभी बलवान, बद्धगति, जलपूरितवत् विह्वलांगी (भूधर)
३९.	पांडु	चंचल, तीव्र, कभी स्पर्शगम्य, कभी अकस्मात् लुप्त (रावण)
४०.	कास	सूक्ष्म स्थिर-मंद (रावण)
४१.	श्वास	तीव्रगति, तमकश्वास की कफाधिक्य अवस्था में अत्यंत मंद (रावण)
४२.	राजयक्ष्मागजगामिनी (मंदगति)	(रावण)
४३.	हृद्रोग	कठिन, मथित, कृश, तीव्र एवं निम्नमध्य गामिनी(भूधर)
४४.	मूत्रकृच्छ	गरिष्ठ (कणाद)
४५.	प्रमेह	जड़ सूक्ष्म, मृदु, तृप्त (रावण), ग्रंथिरूपा-प्रतप्ता(कणाद)
४६.	उपदंश	कुटिल,विशीर्ण, पिच्छिल, विलुप्त, गंभीर (भूधर)
४७.	शूकदोष	बहुचंचल, निर्मल, पिच्छिल (भूधर)
४८.	प्रदर	क्षीण
४९.	सोम रोग	अतिक्षीण
५०.	अंत्रवृद्धि	स्फारयुक्त, मूल में टेढ़ी, स्थूल, अंकुरसदृश (भूधर)
५१.	मूर्च्छा विस्फारित-विशीर्ण	(भूधर)
५२.	अपस्मार क्षीण-द्रुतवाहिनी	(भूधर)
५३.	निद्रालु (मेदस्वी)	मंद-सरल गुरु (रावण)
५४.	निद्रित	बलवान स्फुरण (रावण)
५५.	पानात्यय विषम, कठिन, स्थूल	(भूधर)
५६.	मलबद्धता	विषम, कठिन,स्थूल (भूधर)

५७.	मदात्यय सूक्ष्म, कठिन,	परितोजड़ा (चारों तरफ से जड़) (रावण)
५८.	दाह	उष्ण, चंचल, वक्र,द्रुतगामी (भूधर)
५९.	उन्माद	उष्ण, वक्र, चंचल, द्रुत (भूधर)
६०.	वातरोग	वक्र, उष्ण,बलवान (भूधर)
६१.	ग्राक्षेप	स्थूल, वेगवती (भूधर)
६२.	ग्रपतंत्रक	वक्र, चंचल(भूधर)
६३.	दंडापतानक	गुरु,पिच्छिल (भूधर)
६४.	धनुस्तंभ	बलपूर्वक ऊपर तथा नीचे जाती है, गंभीर गति (भूधर)
६५.	ग्रंतरायाम	गंभीर, कृश) भूधर)
६६.	पक्षाघात	शुद्धा, पवनप्लुता (भूधर)
६७.	गृध्रसी	स्थूल, मंद वक्र (भूधर)
६८.	कोष्टुशीर्ष	गंभीर, मंद (भूधर)
६९.	खंज	मंद, विरोधिनी प्रायः (भूधर)
७०.	पंगु	निम्नगा, प्रायः गतिरोधिनी (भूधर)
७१.	पाददाह	उष्ण, वेगवती, द्रुत (भूधर)
७२.	ग्रवबाहुक	शुष्क, क्रूर, वक्र (भूधर)
७३.	मूकमिन्मिन गद्‌गद्	शुष्क द्रुत (भूधर)
७४.	खल्ली	स्थिर, निश्चल,स्थानच्युत (भूधर)
७५.	वातरक्त	स्थिर, निश्चल, कृश, क्रूर (भूधर)
७६.	उरुस्तंभ	विशीर्ण, मथित, पिच्छिल, वक्र, ग्रचंचल, मध्य में शीतला (भूधर)
७७.	ग्रामवात	स्फुटित, कंपयुक्त,गंभीर,मंद, पिच्छिल (भूधर)
७८.	शीतपित्त	गुरु, पिच्छिल, मूल से वेगवती, क्रूर, चंचल (भूधर)
७९.	श्लीपद	विरल (रुक-रुक के चलने वाली), स्थूल, चंचल, मूल से पिच्छिल, क्षतजरा (घायल-थकी सी), वक्र (भूधर)
८०.	कुष्ठ	कठिन, स्थिर, प्रवृत्तिहीन (रावण)
८१.	गलगंड	विशीर्ण, पिंडिल, विभिन्नगति, विचलित, कठिन, स्फुटांगी (भूधर)

८२.	गंडमाला	स्थूल, विलीन, परिप्लुत, कर्कश (भूधर)
८३.	अपची	स्थूल, विशीर्ण, पिच्छिल, कोमल, विह्वल (भूधर)
८४.	मेदोरोग	मंद, सरल, गुरू (कफवत्) (भूधर)
८५.	स्थौल्य	पिच्छिल, मंद

नाड़ीदर्शनः-

वैद्य श्री तारा शंकर मिश्र-वैद्य श्री मोतीलाल बनारसी दास-द्वि.ख. १९७०

नाड़ी परीक्षा के संबंध में उपलब्ध साहित्य यद्यपि पर्याप्त नहीं है तथापि ऐतिहासिक सूत्रों तथा मध्यवर्ती आचार्यों के द्वारा किये गये शोधपूर्ण अभ्यास एवं ग्रंथों के अनुभवों के आधार पर बहुत कुछ करने की प्रेरणा मिलती है।

विश्व की बदली हुई परिस्थितियों एवं वैज्ञानिक वर्ग तथा प्रबुद्ध वर्ग को ध्यान में रखते हुए आज इस बात की प्रबल आवश्यकता है कि आयुर्वेद के अनुभूत सूत्रों को वैज्ञानिक मापदंड प्रदान करके व्यापक स्वरूप में शोध एवं शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन करते हुए एक सुनिश्चित आयामों में प्रतिबद्ध करके वैज्ञानिक धरातल पर प्रस्तुत किया जाए तथा उनके आधार पर नई-नई विधाओं में सृजनात्मक कार्य द्वारा नई-नई उपलब्धियों के मार्ग-प्रशस्त किये जाने चाहिए। मापदंडो के आधार पर भिन्न-भिन्न यंत्रों का निर्माण किया जाय तथा उनका ज्ञान विद्यार्थियों एवं चिकित्सकों को प्रदान करके नैदानिक एवं चिकित्सा विधाओं में क्रांतिकारी प्रगति का सूत्रपात किया जा सकता है।

अनुसंधान के विभिन्न पहलुओं पर स्नातकोत्तर एवं पी.एच.डी. प्रशिक्षण संस्थानों में भी विधिवत् कार्य किए जाने की आवश्यकता है। तत्पश्चात् वैज्ञानिक समितियों के परामर्श के माध्यम से उन्हें अंतिम व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया जाना चाहिए तभी उन उपलब्धियों का व्यापक प्रयोग किया जा सकता है।

अंत में विद्वत् श्रेष्ठ आचार्य बृहस्पति देव त्रिगुणा जी को नमन करते हुए ईश्वर से यह प्रार्थना करता हूँ कि आप आयुर्वेद की यशोपताका भारत में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में विस्तृत करते रहें। आगे भी आप विभिन्न दुस्साध्य रोगों से पीड़ित विश्व की मानवजाति के कल्याण के लिये अपने चिकित्सकीय गुणों से सेवा करते रहेंगे तथा चिकित्सक एवं वैज्ञानिक समुदाय को भी अपने अनुभवों से प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे। ईश्वर आपको स्वस्थ एवं चिरायु करे ताकि आपकी योग्यता का अधिक से अधिक लाभ इस धरती के प्राणियों को उपलब्ध हो सके।

व्याधिक्षमत्व

डा. सी. पी. शुक्ल
भू. पू. डीन, गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी
जामनगर (सौराष्ट्र-गुजरात)

एड्स का पूरा स्वरुप है Aquired Immunity deficiency Syndrome अर्थात् बाह्यकारणों से उत्पन्न व्याधिक्षमत्व के ह्रास से उत्पन्न व्याधिसंकर। सिन्ड्रोम का अर्थ है रोगसमूह, व्याधिसंकर या यक्ष्मा। अर्थात् कोई निश्चित लक्षण वाले व्याधि नहीं परन्तु भिन्न भिन्न प्रकारके व्याधि। प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न प्रकार के व्याधि या लक्षण समूह उत्पन्न होता है जैसे कोई रोगी में जीर्णज्वर होगा। कोई रोगी में जीर्ण अतिसार या पाण्डु होगा। यक्ष्मा के दो अर्थ शास्त्र में बताया गया है

(१) विशिष्ट व्याधि :-

राजयक्ष्मा, शोष या क्षय और (२) रोग समूह अर्थात् अनेक व्याधि एक ही रोगी में उत्पन्न हो। इम्युनिटी का अर्थ है रोग प्रतीकार शक्ति जिसको व्याधिक्षमत्व, व्याध्युत्पादप्रतिबन्धकत्व, व्याधिबलविरोधित्व बल, प्रत्यनीकबल, विकारविघातभाव, प्रकृतिरक्षिणी आदि भी कहते हैं।

यहाँ रोग प्रतिकार शक्ति के संदर्भ में आयुर्वेद क्या उपदेश देता है यह बताने का प्रयत्न होगा ताकि इम्युनिटी डेफ्सीयन्सी का ख्याल आ सके।

"स्वस्थ" की सुश्रुत की व्याख्या तो प्रचलित है ही। परन्तु चरक में "स्वस्थ" शब्द की व्याख्या नहीं दी गई। चरक में "सममांसचय" शब्द का उपयोग किया है। यह व्याख्या इम्युनिटी समझने में उपयोगी होने से दी जाती है।

सममांसप्रमाणस्तु समसंहननो नरः। दृढेन्द्रियो विकाराणां बलेन नाभिभूयते।
क्षुत्पिपासातपसहः शीतव्यायामसंसहः। समपक्ता समजरः सममांसचयो मतः॥

(च.सू.२१-१८-१९)

उपर्युक्त व्याख्या सर्वांगपूर्ण है। इसमें विकाराणां बलेन न अभिभूयते अर्थात् रोग के बलसे हार नहीं जाता यह उपयोगी है। तात्पर्य यह है कि यह व्यक्ति विकार बलका प्रतिकार कर सकता है। एड्स नामक व्याधि में विकार के प्रतिकार करने की शक्ति किसी भी कारणसे नष्ट हो जाती है।

रोगप्रतिकार शक्ति बल पर आधारित है। महर्षि चरक ज्वरचिकित्सा में बलं ह्यलं निग्रहाय दोषाणाम् अर्थात् प्रकुपित दोषों के निग्रह के लिये शरीर में बल होना चाहिए यदि न्यून बल हो तो बढ़ाना चाहिए। यह बल तीन प्रकार के हैं (१) सहज (२) कालज और (३) युक्तिकृत (च.सू.११)। इनमें सहजवल जन्मजात होता है। इसकी न्यूनता में आदिबलप्रवृत या जन्मबल प्रवृत व्याधि होते हैं। जिसे अन्यत्र क्षेत्रज व्याधि भी कहा गया है। उदाहरणतया, अजा (बकरी) में राजयक्ष्माके प्रति सहज बल है। इसलिये राजयक्ष्मी को बंकरी का दूध घी, निवास एवं मांस देने का विधान है।

(१) यक्ष्मा रोगसमूहानाम् (मधुकोश)

यक्ष्म शब्देन राजयक्ष्मवदनेक रोगयुक्तत्वं विकाराणां दर्शयति। (चक्र०)

प्रत्यनीक बलक्षयात्॥

कालकृत बल २ प्रकार का है (१) ऋतुविभागज और (२) वयः कृत। ऋतुके अनुसार दोषों का संचय, प्रकोप और प्रशम होता है। दोष प्रकोप काल में तद्दोष जन्य व्याधि की उत्पत्ति या वृद्धि होती है जैसे आमवात प्रावृट् ऋतुमें बढ़ता है। प्रशमकालमें रोग स्वयं न्यून हो जाता है या शान्त हो जाता है। अर्थात् प्रशमकालमें तद्दोष जन्य व्याधि के प्रति रोगप्रतिकारशक्ति बढ़ती है। इस प्रकार बाल्यावस्था में कफवृद्धि, युवावस्था में पित्तवृद्धि और वृद्धावस्था में वातवृद्धि होकर तज्जन्य रोग उत्पन्न होता है।

युक्तिकृतबल :-

आहार, आचार, चेष्टा एवं योग (औषधिप्रयोगे), रसायन, वाजीकरण के सम्यक् प्रयोग से युक्तिकृत बल उत्पन्न किया जाता है। तदुपरान्त सुश्रुत ने अलर्क (जलसंत्रास Hydrophbia) विष प्रकरणमें कल्प स्थान में कृत्रिम पद्धतिसे अलर्क विषके लक्षण उत्पन्न करनेका विधान दिया है। सुश्रुत कहते है यदि जलसंत्रास स्वयं उत्पन्न हो तो रोगी बच नहीं सकता इसलिये विषके लक्षण उत्पन्न होने के पूर्व जलसंत्रास जैसे लक्षण औषधिसे उत्पन्न करवाना चाहिए। यह आज पाश्चात्य विज्ञानमें प्रचलित वेक्सिनके टीका लगवाकर व्याधि प्रतिरोधशक्ति बढ़ाना अर्थात् इम्युनाईजेशन या टीकाकरण से मिलता है। परन्तु रोगोत्पादक जीवाणु असंख्य हैं। उन सबके लिये सीरम या वेक्सिन बनाना असंभव है। अतः शरीरमें युक्तिकृत बल या प्रत्यनीक बल उत्पन्न करके जीवाणु को निर्वीर्य बनाकर स्वास्थ्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करना चाहिए। और इस स्वास्थ्य का माध्यम है आहार, आचार, चेष्टा, औषधि, रसायन एवं वाजीकरण प्रयोग।

प्रत्यनीक बल का आधारः- प्रत्यनीक बल किन भावों पर आधारित है यह आयुर्वेद दृष्टि से जानना चाहिए। पाश्चात्य विज्ञान के अनुसार भी शरीर में जीवाणु प्रत्यनीक द्रव्यों की उत्पत्ति मानते है जिसे Antibodies कहते हैं। आयुर्वेद कोई विशिष्ट पदार्थ को प्रत्यनीक बल के लिये उत्तरदायी नहीं मानता। परन्तु अनेक भाव या पदार्थ की सम्मिलित शक्ति से व्याधि क्षमत्व उत्पन्न होता है, ऐसा मानता है। जो निम्न अवतरणों से सिद्ध होता है।

(a) ज्वर प्रकरण में महर्षि चरक कहते हैं-ऋतु, अहोरात्र, दोष, मन, काल और अर्थ के बलाबल की दृष्टि से ज्वर होता है।

(१) चय प्रकोप प्रशमाः वायोः ग्रीष्मादिषु त्रिषु।
वर्षादिषु तु पितस्य श्लेष्मणः शिशिरादिषु॥

(२) वयोऽहोरात्रिभुक्तानां तेऽन्तमध्यादिगाः क्रमात् (वाग्भट्ट)

(३) ऋत्वहोरात्रदोषाणां मनसश्च बलाबलात्।
कालमर्थवशाच्चैव ज्वरस्तं प्रपद्यते॥ (च.चि.३-७५)

(b) विषम ज्वर प्रकरण में महर्षि चरक कहते हैंः- काल, प्रकृति और दूस्य से यदि रोगोत्पादक प्रकुपित दोष तुल्य हो और यदि शरीर इसका प्रतिकार न कर सके (निष्प्रत्यनीकः) तो सन्तत ज्वर उत्पन्न होता है और यदि काल, प्रकृति और दूष्य-इन में से किसी एक या दो दोष के साथ समान हो या दोष बल प्राप्त करे या तो शरीर थोड़ा प्रतिकार कर सके (सप्रत्यनीकः) तब अन्य प्रकार से विषम ज्वर उत्पन्न होता है। ज्वरोत्पत्ति प्रत्यनीक बल क्षय होने पर होता है। चिकित्सा में भी बलोत्पत्ति या बलरक्षण पर विशेष ध्यान देने का विधान है। जैसे प्राणाविरोधिना चैनं लंधनेनोपपादयेत् (च.चि.३-१४१) तथा बल ह्यलं निग्रहाय दोषाणाम् (च.चि.३-१६७) प्राण के दो अर्थ है।

(१) जीवन और (२) शक्ति। शक्ति के अन्तर्गत बल, प्रत्यनीक बल, कार्य शक्ति आदि का समावेश होता है। यदि इस व्याधिक्षमत्वका ह्रास हो तो दोष निग्रह नही हो सकता और रोग दारुण तथा जीर्ण अवस्थाको प्राप्त करता है और मृत्यु भी होती है। एड्समें रोग जीर्ण और दारुण होकर मृत्यु होती है।

(c) मधुमेह प्रकरण में चरक ने विकारविघात भावाभाव को विस्तृत रुप से बताया है। इस प्रकरण में रोग क्यों उत्पन्न होता है, और क्यों उत्पन्न नहीं होता यह बताया है। रोग क्यो मृदु और दारुण होता है क्यों क्षिप्रकारी या चिरकारी होता है ये सब विस्तृत रूप से बताया है। जो निम्न तालिका से स्पष्ट होगा।

विकार विघात भाव-	अर्थात रोग उत्पत्ति न होना, रोग का प्रतीकार होना
निदान, दोष और दूष्य-	
a. अनुबन्ध न होने पर	विकार की अनुत्पत्ति
b. कालप्रकर्ष अबलवान होना	अनुबन्धचिराद् (देर से) विकारोत्पत्ति
c. अबलवान् अनुबन्ध-	तनुविकारोत्पत्ति अथवा अयथोक्त सर्वलिङ्ग विकार।
विकार विघात अभाव	अर्थात् रोग का प्रतीकार न हो।
निदान, दोष, दूष्य	
a. अनुबन्ध होने पर	विकारोत्पत्ति
c. शीध्र अनुबन्ध होने पर	क्षिप्रकारी व्याधि बलवान्
b. अनुबन्ध होना	दारुण व्याधि उत्पन्न होना।

काल प्रकृति दूष्यैस्तु दोषस्तुल्यो हि सन्तम्। निष्प्रत्यनीकः कुरुते। (च. चि. अ.३)
कालप्रकृति दूष्याणां प्राप्यैवाव्यतमाद् बलम्। सप्रत्यनीकः (चि.३-६५)
स वृद्धिं बलकालं च प्राप्यदोषस्तृतीयकः। प्रत्यनीक बलक्षयात्॥

जिस प्रकार के रोगी में व्याधि क्षमत्व न्यून हो यह बताते हुए चरक कहते हैंः- निदान, दोष और शरीर में व्याधिक्षमत्व न्यूनता पर रोगोत्पत्ति मृदु या दारुण, क्षिप्रकारी या चिरकारी, निर्बल या बलवान् व्याधि-होती है यह बताते हुए कहते हैंः- केवल हिताहार से ही रोग का भय दूर नहीं होता अपितु रोगोत्पादक अन्य कारण भी होते है जैसे (असात्म्येन्द्रियार्थसंयोग, प्रज्ञापराध और परिणाम)सर्व अपथ्य समान दोष वाले नहीं होते, सब दोष तुल्य बल भी नहीं होते और सर्व शरीर व्याधिक्षमत्व में समर्थ होते हैं। अर्थात् एड्स जैसे महाव्याधि में जो इनके प्रधान कारण वायरस है

वे तुल्य दोष वाले नहीं होते। सहकारी वा व्यभिचारी कारण ः- वेश्यागमन, गुदमैथुन या रक्तदान सब रोगियों में एड्स उत्पन्न नहीं करते। इन कारणों से रोगों का आभ्यन्तर कारण अर्थात् दोष-दूष्य समान मात्रा में प्रकुपित नहीं होते। परन्तु यदि प्रकुपित दोष (१) संसृष्ट योनि अर्थात् अनुगुण दूष्य के साथ संमूर्च्छना करें, (२) विरुद्धोप्रकम हो (३) गम्भीर धातु स्थित हो (४) चिरस्थित (लम्बे समय तक शरीर में रहे) (५) प्राणायतन में आश्रित हो जाय (६) मर्मोपधाती हों तो रोग कष्टतम और क्षिप्रकारी बनता है।

शरीर अर्थात् शरीरसंहनन भी (१) अतिस्थूल या अतिकृश हो (२) अनिविष्टमांस-रक्त और अस्थि हों (३) दुर्बल (४) असात्म्य आहार से उपचित (५) अल्पाहार (under nutrition) वाले और (६) अल्पसत्व (मन से दुर्बल) हो तो व्याधिक्षमत्त्व (Immunity) न्यून हो जाती है। इस प्रकार आयुर्वेद दृष्टि व्याधिक्षमत्त्व अनेक भावों पर आधारित है।

अग्निः- आहार में से धातु निर्माण अग्नि पर आधारित है। महर्षि सुश्रुत ने स्वस्थ की व्याख्या मे समाग्नि एवं चरकने समपक्ता समावेश करके अग्नि का महत्व बताया है। महर्षि चरक तो यहाँ तक कहते हैं कि जो अन्न से देहधातु ओजस्, बल, वर्ण आदि उत्पन्न होते हैं वहाँ मुख्य कारण अग्नि है क्योंकि अपक्व आहार से रसादि धातु निर्माण नहीं हो सकता, इन भिन्न भिन्न सूत्रों से स्पष्ट होता है कि व्याधिक्षमत्व अर्थात् व्याधि उत्पाद प्रतिबन्धत्व एवं व्याधि बल विरोधित्व अनेक शारीर भावों पर आधारित है, जो निम्न है शरीर संहनन, दोष दूष्य, रोगोत्पादक निदान, आहार, आचार, चेष्टाः, अग्नि और जरणशक्ति, मनोबल, काल (वयस्) ओजस्, सहज बल एवं युक्तिकृत बल आदि।

च.सू. २८-७

(२) यदन्नं देहधात्वोजो बलवर्णादिकारकम्। तत्राग्निर्हेतुः आहाराद्।। (च.चि.१५-५)

ओजसः-

व्याधिक्षमत्व का प्रधान कारण ओज है। अतः ओज का सारा विवेचन यहाँ किया जाता है।

ओज क्या है-महर्षि सुश्रुत कहते हैं रस से शुक्र तक की धातु जो परम तेज है, उसे ओजस् कहते हैं।

ओज के दो भेद-

पर और अपर, पर ओज अष्टबिंद्वात्मक है और अपर ओज अर्धांजलि परिमित बताया है। पर ओज हृदय में स्थित है और इसके नाश से निश्चित मनुष्य का नाश अर्थात् मृत्यु होती है।

ओज के गुणः-

रक्त और ईषत् पीत, सर्पिर्वर्ण, मधुरस और लाजगन्धिहै । (च.सू.-१७-७४) ओज सोमगुण प्रधान, स्निग्ध, शुक्ल, शीत, स्थिर, सर, विविक्त (निर्मल और पूत), मृदु, मृत्स्न (चिक्कण) है और उत्तम प्राणायतन है। (सु.सू.१५-२१)

ओज की विकृति :-

महर्षि सुश्रुत ने विस्रंस, व्यापत्, क्षय-ये तीन विकृति बतायी है और इनसे शारीर, मानस विकृति होती है । क्षय होने पर मृत्यु भी होती है । जब कि चरक ने ओजः क्षय से प्रधानतया मनो विकृति बतायी है- जैसे डर लगना, दुर्बलता, ध्यानभग्न होना (मनः शून्यता, विचार न कर सकना), व्यथितेन्द्रिय, दुच्छाय, दुर्मना और क्षाम होना आदि ।

उपर्युक्त विवेचन से निम्न विचार हो सकता है-

(१) इससे शुक्र तक की धातु का तेज इससे दो अर्थ निकलते है (१) प्रत्येक धातु का अलग-अलग ओज रहता है जिससे प्रत्येक धातु की रचना, कार्य सुचारु रुप से चल सकता है जिसे Strucreral Funetional integrity कह सकते हैं और प्रत्येक धातु में प्रत्यनीक बल बना रहता है (२) दूसरा अर्थ है सभी धातुओं का सार भाग जिससे जीवन ठीक प्रकार से चलता रहता है । इसके नाश से मृत्यु होती है । संभवतः एड्स में दूसरे प्रकार के ओज का नाश होता है । इसी ओज की तीन प्रकार की विकृति क्रमशः होती हैं और अन्त में मृत्यु होती है किन व्याधियों में ओजःक्षय बताये है । (१) ज्वर-विशेषतः ओजो निरोध ज्वर, हतौजसज्वर (सुश्रुत) और जीर्णज्वर (२) रक्तपित्त (३) मधुमेह (४) राजयक्ष्मा (५) पाण्डु (६) ग्रहणी (७) मदात्यय (८) विष-इन व्याधिओं में ओजःक्षय बताया गया है । एड्स ग्रस्त रोगियों में ये लक्षण पाये जाते हैं । अर्थात् इन लक्षणों के साथ रोगी चिकित्सक के पास परामर्श के लिए आता है और चिकित्सक निदान करता है विशेषतः इम्युनोग्लोब्युलीन और एन्टीबोडीज देखकर ।

(१) रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां यत्परं तेजः तत्खलु ओजः । (सु.सू.१५)

(२) च.सू. ३०-९ पर चक्रपाणि टीका

(३) सु. सू. १५-२४ से ३५ श्लोक

(४) बिभीति दुर्बलोऽभीक्षणम् ध्यायति व्यथितेन्द्रियः ।

दुच्छायो दुर्मना रुक्षः क्षामश्चैवोजसः क्षये ।। (च.सू. १७-७३)

एड्स में बाह्यकारणों से व्याधिक्षमत्व न्यून हो जाता है ऐसा बताया जाता है । परन्तु जैसा महर्षि चरक कहते है जैसे भूमि में बोया हुआ बीज योग्य माध्यम मिलने पर, योग्यकाल में उगता है वैसे ही एड्स के जीवाणु जब तक माध्यम दुर्बल न हो (प्रत्यनीक बलक्षयात्) तब तक रोग उत्पन्न नहीं कर सकता । अतः चिकित्सक का कर्तव्य है कि प्रत्यनीक बल को बनाये रखे । इसके लिये उपर्युक्त भावों को योग्य मात्रा में रक्षित करे । इन भावों पर ही व्याधिक्षमत्व का आधार है ।

चिकित्सा सूत्र :-

महर्षि चरक मन को दुःख न हो ऐसे व्यवहार ओजःक्षय में विशेषतः बताते हैं । अन्य चिकित्सा में हृद्य, ओजो वृद्धि कर स्रोतः शुद्धि कर, प्रशम और ज्ञान-इस चिकित्सा का विधान है।

आध्यायन अर्थात् रसायन, जीवनीय, बल्य एवं वाजीकरण चिकित्सा बताते हैं।

गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय में कायचिकित्सा के प्रोफेसर श्री गुरु दीप सिंह ने अश्वगन्धा का इम्युनोग्लोब्युलीन पर कार्य किया है। इसी प्रकार बनारस विश्वविद्यालय में भी कार्य हुआ है। इन सबको एकत्रित करके जीवनीय, बल्य, रसायन, वाजीकरण योगों का प्राणी एवं मनुष्य पर प्रयोग करना चाहिए। जय आयुर्वेद।

नाड़ीतत्त्वदर्शनम्

वैदिकानुसन्धानयुक्ता समीक्षा
त्रिदोषं समधिकृत्य
दूतनाड़ी परीक्षक

वैद्य श्री सत्यदेव वसिष्ठ देव सदनम्
मेहम मार्ग भिवानी (हरियाणा)

मनुष्यस्य पाञ्चभौतिकं शरीरं स्वस्थयितुं शरीरस्य रोगान्, उपद्रवान् अरिष्टांश्च ज्ञातुमायुर्वेदीयार्षानार्षसंहितासु त्रिदोषसिद्धान्तमनुसृत्य यत् प्रपञ्चितमस्ति तद् विश्वसंक्षेपस्यानुकरणमात्रमेव, अतश्च आयुर्वेदे सिद्धान्तितमस्ति-लोकसम्मितः पुरुषः इति।

तद्यथा- द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्ति चक्रं परि द्यामृतस्य।
आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो सप्तशतानि विंशतिश्च तस्थुः ।। ऋग्वेद १।१६४।११।।

पुनस्तमेवार्थं विशदयन्-

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।
तत्राहतास्त्रीणि शतानि शंकवः षष्टिश्च खीला अविचाचलाये ।। अथर्व १०।८।४।।

द्वादशारं = द्वादशराशिमयं चक्रम्। राशिर्हि नाम सपादद्वयनक्षत्रात्मकः।

तत्र त्रिंशदंशाननुक्रमते सूर्यः प्रतिमासम्। प्रतिग्रहाणां भिन्नो भिन्नः कालो राशिः भोगस्य। त्रीणि शतानि षष्टिश्च (३६०) दिनानि सत्तावन्ति भवन्ति। एवं हि शरीरे त्रीणि शतानि षष्टिश्च अस्थ्नां वेदवादिनो वदन्ति इति सुश्रुते प्रतिज्ञातमस्ति। एतेन ज्ञायते यत् शरीरं लोकेन सम्मन्तु पूर्वाचार्यैः प्रयतितमेव। यदुक्तम्- त्रीणि नभ्यानि तत्र नाभ्या- आसीदन्तरिक्षꣳशीर्ष्णो द्यौः समवर्त्ततः। पद्भ्यां भूमिः। यजुर्वेदे ३१।१३।।

ऊर्ध्वनाभिः-१, अन्तरिक्षनाभिः-२, भूमिनाभिः-३

अमुथैव-द्यौ शान्तिः, अन्तरिक्षꣳशान्तिः, पृथिवी शान्तिः। यजुर्वेदे ३६।१७।।

महाव्याहृतयोऽप्येतस्मादेव-

भूरिति पृथिवीनाभिः, भुवरित्यन्तरिक्षनाभिः, स्वरित्यूर्ध्वनाभिः।
संक्षेपतो महान्तं विश्वमभिदधतीति यतः।
राशयोऽपि तावत् त्रिषु नाभिष्वात्मस्थानमधिकुर्वन्ति।

तद्यथा न्यासः- १-२-३-४ इति, ऊर्ध्वनाभिः
५-६-७-८ इति, अन्तरिक्षनाभिः
९-१०-११-१२ इति, पृथिवीनाभिः
शिरः-१, हस्तौ-२, उरः-३, ऊरू-४

ज्ञानप्रधानराशिस्थेयं पंक्तिः, शिरसि-ज्ञानं, हस्तौ-ज्ञानानुप्रेरितौ आदानं विसर्जनं च कुरुतः । उरस्थापि ज्ञानानुबन्धाद्-ज्ञानप्रधानानि-हृदयं कफोढौ (फुफ्फुसौ) यकृत्-प्लीहानौ, द्वौ वृक्कौ पृष्ठवंशानुस्यूतौ च धारयति ।

ऊरू चापि बलमादधानौ मनसा प्रेरितौ गतिं (जवं) व्यवहारायानयतः ।

५. नेत्रतोऽर्धमुखान्तं स्थानं दृष्टिप्रधानम् ।

६. प्रकोष्ठास्थि-अस्थिद्वयसंवलितं कर्मणे साधनीभूतौ भवतः ।

७. प्रगण्डास्थि चैकं ज्ञानानुवलमवाप्य ऊर्ध्वमधस्तिर्यक् च कर्म साधनी भूतं भवति । लोकेऽप्युच्यते यद् हस्तं हस्तौ वा जले निमज्य द्रष्टव्यं यदभिमतं वस्तु वर्तते न वा ।

८. गुदयन्त्रस्थोष्मा दृष्टिं दूषयति, कलायखञ्जं वातरोगं च जनयति । याकृतं कर्म च विषमयति, दृष्टियन्त्रं च प्रभावयति ।

पिण्डीलीस्थानीयसिराश्च याकृत-दोषाद् विषभीभावं प्राप्नुवन्ति ।

९. मुखार्धाद् गलकूपं यावत् पृथिवीनाभिः, पार्थिवमाहारं चतुर्धा विभक्तम् चर्व्य, लेह्य, चोष्यम् पेयं च मुखतो जग्धम् आमाशयमन्वेति ।

१०. बाहू प्रगण्डे च पृथिवीस्थमभीष्टमुन्नयतोऽवनयतश्च ।

११. पृथिवीमधिकृत्य मूत्रपुरीषं मनुष्यो जहाति ।

१२. पृथिवीमधिकृत्येव पादौ गतिमाप्नुतः ।

एवं संक्षेपतो लोकसाम्यं निदर्शनमात्रं निरूपितम् ।
विद्वद्भिश्च ज्ञानस्यानन्तवादनन्तमूहनीयम् ।
तदेतद् विश्वं त्रिपर्वमयं सत् चतुर्वर्गेषु च निबद्धम् ।।

तद्यथा- यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादावुच्येते ।।

एतस्य प्रश्नस्योत्तरम्-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ।। यजुर्वेद ३१ अध्याय ।१०-११मन्त्रौ ।

न्यासस्त्वेवम्-	ब्राह्मणः	क्षत्रियः	वैश्यः	शूद्रः
	१	२	३	४
	५	६	७	८
	९	१०	११	१२

अस्मिन् पुरुषे जगति "यतः" नपुंसकलिंगेन निदर्शनात् तत्र राशयोऽपि ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्रा इति संज्ञां लभन्ते ।

तद्यथा- १. शिरः, ५. नेत्रे नासा, कर्णे च, ९. मुखार्धतो गलकूपान्तम्।
२. हस्तौ, ६. प्रकोष्ठौ, १०. प्रगण्डौ।
३. उरः, ७. उदरम्, ११. नाभितोऽधः।
४. ऊरू, ८. जङ्घे (जङ्घ्ये), १२. पादौ।

अथर्ववेदे चाऽयं मन्त्रः किञ्चिद् भेदेन वर्तते।

तद्यथा- ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्योऽभवत्।
मध्यं तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।। अथर्व० १९।६।६।।

चतुर्वर्गश्चैवम्- १-४-७-१० = वातस्थानीयाः
२-५-८-११ = पित्तस्थानीयाः
३-६-९-१२ = कफस्थानीयाः

एतेषामङ्गानां सिरासंबन्धाद् दोषाणां सिरासु गमनात् सर्पणाद् रोगसम्प्राप्तिर्भवति।
पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् (यजु०३१।२)

भूतं वर्तमानं भविष्यच्च-

योग	उत्पद्यते	राशिः	उत्पाद्यते	योगः
१२	३-४-५ तः	१	९-१०-११	३०
१५	४-५-६ तः	२	१०-११-१२	३३
१८	५-६-७ तः	३	११-१२-१	२४
२१	६-७-८ तः	४	१२-१-२	१५
२४	७-८-९ तः	५	१-२-३	६
२७	८-९-१० तः	६	२-३-४	९
३०	९-१०-११ तः	७	३-४-५	१२
३३	१०-११-१२ तः	८	४-५-६	१५
२४	११-१२-१ तः	९	५-६-७	१८
१५	१२-१-२ तः	१०	६-७-८	२१
६	१-२-३ तः	११	७-८-९	२४
९	२-३-४ तः	१२	८-९-१०	२७

पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।। यजु० ३१।२।।

अयं मन्त्रः किञ्चिद्भेदेनाथर्ववेदे-तद्यथा-पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येश्वरो यदन्येनाभवत् सह ।। अथर्व १९।६।४।।

त्रिपादूर्ध्वमुदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।
पद्यते ज्ञायते अनेनेति पादःस च पादः त्रिधा विभक्तः सन् त्रिपादाच्चतुर्धा विभज्यते ।

१. ५-९ ज्ञानेन्द्रियप्रधानम्, ज्ञानसाधनं वा त्रिपात् ।

२. ६-१० कर्मसाधनप्रधानम्, त्रिपादिव ।

३. ७-११ एवं त्रिपादवत्, ज्ञानप्रधानम्, विभजनप्रधानं बहिर्निःक्षेपकञ्च ।

४. ८-१२ त्रिपादवत्, गतिसाधनीभूतं सद् जवाधिष्ठानम् ।

पादोऽस्येहाभवत् पुनः-एकः शेषत्वेनावतिष्ठते । त्रिपादः त्रिविक्रमः ।

वा नाम विष्णोः सूर्यस्य विष्णुसहस्रनाम्नि निरूपितमस्ति ।

अनेनैव प्रकारेण दोषा वात-पित्त-कफा अपि ।

एको दोषः प्राधान्येन शेषौ च द्वौ दोषौ तत्सहायकौ भवतः ।

पञ्चमहाभूतानां विश्वे सद्भावाद् भूतद्वयसंयोगाच्च दोषाणां सद्भावात्

दोषा अपि विश्वव्यापकाः । उक्तं च सुश्रुते उत्तरतन्त्रे (६१।१७)

क्रमोपयोगाद्दोषाणां क्षणिकत्त्वात्तथैव च ।
आगमाद् वैश्वरूपाच्च स तु निर्वर्ण्यते बुधैः ।।
न ह्येतेषां दोषाणां शक्तेरियत्ता वक्तुमर्ह्यते ।
सप्तमे अध्यायि विशदं व्याख्यातमस्ति ।
ते च वात-पित्त-कफा द्वे द्वे देवते श्रिताः ।।

आकाशमारुताभ्यां वातः श्रितः अग्निमादित्यञ्च पित्तं श्रितम् । सोमं वरुणं च कफः । तास्तेषां देवताः । काश्यपसंहिता-शिष्योपक्रमणीयविमानाध्याये अग्निरेव शरीरे पित्तमन्तर्गतः । सुश्रुत, अध्याय-१२-यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे च सिद्धान्तितमस्ति ।

दोषाणां चलनं नदीप्रवाहवद् भवति । नद्याः प्रवाह उद्गमस्थानादारभ्य नद्या लयान्तं यावद् नद्यास्तटे आसीनानां कृते कस्मैचित् वर्तमानवत्, कस्मैचित् कृते भविष्यद्वत् कस्मैचित्कृते च भूतवद् निजरूपमनुभावयति । अमुथैव दोषा अपि, तद्यथा शिरोवेदनं वर्तमानकालमिव, शिरस एकः (१) अंकः, एकस्याङ्कस्य उत्पत्तिः ३-४-५ अंकसम्बन्धितानामङ्गानां सिरासु विकृतेःफलम् । स एव शिरोविकारश्चिरकालमातिष्ठन् सम्भावयति ९-१०-११ अंकराशिसम्बन्धांगेषु विकारान् भविष्यदिव ।

पञ्चमहाभूतानां विश्वव्यापकत्वात्, भूतद्वयसंयोगात् षड्रसानामुत्पत्तिः ।

धराम्बु-क्ष्मानल-जलज्वलनाऽऽकाशमारुतैः ।
वाय्वग्नि-क्ष्मानिलैर्भूतद्वयै रससंभवः क्रमात् ।।

(१) मधुरः, (२) अम्लो रसः, (३) लवणो रसः (४) कटुरसः (५) तिक्तरसः (६) कषायरसः ।

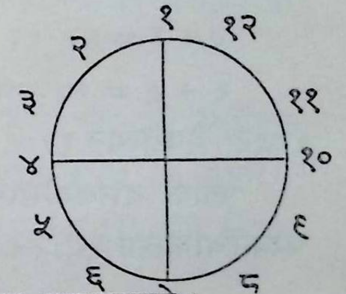
यथा एकस्मिन् फले त्वचो भिन्नो रसः, भोज्यांशे भिन्नो रसः, तद्बीजे च भिन्नो रसः । यैषा रसविभागकल्पना जगति दृश्यते, सैवावस्था शारीरविकारेष्वपि । प्रतिवस्तु भिन्नो भिन्नो रसो निदानमुपगच्छति ।

तस्माद् आयुर्वेदप्रणेतृणामृषीणामयं सिद्धान्तः-
यः स्याद् रसविशेषज्ञः यश्च दोषविकल्पवित् ।
न स मुह्येद् विकाराणां हेतुलिङ्गोपशान्तिषु ।। चरकसूत्र.२६।४५।।

हैतौ=आदिकारणे । लिङ्गे=लक्षणबहुलेषु । उपशान्तौ=औषधोपचारकर्मणि ।
न मुह्यति=संशयं न प्राप्नोति ।।

सर्वेषां व्याधीनां वात-पित्त-श्लेष्माण एव मूलम् ।
तल्लिङ्गत्वात्, दृष्टफलत्वात्, आगमाच्च ।
यथाहि कृत्स्नं विकारजातं विश्वरूपेणावस्थितम् ।
अव्यतिरिच्य वातपित्तश्लेष्माणो वर्तन्ते ।। सुश्रुतसूत्र २४।८।।

द्वादशारं चक्रम्-स्वस्थानात् सप्तमं स्थानं दोषाः प्रभावयन्ति । तद्यथा- १ शिरः सप्तमं (७) वस्ति मूत्राशयस्थानम्, गर्भाशयस्थानम् । शिरसि महतीं वेदनां दृष्ट्वा सप्तमं स्थानं दूषितमिति वक्तव्यम् ।



पश्यन्ति सप्तमं सर्वे ज्योतिर्विदामेषा प्रतिज्ञा ।
दिने-मध्याह्ने । रात्रौ च मध्ये रात्रौ
द्वादशवादः । द्वादशवादः
द्वादशारं न हि तज्जराय
मिथुनासो सप्तशतानि विंशतिश्च तस्थुः । राशिचक्रमधिकृत्य
मध्याह्ने च तदर्धरात्रि-समये पित्तं प्रकोपं व्रजेत् । इति चर्षीणां सिद्धान्तः सत्यापयते ।

भूत-वर्तमान-भविष्यद् मन्त्रलिंगं च पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।

यस्मिन् काले यद्भोज्यं भवति स तस्य वर्तमानः कालः, यच्च तस्य बीजं तद् बीजं तस्य भूतमिव । यच्च उच्छिष्टवद् उच्छतं भवति तद् भविष्यदिव । तद्यथा-

वैशाखमासे भुज्यमानं दशांगुलं वर्तमानः-१ वैसाखमेषराशिरिव । एक उत्पद्यते-३-४-५-तः, तस्माद् ज्ञातुमर्हति दशांगुलस्य बीजानि-आषाढे-श्रावणेभाद्रपदे प्रयुक्तानि सुखाय भवन्ति । यो हि यं जनयति स जायमानस्य जनको भवति । जनको हि नाम प्रादुर्भावयिता भवति, जनी प्रादुर्भावे धातुः । यच्च वस्तुन उच्छल्यं भवति तद् भविष्यदिव । तद्यथा एकोऽङ्कः

जनयति ९-१०-११ इति । एतेषु मासेषु तच्छल्यं प्रयोगमुपगच्छति । इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्=त्रिविधम्-समकलोत्थापितं भवति । तद्यथा-विष्णुः क्रमः जनस्यापि एषैवास्था द्वादशराशिषु सिद्धस्य चक्रस्य ज्ञेया । इति निदर्शनमात्र प्रदर्शितम् । द्वादशारं- द्वादशराश्यात्मकं चक्रम्-तत्र चतुर्वर्गज्ञानाय गणितम् । दशमे मासि सूतवे इति निगमात् । तद्यथा-१+९=१०, १०+९=१९ द्वादशराशिचक्रेण व्यवकलय्य-तद्यथा १९/१२ व्यवकलिताः शेषं ७-एष एव क्रमश्चास्मादूर्ध्वांकेषु

चक्रापवर्त्तनं कर्तव्यं भवति ।

७+९ =१६ चक्रापवर्तनेन = ४ शेषः ।

४+९ =१३ द्वादशापवर्तनेन १, अवशिष्टः ।

स्थापनम् उत्पद्यते समानवर्गीयाः ।

१-४-७-१०-उत्पाद्यते इत्यधिकृत्यन्यासः । उत्पन्ना भवन्ति । १०-७-४-१

५- सिंहराशिमधिकृत्य -५ + ९ = १४ चक्रापवर्तनेन २, शेषोऽङ्कः,

२ + ९ = ११, ११ + ९ = २०, चक्रापवर्त्तनेन शेषोऽङ्कः ८,

८ + ९ = १७ चक्रापवर्त्तनेन शेषोङ्कः ५,

५ + ९ = १४, चक्रापवर्तनेन शेषोङ्कः २ इति ।

२-११-८-५ उत्पादयति ।

द्वादशारं चक्रम्-यद्वा द्वादशराश्यात्मकं चक्रं समानं भवति भगणमिति । तत्र प्राधान्येन चतुर्वर्गं ज्ञातं गणितम् । तद्यथा-एकोऽङ्को जनयति (प्रकटयति) दशममङ्कम्-नवाङ्कसंयोजनेन-सर्वत्र नवाङ्कसंयोजनं चक्राधिके सति चक्रेणापवर्तनं कृत्वा शेषोऽभीष्टांको भवति ।

१ + ९ = १०, एकोऽङ्को जनयति दशममङ्कम् । एषैव पद्धतिः सर्वत्र १० + ९ = १९ चक्रापवर्तनेन शेषाः - सप्त (७) ७ + ९ = १६ । एवम् ३-३-९-१२ इत्यपि ज्ञेयम् । तद्यथा-

३ + ९ = १२, १२ + ९ = २१ द्वादशापवर्तनेन शेषोङ्कः ९ः

९ + ९ = १८ अपवर्तनेन शेषः ६, ६ + ९ = १५ अपवर्तनेन शिष्टोऽङ्कः ३, तेन जातम् ३-६-९-१२, वैपरीत्येन १२-९-६-३ ।

लोके वाय्वर्कसोमानां दुर्विज्ञेया यथा गतिः, तथा शरीरे वातस्य पित्तस्य च कफस्य च । चरकचिकित्सा २८।२४७, एतेन निश्चितं ज्ञायते यद् द्वादशारं चक्रं वैद्येनावश्यं ज्ञातव्यम् ।

सूर्याचन्द्रमसौ तौ हि प्राणापानौ च तौ स्मृतौ ।
अहोरात्रे च तावेव स्यातां तावेव रोदसी ।
अश्नुवाते हि तौ लोकान् ज्योतिषा च रसेन च ।
पृथक्-पृथक् च चरतो दक्षिणेनोत्तरेण च बृहद्देवता ।।७।१२६,१२७।

शरदि पित्तं प्रकुप्यति इति प्रतिज्ञातमार्षानार्षसंहितासु । तत्र चैत्रपूर्णिमायां मध्याह्ने सूर्योष्मा आश्विने च मध्यरात्रौ चन्द्रबलादुद्धीयमानसमुद्रमिव जलं प्रकुप्यति कुतः अग्निजलाभ्यां पित्तम् । उक्तं च - दोषधातु-मलमूलं हि शरीरम् सुश्रुत १५।३।।

आयुर्वेद और दर्शन

वैद्य भुवन चन्द्र जोशी
दिल्ली

भारतीय वाङ्गमय में चाहे वह साहिंत्य हो ज्योतिष हो या अन्य, सभी में किसी न किसी रूप में भारतीय दर्शन का समावेश मिलता है। यही नहीं संगीत शिल्प, और कला भी इससे अछूती नहीं रही है। हम निर्विवाद कह सकते हैं कि हमारे महर्षियों ने सर्व प्रथम सृष्टि के रहस्य कोसमझा और उसे विश्व को दिया। उनके निष्कर्ष आज भी अभिवन्ध हैं। यजुर्वेद में पुरुष सूक्त में हमको "सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्" से प्रारंभ विराट का दर्शन प्राप्त होता है। कालांतर में अनेक उपनिषद्कारों ने अपने अपने ढंग से इस रहस्य का विवेचन प्रस्तुत किया। यह सब हमको जीव जगत के मूल में ले जाता है। हमारे देश का यह काल, दर्शन युग कहा जा सकता है तब से जो भी काव्य, शास्त्र,कविता नाटक लिखे गये उनमें दर्शन को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा। बाल्मीकि रामायण, महाभारत पुराणों तथा इतर ग्रंथों में दर्शन शास्त्र के विचार कथा रूप में संवाद रूप में पाठक को पढ़ने को मिलते हैं।

जीव जगत् और जगदीश का जब तक हमको वास्तविक ज्ञान नहीं होता तब तक हम अविद्या और अंधकार ग्रस्त हैं इसीलिये "तमसो मा ज्योतिर्गमय " की कामना की गई है। इस अंधकार को दूर करने में दर्शन हमारा मार्ग दर्शन करते हैं। ज्ञान और विज्ञान जैसे गंभीर विषय को समझने के लिये हमको दर्शन के दर्पण की आवश्यकता सदा अपेक्षित है।

जहां अन्य शास्त्रों , ने इसका सहारा लिया आयुर्वेद ने भी इसे स्वीकारा और इसे विशिष्ट स्थान दिया क्योंकि चिकित्स्य पुरुष के समग्र और सम्पूर्ण ज्ञान के बिना यह अधूरा रह जाता। महर्षि चरक ने सुश्रुत तथा अन्य संहिताकारों ने सबका समन्वय कर अपना स्वकीय दृष्टिकोण नियत किया।

सांख्य न्याय वेदांत मीमांसा और चार्वाक मतोंका तार्किक विश्लेषण कर आयुर्वेद में क्या संग्रहीत हो सकता है उसको अंगीकार किया मिथ्यावादिता का खंडन किया।

चरक ने संहिता के प्रारम्भ में आयु की परिभाषा में लिखा है "शरीरेन्द्रिय सत्वात्म-संयोगो धारि-जीवितम्"आत्मा मन इन्द्रिय और पश्चात् शरीर को विचार्य विषय मानकर दर्शनकारों ने चिंतन किया और उस ज्ञान से हमको अवगत कराया। पंच महाभूतों के संयोग जन्य इस चिकित्स्य शरीर पर विस्तृत प्रकाश डाला।

चरक ने प्रथम अध्याय मेंआधार भूत सिद्धांतो का निरूपण किया है जिनकी प्रासंगिकता को अन्य स्थलों पर दर्शाया गया है।

सामान्यं च विशेषं च गुणान् द्रव्याणि कर्मंच ।
समवायं च तज्ज्ञात्वा तंत्रोक्तं विधिमास्थिता ।।

ये पदार्थ जिनका आगे विस्तृत वर्णन किया जायेगा वैशेषिक दर्शन के आचार्य महर्षि कणाद की खोज थे । वैशेषिकों ने इस विचार का कि जगत् शून्य से उत्पन्न हुआ है और संसार के सभी पदार्थ परस्पर संयोग से उत्पन्न होते हैं उन द्रव्यों के भीतर कोई विशिष्ट पदार्थ नहीं होता इस मिथ्यावादिता का खंडन किया । वैशेषिकों का तर्क था कि हम जब भौतिक जगत् की रचना पर विचार करते हैं तो उसके अन्दर एक अभौतिक द्रव्य की भी प्रतीति होती है अर्थात् इस जगत के रचयिता (चेतन तत्व) का अनुमान होता है । चरक ने भी इस चेतन तत्व का बोध प्रथम अध्याय में कराया है ।

निर्विकारः परस्त्वात्मा सत्वभूतगुणेन्द्रियैः ।
चैतन्ये कारणं नित्यो दृष्टा पश्यति हि क्रियाः ।।
च.सू. १-५६

चेतना का आभास इन्द्रियों के माध्यम से होता है । अतः इन्द्रियों के सम्बन्ध में दार्शनिकदृष्टिकोण देखना चाहिये । इन्द्रियों की उत्पत्ति क्रम में सांख्य का मत है कि-

सात्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकारिकादहंकारात् ।
भूतादेस्तन्मात्रः स तामस स्तैजसादुभयम् ।।
सां. का. २५

तैजस की सहायता और वैकृत सात्विक अहंकार से एकादश इन्द्रियों की उत्पत्ति होती है और तेजस की सहायता और भूतादि अहंकार से तामस पंचतन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है ।

वैकारिकादहंकारात् तैजससहाय्यात्तल्लक्षणान्येवैकादशेन्द्रियाण्युत्पद्यन्ते तद्यथा श्रोत्रत्वक्-चक्षु-जिह्वा-घ्राण-वाग्घस्तोपस्थ-पायु-पाद-मनांसीति, तत्र पूर्वाणिपंच बुद्धीन्द्रियाणि, इतराणि पञ्च कर्मेन्द्रियाणि सु. शा. १-४

यहां पर अहंकार (EGO) के संबंध मेंभी जान लेना उचित होगा ।

अभिमानादहंकारः, तस्मात् द्विविधः प्रवर्तते सर्गः
सां. का. २४

अभिमान को अहंकार कहते हैं । अहंभाव भी अहंकार है । इससे प्रथक्त्व का भान होता है । अहंकार की गणना सृष्टि विकास क्रम में अव्यक्त (UNMANIFEST) और महतत्व (INTELECT) के बाद होती है । जैसा ऊपर कहा गया है अहंकार से दो प्रकार की सृष्टि होती है । एकादश इन्द्रियों का समुदाय और पंचतन्मात्रायें जो पंच महाभूतों के सूक्ष्म कारण है । अहंकार की उत्पत्ति के अनन्तर सेन्द्रिय चेतन और निरीन्द्रिय अचेतन सृष्टि होती है । आयुर्वेद इन्द्रियोंको भौतिक मानता है अतः उनकी उत्पत्ति पंच महाभूतों से मानता है न कि अहंकार से ।

सभी कार्य द्रव्य चेतन और अचेतन भेद से दो प्रकार के होते हैं।

खादीन्यात्मा मनः कालो दिशश्च द्रव्य संग्रहः ।
सेन्द्रियं चेतनं, द्रव्यं, निरीन्द्रियमचेतनम् ।।

च.सू. १-४८

जो द्रव्य इन्द्रिय युक्त होता है वह चेतन और जो इन्द्रिय रहित होता है वह अचेतन। जीवित शरीर रूप द्रव्य सेन्द्रिय होने से चेतन है। मनुष्यादि प्राणी तथा वृक्षादि उद्‌भिज चेतन बाकी सब अचेतन हैं। सेन्द्रिय से अर्थ आत्मा से संबन्ध का है। इन्द्रियों द्वारा ही आत्मा का चैतन्य प्रकाशित होता है। इन्द्रियां जब आत्म संबन्ध से वंचित हो जाती हैं तब वह अचेतन हो जाता है।

शरीरं हि गते तस्मिञ्शून्यागारमचेतनम् ।
पंचभूतावशेषत्वात् पंचत्वंगतमुच्यते ।।

च. शा. १-७४

इन्द्रिय ज्ञान और कर्म के अनुसार विभक्त हैं। उनके विषय शब्द स्पर्श रूप रस गंध कर्ण त्वचा चक्षु जिह्वा और नासा द्वारा ग्रहीत होते हैं।

तत्र बुद्धीन्द्रियाणां शब्दादयो विषयाः ।
कर्मेन्द्रियाणां यथा संख्यं वचनादानानन्द-विसर्ग-विहरणानि ।

सु. शा. १-५

एकादश इन्द्रियों की गणना में मन प्रधान है। सुख दुख आदि की प्रतीति मन के द्वारा होती है। अतिज्ञाने धातु से मन शब्द बनता है। मन्यते ज्ञायते अनेनेति मनः

आत्मेन्द्रियार्थ सन्निकर्षे ज्ञानस्य भावो-भावश्चमनसो ।।

लिंगम् वे.द. ३-२-१

लक्षणं मनसो ज्ञानस्याभावोभाव एव च ।
सतिह्यात्मेन्द्रियार्थानां सन्निकर्षे न वर्तते ।।
वैवृत्यान्मनसोज्ञानं, सानिध्यातच्चवर्तते ।।

च० शा. १-१८

आत्मा कोश्रोत्रादि इन्द्रियों और शब्दादि विषयों से सम्बन्ध होते हुए भी कभी किसी विषय काज्ञान होता है और कभी नहीं भी होता। यह ज्ञान का होना न होना किसी कारणान्तर को सूचित करता है। यही कारणान्तर मन है। यह मन जब इन्द्रियोंके साथ संयुक्त होता है तो इन्द्रियां अपने विषय को ग्रहण करती हैं। मन के सान्निध्य से ज्ञान होता है और असान्निध्य से ज्ञान नहीं होता।

मनः पुरः सराणीन्द्रियाण्यर्थग्रहण समर्थानि भवन्ति ।
तत् (मनः) अर्थात्मसंपदायत्तचेष्टं चेष्टाप्रत्यभूतमिन्द्रियाणाम् ।

च. सू. ८

यह उक्ति उपर्युक्त कथन कोअभिव्यक्त करती है।

मन के दो गुण बताये गये हैं।

अणुत्वमथ चैकत्वं द्वौगुणौ मनसः स्मृतौ ।। च. शा. १-१९

मन प्रत्येक शरीर में एक और अणु परिमाण का होता है। नैयायिक तथा वैशेषिक भी मन को "अणु" तथा एक मानते हैं। मन की चार वृत्तियां हैं।

(१) संशय शीला (२) निश्चयात्मिका (३) गर्वात्मिका (४) स्मरणात्मिका इनमें संशय शीला कोमन निश्चयात्मिका को बुद्धि, गर्वात्मिका को अहंकार और स्मरणात्मिका को चित्त भी कहते हैं।

इस प्रसंग मेंमन के विषय तथा कर्म का ज्ञान कर लेना भी संगत होगा।

चिन्त्यं विचार्यमूह्यंच ध्येयं संकल्प्यमेव च ।
यत्किंचिन्मनसो ज्ञेयं तत्सर्वं ह्यर्थसंज्ञकम् ।।
इन्द्रियाभिग्रहः कर्म मनसः स्वस्य निग्रहः ।
उहो विचारश्च, ततः परं बुद्धिः प्रवर्तते ।।
च. शा. १-२०-२१

उभयात्मकं मनः - मन उभयात्मक है। तात्पर्य यह है कि मन ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनों हैं। उसके अतिरिक्त चिंता गुणागुण का विचार तर्क ध्यान संकल्प तथा मन के द्वारा ज्ञेय सुःख दुखादि ये सब मन के विषय हैं। इन्द्रियों को अपने-अपने विषय में प्रेरित करना तथा अहित विषयों से उनको रोकना किसी विषय में तर्क करना हिताहित का विचार करना ये सब मन के कर्म हैं। मन को अतीन्द्रिय भी कहा गया है। प्रति नियत विषयैकाणीन्द्रियाणि। इन्द्रियों के विषय नियत हैं मन सभी इन्द्रियों के साथ सबके विषयों का ग्रहण करता है। यहां पर मन तथा चेतन के स्थान का विचार करना भी उचित होगा

सत्वादिधाम हृदयं स्तनोरः कोष्ठ मध्यगम् ।। अष्टांगहृदय शा. ४

हृदयमिति कृतवीर्यो बुद्धेमनसश्च स्थानत्वात् ।। सु. शा ३

षड्ङ्मङ्गं विज्ञानमिन्द्रियाण्यर्थपञ्चकम् ।
आत्मा च सगुणश्चेतश्चिन्त्यं च हृदिसंश्रितम् ।। च. सू. ३-४

सत्वआदिका स्थान हृदय है जो स्तन और उर : कोष्ठ के मध्य में है। हृदय में बुद्धि और मन कास्थान होने से गर्भ में पहले हृदय बनता है यह कृतवीर्य ने कहा है चरक सुश्रुत दोनों के मत में आत्मा और मन हृदय में स्थित होते हैं। योगवाशिष्ट जो एक दार्शनिक रचना है उसका प्रधान प्रतिपाद्य विषय मन है। उसके अनुसार संसार की सभी वस्तुएं सभी विचार तथा सभी प्रपंच मन की लीला मात्र है। जैन दर्शन मेंभी सब कुछ मन का विलास कहा गया है।

अनन्तस्यात्मतत्वस्य सर्वशक्तेमहात्मनः ।
संकल्प शक्तिरचितं यद्रूपंतन्मनोविदुः ।।

मन शुद्ध चेतना का स्फुरण मात्र है (VIBRATION OF Pure consciousness) जो किसी

विषय के संपर्क से मलिन तथा परिवर्तित होता रहता है।

परमात्मा की संकल्प शक्ति से रचित जो रूप है वही मन है। इस क्रम में हमको आत्मा परमात्मा के संबन्ध में दार्शनिक दृष्टिकोण देखना चाहिये।

सङ्घात परार्धत्वात् त्रिगुणादि विपर्ययादधिष्ठानात्।

पुरुषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थं प्रवृत्तेश्च सां. का. १७

प्रकृति से उद्भूत यह संघातमय जगत् प्रकृति से अन्य किसी के लिये है। वह अन्य पुरुष है। वह तुरीय है यानि त्रिगुणातीत है। अधिष्ठाता है, भोक्ता है और दुःखों से छुटकारा पाने के लिये कैवल्य धाम है। इस पुरुष के लिये आत्मा क्षेत्रज्ञ, अक्षर, अव्यय, आदि शब्दों का प्रयोग स्थान-स्थान पर मिलता है। आत्मा परमात्मा का अंश है जीवात्मा माया से परिछिन्न आत्मा है। परमात्मा अव्यय अक्षर ब्रह्म (Supreme) है।

उपद्रष्टानुमन्ताच भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः (गीता) ।
द्विसुपर्णा सयुजासरवाया समानं बृक्षं परिषस्वजाते ।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वादुत्ति अनशनन्नन्योभिचाकशीति परमात्मा अनादि और नित्य है

प्रभवोनह्यनादित्वाद्विद्यते परमात्मनः ।
पुरुषोराशिसंज्ञस्तु मोहेच्छाद्वेषकर्मजः ।।
च. शा. १-५३

अनादि पुरुषे नित्यो विपरीतस्तु हेतुजः
सदकारणवन्नित्यं दृष्टं हेतुजमन्यथा ।।
च.शा. १-६०

परमात्मा अनादि है, अकारण है, नित्य है, मोह इच्छा द्वेष आदि कर्मो के कारण जो उत्पन्न होता है वह परमात्मा से विपरीत धर्मवाला होने के कारण आदि और अनित्य है। मोहच्छा द्वेष से उत्पन्न होने वाला (जीवात्मा) राशि पुरुष हेतुज होने के कारण अनित्य और सादि है उसी राशि पुरुष में विकार होते हैं और उनकी चिकित्सा होती है।

प्राणापानौ निमेषाद्या जीवनंमनसोगतिः ।
इन्द्रियान्तरसंचारःप्रेरणं धारणंचयत् ।।
देशान्तरगतिः स्वप्ने पञ्चतत्व-ग्रहणं तथा ।
दृष्टस्य दक्षिणेनाक्ष्णा सव्येनावगमस्तथा ।।
इच्छाद्वेषः सुखं दुखं प्रयत्नश्चेतनाधृतिः ।
बुद्धिः स्मृतिरहङ्कारो लिङ्गानिपरमात्मनः ।।
च. शा. १ ८०-८१-८२

प्राण अपान कर्म पलक खोलना बंद करना, शरीर की बृद्धि ह्रास क्रिया मनोव्यापार, एक इन्द्रिय को छोड़कर दूसरी इन्द्रिय में मन का संचार, इन्द्रियों को उनके विषय में प्रेरित करना शरीर धारण, स्वप्न में भिन्न देश में गमन पंचत्व स्वीकार करना और पञ्चत्व में लीन होना, दाई आंख से देखे पदार्थ का बांइ आंख से ज्ञान, इच्छा द्वेष सुख दुःख आदि परमात्मा के लिङ्ग हैं । कायिक वाचिक मानसिक कर्म करने की प्रवृत्ति चेतना धैर्य बुद्धि स्मृति अहंकार ये सभी देहातिरिक्तपुरुष के लक्षण हैं ।

चार्वाक दर्शन ईश्वर की चर्चा ही नहीं करता । वे परलोक व पुनर्जन्म भी नहीं मानते । जैन जीव द्रव्य अजीव द्रव्य दोनों मानते हैं । बौद्ध शून्य को ही जगत् का उपादान मानते हैं । उनके यहां भी ईश्वर की मान्यता नहीं है । चार्बाक वौद्ध दर्शन के चार भेद और जैन ये दर्शन बस्तुतत्व की दृष्टि से ईश्वर को स्वीकार नहीं करते । नैय्यायिक ईश्वर कोकर्ता (Creator, मानते हैं । वैशेषिक तटस्थ ईश्वर को मानते हैं । योग और सांख्य ने आत्मा को प्रथक् और विभु माना है । मीमांसक कर्म के कारण ही सृष्टि भिन्न-भिन्न हो रही है, ऐसामानते हैं । "कर्मेति मीमांसकाः (वेदांत पुरुष को बिभु मानता है) वेदांत दर्शन के सभी संप्रदायों की मान्यता है कि ईश्वर ही जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण है चरक के 'चेतना धातु रप्येकः स्मृतः पुरुष संज्ञकः' से इसका आभास होता है ।

चरकाचार्य पुरुष को एक और विभु मानते हैं ।
अव्यक्त मात्मा क्षेत्रज्ञः शाश्वतो विभुरव्ययः
विभुत्वमत एवास्य यस्मात्सर्वगतोमहान् ।।
च. शा. १-८०

यदि आत्मा विभुहै और एक है तो जीवों कोसुख दुःख एक साथ अनुभव होना चाहिये । इसका समाधान यों करते हैं यद्यपि पुरुष विभु है तथापि उसको इन्द्रियों के द्वारा ही ज्ञान की उपलब्धि होती है ।

आत्माज्ञः, करणैर्योगाज्ज्ञानं त्वस्य प्रवर्तते ।। च. शा. १५४

महर्षि सुश्रुत पुरुष का अनेकत्व प्रतिपादन करते हैं ।अतः " सर्वगताः " ऐसा विशेषण उपयोग करते हैं । पंच महाभूत शरीरिसमवायः पुरुषः इत्युच्यते तस्मिन् क्रिया सोधिष्ठानम्

इन पंचमहाभूतोंके संबन्ध मेंभी हम ज्ञान प्राप्त करें तो समीचीन होगा । पंचमहाभूतो का उत्पत्ति क्रम इस प्रकार है

अक्षरात् स्व ततोवायुस्तस्मात्तेजः ततोजलम् ।
उदकात् पृथवी जाता भूतानाम् एष आगतिः ।।

पंच महाभूतोंको तत्व भी कहा है । तनोति इति तत्वम् तनु विस्तारे के अनुसार अपने विस्तार में तान लेवे वही तत्व हैं । ये पंच महाभूत अपने रूप का विस्तार कर विश्व का ताना बाना किये हुये हैं ।

महाभूतानि खं वायुरग्निरापः क्षितिस्तथा ।
शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसोगन्धाश्च तद्गुणाः ।।

च. शा. १-२७

यह ध्यान में रखना चाहिए कि इनमें सत्वरज और तम गुण भी विद्यमान रहते हैं

सत्व बहुलम् आकाशम् रजो बहुलो वायुः ।
सत्वरजोबहुलो अग्निः सत्वतमोबहुलाआपः तमो बहुला पृथ्वी ।।

इन महाभूतों के भौतिक गुण खरत्व द्रवत्व चलत्व उष्णत्व स्पर्शादि इन्द्रिय गोचर हैं आकाश का गुण अप्रतीघात (Nobstructability, है ।

लक्षणं सर्बमेवैतत् स्पर्शनेन्द्रिय गोचरम् ।

इन महाभूतों की अभिव्यक्ति प्रकृतिगत शब्दादि तन्मात्रावों (बीजरूप शूक्ष्म महाभूतों) से क्रमशः होती है । यह समस्त विश्व पंच महाभूतों काखेल है । इन महाभूतोंका जोइन्द्रिय ग्राह्य विषय नहीं है वही तन्मात्रा महाभूत है और ज्ञानेन्द्रिय ग्राह्य है । वही भूत है । आकाश को छोड़कर सभी व्यक्त तत्व है । यह सृष्टि भूतों कासमुदाय है । पृथ्वी में गति (Movement) वायु से, संगठन (Cohesion) जल से, तेज (Electricity) अग्नि से और भार(Weight) स्वयम् पृथ्वी से होता है । स्थानादान (Spatialrelation) आकाश से होता है ये आकाशादि चेतना धातुसहित पुरुष संज्ञा को प्राप्त होते हैं ।

खादयश्चेतताषष्ठा धातवः पुरुषः स्मृतः ।

च. शा. १-१६

चरक संहिता के पुरुष विचयीय अध्याय में पुरुष और लोक की समता दर्शित की गई है ।

पुरुषोऽयं लोकसंमित इत्युवाच भगवान्पुर्वसुरात्रेयः यावन्तो हि लोके मूर्तिमन्तोभावविशेषास्तावन्तः पुरुषे यावन्तः पुरुषे तावन्तोलोके । षड्धातवः समुदिताः, लोक, इति शब्दं लभन्ते, तद्यथा पृथिव्याप स्तेजोवायुराकाशं ब्रह्म चाव्यक्त-मित्येत एव च षड्धातवः समुदिताः (पुरुष) इति शब्दं लभन्ते ।

पुरुष और लोक की साम्यता का दिग्दर्शन विज्ञान हेतु तोहै ही अपवर्गार्थ भी है

सर्वलोकमात्यन्यात्मानं च सर्वलोके समनुपश्यतः सत्या बुद्धिरुत्पद्यत इति सर्वलोकोऽहमिति बिदित्वा ज्ञानं पूर्वमुत्याप्यतेऽपवर्गायेति अपवर्ग निबृति से प्राप्त होता है वही मोक्ष शांति निर्वाण और ब्रह्मलय है इसके विपरीत मोह इच्छा द्वेष जन्य, प्रवृत्ति दुःख का कारण है । आयुर्वेद में दर्शन शास्त्र द्वारा उपदिष्ट दुःख की आत्यन्तिक निवृति के मार्ग को भी स्वीकार किया है और समाविष्ट किया है ।

चिकित्स्य पुरुष–

सत्वमात्माशरीरंच त्रयमेतत्त्रिदण्डवत् ।
लोकस्तिष्ठति संयोगात्तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम् ।।
स पुमांश्चेतनं तच्च तच्चाधिकरणं स्मृतम् ।
वेदस्यास्य, तदर्थं हि वेदोऽयं संप्रकाशितः ।।

च. सू. ४६ ४७

पुनश्च धातुभेदेन चतुर्विंशतिकः स्मृतः मनोदशेन्द्रियाण्यर्था प्रकृतिश्चाष्टधातुकी ।।

च. शा. १-१८

चरक में अव्यक्त पद से आत्मा का ग्रहण होता है। अतः पुरुष चौबीस तत्वों का समुदाय है। सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति आदि चौबीस तत्व अचेतन हैं। पच्चीसवां पुरुष चेतन है।

षड्धातुपुरुष चतुर्विंशति राशि पुरुष की चिकित्सा होती है यही कर्म पुरुष है चिकित्सा का अधिकरण है।

त्रिदोष वात (वायु) (पित्त) (अग्नि) (जल) (पृथ्वी आप) पंचमहाभूतों के शरीर में कार्मुक द्रव्य हैं।

सर्ग क्रम में भूतों की उत्पत्ति परमाणु से होती है इसे भी हमें देखना चाहिए। गौतम तथा कणाद के इस मत कोकि परमाणु से भूत की उत्पत्ति होती है चरक को भी विचार्य था –

शरीराबयवास्तु परमाणु भेदेनापरि संख्येया भवन्त्यति बहुत्वादति
सौक्ष्म्यादतीन्द्रियत्वाच्च परमाणु परिमाणवान् परमाणुः वै द. ३-१

जो परम अणु अर्थात् परम सूक्ष्म परिमाण वाला हो उसे परमाणु कहते हैं जालन्तर गते भानौयत् सूक्ष्मंदृश्यते रजः।

तस्य त्रिंशत्तमों भागः परमाणुरुच्यते बुधैः ।

झरोखे मेंसूर्य की किरणों के पड़ने से जो सूक्ष्म रज प्रतीत होती है उनका नाम त्र्यणुक त्रसरेणु है। त्र्यणुक के आरंभक तीन द्व्यणुक होते हैं।

द्व्यणुक त्र्यणुक अवयव जन्य है। इनका आरंभक निरवयव द्रव्य परमाणु है। जब पृथवी आदि द्रव्यों के अन्त्य अवयव में अणुपरिमाण की समाप्ति होती है अर्थात् जिसके अन्तर अन्य कोई परमाणु बिलग नहीं हो सकता वही परमअणु परिमाण का आधार होने से परमाणु नाम से कहा जाता है। परम सूक्ष्म होने से वह प्रत्यक्ष का विषय नहीं किन्तु उसकी सिद्धि अनुमान द्वारा होती है।

ये परमाणु एक नहीं अनेक हैं और पृथ्वी आदि कार्य द्रव्योंके प्रारंभक हैं। ये नित्य हैं और अविभाज्य हैं। यहां पर विशेष है कि अवान्तर भेद से परमाणु अनेक हैं तथापि सत्वरजतम भेद से तीन प्रकार हैं। इसी को सांख्य बेदांत और योग त्रिगुण कहते हैं। न्याय वैशेषिक तथा मीमांसा में इनकी परमाणु संज्ञा है सत्वादि तीनों गुणों की साम्यावस्था प्रकृति है। इसी को महामाया पराशक्ति अव्यक्त तथा मूल कारण संज्ञा दी गई है। आधुनिक वैज्ञानिक भी सृष्टि कोपरमाणु जन्य मानते हैं।

उनका परमाणु पांचभौतिक है। दार्शनिकों का परमाणु भूतोत्पादक रूप है। पंच महाभूतों मेंचार भूत पृथ्वी, जल, तेज और वायुपरमाणु रूप से और आकाश व्यापक रूप से किसी द्रव्य की उत्पत्ति में कारण होते हैं।

सृष्टि में कार्मुकता की विधा (Dynamics) का ज्ञान प्राप्त करने के लिये द्रव्यगुण कर्म सामान्य विशेष और समवाय का ज्ञान आवश्यक है। द्रव्य गुण कर्म पदार्थ विज्ञान का विषय है। इनका दार्शनिक विवेचन भी है। आयुर्वेद का विशिष्ट प्रतिपाद्य विषय है। इन पदार्थों के परीक्षण के प्रमाण कुछ भिन्नता लिये हुये मिलते हैं। चार्वाक केवल प्रत्यक्ष प्रमाण को ही यथार्थ ज्ञान का साधन मानता है। बौद्ध जैन और वैशेषिक प्रत्यक्ष और अनुमान ये दो प्रमाण मानते हैं। अर्वाचीन तथा प्राचीन नैय्यायिकों को प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्द प्रमाण मान्य हैं। सुश्रुत चतुर्विध प्रमाण आगम प्रत्यक्ष अनुमान उपमान मानते हैं। भगवान् पुनर्वसु आत्रेय सत् असत् के निर्णयार्थ आप्तोपदेश प्रत्यक्ष अनुमान और युक्ति इन चार परीक्षावों का उपदेश करते हैं "द्विविधमेव खलु सर्बं सच्चासच्च तस्य चतुर्विधा परीक्षा आप्तोपदेशः प्रत्यक्षं अनुमान युक्तिश्चेति"। रोगज्ञानार्थ तीन उपाय आप्तोपदेश प्रत्यक्ष और अनुमान का उपदेश करते हैं त्रिविधं खलु रोग विशेष विज्ञानं भवति तद्यथा आप्तोपदेश प्रत्यक्ष अनुमानंचेति। सत असत् नित्य अनित्य अविनाशी विनाशी क्षर अक्षर इनके विश्लेषणात्मक ज्ञान के लिये सामान्य विशेष का ज्ञान अपेक्षित है। सामान्य स्वतंत्र पदार्थ है, नित्य एक और अनेकानुगत है सामान्य का ज्ञान एकाकार बुद्धि प्रदान करता है जिससे भ्रम निवारण होता है।

सामान्य अन्तर्ज्ञान में भी साधक है। जीवनं सर्बभूतेषु।सब जीव धारियों में परमात्मा जीवन रूप से स्थित हैं यह सामान्य का ज्ञान होने से प्रतीत होता है।

सामान्यमेकत्वकरं तुल्यार्थता हि सामान्यं सामान्य एकत्व करने वाला है तुल्यार्थता ही सामान्य है।

सर्बदा सर्बभावानां सामान्यं बृद्धिकारकम्।।च.सू. १-४४

द्रव्य सामान्य द्रव्य रूप को बढाने वाला गुण सामान्य गुण रूप को बढाने वाला होता है। चिकित्सा में सामान्य की उपयोगिता द्रव्य गुण कर्म के विवरण में अनेक स्थलों पर मिलती है। हम कह सकते हैं कि सामान्य ज्ञान का साधन है।

तो विशेष विज्ञान का ह्रासहेतुर्विशेषश्च।।च. सू. १-४४

विशेषस्तु प्रथक्त्वकृत विशेषस्तु विपर्ययः।।च. सू. १-४५

सामान्य का ठीक उल्टा विशेष होता है। परमाणुवों (पृथ्वी आदि के) जो एक दूसरे से भेद का कारण है उसे विशेष कहते हैं। यह नित्य द्रव्यों में रहता है और स्वयम् भी नित्य है। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के एक श्रेणी बद्ध होने का कारण यदि सामान्य है तो इसके विपरीत एक श्रेणी के समान गुण धारण करने वाले व्यक्तियों के पारस्परिक विभेद की सत्ता सिद्ध करने वाला एक आत्मा दूसरी आत्मा से एक मन दूसरे मन से भिन्न किस प्रकार सिद्ध किया जा सकता है। इस पार्थक्य की कल्पना के लिये इन द्रव्यों में विशेष नामक पदार्थ की कल्पना की गई। संसार की सभी वस्तुवें एक दूसरे से संयुक्त रहती है। वस्तुवों के बीच के सम्बन्ध को समवाय कहते हैं।

घटादीनांकपालादो द्रव्येषु गुण कर्मणो ।
तेषु जातेश्च संबधः समवायः प्रकीर्तितः ।।

कपाल आदि में घटादिका द्रव्यों में गुण कर्म का अवयव और अवयवी क्रिया और क्रियावान् का नित्य द्रव्य और विशेष का जो संबंध है उसे समवाय (INHERENCE) कहते हैं । शब्द और आकाश का रस और आप का संबंध समवाय संबंध है । वस्त्र तंतु का संबंध मनुष्य मनुष्यत्व का संबंध समवाय (INSEPERABLE) संबंध है । इस संबंध के आधार पर कार्य कारण का ज्ञान होता है ।

समवायोऽप्रथग्भावो भूम्यादीनां गुणैर्मतः ।
सनित्यो यत्र हि द्रव्यं न तत्रानियतो गुणः ।।
च. सू. ३.१

भूमि आदि आधार द्रव्यों के साथ गुर्वादि आधेय गुणों का जो अप्रथग्भाव) अलग न रहने का संबंध है उसे समवाय कहते हैं । यह नित्य है और जहां भी द्रव्य है वहां नियम रूप से गुण वर्तमान है । चिकित्सा में द्रव्य के साथ गुण कर्म समवाय संबंध होने से कार्य कारण की कल्पना होती है ।

आवुर्येद में आधार भूत विचार दर्शन शास्त्र के हैं । पुरुष और लोक की परस्पर साम्यता इस जगत् की एकरूपता का दिग्दर्शन कराती है । वेदांत सांख्य न्यायवैशेषिक मीमांसा योग इनमें से संगत विचारों को ग्रहण किया गया है । इनकी सहायता से पुरुष के मूल में जाने का प्रयत्न किया गया है । किसी भी विषय का मौलिक ज्ञान तब तक नहीं होता जब तक उसके अन्तरतम भाग तक न पहुंचा जाये ।

यद्यपि ; भूतेभ्यो हि परं यस्मान्नास्ति चिंता चिकित्सिते, यह सीमा निर्धारित की गई है । फिर भी इन विषयों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए दर्शन ग्रंथों का अध्ययन मनन सदा अपेक्षित है ।

'एकं शास्त्र मधीयानो न विद्यात् शास्त्रनिश्चयम्'

के अनुसार आयुर्वेद के विद्यार्थी को दर्शन शास्त्र का अवलोकन करना चाहिये यदि ऐसे ज्ञान की आवश्यकता न होती तो ये आर्श ग्रंथ दर्शन का समावेश करते ही क्यों । हमारे महर्षियों ने समग्र दृष्टि से आयुर्वेद का सृजन किया । पुरुष और सृष्टि के मूल में जो तथ्य हैं उन्हें समझा । आयुर्वेद ज्ञान विज्ञान का एक संगम है । केन्द्र से परिधि तक और परिधि से केन्द्र तक की जानकारी इसमें निहित है ।

कुछ शिक्षाविद् यह कहते सुनाई देते हैं कि चरक, सुश्रुत के दार्शनिक विषय चिकित्सा के लिये कोई उपयोगी नहीं आधुनिक अन्य चिकित्सा पद्धतियों में ऐसा कुछ समावेश नहीं है । यह वाद विवाद का विषय हो सकता है । आयुर्वेद प्राचीनतम जीवन विज्ञान है ।

यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ।।

उसका उद्घोष है । दार्शनिक विचारों का समावेश कर समन्वय कर इसको सम्पूर्णता प्रदान की गई है । ये विषय आयुर्वेद की आत्मा स्वरूप है । यदि हमको आयुर्वेद का मौलिक (RADICAL) और पूर्ण (PERFECT) ज्ञान प्राप्त करना है तो दर्शन व तद्गत सभी विषयों का ज्ञान होना चाहिये ।

आयुर्वेद में भेषज द्रव्यों का प्राधान्य और उन पर चहुँमुखी अनुसंधान की आवश्यकताः-

वैद्य श्री मायाराम उनियाल
सहायक निदेशक (आयु) केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान-परिषद्
एस १०, ग्रीन पार्क एक्सटेशन मार्किट, नई दिल्ली-११००१६
वनौषधि विद्यापति (श्री लंका)

प्राचीन काल में हमारा द्रव्यगुण विज्ञान एक जीवित शास्त्र था। महर्षियों ने दीर्घकाल के परीक्षण और अनुभव से द्रव्यगुण विज्ञान के आधारभूत सिद्धांत स्थापित किये थे। कोई भी नया द्रव्य उनके सामने आता था तो वे अपने सिद्धांतानुसार मनुष्य के शरीर पर उसका परीक्षण करके उसके पार्थिव भौतिक संगठन एवं रस, गुण, वीर्य एवं विपाक का प्रभाव तथा कर्म निश्चित करते थे। परन्तु आज द्रव्यगुण शास्त्र मूर्च्छित अवस्था में पड़ा हुआ है।

स्वदेशी चिकित्सा पद्धतियों के विकास के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय के अंतर्गत चार केन्द्रीय परिषदों का गठन किया गया है, जिनमें से केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् एक है। इस परिषद के अंतर्गत सभी प्रांतों में वनौषधि सर्वेक्षण एककों की स्थापना की गई है और कुछ इस दिशा में कार्य किया जा रहा है। आशा है कि निकट भविष्य में इनके परिणाम सामने आएंगे तथापि आज विश्व का ध्यान इन भेषज द्रव्यों की उपादेयता की ओर गया है। साथ ही भारत सरकार एवं निजी औषध निर्माताओं का ध्यान भी इस ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ है। अतः आज भेषज द्रव्यों के चहुँमुखी अनुसंधान की विशेष आवश्यकता है जो कि इस प्रकार है :-

आयुर्वेद में स्वरूप भेद से भेषज द्रव्यों के तीन भेद बतलाये गये हैं, यथा-

तत् पुनः स्त्रिविधंप्रोक्तं जङ्गमौद्भिद् पार्थिवम्। जाङ्गम द्रव्य प्राणियों से प्राप्त होने वाले गोरोचन, मधु, कस्तूरी, श्रृङ्ग, मांस आदि द्रव्य हैं। औद्भिद् द्रव्यों में वृक्ष, लता के अवयव मूल त्वक् (छाल) पत्र, फल, बीज, मूलकन्द, निर्यास आदि द्रव्य हैं। पार्थिव द्रव्यों में पृथ्वी के विकार रूप, स्वर्ण, गंधक, सैंधव आदि द्रव्य हैं। जिस प्रकार प्राणी शरीर के पोषण एवं वृद्धि के लिए मुख्यतः जैव आहार द्रव्यों का उपयोग होता आया है उसी तरह जैव भेषज द्रव्य स्वास्थ्य के लिए अधिक उपयोगी हैं। यद्यपि आयुर्वेद में काष्ठौषधियों का प्राधान्य चरक काल से ही रहा है। नागार्जुन काल में रसौषधियों का बोलबाला होने पर भी काष्ठौषधियों का महत्व कम नहीं हुआ। आयुर्वेद में पार्थिव द्रव्यों का उपयोग अल्प मात्रा में होता रहा है तथा इन पार्थिव द्रव्यों के शोधन, मारण एवं भावना हेतु काष्ठौषधियों के स्वरस, क्वाथ, कल्क तथा मूत्र व कांजी का उपयोग होता है। औषध द्रव्यों की भावना देने से पार्थिव द्रव्यों में गुणाधान होता है, यथाः-

बहुकल्पं बहुगुणं सम्पन्नं योग्यमौषधम्। अजैव या खनिज द्रव्यों में जैव द्रव्यों के स्वरस आदि भावनाओं के संसर्ग से विशिष्ट, गुणाधान होता है, जैसे आयुर्वेद के प्रसिद्ध रासायनिक योग मकरध्वज, रससिंदूर, स्वर्णसिंदूर आदि, कतिपय पारद एवं गंधक के यौगिक हैं।

चिकित्सा क्षेत्र में भौतिकीय एवं रासायनिक आधार से निकलने वाली विचार धाराओं का प्रवाह कार्यकारी सत्वों तक ही नहीं रुका, बल्कि वनस्पतियों के जो-जो कार्यकारी सत्व पृथक् किये गये हैं वैसे ही सत्व रसायन शास्त्र की सहायता से बनाए जाने लगे हैं। ऐसी कृत्रिम औषधियां चिकित्सा जगत् के लिए घातक हो सकती हैं, इसलिए हजारों वर्षों से अनुभूत जैव द्रव्यों की ओर विश्व का ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक है। आयुर्वेद में मुख्यतः जैव भेषज के अध्ययन पर रस, गुण, वीर्य, विपाक के प्रभाव का सिद्धान्त स्थापित कर उसका विकास किया है परन्तु आज भी हम जैव भेषज द्रव्यों के अध्ययन की दिशा में उदासीन बैठे हुए हैं।

कई शताब्दियों के अनुभवों एवं परीक्षणों से प्राप्त हुए ज्ञान का क्रमिक विकास जारी रहता तो इसका आज और ही रूप होता। परंतु शताब्दियों से परीक्षणों एवं अनुसंधान का प्रवाह रुक जाने से हमारी आर्ष-सम्पत्ति का ह्रास होता जा रहा है। आज उपयुक्त समय आ गया है। विश्व-स्वास्थ्य संगठन ने यह मान्यता दे दी है कि मानव देह को यदि रोगमुक्त करना है तो जैव-भेषज द्रव्यों द्वारा ही किया जा सकता है, जिसमें आयुर्वेद एवं अन्य परम्परागत चिकित्सा प्रणालियां मुख्य हैं। आज अनुसंधान के लिए उपयुक्त वातावरण है कि सभी प्रांतीय सरकारें एवं केन्द्र सरकार मिलकर राष्ट्रीय वन नीति एवं औषध पादप संवर्धन नीति निर्धारित करें, जिससे वनौषधि उद्योग का समुचित विकास किया जा सके एवं देश-विदेश में औषध द्रव्यों की आवश्यक मात्रा की आपूर्ति की जा सके। इसी आधार पर ग्रामीण-स्तर पर वनौषिधि पादप कृषि एवं वन रोपण की क्रियात्मक योजनाएं प्रारम्भ की जाएं।

आयुर्वेद में औषध द्रव्यों के ह्रास के अन्य कतिपय कारण हैं। आज हमें उन कारणों के निराकरण के उपाय ढूढ़ने चाहिए अन्यथा अष्टवर्ग, दशमूल, अशोक छाल, तेज पत्र, रोहितक छाल, अनन्तमूल, दंतीमूल पत्राङ्गकाष्ठ आदि कतिपय काष्ठोषधियों का अभाव एवं पहचान करने में भी कठिनाई हो जाएगी।

हमें एक ओर संदिग्ध एवं अज्ञात द्रव्यों की खोज करने की चिंता नहीं है और दुसरी ओर व्यावसायिक कलुषित बुद्धि के व्यापारी लोग नकली एवं हीनगुणों वाली जड़ी-बूटियों का विक्रय करते जा रहे हैं। व्यवसायी वर्ग सही जड़ी-बूटियों के स्थान पर रूप-रंग में समानता लिये हुये द्रव्यों का विक्रय करते जा रहे हैं और हम आँख मूँद कर उनको प्रयोग में लाते जा रहे हैं। क्योंकि उन द्रव्यों के स्वरूप का ज्ञान और समुचित मूल्यांकन का साधन हमारे पास न हों तो उन द्रव्यों का हमारे द्वारा दुरुपयोग ही होगा। हम यह तो मानते हैं कि आज मानव के शरीर में चिकित्सा की दृष्टि से बहुत परिवर्तन हो गए हैं। नए-नए रोग पैदा होते जा रहे हैं। हमारी जीवन शक्ति तथा रोग क्षमता में परिवर्तन आने से रोगों की संख्या और स्वरूपों में भी परिवर्तन आ गए हैं। परंतु संपूर्ण सृष्टि में शताब्दियों के प्राकृतिक आघात प्रतिघात से भेषज द्रव्यों में कोई परिवर्तन नहीं हुए हैं।

इसलिए यह आवश्यक है कि द्रव्यों का अनुसंधान आयुर्वेद सिद्धांतानुसार होना चाहिए और उनके चिकित्सोपयोगी गुण एवं मात्राएं पुनः निर्धारित की जाएं। प्राचीन औषधियों के गुण एवं उनकी मात्राओं में अन्तर अवश्य संभाव्य है, तथा मनुष्य शरीर रूपी तुला में भी अवश्य भेद आ गया है, अर्थात् प्राचीनों के नुस्खे आज पूर्ववत् फलदायक हों यह कैसे संभव हो सकता है। अतः हम कह सकते हैं कि प्राचीन औषध द्रव्यों का मूल्यांकन आवश्यक है जो कि अनुसंधान के बिना संभव नहीं है। अब प्रश्न यह है कि प्राचीन भेषज द्रव्यों में अनुसंधान किस प्रकार हो ? हमारे आचार्यों ने भेषज द्रव्यों का चँहुमुखी अध्ययन करने का निर्देश किया है। यथा-

योग विक्त्वरूपज्ञ स्तासां तत्वविदुच्यते ।
किं पुनर्योविजानीयादौषधीः सर्वथाभिषक् ।।
च. सू.१।१२३

योग विज्ञान रूपज्ञ को चरक ने भैषज द्रव्यों का तत्वज्ञ बतलाया है। द्रव्यों के गुण-कर्म के अनुसार उनके परस्पर संयोग तथा प्रयोग को जानने वाले विद्वान् को योगविद् कहा है। इसलिए भेषज द्रव्यों के नाम, रूप, गुण, कर्म ये द्रव्य तत्वज्ञ के विषय हैं। इन्हीं विषयों को लेकर आयुर्वेद में द्रव्य गुण शास्त्र का निर्माण किया गया है। जिनके नाम रूपात्मक और गुणकर्मात्मक दो पक्ष होते हैं। आयुर्वेदीय भेषजों के नामरूपात्मक एवं गुण कर्मात्मक इन दोनों पक्षों की ओर हमारी उदासीनता होने से हमारे ज्ञान का ह्रास हुआ है। इस ह्रास की पूर्ति तभी संभव है जब आधुनिक विज्ञान के सहयोग से अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य किया जाए। यह तभी संभव है जब उभयात्मक रूप से अध्ययन किया जाए। इसमें शोधकर्ता को दोनों पक्षों के ज्ञान का अध्ययन भी अपेक्षित है।

आयुर्वेदीय द्रव्यगुण शास्त्र में नामरूपात्मक विधि द्वारा द्रव्यों के निर्णय में जटिलता उत्पन्न हो गई है। इस जटिलता को दूर करने हेतु केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय भारत सरकार ने वर्ष १९६२ में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में वनौषधि सर्वेक्षण एकक की स्थापना की, एवं वर्ष १९६९ में भारत सरकार ने केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद का गठन किया है। इस परिषद् की देख-रेख में सभी प्रांतों में वनौषधि सर्वेक्षण एककों की स्थापना हो चुकी है, जिसमें कुछ द्रव्यों की भ्रांतियों को दूर करने में सफलता मिली है।

मेरा विश्वास है कि वर्तमान भ्रांतियां बहुत कुछ दूर की जा सकती हैं। यदि ग्रामीण व जड़ी-बूटियों के व्यवसाय करने वाले आदिवासी जातियों के लोगों से सम्पर्क किया जाए। इनमें जो आदिवासी वनों में रहते हैं और पौधों के स्थानिक नाम एवं उनके गु .कर्मों की जानकारी रखते हैं। उन लोगों के माध्यम से जड़ी-बूटियों की जांच पड़ताल की जाए तो कतिपय औषधीय वनस्पतियों की पहचान में बहुत सहायता मिल सकती है। बिहार प्रांत के वन्य प्रदेशों में कई प्रकार की वनस्पतियां पाई जाती हैं। ग्रामीण एवं परम्परागत प्रचलित औषध द्रव्य आज भी इन लोगों के पास हैं जिनका कि उल्लेख शास्त्रों में नहीं मिलता। जैसे-राजकुसुम, भुईचम्पा, सतगेंठी, अगिनझाड़, नीलकांठी, भरमाल, वंझोरी, चिरायाकन्द, कामराज, भोजराज, सेवराज आदि ख्याति प्राप्त वनस्पतियां बिहार प्रान्त के जंगलों में पाई जाती हैं जो कि अनुसंधान करने पर गुणधर्मो में कारगर हो सकती हैं।

यह खुशी का विषय है कि बिहार प्रदेश सरकार ने इस संगोष्ठी का आयोजन भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय के समन्वय प्रयास से किया है, जिसमें नवीन उपलब्धियां एवं अनुभवों से लाभ होगा। इस पक्ष का अध्ययन अत्यधिक उपेक्षित बुद्धि से आज भी देखा जा रहा है। प्राचीनों को इस पक्ष का अध्ययन सरल और सुसाध्य था क्योंकि हमारे आचार्यो का सीधा संबंध वनों से था, यथा–

औषधीर्नामरूपाभ्यां जानते ह्यजपा वने ।
अविपाश्चैव गोपाश्च ये चान्ये वनवासिनः ।।

(चरकः)सू.१।१२१

प्राचीन समय में जंगलों, पर्वतों एवं ऋषि आश्रमों में शिक्षा केन्द्र होते थे। गुरु और शिष्य दोनों का जंगलों की जड़ी–बूटियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क था। उस समय देश–देशान्तर का प्रत्यक्ष ज्ञान सुप्राप्य रहा होगा। संभवतः इन्हीं कारणों से आर्ष ग्रंथ में भेषज द्रव्यों के नाम रूपात्मक विवेचन के लिए स्थान नहीं मिला है। आश्रमीय शिक्षण व्यवस्था के युग में सामान्य प्रत्यक्ष ज्ञान का विषय रहा है। जिसके कारण यह ज्ञान लेख बद्ध रूप में संग्रह नहीं किया जा सका। धीरे–धीरे यह शिक्षण प्रणाली आश्रमों से उठकर नगरों में आने लगी और धीरे–धीरे हमारा जड़ी–बूटियों से प्रत्यक्ष ज्ञान जाता रहा। इस उदासीनता के कारण आज हम सही रूप से अनुसंधान की दिशा निर्धारण नहीं कर पा रहे हैं। लगभग ११वीं शताब्दी से निघण्टु विषयक पृथक् रचनाओं का प्रारम्भिक काल माना जा सकता है। वन वासियों से सम्पर्क करके वनौषिधियों के नाम रूप का प्रत्यक्ष ज्ञान करना समाप्त सा हो गया था और निघण्टुकारों ने अपनी कृतियों में पूर्वाचार्यों एवं समकालीन लेखकों के वचनों का संग्रह कर देना पर्याप्त समझ लिया था, जिसके फलस्वरूप पर्यायवाची संज्ञाओं के समावेश करने की परम्परा अधिक बढ़ गई, जिसके कारण यह शास्त्रीय द्रव्य के वर्णन में अनेक पर्यायनामों का जमघट हो गया है। जिसमें मूर्वा, ब्राह्मी, मण्डूकपर्णी, लोध्र, तिल्वक, त्रिवृत–श्यामा, त्रायमाण, तालीसपत्र, अम्लवेतस, पाषाणभेद, शंखपुष्पी, प्रियंगु, अश्मन्तक, चोरक, चण्डा, ग्रंथिपर्ण, श्वेतकण्टकारी, लक्ष्मणा आदि अनेकों द्रव्य हैं। इन भ्रमात्मक पर्याय द्रव्यों के संग्रह में बिहार प्रांत के वनौषधि एवं संवर्धन कार्यक्रमों में सफलता मिलेगी। इस परियोजना के तहत बिहार प्रांत में पैदा होने वाली वनस्पतियों की जानकारी प्राप्त होगी तथा इसके साथ–साथ ग्रामीण परम्परागत उपयोग की वनस्पतियों की भी जानकारी मिलने में सुविधा होगी। इस क्षेत्र की जलवायु के अनुकूल पैदा होने वाली जड़ी–बूटियों की खेती कराने में भी सफलता मिलेगी। बिहार प्रदेश की जलवायु के अनुकूल दुर्लभ एवं कम मात्रा में मिलने वाली जड़ी–बूटियों की पैदावार भी बढ़ाई जा सकती है। वनौषधि सर्वेक्षण संकलन, उत्पादन एवं भेषज संग्रहालय नामक उपरोक्त विषयक शीर्षक में लेखक का लेख सचित्र आयुर्वेद पत्रिका मई–१९८७ में प्रकाशित हुआ है, जिसके आधार पर वनौषधि संग्रह, खेती एवं जड़ी–बूटियों के नाम रूप परिचय आदिकी विस्तृत जानकारी दी गई है।

बिहार प्रांत की जडी–बूटियों के विषय में भी वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा वर्ष १९४९ में वनौषधि सर्वेक्षण भी डा. बलवन्तसिंह जी के नेतृत्व में कराया गया था, जिसका प्रकाशन वर्ष

१९५५ में बिहार की वनस्पतियां नाम से किया गया है। वर्ष १९७० में पटना में केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् के अधीनस्थ वनौषधि सर्वेक्षण एकक कार्य कर रहा है। इस केन्द्र के माध्यम से इस प्रदेश की वन संपदा के महत्वपूर्ण आंकड़े एवं सुझाव प्राप्त कर रचनात्मक योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा सकता है। लेखक के विचार से कुछ निम्न सुझाव इस प्रदेश की जड़ी-बूटियों के रखरखाव एवं संवर्धन हेतु प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिन पर विद्वानों को विचार कर सरकार के माध्यम से क्रियान्वयन कराना है :-

सुझावः-

१. आदिवासी ग्रामीण आंचलों में वनौषधि वाटिका एवं नर्सरी की स्थापना की जाए।

२. जड़ी-बूटियों की संग्रह विधि एवं रखरखाव संबंधी जानकारी के लिए छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशित की जाएं एवं ग्रामीणों को इसका प्रशिक्षण दिया जाए।

३. ब्लाक-स्तर पर जड़ी-बूटियों के भण्डार स्थापित किए जाएं और इनका लाभांश आदिवासी ग्रामीण जनता को भागीदार बनाकर दिया जाए।

आभारः-

उपयोगी सुझाव एवं परामर्श हेतु लेखक डा. विवेकानंद पाण्डेय, निदेशक, केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् (भारत सरकार) का हृदय से आभार प्रकट करता है।

जीवन में जीवनामृत की सार्थकता

वैद्य श्री मदन मोहन पाठक आयुर्वेदाचार्य
पूर्व अध्यक्ष निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ)

"असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्माऽमृतं गमय ।।"

जीवन शरीर, इन्द्रियों, मन एवं आत्मा के संयोग को कहते हैं । जिस कालावधि तक यह संयोग बना रहता है, यथा- च. सू. अ. १-४२

"शरीरेन्द्रिय सत्वात्म-संयोगो धारि जीवितम् ।
नित्यगश्चानुबन्धश्च पर्य्यायैरायुरुच्यते ।।"

इस संयोग को बनाए रखने में जल की विशेष सार्थक भूमि का है । इसीलिए जल के अनेकों नामों में अमृत तथा जीवन भी इसी के नाम हैं ।

"पानीयंसलिलं नीरं कीलालं जलमम्बु च ।
आपोवार्वारि कं तोयं पयः पाथस्तथोदकम् ।।
जीवनम् वनमम्भोऽर्णोऽमृतं घनरसोऽपि च ।।१।।"

यथा भाव प्रकाश वारि वर्ग-१-अर्थात्

पानीय, सलिल, नीर, कीलाल, जल, अम्बु, आपः, वार्, वारि, क, तोय, पयः ,पाथः, उदक, जीवन, वन, अम्भः, अर्ण, अमृत तथा घनरस । यह सब पानी के आयुर्वेद सम्मत नाम हैं । इनमें जीवन और अमृत भी इसके नाम हैं । और ये नाम बहुत ही सार्थक हैं ।

हमारे शरीर में जितना भी भार होता है, उस सब का २/३ अंश (या लगभग७०% भार) जल तत्व का होता है । हमारे शरीर में रक्त धातु भी जीवन कहलाती है । इसमें रक्त रस या प्लाज्मा (plasma) का भार ५५ प्रतिशत होता है । शेष रक्त, श्वेत कोषायें और चक्रिकाएं या ब्लडप्लेट (Blood Platelets) आदि सब का भार ४५ प्रतिशत होता है । रक्त रस (Plasma) में जलीयांश ६० प्रतिशत होता है । इस का अभिप्रेतार्थ यही है कि जीवन के लिए जल अत्यन्त उपयोगी है ।

जल के अन्य नामों में एक नाम 'क' भी जल का है । "केन जलेन फलतीति कफः ।"

इस व्युत्पत्ति के अनुसार कफ का सम्बन्ध जल से बहुत घनिष्ट है, क्योंकि जल से ही कफ की निष्पत्ति होती है । शरीर में कफ का कार्य इस प्रकार बताया है । यथा सु. सू. अ. १५-४,

"सन्धि संश्लेषण, स्नेहन, रोपण, पूरण, बल,
स्थैर्यकृच्छ्लेष्मा पंचधा प्रविभक्त उदककर्मणाऽनुग्रहं करोति ।।४।।"

अर्थात् कफ ही शरीर की सभी सन्धियों का स्नेहन करता है। और उनको भलीभांति बांध कर रखता है। हमारी त्वचा के नीचे स्नेह ग्रन्थियां (Fat Glands) हैं। उनके माध्यम से त्वचा आदि सभी अवयवों को यथोचित स्नेह प्रदान करता है। व्रण होने पर व्रण रोपण करता है। शरीर का बहुत बड़ा भाग भांति-भांति की अनगिनत कोषाओं से निर्मित करता है। यही कफ बल और शरीर को स्थिरता प्रदान करता है।

जल द्रव होता है। तरल होता है। इसीलिए पोषक तत्व या आहारीय सार तत्व इसमें आसानी से घुल जाते हैं। रस रक्तवह स्रोतों के द्वारा यह तत्व वहन होकर अभीप्सित लघु एवं सूक्ष्मतम कोषाओं तक वात-धातु की सहायता से पहुंच जाते हैं। पित्त धातु की सहायता से आहार का पाचन होकर सारभूत भाग जल में घुलनशील बन जाता है। इस भांति कफ उदक कर्म से शरीर का अनुग्रह करता है। दूसरे शब्दों में जहां भी जल की आवश्यकता होती है, वहां जल तो पहुंचता ही है, रसरक्त के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर को आहार एवं पोषक तत्व भी उपलब्ध हो जाते हैं।

न केवल पोषक तत्व ही जलीयांश में घुल कर सर्वत्र शरीर में पहुंचते हैं, वरन् अनेकों त्याज्य मल भी इसमें ही घुलकर शरीर से बाहर निकलते रहते हैं। जैसे यूरिया या प्रोभूमिजन क्लेद जो प्रोटीन का यकृत् द्वारा निर्मित मल है। वृक्कों से छनकर उचित मात्रा में मूत्रमार्ग से बाहर निकलजाता है। वृक्कों की क्षरणया धनन क्रिया में खराबी हाने से या वृक्कों के वंक्षण भाग में शोथ होने पर जब यह पूरा छन नहीं पाता हैं, तब इसका यूरिया (प्रोभूमिजन क्लेद) का अनपेक्षित अंश रक्त में ही रह जाता है। फलतः यह भयंकर विष का काम करता है। रक्त में इसकी आवश्यकता से अधिक मात्रा होने पर बहुधा व्यक्ति बैहोश हो जाता हे। कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है।

यहां प्रसंग वश मूत्रवह स्रोत और बंक्षण के विषय में भी कुछ अति संक्षेप में कहना असंगत न होगा। यथा च.वि. ५-८ "मूत्रवहानां स्रोतसां वस्तिर्मूलं वंक्षणौ च, प्रदुष्टानां तु खल्वेषामिदं विशेष-विज्ञानं भवति, तद्यथा अतिसृष्ट-मतिबद्धं प्रकुपितमल्पाल्पमभीक्ष्णं वा बहलं सशूलं मूत्रयन्तं दृष्ट्वा मूत्रवहान्यस्य स्रोतांसि प्रदुष्टानीति विद्यात्।" अर्थात् मूत्र वह स्रोतों का मूल वस्ति और वंक्षण द्वय हैं। इनके विकार युक्त होने पर अधिक बार या रुक-रुक कर या थोड़ा-थोड़ा या पुनः-पुनः पीड़ा के साथ गाढ़ा मूत्र आता है। मूत्र प्रसेक या मूत्रक्षरण वृक्क के कार्य माने जाते हैं। वृक्कों के अन्दर का एक भाग Cortex है तथा दूसरा भाग Medulla है जो ठोस है तथा वही सम्भवतः मेदो वह स्रोत मूल है। इनमें असंख्य मूत्रप्रसेक प्रणालियां हैं। इन से मूत्र छन कर गवीनियों (Ureters) के द्वारा वस्ति में संकलित होता रहता है। एक दिन में यह मूत्रप्रसेक १५० से १८० लीटर तक प्रस्तुत होता है। पर सभी मूत्र मार्ग से नहीं निकलता। मूत्र मार्ग से लगभग १,१/२ लीटर ही निकलता है। शेष को संलग्न प्रणालियों द्वारा पुनः रक्त में ही भेज दिया जाता है।

यहां विशेष विचारणीय बात यह है कि मूत्रवह स्रोतों का मूल वस्ति और बंक्षण को माना है, वृक्कों का नहीं। वृक्कों को मेदोवह स्रोतों का मूल माना है। यथा च वि ५-८ "मेदोवहानां स्रोतसां वृक्कौ मूलं वपावहनं च"। इस चरक सूक्त के द्वारा यह सुतरां स्पष्ट हो जाता है कि सम्पूर्ण

वृक्क मूत्र वह स्रोत का मूल नहीं हैं। वंक्षण ही हैं। यदि हम अधिक विचार करें तो वंक्षण प्रदेश वृक्क मूत्र-प्रस्तुति स्थल से लेकर इस में संलग्न गवीनियों के प्रदेश तक का नाम प्रतीत होता है। वंक्षण शब्द से भी यही ध्वनित होता है। मूत्रवह स्रोत का मूल होने के कारण इस विचार की पुष्टि भी हो जाती है।

यह बातें प्रसंगवश कही गयीं हैं। वैसे जल प्रक्रिया से सम्बद्ध होने के नाते यहां इसका अल्प विवेचन कर देना भी अनुचित नहीं है।

इसी प्रकार कफ के अन्य उदक कर्म से अनुग्रह कर्म निम्न भांति हैं। मुख में और क्लोम में प्रकृत्या कफांश रहता है। मुख का कफांश लालारस या सलाइवा (Saliva) युक्त होता है। यह भुक्त आहार में मिश्रित होता रहता है। इसकी पूर्ति भी इसी अनुग्रह कर्म के द्वारा होती रहती है। क्लोम में भी स्वभावतः कफांश या द्रवांश रहता ही है। श्वास-निश्वास प्रक्रिया में यह द्रवांश अति सहायक होता है। इस प्रक्रिया में द्रवांश का उपयोग निरंतर होते रहने से कुछ ह्रास भी होता रहता है। उसकी पूर्ति भी इस अनुग्रह कर्म से होती रहती है। अन्यत्र भी शरीर में यथापेक्ष द्रवांश की पूर्ति इसी प्रक्रिया द्वारा होती रहती है। इसीलिए च. वि. ५ में महर्षि चरक ने कहा है। "उदकवहानां स्रोतसां तालुमूलं क्लोम च, प्रदुष्टानां तु खल्वेषामिदं विशेष विज्ञानं भवति, तद्यथा जिह्वाताल्वोष्ठकण्ठक्लोमशोषं पिपासां चातिप्रवृद्धां दृष्ट्वोदकवहान्यस्य स्रोतांसि प्रदुष्टानीति विद्यात्।" ५-८॥ इसका अर्थ है कि जल वहन करने वाले स्रोतों का मूल तालु और क्लोम हैं। इनकी दुष्टि होने पर जीभ, तालु, ओष्ठ, कण्ठ तथा क्लोम शुष्क हो जाते हैं। फलतः इनका द्रवांश न्यूनातिन्यून हो जाता है। तब प्यास द्रवांश शोष के अनुपात में ही बढ़ जाती है। तालु यहां विशेषतः विचारणीय क्लोम की स्थिति है। कण्ठ और क्लोम (कोष्ठांग) के द्रवांश शोष से तृषा सम्बद्ध है। यदि उदक कर्म द्वारा यथोचित इन भागों में कफ तर्पण करता रहे तो न शोष होगा और न तृषाधिक्य। तृषाधिक्य के लिए ये तालु और क्लोम ही मूल रूपेण दायित्वशील हैं। इसी कारण तालु और क्लोम को उदकवहस्रोतों का मूल माना है। ओष्ठ, जिह्वा एवं गलप्रदेशशोष तो इनके निकटस्थ होने से प्रभावित भाग है। अतः गौण हैं। प्रमुख तो तालु और क्लोम ही हैं।

क्लोम की अवस्थिति एवं क्रिया के बारे में मैं तो पूर्णतः आश्वस्त हूँ। अतः क्लोम के सम्बन्ध में और वृक्कों के सम्बन्ध में फिर कभी सविस्तर अपने विचार रखूंगा।

इस उदकवह स्रोत के सम्बन्ध में यह सदा ध्यान रखने योग्य है कि इसका अभिप्राय पीतजल वहन करना मात्र नहीं है, वरन् शरीरस्थित जलीयांश को वहन करना है।

अब प्राणि-मात्र के लिए जल जिसे आयुर्वेद में जीवन या अमृत कहते हैं कि कितनी, किस रूप में, किन-किन रोगों को दूर करने में सहज व सरल भूमिका है। और "स्वास्थ्य एवं जन-जीवन-रक्षा में कितनी उपयोगिता है," पर प्रकाश डालना उचित होगा। साथ ही "जल को अपव्यय एवं प्रदूषण से बचाना न केवल जन-जीवन वरन् वनस्पति-जीवन (औषधियों) के रक्षार्थ भी परमावश्यक हैं," पर भी विचार करना अति-संगत होगा।

शरीर के भार में केवल जलीयांश का भार २/३ या लगभग ७०प्रतिशत होता है, इसलिए इसका उपयोग भी उचित मात्रा में अनिवार्य होता है। प्रायः सभी जल का उपयोग साधारणतः करते ही हैं। यहां पर ज्ञातव्य केवल इतना है कि "एक बार में आवश्यकता से अधिक जल नहीं पीना चाहिए।" आयुर्वेद के इस सिद्धान्त को सदा ध्यान में रखना चाहिए।

१. "मुहुर्मुहुर्वारि पिबेदभूरि।" अर्थात् जल बार-बार अल्प मात्रा में ही पीना चाहिए। यही बात अष्टांग हृदय सू.अ.५-१४ में कही हैः- यथा

२. ऋते शरन्निदाघाभ्यां पिबेत्स्वस्थोऽपि चाल् पशः ।।१४।।" अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति को भी थाड़ा-थोड़ा ही, जल पीना चाहिए। हां, ग्रीष्म एवं शरद् ऋतुओं में अधिक जल भी एक बार में पिया जा सकता है।

३. भोजन के मध्य में जलपान, शरीर को समान स्थिति में रखता है। भोजन के अंत में जल-पान से व्यक्ति मोटा होता है। भोजन के प्रथम ही जल-पान, व्यक्ति को कृश बनाता है।

यथाः- अ.ह.अ. ५-१५ समस्थूलकृशा भुक्तमध्यान्तप्रथमाम्बुपाः।"

४. अजीर्ण रोगियों, कठोर मल वालों एवं कब्ज से पीड़ित रोगियों को प्रातःकाल जल, यथेष्ट मात्रा में पीना चाहिए। वृक्कों एवं पौरुषग्रन्थि के कार्य को ठीक रखने के लिए भी जल-पान अत्यावश्यक है।

५. पेट के रोगियों (अतिसार), मन्दाग्नि (भूख न लगना), पाण्डु और शोथ एवं जलोदर के रोगियों को जल, अत्यल्प ही पीना चाहिए। अच्छा तो यही है कि इनके स्थान पर अन्य उपयुक्त द्रव्य (पदार्थों) का सेवन करना चाहिए। जैसे दूध, फलरस आदि। कई अन्य भी रोग है, जिनमें जल, अल्प या नहीं पीना चाहिए।

६. अत्यधिक शीतल एवं भूमि पर सूर्यतप्त जल नहीं पीना चाहिए।

७. अत्यधिक जल-पान या अत्यधिक कम जल-पान कई रोगों को जन्म देते हैं।

८. दूषित जल जिसमें मिट्टी हो, कृमि हों, अन्य विषाणु या जीव हों, नहीं पीना चाहिए।

९. यदि स्वच्छ जल उपलब्ध ही न हो तब जल को इतना उबालें कि उसका एक चौथाई भाग जल जावे। शेष ३/४भाग को भी मोटे कपड़े से छानकर ही पीना चाहिए या फिर जल शोधक पात्र (Filter) द्वारा शुद्ध करके ही पीना चाहिए

१०. गर्म जल भी अनेक रोगों में अति हितकर है।

११. जब तक किसी रोग विशेष में चिकित्सक निषेध न करे, स्नान नित्य शुद्ध जल से करना चाहिए।

१२. मुखदूषिका (मुहांसे), उन नवयुवकों को प्रायः नहीं निकलते हैं, जो नित्य १०-१२ बार मुख को शुद्धजल से धोते हैं। आखों को रोगों से बचाने के लिए भी, इसी भांति मुख-प्रक्षालन ठीक रहता है।

१३. यदि घबराहट हो, मूर्च्छा हो, थकावट हो या गर्मी अधिक प्रतीत होती हो, तब शीघ्रजल पीना चाहिए। मूर्च्छा की स्थिति में तो जल के छींटे भी मुख पर तुरन्त मारने चाहिए। हां, अपस्मार (मिरगी) की मूर्च्छा में जल सिंचन नंहीं करना चाहिए।

१४. अधिक चिन्ता या चिन्तनशीलता की स्थिति में भी थोड़ा-थोड़ा जल-पान लाभकर होता है।

१५. रात्रि को सोते समय भी जल किसी शुद्ध पात्र में, भर कर, ढक कर, अति-समीप सुरक्षित रखना चाहिए, ताकि सहसा आवश्यकता पर अविलम्ब उपलब्ध हो सके।

१६. कुछ भी खाने के बाद, ५-१० बार, शुद्ध जल के कुल्ले अवश्य करने चाहिए।

१७. सोने से पूर्व, प्रातः काल की दैनिक क्रिया के समान ही दन्त, मुख, नेत्र प्रक्षालन हितकर होता है।

१८. ध्यान रहे कि जल जीवन है। अमृत संज्ञक है। प्राणी मात्र ही नहीं, पेड़-पौधों और औषधियों की जीवन-रक्षा के लिए भी अत्यावश्यक है।

१९. इसका अपव्यय महापाप है। इसमें कूड़ा-कर्कट या अन्य दूषित वस्तुएं डालना, ईश्वर की दृष्टि में अक्षम्य अपराध है।

२०. इसीलिए आयुर्वेद में इसके गुणों के वर्णन इस प्रकार किए हैं। यथाः- भा.प्र. वारि वर्ग-२ -

"पानीयं श्रमनाशनं क्लमहरं मूर्च्छापिपासापहं-
तन्द्राच्छर्दिविबन्धहृद्बलकरं निद्राहरं तर्पणम् ।।१।।

हृद्यं गुप्तरसं ह्यजीर्णशमकं नित्यं हितं शीतलं-
लघ्वच्छं रसकारणं निगदितं पीयूषवज्जीवनम् ।।२।।"

अर्थात् यह जल अमृत के समान सबके जीवन का रक्षक है। यही विश्व समाज का सुख एवं इस अमृत का सदुपयोग स्वास्थ्य का प्रमुख आधार है।

आयुर्वेदीय चिकित्सादर्श

प्रो० वेणीमाधव अश्विनी कुमार शास्त्री

यद्यपि आज चिकित्सा कही जाने वाली अनेकों पद्धतियां भारत वर्ष में तथा समूचे विश्वभर में प्रचलित हैं पर इन सभी को अपने कुटिल कूटनीतिक दिग्दर्शन के जनाधार पर पीछे धकेल कर माडर्न मेडिसिन पद्धति पंक्ति के आगे खड़ी हो गई है। मार्डन मेडिसिन को यह अग्रिम स्थान उसकी गुण वत्ता या वैज्ञानिक कसौटी पर खरी उतरने के कारण नहीं मिला है। इसके पीछे राजनैतिक कुटिलता, बहुराष्ट्रीय व्यापारिक बुद्धि, दृश्यश्रव्य माध्यमों का कुशल प्रयोग तथा सम्पन्न राष्ट्रों में इसकी व्यापकता, मुख्य कारण रही है। माडर्न मेडिसिन ने इस प्रकार की वर्ण और जाति रहित भानुमती परिवार की कल्पना की है कि, स्वयं का कोई मौलिक सिद्धांत न होते हुए भौतिकी, रसायन, वानस्पतिकी तथा जैविकी विषयों के संकर संयोग से अपना कुटुम्ब ना कुछ समय में खड़ा कर लिया है और मात्र अभ्यास (प्रक्टिस) की चकाचौंध पैदाकर स्वयं को अग्रणी बना लिया है। आश्चर्यजनक किन्तु सत्य यह है कि विज्ञान सिद्धांत से आधार पाप्तकर प्रयोग से सिद्धि एवं व्यवहार करता है, किन्तु माडर्न मेडिसिन में सिद्धांत हीन प्रयोग की खुली छूट है। जैसे कि पश्चिमी सामाजिक आचरण में विवाह आदि संस्कारों के प्रति खुली मुक्त संभोग की छूट है।

प्रचलित चिकित्सा पद्धितयों का आधार भी मात्र प्रयोग एवं व्यवहार है, जबकि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का आधार सुदृढ़ सिद्धांतों पर आधारित होगा। सुदृढ़ सिद्धांतों पर आधारित होकर तदनुसार ही प्रयोग एवं व्यवहार रूपी (प्रेक्टिस) को वैज्ञानिक आदर्श मानता है। सिद्धांत पूर्वक आयुर्वेद चिकित्सा का व्यवहार कभी-२ अपने शुद्ध रूप में हमें तथा संसार को दर्शन शास्त्र जैसा प्रतीत होता है। ऐसा फतवा कुछ एक तथा कथित माडर्न मतानुयायी अपने भी, आयुर्वेद को देने में चूक नहीं करते।

एक सुदृढ सिद्धांत का उदाहरण आयुर्वेद के रोग विज्ञान से प्रस्तुत है कि राजयक्ष्मा रोग त्रिदोष प्रकोप जन्य आयुर्वेद मानता है। रोग में तीनो दोषों की विकृति मेंः- पृथक्-२ लक्षण निर्धारित किये गये हैं। इसी त्रिदोष प्रकोप के निवारणार्थ विभिन्न दोष जन्य विकृतियों की सैद्धांन्तिक हेतु विपरीत चिकित्सा व्याधि विपरीत चिकित्सा तथा हेतु व्याधि उभय विपरीत चिकत्सा करने का चिकत्सा सूत्र निर्धारित किया गया है। चूँकि आयुर्वेदानुसार दोष शरीर के धारक (धातु हैं) नियामक शक्ति, है, विकार कारक दोष या मल हैं। अतः सिद्धांत के अनुरूप हेतु विरीत चिकित्सा में दोषों के धातु (धारण) रूप की रक्षा की जाती है। व्याधि विपरीत चिकित्सा में शक्ति रूप नियामक दोष शक्ति का संरक्षण किया जाता है। तथा उभय विपरीत चिकित्सा में वात, पित्त,कफ का (त्रिदोष) के विकार कारी प्रभावों को संयुक्त रूप से नष्ट कर द्रुतगामी प्रभाव द्वारा आत्ययिक संरक्षण प्रदान किया जाता है।

आयुर्वेदीय चिकित्सा की इस सैद्धांन्तिक आधार शिला पर ही आयुर्वेदीय चिकित्सा प्रयोग एवं व्यवहार की समूची मंजिलें खड़ी हैं। इस पद्धति में कृत्रिम एवं शरीर की मूल स्थिति (नेचुरल स्टेट) के विपरीत कोई कार्य या विधि नहीं अपनायी जाती है ! इसलिए देह बल (ओजस्) देहबल पराक्रम (व्याधिक्षमत्व) इस चिकित्सा में सांगोपांग सुरक्षित रहता है।

जबकि इस आदर्श चिकित्सा आयुर्वेद पद्धति की तुलना में तथा कथित माडर्न मेडिसन राजयक्ष्मा रोग में देह धारक धातुओं, नियामक शक्तियों तथा पृथक् दोषों एवं मलों की उपेक्षा कर मात्र सिद्धांत हीन प्रकृति का व्यवहार कर (एन्टीबेक्टेरियल) का वैक्टेरिया प्रतिरोधक अथवा नाशक द्रव्यों का प्रयोग करते हैं। इन औषधियों के प्रभाव (बेसीलस ट्यूबर क्लौसिस) की संख्या मात्र क्षेत्र नियंत्रण भर के लिए तो होती है किन्तु मानव शरीर के असंख्य परमाणुओं तथा अंगावयवों द्वारा जीवन रक्षक रूप में निर्मित तत्वों (स्रावों) जैव रासायनिक परिवर्तनों पर इनका दुष्प्रभाव होता है। इस चिकित्सा से रोगी का नैसर्गिक बल एवं मानवीय आहार, निद्रा, मैथुन आदि भी बुरी तरह प्रभावित होते हैं। इसका एक मात्र कारण इस चिकित्सा के प्रयोगकारी (प्रेक्टिकल) किंतु सिद्धांत हीन दुष्परिणाम का ही प्रभाव है। ओजोबल एवं व्याधि क्षमत्व का कहीं भी आकलन नहीं होता।

त्रिदोष प्रकोप न होने की दशा में टी.वी. दण्डाणुओं का शरीर में अधिष्ठान नहीं होता। त्रिदोष प्रकोप होने पर ही दण्डाणु शरीर में अधिष्ठान प्राप्त कर पाता है तथा विकाश भी करता है। अब मात्र अंकेक्षण एवं तुलनात्मक सांख्यिकीय आकड़े प्रस्तुत कर माडर्न प्रयोग वादी यह श्रेय प्राप्त कर लेते हैं कि यह चिकित्सा रोगनाशक (रेडिकल) है। जबकि वैज्ञानिक सत्य यह है कि इस प्रयोग की आधार शिला किसी सिद्धांत परक नहीं, होने से यह स्वयं में वैज्ञानिक आदर्श पर खरा नहीं है।

रोग निवारण में भी शारीरिक विकृति (Pathological Sign And Symptomes)को महत्व न देकर मात्र ई.एस.आर. कफ परीक्षा में दण्डाणुओं की उपस्थिति तथा किरण परीक्षा को आधार बनाकर चिकित्सा के प्रयोग भर की दुहाई तो सरलता पूर्वक दी जा रही है किन्तु सिद्धांत और प्रयोग की आदर्श कसौटी पर यह कभी भी खरा नहीं उतरता। रोगी ठीक होकर भी रोगी ही रहता है। शायद ही कोई क्षय रोगी क्षय मुक्त हुआ हो। यदि त्रिदोष प्रकोप की समीक्षा के साथ यह प्रयोग प्रमाणित नहीं होता तो त्रिदोष सिद्धांत की न्यूनता नहीं है, क्योंकि सिद्धांत स्थूल सूक्ष्म तथा विचार परक (शक्तिरूप) भी होता है। अतः उसे सार्वजनिक कदापि नहीं बनाया जा सकता। वह तो बुद्धि कौशल सतत अभ्यास एवं अनुभव के प्रकाश में प्रमाणित होता है। अतः चिकित्सा का वैज्ञानिक आदर्श सिद्धांत और तदनुरूप प्रयोग ही है। इसी के कारण आदर्श चिकित्सा जहाँ निरापद होती है, वहीं चमत्कार शून्य भी। चमत्कार और प्रचार के आधार पर चलायी जा रही चिकित्सा विधि कदापि सैद्धांतिक नहीं हो सकती।

सिद्धांत की गति प्रकृति (नेचर) के साथ कदम मिलाकर चलती है। कृत्रिमता और मात्र प्रयोग (प्रेक्टिस) का आधार प्रकृति के विरुद्ध, सहज भावों के विपरीत तथा द्रुतगति किन्तु क्षण भंगुर होता है। आयुर्वेदज्ञों को इस शीर्षक के सूक्ष्म तत्वों का बोध रुग्णसमुदाय को कराने की क्षमता चातुरी माध्यम और कुशलता अभ्यास आज के युग की एक मात्र अपेक्षा है। यहीं हम विचार के साथ चरैवेति की संकल्पना करें।

अनुसन्धान हेतु संभावना का नया क्षेत्र-

डा. सतीश चन्द्र सॉंख्यधर रिटायर्ड प्रिंसिपल
गवर्न. श्रायु. कालेज जम्मू-१८०००

उक्ति है-

शास्त्रं हि शास्त्रान्तरानुबन्धिः, जिसका भाव है कि एक शास्त्र दूसरे शास्त्र-से कहीं न कहीं किसी न किसी क्षेत्र से विचार से, क्रिया से अनुवन्धित होता है। यह आपसी अनुवन्धन ही अध्येता के सामने चिन्तन के, मनन के नये आयाम उपस्थित करता है। ज्योतिष एक पृथक् शास्त्र है। जब उसकी अवधारणाओं का स्वास्थ्य के क्षेत्र में क्रियात्मक प्रयोग हुआ तो वीरसिहांवलोक जैसे अनूठे ग्रन्थ का सृजन ही नहीं हुआ, एक नई विधा ने चिकित्सा के क्षेत्र में जन्म लिया। आज भी ज्योतिष आयुर्वेद की समुचित, प्रयोग एवं उपयोग के अपरिमित आयाम अपने में संजोये हैं।

इसे ही एक और संन्दर्भ में जरा आगे सोचें, भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना से पहले के पूरे मुस्लिम काल तथा उससे भी पूर्व नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालयों की परम्परा का अन्तराल आयुर्वेद के विद्यालयीय प्रशिक्षण के विना ही रहा। तो भी अपनी प्रौढ शास्त्रीयता और परिपक्व सिद्धान्तों तथा जीवन की दैनन्दिन उपयोगिता के सहारे न सिर्फ आयुर्वेद जीवित रहा वरन् इसमें कई -नई रचनायें और नये-नये सात्म्यीकरण भी होते रहे। फिरंग का उल्लेख - मनः शिला का प्रयोग, इसके सशक्त उदाहरण हैं। ऐसे प्रगति चिन्ह तब और महत्व पा जाते हैं जब हम महसूस करते हैं कि तब राज्याश्रय का आधार नहीं था। आधार या समवल था तो केवल संवल और स्वस्थ गुरु शिष्य परम्परा का।

यह गुरु शिष्य परम्परा भी अधिकतर संस्कृत पठन पाठन करने वालों तक ही सीमित रही थी, फिर जैसे जैसे हजार वर्ष के मुस्लिम काल में संस्कृत के अध्ययन अध्यापन का ह्रास होता गया वैसे वैसे आयुर्वेदज्ञ भी अपनी अपनी लोकभाषाओं का आश्रय लेते गये। ये लोकभाषायें ही उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनीं। इस विचार ने एक प्रेरणा को जन्म दिया- एक संभावना जगाई कि जो हम पर दोष लगता रहा है कि आयुर्वेदज्ञों ने अपना अनुभव बांटने में संकोच बरता है वह दोष इन भाषागत रचनाओं की खोज खवर लेने से काफी हद तक दूर हो सकता है। इसलिये पहले हिन्दी के मध्यकालीन साहित्य की खोज खवर लेने की बात सोची गई। मराठी, गुजराती, बंगाली, तेलुगु, मलयाली और तमिल आदि भी इस संभावना से अछूती नहीं रही होगी। उनके ज्ञाता भी इस ओर प्रवृत्त हो सकते हैं।

इसी प्रसंग में जयपुर के आमेर शास्त्र भण्डार में ('ट'भण्डार) में आयुर्वेद के अनेकों गुटकों के संग्रह की सूचना मिली जिनमें मध्यकाल के चिकित्सकीय अनुभवों का सार संग्रहीत है। जयपुर के १२ भण्डारों में लगभग ८५० गुटकों की सूचना है। अनेकों बस्ते ऐसे हैं जिनमें आयुर्वेद के अनेक

ग्रन्थ बंधे पड़े हैं । नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, के ग्रन्थागार में मुस्लिम काल की चिकित्साविज्ञान से सम्बन्धित सैकड़ों पाण्डुलिपियां सुरक्षित हैं जिनका आजतक ढंग से वर्गीकरण तक नहीं हो सका है । एक दो नहीं अनेकों आयुर्वेद के हस्त लेख अभी सूरज की रोशनी देखने - पाने की प्रतीक्षा में हैं । कुछ कमोवेश यही स्थिति अमीनुद्धोला पब्लिक लाइब्रेरी लखनऊ और हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के पाण्डुलिपि संग्रहालयों की है । केवल रणवीर लायब्रेरी जम्मू के आयुर्वेदीय ग्रन्थों की व्यवस्थित सूची बन पाई है ।

देश में और भी ग्रन्थागार होंगे-और हैं, कुछ जानकारी में और कुछ व्यक्तिगत स्वामित्व में, जिनमें आयुर्वेद की बहूमूल्य सामग्री आज भी असूर्यम्पश्या दारा की भांति छिपी होगी । पूर्वोक्त ग्रन्थागारों की खोजखबर लेने का मुझे २५ वर्ष पूर्व अवसर लगा था । तब अपने सीमित साधनों से अपनी थीसिस के लिये जहाँ-जहाँ भी जा सका-गया था ।

((१) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, १९००-१९५० ई.)

(प्रथम खण्ड (ना.प्र.सभा काशी सं.-२९३७०)

थीसिस के लिये सामग्री मिली, इसका तो सुख रहा परन्तु इससे अधिक दुःख इस बात का रहा कि एक दुर्लभ ज्ञान भण्डार अभी भी हमारे वैद्यसमाज का समुचित ध्यान आकृष्ट करने में समर्थ नहीं हो पाया है । और तो और हमारे विद्यालयों मे जहाँ जहाँ भी स्नातकोत्तर अनुसन्धान केन्द्र हैं - वहाँ इन मध्यकालीन संग्रहों पर उनका ध्यान नहीं दिया जाता है । प्राचीनता संस्कृत और संहिता के दायरों में बंधे कुछ मनीषी अभी भी इन पाण्डुलिपियों-ग्रन्थों को 'भाखा' में लिखे होने के कारण हेय दृष्टि से देखने के आदी हैं । वस्तुतः ये पाण्डुलिपियां उस अन्धेयुग के चिकित्सकों के वैद्यकीय अनुभव की अमूल्यथाती हैं जब न विद्यालय थे आयुर्वेद के, न सूचनाओं के आदान प्रदान के साधन थे, न अखवार थे, न पत्रिकायें थीं । तो इन भाखा-भाषी चिकित्सको ने आगामी पीढ़ी के लिये टूटे फूटे ही सही संस्कृत के आयुर्वेदीय ग्रन्थों के न केवल अनुवाद प्रस्तुत किये अपितु अपने निजी अनुभवों को भी लिपिवद्ध किया ।

अशुद्ध दशा-टूटी फूटी भाषा-पुनरावृत्ति और पिष्ट पेषण से मुक्त हो कर भी ये पाण्डु लिपियां उस अन्धेयुग के वे दीप स्तम्भ हैं जो दादी, नानी के अनुभूत एवं परम्परागत चिकित्साज्ञान का आधार बने रहे । आज की तीव्र गति से वढ़ती वैज्ञानिक प्रगति के सन्दर्भ में भी एकदम उपेक्षणीय नहीं कहे जा सकते । क्योंकि पता नहीं कब-किस परखने वाली आंख को फंफूंदी में पेनिसिलीन की भांति कुछ नया उपलब्ध हो जाये । आखिर स्व.डा.पी.जे. देशपाण्डे जी ने क्षारसूत्र कापुनर्स्थापन ऐसी ही लोकविधाओं से प्रेरित होकर किया था जिनका कोई लेखा जोखा तक न था ।

श्रद्धेय त्रिगुणाजी का अभिनन्दन ग्रंथ आयुर्वेद के मनीषियों विद्वानों का हृदयहार बनेगा । इस लिये भी मुझे यह उपयुक्त लगा कि अपने अग्रजों और अनुजों का इस ओर ध्यानाकर्षण करूं । इस अवसर को माध्यम बनाकर पान के साथ ढाक के पत्ते को भी पात्रता दिलाने का एक प्रयास करूं ।

एक बार फिर मूल विषय पर आकर शास्त्रानुवन्धित्व की बात उठाता हूँ। ब्रिटिश काल का पूर्वार्ध और उससे पूर्व मुस्लिम काल को आयुर्वेद के शिक्षण प्रचार-प्रसार एवं ज्ञान के आदान प्रदान के नाते मैंने अन्धायुग कहने का दुस्साहस किया है। युग कितना भी अन्धा या जागरूक हो, व्यक्ति अपनी शरीर व्यथा की उपेक्षा नहीं कर पाता है। वह कामगार है तो साथियों से चर्चा करेगा घर परिवार में वात करेगा। फिर यदि लेखक है तो उसकी रचनाओं में व्यथा प्रतिबिम्बित होगी। साथ ही यदि कुछ ऐसा उसे प्राप्त होता है, जो अद्भुत हो, उसे चमत्कारी प्रतीत हो, अपने कष्ट से उसे राहत दे, तो अनिवार्यतः उसकी रचना में- अभिव्यक्ति में भी प्रतिध्वनित होगा। इस तथ्य को कसौटी मानकर चला जाये तो इस मध्यकालीन साहित्य में भी हमें प्रचुर सामग्री - हिन्दी क्या सभी भाषाओं में-मिल सकती है। मैं यहाँ हिन्दी तक ही सीमित रहूँगा क्योंकि वह मेरी अपनी सीमा है।

स्थाली पुलाक न्यायेन कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। भले ही यह आयुर्वेद के शास्त्रज्ञ मनीषियों के समक्ष दुस्साहस या धृष्टता ही हो, तो भी मनीषी सन्त हंस गुण ग्रहण कर रकते हैं -वारि विकार के परिहरण न करने का आग्रह भी नहीं है। तुलसी को बाहुपीड़ा थी जीवन के उत्तरार्ध मे वे अवबाहुक रोग से पीड़ित थे। उन्होंने इस प्रसंग में कपिकच्छु का उल्लेख किया है। जब कि कपिकच्छु का आयुर्वेद में सामान्यतः वृष्य, बल्य, या बाजीकर रूप में ही प्रयोग मिलता है। अववाहुक में इसका उल्लेख दुर्लभ है। जबकि भावप्रकाश कार एवं राजनिघण्टु कार जैसे प्रसिद्ध निघण्टु में भी अवबाहुक में इसके प्रयोग का संकेत नहीं है। तब तुलसी का उल्लेख किसी तत्कालीन वैद्य की प्रतिभा का ही साक्षी हो सकता है, जो आज भी हमारे भेषजीय अनुसंधित्सुओं की कृपा कटाक्ष की प्रतीक्षा में है। तुलसी द्वारा राज मृगाङ्क का उल्लेख भी न केवल उसकी यक्ष्मा चिकित्सा की सफलता का ही द्योतक है अपितु उसकी निर्माण प्रक्रिया तक को अपने में समेटे है।

(१) ये रसशास्त्रीय प्रक्रिया में ऐसी लोकविश्रुत और सर्वजन सुलभ हो चुकी थी जैसी आज के युग में एण्टीवायोटिक्स या विटामिन्स के प्रति लोगों की अनुरागान्धता। पुटपाकका ग्रीष्म वर्णन में घनानन्द ने बड़ा रसात्मक प्रयोग किया है :-

बरनि वताई छिति व्योम की तताई

आयो जेठ आतताई पुटपाक सों करतु है।

हाल के कवियों में पद्माकर ने आयुर्वेद और काव्य का सटीक मिश्रण श्लेष के माध्यम से प्रस्तुत किया है कि देखते- सोचते ही बनता है :-

करत उपाय ना सुभाव लखि नारिन को भाव क्यों वे अनारिन को भरत कन्हाई हैं।

रस के प्रयोगनि की चर्चा चलावै कौन देतना सुदरसन हूँ यों सुधि सिराई है।

ह्यां तो विषमज्वर नियोग की चढ़ाई यह पाती कौन रोग की पठावत दवाई हैं।

(उ.शतक-३४)

काव्य में आयुर्वेद के उदाहरण यों तो अनन्त हो जायेंगे । इस दिग्दर्शन का केवल भाव यह है कि इस तरह का लेन देन और मिश्रण आज से नहीं आदिकाल से होता रहा है । और ऐसे उल्लेख कभी-कभी शास्त्रज्ञों को भी सोचने की नई दिशा दे देते हैं । इस प्रसंग में एक उदाहरण देना समीचीन होगा अष्टविध शस्त्र कर्मो में सिरावेध, जलौकावचारण प्रच्छान आदि मध्यकाल में खूब प्रचलित एवं लोक सम्मत थे । तुलसी ने प्रच्छान द्वारा विष प्रयोग की उपमा का प्रयोग किया है । सुनि सुतवचन कहति कैकेयी-मरमु पीड़ित जनु मादुरदेई । वृन्द कवि जलौकावचारण का वड़ा सटीक उल्लेख करते हैं -

दोषहिं को उमहैं गहैं-गुन न गहै खल लोक ।
पिये रुधिरपय ना पियै, लागि पयोधर जौंक ।। (कविता कौमुदी वृ.३८८)

किन्तु कवि रज्जव ने सिरावेध एवं शृंगी का उपयोग काव्य से करते हुये शास्त्रज्ञों के लिये भी एक नई बात कह दी है:-

रज्जव रिधिलोहू भरया तौ सुकृत सीर छड़ाइ ।
इहकारी करि ऊबरे नाहीं तौ मरि जाइ ।
(सुकृत को अंग रज्जववानी ८४ पृ.२०१)
आरभ भार अपार ले, तो रिधि रुधिर भराई ।
ताकौ जीवन जुगति यह सुकृतसीगीं लाइ । (वही -सं. ८५)
रावन सो राज रोग वढ़त विराट उर
दिन-दिन विकल सकल मुख राव सों
नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि
होतन विशोक ओट, ओत पावे न मनाक सो,
राम की रजायते रसायनी समीर सुनु
उतरि पयोधि पारसोधि सर्वाकसों,
जातुधान पुट-पुट पाक लंक जात रूप
रतन जतन जारि कियों है मृगांक सों (कविता वली)

अर्थात् व्याधि रूपी लोह की अधिकता होने पर सुकृत से शिरावेध करना चाहिए अथवा रक्त के अपार भार की दशा में जीवन की युक्ति ही सुकृत सिंङ्गी द्वारा रक्तमोक्षण है । हम सभी जानते हैं कि रक्तभाराधिक्य या ब्लडप्रेशर का कोई सीधा उल्लेख शास्त्र ग्रथों में नहीं है ये दोनों शब्द हृदय भाराधिक्य रक्तचाप नवनिर्मित है रज्जव का कथन इस बात का प्रमाण है उनके समय तथा आयुर्वेदज्ञों ने रक्तचाप के बारे मे न सिर्फ पता कर लिया था, वल्कि वे शिरावेध द्वारा उसकी सफल चिकित्सा भी करने लगे थे । दुर्भाग्य से संस्कृत एवं संहिता के दायरों में हमारे मनीषी बन्धु

इस उपलब्धि के श्रेय से वञ्चित रह गये ऐसे ही अवसर पर हमें वाङ्भट्ट की चेतावनी दुहराने का मन करता है।

ऋषि प्रणीते प्रीतिश्चेत् मुक्त्वा चरक सुश्रुतौ ।
भेलाद्याः किं न पठ्यन्ते तस्मात् ग्राह्यं सुभाषितम् ।।

अध्ययन की दृष्टि से थोड़ा संक्षिप्त करके इन रचनाओं को तीन वर्गों में बांट सकते हैं -

१ केवल शास्त्र निबन्धक कवि-संस्कृत में-चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि।

हिन्दी में - वैद्य मनोत्सव रामविनोद

२ शास्त्र में काव्य निबन्धक कवि-संस्कृत में-लोलिम्ब राज सिद्ध भैषज्य मणिमाला

हिन्दी में दिल्लगन चिकित्सा, ज्वरांकुश चिकित्सासार

३ काव्य में शास्त्र निबन्धक कवि - संस्कृत में कालिदास, हर्ष आदि

हिन्दी में तुलसी, केशव, घनानन्द, पद्माकर आदि

इसमें पहले प्रकार का साहित्य प्रचुर मात्रा में इन हस्तलेखों में उपलब्ध है और अब तक अधिकांशतः अछूता है। यही वर्ग ऐसा है जो खोज की परिधि में आने पर बहुत कुछ नया दे सकता है। आयुर्वेद की दृष्टि से इसमें पर्याप्त विषय विस्तार भी है। एवं आयुर्वेद के लिये खोज की गुञ्जायस भी काफी है। जयपुर का राष्ट्रीय शोध संस्थान आमेर संग्रहालय में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का शोध संस्थान नागरी प्रचारिणी सभा काशी एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के ग्रंथागारों में तथा लखनऊ विश्वविद्यालय का आयुर्वेद शोध संस्थान, अमीनुद्दोला पब्लिक लाइब्रेरी में और इसी तरह अन्यान्य संस्थानों में जहाँ-जहाँ हस्तलेखागार हैं शोधकार्य आरम्भ कर सकते हैं। कम से कम ग्रन्थ सूची निर्माण एवं विषयानुसार वर्गीकरण का काम तो आधारभूत मान कर शुरू किया ही जाना चाहिए। इससे आगे के शोधार्थियों को विशिष्ट योजनाओं पर काम करना सरल हो जायेगा। सामग्री भी नष्ट होने से वच जायेगी।

शेष दो वर्ग काव्य में शास्त्र और शास्त्र में काव्य का निबन्धन करने वाली रचनायें भी कई जगह मौलिकता की उद्भावना करते हैं यह रक्तचाप के प्रसंग में रञ्जवकी उक्ति से स्पष्ट किया जा चुका है। आखिर घाघ कवि भी जव - झिलंगा खटिया-वातल देह-कहते है तब क्या नहीं लगता है कि वे आधुनिक चिकित्सा शास्त्रियों की भांति हार्ड बेड इस्तेमाल करने की सलाह दे रहे हों परन्तु यही काव्य जव गोमूत्रिकाबन्धकी शकल में शास्त्र में उभरता है तब सिर्फ दिमागी कसरत लगता है :-

झिलंगा खटिया-वातल देह-तिरिया लम्पट, हारेगेह।

वेमा विगरि कै मुदइ मिलन्त- घाघ कहै ई विपति का अन्त।

तो भी क्या कसरती कलेवर उपेक्षणीय है? इस प्रश्न का उत्तर थोड़े सोच की अपेक्षा रखता है।

प्रतीते भोजना जीर्णे संसेवध्वम् शिवामृतम्
प्रतीते भोजना जीर्णे संसेवध्वम् शिवामृतम् ।।

अतः अनुसंन्धान की व्यापक संभावनाओं के इस क्षेत्र को अब और अधिक उपेक्षित रखने से जो वचीखुची शेष सामग्री उपलब्ध भी है वह भी धीरे-धीरे काल कवलित हो जायेगी । यों भी भारतीय वाङ्मय का बहुत बड़ा भाग विशेषतः उत्तर भारत के वाङ्मय का-काफी समय तक कट्टरपंथियों के हमामों को गरम करने में नष्ट हो चुका है । रहा सहा अजाभक्षित हुआ-पाणिनी का महाभाष्य इसका ज्वलन्त उदाहरण है और अब शेष इन ग्रन्थागारों में उपेक्षा की दीमक के हवाले है । इसे सुरक्षित संरक्षित करलें तो मेरी समझ से यह गुरु ऋण का सार्थक प्रतिदेय होगा ।

मेरी समझ से वाक्यांश का प्रयोग जान वूझकर किया है । मैं स्वयं जब आयुर्वेद के मध्यकालीन हिन्दी साहित्य पर प्रभाव के अध्ययन आकलन में व्यस्त था, तव मुझे आयुर्वेदः और हिन्दी दोनों ही पक्षों से उपेक्षा एवं तिरस्कार ही मिला । हिन्दी वाले कहते थे कि इससे हिन्दी को क्या लाभ और आयुर्वेद वाले संहिताओं के दायरे के बाहर सभी कुछ हेय समझते रहे ।

फलतः मेरा कार्य शोधप्रवन्ध भी उक्त संग्रहालयों के हस्त लेखों की भांति मेरी अपनी पुस्तकों में एक कुंआरी मौत की प्रतीक्षा कर रहा है ।

तो भी अभी एक विश्वास एक आशा वाकी है - इसीलिये सुधीजनों से इस -क्षेत्र में आगे आनेका अनुरोध कर रहा हूँ, आह्वान कर रहा हूँ । क्योंकि मुझे विश्वास है कालिदास गलत नहीं था जव उसने कहा ।

उत्पत्स्यतेऽत्रमम कोऽपि समान धर्मा ।
कालोह्ययं निरवधिः सुविपुला च पृथिवी ।।

वेदेषु आयुर्वेद विज्ञानम्

ग्राचार्य डा. विशुद्धानन्द मिश्र
दर्शन-वाचस्पति-ग्रायुर्वेदभास्कर

ग्रायु के विज्ञान को ग्रायुर्वेद कहते हैं , ग्रायु का ग्रर्थ है जीवन या जीवन हेतु ग्रथवा जीवन के निमित्तीभूत प्राण । जीवन हेतु होने से ग्रायु का ग्रर्थ ग्रन्न भी है । उपरिनिर्दिष्ट ग्रर्थों में वेद के निम्न मन्त्रों में ग्रायु शब्द का प्रयोग हुग्रा है जैसा कि भाष्य कारों ने व्याख्यान किया है । वेदके वे स्थल दिग्दर्शन मात्र यहाँ उदाहृत हैं- "ग्रङ्गिरऽग्रायुनानाम्नेहि" (यजु० ५।६) "त्वामग्ने प्रथममायुमायवे" (ऋृग् १।३१।११) "ग्रायुषि विदथेषु कव्या" (यजु० २२।२) "श्रितमन्तं समुद्रेहृद्यन्तरायुषि" (यजु०१७।६६)"रयिं सुक्षत्रं सुपत्यमायुः" (ऋग् १।११६।६) इत्यादि स्थल प्रमाण स्वरूप हैं। विद् धातु के ज्ञान, विचारण, संज्ञा ग्रौर लाभ चारों ग्रर्थ 'ग्रायुर्वेद शब्द में सुघटित होते हैं।

ऋग्वेद में विश्पला (विशां पालिकां विद्याम्) की जङ्घा लगाने का कार्य ग्रश्विनी के द्वारा उपाख्यान रूप में कल्पित किया गया है । ऋजाश्व की ग्राँखों का खोलना (पुनर्दान) व श्रोण के जानु तैयार कर लगाने की ग्रभिव्यञ्जना की उत्प्रेक्षा का किया जाना मूल से ध्वनित होता है । संसार के ग्रादि ज्ञान वेद में श्लेष या रूपक में शल्यक्रिया के चिन्तन का समाविष्ट होना, ग्राज के चिकित्सकों के लिये कौतूहल या परमाश्चर्य का विषय तो है ही ।

उस ग्रति प्राचीन काल में भी ग्रायुःशास्त्र को जानने वालों के दो विभाग थे । एक वो जो ग्रायु के रोगादि का निदान करते थे, जिनकी दृष्टि से त्रिदोष की सिद्धान्तज्ञता ऋग्वेद मूल की थी, साथ ही वे ग्रायुर्वेद कोऋग्वेद का उपवेद मानते थे दूसरे वे जो रोग का निदान या विनिश्चय कर ग्रौषध प्रयोगों से प्रायोगिक चिकित्सा भी करते थे, जिन्हें विशेष रूप से भिषग् कहते थे, इस ग्रर्थ की ध्वनि निम्नाङ्कित वेदमन्त्र से हो रही हैः-

यत्रौषधीनां समग्मत राजान विप्रः स उच्यते भिषग् रक्षोहा । (ऋग्. १०।६७।६)

तथा-शतं ह्यस्य भिषजः सहस्रमुत वीरुधः । (ग्रथर्व. २।६।३)

शतपथ प्रतिपादित भैषज्य यज्ञों का सीधा सम्बन्ध ग्रायुर्वेद से ही है । इन यज्ञों के सम्पादनार्थ देश, काल ग्रौर पदार्थों का ज्ञान करना परमावश्यक है, यथा हि "भैषज्ययज्ञा वा एते । ऋतुसन्धिषु व्याधिर्जायते तस्माद् ऋतुसन्धिषु प्रयुज्यन्ते ।" ग्रर्थात् ऋतुग्रों की सन्धियाँ होती हैं, इसलिये इनका प्रयोग ऋतुसन्धियों में होता है ।

ग्रतएव भाष्यकार 'ग्रध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्' (यजुः १६।४) पर भिषक् का ग्रर्थ लिखते हैं-"निदानादिविज्ञानेन रोगनिवारको वैद्यो जनः" ग्रर्थात् जो निदान पूर्वरूप, रूपोपशय ग्रादि का ज्ञान रखकर ग्रौषधियों से रोग का निवारण करें। वह भिष· होता है।

निदान-वेद में निदान शब्द कारण तथा विनिश्चय अर्थ में आया है, देखिये- "उदुस्त्रियाणामसृजन्निदानम्"

त्रिदोष सिद्धान्त

आयुर्वेदीय चिकित्सा का मूलभूत सिद्धान्त का नाम त्रिदोष है। जो शरीर और मन को दूषित करते हैं। जिसके पास नाना प्रकार की औषधियों राजकीय सभा की भांति सजी हुई है वह रक्षोह अर्थात् रोग का नाशक 'अमीवचातनः' अमीव, रोग वीजों को दूर करने वाला भिषक् है। अथर्व ५।२९।१ में त्वं भिषक् भेषजस्यापि कर्ता लिखा है। वे दोष दो प्रकार के हैं शारीर तथा मानस। वात, पित्त और कफ से शारीर दोष हैं रज और तम ये मानस दोष हैं। सत्व अविकारी होने के कारण से दोष कोटि में नहीं आता। वायु, पित्त, कफ भी विकृत होने पर ही दोष कहलाते हैं अविकृत दशा में दोष नहीं कहलाते। अविकृत अवस्था में इन्हें धातु कहते हैं, क्योंकि ये शरीर को धारण करते हैं। इसी प्रकार रज और तम भी विषम होकर दोष कहाते हैं। अन्यथा इनकी गुण-संज्ञा होती है। ये दोष शरीर को मलिन करने से मल भी कहाते हैं।

यथा- "शरीर-दूषणाद् दोषा धातवो देहधारणात्।
वातपित्तकफा ज्ञेया मलिनीकरणात् मलाः ।। (शार्ङ्गधर)

वैसे तीन दोषों का मौलिक सिद्धान्त भी समीचीन रूप से सार रूप से वेद में उपलब्ध है।

मे तं युञ्जाथां मनसो यो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणायस्त्रि चक्रः ।
येनोपयाथः सुकृतो दुरोणं त्रिधातुनापतथो विर्नपर्णैः। ऋग् १।१८३।१)

इस मन्त्र में शिल्पविद्या तथा शरीर-विद्या का वर्णन किया गया है। शिल्पपक्ष में त्रिधातु पद से सुवर्ण, रजत, लौह या तांवा का ग्रहण है, शरीर पक्ष में 'त्रयो वातपित्तकफा धातवो येषु शरीरेषुते' इसे वातपित्त और कफ का ग्रहण होगा। इसी प्रकार त्रिबन्धुर से शिल्प पक्ष में ऊपर, मध्य,व नीचे तीन बन्धन मुक्त रथ से प्रयोजन है और शरीर पक्ष में शिर, मध्य तथा कटि से अधोभाग अभीष्ट है जैसाकि सुश्रुत और चरक में भी वर्णित है। देखिये-

देहसम्भव हेतवः तैरेव व्यापन्नैरधोमध्योर्ध्वसन्निविष्टैः शरीरमिदं धार्यते आगारमिव स्थूणाभिस्त्रिसृभिरतश्च त्रिस्थूलमाहुरेके सुश्रुत सू. २१।३।

तथा त्रिचक्र से तीन कला चक्र और शरीर पक्ष में शिरस्थ भृकुटि-आदि-स्थानीय, मध्यस्थ पद्मादि तथा अधस्थ चक्र अभीष्ट हैं। इसी प्रकार का वर्णन ऋग् १।३४।६, ३।१६।६, ३।५६।६, ४।४२।४ आदि स्थलों पर भी आया है।

औषधियों का बाहुल्येन निर्देश करने के कारण अथर्व की संज्ञा भेषज की हुई है यथा-

यज्ञं ब्रूमो यजमानमृचः सामानि भेषजा।

यजूंषि होत्रा ब्रूमस्ते नो मुंचन्त्वंहसः ।। अथर्व ११।६।१४ अर्थात् ऋग्वेदादि हमें अंहः अर्थात् कष्ट व रोग से छुड़ावें। गोपथ ब्राह्मण पूर्वार्ध में (३।४)

"ये ऽथर्वाणस्तद्भेषजं यद् भेषजं तदमृतं तद् ब्रह्म" ऐसा कथन किया है, इससे स्पष्ट है कि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रोगों की चिकित्सा व उपाय वेद में बताये गये है। ताण्ड्य ब्राह्मण में भी अथर्ववेद के सूक्तो के विषय में लिखा है-

"भेषजं वा आथर्वणानि अर्थात् अथर्ववेद के सूक्त विशेष रूप से चिकित्सा परक हैं। इसीलिये महर्षि सुश्रुत ने सूत्र स्थान पर कहा है। इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्यं महर्षि चरक ने भी सूत्रस्थान ३०।२० में स्पष्ट लिखा है-

वेदो हि आथर्वण------चिकित्सांप्राह

अथर्व वेद में बड़े विस्तार से आयुर्वेदिक, मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक प्रयोगों को अज्ञान व भ्रान्ति वश जादू टोने का वेद समझ लिया और वेद के गूढ़ रहस्यों पर ध्यान नहीं दिया गया। चाहिये तो यह था कि भौतिक वैज्ञानिकों की भांति आयुर्वेद पर सरकार विद्वान् वैद्यों द्वारा गहन अनुसन्धान कराती। अस्तु,

अथर्ववेद की मन्त्रविद्याओं को पाँच भागों में विभक्त किया जा सकता है-

१. प्रथम संकल्प या आवेश।

२. अभिमर्श और मार्जन।

३. आदेश

४. मणि बन्ध।

५. कृत्या और अभिचार।

इनमें संक्षेप से निम्न उदाहरणों को उक्त विभागों में घटित करना चाहिये।

१. परोऽपेहि मनस्पापं किमशस्तानि शंससि (अथर्व ६।४२।७)

२. अयं मे हस्तो भगवान् अयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः ।। (अथर्व ४।१३।६।७)

३. (आदेश) यद् वो मनं परागतं तद्बद्धमिह वेव वा।

इसी आशय के अनेक मन्त्र है यथा- (अथर्व ७।२३।४) अथर्व ३।८।६, ६।११।२, ७।३।८-९, ८।१।४)

४. इसी प्रकार मणिबन्ध विषयक अनेक मन्त्र हैं, जिनमें मणि (अथर्व ४।९) शंखम , दर्भावर्त मणि औदुम्बरमणि आदि का वर्णन है।

शब्दार्थक मण धातु से सर्वधातुभ्य इन से इन प्रत्यय करने पर मणि शब्द सिद्ध होता है। मनु ज्ञाने, मन् स्तम्भे, मनु अव बोधने सेभी मणि शब्द सिद्ध होता है।

५. अभिचार- के विषय में भी अथर्व. ५।३०।२ में लिखा है "यतत्वाभिचेरुः पुरुषः स्वोयद्रणो नः"।

शल्य चिकित्सावर्णन

अथर्व १।११।५। वि ते भिनद्मि मेहनं वियोनिं विगवीनिके ।
"विमातरं च पुत्रं च विकुमारं जरायुणावजरायु पद्यताम् ।।"

इस मन्त्र में क्लिष्ट रोगों में गर्भिणी की चिकित्सा शल्यक्रिया द्वारा उपदिष्ट की गई है । भिनद्मि पद से भेदन तथा छेदन का उपदेश किया है । क्लिष्टप्रसव कर्म में जब माँ और पुत्र का जीवन संकटापन्न हो तब शल्यक्रिया के द्वारा शल्यतन्त्र का तत्वज्ञ क्रिया कुशल चिकित्सक जीवन की रक्षा करें । अर्थात् गर्भमार्ग की विशेष रूप से गर्भाशय व पार्श्वस्थ दोनों नाड़ियों को पृथक् करती हूँ तथा माता और पुत्र को जरायु से अलग करता हूँ । जब जरायु नीचे गिर जावे । इसमें अगले मन्त्र को भी देखिये –

यथा वातो यथा मनो यथा पतन्ति पक्षिणः ।
एवं त्वं दशमासस्य साकं जरायुणा पताव जरायु ।।

अर्थात्–जैसे वायु, मन और पक्षी रुकाबटों को बचाते हुये चलते हैं, उसी प्रकार हे दस महीने वाले गर्भ के बालक तू जरायु के साथ नीचे आ और गिर जा । यहाँ उस सूक्ष्मता का भी वर्णन है जैसा कि सभी जानते हैं कि बच्चा कुछ वात, कफ के साथ और कुछ जेर उसके पीछे निकलती है । यह सम्पूर्ण सूक्त प्रसवकालीन विज्ञान से भरा हुआ है ।

आयुर्वेद की भूतविद्या

ब्रह्म वैवर्त पुराण (१।१६।६) में आयुर्वेद का मूल चारों वेदों को माना है । यथा– "ऋग्यजुःसामाथर्वाख्यान् दृष्ट्वा वेदान् प्रजापतिः । विचिन्त्य तेषामर्थञ्च आयुर्वेद चकार सः" विभिन्न नामकरण करने में प्रतीकात्मक और मानवीकरण की रीति अपनाने की प्रवृत्ति अथर्ववेद से ही आयुर्वेद में आई है । इसीलिये आयुर्वेद के आचार्यों ने भी प्रतीकात्मक और लाक्षणिक समानता के आधार पर विभिन्न रोगों तथा वस्तुओं के नाम दिये हैं, जिनको उचित रूप में न समझने के कारण आयुर्वेद और अथर्ववेद की भाषा को समझने में भूल की गई ।

इस भूतविद्या को समझने में परिणामतः रूढिग्रस्त मस्तिष्क वाले पण्डितों से भी महती भ्रान्तियाँ हुई हैं । इस विद्या पर जो ग्रन्थराशि थी, वह प्रायशः विलुप्त हो चुकी है ।

महर्षि चरक की संहिता के सूत्रस्थान ३०।२८।में आयुर्वेद के आठ विभाग किये गये हैं, जिनमें भूतविद्या का पाँचवा स्थान हैं । यह आयुर्वेद की एक वृहत् शाखा के रूप में वर्णित है । जिस प्रकार–

चरकस्तु चिकित्सायां सुश्रुतः शल्यकर्मणि ।
सिद्धान्ते चैव वागभट्टः, मानसे भूतवेतृकः ।।

चरक चिकित्सा में आदि कथनाशय यह है कि अथर्ववेद के भूतविद्या परक मन्त्र आजकल के भूतप्रेत बाधा के निर्देशक नहीं हैं, प्रत्युतः गन्धर्व, राक्षस, पैशाच आदि कृमिविशेष हैं । यथा असृग्भाजानि ह वै रक्षांसि (कौषीतकी ब्रा० १०।४) अर्थात् रुधिर पीने वाले कृमि राक्षस कहलाते हैं ।

पिशितं मांसममांसमश्नातीति पिशाचः मांस को चाटने वाले कृमि पिशाच कहाते हैं । देखिये-अथर्ववेद ५।२६।५।

यदस्य हृतं विहृतं यत् पराभूतम् आत्मनोजग्धा यत् यत् पिशाचैः ।
तदग्ने विद्वान् पुनराभरा त्वं शरीरे मांसमसुमेरयामः ।।

इस मन्त्र द्वारा पिशाचों के मांसभक्षक होने वाले जन्तुओं की पुष्टि हो रही है । इसमें कहा गया है कि इस मनुष्य का जो मांस चाट लिया, उखाड़ लिया, शरीर से अलग कर दिया और खा लिया उसे शरीर में अग्नि पुनः पूरा कर दे ।

औषधि तथा औषधः-विज्ञान

अथर्ववेद का १६सू. ३४ में वनस्पति को औषधि नाम से वर्णित किया है

उग्र इत् ते वनस्पत इन्द्र ओज्मानमादधौ ।
अभीवाः सर्वाश्चातयन जहि रक्षांस्योषधे ।।

तथा निम्न मन्त्र में जाङ्गिड को भेषज कहा गया है-

इन्द्रस्य नाम गृह्णन्त ऋषयो जङ्गिडं ददुः ।
देवा यं चक्रुर्भेषजमग्रे विष्कन्धदूषणम् ।। १६।३५।१

ऋषभक ओषधि का शतवारमणि के नाम से भी वर्णन किया गया है-

हिरण्यशृङ्ग ऋषभः शातवरो अयं मणिः।
दुर्णाम्नः सर्वास्तृड्ढ्वाऽव रक्षांस्यक्रमीत् ।। अ.१६।३६।५

इस ऋषभ का विशेषण हिरण्यशृङ्ग दिया हुआ है, जिसका अर्थ सुनहरे अग्रभाग वाला है, राजनिघण्टु में इसी के पर्यायवाची शब्द है-

ऋषभो गोपतिर्धीरो वृषाणी दुर्धरो वृषः ।
ककुद्मान् पुंगवो वोढा, शृङ्गो धुर्यश्च भूपतिः ।

भाव प्रकाश में भी- जीवकर्षभौ ज्ञेयौ हिमाद्रिशिखरोद्भवौ, अथर्व में दर्भमणि (अभ्रक) का भी वर्णन है-

दर्भो य उग्र औषधिः (३२।१)

इसी दर्भ को आगे औषधीनां प्रथमः सम्बभूव कहा है । यजुर्वेद में ओषधिविज्ञान व्यापक रूप में वर्णित है-

याः फलिनीः या अफला अपुष्पा या च पुष्पिणीः
वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्यहंसः ।।
नाशयित्री बलासस्यार्शस उचितामसि ।
अथो शतस्य यक्ष्यमाणोऽपाकारोरसि नाशनी । (यजु. १२।२६।६७)

अर्थात् जो बहुत फल वाली, फलरहित, बहुत पुष्प वाली व पुष्प रहित जो वृहस्पति देव अर्थात् वाणियों के पति परमेश्वर ने उत्पन्न की है व हमें रोगों से मुक्त करें। हे वैद्य लोगो कफप्रधान बलासरोगी तथा अर्श (ववासीर) तथा अन्य यक्ष्मा आदि महारोग व मुखादि पाक तथा मर्मच्छिद शूल का नाश करो।

यजु. के १२ अध्याय में ७५,७७,७९,८१,से ८७,८३,८४,८८-९३,९५,९. ९८,१०० मन्त्रों का देवता ही वैद्य है। ७८ का चिकित्सु, ८०-८२का औषधि, ९४,१०१का भिषग्, ९७ का भिषग्वराः, ९९ मन्त्र का औषधि इस भिषग्, ९७ का भिषग्वराः, ९९ मन्त्र का औषधि, इस प्रकार शतशः मन्त्रों में आयुर्वेद का प्रत्यक्ष वर्णन है।

अथर्ववेद के आयुर्विज्ञानीय सूक्तों में मानव शरीर के अङ्गप्रत्यङ्गों का विशद वर्णन उपलब्ध है, शिर से पैरों तक सभी अङ्गों का नाम्ना निर्देश किया गया है। यह देख अतितरां कौतूहल व आश्चर्य होता है कि भगवद्ज्ञान जो सृष्टि के आदि में दिया है, इसमें सभी विद्याओं का मूलरूप से तो वर्णन है ही, परन्तु शरीर विज्ञान का विशद व विस्तृत वर्णन भी पाया जाता है।

जलचिकित्सा के आधारभूत मन्त्र भी अथर्ववेद में हैं। यथा-

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तिभिः।
अश्वा वाजिनीं गावो भवथ वाजिनीः ॥ (अथर्व.१।४।४)

आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन।
अहीनां सर्वेषां विषं परावहन्तु सिन्धवः ॥

इस मन्त्र में सर्पकाटे व्यक्ति को जलप्रवाह में डाले रहने से निर्विष होना कहा गया है।
व्याधि प्रतीकार के लिये रविकिरणों से चिकित्सा का एक निदर्शन लीजियेः-

अनुसूर्यमुदयतां हृद्द्यातो हरिमाचते। (अथर्व.१।२२।१)

आयुवर्धनार्थ गव्यघृत का विधान भी देखिये-

घृतं पीत्वा मधु चारुगव्यं पितेव पुत्रानभिरक्षतादिमम्।

यहीं पर गोघृत और शहद के सेवन का निर्देश दिया गया है। ज्वर, पीलिया, लेप आदि क्रिया आदि का वर्णन बहुत है। अपामार्ग के गुण सहित वर्णन-

क्षुधामारं तृष्णामारमगोतामनपत्यताम्।
अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदपमृज्महे ॥ (अथर्व. ४।१७।७)

पिप्पलीक्षिप्तभेषज्य इत्यादि में सन्तानाभाव, सन्निपातादि रोग निवृत्यर्थ अपामार्ग, पिप्पली, दशमूलादि का उपदेश किया गया है। हिरण्यं स जीवेषु कृणुते दीर्घमायुः में स्वर्ण सब रोगों का हारक व दीर्घायुप्रद वर्णित है। इसी प्रकार श्वेत कुष्ठ की औषधिचिकित्सा बताई हुई है। मस्तिष्क और हृदय का सम्बन्ध और वर्णन भी अत्यन्त कौतूहल पूर्ण है। यथा-

मूर्धानमस्य संसीव्याथर्वा हृदयं च यत् ।
मस्तिष्कादूर्ध्वः प्रैरयत् पवमानोऽधिशीर्षतः ।। आदि

निष्कर्ष यह है कि वेदों में सर्वाधिक और वहुत ही विशद वर्णन आयुर्वेद-विज्ञान का है। लघुलेख में तो संकेत या दिग्दर्शन मात्र ही लिखा जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि वेद तथा आयुर्वेद के उच्च कोटि के विद्वानों को भारत सरकार अन्वेषणार्थ सर्व प्रकार के साधनों से प्रोत्साहन दे, तब निश्चित ही वेदाब्धि से मन्थन करते अपरिमित रत्नराशि उजागर हो सकेगी।

इसीलिये न्यायसूत्रकार भगवान् ने अतीन्द्रिय विषयक विज्ञान का प्रतिपादन करने वाले वेदभाग की प्रामाणिकता द्योतन करने के लिये कहा है-

मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्याच्च तत् प्रामाण्यमाप्तप्रमाण्यात् न्या. २।१।६८

अर्थात् मन्त्रों में आयुर्वेद प्रत्यक्ष रूप से उपदिष्ट है उसका प्रमाण्य व सत्यता लोक में प्रसिद्ध है, उसके प्रमाणित होने से वेदभाग भी प्रमाणित है। इतिशं।

विद्यान्नित्यं रसायनम्

आयुर्वेदाचार्य वासुदेव शास्त्री उज्जयिनी

आयुर्वेद मानवादि प्राणियों का ही आयुष्य विज्ञान नहीं है। अपितु व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, एवं विश्व के आयुष्य का विज्ञान है। आयुर्वेद में आरोग्य आयुष्य की पूर्ण रक्षा रोगों का कारण, लक्षण एवं चिकित्सा का पूर्ण प्रतिपादन करने वाला सम्पूर्ण जीवन विज्ञान निहित है।

प्राचीन समय में मनुष्य की आयुष्य चार सौ वर्ष की निर्धारित थी। कालक्रमानुसार यह आयुष्य क्रम घट कर सौ वर्ष से भी न्यून हो गयी है। आयुर्वेद में प्रत्येक व्यक्ति को दीर्घायु एवं स्थिर आरोग्य प्राप्ति के लिए, बिना औषधि सेवन के आचरण द्वारा दीर्घ आयुष्य तथा स्थिर आरोग्य प्राप्त करने का सरल सुविधा पूर्ण उपाय सुलभ है। इस आचार रसायन का लाभ बिना औषधि सेवन के नियमित दिनचर्या तथा आचरण द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जो व्यक्ति आचार रसायन के अनुसार जीवनचर्या को व्यावहारिक रूप दे देता है। उसको आचार्यों ने नित्य आचार रसायन नाम दिया है। तथा इस प्रकार की चर्या के अनुसार चलने से समस्त रसायन सेवन का लाभ मिलता है।

यज्जरा व्याधि विध्वंसी - भेषजंतद्रसायनम्

जो वार्धक्य न आने दे तथा शरीर को तथा मन को स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता दे वही रसायन है। तथा साथ ही नित्य रसायन से रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, तथा ओज की वृद्धि हो, इसी का नाम रसायन है। महर्षि चरकाचार्य के शब्दों में नित्य रसायन की परिभाषा प्रमाणित है।

सत्यवादिनमक्रोधं निवृत्तं मद्यमैथुनात् ।
अहिसंकमनायासं-प्रशान्तं प्रियवादिनम् ।
जप शौचपरंधीरं-दाननित्यं तपस्विनम् ।
देवगोब्राह्मणाचार्य-गुरु वृद्धार्चनेरतम् ।
आनृशंस्यपरं नित्यं-नित्यं करुणवेदिनम् ।
समजागरण स्वप्नं-नित्यंक्षीरघृताशिनम् ।
देशकालप्रमाणज्ञं-युक्तिज्ञमनहङ्कृतम् ।
शस्ताचारमसंकीर्ण-मध्यात्मप्रवणेन्द्रियम् ॥
उपासितारं वृद्धानामास्तिकानां जितात्मनाम् ।
धर्मशास्त्र - परं विद्या - न्नरं नित्यरसायनम् ॥
गुणैरेतैः समुदितैः - प्रयुंक्तेयो रसायनम् ।
रसायनगुणान् सर्वान् - यथोक्तान्ससमश्नुते ॥ (चरक)

अर्थ :- जो मनुष्य नित्य सत्य भाषण ही करता है, जो सदा क्रोध रहित प्रसन्न रहता है, जो सदा अहिसंक रहता है, जो मनुष्य अपनी शक्ति, साधन, सामर्थ्य से अधिक परिश्रम नहीं करता है, जो आवश्यता से अधिक भाषण नहीं करता है, जो सदा जप तप ध्यान में तत्पर रहता है, गौ ब्राह्मण तथा वृद्धजनों का सम्मान करता है, जो सभी प्राणियों पर समान रूप से दया भाव रखता है, जो सदा धार्मिक तथा आस्तिक ही रहता है, जो प्रतिदिन घृत तथा दूध का सेवन करता है। जो सदा समय पर जागता तथा समय पर ही शयन करता है, जो सदा विनीत तथा अहंकार रहित रहता है, जो सदा संसार में युक्ति बुद्धि पूर्वक व्यवहार करता है, जो सदा मनोविकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, विद्वेष तथा मत्सरता रहित रहता है, जो सदा आशावान, विचारवान, प्रज्ञावान, तथा संयम पूर्वक ही रहता है, वह मनुष्य दीर्घ आयु तथा स्थिर आरोग्य प्राप्त करता है।

इस उपर्युक्त सदाचार को महान वैज्ञानिक महर्षि चरकाचार्य ने नित्य आचार रसायन की संज्ञा दी है। साथ ही आज के विश्व को आयुर्वेद की ओर से मिलने वाली चेतावनी के रूप में दी है। आज परिस्थिति कुछ, क्या अधिक बदल गई है। एक ओर तो चिन्ता शोक रोग उत्पन्न करने वाले कारण भारी संख्या में खड़े हो गये हैं। दूसरी ओर सदैव शरीर तथा मन को स्वस्थ बलिष्ठ शांत रखने वाले आचार नष्ट होते जा रहे हैं। न तो पूर्व के समान संध्या, पूजा, उपासना, ध्यान, प्राणायाम, आसन, नियमित व्यायाम तथा मन के सद्‌गुण दया, प्रेम, करुणा, सम्मान, तथा आदर भाव रह गया है। जीवन में सतत कार्य व्यस्तता, आतुरता, अधीरता उतावलापन, परिस्थिति में ऐसी स्थिति बन गयी है कि हृदय मस्तिष्क, पाचनयन्त्र, वृक्क, अधिवृक्क (एड्रिनल), अग्न्याशय रस रक्त वहन करने वाली धमनियों पर भंयकर प्रभाव तथा तनाव पड़ता है। जिसका परिणाम शरीर तथा मन पर दुष्प्रभाव पड़ता है। यथा बड़े बड़े उद्योगपति, दिन रात व्यस्त रहते हैं तथा व्यस्त चिकित्सक, मालिक की वक्र दृष्टि में पड़ा हुआ क्लर्क, अतिवृष्टि, अनावृष्टि की मार से आक्रान्त कृषक, भारी कुटुंब का एक मात्र पालक साधारण गृहस्थ, इस प्रकार की विषम स्थिति में आक्रान्त, हाईब्लड प्रेशर, पक्षाघात, मधुमेह, हृदयदौर्बल्य, मानसिक अवसाद, तनाव पैत्तिकशूल, नाड़ीतन्त्र, दौर्बल्य से आक्रमित होकर अन्त में सहसा मृत्यु के रूप में मनुष्य को मूल्य चुकाना पड़ता है।

अतः आज की इस भयंकर परिस्थिति में महर्षि चरक के इस अमूल्य नित्य आचार रसायन का सेवन प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य हो गया है। इस अमूल्य परन्तु बहुमूल्य नित्य आचार रसायन द्वारा ही विश्व का रुग्ण मानव शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकता है।

यथा च वाङ्गभटः-

शास्त्रानुसारिणीचर्या चित्तज्ञाः पार्श्ववर्तिनः ।
बुद्धिरस्खलितार्थेषु परिपूर्णं रसायनम् ॥

॥ सर्वे सन्तु निरामयाः ॥

आतुर प्रकृति-परीक्षण

आचार्य राजकुमार जैन,
एच.पी.ए.,एम.ए. ।। संस्कृत-हिन्दी ।।
दर्शनायुर्वेदाचार्य, साहित्यायुर्वेद शास्त्री दिल्ली

"प्रकरोतीति" प्रकृतिः इस व्युत्पत्ति द्वारा प्रकृति शब्द का बोध होता है । किन्तु फिर भी भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रयुक्त "प्रकृति" शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न होता है । न्यूनाधिक मात्रा में "प्रकृति" शब्द के लगभग दस अर्थ ध्वनित होते हैं । जो भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में अथवा स्थानों पर प्रयुक्त किए गए हैं । यथा-

"प्रकृति" का प्रथम अर्थ आयुर्वेद में सृष्टि के आदि कारण रूप में किया गया है । अथवा प्रकृति को विशिष्ट ईश्वरीय शक्ति का प्रतिपादक स्वीकार किया गया है । इसी प्रकृति रूप सृष्टि के आदि कारण को सुश्रुत ने "अव्यक्त" शब्द द्वारा प्रतिपादित किया है ।

यथा-"सर्वभूतानां कारणमकारणं सत्वरजस्तमोलक्षणमष्टरूपमखिलस्य जगतः संभवहेतुरव्यक्तं नाम" । द्वितीय अर्थ में "प्रकृति" शब्द का अर्थ हेतु किया है । यथा- "रोग प्रकृतिः" इसके अतिरिक्त अनेक स्थलों पर "प्रकृति" शब्द से "स्वास्थ्य रूप साम्य" भी ग्रहण किया है । जैसे- "विकारो धातु वैषम्यं साम्यं प्रकृतिरूच्यते" । यहाँ पर अभीप्सित अर्थ "स्वास्थ्य" ही ग्रहण किया गया है । इसी प्रकार से "सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः" । यहाँ भी प्रकृति शब्द से स्वास्थ्य का ही बोध होता है । इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं पर "प्रकृति" शब्द का प्रयोग मृत्यु अर्थ में भी उपलब्ध होता है । वैसे तो सामान्य रूप से प्रकृति शब्द का अर्थ "स्वभाव" तो सर्वविदित है । इसके अतिरिक्त भी भिन्न-भिन्न स्थलों पर भिन्न-भिन्न रूप में "प्रकृति" शब्द प्रयुक्त किया जाता है ।

भदन्तनागार्जुन के "रसवैशेषिक सूत्र" में प्रकृति का लक्षण निम्न रूप से दिया गया है :- "जन्ममरणान्तरालभाविनी देहमनसोरविकारिणी दोषस्थितिः प्रकृतिः" ।

सुश्रुत ने प्रकृति ।।अव्यक्त।। को "सर्वभूतानांकारणमकारण" इत्यादि वाक्य द्वारा संसार का कारण बतलाते हुए उसके गुणों का उल्लेख निम्न रूप से किया है- "एकातुप्रकृतिरचेतनात्रिगुणा बीजधर्मिणी प्रसवधर्मिण्यमध्यस्थधर्मिणी चेति" ।

विभिन्न उदाहरणों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि "प्रकृति" व्यापक और अनेकार्थ वाली है । तथापि मानवीय सृष्टि को दृष्टिगत रखते हुए स्थूलतः प्रकृति के दो भेद किये गए हैं । (१) गर्भ शरीर प्रकृति और (२) जात शरीर प्रकृति । इन दोनों प्रकार की प्रकृति में ही सम्पूर्ण मानव जीवन अन्तर्हित हो जाता है ।

यद्यपि गर्भ शरीर प्रकृति स्वयं प्रकृति भेद है, तथापि र्भ शरीर निर्माण के लिये अथवा गर्भ स्वयं अपनी प्रकृति निर्माण के लिये अन्य प्रकृति की अपेक्षा ता है, और फिर उन्हीं अन्य प्रकृतियों के आधार पर गर्भ शरीर प्रकृति का निर्माण होता है। निम्न शास्त्रीय वाक्यों द्वारा उक्त कथन का प्रतिपादन किया गया है-

गर्भशरीरमपेक्षत आरम्भे शुक्रशोणित प्रकृतिं, काल प्रकृतिं तद्वन्मातुर्गर्भाशय प्रकृतिम्।
आहारस्य प्रकृतिं, प्रकृतिं तद्वद्विहारस्य, महाभूतविकार, पञ्च प्रकृतिं चापेक्षते गर्भः ।।

महर्षि सुश्रुताचार्य ने दोषों की उत्कटता को ही गर्भ शरीर प्रकृति निर्माण का आधार माना है। देखिये-

शुक्र शोणित संयोगे यो भवेद्दोष उत्कटः।

प्रकृतिर्जायते ते............................। सुश्रुत शरीर अ० ४

अतः कहा जा सकता है कि गर्भ शरीर निर्माण के लिये अपेक्षित प्रकृति के आधार पर ही गर्भ प्रकृति का निर्माण होता है। यह प्रकृति दोषानुसारेण एक दोषज, द्वन्द्वज, अथवा सान्निपातिक भी हो सकती है।

द्वितीय जो जात प्रकृति है, उसके लिये भी अन्य प्रकृतियों की अपेक्षा तो रहती है। किन्तु निसर्गजन्य होने से उसका आधार नहीं माना जा सकता। जात प्रकृति अनेक प्रकार की बतलाई गई है। एक स्थान पर जात प्रकृति के प्रकारों का वर्णन करते हुए लिखा हैः-

जाति प्रसक्ता च कुल प्रसक्ता देशानुपातिन्यथ कालजा च ।
वयोऽनुगा चापि बलानुगा च प्रत्यात्मगा च प्रकृति प्रदिष्टा ।।

इसी भाँति पृथक् से एक तृतीय "स्वस्थता प्रकृति" भी अंगीकार की गई है।

स्वस्थता प्रकृति के प्रतिपादन के लिये लिखा हैः-

तद्भाव भावितानां हि वपुष्याधिक्यमीक्षते वातादीनां तदुत्पत्तिकरांगानां क्रियासु वा।

"माण्डूकोपनिषद्" में अन्य प्रकार की प्रकृति का वर्णन प्राप्त होता है। यथाः-

सांसिद्धकी स्वाभाविकी सहजा चाकृता च या ।
प्रकृतिः सेति विज्ञेया स्वभावं न जहति या ।।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विद्वानों के मतानुसार मानसिक एवं दैहिक द्विविध प्रकृति मानी गई है। इसमें आन्तरिक जो ऋजुता, कुटिलता आदि सहज मनोभाव या विकार हैं वे सब मानसिक प्रकृति के अन्तर्गत आते हैं। तथा बाह्य शारीरिक लक्षणों से प्रकट होने वाली प्रकृति को दैहिक प्रकृति कहा गया है। यहाँ पर प्रकृति के लिये केवल सहज भाव अथवा लक्षणों को ही समाविष्ट नहीं किया गया है, अपितु गुण एवं दोषों को भी प्रकृति के अन्तर्गत ही माना गया है-

शारीरोमानसो वाऽपि स्वभावः प्रकृतिः स्मृतः ।
गुणा दोषाश्चतत्रैव प्रकृतौ गणिता वुधैः ।।

तथा च गर्भ धारण के समय माता एवं पिता के जो श्लेष्मिक, पैत्तिक अथवा वातिक भाव होते हैं वे भी प्राकृत होते हैं और गर्भ-निर्माण में इन भावों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है -

गर्भादिकालमारभ्य वातपित्तकफोद्भवः ।
ये भावाः पितुरायान्ति मातुर्वा प्राकृतास्तु ते ।।

दैहिक प्रकृति के अन्तर्गत "भूत प्रकृति" का भी समावेश किया गया है । क्योंकि मानव शरीर द्वारा जो विविध प्रकार का आहार ग्रहण किया जाता है उस आहार का भी शरीर पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । अतः गृहीत आहार द्वारा निर्मित प्रकृति में आहार के उन गुणांशों की उपस्थिति अवश्यंभावी है जो कि आहार में अविघटित रूप से विद्यमान थे । चूँकि आहार से ही शरीर का निर्माण एवं शरीर की स्थिति सम्भव है । अतः आहार शरीर के लिये जीवनपर्यन्त अपेक्षित है । यह आहार भौतिक होता है । इसमें पंचमहाभूतों का समावेश रहता है, अतः गृहीत आहार द्वारा निर्मित प्रकृति का भी भूतात्मक होना निश्चित है ।

"सुश्रुत संहिता" के शारीर स्थान अध्याय ४, श्लोक ८७ में मानव शरीर की पाँच भौतिक प्रकृति का वर्णन करते हुए लिखा है-

प्रकृतिमिह नराणां भौतिकी केचिदाहुः, पवनदहनतोयैः कीर्तितास्तु तिस्त्रः ।
स्थिर विपुल शरीर पार्थिवस्तु क्षमावान् , शुचिरथ चिरजीवी नाभसः खैर्महद्भिः ।।

इसके अतिरिक्त "तथा पुनः सप्त प्रकृतियां जाति कुल देश काल वयोबल प्रत्यात्म संश्रयः"

अष्टांग संग्रह शारीर स्थान अध्याय ८

अर्थात सात प्रकृतियां होती है- जाति, कुल , देश काल, वय बल और प्रत्यात्म संश्रय-

दोषानुसार भी सप्त प्रकृतियों का वर्णन मिलता है -

सप्त प्रकृतयो भवन्ति दोषैः पृथक् द्विशः समस्तैश्च । सु.सं.शा.स्था.अ.४

अर्थात् सात प्रकृतियाँ होती हैं- तीनों दोषों की पृथक्-पृथक्, द्वन्द्वज और सन्निपातजा इसी भांति अन्यत्र भी दोषानुसार प्रकृति विभाजन करते हुए उसका श्रेष्ठत्व, मध्यत्व और हीनत्व का प्रतिपादन किया गया है -

तैश्च तिस्त्रो प्रकृतयः हीनमध्योत्तमाः पृथक् ।
समधातु समस्तासु श्रेष्ठाः निन्द्याः द्विदोषजाः ।।

दोषानुसार देह प्रकृति के विषय में भी लिखा है-

दृश्यन्ते वातलाः केचित् पित्तलाः श्लेष्मलास्तथा ।
दोषानुशायिता ह्येषां देह प्रकृतिरुच्यते ।।

चरक संहिता, सूत्रस्थान, अध्याय ७

अनेक व्यक्तियों की पृथक्-पृथक् दोषानुसार पृथक्-पृथक् प्रकृति होती है। किन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो मिश्र प्रकृति वाले होते हैं। अर्थात् उनकी प्रकृति दो दोषों से अथवा तीन दोषों से संसृष्ट होती है। अतः वैद्यों को निर्देश किया गया है। यथा-

द्वयोर्वा तिसृणां वापि प्रकृतीनां तु लक्षणैः ।
ज्ञात्वा संसर्गजा वैद्यः प्रकृतिरभिनिर्दिशेत् ।।

सुश्रुत संहिता शारीर स्थान, अ० ४,

जब पुरुष एक दोषात्मक प्रकृति वाला होता है तो ऐसी स्थिति में उस पुरुष की प्रकृतिवान् दोष की प्रकृति एवं अन्य दोषों का ह्रास रहता है। अर्थात् दोषों की स्थिति सम नहीं रहती। अतः प्रवृद्ध दोष के कारण अथवा न्यून हुए अन्य दोषों की स्थिति में विकृति और उस विकृति से शरीर बाधित होना चाहिये। किन्तु ऐसा नहीं होता है। अपितु पुरुष स्वस्थ रहता है। इसका क्या कारण है, इसका समाधान सुश्रुत ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है-

विषजातो यथा कीटो न विषेण विपद्यते ।
तद्वत्प्रकृतयो मर्त्यं शक्नुवन्ति न बाधितुम् ।।

इस प्रकार शुद्धावस्था में शरीरगत दोष की स्थिति तद्दोषजन्य प्रकृति हो जाती है। विकृत होने पर वही दोष शरीर में विकृति उत्पन्न कर शरीर को रोगी बना देता है।

स्वस्थ मनुष्य के शरीर में प्रकृति का जो महत्व है, वही महत्व आतुर के शरीर में भी है। आतुर के शरीर में यदि अन्य परीक्षाओं के अतिरिक्त प्रकृति-परीक्षा भी की जाय तो रोग-विनिश्चय एवं दोष-स्थिति प्रतिपादन में काफी सहायता मिल सकती है। यद्यपि सामान्यतया रोगी के आने पर दर्शन-स्पर्शन और प्रश्न द्वारा उसके शरीर की परीक्षा कर ली जाती है, तथा इसी आधार पर रोगी की विकृति के विषय में काफी जानकारी हासिल कर ली जाती है। किन्तु पृथक् रूप से रोगी की प्रकृति परीक्षा करना अधिक महत्वपूर्ण एवं रोग विनिश्चय के लिये अपेक्षित है।।

रोगी की प्रकृति परीक्षा के लिये दर्शन-स्पर्शन और प्रश्न इन तीनों साधनों के अभाव में किसी भी प्रकार से आतुर प्रकृति-परीक्षण संभव नहीं हो सकेगा। इन तीनों साधनों में सर्वप्रथम दर्शन द्वारा ही रोगी के शरीर पर दृष्टिगत लक्षणों का आधार रखते हुए प्रकृति परीक्षण करना चाहिये। क्योंकि अधिकांश रोगियों के आधे से भी अधिक लक्षण उनके शरीर पर दृष्टिगत करने से ज्ञात हो जाते हैं। रोगी की मुखाकृति का भाव एवं शरीर की बनावट ये दोनों ही विषय दृष्टिगम्य हैं। इनके अतिरिक्त अन्य अधिकांश विषय ऐसे हैं जो दर्शन द्वारा ज्ञेय हैं। प्रारम्भ में रोगी के सम्पूर्ण शरीर पर दृष्टिपात करने से उसके विषय में काफी जानकारी मिल जाती है। यही कारण है कि परीक्षा विषयक साधनों में दर्शन को प्रधानता दी गई है।

दर्शन के अतिरिक्त अनेक भाव या विषय ऐसे होते हैं जिनका समाधान प्रश्न द्वारा ही सम्भव है। जैसे रोगी का पूर्व इतिहास। रोगी के पूर्व इतिहासवृत्त को जानने के लिये उससे प्रश्न करना आवश्यक है। क्योंकि रोगी के पूर्व इतिहास को जानने से उसकी पूर्व प्रकृति का परिचय मिलता है। वर्तमान लक्षणों को देखने या जानने से वर्तमान प्रकृति का आभास होता है। इसके पश्चात् पूर्व कालीन एवं वर्तमानकालीन प्रकृति को तुलनात्मक रूप से देखने पर ज्ञात किया जा सकता है

कि उसकी प्रकृति में पहले की अपेक्षा कितना परिवर्तन हो चुका है । इसके अतिरिक्त अन्य अनेक बातें हैं जिनका समाधान प्रश्न द्वारा किया जाता है ।

शरीर के आन्तरिक अवयवों की परीक्षा के लिये स्पर्शन क्रिया महत्वपूर्ण है । यकृत् आदि अवयवों की स्थिति स्पर्श द्वारा ही ज्ञात की जा सकती है । अतः प्रश्न के पूर्व एवं दर्शन के पश्चात् शरीर के विभिन्न अवयवों का परीक्षण कर लेना अत्यावश्यक है । इससे बड़ी सरलतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है कि रोगी के शरीर में कौन से अवयव में विकृति है । इसके अतिरिक्त यह भी ज्ञात हो जाता है कि आन्तरिक अवयवों की स्थिति यथानुकूल सुव्यवस्थित है अथवा नहीं । आदि ।

उपर्युक्त साधनों द्वारा आतुर की परीक्षा कर उसकी प्रकृति के विषय में बहुत कुछ अंशों में निर्णायात्मक तथ्यों पर पहुँचा जा सकता है । इसके अतिरिक्त शास्त्रों में पंचेन्द्रिय द्वारा भी रोग-परीक्षण का निर्देश दिया गया है । इसी आधार पर यदि पचेन्द्रिय द्वारा भी आतुर-प्रकृति-परीक्षा की जाय तो हमें अपनी वर्तमान स्थिति को देखते हुए रसना और घ्राण के विषयभूत रस और गन्ध के परीक्षण को छोड़ देना होगा । यद्यपि ये दोनों ही विषय परीक्ष्य एवं उपयोगी हैं, तथापि इन्द्रियों के लिये श्रेयस्कर नहीं होने से इनका त्याग देनाही उपयुक्त होगा । इन दोनों ही विषयों के परीक्षण के लिये वाह्य उपकरणों का आधार लेते हुए अनुमान द्वारा यदि तथ्य निकाल लिया जाय तो उत्तम रहेगा । रस और गन्ध के पश्चात् आता है-शब्द-परीक्षण । यह श्रवणेन्द्रिय गम्य भाव है । इसमें सर्वप्रथम रोगी के स्वर की परीक्षा करना चाहिये । परीक्षण द्वारा देखना चाहिये कि रोगी का स्वरभंग तो नहीं है । रोगी का स्वर प्राकृत है अथवा विकृत यदि विकृत है तो किन कारणों से । इत्यादि । इसके अतिरिक्त शब्द-परीक्षण के लिये सन्धि आदि में स्फोटन से व अन्य क्रियाओं से होने वाले शब्द का भी ध्यान रखा जाता है । हृदय की शब्द परीक्षा भी इसी के अन्तर्गत आ जाती है । इसी भाँति अन्य विभिन्न प्रकार से श्रवणेन्द्रिय द्वारा शब्द परीक्षा का आतुर प्रकृति-परीक्षण के लिये निर्णयात्मक तथ्य पर पहुँचना चाहिये ।

पचेन्द्रिय परीक्षण के अन्तर्गत श्रवणेन्द्रिय का कार्य समाप्त होने पर स्पर्शन और दर्शन परीक्षण अवशिष्ट रह जाता है । यद्यपि पहले ही इन दोनों साधनों की उपयोगिता पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला जा चुका है । तथापि विषय की उपयोगिता की दृष्टि से यहाँ भी कुछ लिखा जा सकता है । स्पर्शन द्वारा रोगी शरीर पर स्थित विभिन्न गुणों का परीक्षण करना चाहिये । खर, परुष, रूक्ष, कठिन, मृदु, शीत, उष्ण, आदि । इसके अतिरिक्त अवयवों की विकृति, उत्सेध, वृद्धि आदि के निर्णय के लिये स्पर्शन अपेक्षित है । तथा च "प्रकृतिस्थ पाणिना सम्पूर्ण शरीरं स्पृशेत्" इत्यादि वाक्यों का विधान भी शास्त्रों में वर्णित है, जिससे स्पर्शनेन्द्रियं की उपयोगिता स्वतः सिद्ध हो जाती है । चरक संहिता के इन्द्रिय स्थान तृतीय अध्याय में एक स्थान पर लिखा है - "स्पर्श प्राधान्येनैवातुरस्यायुषः प्रमाणावशेषं जिज्ञासुः प्रकृतिस्थेन पाणिना शरीरमस्य केवलं स्पृशेत् । परिमर्शयेद्वान्येन ।" उपर्युक्त प्रकार से स्पर्शनेन्द्रिय द्वारा परीक्षण करने पर आतुर के शरीर में निम्न लक्षणों की प्रतीति सम्भावित है । देखिये-चरक संहिता इन्द्रिय स्थान तृतीय अध्याय में --

सततं स्पन्दमानानां शरीरदेशानामस्पन्दनं नित्योष्माणां शीतीभावः मृदूनां दारूणत्वं श्लक्ष्णानां

खरत्वं सतामसद्भावः, सन्धीनां स्रंसभ्रंशच्यवना, मांसशोणितयोर्वीतीभावः दारुणत्वं स्वेदानुबन्धः, स्तम्भो वा, यच्चान्यदपि किंचिदीदृशं स्पर्शानां लक्षणं भृशविकृतमनिमित्तं स्यात्।

इस प्रकार स्पर्श करने से विभिन्न लक्षणों की उपलब्धि होती है। दर्शनेन्द्रिय द्वारा ज्ञेय विषय में रोगी की आकृति आदि का अध्ययन किया जाता है। रोगी के केश, लोम, नख, नेत्र आदि अवयवों में जो आन्तरिक अथवा बाह्य विकृति जन्य विभिन्न लक्षण प्रकट हो आते हैं वे सब दर्शनेन्द्रिय द्वारा ज्ञेय है।

दोषानुसार या दोषों के गुणानुसार यदि प्रकृति-परीक्षण किया जाय तो दोषों के सामूहिक लक्षणों से युक्त शरीर के विभिन्न अवयवों की परीक्षा करना आवश्यक है। महर्षि चरक ने प्रकृतितः परीक्षा करने के लिये स्पष्ट निर्देश किया है। और इसके लिये दोषों के पृथक्-पृथक् लक्षणों एवं शरीर के विभिन्न अंगों पर उनका प्रभाव व लक्षण का भी उल्लेख किया है। सर्वप्रथम श्लेष्मा के गुण एवं शरीरावयवों पर तज्जन्य लक्षणों का स्पष्टीकरण करते हुए चरक संहिता विमान स्थान, अध्याय ८, सूत्र ९६ में लिखा है-

"श्लेष्मा हि स्निग्धश्लक्ष्णमृदुमधुरसार सान्द्रमन्दस्तिमित-गुरु-शीतविज्जलाच्छः।

तस्य स्नेहाच्छलेष्मलाः, स्निग्धांगाः, श्लक्षणत्वाच्छ्लक्ष्णांगाः, मृदुत्वाद्दृष्टिसुखसुकुमारावदात गात्राः, माधुर्यात् प्रभूतशुक्रव्यवायापत्याः, सारत्वात्सारसंहतस्थिरशरीराः, सान्द्रत्वादुपचितपरिपूर्णसर्वांगाः, मन्द्रत्वान्मन्दचेष्टाहारव्यवहाराः, स्तैमित्याद्शीघ्रारम्भक्षोभविकाराः, गुरुत्वात्साराधिष्ठितावास्थितगतयः, शैत्यादल्प-क्षुत्तृष्णासंतापस्वेद्दोषाः, विजलत्वात्सुश्लिष्टसारसन्धि बन्धनाः, तथाऽच्छत्वात् प्रसन्नदर्शनाननाः, प्रसन्नस्निग्धवर्ण स्वराश्च भवन्ति त एवं गुण योगाच्छ्लेष्मला बलवन्तो वसुमन्तोविद्यावन्त ओजस्विनः शान्ता आयुष्मन्तश्च भवन्ति।"

इसी प्रकार से पित्त के गुण और उन गुणों के आधार पर प्रकट होने वाले लक्षणों का उल्लेख मिलता है-

पित्तमुष्णं तीक्ष्णं द्रवं विस्रमम्लं कटुकं च। तस्यौष्ण्यात् पित्तलाभवन्त्युष्णासहा, उष्णमुखः, सुकुमारावदातगात्राः, प्रभूतविध्नुव्यंगतिल पिडकाः, क्षुत्पिपासावन्तः, क्षिपवलि-पलितखालित्यदोषाः, प्रायो मृद्वल्पकपिलश्मश्रुलोमकेशाश्च, तैक्ष्ण्यात्तीक्ष्णपराक्रमाः, तीक्ष्णाग्नयः, प्रभूताशनपानाः, क्लेशाहसहिष्णवो, दन्दशूकाः, द्रवत्वाच्छिथिलमृदुसन्धिमांसाः, प्रभूतसृष्टस्वेदमूत्रपुरीषाश्च, विस्रत्वात्प्रभूतपूतिकक्षास्यशिरः शरीरगन्धाः, कट्वम्लत्वादल्पशुक्रव्यवायापत्यता एवं गुणयोगात् चित्तला मध्यबला मध्यायुषोमध्यज्ञानविज्ञानवित्तौपकरणवन्तश्च भवन्ति।

वातिक गुणों का आधार लेते हुए प्रकृति-निर्माण में प्रकट होने वाले भावों का दिग्दर्शन करते हुए वात प्रकृतिवाले मनुष्य के शरीर में दिखाई देने वाले लक्षणों का भी वर्णन निम्न प्रकार से किया है।

वातस्तु रूक्षलघुचलबहुशीघ्रशीतपरुषविशदः। तस्य रौक्ष्याद्वातला रूक्षाल्पचितापशरीराः,

प्रततरूक्षक्षामसन्तत सक्तजर्जरस्वरा जागरूकाश्च भवन्ति । लघुत्वाल्लघुचपल गतिचेष्टाहारव्यवहाराः, चलत्वादनवस्थितसन्ध्यक्षिभ्रूहन्वोष्ठजिह्वाशिरः स्कन्धपाणिपादाः, बहुत्वाद्बहुप्रलापकण्डरासिराप्रतानाः शीघ्रत्वाच्छीघ्रसमारम्भवो विकाराः शीघ्रत्रासरागविरागाः श्रुत ग्राहिणोऽल्पस्मृतयश्च, शैत्याच्छीतासहिष्णवः प्रततशीतकोद्वेषकस्तम्भाः पारूश्यात् परूषकेशरोमश्मश्रुनखदशनवदनपाणिपादाः, वैशद्यात्सफुटितांगावयवाः, सततसन्धिशब्दगामिनश्च भवन्ति, त एवं गुणयोगादवतलाः प्रायेणाल्पवलाश्चाल्पायुषश्चाल्पापत्यश्चाल्पसाधनाश्चाल्पघंनाश्च भवन्ति ।

सान्निपातिक प्रकृति वाले व्यक्ति के शरीर में तीनों दोषों के लक्षण सम्मिलित रूप से न्यूनाधिक मात्रा में होते हैं । यथा –

संसर्गात् संसृष्टलक्षणाः । सर्वगुणं समुदितास्तु समघातवः । इत्येवं प्रकृतिः परीक्षेत् । इस प्रकार दोषों के अनुसार एवं दोषों के भिन्न-भिन्न गुणों के आधार पर प्रकट होने वाले लक्षणों द्वारा आतुर प्रकृति परीक्षा की जाय तो व्याधि-निर्णय में काफी सहायता मिल सकती है । क्योंकि ऊपर हम चरक के इस वाक्य को कह चुके हैं कि इत्येवं प्रकृतितः परीक्षेत् ।

सम्भव है अनेक चिकित्सक महानुभावों को उपरोक्त शास्त्रों के वाक्य स्मरण न हों । उन्हें शास्त्रोक्त दोषों के गुण और उनसे प्रकट होने वाले लक्षणों का ध्यान न रहे, अतः उनकी सुविधा के लिये निम्न पत्रक दिया जा रहा है । जिसके आधार पर प्रकृति-परीक्षण करने में सुविधा होगी । इस चार्ट द्वारा दोषों के कारण शरीर के विभिन्न अंगावयवों पर परिलक्षित होने वाले भावों को देखकर प्रकृति निर्णय करने में सुगमता होगी । इस चार्ट में चार कालम दिये गये हैं । प्रथम कालम में परीक्ष्यभाव अर्थात् अवयव नाम, द्वितीय कालम में वातिक लक्षण, तृतीय में पैत्तिक और चतुर्थ में श्लैष्मिक लक्षण दिए गए हैं । यथा-

परीक्ष्यभावः-

वातिक लक्षण	पैत्तिक लक्षण	श्लैष्मिक लक्षण
१.	केशाः	
१. अल्पाः	अल्पाः	अतिघनाः ।।बहुला।।
२. परूषाः	मृदवः	दीर्घा
३. रूक्षाः	क्षिप्र चलिताः	अतिमृदवः
४. घूसराः	खालित्ययुक्ताः	कुटिला
५. स्फुटिताः	कपिला	अतिस्निग्धाः
६. अतिसूक्ष्माः	पिंगाः	स्थिराः ।।सुबन्धनाः।।
		अतिनीलाः

२.	मुखम्:	
१. दुर्भगम्	सुकुमारम्	सुकुमारम्
२. परुषम्	दुर्भगम्	सुभगम् ।।प्रियदर्शनम्।।
३. प्रसुप्तम्	अवदातम्	अच्छम्
४. –	उष्णम्	अवदात्म्
५. –	सदाव्यथितम्	स्निग्धम्
६.	–	पुष्टम्
७. –	–	उपचितम्
८. –	–	उद्घाटितम्
९. –	–	महत्
३.	ललाट	
१. –	–	महत्
२. –	–	उपचितम्
४.	भ्रू	
१. अनवस्थिता	–	–
२. शीघ्रगतिका	–	मन्दगतिका
५.	नेत्रम्	
१. खरम्, परुषम्	ताम्रम्	रक्तान्तम्
२. धूसरम्	पिंगलम्	शुक्लम्
३. वृत्तम्	शीतप्रियम्	स्निग्धम्
४. अनवस्थितम्	प्रसुप्तम्	प्रसन्नम्
५. चलम्	किंचिदुद्घाटितम्	–
६. तनु	अल्पम्	विशालम्
७. रूक्षम्	तनु	सुव्यक्तम्
८. स्तब्धम्	–	पक्ष्मलम्
९. अल्पम्	–	चारु
१०. उच्छ्तिम्	–	दीर्घम्

११. –	–	घनम्
१२. असितम्	–	–
१३. सुप्तम्	–	–
१४. मृतोपमम्	–	–
१५. उन्मीलितम्	–	–
६.	दृष्टितारका	
१.	विवृता	घननीला
२.	चला	–
७.	श्मश्रु	
१. अल्पम्	मृदु	अतिनीलम्
२. परुषम्	कपिलम्	कुटिलम्
३. रूक्षम्	–	स्थिरम्
४. धूसरम्	–	अतिमृदु
५. स्फुटितम्	–	अतिस्निग्धम्
६. –	–	अतिघनम्
८.	ओष्ठौ	
९.	दन्ता	
१. चलौ	ताम्रौ	स्थिरौ
२. अनवस्थितौ	–	–
१. अतिसूक्ष्माः	विशुद्धाः	श्लक्ष्णाः
२. परुषाः	–	स्निग्धाः
३. तनवः	–	–
४. रूक्षाः	–	–
५. स्तब्धा	–	–
१०.	जिह्वा	
१. अनवस्थिता	ताम्रा	स्थिरा

११.	तालु	
१. –	ताम्रम	–
१२.	हनु	
१. अनवस्थितम्	–	–
१३.	स्कन्धौ	
१. अनवस्थितौ	–	–
१४.	बाहू	
१. –	–	प्रलम्बौ
२. –	–	महान्
१५.	पाणि	
१. अनवस्थितौ	ताम्रतलौ	श्लक्ष्णौ
२. परूषौ	–	स्निग्धौ
३. स्फुटितौ	–	–
१६. वक्षः		
१.	–	पृथु
२. –	–	पीन
३. –	–	विशाल
१७.	पिण्डिके	
१. ह्रस्वे	–	दीर्घे
२. कठिने	–	मृदु
३. प्रोन्नते	–	–
१८. पादौ		
१. अनवस्थितौ	ताम्रतलौ	श्लक्ष्णौ
२. परूषौ	–	स्निग्धौ
३. स्फुटितो	–	–
१९. नखाः	वात. प्र.	पित्त प्र.श्लेष्म प्र.
१. परूषाः खराः	ताम्राः	दीर्घाः
२. अल्पाः	–	मृदवः

३. रूक्षाः	–	स्निग्धाः
४. तनवः	–	श्लक्ष्णाः
५. स्तब्धाः	–	शुक्लाः
६. स्फुटिताः	–	सुबन्धाः
७. धूसराः	–	बहुलाः
८. ग्रवृद्धिमन्तः	–	–
२०.	कण्डराः	
१. बहवः	–	–
२१.	स्नायुसन्धयः	
१. ग्रनवस्थिताः	शिथिलाः	व्यवस्थिताः
२. शिथिलाः	मृदवः	सुश्लिष्टाः
३. चलाः	–	ससाराः
४. वेपनाः	–	गूढ़ाः
५. स्तब्धाः	–	स्निग्धाः
६. सशब्दगतिमन्तः	–	–
२२.	देहः	
१. ग्रल्पः	मृदुमांसः	उपचित संर्वागः
२. दीर्घः	मध्यबलः	स्निग्धः
३. कृशः	शिथिलांगः	बलवान्
४. ग्रपचितः	सुकुमारगात्रः	मांसलः
५. परुषः	ग्रवदात गात्रः	श्लक्ष्णः
६. रूक्षः	प्रभूत पूतिगन्धः	सुकुमारः
७. श्लथः (शिथिलः)	–	ग्रवदातः
८. स्फुटितांगावयवः	–	सारः
९. स्तब्धांगः	–	संहतः
१०. धूसरः	–	स्थिरः
११. विषमसंहतः	–	ग्रोजस्वी

१२. दुर्बलः	–	चारुः
२३.	त्वचा	
१. रूक्षा	प्रभूतपिप्लु (पिडिका)	स्निग्धा
२. परुषा (खरा)	प्रभूतव्यंगा	मृदु
३. अस्वेदना	प्रभूततिला	शीता
४. शीता	क्षिप्रवली	(अल्पसंतापा)
५. शीतासहिष्णु	उष्णासहिष्णु	अल्पस्वेदा
६. प्रततोद्वेपका	(उष्णद्वेषी)	–
७. प्रततस्तब्धा	अतिस्वेदना	–
८. प्रततशीतका	–	–
२४.	वर्ण	
१. कृष्ण	गौरः	गौरः
२. धूसर	पीत	शुक्ल
३. –	पिंग	विशुद्ध
४. –	अतिपिंग	प्रसन्न
५. –	–	स्निग्ध
६. –	–	प्रियंग्वाभ
७. –	–	गोरोचनाभ
८. –	–	दूर्वाभ
९. –	–	इन्दीवराभ

उक्त चार्ट में विभिन्न अंगों के दोषानुसार लक्षण दिये गए हैं। इन्हीं लक्षणों के आधार पर हमें प्रकृति परीक्षण करना है। सर्वप्रथम हमें अलग से एक पत्रक में यह नोट कर लेना चाहिये कि कौन से अवयव के कौन-कौन से लक्षण मिलते हैं तथा वे लक्षण कौन से दोष के हैं। इसके पश्चात् देखना चाहिये कि कौन से दोष के लक्षणों की संख्या अधिक है। इसी आधार पर प्रकृति निर्णय हो जावेगा। आशा है उक्त प्रकार से आतुर का प्रकृति परीक्षण कर वैद्यबन्धु अवश्य ही लाभ उठावेंगे।

दक्षिण भारत में रसशास्त्र का विकास

ले. डा. रामनिवास शर्मा
भू. पू. डिप्टी डाइरेक्टर आयुर्वेद
आ.प्र. शासन हैदराबाद

तमिलों का सिद्ध सम्प्रदाय

तमिलनाडु भारत के दक्षिणी क्षेत्र का प्रमुख राज्य है। इस राज्य का कुल क्षेत्रफल १, ३०, ०५८२ कि.मी. है। इसके १६ जिले हैं। १९८१ की जनगणना के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या ४८, ४०८, ०७७ है। इसमें स्त्री पुरुषों का अनुपात लगभग आधा-आधा है। यद्यपि यहाँ अनेक भाषाओं के बोलनेवाले लोग बसते है। पर मुख्य रूप से यहा के लोग तमिल भाषी है। सीमावर्ती क्षेत्रों में तेलुगु, मलयालम और कन्नड बोलने वालों की संख्या भी काफी है। तमिल भाषा की प्रकृति भारत के अन्य प्रादेशिक भाषाओं से कुछ अलग प्रकार की है। आरंभ से ही तमिल का संस्कृत से अधिक संबंध नहीं रहा है। इसी कारण तमिल भाषी लोग जीवन के कई क्षेत्रों में विभिन्नता अनुभव करते हैं। यद्यपि रामानुज जैसे कई आचार्यों और दार्शनिकों ने संस्कृत के माध्यम से शेष भारत के चिन्तन को भी प्रभावित किया है। पर ऐसा लगता है कि भाषा के क्षेत्र में यहां के लोग बहुत भावुक रहे हैं। इसी कारण रामानुज को वैष्णव पद्धति की आराधना में तमिल मंत्रों की योजना स्वीकार करनी पड़ी। यहाँ प्राचीन परम्परा के अनुसार यहां के लोग चारों वेदों के साथ साथ तमिल में उपलब्ध धार्मिक साहित्य जो तमिल वेद के रूप में मान्यता देते हैं। यहां के लोगों के कुछ अधिक तमिल प्रेम से चिकित्सा शास्त्र भी अछूता नहीं रहा; जिस तरह तमिल में की गई वैष्णव आराधना तमिल भाषियों को शेष भारत की आराधना पद्धति और हिन्दुत्व से अलग नहीं करती उसी प्रकार तमिल में लिखे चिकित्सा शास्त्र को शेष भारत के चिकित्सा शास्त्र से अलग नहीं माना जाना चाहिये। पर अलगाव की प्रवृत्ति के जोर पकड़ने के कारण तमिल में लिखी गई आयुर्वेद की ही परम्परा को सिद्ध चिकित्सा के नाम से एक अलग चिकित्सा पद्धति के रूप में स्थापित कर दिया गया है। लोग इन दोनों में समानता के सूत्र खोजने के बजाय, एकता के सूत्रों को अलग अलग सिद्ध करने के प्रयत्नों में रुचि लेने लगे है। इस अलग चिकित्सा पद्धति के रूप में स्थापित करने के कुछ अन्य कारण भी हो सकते हैं। हाँ इस में संदेह नहीं कि तमिलनाडु की स्वास्थ्य संबंधी विशेष आवश्यकताओं, स्थानीय खान पान की आदतें, तथा औषधि द्रव्यों की उपलब्धि के आधार पर सिद्ध सम्प्रदाय की कुछ अपनी विशेषताएं भी विकसित हुई हैं। पर केवल इसी कारण इसे आयुर्वेद से अलग नहीं किया जा सकता। क्योंकि भारत के सभी प्रदेशों में आयुर्वेद का स्वरूप एक जैसा तो है नहीं। हर प्रदेश में स्थानीय परिस्थितियों के आधार पर आयुर्वेद के स्वरूप की अलग अलग विशेषतायें विकसित हुई हैं। पर तमिलनाडु में आयुर्वेद के मूल सिद्धांतों पर आधारित यही विशेषताएं तमिल में अभिव्यक्ति पर सिद्ध चिकित्सा प्रणाली कहलाने लगी हैं।

सिद्ध सम्प्रदाय के चिकित्सक मुख्यतः तमिलनाडु में तथा आंध्र प्रदेश और केरल के सीमावर्ती क्षेत्रों में तथा कुछ श्री लंका एवं सिंगापुर में भी चिकित्सा कार्य करते हैं। इसका कारण भी सम्भवतः वहां तमिल भाषा भाषियों की उपस्थिति है। केरल में इस पद्धति के चिकित्सकों को चिन्तामणि वैद्य कहा जाता है।

जिस प्रकार आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त करने के संबंध में ब्रह्मा, इन्द्र, दक्षप्रजापति, अश्विनीकुमारों के बाद भारद्वाज, अग्निवेश आदि का वर्णन है, इसीप्रकार रस प्रधान सिद्ध चिकित्सा के प्राचीन ग्रंथों के आधार पर यह विश्वास किया जाताहै कि इस चिकित्सा शास्त्र काज्ञान सर्वप्रथम वैद्यनाथ भगवान शिव से अगस्त्य महर्षि को भगवती पार्वती, मुरुगन (शिवपुत्र कार्तिकेय) तथा नंदी के द्वारा प्राप्त हुआ।

इस ज्ञान का अगस्त्य ऋषि से निकटतम संबंध होने के कारण इस सम्प्रदाय को अगस्त्य सम्प्रदाय भी कहा जाता है। इस संबंध में यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि किस प्रकार महर्षि अगस्त्य ने उत्तर से विन्ध्याचल पार करके दक्षिण में प्रवेश किया था। अवश्य ही अगस्त्य ऋषि को अपने ज्ञान के प्रचार एवं प्रसार के लिये यहां की भाषा का सहारा लेना पड़ा होगा।

अगस्त्य सम्प्रदाय एक प्रकार से उस समय भारत में प्रचलित वैदिक और तांत्रिक धाराओं का समन्वय है। अगस्त्य से प्रेरणा प्राप्त करके लगभग ४७ सिद्धों ने अपने अपने ढंग से चिकित्सा ग्रंथों की रचना की। इनमें कुछ प्रसिद्ध सिद्धों के नाम इस प्रकार हैं। भोगार, तेरय्यार, पुलस्त्यार कपिलार, और पुलिप्पनी आदि। प्रत्येक नाम के साथ आर या यार शब्द तमिल में आदर सूचक है। कई स्थानों पर अगस्त्य को भी अगस्त्यार कहा गयाहै। इस तरह कपिल और पुलस्त्य आदि नामों से शेष भारत भी भली भांति परिचित है। उक्त सिद्धों की प्रायः सभी रचनाएं शेन तमिल अर्थात् आधुनिक तमिल के प्राचीन रूप में हुई है। इसी कारण कुछ लोग सिद्ध चिकित्सा को आर्यों के आयुर्वेद से अलग

द्राविडी चिकित्सा पद्धति मानते हैं। यद्यपि सभी सिद्धों और आचार्यों ने अपनी रचनाओं में स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया है कि उनके सिद्धान्त त्रिदोष एवं पंचमहाभूत पर आधारित हैं। उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया है कि रोगों की उत्पत्ति त्रिदोषों के वैषम्य से होती है और उनका निवारण पंचमहाभूतों पर आधारित विषम दोषों के विरुद्ध गुणों वाली औषधियों से होता है। सिद्ध चिकित्सा शास्त्र के फार्माकोपियां में २५ लवण, ६४ पाषाणों के प्रयोग ९ धातु, १२० धातुओं के प्रयोग और १००८ जड़ी बूटियां हैं। इन मूल द्रव्यों से कई भस्में, चेन्डूरम (सिन्दूर) मेझकू (मधूच्छिष्ट) की तरह के प्रयोग) तेल और चूर्ण आदि का निर्माण होता है। जिन्हें औषधि रूप में प्रयोग किया जाता है।

ऋषि भोगार का स्वप्नः-

कोयम्बटूर के निकट पलनी नामक स्थान पर एक पर्वत पर मुरुगन (कार्तिकेय) का एक प्रसिद्ध मंदिर है। इस मन्दिर का सिद्ध चिकित्सा पद्धति से निकटतम संबंध है। इस मंदिर के संबंध में यह कथा प्रसिद्ध है। इस मंदिर में श्री मुरुगन का विग्रह ९ पाषाणों के प्रयोग से बना है।

इस विग्रह को महर्षि अगस्त्य के शिष्य भोगार ने बड़ी साधना और परिश्रम से बनाकर स्थापित किया था। मंदिर के बनने के बाद भोगार ने नौ पाषाणों के प्रयोग से मुरुगन की प्रतिमा बनाने की योजना बनाई। भोगार और उनके सहयोगी इस विश्वास के साथ पाषाण विग्रह बनाने का प्रयत्न कर रहे थे कि नौ पाषाणों को एक विशिष्ट अनुपात में पीसकर मिश्रित करने से वह एक प्रकार के अमृत का रूप धारण कर लेता है जो औषधि रूप में भी अद्भुत प्रभावकारी होता है। पर भोगार तथा उनके सहयोगियों का प्रयत्न हर बार विफल हो जाता और मूर्ति अपेक्षित आकार एवं प्रभाव वाली न बन पाती। अपने प्रयत्नों में विफल भोगार ने अंत में सिद्ध विद्या के अधिपति भगवान् मुरुगन की प्रार्थना की। उसी रात स्वप्न में भगवान मुरुगन ने भोगार को परामर्श दिया कि वह अपना प्रयोग नींबू के स्वरस में करें। स्वप्न में मिले परामर्श से प्रेरित भोगार और उनके सहयोगियों ने पाषाणों को नींबू के स्वरस में भावित करना शुरु किया। इस बार उनके हाथों एक स्पष्ट एवं सुंदर आकार की अपेक्षित प्रतिमा उभर आई। जिसे कई अन्य संस्कारो के पश्चात् मंदिर में स्थापित कर दिया गया। पलनी के मुरुगन मंदिर की सारे प्रदेश में बड़ी प्रसिद्धि है। यहां प्रतिवर्ष लाखों दर्शनार्थी आते हैं। भगवान मुरुगन के अभिषेक से प्राप्त पंचामृत दर्शनार्थियों में वितरित किया जाता हैं। यहां के लोगों का विश्वास है कि अभिषेक के समय पाषाण विग्रह से पाषाणों के कुछ अमृत तुल्य तत्व पंचामृत में आ जाते है। जो कई

प्रकार के कठिन रोगों को दूर करने में दिव्य औषधि का कार्य करते हैं। सिद्ध संप्रदाय के लोगों का यह भी विश्वास है कि भोगार स्वयं मुरुगन की प्रतिमा के ठीक नीचे गहराई में समाधिस्थ हैं। उनका यह भी विश्वास है कि सिद्ध संप्रदाय के बहुत से आचार्य तथा ऋषि, महर्षि आज भी मंदिर के आस पास गुफाओं में रहते हैं।

महर्षि अगस्त्यार द्वारा रचित सिद्ध चिकित्सा के कुछ ग्रंथो के नाम इस प्रकार हैः-

बालवाहादम, रतिनाचुरक्कम, चिल्लरई कोवई,

अगस्त्यार ६००, चेन्दूरम ३००, वैद्य काव्यम १५००, वैद्य पूर्णम २०५ आदि। चिकित्सा शास्त्र के अतिरिक्त भी अगस्त्यार ने अन्य कई विषयों पर ग्रंथ लिखे। इन ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है।

वात काव्यम् (रसायन शास्त्र)

मान्त्रिक काव्यम् (मन्त्र काव्य)

जल काव्यम् (जादू)

ज्ञान काव्यम् (वेदांत)

आज कल सिद्ध चिकित्सा शास्त्र के निम्न ग्रंथो का अध्ययन भी आदरपूर्वक किया जाता है।

तेरय्यार यामुहम, भोगार ७००, पुलिप्पनी ५००, सिद्धवैध तिरत्तु।

पाणिनीय व्याकरण के प्रसिद्ध व्याख्याकार महर्षि पतंजलि को भी सिद्ध चिकित्सा संप्रदाय का एक प्रवर्तक माना जाता है। दक्षिण के इतिहास पतंजलि को ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दि का

मानते हैं। यह भी माना जाता है कि पतंजलि को लौह शास्त्र पर विशेष अधिकार था तथा उन्होंने पाणिनीय भाष्य, चरक संहिता और योग शास्त्र की रचना की थी।

सिद्ध संप्रदाय के प्राचीन ऋषियों ने पारद, गंधक, तथा कई प्रकार के विष और पाषाण विषों से अनेक प्रभावशाली प्रयोग विकसित किये। तथा औषधि निर्माण की कुछ नई विधियां खोज निकाली। इस संबंध में रस बंधन के साथ साथ लवण बंधन का विशेष उल्लेख किया जाता है, जिसे सिद्ध वैद्यों ने सदा रहस्य में रखा।

सामान्य लवण (सोडियम क्लोराइड) हवा के संसर्ग से गीला और अग्नि योग से बिखर जाता है। पर लवण बन्धन की प्रक्रिया के बाद लवण की यह सामान्य प्रकृति नष्ट हो जाती है तब लवण गरम करने पर धातु की तरह पिघलता है और ठंडा होने पर कठिन हो जाता है। इस प्रकार का लवण धातु के बहुत से गुण धारण कर लेता है; तथा वह धातु शलाका का रूप धारण कर लेता है । ऐसा कहा जाता है कि भीम की गदा का निर्माण बद्ध लवण से ही हुआ था। बद्ध लवण को विशिष्ट प्रक्रिया से चेण्ड्रम (सिन्दूर) में परिवर्तित किया जा सकता है। सूक्ष्म मात्रा में लवण चेंदूरम का प्रयोग मनुष्य को दीर्घायु एवं स्वास्थ्य प्रदान करता है। तथा यह वृद्धावस्था के लवणों को दूर करता है। इसके साथ यह भी कहा जाता है कि लवण चेन्दूरम सेवन की अवधि में ७ मास तक रोगी को केवल भात और दूध ही सेवन करना पड़ता है। बद्ध लवण से लोहे को स्वर्ण में भी परिवर्तित किया जा सकता है। पर इस ज्ञान को सिद्धों ने सदा रहस्य ही रखा। चिकित्सा कार्य में औषधियों की विभिन्न कल्पनाएं सिद्ध सम्प्रदाय में प्रचलित है।

चेण्डूरमः- इस वर्ग की औषधियां प्रायः लालवर्ण और चूर्ण रूप में होती हैं।

आयुर्वेद के सिन्दूर की तरह इसमें पारद गंधक का होना आवश्यक नहीं और न ही इसमें सदा अग्नियोग की जरूरत है। चेन्डूरम निर्माण की पांच विधियाँ हैं।

चूर्णम्, करूप्पु (कज्जली की तरह), कुडिनीर चूर्णम् (कषायों में प्रयुक्त यवकूट चूर्ण) लेधियम (अवलेह), मात्तिराई (छोटी वटी), मनपागु (पानक की तरह), मेझुगु, कुजम्बु , कलिम्बु और माई।

(यह मोम की तरह के होते हैं और ये बाह्य प्रयोग में लाए जाते हैं) पतले और गाढ़े के आधार पर इनके अलग अलग विभाग हैं।

नेई - (घृत)

पर्पमः- एक दो औषधियों को छोड़कर इस वर्ग में भस्मों की गणना होती है। पतंगः- इसका सिन्दूर की तरह निर्माण होता है। तैल, तीनीर (अर्क की तरह निर्माण) वेन्नाई (नवनीत की तरह निर्माण)

कलप्पु मास्तुंगलः इस वर्ग में सरल औषधियों तथा प्रयोगों की गणना होती है जिनका किसी अन्य वर्ग में समावेश नहीं हुआ है। सिद्ध सम्प्रदाय के प्रयोगों में रस गन्धक के साथ अनेक विषों और संखिया आदि का अधिक प्रयोग होता है। इन द्रव्योंमें कुछ द्रव्यों की शोधन विधि इस प्रकार

है। इन विधियों की उत्तर में प्रचलित विधियों से तुलना करके इन में समानता को समझा जा सकता है।

वत्सनाभः- इसके टुकड़े कर तीन दिन तक नित्य ताजा गोमूत्र में भिगाएं। फिर सुखाकर ६ घंटे गोमूत्र में स्वेदन कराये।

रस कर्पूरः- काले पान और मरिच का कल्क बनाकर २ सेर पानी में मिला दें। इसमें रस कर्पूर डालकर चतुर्थाभाव शेष रखें। ठंडा होने पर निकाल लें।

हिंगुल- दूध और नींबू के रस में एक एक दिन डुबा कर रखें।

शंख- जलते हुए चूने के पत्थर पर रखकर जल छिड़क कर ठंडा कर लें।

ताम्र- गरम करके कुलथी कषाय में ७ बार बुझाएं।फिर ७-७ बार निम्न द्रवोंमें बुझाएं।

कुमारी स्वरस, अम्ल तक्र, मत्स्याक्षी स्वरस।

प्रवाल- नींबू स्वरस में भिगोकर रखें।

जयपाल- गोमय, इमली पत्र और लाल मिट्टी के मिश्रण में ६ घंटे तक स्वेदन। फिर मज्जा निकाल कर चावल के साथ पकाएं। फिर धोकर नींबू स्वरस मेंघोलकर सुखा लें।

गन्धक- घी में तपाकर ६-७ बार दूध में डुबाएं।

सिद्ध सम्प्रदाय के चिकित्सकों द्वारा प्रयोग में आने वाले कुछ प्रसिद्ध प्रयोग इस प्रकार हैं।

शिवनार अमिरतम् :-पारद, गन्धक, वत्सनाभ, मनः शिला, टंकण, शुण्ठी, मरिच, पिप्पली, हिरवीकंद।

सब एक-एक भाग तथा मरिच सात भाग। पारद और गंधक की कज्जली बनाकर शेष द्रव्यों का चूर्ण उस में मिला दें और सात दिन तक मर्दन करें। इस तरह कुछ हरित तथा कृष्ण वर्ण सूक्ष्म चूर्ण प्राप्त होगा।

उपयोगः आमवात, श्वास, कास, पित्तविकार, कुष्ठ, उदरशूल, प्रलाप, अर्श, जलोदर तथा क्षय। कृमि दंश में इस का नस्य के रूप में प्रयोग होता है।

मात्राः १०० से २०० मि. ग्रा

पथ्यः लवण और इमली वर्जित।

चंड मारुतमः (सिद्ध वैत्यितिस्तु)

हिंगुल ४० ग्राम, रस कर्पूर २० ग्राम, सौवीर पाषाण १० ग्राम,

गंधक १० ग्राम रससिन्दूर १० ग्राम

उक्त द्रव्यों को स्तन्य (नारी दुग्ध) में पांच दिन तक मर्दन करें। इसके पश्चात कुछ दिन तक बिना स्तन्य के मर्दन कर सूक्ष्म गुलाबी रंग का चूर्ण कर लें। इस प्रयोग को बिना स्तन्य के केवल मर्दन करके भी बनाते हैं।

उपयोगः सन्धिवात, पक्षाघात, कम्पवात , प्रलाप, तीव्र ज्वर।

मात्रा ५० मि. ग्रा., २ बार, केवल पांच दिन तक।

अनुपानः त्रिकटु, गुड़, मधु या आर्द्रक स्वरस।

कुंगलीय पर्पमः पर्पम वर्ग की औषधियों में यद्यपि भस्मों की गणना होती है। पर यह प्रयोग अपवाद है। प्रयोग इस प्रकार है।

सर्जरस ३०० ग्राम, कच्चे नारियल का जल आवश्यकतानुसार। सर्जरस के चूर्ण को नारियल के जल में डाल कर पकाएं। जब सर्जरस पिघल कर ऊपर आ जाए तो निकाल कर शीतल कर लें । इस तरह सात बार करें। अंत में सर्जरस को चूर्ण करके रख लें।

उपयोगः मूत्रकृच्छ, मूत्रदाह, मूत्रावरोध तथा श्वेतप्रदर।

मात्राः २००-५०० मि. ग्रा. अनुपान घृत या नारियल जल।

तेरचुण्डी चूर्णम् :-

पांचोलवण प्रत्येक एक एक भाग, स्वच्छ आर्द्रक पांच भाग। इन सबको खट्टे दही में मिलाकर धूपमेंरखें। पूरी तरह सूखने तक अच्छी तरह मिलाते रहें।

उपयोगः जीर्ण अतिसार, अजीर्ण, वमन।

मात्राः १-२ ग्रा. अनुपान जल।

पेरंडपर्पम :-

मानव खोपड़ी की अस्थियां। अर्द्रक स्वरस में भावित कर पुट देकर भस्म बना लें।

पुनः इस भस्म को नींबू स्वरस की भावना देकर १-२ पुट दें।

अनुपानः गर्दभीक्षीर या आर्द्रक स्वरस।

उपयोगः उन्माद, अपस्मार।

मात्राः १००-३०० मि.ग्रा.।

निलावाराई चूर्णम :-

(अगत्तियार एरातिनाच चुरुक्कम) सनाय पत्र, शुण्ठी, मरिच, अजवायन और विडंग एक एक भाग, शक्कर ५ भाग।

सबको चूर्ण बनाकर मिला लें।

उपयोगः आध्मान, हिक्का, वमन, पित्तप्रकोप, अनुलोमक।

मात्राः १-२ ग्राम।

अनुपानः ऊष्ण जल।

तिरिफलाई चूर्णम् :-

हरीतकी, बिभीतकी और आमलकी सब समान भाग। चूर्ण बना लें।

तिरिक्कडु चूर्णम् :-

शुण्ठी, मारिच एवं पिप्पली। सब समान भाग-चूर्ण बना लें।

इंजी रसायनम् (सिद्ध वैत्यि दिदत्तु)

अदरक १ किलो, जीरक ५०० ग्राम, शक्कर १ किलो ५०० ग्राम, मधु आवश्यकतानुसार। आर्द्रक और जीरक को भूनकर मधु में मिलाकर पीस लें और फिर शक्कर मिला दें।

मात्राः ५ ग्राम, दिन में २ बार।

एरासा मेंझुगु : (अगस्त्यार परिपूर्णम् ४००)

पारद २० ग्राम, चोबचीनी २० ग्राम, पिप्पली ४० ग्राम, लवंग ४० ग्राम, गुड़ १२० ग्राम।

सब द्रव्यों को पारद अदृश्य होने तक मर्दन करें और एक मास बाद प्रयोग करें।

उपयोगः त्वकरोग, बिद्रधि और सन्धिवात।

मात्रा ५०-१०० मि.ग्रा.

अनुपान गुड़।

सिरुंगी पर्पमः-

मृग शृंग ३०० ग्राम को अगस्त्य पत्र स्वरस आवश्यकतानुसार लेकर उसमें ७ दिन तक भिगों दें। स्वरस नित्य बदल दें। फिर लघु पुट देकर भस्म बना लें।

उपयोगः कास मात्राः २०० मि० ग्राम अनुपान : घृत।

नाग पर्पम : (भोगार ७००)

नाग आवश्यकतानुसार लेकर लौह पात्र में पिघला लें और धीरे-धीरे पीत भृंगराज स्वरस डालकर उस समय तक हिलाते जाएं जब तक धातु चूर्ण हो जाए। फिर इस चूर्ण को एलुवे में मिलाकर मर्दन करें और टिकिया बनाकर सुखा लें। फिर उस समय तक पुट देते जाएं जब तक चूर्ण से हरा रंग नष्ट हो।

उपयोगः अर्श, भगन्दर, अतिसार। मात्राः १००-२०० मि० ग्राम, अनुपानः घृत। तिरि मूर्ति पतंगम (सिद्ध वैतित्रय तिरत्तु)

सोबीर पाषाण, रस कर्पूर, श्वेत संखिया ३०-३० ग्राम। इनका चूर्ण एक मिट्टी के पात्र में रखें। दूसरे पात्र में पान का रस डाल कर सुखा लें और उसे पहले वाले पात्र पर ढककर सन्धिबंधन कर भट्ठी पर रख दें। ६ घंटे आग देने के बाद उस पात्र की औषधि को ग्रहण करें।

उपयोगः पक्षाघात। मात्राः २५ मि.ग्रा.। अनुपानः गुड़।

मानसिक रोगों के परिप्रेक्ष्य में भावातीतध्यान

वैद्य श्री अच्युत कुमार त्रिपाठी
एम. ए. एल. एल. बी. डी. एच. बी.
आयुर्वेदाचार्य आयुर्वेदभूषण
महर्षि आयुर्वेद विभाग
महर्षि नगर, गाजियाबाद (उ. प्र.) २०१३०४

ध्यान का प्रधान उद्देश्य मन की उड़ानों को केन्द्रीभूत कर एकाग्रता के क्षेत्र में सफलता प्राप्त करना है। यह एकाग्रता भौतिक क्षेत्र में व्यक्ति को सुखी शांत तथा समृद्धशाली बनाने के साथ उसके प्रगति के मार्गो को जहाँ एक ओर खोलती है वहीं दूसरी ओर आत्मिक क्षेत्र में सिद्धि के साधन उपलब्ध करने में अपनी अहं भूमिका का निर्वाह करती है।

इस अहं भूमिका की दिशा में प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक अनेकानेक ऋषियों मुनियों तथा महर्षियों ने अनेक उपाय तथा विधान प्रचलित किये हैं। योग शास्त्रों में राजयोग, हठयोग लययोग, विन्दुयोग, मंत्रयोग तथा दार्शनिक योगों में ज्ञान योग, कर्म योग और भक्तियोग निर्धारित है, इनमें किसी का भी अवलम्बन एकाग्रता की साधना में अनिवार्य है। इस एकाग्रता हेतु अनेकानेक विधान वर्णित हैं। जिनमें इष्टदेवकी छवि का ध्यान, त्राटकसाधना, नाद, श्रवण, खेचरी मुद्रा, प्रेक्षा ध्यान तथा भावातीत ध्यान आदि प्रमुख हैं। भावातीत ध्यान के प्रवर्तक जगत् पूज्य महर्षि महेश योगी जी ने ध्यान धारणा की सरल पद्धति को वैदिक आधार की पृष्ठ भूमि पर सहज रूप से विस्तृत आयामों में आलोकित किया है। महर्षि जी का अवधारणा के सम्बन्ध में भावातीत ध्यान के प्रवक्ता एवं आध्यात्मिक पुनरुत्थान आन्दोलन के संयोजक श्री जागेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव जी ने अपनी पुस्तक बैंक और बाजार में भावातीत ध्यान के संदर्भ में जीवन के सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तरों का विशद चित्रण किया है। आपने अपनी पुस्तक में लिखा है कि –

महर्षि महेश योगी द्वारा एक सरल व्यवहारिक युक्ति प्रकाश में लाई गयी है। उनका कहना है कि मनुष्य के दुःखो का कारण यही है कि उसका अपने जीवन के इस स्त्रोत से सम्बन्ध टूट गया है। अपने अस्तित्व के इस स्त्रोत से उसे एकपूर्ण और शांतिमय जीवन के लिए आवश्यक शक्ति और आनन्द प्राप्त करना चाहिए, जिसका उपाय है भावातीत ध्यान।

जिसका अभ्यास दैनिक जीवन में बिना किसी कठिनाई के किया जा सकता है। एक बार यह युक्ति सीख लेने पर मन निश्चित रूप से अविलम्ब अपने स्त्रोत की ओर चला जाता है और एक ताजगी लिए हुए परोपकार की भावना के साथ, कर्म करने की प्रबल आकांक्षा के साथ दैनिक जीवन आनन्द लेने की नई क्षमता के साथ बाहर आता है। यही खजाना है जो बाजार में लाया गया है।

महर्षि जी का उद्देश्य है – आध्यात्मिक पुनरुत्थान लाना अर्थात संसार के सभी मनुष्यों में आत्मा के मूल्यों की पुनः स्थापना करना। आत्मस्वरूप को पहिचानना आत्मा का स्वरूप है विशुद्ध चेतना अखण्डानन्द, अखण्डानन्द की चेतना जो समस्त प्रज्ञा का स्रोत आनन्द का सागर एवं शाश्वत जीवन का आधार है। इसी का प्रत्येक के जीवन में लाना ही इनका एक मुख्य उद्देश्य है। जिससे जीवन के समस्त अर्थो में एकता और शांति का अनुभव हो। महर्षि जी का सिद्धान्त है कि जीवन एक दुःखद संघर्ष नही होना चाहिए और न ही तनाव पूर्ण। जीवन आनन्द रूप है, यह अनन्त प्रज्ञा है। अनन्त अस्तित्व है। पूर्ण आनन्द की चेतना जीवन का स्वाभाविक गुण है। फिर भी किसी तरह हम इससे वंचित हो गये हैं यथार्थ में यह अखण्ड आनन्द की चेतना आत्मा का अपना स्वभाव है। जिसे भावातीत ध्यान द्वारा हम पहिचान सकते हैं।

भावातीत ध्यान यंत्र में तेल देकर उसके निष्क्रिय पड़े हुए भागों को उपयोग में लाने योग्य बनाकर अनुभव की क्षमता को सूक्ष्म करने की एक प्रक्रिया है। जिससे अनुभव की क्षमता इस सीमा तक बढ़ जाती है कि अपने भीतर का आनन्द और सर्वव्यापी परमात्मा का प्रकाश हमारे जीवन में शत प्रतिशत आ जाता है और जब यह स्थिति आ जाती है तो फूल हमारी इन्द्रियों के सामने आता है ओर अनुभव कर्त्ता अपना अस्तित्व बनाये रखता है और साथ ही फूल का अनुभव भी करता है।

ध्यान आत्मा के क्षेत्र में जाने और वहाँ से बाहर आने की विधि है इसमें आत्म स्थिति स्वयंमेव बनी रहती है। हमें इसकी कल्पना करके यह स्थिति बनाये रखने की आवश्यकता नहीं होती। भावातीत ध्यान से ऐसी स्थिति बनती है। जिसमें हमारा आत्मा से सम्बन्ध बना रहता है और आत्मा की पूर्णता हमारी चेतना में बनी रहती है इस चेतना के तीन स्तर होते हैं जिसे जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति कहते हैं। इन तीनों में विशुद्ध चेतना व्याप्त है। विशुद्ध चेतना आत्मा का शुद्ध होना, श्रेष्ठ उत्कृष्ट स्तर का प्रतिपादन है, जिससे तनाव चिन्ता, व्याकुलता, अशांति, घृणा, क्रोध, सभी पापपूर्ण कार्य और अपराधी व्यवहारों को दूर किया जा सकता है। इन्हें दूर करके वह शांति सुख, समृद्धि, विवेक, सृजनता जीवन की पूर्णता, सदाचार और सच्चरित्रता का जीवन में संचार करता है। जिससे मानवता का पुनरुत्थान होता है।

मानसिक रोगों के परिप्रेक्ष्य में भावातीत ध्यान–

मस्तिष्क समूचे कार्य तंत्र का संचालक है। तथा विचारों का उद्गम केन्द्र भी यही है। एक ओर शांत और प्रसन्न मन जहाँ प्रगति का अभ्युदय द्वार खोलता है। वहीं दूसरी ओर चिंतित, अशांत, और उद्विग्न मन अनेकानेक विपदायें खड़ी कर देता है। जिससे मनोमालिन्य बढ़कर विनाश के पथ पर चलने को विवश कर देता है। विचार तंत्र के डगमगा जाने पर सभी कुछ कार्य नशेवत् हो जाते हैं और मन उद्विग्नावस्था को प्राप्त हो जाता है।

उद्विग्न मस्तिष्क का शारीरिक स्वास्थ्य पर बहुत ही धातक प्रभाव पड़ता है।

महर्षि महेश योगी जी ने कहा है –

विश्व की समस्त बीमारियों का मूलाधार प्रज्ञापराध है। और वह प्रज्ञापराध मनुष्य में तम और रज की अभिवृद्धि हो जाने से तथा सत्व के कम हो जाने से होता है। तम और रजकी अभिवृद्धि से मानव संस्कारों और विचारों का बनना बन्द होकर चेतना के क्षेत्र में अहंकार का उदय होना प्रारम्भ कर देता है, तव उस समय भावातीत ध्याय चेतना के क्षेत्र में बढ़े हुए अहंकार तथा जन्म जन्मान्तर के संस्कारों को नष्टकर चेतना को निर्मल कर देता है। और यह निर्मल चेतना सतोगुणी तथा सफलता का आधार होती है। आयुर्वेदशास्त्रों के अनुसार भी प्रज्ञापराध शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के रोगों का मूलकारण होता है।

चरक के अनुसार

धी धृति स्मृति विभ्रृष्टः कर्मयत्कुरुतेऽशुभम्।

प्रज्ञापराधं तं विद्यात् सर्व दोष प्रकोपाम्।।

चरक पूर्वाः।

अर्थात् धीधृतिं और स्मृति के भ्रष्ट हो जाने पर मनुष्य जब अशुभ कर्म करता है तव सभी शारीरिक और मानसिक दोषों को प्रकुपति करने वाले उस कारण को प्रज्ञापराध कहा जाता है। दूसरे हम यह भी कह सकते है कि बुद्धि में जब विविध विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं, तब हम उसे प्रज्ञापराध कहते हैं।

जैनमुनियुवाचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार :-

मनुष्य का जीवन व्याधि आधि और उपाधि इन तीन दिशाओं में चल रहा है। व्याधि का तात्पर्य है शारीरिक कष्ट आधि का मानसिक, तथा उपाधि का भावनात्मक कष्ट है और यह कभी कभी तीनों एक साथ होते हैं और इनके एक साथ होने का कारण है। सदवृत्त का परित्याग, धर्माचरण न करना।

इस सम्बन्ध में वाग्भट्ट का कहना है।

सुखार्थाः सर्वभूतानां मताः सर्वाः प्रबृत्तयः।
सुखं न विना धर्मात्तस्याद्धर्भ परोभवेत्।।

भक्त्या कल्याण मित्राणिसेवेतेतरः दूरगः।
अवृत्ति व्याधि शोकार्तानुवर्तेत शक्तितः ततद्र।।अष्टाङ्गहृदय १२।२०।।

अर्थात् सभी प्रवृत्तियां सुख के लिये होती हैं। और सुख बिना धर्म के नहीं मिलता। इसलिए मनुष्य को धर्मपरायण होना चाहिये। उसे चाहिये कि जो कल्याण करने वाले न हों उनसे दूर रहें, उनसे बचें, शोकादि से पीड़ित व्यक्तियों की सदा सहायता करें, तथा प्रयत्न शील रहें। और यह तभी सम्भव है जबकि सत्त्व की प्रधानता होगी और जब प्राणी में तम की प्रधानता होगी तब वह शास्त्र के प्रतिकूल आहार विहार, तथा धर्माचरण करेगा।

और इन सभी कार्यों में आवश्यक है मन की चंचलता की एकाग्रता अतः इन सारे दृष्टि कोणों के अध्ययन के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मन मानसिक रोगों में अपना एक अद्वितीय स्थान रखता है।

मानसिक रोगों में मन का उद्गम स्थान

मन को सत्व रजस तथा तमोमय कहा गया है। सत्व के कारण उसमें प्रकाश अर्थात् समझ बूझ का भाव, प्रसन्नता का भाव, धृति अर्थात् भावों पर नियन्त्रण का भाव, एकाग्रता निश्चलता आदि रहते हैं। तम और रजके कारण उसमें अनुचित प्रवृत्ति आदि बढ़ जाती है।

कभी-कभी तीव्र मानसिक अभिघात के लगने से मनका सत्व गुण या मष्तिष्क का बुद्धि स्थान निर्वल हो जाता है, दूसरा चिंता भय शोक अतिकार्य भार के कारण शरीर को उचित आहार न मिलने के कारण मस्तिष्क का पोषण न होने से धी धृति स्मृति कमजोर हो जाती है।

रजोगुण के बढ़ने से चिंता प्रधान तथा चेष्टा प्रधान मानस रोग तथा तमोगुण बढ़ने से विषाद प्रधान या निद्रा प्रधान रोग होते हैं।

बुद्धि की हीनता ही शारीरिक और मानसिक रोगों का कारण है। मन में प्रसन्नता है तो शारीरिक का पोषण ठीक हो तो बुद्धि ठीक होती है चिंता आदि के कारण चित्त के विक्षुव्ध होने पर सारा शरीर विक्षुव्ध हो जाता है, प्राण वायु विषम हो जाती है और मानसरोग उत्पन्न हो जाते हैं।

आयुर्वेद मतानुसार मानस रोग निम्न प्रकार के होते हैं।

१. अपतंत्रक रोग या अपस्मार

(क) अपस्मार

(ख) योषापस्मार

२. मूर्च्छा

३. चित्त विक्षेप या उन्माद (चेष्टा प्रधान मानसरोग)

४. अनिद्रिता

५. बुद्धिभ्रंश

६. स्मृति भ्रंश

कुछ विद्वान् अपतंत्रक रोग को अपस्मार से भिन्न बताते हैं। किन्तु इन दोनों के एक से मिलते जुलते लक्षण होते हैं। चरक तथा सुश्रुत के अनुसार अपतंत्रक रोग को आधुनिक मतानुसार हिस्टीरिया कहते हैं। इस रोग में वायुवर्धक कारणों से जब तब वायु प्रकुपित हो जाती है। तब संज्ञानाश गात्रस्तम्भ, श्वासस्तम्भ आदि का वेग हो जाता है जब वायु का वेग शांत होजाता है तो यह वेग भी शांत हो जाता है। इस प्रकार के वेगों को अपतंत्रक कहा जाता है। अर्थात् इस वेग के समय में रोगी के व्यक्तित्व पर रोगी का अपना कोई तंत्र नियंत्रक नहीं रहता और वह वायु के

वशीभूत हो परतंत्रता में हो जाता है। वायु का वेग बढ़ने से अचानक तीव्र पेशी संकोच, सामने की ओर से या बाजू में बल सा पड़ता है। कई बार आक्रन्दन होता है बाद में आक्षेप शुरू हो जाते हैं। चेहरा पीला पड़ जाता है, पुतली फैल जाती है। जीभ ऐंठने लगती है। मुंह में झाग निकलना शुरू हो जाते हैं। इस तरह का वेग ४ या ५ मिनट का होता है। फिर शांत हो जाता है यह वेग व्यक्ति में कभी भी किसी समय कभी-कभी प्रतिदिन प्रतिमाह, सप्ताह आदि में होता है। जिसे आम बोल चाल भाषा में हम मिर्गी भी कहते हैं। यह पुरुष तथा स्त्रियों में दोनों में ही होता है। स्त्रियों में होने वाले अपस्मार को योषापस्मार कहते हैं। यह ऋतुदोष या गर्भाशय की विकृति तथा अश्लील साहित्य पढ़ने, वियोगजनित पीड़ा आदि से होता है।

मूर्च्छा रोग मानसिक रोगों में ज्यादा आक्रामक नहीं है। इसका प्रधान लक्षण मूर्च्छा ही होता है। इसे अल्पकालिक स्मृति नाश कहते हैं। इसमें अत्यधिक परिश्रम करने से एकाएक मूर्च्छा आ जाती है तथा पुतली फैल जाती है। अपस्मार की तरह इसमें वेग नहीं आते पर हाथ पांव सीधे स्तम्भ युक्त हो जाते हैं। उसे कुछ समय के लिये यह पता नहीं चलता कि यह कौन है। उसे पहिचान नहीं पाता किंतु फिर ५-१० मिनट बाद मूर्च्छा जाते ही पहिचान लेता है और उसकी स्मृति नाश वापस आ जाती है यह रोग भी वायु दोष के बढ़ने तथा कुपोषक पदार्थों के सेवन से होता है कभी-कभी यह सोते हुये चलता है, बात भी करता है, किंतु ऐसे लक्षण कम मिलते हैं।

चित्त विक्षेप में बुद्धि की विभिन्न शक्तियां युवावस्था में ही क्षीण हो जाती हैं। आयुर्वेद में इसे उन्माद रोग कहा गया है। चरक तथा सुश्रुत ने कहा है कि जब वात-पित्त तथा कफ यह तीनों दोष मस्तिष्क में मन के स्थान को दूषित करके मनुष्य को मनन या चिंतन के अयोग्य बना देते हैं तो इस अवस्था को उन्माद कहते हैं। इनमें मनुष्य को नाना प्रकार की भ्रांतियां होती हैं, बुद्धि विभ्रंश हो जाता है जिससे वह ठीक विचार करने के अयोग्य हो जाता है। असंयत भाषण, मिथ्या वार्तालाप, मिथ्याभिमान जैसे लक्षण होते हैं। वह एक ही चीज को बार बार दुहराता है, कभी साधु जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं तो कभी अवारा जैसे लक्षण यह उन्माद कहलाता है।

अनिद्रता या उन्निद्र रोग उसे कहते हैं जब लेट जाने पर भी नींद बहुत देर से आए या नींद के दौरान नींद बार-बार टूटे या ३ बजे प्रातः टूट जाय फिर सर्वथा न आये। रात को उन्निद्रा रोग के कारण व्यक्ति बेचैन रहे और अति दुःख का अनुभव करे। यह रोग प्रिय जन वियोग या किसी प्रकार की हानि चिन्ता विषाद या बढ़े हुए दुःख से होता है। शरीर में थकान की अनुभूति से कार्य शक्ति घट जाती है।

बुद्धिभ्रंश रोग में जब मस्तिष्क को किसी कारण से क्षति पहुंच जाय और बुद्धि की मन्दता का लक्षण हो जाय तो इसे बुद्धि भ्रंश कहते हैं। यह रोग वात प्रकृति के व्यक्तियों में अधिक होता है। प्रायः देखा जाता है कि स्त्री, पुत्र, धन आदि के वियोग से बुद्धि में मन्दता आ जाती है।

स्मृतिमांद्य या स्मृतिनाश में मस्तिष्क की विकृति अर्थात् मस्तिष्क की स्मृति शक्ति, तथा बुद्धि शक्ति मस्तिष्क में किसी प्रकार की विकृति हो जाने से बुद्धि शक्ति तथा स्मृति शक्ति में क्षीणता उत्पन्न कर देता है, जिसमें उसे विस्मृति हो जाती है कभी कभी वह कुछ देखा, कुछ सुना,

कुछ पढ़ा उसे तुरन्त भूल जाता है। जैसे दिया हुआ पाठ, देखा हुआ कोई दृश्य आदि।

इस तरह हम कह सकते हैं कि ये सारे मानसिक रोग मनुष्य में अशांत मन के कारण होते हैं। जिस तरह हम शरीर को सुन्दर तथा बलवान बनाने हेतु सुन्दर सुपाच्य भोजन ग्रहण करते हैं। उसी तरह मन को स्वस्थ तथा शांत बनाये रखने के लिए विश्राम की आवश्यकता होती है। क्योंकि मन ही पञ्चज्ञानेन्द्रियों तथा पञ्च कर्मेन्द्रियों को संचालित करता है। दिन रात योजनाओं का चिंतन तथा उसे क्रियान्वयन शांत सुचित्त मन पर ही निर्भर है। यह शांत सुचित्त एकाग्रता मन को ३०-४० मिनट तक विश्राम पर ही प्राप्त हो सकती है। यह विश्राम की सरल पद्धति मन की एकाग्रता तथा सुचित्तता भावातीत ध्यान द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

भावातीत ध्यान की अवधारणा:-

महर्षि पतंजलि के अनुसार:-

चित्त को लगाया जाय और उसी वृत्ति की एकात्तता की जाय, ध्यान है। ध्यान को कायिक वाचिक तथा मानसिक माना गया है इस तरह ध्यान वह अवस्था है जब साधक के चित्त को अपने आलम्बन में पूर्ण एकाग्रता रहती है। मन चेतना के विराट सागर में लीन हो जाता है और वह वचन तथा काय से उसी में तल्लीन हो जाता है।

भावातीत ध्यान का वैज्ञानिक पक्ष:-

अपने मस्तिष्क के साथ अन्तः स्रावी ग्रन्थियों का भी बहुत महत्व है-वृत्तियों और वासनाओं का उद्‌भवस्थान मस्तिष्क में ही नहीं अपितु उन्हें पूरा करने के लिये प्रवृत्ति की भी मांग करती हैं। ये वृत्तियां व्यक्ति में केवल इच्छा या कामना पैदा नहीं करती है। सारे आवेश भावतंत्र को संचालित करने वाले हैं। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्रावों के द्वारा भावधारा को विकृत होने के लिए रोका जा सकता है, और वह है ध्यान। ये सारे आवेग हैं मानसिक रोगों के मूल मनो विज्ञान के प्रसिद्ध विद्वान मेक्डोनल के अनुसार:-

चौदह प्रकार की प्रवृत्तियां और चौदह प्रकार के संवेग बताये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं।

मूल प्रवृत्तियां	संवेग
१. पलायन वृत्ति	भय
२. संघर्ष वृत्ति	क्रोध
३. जिज्ञासा वृत्ति	कुतूहुलभाव
४. आहारचेष्टा वृत्ति	भूख
५. वित्तीय वृत्ति	वात्सल्य
६. यूथ वृत्ति	एकाकीपन
७. विकर्ष वृत्ति	जुगुप्साभाव

८. काम वृत्ति	कामुकता
९. स्वाग्रह वृत्ति	स्वाग्रहभाव उत्कर्षभाव
१०. आत्मलघुता वृत्ति	हीनता भाव
११. उपार्जन वृत्ति	स्वामित्व भाव
१२. रचना वृत्ति	सृजन भाव
१३. याचना वृत्ति	दुःखभाव
१४. हास्य वृत्ति	उल्लसित भाव

इस तरह सारे आवेग आन्तरिक इच्छाओं के आधार पर निर्भर होते हैं।

प्राचीन भारतीय मनोविकार विज्ञान के अनुसारः-

संवेग मन के विकार हैं, संवेगों का जीवन में अपना महत्व है। संवेगों से जीवन का रस कहा गया है। संवेगों से हीन जीवन की आसानी से कल्पना नहीं की जा सकती। आयुर्वेद ने संवेगों को जीवन में महत्व न दिया हो ऐसा भी नहीं कहा जा सकता।

चरक ने एषणाओं को प्राणी की सभी क्रियाओं के मूल में माना है। काम को पुरुषार्थों में प्रमुख स्थान दिया है। प्राणी काम सुख भोग सके काम सुख भोगने का सामर्थ्य पा सके इसलिए आयुर्वेद में वाजीकरण तंत्र की अवधारणा हुयी है। अगर काम की प्रत्येक स्थिति मानसिक रोग की ही स्थिति मानी जाती, तो उसका प्रतिपादन अन्य प्रकार से भी किया जा सकता था।

आयुर्वेद में जहां-जहां उस रोग को माना गया है। वहां-वहां इनसे इसका तात्पर्य इनके असामान्य रूप से है, सामान्य रूप से नहीं, सामान्य संवेग जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है और सामान्य संवेग विकृति या रोग अथवा रोग का सूचक। संवेग केवल मनोवैज्ञानिक कारणों से ही उत्पन्न होता है। इसे आज का मनोविज्ञान भी स्वीकार करता है। संवेगों के उत्पत्ति में संवेगात्मक परिस्थिति का प्रत्यक्षीकरण उसका अनिवार्य और सबसे पहला अंग है। जब तक संवेगोत्पादक परिस्थिति का प्रत्यक्षीकरण नहीं होता प्राणी के संवेग की उत्पत्ति नहीं होती, संवेगों की उत्पत्ति में वस्तु अथवा व्यक्ति का नहीं परिस्थिति का महत्व होता है।

ध्यान प्रवृत्तिपरक तथा निवृत्तिपरक मार्ग है। प्रवृत्ति परक का क्षेत्र संसार है जड़ पदार्थ है निवृत्ति परक का क्षेत्र अध्यात्म है। ध्यान द्वारा मन की चंचलता सीमित होजाती है। इस तरह जब मन एक स्थान की रुकने की स्थिति में अभ्यस्त हो जाता है तब ध्यान की स्थिति उत्पन्न होती है और ध्यान में तभी चित्त की एकाग्रता हो जाती है।

इस तरह ध्यान द्वारा सभी वेदनाओं का शमन हो जाता है। मन नियंत्रण में हो जाता है तब चित्त के निर्मलीकरण से दीर्घायुष्य प्रदान किया जा सकता है। इस तरह ध्यान मानसिक रोगों को दूर करने की सफल चिकित्सा पद्धति है।

इस पद्धति में कोई भी व्यक्ति आराम से सुखासन पर बैठकर सुबह शाम २०-२० मिनट बैठकर ध्यान द्वारा ६-७ घंटे गहरी नींद में सो सकता है। इस तरह भावातीत ध्यान से उच्च रक्तचाप, अनिद्रा, चित्त विक्षेपता, तथा अन्य मानसिक रोगों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। जिसका विश्व के क्षितिज पर वैज्ञानिक प्रयोग भी हो चुका है। इसे सीखने के लिए भारत या विश्व के किसी भी ध्यान केन्द्र में ध्यान शिक्षकों के माध्यम से सीखा जा सकता है।

भावातीत ध्यान अनुभव की पूर्ण अवस्था को पहुंचने का मार्ग प्रशस्त करता है। इससे अनुभव की क्षमता अत्यधिक बढ जाती है। यह मनुष्य के समस्त जीवन को विचार और कर्म के क्षेत्र में अधिक शक्तिशाली बना देता है। जिससे शक्ति, सामर्थ्य, संतोष, शान्ति, विद्वता, और सभी आवश्यकताओं को पूरा करने में वह अपने को पूर्ण पाता है।

वृहदारण्यक-उपनिषद में कहा है -

इच्छा प्रधान व्यक्ति जैसा संकल्प करता है वैसा ही कर्म करता है जैसा कर्म करता है वैसा ही बन जाता है।

आयुर्वेदीय अनुसन्धानों और आविष्कारों की शाश्वत गङ्गा

लेखक-वैद्य पं. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी.ए.

आयुर्वेद शिरोमणि, प्रतिष्ठित स्नातक (सन् १९३०, गुरुकुल)
आयुर्वेदाचार्य (सन् १९३१, जयपुर)
मानार्ह प्रधान सम्पादक, "स्वास्थ्य" (कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन)
अध्यक्ष- राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन
पूर्व अध्यक्ष- बोर्ड आफ् इन्डियन् मैडिसिन्, राजस्थान
पूर्व प्राध्यापक तथा आतुरालयाध्यक्ष (गुरुकुल, वृन्दावन)
रजिष्ट्रेशन सं. ५०५९ ब (राजस्थान)
आनन्द चिकित्सा सदन
(आयुर्वेदीय चिकित्सालय तथा रसायनशाला)
केसरगंज, अजमेर
दूरभाष (निवास) ३०००१

आयुर्वेद के ग्रन्थों में जो इतिहास उपलब्ध है उसमें आदि ऋषि ब्रह्मा का प्रथम स्थान है। ब्रह्मा ने शाश्वत आयुर्वेद का स्मरण करके उसका ज्ञान देवों के राज्य के अन्तः सुरक्षाधिकारी प्रजापति को प्रदान किया। प्रजापति ने यह ज्ञान अश्विनीकुमारों को और उन्होंने इन्द्र को। इसके अनन्तर भरद्वाज और धन्वन्तरि ने इन्द्र से आयुर्वेद के इस पवित्रज्ञान को प्राप्त किया। धन्वन्तरि ने शल्यचिकित्सा का और भरद्वाज ने काय चिकित्सा का।

संहिताओं में लिखा इतिहास अन्तः साक्ष्यके आधार पर आज भी उसी प्रकार सुरक्षित है और सत्य है। चरक संहिता (मूल अग्निवेशतन्त्र) और सुश्रुत संहिता इस इतिहास के सजीव प्रमाण के रूप में आज भी विद्यमान हैं। इनमें जो लिखा गया है वह शाश्वत आयुर्वेदीय अनुसन्धानों और आविष्कारों के अक्षर हैं।

आदि ऋषि ब्रह्मा ने जिस ब्रह्म रसायन का आविष्कार किया था उसका उल्लेख चरक संहिता में है। ब्राह्मरसायन के भी दो योग लिखे गये हैं। इनके घटक द्रव्यों को और निर्माण प्रक्रिया को देखने से उस समय के अनेक आविष्कारों का प्रत्यक्ष आभास मिलता है।

ब्रह्मरसायन के प्रयोग से प्रयोग से पूर्व शोधनार्थ हरीतक्यादिचूर्ण का उपयोग प्रतिपादित है २ रसायनयोग में सबसे प्रमुख और प्रथम

१- ब्रह्मा स्मृत्वाऽयुषो वेदं प्रजापतिमजिग्रहत्।
सोऽश्विनौ तौ सहस्त्राक्षं सोऽत्रिपुत्रादिकान्मुनीन्॥
तेऽग्निवेशादिकांस्ते तु पृथक् तन्त्राणि तेनिरे। अष्टांग हृदय।

सूत्र। अ.१।३,४

२-हरीतकीनां चूर्णानिसैन्धवामलके गुडम् ।
वचां विडङ्गं रजनीं पिप्पली विश्वभेषजम् ।।
पिपेदुष्णाम्बुना चरक । चिकि. । अ.१ । २६-२८ ।।

घटक हरीतकी है । साथ ही हरीतकी के रस गुण आदि का भी पूरा विवरण प्रस्तुत किया गया है । इससे यह ज्ञात होता है कि ब्रह्माजी के द्वारा ब्रह्मरसायन के योग का उपदेश करने से पूर्व ही हरीतकी आदि द्रव्यों के रस आदि का पूर्ण अनुसन्धान किया जा चुका था ।

यों यह बात बहुत साधारण सी प्रतीत होती है । परन्तु हरीतकी के रसों का निश्चिय करना और यह कहना कि इसमें पाँच ही रस हैं- मधुर, अम्ल, कटु, तिक्त और कषाय । लवणरस नहीं है । उष्ण वीर्य है । इतनी बात ही विशेष अनुसन्धान की आवश्यकता रखती है । पांच रस होते हुए भी इसका विपाक मधुर है । यह निश्चय करना और भी कठिन है तथा विशेष अनुसन्धान एवं परीक्षण द्वारा साध्य है । फिर यह किन रोगों को शान्त करती है, उसका निश्चय भी दीर्घ अनुसंन्धान और परीक्षणों की अपेक्षा रखता है ।

इतने पर ही हरीतकी सम्बम्धी प्राप्त ज्ञान की परिसमाप्ति नहीं । इस एक द्रव्य का ही युक्ति पूर्वक कितने रोगों पर सफल उपयोग हो सकता है, यह भी इसी स्थान पर सुनिश्चित रूप से वर्णित है । कहा गया है कि- हरीतकी आयुष्य वर्धक, पुष्टि प्रद, वयस् को अतिशय स्थिर रखने वाली, सर्वरोग नाशक, बुद्धि और इन्द्रियों को बल प्रद, कुष्ठ, गुल्म, उदावर्त्त, शोष, पाण्डु, मद, अर्श, ग्रहणी रोग, पुराने विषम ज्वर,हृद्रोग, शिरोरोग, अतिसार, अरोचक, कास प्रमेह, आनाह, प्लीहा वृद्धि, नवीन उदररोग, कफ का गिरना, स्वरविकार, विवर्णता, कामला, क्रिमिरोग, शोथ, तमक, वमन, अङ्गावसाद, विविध प्रकार के स्रोतोरोध, हृदय और फुफ्फुसों के प्रलेप और स्मृति तथा बुद्धि के प्रमोह को शीघ्र नष्ट करती है ।३

अब विचारणीय यह है कि ऋषियों ने यह निर्णय क्या आंखें बंद कर

हरीतकी पञ्च रसामुष्णामलवणां शिवाम् ।
दोषानुलोमनी लध्वी विद्याद् दीपन पाचनीम् ।।
आयुष्यां पौष्टिकीं धन्यां वयसः स्थापनीं पराम् ।
सर्व रोग प्रशमनीं बुद्धीन्द्रिय बल प्रदाम् ।।
कुष्ठ गुल्म मुदावर्त्तं शोषं पाण्ड्वामयं मदम् ।
अर्शांसि ग्रहणी दोषं पुराण विषमज्वरम् ।।
हृद्रोगं सशिरोरोगं, अतिसारमरोचकम् ।
कासंप्रमेहमानाहं प्लीहानमुदरं नवम् ।
कफप्रसेकं वैस्वर्यं वैवर्ण्यं कामलां क्रिमीन् ।

श्वयथुं तमकं छर्दिं क्लैब्यमङ्गावसादनम् ।।
स्रोतो विबन्धान् विविधान् प्रलेपं हृदयोरसोः ।
स्मृतिं बुद्धिं प्रमोहं च जयेत् शीघ्रं हरीतकी ।।

चरक । चिकि. अ.१ ।

अपनी कल्पना से ही लिखे हैं । हरीतकी का इन रोगों पर प्रयोग हो सकता है और किस प्रकार हो सकता है, इसके ज्ञान के लिए परीक्षणों और अजस्रतत्परता के साथ अनुसंधान की आवश्यकता है । प्राचीन आचार्यों को यह सब करना पड़ा था । उसके अनन्तर ही जो जानकारी प्राप्त हुई उसे ही यथार्थ रूप में लिखा गया है । यह न तो अतिशयोक्ति है और न किसी ऋषि ने आंख बंदकर यह सब विशेषताएं बतलाई हैं ।

आज भी यह सब तथ्य अनुभव से सत्य सिद्ध होते हैं । यदि सत्य कहा जावे तो यह बात यथार्थ ही सिद्ध होगी कि- यदि कोई व्यक्ति हरीतकी की इन विशोषताओं पर विशेष अनुभव प्राप्त करके चिकित्सा करने बैठे तो वह केवल इस एक द्रव्य के प्रयोग से ही चिकित्सा वैशिष्ट्य प्रदर्शित कर सकता है ।

यह बात मानी गई है कि संसार में कोई द्रव्य ऐसा नहीं है जो कि औषधि के रूप में कार्य में न लिया जासकता हो -

नानौषधि भूतं जगति किंचिद् द्रव्य मुपलभ्यते चरक. । सूत्र । अ.।२६ ।

वानस्पतिक जगत् का ही इतना विस्तार है कि उनका परिगणन नहीं किया जासकता । चरक संहिता में इनके विषय में लिखा गया है कि-

वैद्य जिन औषधियो को जानते हैं उनके अतिरिक्त भी औषधियां हैं, जिन्हें अविप, अजप, गोपालक तथा अन्य बनवासी नाम और रूप से जानते हैं ।

अथर्व वेद में तो और भी विस्तृत क्षेत्र का वर्णन है । कहा गया है-

बहुतसी औषधियां ऐसी हैं जिन्हें वराह जानता है, नकुल (न्योला) जानता है, सर्प एवं गन्धर्व जानते हैं

यह सुपर्ण अंगिरसी और दिव्य औषधियां हैं जिन्हें रघट पक्षी हंस एवं सभी पक्षी एवं मृगादि पशु जानते हैं ।

बहुतसी औषधियां ऐसी हैं जिन्हे अहिंसनीय गायें, बकरियां और भेड़ें खाती हैं उन सब औषधियाँ का लोक सुख के लिये उपयोग किया जावें ।

४- औषधी नाम रूपाभ्यां जानते ह्यजपा बने ।
अविपाश्चैव गोपाश्च ये चान्ये वन वासिनः ।। चरक । सूत्र । अ. १।११८

५- वराहो वेद वीरुधं नकुलों वेद भेषजीम् । सर्पा गन्धर्वा या विदुः। अथर्व । काण्ड ८ । सूक्त ७ । मन्त्र-२३ ।।

६- याः सुपर्णा आङ्गिरसी र्दिव्या या रघटो विदुः । वयां सि हसा या विदुर्याश्च सर्वे पतत्रिणः ।

७- यावतीना औषधीनां गावः प्राश्नन्त्यघ्न्या यावतीनामजावयः । तावतीरत्तुभ्यमोषधीः शर्म यच्छन्त्वाभृताः । अथर्व. का. ८ । सू. ७।२४,२५ ।।

इस प्रकार ओषधी जगत् के असंख्य औषधियों से परिपूर्ण होने पर भी विचारणीय यह है कि आयुर्वेद शास्त्रों में कुछ गिनती की ही औषधियों और कुछ अन्नपान आदि से सम्बद्ध द्रव्यों का ही उपयोग क्यों किया गया है !

इसका कारण भी विज्ञान मूलक है । आयुर्वेद के अनुसार चिकित्साएवं पथ्य आदि में उन्हीं द्रव्यों का व्यवहार उचित समझा गया है, जिनके रस, गुण, वीर्य, विपाक एवं प्रभाव का आयुर्वेदीय विज्ञान की विधि से निश्चय कर लिया गया है । इसी दृष्टि से संहिता आदि ग्रन्थों में औषध वर्गों और अन्नपानादि का विवेचन करके संग्रह किया गया है । पश्चात् कालीन निघण्टुओं में भी यही आधार स्वीकार किया गया है । इस मूल आधार का संकेत अथर्ववेद में भी मिलता है- यथा साधारण -

विश्व में भेषज द्रव्यों की सीमा नहीं है । परन्तु जिन औषधियों में साधारण मनुष्यों और भिषग्जनने भेषज की आवश्यक विशेषताओं को जाना है, मैं उन सब औषधियों का तुझ रोगी के लिये संग्रह और उपयोग करता हूँ- या करू । ८

चरक संहिता में इस बात को और अधिक विस्पष्ट रूप में कहा गया है-

केवल नाम अथवा रूप के ज्ञान से ही औषधियों के व्याधि और शरीर आदि की अपेक्षा से करने योग्य उत्कृष्ट और सम्यक् प्रयोग को कोई नहीं जान सकता ।

व्याधि और शरीर आदि की अपेक्षा से रस, गुण आदि के विशेष ज्ञान पूर्वक औषधियों के उपयोग को जानने वाला व्यक्ति औषधियों का तत्त्व ज्ञाता कहा जाता है, फिर उस व्यक्ति का तो कहना ही क्या जो इन को सब प्रकार से जानता हो ।

देशकाल आदि की अपेक्षा से प्रत्येक पुरुष की प्रकृति आदि को देखकर इनका जो प्रयोग करना जानता है उसे उत्तम भिषक् जानना चाहिये ।

आयुर्वेदाचार्यों ने इसी वैज्ञानिक प्रवृत्ति और धारणा के कारण चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाली औषधियों, यहां तक कि खनिजों आदि द्रव्यों के रस गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव का भी निश्चय करने के लिए अति व्यापक-

८-यावतीषु मनुष्या भेषजं भिषजो विदुः ।
तावतीर्विश्व भेषजीरामरामित्वामभि ।।

अथर्व । का. ८ । सू. ७।२६ ।।

९-न नाम ज्ञान मात्रेण रूप मात्रेण वा पुनः ।
औषधीनां परां प्राप्तिं कश्चिद् वेदितुमर्हति ।।

योग विन्नाम रूपज्ञस्तासांतत्त्वविदुच्यते ।
किं पुनर्यो विजानीयात् औषधीः सर्वथाभिषक् ।।
योगमासां तु यों विद्याद् देशकालोपपादितम् ।
पुरुषं पुरुषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तमः ।।
चरक. । सूत्र. । अ. १।११९-२१ ।।

और अकल्यनीय रूप से सुदीर्घ अनुसन्धान कार्य किया है।

स्वर्णादि धातुओं के भी रस, गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव आदि के विषय में कुछ उदाहरण भी देखिये -

स्वर्ण-स्वर्ण ताम्र का रस मधुर, तिक्त और तुवर रस वाला है। वीर्य शीतल है, विपाक मधुर है। यह गुरु, वृष्य बल्य और रसायन है।१०

ताम्र-ताम्र का रस तिक्त, कषाय और अम्ल है। वीर्य उष्ण है। विपाक मधुर है। पित्त और कफ को नष्ट करता है परम लेखन है।११

इस प्रकार चिकित्सा में प्रयुक्त द्रव्यों में रहने वाले इन पांच पदार्थों का विनिर्णय कोई सरल कार्य नहीं है। जैसे तैसे द्रव्य के रस का निश्चय कर लीजिये, वीर्य का भी, परन्तु विपाक का निर्णय अति कष्ट साध्य है।

जो अन्न हम खाते हैं उसका जाठराग्नि के द्वारा परिपाक होने पर, खाये हुए रसों से जो रसान्तर उत्पन्न होता है उसे विपाक कहा जाता है। १२ खाये हुए अन्न का परिपाक होने के अनन्तर जो रस प्रकट होता है उसको जानने का यदि आज की विधि से उपाय किया जावे तो न जाने कितने प्राणियों पर परीक्षण करने पड़ेंगे और न जाने कितने समय में एक द्रव्य के विपाक का निश्चय किया जा सकेगा। परन्तु प्राचीन वैज्ञानिकों ने अपने विज्ञान की विधि से जो प्रक्रिया विपाक का निर्णय करने के लिए अपनायी थी उससे वे इन सभी औषध एवं आहार द्रव्यों के विपाक का निर्णय करने में सक्षम हुए थे। साथ ही यह भी जान लेने की बात है कि उस विधि और प्रक्रिया का ज्ञान भी सुदीर्घ अनुसन्धान और परीक्षणों पर ही निर्भर करता है।

यह स्थूल रुप से प्रदर्शित तथा इस बात को बताते हैं कि प्रारम्भ से ही आयुर्वेदज्ञ ऋषियों ने एक सुनिश्चित वैज्ञानिक प्रक्रिया से ये आविष्कार किये हैं और उन रहस्यों क ज्ञान प्राप्त किया है जो कि आज के वैज्ञानिक के लिये आश्चर्य जनक हैं। इस प्रकार के अनुसन्धानों और आविष्कारों का इतिहास आयुर्वेद का इतिहास है। उनका परिगणन करना भी एक बड़े अनुसन्धान का विषय है।

ऐसे आविष्कारों में ही एक आविष्कार है कुछ द्रव्यों की योगवाहिता का ज्ञान। कुछ द्रव्य ऐसे हैं जिनकी योगवाहिता के ज्ञान से ।

१०. सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनम्।
स्वादुतिक्तं च तुवरं पाके नु स्वादु पिच्छिलम्।। भाव प्र. निघण्टु धातु वर्ग ११ ।।

११. ताम्रंतिक्तकषायकं च मधुरं पाकेऽथ वीर्यौष्णकं। साम्लंपित्तकफापहं। र.रत्न समु. अ.५ ४६

१२. जाठरेणाग्निना योगाद् यदुदेति रसान्तरम्। रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः ।।

आयुर्वेद में चमत्कारों की सृष्टि हुई है। इनमें तीन द्रव्य प्रमुख है :-

१. घृत, २. तैल, ३. पारद

घृत :-

घृत की योगवाहिता का ज्ञान किस काल में हुआ। यह ज्ञान करना इतिहासज्ञों के वश की बात नहीं है। अथर्ववेद में घृत की इस विशेषता का वर्णन उपलब्ध है। एक मन्त्र में वैद्य के वचन के रूप में कहा गया है :-

रोगी की आयु यदि क्षीण हो गई हो, यदि वह रोग में बहुत दूर पहुँच गया हो और यदि वह मृत्यु के बिल्कुल समीप पहुँच गया हो तो भी मैं उसे उस कष्ट प्रदस्थिति से निकाल कर बाहर ले आऊँगा। मैंने इसका स्पर्श इसलिये किया है कि इसे सौ वर्ष का स्वस्थ जीवन प्राप्त हो।

१३. मैंने इसे सहस्त्रों प्रकार का कार्य करने वाले (सहस्राक्षेण), सैकड़ों प्रकार की शक्ति वाले और सौ वर्ष की आयु प्रदान करने वाले घृत के द्वारा रोग से छुड़ाया है।

१४. इसी बात को प्रायः इन्हीं शब्दों में घृत के गुणों के वर्णन प्रसङ्ग में चरक संहिता में भी दोहराया गया हैं :-

घृत सहस्त्र प्रकार के वीर्य (शक्ति) वाला है। अनेक विधियों से प्रयोग करने पर सहस्त्रों प्रकार के कार्य सिद्ध करता है।

१५. इस कथन का व्यावहारिक रूप आयुर्वेद के ग्रन्थों में घृत के आधार पर बनने वाले योगों को देखकर किया जा सकता है। यह योग संख्या में लगभग सात सौ हैं और उनका प्रयोग प्रायः सभी रोगों पर किया जाता है। इस विविधता का आधार घृत की योगवाहिता का गुण है। इस गुण के आधार पर इससे भी अधिक जितने चाहे योग आवश्यकता के अनुसार बनाए जा सकते हैं। इतना ही नहीं, वह कार्य भी इसके द्वारा सम्पन्न किये जा सकते हैं जो कि आज के विज्ञान के द्वारा असम्भव से समझे जाते हैं।

आयुर्वेदाचार्यों ने ज्ञात किया था कि-त्रिदोष सिद्धान्त और योगवाहिता के आधार पर हृद्रोग में भी घृत का प्रयोग विशेष रुप से किया जा सकता है। जबकि आज का चिकित्सा विज्ञान (Modern Scientific medicine) और स्वयं आयुर्वेद भी हृद्रोगियों के लिये घृत को वर्जनीय मानता है। आचार्य वाग्भट्ट ने व्यवस्था दी है कि :-

पित्तज,कफज, सन्निपातज एवं कृमिज हृद्रोग में दूध, दही, घृत, गुड़, औदक एवं आनूप प्राणियों का मांस वर्जनीय है। इतना ही-

१३. यदि क्षितायुर्य दिवा परेतो यदि मृत्योरन्तिकंनीत एव।
तमाहरामि निर्ऋते रूपस्थादाहार्षमेनं शतशारदाय।। अथर्व.। का. ३। सू. ११।२

१४. सहस्राक्षेण, शतवीर्यैण, शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ।। अथर्व. का. ३ । सू. ११।३

१५. सहस्र वीर्यं विधिभिर्घृतं कर्म सहस्रकृत् । चरक । सू.भ. । अ. २७।२२९

यदि वातज हृद्रोग में रोगी के शरीर में जड़ता और आम का संयोग हो तो उसमें भी इन पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये । १६

इस प्रकार केवल वातिक हृद्रोग की विशेष अवस्था के अतिरिक्त सामान्य रुप से सभी हृद्रोगों में घृत को वर्जनीय माना गाया है । परन्तु घृत की योगवाहिता के आधार पर हृद्रोगों में विविध रुप से इसका प्रयोग किया गया है ।

चरक संहिता में वातज हृद्रोग में हरीतक्यादि घृत का विधान है । पुष्करादिकल्क योगों में घृत मिलाने को कहा गया है पित्तज हृद्रोग में द्राक्षादि घृत तो महिषी (भैंस) के घृत पर ही बनाया जाता है इसी प्रकार कशेरुकादि घृत और स्थिरादि घृत का पित्तज हृद्रोग में व्यवहार करना बताया गया है ।

हृद्रोग के चिकित्सा क्रम में त्र्यूषणादि घृत का भी विधान है । यह घृत श्वास, कास, पाण्डुरोग, हलीमक, हृद्ग्रह, और ग्रहणी में प्रयोग किया गया है । इसका निर्माण गोघृत से होता है और पाक भैंस के दही के साथ किया जाता है । पाण्डु, हलीमक और कामला में आधुनिक नव्य चिकित्सक घृत का प्रयोग नहीं करते । परन्तु इस घृत का प्रयोग हृद्रोग के अतिरिक्त कामला में भी होता है । २१

योग रत्नाकर में हृद्रोग चिकित्सा में प्रयुक्त दो योग विशेष प्रचलित हैं :- वल्लभ घृत और यष्टयादिघृत ।

एतान्येव च वर्ज्यानि हृद्रोगेसु चतुर्ष्वपि ।
शेषेषु, रतम्भ जाड्याभ संयुक्तेऽपि च वातिके ।।
अष्टांग ह.।चिकि.।अ.६।४२।। १७.

हरीतकी नागर पुष्कराह्वैर्यःकयस्था लवणैश्च कल्कैः ।
सहिंगुभिः साधितमग्रयसर्पिर्गुल्मे सहत्पार्श्वगदेऽनित्पोत्थे ।
चरक । चि.कि. । अ. २६ । हृद्रोग चिकि. ।१९

सपुष्करा हैर्फलपूरमूलं महौषधं शट्यभया च कल्कः ।
क्षाराम्वु सर्पिर्लवणैविमिश्राः स्युर्वार्ति हृद्रोग विकर्त्तिकाघ्नाः ।।
चरक । चिकि. । अ. २६।८२

द्राक्षा वला श्रेयसि शर्कराभिः खर्जूर वीरर्षभकोत्पलैश्च ।
काकोलिमेदायुगजीवकैश्च क्षीरे च सिद्धे महिषी घृतं स्यात् ।।
चरक । चिकि. । अ. २६।९१। हृद्रोग चिकि. ।
२०. चरक । चिकि. । अ. २६।९२,९३।हृद्रोग चिकि. ।

स्यात्त्र्यूषणां द्वे त्रिफले सपाठे निदिग्धकागोक्षुरकोबले द्वे ।
ऋद्धिस्त्रुटीतामलकी स्वगुप्ता मेदे मधूकं मधुकं स्थिरा च ।।
शतावरी जीवक पृश्निपर्ण्यौ द्रव्यैरिमैरक्षसमैः सुपिष्टैः ।
प्रस्थं घृतस्येह पचेद् विधिज्ञः प्रस्थेनदध्नस्त्वथ माहिषस्य ।।
मात्रां पलं चार्धपलं पिचुंवा प्रयोजयेन्माक्षिक सम्प्रयुक्तम् ।
श्वासे सकासे त्वथ पाण्डु रोगे हलीमके हृद्ग्रहणी प्रदोषे ।।

चरक । चिकि. । अ. २६।८५-८७। हृद्रोग चिकि. ।।

वल्लभ घृत के तो घटक चार ही हैं :- अभया, सौवर्चल, घृत और दूध । इस घृत के प्रयोग के प्रकरण में केवल हृद्रोग का ही नाम लिया गया है ।२२

यष्टयदि घृत में भी घृत को मिलाकर पांच घटक ही हैं । यष्टी, नागबला, उदीच्य, अर्जुन और घृत । इसका उपयोग हृद्रोग, रक्तपित्त, श्वास, कास और ज्वर के नाश के लिए होता है । २३

ऐसी ही बात कामला की चिकित्सा में भी है । तथा कथित आधुनिक वैज्ञानिक चिकित्सा के अनुसार कामला रोग में घृत का प्रयोग निषिद्ध है । दूध भी यदि पीने के लिये दिया जाता है तो मक्खन या Fat निकाला हुआ दिया जाता है । परन्तु आयुर्वेद में त्रिदोष विज्ञान और घृत की उपयोगिता के आधार पर कामला की चिकित्सा का प्रारम्भ ही घृत के प्रयोग से होता है । चरक संहिता में कहा है

कामला और पाण्डु के रोगी को पहिले स्नेहन के निमित्त पञ्चगव्य घृत, महातिक्त घृत अथवा कल्याण घृत पिलावे ।२४

स्नेहन के अनन्तर भी एक नहीं अनेक घृत योगों का विधान रोग नाश के लिए किया गया है । यथा - दाडिमाद्यघृत, कटुकाद्यघृत, पथ्याघृत, दन्तीघृत, द्राक्षाघृत, तथा हरिद्रादिघृत ।

इस प्रकार 'घृतं सहस्त्र वीर्यं विधिभि र्घृतं कर्म सहस्त्र कृत्' तो है ही, साथ ही घृतमाश्चर्य कर्मकृत् भी है । बाह्य उपयोग में भी इसका अति उत्तम उपयोग देखा जाता है । जात्यादि घृत का उपयोग अतिदूषित व्रणों में भी शोधन और रोपण दोनों कार्यों के लिए किया जाता है । सूक्ष्म मुख वाले तो, मर्माश्रित, गम्भीर, पूयस्त्राव युक्त, पीडायुक्त, नाडीव्रण भी इससे शुद्ध होते और उनका रोहण भी होता है ।२६

शतार्धमभयानां तु सौवर्चल पलद्वयम् ।
पचेत् कल्कैर्धृत प्रस्थं दत्त्वा क्षीर चतुर्गुणम् ।।
घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोग नाशनम् । योगरत्नाकर हृद्रोग चिकि. ।
यष्टी नाग बलोदीच्यार्जुनैः सर्पिः सुसाद्यितम् ।
हृद्रोग क्षय पित्तासुश्वास कास ज्वरार्त्तिजित् ।।

यो. र. । हृद्रोग चि. ।२४.

पञ्चगव्यं महातिक्तं कल्याणकमथापिवा ।
स्नेहनार्थं घृतं दद्यात् कामलापाण्डुरोगिणे ।।

चरक । अ. १६ । ४१ ।।२५.

दाडिमादिघृत, कटुकादिघृत, पथ्याघृत, दन्तीघृत, द्राक्षाघृत, हरिद्रादिघृत

चरक । अ. १६ । ४२-५१ ।।२६.

जाती पत्र पटोल निम्वकटुका दार्वो निशा सारिवा ।
मञ्जिष्ठाभय तुत्थ सिक्थमधुकैर्नक्ताद्ध बीजान्वितैः ।

सर्पिः सिद्धमनेन सूक्ष्म वदनाः मर्माश्रिताः स्राविणो गम्भीराः
सरुजो, व्रणाः सगतिका शुध्यन्ति रोहन्ति च ।।

योग रत्नाकर व्रणशोथ चिकित्सा एक मधूच्छिष्ट दिघृतं का योग भी है । अतिशय लाभ प्रद और चमत्कारी । लेखक ने स्वयं अपने अनुभव से देखा है कि अग्निदग्ध व्रणों के रोपण में जहां आधुनिक मलहर (Ointments) काम नहीं करते और प्रभाव हीन सिद्ध होते हैं, वहां इससे आश्चर्य जनक रुप से शीघ्रता से लाभ होता है । घृत के समान तेल की भी स्थिति है । योगवाहिता के आधार पर इसके भी लगभग सात सौ योग हैं इसका अभ्यङ्ग,नस्य, पान तथा बस्ति आदि बिबिध प्रकार से बिबिध रोगों में उपयोग होता है ।

पारद -

तीसरा योगवाही द्रव्य पारद है । इसके आधार पर तो आयुर्वेद में एक नवीन जगत् की सृष्टि हुई है । योगवाहिता के अतिरिक्त इसकी दूसरी विशेषता यह है कि यह द्रव्यों की गुणकारिता और शक्ति को कई गुना बढ़ा देता है । इसलिये इसका उपयोग योगवाही के रूप में और किसी द्रव्य की शक्ति को बढ़ाकर गुणित करने Multiplication के लिए किया जाता है । जिन औद्भिद वानस्पतिक द्रव्यों का उपयोग औषधार्थ ३ माशे से १ तोला तक की मात्रा में किया जाता है उनका पारद के साथ उपयोग करने से वे एक रत्ती से भी कम मात्रा में कार्यकारी हो जाते हैं । साधारण रसयोग जिनकी मात्रा १ रत्ती से ३ रत्ती हो और जिनके घटक द्रव्य ८,१० या इससे भी अधिक हों, उनमें एक द्रव्य की कितनी मात्रा होती हैं, इस बात को देखने से ही इस तथ्य का अनुभव किया जा सकता है । इसीलिये रसयोगों की मात्रा प्रायः कुछ रत्तियों में ही होती है ।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि में पारद एक ऐसा द्रव्य है, जिसका आभ्यन्तर प्रयोग करना उचित नहीं समझा जाता । न ही आभ्यन्तर प्रयोग के लिए कोई सरल मार्ग खोजा गया है । आयुर्वेदीय रस शास्त्र के अनुसार पारद का उपयोग सभी रोगों पर अति विस्तृत और व्यापक रुप में किया गया है । ज्वर आदि सभी रोगों में इसका उपयोग होता है । यहां तक कि वृक्क रोगों में भी पारद विशिष्ट गुणकारी रूप में व्यवहृत होता है । अश्मरी चिकित्सा में पाषाणवज्रक रस और त्रिविक्रम रस का उपयोग वैद्यराज मुक्त हस्त करते हैं । देखिये साधारण वज्रक रस का योग

मधूच्छिष्टं समधुकं लोध्रं सर्जरसंतथा ।
मूर्वाचन्दन मञ्जिष्ठाः पिष्ट्वा सर्पिविपाचयेत् ।।
सर्वेषामपिदग्धानां व्रणरोपणमुत्तमम् । सुश्रुतः ।

पाषाण वज्रक रस :-

शुद्ध पारद एकभाग, गन्धक ३ भाग श्वेत पुनर्नवा के रस से एक दिन घोटें । भूधर यन्त्र में इसका पाक करें । फिर उसमें पाषाणभेद का चूर्ण मिलाकर गोपाल कर्कटी के क्वाथ के अनुपान से प्रयोग करें । दो मात्रा (आजकल के हिसाब से ४ रत्ती) की मात्रा से प्रयोग करने पर अश्मरी का नाश करता है ।

त्रिविक्रम रस :-

ताम्रभस्म को अजाक्षीर में पकावे और समभाग घृत में पाककरे फिर उस ताम्र भस्म को उसके समभाग पारद और समभाग गन्धक मिलाकर निर्गुन्डी के पुष्पों के रस में खरल करके गोला बनावे । उसका एक पहर तक बालुकायन्त्र में पाक करें । दो गुञ्जाकी मात्रा से विजौरा मूल के रस या क्वाथ से देवे । इससे शर्करा अश्मरी का नाश होता है ।

स्थूल रूप से देखा जावे तो रस शास्त्र में प्रथम आविष्कार पारद की योगवाहिता का ज्ञान है ।

दूसरा अविष्कार संस्कारों द्वारा उसके दोषों का परिहार और गुण वृद्धि की प्रक्रिया का सुनिश्चित रूप स्थिर करना है । तीसरा अविष्कार उसके रस, गुर्ण, वीर्य, विपाक आदिका तलस्पर्शी अनुसन्धान और निर्णय है । चौथा अविष्कार उसे आभ्यन्तर प्रयोग के योग्य बनाना है ।

इन अविष्कारों के आधार पर पारद का उपयोग दो विशाल क्षेत्रों देहवाद और धातुवाद में हुआ है । देह के रोगों और दोषों को दूर करने के निमित्त और रसायन के निमित्त इसका प्रयोग अन्य अनेक धातुओं, उपधातु, विष उपविष, मणि मुक्तादि के तथा वानस्पतिक द्रव्यों के सहयोग से इतने व्यापक रूप से किया गया है कि उसे देखकर आश्चर्य होता है ।

पारद के चमत्कारों को देखकर स्वयं रस शास्त्री बोल उठे थे ।

शुद्ध सूतं त्रिधा गन्धं द्रावैः श्वेत पुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्वे सद्ध्वा तद्भूधरे पचेत् ।।
पाषाण भेद चूर्णनु समयुक्तं, द्विमाषकम् ।
भक्षयेदश्मरीं हन्ति रसः पाषाण वज्रकः ।।
योग रत्नाकार अश्मरी चिकित्सा ।

ताम्र ,भस्म त्वजाक्षीरिपाच्यं तुल्येघृते पचेत् ।
तत्ताम्रं शुद्ध सूतं च गधकं च समं समम् ।।
निर्गुण्डपुष्प द्रवैर्मर्धं दिनं, तद्गोलमाहरेत् ।
यामैकं बालुका यन्त्रे पाच्यं योज्यं द्विगुञ्जकम् ।।

वीजपूरस्य मूलंतु सजलं चानुपाययेत् ।
रसस्त्रिविक्रमो नाम्ना सिकतां चाश्मरीं जयेत् ।।

योगरत्नाकर । अश्मरी चिकित्सा ।

मूर्च्छित्वा हरतिरुजं ।
बन्धन मनुभूय मुक्तिदो भवति ।
अमरी करोति हिमृतः ।
कोऽन्यः करुणा करः सूतात् ।।

रसरत्न समुच्चय ।अ.१।३३ ।।

रासायनिक विधि से मूर्च्छित किया हुआ पारद रोगों को नष्ट करता है । बद्ध पारद मानव शरीर को समाधि आदि के योग्य बनाकर मोक्ष प्रदान करता है । भस्म किया हुआ मृत पारद अमरता-दीर्घ जीवन देता है । इस प्रकार स्वयं मूर्च्छित, बद्ध और मृत होकर भी जो इतना उपकार करता है उस पारद से अधिक करुणा करने वाला अन्य कौन हो सकता है ।

धातुवाद में पारद का चमत्कार -

पारद को आधार बनाकर धातुवाद के क्षेत्र में सिद्ध योगियों ने पारद के वेध से स्वर्ण निर्माण की विधि भी ज्ञात की थी । यह एक धातु में परमाणवीय परिवर्त्तन की विधि थी, जो कि आज के वैज्ञानिकों के विचार से असत् कल्पना है । परन्तु यह कल्पना नहीं, सत्य तथ्य है । वर्तमान समय में भी कुछ अनुसन्धान शील व्यक्तियों ने पारद वेध के माध्यम से स्वर्ण निर्माण करके दिखाया है । यह स्वर्ण परीक्षण से खनिज स्वर्ण के समान ही सिद्ध हुआ है । आयुर्वेद ग्रन्थों में धातुओं की औकर गणना में खनिज स्वर्ण के साथ पारद-वेधज स्वर्ण की गणना की जाती है ।

देहवाद में पारद का चमत्कार :-

देहवाद के लिए भी स्वर्ण आदि धातुओं, गन्धक, हिंगुल, अभ्रक, हरिताल आदि उपरसों, रत्नों, उपरत्नों तथा विष, उपविष आदि विविध द्रव्यों के रस आदि के निर्णय सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य और उसके परिणाम स्वरूप अगणित उपलब्धियों का ज्ञान इतना व्यापक और विविध आश्चर्यों से युक्त है कि उसका उल्लेख एक छोटे से लेख में करना सम्भव ही नहीं है । यही नहीं एक बड़े ग्रन्थ में भी उसका पूर्ण विवरण देना कोई सरल कार्य नहीं है ।

निरिन्द्रिय धातु आदि तथा सेन्द्रिय वानस्पतिक द्रव्यों के विविध प्रकार से संयोग के माध्यम से सैकड़ों रसयोगों की रचना की गई है । उन रसों की बहुआयामी और सूक्ष्म प्रक्रिया भी आज के वैज्ञानिकों की समझ में सहसा आने वाली नहीं है । क्यों कि ये वैज्ञानिक उन मूलभूत सिद्धान्तों से परिचित नहीं हैं, जिनके आधार पर उनका विकास किया गया है ।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, यह रस योग प्रायः सभी रोगों पर प्रयुक्त होते है । यहां तक कि वृक्क रोगों पर भी । इसे अतिरिक्त अधिकांश रसयोग विविध रोगों पर सफलता से कार्यकारी सिद्ध होते हैं । एक-एक योग के विविध एवं भिन्न कारण जन्य रोगों पर प्रयोग के निर्देश

को देखकर आधुनिक अनेक चिकित्सक और कुछ अपने आपको विज्ञान वादी समझने वाले वैद्य भी कहते हैं कि यह अतिशयोक्ति है।

आजकल चिकित्सा जगत् में ब्राड स्पेक्ट्रम ड्रग्स- Broad Spectrum Drugs - का व्यापक रूप से प्रयोग हो-रहा है। ब्राड स्पेक्ट्रम ड्रगका अर्थ है, वह औषध जो अनेक प्रकार के रोग जनक कीटाणुओं पर प्रभावकारी हो। ऐसी औषध का प्रयोग विभिन्न कीटाणुओं द्वारा उत्पन्न होने वाले विविध रोगों पर किया जाता है। ऐसा समझा जाता है कि यह नवीन विज्ञान की आश्चर्य जनक देन है।

एक ही औषध से अनेक रोगों की चिकित्सा करने की कल्पना योंकहिए कि आविष्कार-अति प्राचीन है। आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति विश्व की प्राचीनतम पद्धति है। उसे देखने से विदित होता है कि आयुर्वेदज्ञ मनीषी आज से सहस्त्रों वर्ष पूर्व से ही अपने वैज्ञानिक अनुसन्धान तथा सिद्धान्तों के आधार पर औषधों के अन्वेषण में लगे रहे हैं और उन्होंने ऐसी सैंकड़ों औषधों का आविष्कार किया है। ऐसी बहु कार्यकारी औषध इतनी सफल हुई हैं कि आयुर्वेदीय चिकित्सक वैद्य आज भी उनका सफलता पूर्वक व्यापक प्रयोग करते हैं।

भेद इतना है कि आधुनिक वैज्ञानिक कीटाणुओं और वाइरस VIRUS-के कारण रोगोत्पत्ति मानते हैं और इसी आधार पर इन औषधों का व्यवहार किया जाता है। दूसरी ओर आयुर्वेदाचार्य वैज्ञानिक जीवाणुओं का अस्तित्व मानते हुए भी रोगों का वास्तविक कारण त्रिदोष की विषमता को मानते हैं। इसलिए उन्होंने दोषों को समान स्थिति में लाने के कार्य को रोगनाश के लिए आवश्यक माना है। दोषों की विषमता तथा बलाबल आदि की समीक्षा करके औषधों की कल्पना की गई है।

इन वैज्ञानिकों ने औषध के मूल घटक द्रव्यों के गुणों का विवेचन भी जीवाणुओं के आधार पर न करके द्रव्य में रहने वाले रस आदि पाँच पदार्थों के आधार पर उनके दोषों पर होने वाले प्रभाव की दृष्टि से किया है।

अपनी इस प्रक्रिया के आधार पर बहु-कार्यकारी अनेक द्रव्यों का ज्ञान प्राप्त किया था उदाहरण के लिये - हरीतकी, आमलक, शिलाजतु, आदि द्रव्यों को लिया जा सकता है। योगों के उदाहरण में अगस्त्य हरीतकी, फलघृत, शिवागुटिका और योगराज (चरक. चि. कि. । अ. १६।७८-८४) को देखा जा सकता है। इनका उपयोग प्राचीनतम काल से आज तक समान रूप से सफलता पूर्वक हो रहा है। यह सभी नितान्त विपरीत कारणों और कीटाणु आदि से उत्पन्न रोगों पर कार्यकारी सिद्ध हुए हैं।

रस-शास्त्र के विकास के साथ तो जिन रस योगों का निर्माण हुआ है, वे सभी योग एक-एक महत्वपूर्ण आविष्कार हैं। अधिकांश रसयोग विविध कारणों से उत्पन्न नितान्त भिन्न रूप वाले रोगों पर कार्यकारी सिद्ध हो चुके हैं। केवल रस सिन्दूर, स्वर्ण सिन्दूर (मकरध्वज) को ही ले लीजिए। इनका प्रभाव क्षेत्र अतिव्यापक है। प्रयोग करने पर निश्चित रूप से कार्यकारिता प्रदर्शित होती है। इसी प्रकार जो रसयोग चिकित्सा में प्रयुक्त हो रहे हैं वे भी शास्त्र लिखित सभी रोगों पर और उनकी भिन्न अवस्थाओं में सफल सिद्ध हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में कुछ लोगों को यह मान्य था कि

आयुर्वेदीय योगों के फलवाद में अतिशयोक्ति से काम लिया गया है, निराधार है, और वास्तविकता के ज्ञान से बहुत दूर की बात है।

इस संक्षिप्त उल्लेख से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आयुर्वेदीय अनुसंधानों और आविष्कारों की यह शाश्वत गंगा अज्ञातकाल से अजस्त्र प्रवाहित हो रही है। इसमें यदि कुछ बाधा आई है तो हमारे विचारों की अनिश्चितता से आई है हम आधुनिक चिकित्सा विज्ञान से और आयुर्वेद की वास्तविकता को न समझने वाले लोगों की बातों से इतने विमूढ़ हो गये हैं कि आगे के लिए आयुर्वेद सम्बन्धी अनुसंधान के मार्ग का भी निश्चय नहीं कर पा रहे हैं, जबकि वह राजमार्ग आज भी हमारे सामने उसी प्रकार खुला हुआ है। किमधिकम् –

महोदधेः परं पारं यान्ति साधारणा अपि ।
अस्रवद्भिर्महापोतै रत्नजातं न लभ्यते ।।
शास्त्रोदधेः परं पारं गन्तुं पोतो न युज्यते ।
आतलं तत्रये मग्ना लब्धरत्नास्तरन्तिते ।।

रसशास्त्रीय वाङ्मय के आधार पर वादत्रय (देहवाद, धातुवाद एवं चिकित्सावाद) का अनुशीलनरस शास्त्र का प्रयोजन-

प्रो. वैद्य सिद्धिनन्दन मिश्र
पूर्व प्रो. राजकीय आयुर्वेद कालेज
सं.सं. वि.वि. वाराणसी

धर्मार्थमुपभोगानां नष्टराज्यविवृद्धये ।
आयुर्यौवनलाभार्थं मुक्त्यर्थं च मुमुक्षूणाम् ।। (रसोपनिषद्)

आयुर्वेद में दो परम्पराओं का सामान्यतः उल्लेख मिलता है। वेद की परम्परा में रुद्र को प्रथम भिषक् माना है। प्रथमोदेव्यो भिषक् यजु० १६।५ इसी प्रकार आयुर्वेदिक संहिताओं की परम्परा में ब्रह्मा को आयुर्वेद का प्रथम उपदेष्टा माना है। ठीक उसी प्रकार आयुर्वेद का एक अङ्ग विशेष रसशास्त्र के लिए भगवान् आशुतोष शिव को प्रथम उपदेष्टा माना है। १-पुराणों में रुद्र या शिव की जो कल्पना है, वह अशुचित्व पूर्ण है। ३-४ थीं शताब्दी में कवि कालिदास ने कुमार सम्भवम् महाकाव्य में भी शिव को अशुचि पूर्ण कहा है २-अतः कहा जाता है कि अपवित्रता से सिद्ध होने वाले तन्त्रों का सम्बन्ध प्रायः भगवान् शिव के साथ जोड़ा गया है। रस शास्त्र में ८४ सिद्धों का उल्लेख मिलता है। इनमें से कुछ तो रससिद्ध हैं और कुछ सिद्ध जिनका आचरण या वेशभूषा अपवित्रता प्रदर्शन करने वाला एवं घृणास्पद हैं जहाँ तक सिद्धि की सफलता का प्रश्न है, तो सिद्धियाँ मन्त्र या तन्त्र दो प्रकार से मिलती हैं। ये सिद्धियाँ आठ प्रकार की हैं ३- आयुर्वेद में आठ प्रकार के ऐश्वर्य का वर्णन मिलता है ४- श्रीमद्भगवद्गीता में भी दो प्रकार के सम्पत् का वर्णन मिलता हैः- १- दैवी सम्पत् २- आसुरी सम्पत्। इसमें से दैवी सम्पत् सांसारिक बन्धनों से मुक्ति हेतु तथा आसुरी सम्पत् सांसारिक बन्धनों से और भी अधिक बाँधने हेतु तथा विनाश के लिए है। योगशास्त्र में औषधियाँ भी सिद्धि प्राप्ति का साधन माना गया है। इन औषधियों में रसशास्त्र का प्रमुख द्रव्य पारद का स्थान सर्वोपरि है।

१- दैवी सम्पत्-

हिमालयादि पवित्र पर्वतों पर निराहार या यताहार पूर्वक यम, नियम, आसन और प्राणायामादि के द्वारा अनेक वर्षों तक ब्रह्मचर्य पूर्वक तपस्या करना, अध्ययनयुक्त तथा ब्रत ब्रह्मर्च और भक्ति पूर्वक भगवदाराधन पूजनादि करना। इसी नियम पूर्वक तपश्चर्या के समय समाधिस्थ होकर सत्-चिद्-आनन्द का अनन्त काल तक अनुभव करते हुए जो सिद्धियां प्राप्त होती हैं, उसे दैवी सम्पत् के नाम से जाना जाता है।

२- आसुरी सम्पत्-

एकान्त श्मशान में मुर्दे पर बैठ कर मन्त्रोच्चारण एवं मन्त्रों का जाप करने से जो सिद्धियाँ मिलती है उसे आसुरी सिद्धि या सम्पत् कहते हैं।

३- औषधि सम्पत्-

औषधियों की सहायता से व्रत, तप, ज्ञान, ब्रह्मचर्य,अध्ययन और समाधि में अत्यधिक सफलता मिलती है। इन क्रियाओं द्वारा जो सिद्धियाँ मिलती हैं उसे औषध सम्पत् कहते हैं। अतः पारद भी औषधि है और पारद आदि औषधियों से मिलने वालीं सिद्धियाँ औषध सम्पत् हैं।

जहाँ तक सिद्धि एवं ऐश्वर्य का प्रश्न है वहाँ तीनों प्रकार से मिलने वाली सिद्धियाँ एक जैसी ही है। किन्तु उनका परिणाम भिन्न -भिन्न होता है। सिद्धियाँ प्राप्ति के मार्ग भी भिन्न-भिन्न हैं। मंत्र सिद्धि (दैवी सम्पत्) के लिए मद्य, मांस, मैथुनादि से पृथक् रहना चाहिए। स्वल्पाहार, शान्त एवं मित भाषी रहना चाहिए।

१- आदिमश्चन्द्रसेनश्च लङ्केशश्च विशारदः। आदिमः-शिवः। रसरत्नसमु.

२- त्वमेव तावत्परिचिन्तय स्वयं कदाचिदेते यदि योगमर्हतः।
वधूदुक्कूलं कलहंसलक्षणं गजाजिनं शोणितबिन्दुवर्षि च। कुमार सम्भवम्

३ अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा।
प्राप्ति प्राकाम्य ईशत्वं वशीत्वं चाष्ट सिद्धयः।। (अमरकोश)

४ आवेशश्चेतसो ज्ञानं अर्थानां छन्दतः क्रिया।
दृष्टिः श्रोत्रं स्मृतिः कान्तिरिष्टतश्चाप्यदर्शनम्।
इत्यष्टविधमाख्यातं योगिनां बलमैश्वरम्।
शुद्धि सत्त्वसमाधानात्तत्सर्वमुपजायते। (च.सं.शा.१।१३८।३९।)

मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्र रहना चाहिए। आवश्यक है कि देवताओं की उपासना, कुशासन पर शयन, सुगन्धित पुष्पों की माला आदि इन के विधान हैं किन्तु तन्त्रों की प्रक्रिया इसमें भिन्न है। प्रबोध चन्द्रोदय नाटक में सोमसिद्धान्त नामक कापालिक का वर्णन है। वह मनुष्य के अस्थियों की माला धारण किए हुए श्मशान में वास करना था और नरकपाल में भोजन करना था। योगाञ्जन से शुद्ध दृष्टि द्वारा वह कापालिक जगत को परस्पर भिन्न देखता हुआ भी ईश्वर से अभिन्न देखा करता था, (१)। सोमे सिद्धान्त का अर्थ उमा सहित शिव (उमया सह शिवः सोमः)वह व्यक्ति यह विश्वास करता था कि जिस प्रकार हिमालय पर्वत पर नित्य भगवान् शिव उमा के साथ विहार करते हैं, उसी प्रकार नित्य कान्ता के साथ एकान्त पर्वत क्षेत्र में विहार करने से मुक्ति हो जाती है। इसी प्रकार राजशेखर विरचित कर्पूर मञ्जरी में भैखानन्द कापालिक की चर्चा है। वह अपने को कुल मार्ग में संलग्न कोल कहा करते थे। उस कापालिक ने कहा है कि कौल मार्ग के साधकों को न मन्त्र, न तन्त्र, न जप, न ज्ञान, न ध्यान और नहि गुरु कृपा की जरूरत होती है (२)।

कौलों को पञ्च मकार का सेवन करने से सहज ही मोक्ष या सिद्धि मिल जाती है। सौभाग्य भास्कर में कौल की परिभाषा इस प्रकार दिया है (३)। कुल-पार्वती को कहते हैं। क्योंकि शास्त्रों में उनके कुल (माता-पिता-स्थान आदि) का विस्तृत वर्णन मिलता है। अकुल-शिव को कहते हैं, वे अजन्मा हैं, इनके माता-पिता आदि की चर्चा कहीं भी नहीं उपलब्ध हैं और नहीं किसी को

इसका ज्ञान है । अतः वे (शिव) अकुल हैं । जिस शास्त्र में कुल (पार्वती) और अकुल (शिव) के साथ संबंध स्थापित कर अपने श्रेयस पथ की प्राप्ति की जाये, उसे कौलमार्ग या कौलशास्त्र कहा जाता है । इस प्रकार तन्त्र सिद्ध करने वालों का मार्ग मन्त्र वेत्ता ऋषियों से सर्वथा भिन्न था । मन्त्र का सम्बन्ध ब्रह्मा से तथा तन्त्र का सम्बन्ध शिव से है ।

शाक्त मतानुसार चार प्रकार के प्रधान आचार हैं-

१- वैदिक २- वैष्णव ३- शैव ४- शाक्त ।

इनमें शाक्त आचार भी चार प्रकार के हैं-

१- वामाचार २- दक्षिणाचार ३- सिद्धान्ताचार ४- कौलाचार ।

शाक्तों के इन चार मार्गों में कौलाचार सर्वश्रेष्ठ है । सत्त्व, रज और तम के भेद से शाक्त आगम भी तीन प्रकार के हैं -

१- सात्त्विक अधिकारियों के लिए आगमतन्त्र है ।

२- राजसिक अधिकारियों के लिए आगम यामल है ।

३- तामसिक अधिकारियों के लिए आगम डामर है । (नाथसम्प्रदाय)

कापालिक (कौल) भी अपने शरीर को नित्य नियमित निमन्त्रित करते थे जिससे वे भी सिद्ध कहे गए । इन सिद्धों की कुल संख्या ५४ थी, जिनमें से ८ रस सिद्ध थे । डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने नाथ सम्प्रदाय नामक ग्रन्थ में इन सिद्धों का विस्तृत विवेचन किया है । श्री द्विवेदी जी का मानना है कि जितने सिद्ध हुए वे प्रायः नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्धित एवं उन्हीं की परम्परा में थे । रस शास्त्र का पृथक् आचार्य जिस नागार्जुन को कहा जाता है, वह भी उन्हीं सिद्धों में से एक थे ।

८- <u>रससिद्ध</u> -

१- नागार्जुन २- नागबोधि ३- जलन्धरनाथ ४- मीनया (मत्स्येन्द्रनाथ) ५- गोरखनाथ ६- चर्पटिका ७- व्याडी ८- कापालिक ।

१- नरास्थिमालाकृतचारुभूषणः श्मशान वासी नृकपाल भूषणः ।
पश्यामि योगाञ्जन शुद्धचक्षुषा जगन्मिथो भिन्न मभिन्नमीश्वरात् ।। प्र.च. १।१२।

२- मंतो ण तंतो ण अकिंपि जाणं झाणं च णो किपि गुरुप्पसादा । मज्जं पिबमो महिसं नमामो
मोक्खं च जामो कुलमग्गलग्गा ।। (कर्पूरमञ्जरी १।१२)

३- मद्यं मांसं तथा मीनं मुद्रा मैथुन मेव च ।
पुनः पुनः साधयित्वा पूर्णयोगी बभूव सः ।। (महानिर्वाणतन्त्र)

४- कुलं शक्ति रिति प्रोक्तमकुलं शिव उच्यते ।
कुले ऽकुल सम्बन्धः कौलमित्यभिधीयते ।। (सौभाग्यभास्कर)

यह सर्वमान्य है कि सिद्धनागार्जुन रसशास्त्र के प्रमुख आचार्य हैं। भारतीय संस्कृति में समय समय पर अनेक नागार्जुनों का उल्लेख मिलता है। ईसा से १०० वर्ष पूर्व से ९ वीं शताब्दी तक अनेक नागार्जुन हुए हैं, जिसमें से दो नागार्जुन के साथ रसशास्त्र का सम्बन्ध अधिक पुष्ट हैं।

१ प्रथम नागार्जुन

ईसा पूर्व १०० वर्ष राजा शालिवाहन का मित्र था। वह बौद्ध होते हुए भी रसशास्त्र का परम ज्ञाता एवं विद्वान् था। राजा शालिवाहन बहुत वीर एवं दानी थे दान करने के कारण उनके कोषरिक्त हो जाते थे, जिसे नागार्जुन स्वर्ण रजत एवं रत्नादि निर्माण कर कोष को पुनः

परिपूर्ण कर दिया करता था। वह महात्मा १०६ या ६०० वर्ष तक जीवित रहा। वह महात्मा मायुरीविद्या, निःस्वभाववाद (शून्यवाद) के परम ज्ञाता थे, उन्होंने महायान की नीव डाली थी तथा धातुवाद और देहवाद के परमज्ञाता थे। ऐसा श्री मञ्जुमुनि ने अपने प्रथम ग्रन्थ मञ्जुश्री मूलकल्प के ५३ अध्याय में लिखा है।

२- द्वितीय नागार्जुन-

द्वितीय नागार्जुन ८ वीं शताब्दी में विदर्भ देशीय काञ्ची नगर के एक धनाढ्य किन्तु निःसन्तानब्राह्मण के घर में उत्पन्न हुए थे। ज्योतिषियों ने उन्हें अल्पायु होने की घोषणा कर दी थी। उपायों के बाद ७ वर्षों तक जीवित रहें। पुनः ज्यौतिषिओं की सलाह पर उक्त ७ वर्षीय बालक को अपने नौकरों से घने जंगलों में छोड़कर चले आने का आदेश दिया। जंगल में अकेला रोता चिल्लाता बालक नागार्जुन इधर-उधर घबराया सा जाने लगा। उसी समय भगवान अवलोकितेश्वर उसे मिले और उस बालक को अपने साथ लेकर नालन्दा विश्वविद्यालय के कुलपति सिद्ध सरभ के पास आकर उसे (होनहार बालक को) सौंप दिए और कहा कि यह बालक अल्पायु है, किन्तु आपके सान्निध्य में यह बालक पूर्ण दीर्घायु एवं अनेक भाषा एवं कलाओं का विशेषज्ञान रखने वाला विद्वान् होगा। ऐसा भोटदेशीय ग्रन्थों के आधार पर पं. हरिनाथ शास्त्री ने कहा है। यही बालक आगे चलकर सभी भाषाथों एवं विज्ञानों का विशेष विद्वान् तथा नालन्दा विश्वविद्यालय का दूसरा कुलपति हुआ। नालन्दा के आस-पास दुर्भिक्ष के बाद द्वीपान्तर में जाकर स्वर्ण निर्माण विज्ञान सीखकर नालन्दा को दुर्भिक्ष मुक्त किया। द्वीपान्तर से लोटने पर उन्होंने उद्घोषणा की थी कि इस पृथ्वी को दरिद्रता विहीन करने के लिए मैं पारद को सिद्ध करुँगा। यह नागार्जुन भी बौद्ध थे, उन्होंने रस विद्या रसायन विद्या, मायूरी विद्या, वज्रयान, निः स्वभाव वाद, प्रज्ञापारमिता(वनस्पति-खनिक द्रव्यों के साथ-साथ रसविज्ञान, जादू, समाधिवेत्ता की शक्ति से स्वर्ण बनाने) के परमज्ञाता थे।

१- चतुर्थवर्षशते प्राप्ते निवृते मयि तथागते ।
नागाह्वयो नामासौ भिक्षुः शासनेऽस्मिन् हिते रतः ।।

मुदितां भूमिलब्धास्तु जीवेद्वर्ष शतानि षट् ।
मायूरी नामतो विद्या सिद्धाः तस्य महात्मनः ।।

मानोशास्त्रार्थ धात्वर्थ निःस्वभावार्थ तत्त्व वित् ।
सुखावत्यां चोपपद्येत् यदा त्यक्तकलेवरः ।। (मञ्जुश्रीमूलकल्प ५३)

३- तृतीय नागार्जुन-

तीसरे नागार्जुन भी बौद्ध थे। वे विक्रम शिला विश्वविद्यालय भागलपुर के कुलपति थे। यह विश्वविद्यालय जादू टोना, एवं तन्त्रादि के लिए प्रसिद्ध रहा है। यह भी सम्भव है कि नालन्दा विश्वविद्यालय का कुंलपति नागार्जुन ही कालान्तर में विक्रमशिला विश्वविद्यालय का कुलपति भी रहे हों, क्योंकि वे दीर्घजीवी थे।

सुश्रुत प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन ईसा पूर्व में हुए थे। वे भी बौद्ध थे। किन्तु रसशास्त्र से उनका सम्बन्ध नही माना जाता है।

रसशास्त्र में और भी अनेक महान् सिद्धों एवं आचार्यो का समय-२ पर प्रादुर्भाव हुआ है, जिनमें गोरखनाथ, व्याडी आदि प्रमुख हैं।

मानव जीवन के चार उद्देश्य है-

धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष की प्राप्ति। प्राचीन काल में मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति हेतु अनेक महर्षि गण तल्लीन थे, क्योंकि वे लोग भोग की सभी वस्तुओं-धन शरीर, भोग,आदि को अनित्य मानते थे। अतः शरीर को अजर-अमर (पिण्डस्थैर्य) बनाकर अनन्तकाल तक योगा भ्यास के द्वारा उस सत्-चित्-आनन्द का स्मरण एवं अनुभव करते हुए मोक्ष की प्राप्ति चाहते थे (१)। यद्यपि मोक्ष प्राप्ति के और भी अन्य उपाय थे तथापि वे सब कष्ट प्रद और अनिश्चित थे, क्योंकि उसी साधना में अनेक साधक रोगग्रस्त होकर असमय में काल कवलित हो जाते थे। साथ ही यह मार्ग करामलकवत् नहीं प्रतीत होता था। अतः मुमुक्षु साधकों ने सर्वप्रथम पिण्ड स्थैर्य हेतु विचार-विमर्श, चिन्तन-मनन एवं अनुसन्धान करना प्रारम्भ किया।

रस शास्त्र का वादत्रय -

१- देहवाद-शरीर को स्थिर करके (जरा-व्याधि-मृत्यु से रहित करना ही शरीर स्थैर्य कहलता है) कर अर्थात् लम्बी आयु प्राप्त कर योगाभ्यास द्वारा समाधि स्थ होकर अनन्त काल तक सत्-चित-आनन्द का स्मरण करते हुए मोक्ष प्राप्त करना ही सरल मोक्ष मार्ग है। मंत्र सहज समाधि क्रमेण मनसा मनः समालोच्यते स एव मोक्षः रसशास्त्रे वर्णितः)

कालान्तर में सभी मतावलम्बी मुमुक्षुओं ने अनन्त काल की साधना एवं अनुसंधान के बाद एक सभा में तर्क-विकतर्कोपरांत पिण्डस्थैर्य के लिए एक मत से पारद को स्वीकार किया।

देहवेध-

पारद के द्वारा शरीर को स्थिर बनाकर अजरामर बनाना ही देहवाद था।

लोहवेध-

निकृष्ट धातुओं को उत्कृष्ट धातुओं में परिणत करना ही लोहवाद है। अर्थात् नाग-वङ्ग-यशद

एवं ताम्रादि धातुओं को उत्कृष्ट धातु (सोना-चांदी) में परिणत करना।

१- इति धनशरीर भोगान मत्वा ऽनित्यान् सदैव यतनीयम्।
मुक्ति स्तस्य ज्ञानात् आभ्यासात् स च स्थिरे देह। (रसहृदयतन्त्र)

२- अपरे माहेश्वराः परमेश्वर तादात्म्य वादिनोऽपि पिण्डस्थैर्ये सर्वाभि मताजीवन्मुक्तिः सेत्स्यतीत्यास्थाय पिण्डस्थैर्योपायं पारदादिपदवेदनीयं रसमेव संगिरन्ते (रसेश्वरदर्शन)

१- पारद में शरीर को स्थिर करने की शक्ति है, यह जानने के बाद उन साधकों ने इस बात की परीक्षा के लिए अनेक क्रियाओं के द्वारा १६ संस्कार करना प्रारम्भ किया। अर्थात् पारद में विशेष गुणाधान करना प्रारम्भ किया। इस कार्य के लिए अभ्रक, गन्धक, वैक्रान्त, माक्षिक, रसक, सस्यक, कासीस, फिटकरी, शिलाजतु, हरताल, मनःशिला, अञ्जन, कङ्कुष्ठ, शंखिया, हिङ्गुल, अग्निजार, क्षार, रत्नोत्परत्न, लवण आदि तथा काष्ठौषधियों और धातुओं आदि की सहायता से पारद पर षोडश संस्कार करनें लगे। इस षोडश संस्कार के बाद दो प्रयोग किए गए।

१- वेध संस्कार

२- शरीर योग

यद्यपि संस्कार १६ ही हैं तथापि इन दोनों प्रयोगों को भी संस्कार में जोड़ कर १८ माना जाने लगा।

परिष्कृत भाषा में इसे लोहवेध एवं देहवेध कहा जाने लगा।

२ लोहवाद- उन मुमुक्षु ऋषियों की यह धारणा थी कि यदि षोडश संस्कारित पारद निकृष्ट धातुओं को उत्कृष्ट धातु (स्वर्ण) में परिणत कर देता है तो निश्चित ही शीर्यते इति शरीरम् की परिभाषानुसार रोज क्षीयमाणजरा-व्याधि, एवं मृत्यु से ग्रस्त इस शरीर को भी अजर, अमर एवं दिव्य शरीर में परिणत कर देगा। अर्थात् देहवेध की कसौटी के रूप में लोहवेध का उपयोग अथवा परीक्षण किया जाने लगा। इसी क्रम से रस शास्त्र अपनी तीव्रगति से आगे बढता गया। इन विधियों से मुमुक्षुओं को सफलता भी मिलने लगी। स्वर्ण के निर्माण क्रम में पिघलायी हुई हल्की धातुओं (ताम्र, नाग, बङ्ग एवं यशदादि) पर लेस मात्र सिद्ध पारद बीज (षोडश संस्कारितपारद) का क्षेपण कर स्वर्ण बनाया जाने लगा। यही देहवाद की कसौटी के रूप में लोहवाद का अविर्भाव हुआ।

कुछ विद्वानों की मान्यता है कि भारत में रसशास्त्र का विकास धातुवाद के लिए हुआ था, किन्तु तत्कालीन मुमुक्षु ऋषियों के लिये यह कहना अपमान जनक है। क्यों कि वे मुमुक्षुऋषिगण स्वर्णादि भोगोपभोग की वस्तुओं की ओर आकृष्ट नहीं थे। इस तरह के नास्तिक विचार वालों को रसेश्वर दर्शन कार ने काफी फटकारा है।

१- तस्माज्जीवन्मुक्ति समीहमानेन योगिना प्रथमम्।
दिव्यातनुर्विधेया हरगौरीसृष्टि संयोगात्॥ (रसहृदयतन्त्र)

२ यथा लौहे तथा देहे कर्तव्यः सूतकः सदा।

समानं कुरुते देवि प्रत्ययं देहलौहयोः ।।
पूर्वं लोहे परीक्षेत ततः देहे प्रयोजयेत् ।।(रसार्णवम्)

३- न च रसशास्त्रं धातुवादार्थमेवेति मन्तव्यः, देहवेधद्वारामुक्तिरेव परमप्रयोजनत्वात् । (रसेश्वर दर्शन)

ईसा पूर्व बौद्धकाल में तथा ईसा के कुछ शताब्दी बाद तक पारद द्वारा देहवाद या लोहवाद की प्रक्रिया सुगमता से होती थी, किन्तु बाद में देहवाद की प्रक्रिया गुप्त अथवा लुप्त हो गई । इसे इतना गुप्त रखा गया कि शास्त्रों में यहाँ तक कह दिया गया कि-

गोप्यं गोप्यं महद् गोप्यं मातुर्गुह्यमिव ध्रुवम् ।

अथवा-

गोप्यं गोप्यं महद् गोप्यं स्वयोनिरिव पार्वती ।

परवर्ती रस ग्रन्थों में लोहवाद के लिए कहा गया कि इस राजवती विद्या को पुत्र को भी नही बताना चाहिए । यथा-

एषा राजवती विद्या पुत्रस्यापि न कथ्यते ।

गोपनीय रीति से लोहवाद की यह विद्या १८ वीं शती तक बहुलता से पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होती रही । अभी भी यदा कदा इस विद्या के विशेषज्ञों द्वारा लोहवाद का प्रदर्शन होता रहता है । १९४५ ई. में काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में महामना मालवीय जी श्रीयुगलकिशोर बिडला तथा श्री महादेव देसाई (महात्मा गाँधी के सचिव) और हजारों प्रत्यक्षदर्शियों के समक्ष काशी के रस वैद्य स्व. श्री कृष्णपाल शास्त्री ने (१८1/4) सवा अट्ठारह सेर विशुद्ध स्वर्ण बनाया था, जो ७२००० बहत्तर हजार में वेचा गया था । अभी भी कभी-कभी यह क्रिया देखी जाती है । किन्तु चोरी छिपे ।

३- चिकित्सावाद -

आज तो रसशास्त्र का तीसरा वाद (चिकित्सावाद) ही शेष है । किन्तु राज्याश्रय का अभाव एवं आधुनिक चिकित्साविदों का षड्यन्त्र तथा राजनीतिक नेताओं के समर्थन का अभाव में पूरा रसशास्त्र तथा आयुर्वेद डगमगा रहा है। अधुना इसे सुरक्षा एवं राज्याश्रय की प्रबल आवश्यकता है। आप सभी विद्वज्जनों को मालूम है कि आज से करीब ३ हजार वर्ष पूर्व से ही चरक, सुश्रुतादि महर्षिओं की संहिताओं में रसशास्त्रीय द्रव्यों पारद, वैक्रान्त, माक्षिकादि रसोपरसों, धातुओं, रत्नोपरत्नों तथा पारद का प्रयोग रोगशमनार्थ अनेक स्थानों पर किया गया है । जैसे कि चरक संहिता में विष नाशनार्थ, या विष का प्रभाव शरीर पर नहीं हो इसके लिए स्वर्ण चूर्ण (भस्म) १ शाण (०३ग्राम) की मात्रा में किया गया है । उनकी मान्यता है कि जिसके शरीर में स्वर्णभस्म विद्यमान है उस पर विष का प्रभाव नहीं होता है । रोगनिरोधक के रूप में इसका प्रयोग हुआ है ।

शुद्धे हृदिततः शाणं हेमचूर्णस्य दापयेत् । हेमसर्वविषाण्याशु गरांश्च विनियच्छति ।

न सज्जते हेमपाङ्गे विषं पद्म दलेऽम्बुवत् ।। (चरक चि. २३।२३९-४०)

महर्षि चरक ने वज्रादि सभी रत्नों का प्रयोग प्रायः रोगशमनार्थ किया है । उनका मानना है कि प्रायः रत्नों एवं धातुओं का धारण विषापह भी है ।

पुंसवन संस्कारार्थ स्वर्ण-रजत की पुरुषाकृति सूक्ष्म पत्रों को तपाकर ७ वार गोदुध और गोदधि में बुझाकर पीने से माताएं पुं पुत्र ही पैदा करती हैं यह विधि भी अपने आप में अनोखी है ।

रक्तपित्त शमनार्थ वैदूर्य, मुक्ता, मणियाँ, गैरिक, शंख, स्वर्णभस्म तथा आमला आदि का जल से सेवन पित्त शामक है । इस के अतिरिक्त चरक संहिता के मुक्ताद्यचूर्ण में प्रायः सभी धातुएं एवं रत्नों की भस्मों को मिलाकर हिक्का, श्वास एवं कास नाशनार्थ प्रयोग किया गया है । अयस्कृति द्वारा धातुओं की भस्में बनाने की पहली विधि का वर्णन यही संहिता कार ने किया है ।

इतना ही नही महर्षि चरक को इन धातुओं के दोषों का भी सम्यग्ज्ञान था, तभी तो मूर्ख वैद्य द्वारा चिकित्सा कराने के अपेक्षा उबलता ताम्रक्वाथ पीकर मरजाना श्रेयस्कर बताया है वरमाशीविषविषं क्वथितं ताम्र मेव वा ।

पीतमत्यग्निसंतप्ता भक्षिता वाप्ययोगुडा ।। च.सू. २ ।

ऐसे ही सफल प्रयोग शिलाजतु, मण्डूर, माक्षिक, तुत्थ, गैरिक, कासीस, स्फटिका, हरिताल, मनशिला और शंखादि जलज एवं प्राणिज द्रव्यों का बहुलता से देखे जाते हैं । इसके अतिरिक्त रस (पारद) का प्रयोग गन्धक या शु.सुवर्ण माक्षिक के साथ कुष्ठरोग शमनार्थ किया गया है ।

श्रेष्ठं गन्धकयोगात् सुवर्णमाक्षिकयोगाद्वा ।
सर्वव्याधि निबर्हणमद्यात्कुष्ठीरसं च निगृहीतम् ।। (च.चि.७।७१)

सुश्रुत संहिता-

सुश्रुत संहिता में भी चरक संहिता की तरह ही रसशास्त्रीय खनिज एवं जलज द्रव्यों तथा धातुओं एवं रत्नादि द्रव्यों का रोगशमनार्थ बहुलता से प्रयोग किया गया है । चरक संहिता से अधिक फेनाश्म (शंखिया) विष का प्रयोग इस संहिता में अधिक है । इसमें पारद का केवल बाह्य प्रयोग ही उपलब्ध है । (सु.चि. २५।३९ ।

अष्टाङ्गसंग्रह । हृदय-

इसमें भी चरक, सुश्रुतसंहिता की तरह ही खनिजादि द्रव्यों का प्रयोग किया गया है । इसमें स्पष्ट रूप से पारद का आभ्यन्तर एवं बाह्य प्रयोग अनेक स्थलों पर प्रयोग किया गया है । संग्रह एवं हृदय में तथाज्यौतिष के बृहत्संहिता में तथा रसहृदयतन्त्र एवं रसार्णवम् में एक प्रसिद्ध पारद योग शरीर वृद्धि एवं रोगप्रतिषेधात्मक बहुत उपयोगी है ।

शिलाजतु क्षौद्रविडङ्गसर्पिलोहाभयापारदताप्यभक्षः ।
आ पूर्यते दुर्बलदेहधातुस्त्रिपञ्चरात्रेण यथा शशाङ्कः ।। (संग्रह, उत्तर ५०।३)

अपि च-

माक्षीकधातुमधुपारदलोहचूर्णपथ्याशिलाजतु घृतानि समानि योऽद्यात् ।
सैकानि विंशतिरहानि जरान्वितोऽपि सोऽशीतिकोऽपिरमयत्यबलां युवेव ।।

(वृ. संहिता ७५।३)

इस प्रकार हम देखते हैं कि रसशास्त्र के दोनों वाद (देहवाद-लोहवाद) इधर कई शताब्दिओं से लुप्त हो गये हैं । यदा कदा लोहवाद का करिश्मा कभी कभी देखने को मिलता है, किन्तु जिन लोगों ने इस क्रिया को नही देखी है उन्हें इस विद्या पर विश्वास ही नहीं होता है । अब तो रसशास्त्र का तीसरा वाद (चिकित्सावाद) ही शेषबचा है , जिस पर आधुनिक चिकित्सकों की गृद्ध दृष्टि लगी है । वे हमेशा ही आयुर्वेद को अपमानित करने की चेष्टा कर रहे हैं ।

आज पारद, स्वर्ण, सीस, वङ्ग, ताम्रादि भारीधातुओं का प्रयोग करते देख आधुनिक चिकित्सक बहुत ही घबराते हैं । उनका मानना है कि ये भारी धातुएं बृक्को में जमा हो जाते है और इन्हें तोड़ते (नष्ट करतें) हैं तथा बृक्को में शोथ उत्पन्न कर उनके कार्य में बाधा उत्पन्न करतें हैं । इसके विपरीत हजारों वर्षों से रसशास्त्र की भस्में तथा पारदीय मूर्च्छना (मकरध्वज, रससिन्दूर, चन्द्रोदय, शिलासिन्दूर मल्लसिन्दूर तालसिन्दूर, रसकर्पूर, रस पर्पटी आदि सभी पर्पटियों, हिरण्यगर्भ पोटली आदि विशिष्ट औषधियाँ आयुर्वेदिक चिकित्सकों द्वारा प्रयोग में लाई जा रही हैं । कभी किसी प्रकार के विकार नहीं उत्पन्न हुए । रसाचार्यों ने तो स्वयं ग्रन्थों में शुद्ध एवं सम्यग् मारित भस्में तथा शास्त्रीय रीति से निर्मित औषधियों, पथ्यापथ्य के विचारोपरान्त कभी हानिप्रद नहीं होती हैं । यदि औषधियों का निर्माण सही रीति से नहीं हुआ है तो निश्चित ही हानिप्रद होंगी । जिस प्रकार आज से ४० वर्ष पूर्व आधुनिक चिकित्सा पद्धति में ऐण्टी वायटिक औषधियों का प्रवेश बड़ा ही आश्चर्योत्पादक था, उसी तरह प्राचीन काल में रसौषधियों का प्रभाव भी बड़ा ही उत्साहवर्धक एवं सद्यः फलप्रद था । आचार्य वाग्भष्ट ने कहा है कि-

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः । क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योंधिको रसः ।

(रस रत्नसमु. २८।२)

इन रसौषधियों के तीन लाभ कहे गये थे ।

१- अल्पमात्रा में प्रयोग होता है ।

२- अरुचिकर प्रभाव नहीं होता है ।

३- शीघ्र लाभ पहुँचाता है ।

इसीलिए रस वैद्य की प्राचीन काल में प्रशंसा की गई थी तथा रसवैद्य श्रेष्ठ माना जाता था । यथा-

उत्तमो रसवैद्यस्तु मध्यमो मूलिकादिभिः-
अधमः शस्त्रदाहाभ्यामित्थं वैद्यस्त्रिधा मताः ।। (रसेन्द्रसार सं.)

अतः रसवैद्य एवं रसौषधियाँ दोनों ही श्रेष्ठ हैं, जो रसशास्त्र का तीसरापाद है ।

पीयूष पाणि-पद्म भूषण-चिकित्सक-चूडा-मणि-श्रीमतां बृहस्पति-देव त्रिगुण-महोदयानाम्-स्वागताभिनन्दन-समारोहोपलक्ष्ये

भाव-कुसुमाञ्जलिः

मंगलाकांक्षी-वैद्य श्री रामदत्त शास्त्री
एम. ए. आयुर्वेदाचार्य, पूर्व उप प्राचार्य आयुर्वेद महाविद्यालय रतनगढ़
सीकर, (राजस्थान)
आरोग्यधाम महर्षि नगर (उ.प्र.)

आयुर्विदां विश्वसुलब्धकीर्तिरार्तार्तिभङ्गे त्रिगुणात्ममूर्तिः ।
विराजते भव्य-विशाल-भालःमाधुर्य-भावाकलितो रसालः ।।१।।

गुरुर्यथोक्तः खलु निजरिषु विभाति तद्वत् त्रिगुणोनरेषु ।
गीर्वाण-वाणी-गहनार्थ-गूढ़-साहित्यशास्त्रेषु प्रगाढ-मूलः ।।२।।

रुग्णार्तवन्धू रुजतापहारी,आयुष्यकामो नव प्रीतिकारी ।
सर्वानुरागी शशिकान्त-कान्तःविराजतेऽयम् त्रिगुणःप्रशान्तः ।।३।।

नाड़ी परीक्षासु निदानदक्षः रसायने चारु-सुयोग-पक्षः ।
भूमण्डले लब्धप्रतिष्ठमानः विराजतेऽयम् त्रिगुणाग्रमानः ।।४।।

जनैर्जनैः ख्यापित-सुस्वभावः मूर्धन्य-वैद्य-प्रथित-प्रभावः ।
अनेक शास्त्रार्थकरः सुलेखः संशोभतेयस्य-कला प्रलेखः ।।५।।

आनन्द-वेलास्ति समुल्लसन्ती, वैद्य-प्रभा-दीप्त-गुणाँल्लिखन्ती ।
घनान्धकारं परिहारयन्ती, देदीप्यमानां सरणिं सरन्ती ।।६।।

चन्द्रार्क-गङ्गाहिमवान्नगश्च, सुशोभिता भारतभूर्जगच्च ।
आयुष्यदैर्ध्यं त्रिगुणं गुणौघम्, धन्वन्तरिस्तेऽत्र ददात्वमोघम् ।।७।।

सर्वार्थसिद्ध्यै प्रथितोगणेशः आराधितस्ते त्रिगुणेश्वरश्च ।
भूयात् सदा मंगल-मोदकारी मनोऽभिवाञ्छा-शुभसिद्धिकारी ।।८।।

आयुर्वेदे युक्ति प्रामाण्यम्

(आचार्यः प्रियव्रत शर्मा वाराणसी)

सूत्र स्थानस्य तिस्रैषणीये ऽध्याये चरकः प्राह द्विविधमेव खलु सर्वं सच्चासच्च, तस्य चतुर्विधा परीक्षा :- आप्तापदेशः, प्रत्यक्षम् अनुमानं, युक्तिश्चेति । अत्र परीक्षेति पदेन प्रमाणं गृह्यते, यथाह च क्रपाणिदत्तः स्वकीयायुर्वेद दीपिका व्याख्यायाम् परीक्ष्यते व्यवस्थाप्यते वस्तु स्वरूपमनयेति परीक्षा प्रमाणानि । परीक्षेति पदं साधन परं प्रमाणेतिपदञ्च साध्यपरं, यतोहि परीक्षा द्वारैव प्रमाणैः प्रमोपलभ्यते । आयुर्वेदस्य परीक्षा शास्त्रत्वेन परीक्षेति परं चरक संहितायां बहुशः प्रयुक्तम् चरकस्यायमुदघोषः परीक्ष्यकारिणो हि कुशलाः भवन्ति इति सर्वोपरि विराजमानः परीक्षाया महत्वमभिव्यनक्ति । चिकित्सा कर्मणः प्राक् भिषजा परीक्षैव कर्तव्या पूर्वं रोगस्य तत्पश्चाद् औषधस्येति ज्ञानपूर्वमेव समाचारणीयम् यथा हि चरकवचनम् रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तर मौषधम्। ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ।

परीक्षा प्रवणतया आयुर्वेद युक्ति प्रमाणम् प्रत्यक्षादि समकक्षत्वेनाङ्गीकृतम् । गौतमादिदर्शनेषु युक्तिप्रमाणस्याभावान्नूतनमेवेदं चरकेणाविष्कृतमिति प्रतीयते । सामान्यतो युक्तिर्योजना, परादिगुण-वर्णन-प्रसङ्गे, चरकेण :- युक्तिश्च योजना यातु युज्यते इतियुक्तेर्लक्षणमभिहितम् । इदं विशदयता चक्रपाणि दत्तेनोक्तं युक्तिश्चेत्य दौ योजना दोषाद्यपेक्षया भेषजस्य समीचीन कल्पना ।

अतएवोक्तम् यातु युज्यते, या कल्पना यौगिकी भवति सातु युक्तिरुच्यते, अयौगिकी तु कल्पनापि सती युक्तिर्नोच्यते । पुत्रोऽप्यपुत्रवत् । युक्तिश्चेयं संयोग-परिमाण-संस्काराद्यन्तर्गताऽप्यत्युपयो गत्वात् पृथगुच्यते, इति । अत्र कीदृग् समीचीनत्वनिकष इति न प्रकाशिता व्याख्यात्रा । अस्मन्मते समीचीनत्वं सिद्धि जनकत्वं, या हि कल्पना कार्यसिद्धयै प्रभवति सा युक्तिः । इत्थं चरक-लक्षणे युज्यते इति पदस्य सिद्धयै प्रभवति इत्यर्थोऽवधेयः । तात्पर्यमिदमन्यत्र संहिता कर्त्ता प्राकटयेनामिहितम् यथा हि :-

मात्राकालश्रया युक्तिः सिद्धिर्युक्तौ प्रतिष्ठिता तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञो, द्रव्यज्ञानवतां सदा ।

(च.सू. २-१६)

यद्याहारद्रव्याणा मौषधद्रव्याणाञ्च सम्पक् प्रयोगो न भवेत्तदा द्रव्यज्ञानं निरर्थकमेव । अतएव भिषजा द्रव्यज्ञानवत्त्वे सति युक्तिज्ञेन भाव्यम्। सम्यक् प्रयोगो युक्तिरेव, इत्यधस्तनेन पद्येन प्रतीयते।

सम्यक् प्रयोगं सर्वेषां, सिद्धि राख्याति कर्मणाम् सिद्धि राख्याति सर्वैश्च, गुणैर्युक्तम् भिषक् तमम्। (च.सू. १-१३५)

तदेव युक्तं भैषज्यं, यदारोग्यायकल्पते । इति चरकोक्तिरद्यत्वे वहुश उद्रिधयते । अत्र युक्तमितिपदस्य युक्त्या सम्यक् प्रयुक्त मित्यर्थोऽवधेयः, नतु येनकेनापि प्रकारेण दत्तमिति ।

पुनः प्रमाण प्रसङ्गे तिस्रैषणीये दृष्टान्त मुखेन लक्षणमुखेन, च युक्तिः प्रस्फुटीकृता । यथोक्तं

चरकेण :- जलकर्षणवीजर्तु संयोगात् सस्य संभवः, युक्ति षड्धातु संयोगाद्, गर्भाणां संभव स्तथा। मथ्य-मन्थन-मन्थान-संयोगादग्नि संभवः युक्ति युक्ता चतुष्पाद-संपद् व्याधिनिवर्हणी।

अत्र चतुर्भिः दृष्टान्तैर्युक्ति स्वरूपं विवृतम्। एभिः सुस्पष्टम् भवतियद् बहूनां हेतूनामर्थ क्रियाकरः संयोग एव युक्तिः। अनया दीप्त्यानेकेषां हेतूनां मेलनं भवेद् येन कार्यफलं निस्पद्येत। जैविकी प्रक्रियातीव जटिला विद्यते। यत्रकार्य सिद्धौ वहवो भावाः समवेत्य प्रयतन्ते। रोगोत्पत्तौ बहूनि कारणानि मिलित्वा समर्थानि भवन्ति। तथैव चिकित्सा कर्मणि नैको भिषक् कुशलोऽपि समर्थो भवति परञ्च भिषक् द्रव्य-परिचारक-रोगीति पाद चतुष्टयस्य सम्पदैव व्यधि-निर्वहणं विधीयते। गर्भस्यापि संभवः षड्धातु संयोगादेव भवति। अत्र तात्पर्यमिदं विशदयितुं मया पद्यमेकं योजितं यथा :-

स्नेह-सूत्रादिसंयोगाद् युक्त्या दीपः प्रकाशकः युक्तिर्हि वहु हेतूनाम्, संयोगोऽर्थ क्रियाकरः।

वहु कारण योगं तज्जायमान कार्य-निष्पत्तिञ्चावलोक्य कार्यकारण भावञ्चावधार्य युक्तेः प्रामाण्यं लक्षयति चरकाचार्य :- यथा-बुद्धिः पश्यति या भावान् , वहु कारण योगजान् युक्तित्रिकाला साज्ञेया, त्रिवर्गः साध्यते यया।

अयं भाव :- वहु कारण संयोगाज्जायमानानि कार्याणि या पश्यति, ज्ञानविषयी करोति सा युक्तिरित्युच्यते। इयंत्रिकाला त्रिषुभूतादि कालेषु साक्षात्कृता, यतो ह्येतादृक् संयोगेनोत्पन्नं कार्यमतीते, उत्पद्यमानञ्च वर्तमाने भाविनि काले चोत्पद्यमानमुपलभ्पते। यदैव हि कारणानाभीदृक् संयोगस्तदैव कार्योत्पत्तिः इयं युक्ति स्त्रिवर्गस्य भौतिकस्य (धर्मार्थ काम रूपस्य) साधने सहाय्यीभूता सर्वत्रैव दृश्यते।

चक्रपाणिदत्तो युक्ति प्रमाणस्य पृथक्सत्तां नानुमोदते। तन्मतानुसारं युक्तिसद्रूपा प्रमाण सहायीभूता परमार्थतोऽ प्रमाणभूताऽयि लोकव्यवहारार्थमिह प्रमाणत्वेनोक्ता। यत्तु संयोगकारणात् कार्यज्ञानं तच्चानुमानमेव नार्थान्तरमिति।

वौद्धाचार्येण शान्तरक्षितेन स्वकीय तत्व सङ्ग्रह नाम्नि ग्रन्थे चरकोक्त युक्ति प्रमाणमुद्घृत्य खण्डितम्। पूर्वपक्षे निर्दिष्ट मिदम् यद् दृष्टान्ताभावाद युक्तेर्नानुमानत्वं सिद्ध्यति उत्तरपक्षेऽभिहितमिदं यत् साध्य साधनयोरिह नास्तिकश्चिद् भेदः, तदभाव-व्यवहारे च दृष्टान्तस्यास्तित्वं गम्यते, अतो युक्तिरनुमानादभिन्नेति, तच्छिष्येण कमलशीलेन स्वव्याख्यायामपि प्रपञ्चितम्। यथाहि :-

यस्मिन् सतिभवत्येव, न भवत्यसतीतिच तस्मादतो भवत्येतत् , युक्तिरेषा ऽभिधीयते। प्रमाणान्तरमेवेदमित्याह चरको मुनिः। नानुमानमिदं यस्माद् दृष्टान्तोऽत्र न विद्यते। कार्य कारण भावस्य, प्रतिपत्तिर्न सङ्गता। तस्मादस्यां न भेदोऽस्ति, साध्य साधनयोर्यतः। तद्भावव्यवहारेतु, योग्यतायाः प्रसाधने। संकेत काल विज्ञातो, विद्यतेऽर्थो निदर्शनम्। (तत्व संग्रहः का. १६६२-६५)

युक्तौनसाध्यसाधनयोर्भेदः। सदृष्टान्तत्वादनुमानादभेदोयुक्तेः। (कमलशील व्याख्या) अपरस्मिन् प्रसङ्गे चरकेणानुमानलक्षणमित्थं विहितम्। अनुमानं खलुतर्को युक्त्यपेक्षः। च.वि. ४-४

सयुक्तिकस्तर्कोऽनुमानमिति, चक्रपाणिदत्तोऽत्र युक्त्याऽविनाभावं गृह्णाति तर्केण चा प्रत्यक्षं ज्ञानमिति अविना भावजं परोक्षज्ञानमनुमानमिति लक्षणम् निस्पद्यते । अत्रैवयुक्ति र्व्याप्तिधार्मिकेति द्योतते । गौतमसूत्रानुसारमपि तर्क ऊहलक्षणः सन् नैव प्रमाणकोटिमधिरोहति यावद् व्याप्त्या परिपुष्टोन भवेत् । पूर्व प्रसङ्गे युक्तिमूहरूपा मत्र च व्याप्तिरूपांवदन् चक्रपाणिदतः स्वभ्रान्तिमेव प्रकटयति योगीन्द्रनाथसेन श्चरकोपस्कारे युक्तिं व्याप्ति-रूपां कथयति ताञ्चानुमानेऽन्तर्भावयति । जल्प कल्पतरु कारोऽपि गङ्गधरकविराजो युक्तिं तर्कञ्चानर्थान्तरं मन्यते । तर्कपिक्षस्तर्को ह्यनुमानमिति लक्षणञ्च प्रस्तौति । तत्तु नरोचते तर्कवदस्य पुनरावृत्याऽन्योन्याश्रयत्वात् ।

वस्तुतस्तु युक्तिः कार्य कारण भावेन संङ्गतिः । अनुमानेऽपि कार्य-कारण-भावो विद्यते परञ्च तत्तैकमेव कारणं कार्यं जनयति नानेकम् । चरक संहितायाः प्रस्तुत प्रकरणेऽनुमान प्रसङ्गे (तिस्रैषणीये) एकमेव कारणं कार्य-सम्बन्धं निर्दिष्टं मैथुनं गर्भदर्शनात् वीजात् फलं, इति । गौतमदर्शनेऽपि शरीरस्य पार्थिवत्व विवेचन प्रसङ्गे प्रपञ्चितमिदम् । युक्तिस्तु तद् भिन्ना बहु कारण योगजा । त्रिकालत्वंतु युक्तावनुमाने समानरूपेण विद्यते यथोक्तं चरकेण (त्रिकालञ्चानुमीयते युक्तिस्त्रिकाला सा ज्ञेया) परञ्चतयोर्भेद एतावानेव यदनुमानमेवकारणजकार्याश्रितं, युक्तिस्तु वहु कारण संयोगज कार्यावलम्विनी इत्थं वहु कारण सम्यग्योगज कार्यपिक्षिव्याप्ति पुरःसरं ज्ञानं युक्तिः । इति प्रमाण प्रकरणे युक्तेर्लक्षणं संघटते । अन्यत्रतु युक्तिः सङ्गतिः । सम्यग् योगोवा इत्येतावन्मात्रमर्थं व्यनक्ति । गीतायां युक्ताहार विहारस्य, युक्त चेष्टस्य कर्मसु युक्तस्वप्नाववोधस्य, योगोभवतिदुःखहा ।

इत्यादावयमेवार्थः प्रत्येयः । इतिदिक् ।

मानसदोषाणां पाचनविकृतिमूलकत्वम्

वैद्य रामप्रकाश स्वामी

पूर्व निदेशकः- राष्ट्रियायुर्वेद संस्थानस्य, जयपुरम्

वातपित्तकफानां दुष्टिपूर्वकं शारीरविकारोत्पत्तिर्जायते तथैव मानसदोषरजस्तमोभ्यां दुष्टि सम्पन्ने मनस्यपि शारीरविकाराः संजायन्ते जिज्ञास्यमेतत् किञ्चात्र वैशिष्टंय निदानचिकित्सादृष्ट्या भवतीति । पाचन विकृतिरपि किं मानसदोषदुष्ट्या भवति चेत्कथं तत्र दोषदूष्य सम्मूर्च्छनाजायते । कथञ्च रोगोत्पत्तिः इति विवेचनीयमस्ति ।

आयुर्वेदशास्त्रानुसारं शरीरेन्द्रियसत्वात्म संयोगात्मकस्य पुरुषस्य चिकित्साधिकृतत्वेन अनातुर्यमातुर्यञ्च शारीरमानसदृष्ट्या निरुपितमस्ति । स्वास्थ्य लक्षणे "प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः" इति पदेनेदं ज्ञायते शारीरिकदोष वैषम्यस्य निवृत्तावपि यदि मनः प्रसादो न भवेत्तदानतत्र सर्वथा आरोग्यसिद्धिः किन्तु केवलं आंशिकी स्वास्थ्य -प्राप्तिरेव । मनः प्रसादाय कर्म तत्रापेक्षते । एतेन प्रसन्नात्मेन्द्रियमनस्तमेव स्वास्थ्यलक्षणमव्यभिचारि व्यक्तञ्च । तत्परिकरतया वैद्यक सिद्धान्तोपयुक्तया समदोषादत्राभिधानमिति युक्तं पश्यामः । आत्मनो निर्विकारत्वे अपि मनसो रोगाधिष्ठानत्वमुक्तम् । अवधेयमिदं यत् मनसो रोगाधिष्ठानत्वेऽपि प्रकारद्वयं वर्तते । शारीरिक दोष वातादिदुष्टिपूर्वकं मानसदुष्टिः तथा प्रवृद्धाभ्यां मानसदोषरजस्तमोभ्यां मानसदुष्टिः । विकृतिज्ञानाय प्रकृतिज्ञानस्यावश्यकतेति सिद्धान्तानुसारं मानसप्रकृतिनिरूपणमपि यथायथं विहितं शास्त्रे । शुक्रशोणित संयोगसमकालमेव मनसोऽनुवृत्तिः । तथाच मनोगर्भशरीरसंयोगाव्यवहितपूर्वकं सत्वरजस्तमसां मध्ये यस्योद्रिक्तता भवति सैव महाप्रकृतिशब्देन अभिधीयते ।

प्रकृतिपरिज्ञानस्य सात्विकादिभेदनिर्देशपूर्वकं प्रत्येकं भेदानामपि उपभेदनिरूपणं विहितम् ।

रजस्तमसोः दोषवैषम्येणोद्भूत -विकाराणामपि वर्गद्वयं जायते इच्छाद्वेषभेदेन । तत्र हर्षशोक दैन्यलोभादिमनोविकाराः इच्छावर्गे, क्रोधभयविषादेर्ष्याऽसूयामात्सर्यादिविकाराः द्वेषवर्गे परिगणिताः ।

त ऐते मानसविकाराः मनोदोषैवैषम्येण मनोधिष्ठिताः एव मानसविकृतिशब्देनाभिधीयन्ते । तथा आचार्यचरकस्तावत् हेतुवादं प्रदर्शयन्नाह- मानसाः पुनरिष्टस्य लाभात् लाभाच्चानिष्टस्योपजायन्ते च.सू. ११-४५ । इष्टस्य लाभात् जायन्ते कामहर्षादयः, अनिष्टं प्रयवियोगादिलाभाच्च शोकादयः ।

यदि वा इष्टस्य अलाभात् लाभाच्चानिष्टस्येति पाठः । अत्र तु पाठे चकारात् इष्टलाभोऽपि हेतुर्बोद्धव्यः । शारीर मानस दोषाश्च परस्परं संसृष्टाः भवन्ति तथा च मानस दोष दुष्ट्या शारीरविकृतिः शारीरदोष दुष्ट्याच मानसविकृतिः भवति । आश्रयस्य दुष्ट्या आश्रयिणोऽपि दुष्टिस्तथाऽश्रयिणो दुष्ट्या आश्रयस्यापि दुष्टिरवश्यमेव जायते । शरीर-मनसोराश्रयाश्रयित्वं च

संसिद्धमेव । अतएव कामशोकभयाद्वायोः प्रकोपः क्रोधाच्च पित्तस्य प्रकोपः शास्त्रे निरूपितः अनिर्वाचानुभूयते । शोकजन्यातीसारादिशारीरिकविकाराः अपि निर्दिष्टाः सन्ति । एवमेव वातोन्मादापस्मारादयः शारीर दोष-दुष्ट्या मानसविकाराः मिश्रविकाराइति संज्ञा लभन्ते ।

अष्टांगहृदयकारः रजस्तमसोः त्रिदोषकोपकत्वं रसासृक्चेतनावाहिस्रोतोदुष्टि पूर्वकं मदमूर्च्छासन्यासानांकारणतां प्रतिपादयन्नाह

रजोमोहाहितपरस्य स्युस्त्रयो गदाः ।
रसासृक् चेतनावाहिस्रोतोरोध-समुद्भवाः ।
मदमूर्च्छायसन्यासा यथोत्तरबलोत्तराः ।

तथा च माधवः-

मूर्च्छा पित्ततमः प्राया, रजः पित्तानिलाद् भ्रमः ।
तमोवातकफात् तन्द्रा, निद्रा श्लेष्मतमोभवा ।।

इत्यनेन सन्दर्भेण रजस्तमसोः उद्रेकेण बुद्ध्युपघातपूर्वकं विषमाभिनिवेषेण त्रिदोषकोपनताजायते । रसासृक्चेतनावहस्रोतोदुष्टिश्च भवति । रजस्तमसोः साक्षात् परम्परया च शारीर रोगोत्पत्तिः वाग्भट्टेन माधवेनच निर्दिष्टा ।

आयुर्वेदशास्त्रे आमयशब्दस्य विकारस्यापरपर्यायत्वं वर्तते । प्रायेणामसमुत्थत्वेनामय इत्युच्यते इति चरकोक्त्या रोगोत्पत्तौ आमस्य किं वा तन्मूलकत्वेनामग्निमान्दस्यास्य कारणत्वमप्यनेनावबोद्धव्यम् । अतः भणतिरियम्-अर्धरोगहरी निद्रा सर्वरोगहरी क्षुधा इति निद्रा तावन्मनसोनिर्विषयत्वं सूचयति, अनुमापयतिच मनोदोषयोः रजस्तमसोः समभावापन्नत्वमिति ।

मानस भावानामामोत्पत्तौ कारणत्वं हेतुत्वञ्चाग्निमान्द्यस्य निर्दिष्टमाचार्यैः । ईर्ष्याभयक्रोधपरिप्लुतेन लुब्धेनरुग्दैन्यनिपीड़ितेन

प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यानमन्नंन सम्यक् परिपाकमेति ।। सु.सू. ४६-५०

तथा-कामक्रोधलोभमोहेर्ष्याह्रीशोक मानोद्वेगभयोतप्तमनसा वा यदन्नमुप युज्यते तदाममेव प्रदूषयति भवतिचातिमात्रयाऽभ्यवहृतं पथ्यंचान्नं न जीर्यति ।

चिन्ताशोकभयक्रोधः दुःखशय्याप्रजागरैः । च. वि. २।८।९

आममेव प्रदूषयतीत्यत्र कर्मकर्तृत्वे अच् । तेन दुष्टं भवतीत्यर्थः ।

किंवा आमपक्वं सद् दुष्टदोषसम्पर्कात् शरीरं दूषयतीति ज्ञेयम् ।

आत्मानमभिसमीक्ष्य भुन्जीत सम्यक्, इदं ममोपशेतेइदंनोपशेते इत्येवं विदितं ह्यस्यात्मनः आत्मसात्म्यं भवति तस्मादात्मानमभिसमीक्ष्यभुन्जीत । आत्मनः इति पदेन आत्मनैवात्मसात्म्यं प्रतिपुरुषं ज्ञायतेनशास्त्रोपदेशेन इति दर्शयति । अन्नेच तन्मना भुञ्जीत च. वि. १।४४ इत्यनेन शरीरधारक पोषकाहारस्य सात्म्यीकरार्थं बलवर्णसुखायुषां च प्राप्त्यर्थं तन्मयत्वं प्रतिपादितम् । अतः

भोजन विधौइष्टेदेशे इष्ट सर्वोपकरणेइत्यादिना रम्यप्रकाराणामपि मनः प्रियत्वेन निर्देशः कृतः ।

अपच्यमानं शुक्तत्वं यात्यन्नं विषरूपतामित्यनेनोप युक्तस्याहारस्यापि मन्दाग्नित्वेन विषरूपेण परिणमनं तदनुसारं रोगोत्पत्तिश्चेति शास्त्रे निर्दिष्टम् ।

ज्ञानबुद्धि-प्रदीपेन योनाविशति तत्ववित् ।
आतुरस्यान्तरात्मनं न स रोगाँश्चिकित्सति ।।

इत्यनेन आतुरस्यान्तरात्मनः ज्ञानस्य चिकित्सार्थमनिवार्यता प्रतिपादिता । अन्तरात्मनः ज्ञानं च मानवव्यवहारेणैव प्रतीतिः आतुरस्यानुभूत्याच जायते । प्रवृद्धवातादिदोषलक्षणेषु मानसविकृतिलक्षणानि किं च मानस विकारैः वातादिप्रकोपः ।

कामशोकभयाद्वायुः क्रोधात्पित्तम् ।
त्रयोमला भूताभिषगांत् इति उक्तपूर्वमेव ।

क्रोधस्य भयस्य च प्रभावः सर्वांगे जायते इत्यहर्निशमनुभूयते । पाचनाङ्गेष्वपि क्रोधभययोः प्रभावः निरीक्षितः, नैक विधपरीक्षणैश्चनिश्चितं यदेष प्रभावः नाड़ी संस्थानमाध्यमेन अन्त ग्रन्थिसंस्थान-माध्यमेन च शरीरे यत्र तत्र अनुभूयते ।

कर्मानुसारस्थित्याच नाड़ी संस्थानस्य विभागद्वयं वर्तते । स्वतंत्र नाड़ी संस्थानं, इच्छाधीनं नाड़ी संस्थानमिततियोः संज्ञा ।

पाचनश्वसनरक्तानुधावनादिसंस्थानावयवेषु नास्ति इच्छाधीनं कर्म अतस्तेषां संचालनस्वतन्त्र नाड़ी संस्थानमाध्यमेन जायते, इदं नव्यानां मतम् । भारतीय दर्शनेषु आयुर्वेदशास्त्रे तु आत्मसंयोगे सत्येव जायन्ते तथा च सर्वस्यापि कर्मणः स्वतंत्रता इच्छाधीनता वा स्यात् ।

स्वतंत्रनाड़ी संस्थानमपि द्वेधा विभज्यते कर्मणा नाड़ी सूत्रैश्च मध्यमस्वतंत्र नाड़ी संस्थानम्, नाड़ी संस्थानमपि द्वेधा विभज्यते कर्मणा नाड़ी सूत्रैश्च मध्यमस्वतंत्र नाड़ी संस्थानम्, परिस्वतंत्रनाड़ी संस्थानन्चेति । स्वतंत्रनाड़ी संस्थान संचालितेष्वगेंषु उभयविध नाड़ी सूत्राणामुपस्थितिर्विद्यते । स्वकीयोद्दीपक परिस्थित्यनुसारिच उद्दीप्ताग्नि-सूत्राणि तत्तदंगे उद्दीपकानुसारं क्रियोत्पादने समर्थानि जायन्ते । पाचनसंस्थानोपरि कीदृशः प्रभावः इत्येव तावद् विवेचनीयम् । मध्यम स्वतंत्रनाड़ी संस्थाने उद्दीप्ते सति मुखामाशयान्त्रप्रदेशेषु क्षरितपाचकपित्तस्य स्रावे मन्दता रोधोवा जायते । एवमेव एतेषामगांनां विभिन्नापकर्षणादिचेष्टानां अवरोधो लोपो वाजायते । भय क्रोधावेशोपस्थितौ भयमूलकपलायने क्रोध मूलक पराक्रमे च स्थितिरेषा जायते । अतिशय शारीरिकश्रमस्यापि अयमेव प्रभावः ।

परिस्वतंत्रनाड़ी संस्थानस्य क्रिया विपरीतावर्तते । संस्थानभेदं भावावेशनिर्मुक्तस्थितावेव स्वकर्म करोति । तेन पाचकपित्तक्षरणं महास्रोतस पाचनशोषणाद्युपयुक्तचेष्टानां स्थितिर्भवति । शरीरे अंगराम्लस्याभिवृद्धौ अपि स एव प्रभावः यः खलु मध्य स्वतंत्रनाड़ीसंस्थानस्योद्दीपनावस्थायां जायते । मध्यस्वतंत्र नाड़ी संस्थानस्योद्दीपक कारणानि एव अधिवृक्कमध्यस्रावस्य (एड्रीनलीनस्य)

उद्दीपनायकार्मुकाणि भवन्ति । अधिवृक्कस्य स्राववृद्धिप्रभावोऽपि पचन प्रक्रियायां तादृश एव यः खलु मध्यस्वतंत्रनाड़ीसंस्थानस्य भवति । प्राचीनोक्त- शौर्यभयादिकार्यकारणभूतसाधकपित्तेन सह साम्यमनुभूयते ।

एड्रीनलीनस्य मध्यस्वतंत्रनाड़ी संस्थानस्य च यादृशी क्रिया शरीरे भवति, आधुनिकाभिमते शौर्यभयपलायनादि प्रतिक्रियाणां निर्देशः फाइट, फ्राइट, फ्लाइट शब्दैः क्रियते । यद्यपि साधकपित्तस्य स्थानं हृदयं कीर्तितम् किन्तु हृदयं आदि स्थानं बोद्धव्यम् यतोहि हृदयादेव सर्वशरीरे प्रसृतिरित्यभिप्रायेण स्थानम् हृदयमुक्तम् । चिन्तादैन्यशोकादि भावानां सम्पूर्णनाड़ी संस्थानस्यावसन्नताऽद्यांकार्मुकता भवति ।

पचनसंस्थानस्यापि नाड़ी संस्थानस्यांशभूतत्वेन तन्त्रिनियामकनाड़ी सूत्राण्यपि चिन्तादि भावैः अवसन्नतां यन्ति परिणामतश्च पाचनप्रक्रिया बाधोपेता जायते ।

पैवाल महोदयैः अनेकशः परीक्षणानन्तरं प्रतिपादितं यत् मार्जारं दृष्ट्वा कुक्कुरस्य आमाशयिकरसस्य आस्रावे न्यूनता संजायते । अन्य परीक्षणपरिणामा अपि उक्ततथ्यस्यैवोपवर्णनं कुर्वन्ति । विमानचालकं सम्मोहितं विधाय तत्पुरतः विमानयात्राविधानां चर्चा प्रसंगेन विमानचालकस्य आमाशय स्रावस्य तत्क्षणमेव क्षीणताऽवलोकिता । मानसिक व्यापाराणां प्रभावः आमाशयिक चेष्टास्वपि जायते । भावावेशवशात् पाचकपित्तक्षरणे मन्दता जायते इति एषा स्थितिः वक्तृषु विशेषण दृश्यते-भाषमाणेषु तेषु भावावेशवशात् लालास्रावस्य मन्दता जायते मुख शोषश्च भवति पौनः पुन्येन जलपानस्य आकांक्षा भवति । क्रोधाविष्ट मातुः स्तन्यपानेन शिशोः मृत्युरपि संजाता । क्रोधावेशेन मातुः स्तन्यस्य विषमयत्वेन एतादृशी स्थितिः भवति । भावावेशेन महास्रोतसः गतिमन्दता लोपो वाजायते ।

शौचलयस्यास्वच्छताऽपि मलोत्सर्ग वेगविघाताय संपद्यते

एतावता शौचालयस्यस्वच्छताऽपि विबन्धनिवारणाय कारणत्वेनोपवर्णिता । भावावेशस्थितौ भुक्तं न स्वदते, चर्वणमपि समीचीनं न भवति परिणामतः पाचनप्रक्रिया दुष्टा भवति । भावावेशेन ओजसः क्षयोऽपि जायते । उक्तं हि ओजः क्षीयेत कोपक्षुत्ध्यानशोक श्रमादिभिः एतस्मादेव कारणात् आयासः सर्वापथ्यानां प्रधानतमोनिर्दिष्टः आचार्यैः विषादस्य च रोगवर्धनकत्वमहर्निशं श्रूयते अनुभूयते च ।

योगवासिष्ठेऽपि-

चित्ते विधुरिते देहः संक्षोभमनुयात्यलम् ।
संक्षोभात् साम्यमुत्सृज्य वहन्ति प्राणवायवः ॥
असमं वहति प्राणे नाड्यो याति विसंस्थितिम् ।
काचिच्चनाड्यः प्रपूर्णत्वं यान्ति काश्चिच्च रिक्तताम् ।
कुजीर्णत्वमजीर्णत्वमतिजीर्णत्वमेव वा ।

दोषायैवं प्रयात्यन्नं प्राणसंचारदुष्क्रमात् ।
तथान्नानि नयत्यन्तः प्राणवातः स्वमाश्रयम् ।
यात्यन्नानि निरोधेन तिष्ठत्यन्तः शरीरके ।।
तान्येव व्याधितां यान्ति परिणामस्वभावतः ।
एवमाद्योर्भवेत् व्याधिस्तस्याभावाच्च नश्यति ।।

चित्तसंक्षोभेन शरीरे वैषम्यं जायते। शरीरे संक्षुब्धे च प्राणप्रसरणवैषम्य मुत्पद्यते। प्राणगति वैषम्यात् नाड़ी स्थितौ सम्बन्धे च क्षतिर्जायते। काश्चन नाड्यः परिपूर्णा काश्चन रिक्तावा भवन्ति । प्राणगतिवैषम्येण अन्नं न सम्यक् परिपाकमेति । पक्वमपक्वंचान्नं तत्र स्थितं शुक्तीभावं याति नानाविकाराश्च उत्पादयति । इत्येवं मानसविकाराणां शारीरिकरोगोत्पत्ति मूलकत्वं निर्दिष्टम् कारणनाश कार्यनाश इति सिद्धान्तानुसारं मानसिक वैषम्य निरासेन शारीरिकव्याधिनिवृत्तिः स्वयमेव संजायते।

मन्त्रचिकित्सायाः फलवत्तात्राऽपि निर्दिष्टा
यथाविरेकं कुर्वन्ति हरीतक्यः स्वभावतः ।
भावनावशतः कार्यं तथा यरलवादयः ।

विरेचनस्वभावात् तानि तानि द्रव्याणि यथा विरेचयन्तितथैव दृढ़विश्वासोत्पादनेन यरलवादयः तादृशं कार्यं कुर्वन्ति प्रभावानि च।

विषदातुः लक्षणानिशास्त्रे निरूपितान्यपि इदमुपोद्वेलयन्ति ।
यत् मानसभावानुसारं शारीरिकक्रियासु विपर्ययो जायते ।

यथा -

विषदस्तु स्वदोषशंकया त्रस्तो भीतः स्वेदवेपथुमान् शुष्कश्यावववक्त्रः समन्तात् सोद्वेगं विलक्षोऽभिवीक्षते । यत्र चान्नेन विषं प्रयुक्तं तद् विशेषेण तथा स्रस्तोत्तरीयः स्तम्भकुड्यादिभिरात्मानमन्तर्धत्ते स्खलित-गतिः दीनोलज्जावान् अस्थानगामी पृष्टोऽसम्बद्धमुत्तरं ददाति नैव वा विवक्षुर्मुह्यति, अंगुलीः स्फोटयति, ग्रीवामालभते शिरः, कण्डूयत्यौष्ठौ परिलेढि जृम्भते, भुवं लिखति, क्रियासुत्वरते, विपरीतमाचरति इति। त्रिकाल सन्ध्योपासनादिकस्यापीदमेव तात्पर्य यत् आयसप्रशमनं भवेत् नैरुज्यं च। अतएव ऋषयः त्रिकालसन्ध्यत्वात् दीर्घमायुरवाप्नुयुः इति निर्दिष्टम्। प्रार्थनादिभिः नैक विधशारीररोगाणां सद्यः प्रशमनं दृष्टम् तत्र हि प्रार्थनादिभिः विरोधि दैवोत्पादनं क्रियते । दैवव्यपाश्रयचिकित्सयाऽपि मनोविश्लेषणमेव विधाय मानसिकभावानां रेचनं क्रियते। हिस्टीरिया प्रकारेषु रूपान्तरित हिस्टीरियावस्थाऽपि मनोभावावेश जन्यैव। अपदार्थगदस्य लक्षणान्यपीदृशान्येव अयं भेदः अपदार्थ गदे शारीरिकविकृतित्वं जायते भ्रम एव केवलं विशेषविषये वर्तते रूपान्तरितोन्मादे तुशारीरादिविकृतिरपि जायते किन्तु तत्र न दोषदुष्यसम्मूर्छनाविघटनात्मिका चिकित्सा सफला भवति। मानसिक विश्लेषणपूर्वकं मानसिक

भाव विरेचनेनैव शान्तिर्भवति । मानसशास्त्रदृष्ट्या

क्रोधसंवेगस्य विनाशकर्तृत्वे सर्वातिशायितावर्तते । क्रोध प्रकाशनेनान्यस्य हानिर्जायते । क्रोधसंवेगस्य दमनन्तु स्वविनाशाय अलम् । पौनः पुन्येन क्रोधस्य प्रकाशनेन पुरुषः क्षीणकायः नैकविधरोगाक्रान्तश्च जायते इत्यपि प्रत्यक्षसिद्धम् । वासनायाः प्राबल्ये तृप्तौच तस्याः बाधोपेतावस्थायां क्रोधोत्पत्तिर्भवति । अतः क्रोधएव नैकविध शारीरिकविकृति रूपेण प्राकाश्यं याति । यथा आत्मघातभावना क्षयः । हृदयफुफुसविकृतयः, शिरोरोगः, अन्धता उदरशूलम् । कैन्सर प्रभृतयः क्रोधस्य दमनेन रूपान्तरिताः उद्भूयन्ते । ईर्ष्याद्वेष भावाभ्यां शरीरे विषोत्पतिः भवति तेन शरीरं मनश्च विकृतिं याति । अत एव आचार्यैः निर्दिष्टम् ।

मात्रयाऽभ्यवहृतं पथ्यं चान्नं नजीर्यति ।
चिन्ताशोकभयक्रोध दुःखशय्या प्रजागरैः । च.वि. २।८

किंच-कामक्रोधलोभमोहेर्ष्याह्रीशोक मानोद्वेगभयोत्तप्तमनसा वा यदन्नपानमुपयुज्यते तदप्यामभेव प्रदूषयतीति । इत्यनेन सन्दर्भेणापि इदमेव उद्घोष्यते यत् मानसदुष्ट्या पाचनसंस्थानस्य विकृतिर्जायते ।

आयुर्वेद गौरव त्रिगुणा जी

विदुषां विधेयः- वैद्य नरहरिशास्त्री भिषगाचार्य स्वर्णपदक प्राप्त (राजस्थान)
निवास स्थानः-
मु.पो. मानपुरा मांचैड़ी, वाया-मोरीजा-३०३ ८०५
जिला. जयपुर (राजस्थान)

आयुर्वेद-प्रकाण्ड-पण्डित-वरं मार्तण्डकल्पोज्ज्वलम् ।
आर्तार्त्याहरणे प्रसिद्धभिषजं पीयूष पाणिं परम् ॥
आचार्यं त्रिगुणा बृहस्पतिसमाख्यातं हि देवोपमम् ।
श्रीमन्तं प्रणमामि मान्यमगदङ्काराग्रगण्यं गुरुम् ॥१॥

साक्षाद् यश्चरकश्चिकित्सत-विधौख्यातिं परांलम्भितः ।
रोगाणामुपचारकार्यसरणौ लोकैः श्रुतः सुश्रुतः ॥
शास्त्रार्थेषु बृहस्पतिश्च निपुणोवाग्मीस्वयम् वाग्भटः ।
विद्वद्-वैद्य-समाज-राजमुकुटो मानैर्महीयेत सः ॥२॥

विद्वान् स्यादथ वैद्यके न स भवेत् तादृक् चिकित्सापटुः ।
विद्यायामथ भेषजेषु कुशलो नाध्यापने,स्यात् कृती ॥
वैद्योऽध्यापक पण्डितोऽपि स पुनः पीयूष-पाणिर्भवेत् ।
त्रैगुण्यं तु बृहस्पतौ त्वयि सदा देवे जरीजृम्भते ॥३॥

विश्वस्मिन् जगती तले हि सुतरामारोग्यसंस्थापके ।
स्वान्तः शान्ति भरे महर्षि नगरे स्वास्थ्योपदेशान् दिशन् ।
आयुः-शास्त्र-विमर्श-हर्षित-सुहृच्चेताः सुचेताश्च यः ।
धन्यो वैद्य बृहस्पति स्त्रिगुणवान्देवश्चिरं प्रीयताम् ॥४॥

त्रिगुणेश्वरस्य भक्ताय वैद्यवर्याय वै,नमः

वैद्य श्री रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी १७-१२-१९९१ भौमवासरे।
त्रिवेदी नगर हाथरस (उ.प्र.)

त्रिदोषदोषं रुजसङ्गतानाम्, योऽपाकरोतीति बिनैवशङ्काम्
प्रबुद्ध वैद्यत्रिगुणेश्वराय विद्याविनोदाय नमामि तुभ्यम् ।।१।।

यस्यास्ति पाञ्चालभुवौ हि जन्म, नवेन्द्रप्रस्थश्च हि कर्म भूमिः ।।
कौशेयभूषां समलङ्करोति, उष्णिक्प्रभा यस्य प्रभां तनोति ।।२।।

गणेशवत् राजति यस्य देहः वैनायिकी यस्य सदास्ति बुद्धिः ।।
देवेन्द्रराजो ऽस्य प्रबुद्धसूनुः, आर्तार्तिहारी भुविकीर्तिकारी ।।३।।

स्वयंवरा यस्य यशोऽभिलेखा, विश्वेऽखिले यः प्रथितः प्रभावः ।।
येषां परामर्शकला-विदाम्वरः, दिल्लीश्वरः, राष्ट्रपति र्विराजते ।।४।।

यस्य प्रतीक्षा भारता हि पङ्क्तयः, रुजातुराणां सुखमादधंति ।।
तं विश्ववन्द्यं भिषगग्रण्यम्, वृहस्पतिं वैद्यवरं स्तुवन्ति ।।५।।

तपोमूर्ति त्रिगुणा जी

वैद्य श्री ब्रजविहारी मिश्र
अध्यक्ष
प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन उत्तर प्रदेश
२८०, रामनगर कालोनी लखनऊ -४

नाड़ी छूते ही रोगी का जो निदान करते हैं ।
उसकी व्यथा कथा का सुन्दर समाधान करते हैं ।।

निज योगों से कष्ट साध्य रोगों को जब हरते हैं ।
जन-जन के मन में वैद्यक के प्रति श्रद्धा भरते हैं ।।

देव बृहस्पति त्रिगुणा हैं वह धन्वन्तरि अवतारी ।
गूंज रही है जग में जिनके यश की महिमा भारी ।।

बड़े-बड़े लोगों से जिनका प्रेम भरा परिचय है ।
देश विदेश प्रतिष्ठा जिनकी यश आदर अतिशय है ।।

आयुर्वेद के अन्वेषण में जिनका रमा हृदय है ।
वैद्यक से त्रिगुणा, त्रिगुणा से भारत गरिमामय है ।।

जिनके गुण गौरव सुगंध से महके दुनिया सारी ।
त्रिगुणा जी वह तपोमूर्ति हैं धन्वन्तरि अवतारी ।।

वैद्यावतंस मेरा प्रणाम

आचार्य वैद्य श्री ताराचन्द्र शर्मा
एम. डी. आयुर्वेदाचार्य
वरिष्ठ अनु०अधिकारी, मूलचन्द्र खैरातीराम हास्पिटल एवं
आयुर्वेद अनुसंधान, लाजपत नगर, नई दिल्ली

स्वनाम धन्य हे शुद्ध चित्त,
वैद्योचित प्राकृत गुण ललाम ।
त्रिगुणेश्वर के हे भव्य भक्त ।
वैद्यावतंस मेरा प्रणाम ।।

हे तपः पूत गरिमा अकूत,
यश का प्रसार हो दिक् दिगन्त ।
आयुर्वेदोन्नति के पथ में,
पतझड़ से लायें नव वसन्त ।।

कर रहे अनवरत विश्व भ्रमण,
आतुर मानव हित निर्विराम ।
दृढ वैद्य संगठन चिन्तनार्थ,
बढ रहे निरन्तर अष्टयाम ।।

सम्मान्य वैद्य भूषण भूषित ।
वैद्यों में गौरव पाया है ।
भारत की आदि चिकित्सा के,
ध्वजे को जग में लहराया है ।

वैद्य शिरोमणि पं. बृहस्पतिदेव त्रिगुणा महोदयानां अभिवन्दनम्

वैद्यरत्न प्रद्युम्नाचार्यः निलंगेकर

बृहस्पतिर्देव गुरुः प्रसिद्धः सौवर्णवर्णोनिज-कर्मदक्षः ।
बृहस्पतिर्वैद्यगुरुस्तथायं सद्वैद्य वर्गाग्रजकर्मदक्षः ।।

तीर्थात्ततीर्थः करुणार्द्रचेताः पीयूषपाणिर्गदिनांशरण्यः ।
दिगन्त विख्यात यशः सुषेणो राराजतात् शास्त्रविदांवरेण्यः ।।

त्रिगुणेशदयालेशात् त्रिगुणेति बृहस्पतिः ।
शंकुर्वन् तापतप्तनां चिरं जीव्यात् भिषक् पतिः ।।

चरकचर्चित विविध वैद्य चरित्र चित्रणम्[१]

डॉ० श्री विशाल त्रिपाठी
बी.ए.एम.एस. (लब्धस्वर्णपदकः) साहित्याचार्यः
एवं एम. डी. (आयु.) पी. एच. डी. (आयु.) काय चि.) डिप्लोमा योग व जर्मन भाषा
वरिष्ठ चिकित्सकः क्लिनिकल अनु०अधिकारी
श्री मू०च०खै०रा०हा० एवं आयुर्वेदिक रिसर्च इंस्टीट्यूट
लाजपत नगर-नई दिल्ली-११००२४

अयि ! आयुर्वेद-मन्थन-लिप्तज्ञान-विज्ञान-संयुताः, पुरुषार्थचतुष्टयप्राप्तये मानवगणविघ्नभूतातंकोच्छेद-समर्थाः,-स्वगुणसम्पत्-सरंक्षणतत्पराः सर्वभूतानुग्रहार्थायुर्वेदाध्ययन मानसाः, सकल-चिकित्सा-पद्धति जनकायुर्वेदज्ञान प्रदान संलग्न शरीरवन्तः वैद्यवरेण्याः, किं श्रीमद्भिरेतदपिज्ञायते, यत् चरकेण कतिविधानां वैद्यानां वर्णनं- वर्णितं स्वसंरचितसंहितयां, न वा ? यदिचेत् ज्ञायते तदा न खलु मद्संकलित-श्लोक-संपठनेऽरुचिःप्रकटनीया, यतो हि नैवं विधं-क्रमेण संकलित संस्मरणं मनसि सम्प्रति निहितं भवेत् पठनाच्च- स्मृतिवोधक एव स्यादिति विचार्य समुपयोगित्वंस्यादेव, यदि चेत् न ज्ञातं विविधवैद्य-वर्णनं तदा तु संकलनमिदं पठनीयमेव। न खलु प्रागपि केवलाः स्वनामधन्यचिकित्सकाः आसन् अपितु मानवगणप्राणघातका अपि, अथ च मन्दबुद्धिमन्तः, रोगाभिसंराः, छद्मवेशात् मानवानां जीवन-हंतार अपि आसन्। केचन् केवल शास्त्रज्ञाः केचन् योगज्ञाः, केचन् तु शास्त्रकर्मज्ञा अपि आसन् अतो वैद्यजन-प्रबोधाय चरक-संहितायां वर्णित-विविधवैद्यानां चरित्रं मया, सकल-संहिताध्ययनं विधाय निम्नवर्णित श्लोकेषु संकलनमकारि। यथा हि :-

वन्दनीय वैद्याः

ये तु शास्त्रविदो दक्षाः शुचयः कर्मकोविदाः ।
जितहस्ता जितात्मानस्तेभ्यो नित्यं कृतं नुमः ।।१।।
(च०सू०२१)

अपिच :-

ये रसायनसंयोगा वृष्ययोगाश्च ये मताः ।
यच्चौषधं विकाराणां सर्वं तद्वैद्य संश्रितम् ।।२।।
प्राणाचार्यं बुधस्तस्मात् धीमन्तं वेदपारगम् ।
अश्विनाविव देवेन्द्रः पूजयेदतिशक्तितः ।।३।।
(च०चि०१-४ ३९-४०)

अपिच :-

शीलवान् मतिमान् युक्तो द्विजातिःशास्त्रपारगः ।
प्राणिभिर्गुरुवत् पूज्यः प्राणाचार्यः सहि मतः ।।४।।
(च०चि०१-४ ।५१)

कीदृशाजनाः चिकित्सकाः स्युः ?

शस्त्रं शास्त्राणि सलिलं गुणदोषप्रवृत्तये ।
पात्रापेक्षीण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थं विशोधयेत् ।।५।।

(च.सु.९ ।२०)

शास्त्रं ज्योतिः प्रकाशार्थं दर्शनं बुद्धिरात्मनः ।
ताभ्यां भिषक् सुयुक्ताभ्यां चिकित्सन्नापराध्यति ।।६।।

(च०सू०९।२४)

अपिच :-

अधीयानोऽपि शास्त्राणि तन्त्रयुक्त्या विनाभिषक् ।
नाधिगच्छतिशास्त्रार्थानर्थान्भाग्यक्षये यथा ।।७।।

दुर्गृहीतं क्षिणोत्येव शास्त्रं, शस्त्रमिवाबुधम् ।
सुगृहीतं, तदेव ज्ञं शस्त्रं शास्त्रं च रक्षति ।।८।।

(च०सि०१२)

चिकित्सकस्य स्वगुणाः-

विद्या वितर्को विज्ञानं स्मृतिस्तत्परता क्रिया ।
यस्यैते षड्गुणास्तस्य न साध्यमतिवर्तते ।।९।।

अपिच :-

विद्यामतिः कर्मदृष्टिरभ्यासः सिद्धिराश्रयः ।
वैद्यशब्दाभिनिरुपत्तावलमैकैकमप्यतः ।।१०।।

यस्य त्वेते गुणाः सर्वे सन्ति विद्यादयः शुभाः ।
स वैद्यशब्दं सद्भूतमर्हन् प्राणिसुखप्रदः ।।११।।

(च०सू०९।२१-२३)

कः श्रेष्ठचिकित्सकः ?

तदेवयुक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते ।
सचैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यःप्रमोचयेत् ।।१२।।

सम्यक् प्रयोगं सर्वेषां सिद्धिराख्याति कर्मणाम् ।
सिद्धिराख्याति सर्वैश्च गुणैर्युक्तं भिषक्तमम् ।।१३।।

(च०सू०१। ३५-३६)

कथं चिकित्सकः प्राणदो भवति ?

भिषग्बुभूषुर्मतिमानतः स्वगुण सम्पदि ।
परं प्रयत्नमातिष्ठेत् प्राणदः स्याद्यथा नृणाम् ।।१४।।

(च०सू०१।३४)

अपिच :-

तस्माच्छास्त्रेऽर्थविज्ञाने प्रवृत्तौ कर्मदर्शने ।
भिषग्चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसर उच्यते ।।१५।

कः राजवैद्य ?

हेतौ लिंगप्रशमने रोगाणामपुनर्भवे ।
ज्ञानं चतुर्विधं यस्य स राजार्हो भिषक्तमः ।।१६।।

(च०सू०९ । १८-१९)

अपिच :-

सर्वरोगविशेषज्ञः सर्वकार्यविशेषवित् ।
सर्वभेषजतत्वज्ञो राज्ञः प्राणपतिर्भवेत् ।।१७।।

(च०वि०७-१९)

चतुष्पादेषु चिकित्सकस्य श्रेष्ठत्वम् ।
चिकित्सिते त्रयोः पादाः यस्मात् वैद्य व्यपाश्रयाः ।
तस्मात् प्रयत्नमातिष्ठेत् भिषग् स्वगुण सम्पदि ।।१८।।

(च०सू०९।२५)

अपिच :-

कारणं षोडशगुणं सिद्धौ पादचतुष्टयम् ।
विज्ञाता शासिता, योक्ता, प्रधानं भिषगत्रतु ।।१९।।
पक्तौ हि कारणं पक्तुर्यथा पात्रेन्धनानलाः ।
विजेतुर्विजये भूमिश्चमूः प्रहरणानि च ।।२०।।
आतुराद्यास्तथा सिद्धौ पादाः कारणसंज्ञिताः ।
वैद्यस्यातश्चिकित्सायां प्रधानं कारणं भिषग् ।।२१।।
मृद्दण्डचक्रसूत्राद्याः कुम्भकाराद्दते यथा ।
नावहन्ति गुणं वैद्यादृते पादत्रयं तथा ।।२२।।

(च०सू०९ । १०-१३)

वैद्यस्य द्विजातिः कथम् ?

विद्यासमाप्तौ भिषजो द्वितीया जाति रुच्यते ।
अश्नुते वैद्यशब्दं हि, न वैद्यः पूर्वजन्मना ।।२३।।

विद्या समाप्तौ ब्राह्मं वा सत्त्वमार्षथापिवा ।
ध्रुवमाविशति ज्ञानात् तस्मात् वैद्यो द्विजः स्मृतः ॥२४॥

(च०चि०१-४।५२-५३)

विविधवैद्यानां वर्णनम्

भिषग् छद्मचराः सन्ति सन्त्येके सिद्धसाधिताः ।
सन्ति वैद्य गुणैर्युक्ता स्त्रिविधा भिषजो भुवि ॥२५॥

(च०सू०११)

छद्मचरावैद्याः के ?

वैद्यभाण्डौषधैः पुस्तैः पल्लवैरवलोकनैः ।
लभन्ते ये भिषग्शब्दमज्ञास्ते प्रतिरूपकाः ॥२६॥

(च०सू०११। ५०-५१)

सिद्धसाधितवैद्याः के ?

श्री यशोज्ञानसिद्धानां व्यपदेशादतद्विधाः ।
वैद्य शब्दं लभन्तेये ज्ञेयास्ते सिद्धसाधिताः ॥२७॥

(च०सू०११ । ५२)

जीविताभिसरावैद्याः के?

प्रयोग ज्ञान विज्ञान सिद्धिसिद्धाः सुख प्रदाः ।
जीविताभिसरास्ते स्यु वैद्यत्वं तेष्ववस्थितम् ॥२८॥

(च०सू०११ ।५३)

प्राणहन्तार अज्ञवैद्याः के ?

यदृच्छया समापन्नमुत्तार्य नियतायुषम् ।
भिषङ् मानी निहन्त्याशु शतान्यनियतायुषाम् ॥२९॥

(च०सू०९। १७)

अज्ञवैद्यात् चिकित्सया का हानिः ?

नौ मारुतवशेवाज्ञो भिषक्चरति कर्मसु ।
गन्धर्वपुरवन्नाशं यद्विकाराः सुदारुणाः ॥३०॥
यान्ति यच्चेंतरे वृद्धिमाशूपाय प्रतीक्षिणः ।
सति पादत्रये ज्ञातौ भिषजावत्र कारणम् ॥३१॥

(च०सू०९ । १४-१६)

वरमात्मा हुतोऽज्ञेन न चिकित्सा प्रवर्तिता ।
पाणिचाराद्यथाऽचक्षुरज्ञानात् भीतभीतवत् ।।३२।।

विषवत् प्राणहारी वैद्यः कः?

यथा विषं यथा शस्त्रं यथाग्निरशनिर्यथा ।
तथौषधमविज्ञातं विज्ञातममृतं यथा ।।३३।।
औषधं ह्यनभिज्ञातं नामरूपगुणैस्त्रिभिः ।
विज्ञातं चापि दुर्युक्तमनर्थायोपपद्यते ।।३४।।
योगादपि विषं तीक्ष्णमुत्तमं भेषजं भवेत् ।
भेषजं चापिदुर्युक्तं तीक्ष्णं संपद्यते विषम् ।।३५।।
तस्मान्न भिषजा युक्तं युक्तिवाह्येन भेषजम् ।
धीमता किंचिदादेयं जीवितारोग्यकाङ्क्षिणा ।।३६।।

(च०सू०१।१२५-१२८)

अज्ञवैद्यात्चिकित्साग्रहणनिषेधः ।

कुर्यात् निपतितो मूर्ध्नि सशेषंवासवाशनिः ।
सशेषमातुरं कुर्यान्नत्वज्ञमतमौषधम् ।।३७।।

(च०सू०१ । १२६)

सर्पवत् प्राणहराः वैद्यास्त्याज्याः ।

भिषग्सद्म प्रविश्यैवं व्याधितांस्तर्कयन्ति ये ।
वीतंसमिव संश्रित्य वने शाकुन्तिकोः द्विजान् ।।३८।।
श्रुतदृष्टक्रियाकालमात्राज्ञानवहिष्कृताः ।
वर्जनीया हि ते मृत्योश्चरन्त्यनुचरा भुवि ।।३९।।
वृत्तिहेतो र्भिषङ्मानपूर्णान् मूर्खविशारदान् ।
वर्जयेदातुरो विद्वान् सर्पास्ते पीतमारुताः ।।४०।।

(च०सू०२९ । १०-१२)

मन्दबुद्धिवैद्यकृते निर्देशः

पंच चापि कषायाणांशतान्युक्तानि भागशः ।
लक्षणार्थं, प्रमाणं हि विस्तरस्य न विद्यते ।।४१।।

नाचालमतिसंक्षेपः, सामर्थ्यायोपकल्पते ।
अल्पबुद्धेरयं तस्मान्नातिसंक्षेपविस्तरः ।।४२।।
मन्दानां व्यवहाराय, बुधानां बुद्धिवृद्धये ।
पंचाशत्कोऽयं वर्गः कषायाणामुदाहृतः ।।४३।।

(च०सू०४ । २६-२८)

कः भिषग्वरः-

तेषां कर्मसु वाह्येषु योगमाभ्यन्तरेषु च ।
संयोगंच प्रयोगं च योवेद सभिषग्वरः ।।४४।।

(च०सू०४ । २९)

रोगिणं प्रति आदर्शभिषक्चरित्रम्

भिषगप्यातुरान् सर्वान् स्वसुतानिव यत्नवान् ।
आवाधेभ्यो हि संरक्षेत् इच्छन् धर्ममनुत्तमम् ।।४५।।
धर्मार्थं चार्थकामार्थमायुर्वेदो महर्षिभिः ।
प्रकाशितो धर्मपरैरिच्छद्भिः स्थानमक्षरम् ।।४६।।

(च०चि०१-४ । ५६-५७)

चिकित्साक्षेत्रे अक्षयकीर्तिकरा उपायाः

नार्थार्थं नापिकामार्थमथभूतदयां प्रति ।
वर्तते यश्चिकित्सायां स सर्वमतिवर्तते ।।४७।।

(च०चि०१-४ । ५८)

परोभूतदयाधर्म इति मत्वा चिकित्सया ।
वर्तते यःस सिद्धार्थः सुखमत्यन्तमश्नुते ।।४८।।

(च०चि०१-४ ।६२)

केवलभरणपोषाणार्थमेव चिकित्सा निषेधः

कुर्वते ये तु वृत्यर्थ चिकित्सापण्यविक्रयम् ।
ते हित्वा कांचनं राशिं पांशुराशिमुपासते ।।४९।।

(च०चि०१-४ । ५९)

षडुपक्रमज्ञाता वैद्य एवं भिषक्

लंघनं वृंहणं काले रूक्षणं स्नेहनं तथा ।
स्वेदनं स्तम्भनं चैव जानीते यः स वै भिषक् ।।५०।।

(च०सू०२२)

चिकित्सक द्वारा स्वबुद्ध्या नूतनयोगकल्पनाधिकारः

योगैरेव चिकित्सानि हि देशाद्यज्ञोऽपराध्यति ।
वयोबल शरीरादि,भेदा हि वहवो मताः ।।५१।।
तथान्तः सन्धिमार्गाणां दोषाणां गूढचारिणाम् ।
भवेत् कदाचित् कार्यापि विरुद्धाभिमता क्रिया ।।५२।।

(च०चि०३० । ३२-३२२)

अपिच :-

अल्पस्यापि महार्थत्वं प्रभूतस्याल्पकर्मताम् ।
कुर्यात् संयोगविश्लेषकाल-संस्कारयुक्तिभिः ।।५३।।
प्रदेशमात्रमेतावत् द्रष्टव्यमिह षट्शतम् ।।५४।।
स्वबुद्ध्यैवं सहस्राणि कोटीर्वापिप्रकल्पयेत् ।।५५।।
बहुद्रव्य विकल्पत्वात् योगसंख्या न विद्यते ।।५६।।

(च०क०१२ । ४८-५०)

अपिच :-

तेभ्यो भिषग् परिसंख्यातमपि, यद्यद् द्रव्य-
मयौगिकं मन्येतत्तत्तदपकर्षयेत् । यद्यच्चानु-
पयुक्तमपि यौगिकं मन्येत तत्तद् विदध्यात् । वर्गमपि-
वर्गेणोपसंसृजेदेकमेकमनेकेनवायुक्तं प्रमाणीकृत्य- ।।

(च०वि०८। १४९)

केवलौषधिनामरूपज्ञानेन न फलसिद्धिः

औषधीनामरूपाभ्यां जानते ह्यजपा वने ।
अविपाश्चैव गोपाश्च ये चान्ये वनवासिनः ।।५७।।
न नामज्ञानमात्रेण रूपज्ञानेन वा पुनः ।
औषधीनां परां प्राप्तिं कश्चिद् वेदितुमर्हति ।।५८।।

(च०सू०१ । १२१-१२२)

चिकित्सकेन शारीरज्ञानं करणीयम्

शरीरं सर्वथा सर्वं सर्वदा वेद यो भिषग् ।
आयुर्वेदं स कार्त्स्येंन वेदलोकसुखप्रदम् ।।५९।।

(च०शा०६ । १९)

अपिचः- शरीर संख्यां यो वेद सर्वावयवशो भिषक् ।
तद्ज्ञाननिमित्तेन स मोहेन न युज्यते ।।६०।।
अमूढो मोहमूलैश्च न दौषैरभिभूयते ।
निर्दोषो निःस्पृहः शान्तः प्रशाम्यत्यपुनर्भवः ।।६१।।

(च०धा०७ । १९-२०)

वैद्यकृते रोगज्ञाने प्रमाणोपयोगः, निर्देशः

आप्ततश्चोपदेशेन प्रत्यक्षकरणेन च ।
अनुमानेन च व्याधीन् सम्यक् विद्याद् विचक्षणः ।।६२।।
सर्वं सर्वं समालोच्य यथा सम्भवमर्थवित् ।
अथाध्यवसेत्तत्वेच कार्ये च तदनन्तरम् ।।६३।।

(च०वि०४ । ९-१०)

अपिच :-

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम् ।
ततःकर्मभिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ।।६४।।

(च०सू०२०)

रोगिणः सन्निकटमृत्युं ज्ञात्वा, किं करणीयम्?

मरणायेह रूपाणि पश्यतापि भिषग्विदा ।
अपृष्टेन न वक्तव्यं मरणं प्रत्युपस्थितम् ।।६५।।
पृष्टेनापि न वक्तव्यं, तत्र यत्रोपघातकम् ।
आतुरस्य भवेद् दुःखमथवान्यस्य कस्यचित् ।।६६।।
अब्रुवन् मरणं नैनमिच्छेत् चिकित्सितुम् ।
यस्यपश्येत् विनाशाय लिंगानि कुशलो भिषक् ।।६७।।

चिकित्सकः कथं न मुह्यति ?

क्षयं वृद्धिं समत्वं च तथैवावरणं भिषक् ।
विज्ञाय पवनादीनां न, प्रमुह्यति कर्मसु ।।६८।।

(च०चि०२८। २४७)

अपिच :-

यःस्याद्रस विकल्पज्ञः स्याच्चदोषविकल्पवित् ।
न स मुह्येत विकाराणां हेतुलिंगोपशान्तिषु ।।६९।।

(च०सू०२६। २७)

अपिच :-

कार्यतत्वविशेषज्ञः प्रतिपत्तौ न मुह्यति ।
अमूढः फलमाप्नोति यदमोहनिमित्तजम् ।।७०।।
ज्ञानबुद्धिप्रदीपेन यो नाविशति तत्ववित् ।
आतुरस्यान्तरात्मानं न स रोगांश्चिकित्सति ।।७१।।

(च०चि०४)

अपिच :-

भिषजा प्राक् परीक्ष्यैवं विकाराणां स्वलक्षणम् ।
पश्चात् कर्म समारभ्यः, कार्यः साध्येषु धीमता ।।७२।।
साध्याऽसाध्य विभागज्ञो यःसम्यक् प्रतिपत्तिमान् ।
न स मैत्रेयतुल्यानां मिथ्याबुद्धिं कल्पयते ।।७३।।

(च०सू०१०। २१-२२)

चिकित्सकस्य यदृच्छासिद्धिः कथम् ?

यस्तु रोगमविज्ञाय कर्माण्यारमते भिषक् ।
अप्यौषधविधानज्ञस्तस्य सिद्धिर्यदृच्छया ।।७४।।

(च०सू०२०-२१)

अपिच :-

तस्मात् सत्यपि निर्देशे कुर्यादुह्यं स्वयंधिया ।
विनातर्केण या सिद्धिः यदृच्छासिद्धिरेवसा ।।७५।।

(च०सि०२)

साध्याऽसाध्यरोगकर्मणिकिंकिंफलम् ?

साध्यासाध्यविभागज्ञोः ज्ञानपूर्वं चिकित्सकः ।
काले चारभते कर्म यत्तद् साधयति ध्रुवम् ।।७६।।
अर्थ विद्यायशोहानिमुपक्रोशमसंग्रहम् ।
प्राप्नुयात् नियतं वैद्यो योऽसाध्यं समुपाचरेत् ।।७७।।

(च०सू०१० । ७-८)

कस्य सिद्धिः निश्संशया ?

यस्तु रोगविशेषज्ञः सर्वभैषज्यकोविदः ।
देशकालप्रमाणज्ञस्तस्य सिद्धिरसंशयम् ।।७८।।

(च०सू०२० । २२)

त्रिकालरोग चिकित्सकः कथं भवति

चिकित्सति भिषक् सर्वास्त्रिकाला वेदना इति ।
यया युक्त्या वदन्त्येके, सा युक्तिरुपधार्यताम् ।।७९।।

(च०शा०१।८६)

का चिकित्सा

चतुर्णां भिषगादीनां शस्तानां धातुवैकृतौ ।
प्रवृतिर्धातु साम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते ।।८०।।

(च०सू०९ । ५)

किं भिषक् कर्म-

याभिः क्रियाभिः जायन्ते शरीरे धातवः समाः ।
सा चिकित्सा विकारणां, कर्म तद्भिषजां मतम् ।।८१।।
कथं शरीरे धातूनां वैषम्यं न भवेदिति ।
समानां चानुबन्धःस्यात्, इत्यर्थं क्रियते क्रिया ।।८२।।
त्यागात् विषमधातूनां समानां चोपसेवनात् ।
विषमा नानुबध्नन्ति, जायन्ते धातवः समाः ।।८३।।

(च०सू०१६।३४-३६)

वैद्यवृत्तयः के-

मैत्री कारुण्यमार्त्तेषु शक्ये प्रीतिरुपेक्षणम् ।
प्रकृतिस्थेषु भूतेषु वैद्यवृत्तिश्चतुर्विधा ॥८॥

(च०सू०१०।२६)

कान् जनान् न चिकित्सेत् -

चण्डःसाहसिको भीरुः कृतघ्नो व्यग्र एव च ।
सद्राजभिषजां द्वेष्टा, तद्द्विष्टःशोकपीडितः ॥८५॥
यादृच्छिको मुमूर्षुश्च विहीनः करणैश्च यः ।
वैरीवैद्य विदग्धश्च श्रद्धाहीनः सुशंकितः ॥८६॥
भिषजामविधेयश्च नोपक्रम्यो भिषग्विदा ।
एतानुपाचरन् वैद्यो बहून् दोषानवाप्नुयात् ॥८७॥

(च०सि०२।४-६)

रोगिणः चिकित्सकं प्रति कर्तव्यम्-

नाभिध्यान्नचाक्रोशेदहितं न समाचरेत् ।
प्राणाचार्यं बुधःकश्चिदिच्छन्नायुरनित्वरम् ॥८८॥
चिकित्सस्तु संश्रुत्य यो वाऽसंश्रुत्य मानवः ।
नोपाकरोति वैद्याय, नास्ति तस्येह निष्कृति ॥८९॥

(च०चि०१-४।५४-५५)

रोगदाता, कः ?

आत्मानमेव मन्येत कर्तारं सुखदुःखयोः ।
तस्माच्छ्रेयस्करं मार्गं प्रतिपद्येत नो त्रसेत ॥९०॥

(च०नि०७। २२)

शरीररक्षायाः फलम्

सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत् ।
तदभावे हि भावानां सर्वाभावः शरीरिणाम् ॥९१॥

(च०नि०६।७)

अन्यशास्त्रज्ञाने चिकित्सकः कः?

एकस्मिन्नपि यस्येह शास्त्रे लब्धास्पदामतिः ।
स शास्त्रमन्यदप्याशुयुक्तिज्ञत्वात्प्रबुध्यते ।।९२।।
(च०सि०१२।४७)

सर्वश्रेष्ठदानं जीवनदानम्

दारुणैःकृष्यमाणानां गदैर्वैवस्वतः क्षयम् ।
छित्वा वैवस्वतान् पाशांज्जीवितं यःप्रयच्छति ।।९३।।
धर्मार्थदाता सदृशस्तस्य नेहोपलभ्यते ।
नहि जीवितदानाद्धि दानमन्यत् विशिष्यते ।।९४।।
(च०चि०१-४।६०-६१)

दृष्टं श्री मद्भिर्यद्वैद्यानां चरित्रं कथंकारं कथितं चरकेण ।

चिकत्सकः :- शास्त्रज्ञानादारभ्य, शारीरसंख्यां, साध्यासाध्यतांच रोगाणां, दौषोषधिरस विकल्पं, चिकित्स्याचिकित्स्यरोगविज्ञानं, औषधीनां नामरूपप्रयोगज्ञानं, स्वगुणसम्पद्संरक्षणे प्रयतमानविधिंज्ञात्वैव, राजार्हः, प्राणाभिसरः, भिषगुत्तमः, शास्त्रकर्मविद् प्रभृतिभिरुपाधिभिः संसृज्यमानो भवितुमर्हति नान्यथा ।

असाध्य रोग कर्मणि प्रयतमानेन वैद्येन अर्थ-विद्या-यशसां-हानिःप्राप्यते प्राणिनां क्रोधभाजनभूतः सः, न पारयति लौकिकसुखकारिसाधनानि संग्रहणाय ।

ये तु शास्त्रविदो, दक्षाः, शुचयः, कर्मज्ञाः, जितहस्ता, जितात्मानः, लोकानुग्रहशीलाः, वैद्यवृत्तिपालनशीलाः, सन्ति तेभ्यः पौनः पुन्येन नमस्करणमेव ।

वैद्य चरित्र ज्ञान फलम्

चरक चर्चित वैद्य चरित्रकम्, पठति यो बुधवैद्य, स्वभावतः ।
न स विमुह्यति कर्मसु रोगिणां, भवति कर्मविधानसुचातुरः ।। (स्वरचित)

'Pathya'
One of the aspects of Ayurvedic Treatment

By :- Madhao Ganesh Alias Madhavshastri Joshi Vaidya ,
22 Shukrawar, Phulay Market Road,
Pune 411 002, Maharashtra.

पथ्ये सति गदार्तानां किमौषधनिषेवणम् ।
पथ्येऽसति गदार्तानां किमौषधनिषेवणम् ।। वैद्यामृत ।।

i.e. If we follow the appropriate dietary restrictions properly, there won't be any need for the medicine as such. But if we take the medicines without following the dietary restrictions, it will be of no avail.

Diet is an integral part of Ayurvedic therapy. Hence its importance is described above. The purpose of dietary restrictions is that the principles of Ayurvedic treatment should be meticulously followed. Disease occurs due to consumption of 'Apathyakarak' food item whlch invites the illness. To prevent disease we have to remove the causes which caused the disease, thereby bringing vitiated Dosh-Dhatu- mal to their normal condition. If we do our job properly, we can prevent illness. This is the concept of Pathya in short.

Such rules exist in different medical modalities; though they are termed differently unless we follow the rules of Pathya to improve the health, the drugs alone will not be of any use.

Pathya is defined as पथोऽपनेतम् यत् तत् पथ्यम् ।

Pathyá can be conveniently described as the rules regarding diet (what is to be eaten and what should not be) and rules pertaining to daily behaviour, which will enable us to go to the path which leads to health. In ayurvedic literature different topics like diagnosis, treatment are described which are independant, but pathya is not discussed as a separate topic. Pathya is one of the aspects of treatment while treating the disease Pathya consists of instructions regarding what type of food items to be taken, in what quantity alongwith the drugs. Hence, a physician, while treating gives instructions about Pathya to the patient. In recent times, man has become dependant on many things. Because of this violation of rules of health is the main cuase. One who violates the rules of health, cannot be penalised legally but nature does not forgive him all the same. In fact violation of such rules leads to diseases ranging from minor to major severe disease and ultimately the patient succumbs to death. Even the best of physicians fail to save his life due to superiority complex of man over nature leads him to enjoy things which are contrary to the rules of health (अपथ्य). In due course of time he realises the facts and yields to nature. It is extremely difficult to enlist the things which are "Pathyakarak" and which are contrary. In nature there are different things with different qua]ities, likewise. Every person has different constitution i.e."prakriti". The things which suit, to vatprakriti, are not suitable for pitta-prakriti. No single substance cannot be labelled as totally Pathyakarak nor Apathyakarak as well. Charak has quoted a cornmon principle i.e. a person should use things which are suitable to him and he should not use those things which are unsuitable.

योगमासां तु यो विद्यात् देहकालोपपादितम् ।
पुरुषं पुरुषं वीक्ष्य सज्ञेयो भिषगुत्तमः ।। चरक सूत्र 1/123

While seeking the basic reasons why so much importance is given to Pathya we have to take into account that the Ayurvedic Basic concept consist of Tridosha. All things in nature with their twenty different qualities (गुरुहिमन्दहिमस्निग्ध इत्यादि) are related to Dosha in the body. Variations in Dosha occur due to different character of a thing which leads to begining of a disease. Hence, medicines need to be given to restore 'Balance in Dosha'. Because of this, particular things are suitable in particular diseases and certain things are contra indicated. Physician has to give advice accordingly. Precisely this is the concept of Pathya while treating the disease this should be explained to the patient.

Following the pathya helps patient to get rid of disease quickly and the illness disappears or becomes tolerable.

We have to consider Pathya regarding three things viz. Dosha, Disease and drugs. If we employ medicines with properties opposite to those which vitiate Tridosh, and disease is cured. If we use the substances which prevent the constellation of signs and symptoms that produce the illness, the disease can be cured, for example, if we use substance with quality of stambhan (स्तम्भन) like buttermilk, Atisar or Sangrahini can be cured. While using the medicines which has many constituents certain restrictions have to be observed. For example, while using Pippali which has properties of destroying cough, one should not eat things other than milk and rice. Pippali should not be used for persons of Pittaprakriti.

Considering the permanent importance of pathya it is strongly advisable that a person follows the rules of Pathya while taking drugs. It leads to faster recovery and cure from the disease. Physician should explain Pathya and Apathya to the patient while prescribing medicines and the patient must also follow it rigerously and meticulously.

Some patients who refuse to follow the rules of Pathya and demand for medicine without following Pathya, a physician has to advice firmly that the medicinal treatment would not be successful if Pathya is not followed. Hence he would not like to treat such patient. In such situations physician should not be tempted by possible monitary gains otherwise he will have to run a risk of losing money, knowledge and reputation.

(विद्या यशोहानिरन्यथा स अवाप्नुयान्)

Any given substance cannot be totaly Pathyakarak or Apathyakarak. Substance is used to prevent the disease according to its different properties. While discussing Pathya regarding different substances this worth mentioning Pathya related to four major diseases which test the knowledge of a physician and which are very commonly seen.

1. Jwar (ज्वर) Fever:- It includes different types of fertile illness. Water is the main Pathyakarak substance in such illness. In all types of Jwar, water which is either warm half boiled or completely boiled should be taken. One has to observe fast thoroughly because of the domination of Aam. (आम) Due to testing body becomes lighter and patient feels thirsty due to dryness of Tongue, warm water should be sipped frequently in this condition. Many people tend to avoid hot water because of lack of taste and ask for freeze or cooler water. This tendancy is especially seen in educated class. Aam increases due to drinking such water,

ultimately. It increases Jwar which may be turned into T.B. Moreover physician should advice food substances which are easy to digest and increase the Agni. Milk, Tea and Coffee should be used. Processed rice, soup prepared from Mung, Kultha, Chavali should be taken frequently in small quantities. A patient should take rest and should avoid sweet or Guru food-items includirlg all types of heavy fruits.

2. Hemorrhoids, Atisar and Grahani:- Treatment and Pathya for these diseases is similar beceuse they belong to the same group. This illness occurs due to different diseases related with bawel habit, hence we have to take measures to prevent passage of excessive stool (Maldhatu). So we have to undertake measures which prevent excessive bawel movements (Stambhak). Buttermilk is one of auch substaaces which helps as a source of water, calories and prevention of extra passage of stools. Buttermilk thus helps in all these three ways. Different preparations of buttermilk viz. fatty, slightly fatty and fat free, should be used for the patient with due consideration being given to Dosh, Prakriti, Age and Season. Patient should be given buttermilk alone if the disease is very dominating. It is preferable to give freshly prepared buttermilk. In case of moderate diesease and strong patient, Rice, Khichadi and substances like garlic which stimulate Agni should be given. We have to make sure that the patient doesn't consume food items other than these.

According to our experience, patients are lured to eat spicy foods and food-items which vitiate stool and only help to increase the dieease. So they should be cautioned in time by the physician. Quath prepared with Shunthi, Miri, Pippali, Chavak, Chitrak and Pippalmul (Shadangodak) should be used.

3. Shwas-Kas :- These diseases alter the normal functions of heart and lung due to vitiated kapha. Hence sour substances like butter-milk, curds, cucumber, which increase kapha are best avoided. Cold water in any form should be avoided. Boiled water and specially prepared decoction (Shadangodak) mentioned above should be prepared.

Substances like tea should be taken in proper quantity. Rain, cool and moist surroundings should be avoided. Mild garlic preparation should be taken with rice and chappati. Cold drinks and ice creams should be avoided.

4. Agnimandya, Ajirna, Udar :- In these diseases appetite is affected due to accumulation of Aam due to indigestion. In such conditions, restrictions should be observed as regarding quantity of food. sweet and oily substances should be avoided. We have to make sure that normal stools are passed.

5.Jalodar is an important and independent disease which arises from "Udar". Recently this disease is seen frequently and it calls for the skill of a physician. In this disease we have to avoid food and water completely except milk. Milk acts as a source of food and water both. It is stated that the patient should not even touch the water. (वारि पानावगाहधो निषिद्धं) .It is warned that a person not following this Pathya should not be given treatment.

Pathya, has been discussed regarding above-mentioned four illnesses as an illustrations. If patient is advised properly in each disease after examining him from other different angles, cure from diisease is possible. And as set out at the beginning shloka there wouldn't be any necessity for the drugs as such.

AYURVEDA
ITS RELEVANCE AS A SCIENTIFIC DISCIPLINE

By :- Dr.P.K. Warrier, Managing Trustee,
Arya Vaidya Sala, Kottakkal, Malappuram,
Dist. Kerala, South India.

In spite of the fact that none of the European governments has yet come forward officially to accept Ayurveda as a medical system to be legally practised, the popularity of Ayurveda is on the increase in all European countries. The growing number of international conferences convened in Europe centred on holistic studies giving prominance to Ayurveda, the international institutes and bodies organised on the initiative of doctors, orientalists and cultural workers of Europe to study, practice and promote Ayurveda as the IAAN (International Association of Ayurveda and Naturopathy, Villa Era, Italy), IASTAM (International Association for studies in Traditional Asian Medicine), World Federation of Yoga and Ayurveda, institutes and association for alternative medicine and others are examples of this shift in attitude. The enthusiasm shown by doctors in Germany, Italy, France and other European countries and America, Australia and Japan to hold regular and periodical classes on Ayurveda inviting doctors and professors from various universities in India, the demand for inclusion of study of Ayurveda in the curriculum of medical colleges of Europe and also as subjects for specialisation and the increasing number of doctors coming to India to study Ayurveda at various Ayurvedic study centres as Banaras Hindu University, Poona University including Kottakkal Arya Vaidya Sala and Coimbatore Arya Vaidya.

Pharmacy are all conspicuous developments confirming this new trend. Interest in oriental studies including Ayurveda is not new in Europe. It has been there at the University level from many past decades and the credit of discovering and popularising the scientific aspects of Ayurveda belongs to European researchers and orientalists even in the last centuries as Dr.Hoernle, the eminent orientalist who took pain to uphold the glory of Ayurveda countering the silly arguements of Dr.Hass by comparative study of Bower manuscript and other classical texts. But the present trend is different since the new movements are part of the necessity to utilise Ayurvedic system for practical health improving and treatment programmes and not simply to satisfy intellectual curiosity. The originators and promoters of the new movements are scientists and doctors with a secular outlook. Neither this is a passing fashionable trend. It is reliable and has a promising future taking into account the following circumstances.

Despite the organised propaganda and official patronisation, the trend in all affluent countries is to turn away from the present set up of western medicines. Alexis Carrel's assessment of the merits and demerits of western medicine that although it can claim credit in eradicating bacterial and protozoan diseases and in advancing surgery, it has proved its bankruptcy in coping up with degenerative diseases and other curses of civilization due to alienation of man from nature and society as psycho-somatic diseases, cancer and AIDS etc. The necessity of alternative approach by studying man with all his associations and relations as heredity, way of living and environments has gained widest approval of the common public, researchers, doctors and scientists. In socialist countries, much before the revolutions the shift towards study of man-organism as a whole-in the living environment was developed. They were with chronic experiments instead of experiments on dead animals, as that of Sechnov, Pavlov and followers who promoted medical science to holistic and dynamic visions with plenty of data, experiments

and tecnniques. So the approach to man as a social organism, mind and body integrated, ever reacting and improving or weakening along with social conditions was already established there. The advantages of this approach were really contributing to the new dimensions with spirit to embrace and explain and make use of the hitherto advancements of all medical sciences, including Ayurveda.

But the most supporting phenomenon which guarantees justification and promotion of this new trend is the changed perspective of modern science. The findings of higher researchers in sub-atomic physics prove that the universe is basically not structural as had been conceived by Newton and Descarte, but functional and ever-changing. Scientists declare a turning point--the necessity of turning to a synthetic, holistic, functional approach as the more reliable one than the analytical, linear, reductive approach. This is confirmed not only by writers like Fritjof Capra whose over enthusiasm to cling to idealistic interpretations may be questionable to other scientific writers but also by Prof.Needham the Cambridge Scientist, who working with a team of scientists has written the monumental work "Science and Civilization in China". Among the reasons that prompted him to undertake this work, he says that the value of oriental approaches to phenomenon, although old, is more now and worthy of new study since modern scientific trend also can have benefit from it. The same perspective is the cause of the increased interest in the west for 'a return to India' as the return to Greek movement of the past. This new trend of modern science and medicine may also be due to the recognition of a social necessity blind so far. The liberation movements of the erstwhile colonies as in Africa and socialistic advancements in China, Vietnam, Korea etc., have pressed forward the demand for recognising the value of traditional medicines in each country and also for planning people's health programmes, with a popular basis. The success of Chinese medicines in influencing the west is now beyond dispute. These new movements have contributed to ideological advancements also. The Alma Ata Declaration of W.H.O., "health for all by 2000 A.D." calling for the unified action of all health systems including the traditional ones and for promoting research in them as in Ayurveda, Chinese medicines etc., is an outcome of this movement. It is in fact an official recognition of all oriental systems by the west and approval of the new spirit of the occident to have pilgrimages to the east. But the state governments in Europe are still wavering perhaps being afraid of the commercial interests of the multi-millionares engaged in the manufacture of modern medicines. In this background, the rising popularity for Ayurveda in the west is quite understandable. So, setting our eyes on the world picture and the increasing demand for Ayurveda abroad, we have a promising future. But how far we have advanced to assess this trend, realising the necessity to increase our ability to cope up with the demands.

It is a fact that the renaissance movement in the preindependence period, helped to buck up followers of Ayurvedic system also to prove the worth of Ayurveda as an advanced medical system and to go forward for its resuscitation. The challenge from western medicine really worked beneficialy. The decline of Ayurveda in the preceding period was mainly due to the decadence in our culture due to our own fault. Colonialism was very careful and clever not to awake us from our dormant state. So when western medicine was introduced, the conservative traditional medicine which like all other Indian discipline and studies had become lifeless. So we had to revitalise it by turning to authoritative works which also had to be recovered and answer this challenge from the west.

So our pioneers searched for authoritative texts and started to publish them. Athridev Vidhyalankar notes that it was the very next year of establishing the modern medical college at Calcutta, Sushruta was first published. since then many new works were published some on Shuddha Ayurveda or original texts and others trying to compose, combine or synthesise Ayurveda and modern medicines.

But in all these works and to put it in brief even in the research works going on in Ayurvedic centres, there is a conspicuous attitude of inferiority complex. The idea that western science is superior and our concepts and achievements being old are inferior, creates this complex and to make them acceptable to the west, we have to present them in the language of the modern concepts. Since the modern science until recently and as popularised in India is based more on structural, analytical, linear and reductionist language, many try to present Ayurvedic ideas and concepts in these terms. At the same time, there is another section of Ayurvedic scholars and physicians who take Ayurveda as a part of Hindu culture alone with idealistic leanings and its glory seen in its giving importance to the "other worldiness". But a critical study of Ayurvedic texts and the course of progress of Ayurveda through centuries, convince any one that Ayurveda is a pure and practical science and has advanced with times embracing new visions, ideas, useful for promoting health, accepting all therapeutic approaches, methods and medicines (as alchemical, Unani and recently even from modern medicines). Redaptors as Charaka, Dhrudabala etc., wrote revised texts and new authors like Vagbhata, Madhava etc., compiled new works accepting idea and preparations from countries abroad upto 16th century. It is a regrettable fact that a full picture of the advancements is not yet followed by us. We have no authoritative work as the 'brilliant work of science and civilization in China by Prof.Needham and scientists studying various trends, contributions and their significance in the objective background. of the developments except some earnest works by Dr.P.C. Ray, Deviprasad Chathopadhyaya and Prof. Das Gupta etc. In most of our libraries, we have not collected even the studies of Dr.Hoernle and others in the "Annals of the journal of Royal Asiatic society". Because we have not given attention to the fact that a study of progress of medicine and the original contributions to medicine in India and the various systems and movements emerged from medical practices here is highly illustrative and valuable for not only a correct understanding of the scientific outlook, talent and contributions of people but also to explain the speciaiity in ways of life considering the various techniques which were prevalent in different regions in India. There is a version that the real founders and exponents of the philosophies, Samkhya, Yoga, Nyaya and Vaisheshika that make the epistemological background of Ayurveda, were not only philosophers but physicians who practised medicine. In Kerala, as distinct from North India, the question why Amarakosha is accepted as an authoritative lexicon and Vagbhata's works are accepted for medicine can be answered only if we understand the part played by the Buddhist monastries of Sri Sailam and Sri Parvam in Decan, in the field of Sanskrit education in the South for about ten centuries.

What is the specific characteristic of Science? Objectivity and "this worldiness". Then Ayurveda is scientific from its very beginning and has remained to be scientific ever since. The texts themselves have declared the origin of Ayurveda, though in mythological style, as the emergence of a new objective medical science - Yuktivyapasraya, distinct from Daivavyapasraya and Satvapajajaya.

But as we observe, in many works of the past, the Hipocratic Corpus, there are so many interpolations, entries absolutely against the basic concepts of the preceptors and anomalies in the texts that have come to us, handled by generation.

From the very beginning, Ayurveda has anchored itself on the solid stone of objectivity on the study of Panchamahabhutas, Dhatus on Rasipurusa and everything that over-rides the bhutas is discarded. At tne same time, it has declared man as a microcosm of the Universe, in open contact to the external and internal environment. The approach of Ayurveda is hence fieldoriented, holistic and functional.

AYURVEDIC MEDICINE FOR HOLISTIC HEALTH CARE
THE APPROACHES AND THE FUNDAMENTAL PRINCIPLES.

By :- Prof. R.H. SINGH
Professor & Head
Department of Kayachikitsa
Institute of Medical Sciences
Banaras Hindu University
VARANASI- 221005,INDIA.

Ayurveda is the ancient Science of life with its origin in India during Vedic Ages during 5th Century B.C. This ancient Science which is now practised as an official system of medicine in India and several other south east Asian countries, is based on its own fundamental principles. The ancient knowledge of Ayurveda, which is being actively revived and developed to meet the need of present day world by recent scientific researches, was originally described in Sanskrit in three major texts in the form of encyclopedia namely (1) Charaka Samhita, (2) Sushruta Samhita, and (3) the Samhitas of Vagbhatta. These ancient classical tests are now translated in several languages and a large number of contemporary literature has been produced in recent years.

There are over one hundred Ayurvedic colleges in India engaged in training Ayurvedic Doctors through a 5- 1/2 years course of graduation and a 3 years course of postgraduate specialisation. All these colleges are run by the Government and are affiliated to state Universities. There are official Government bodies to control the standard of Ayurvedic Education and also to promote research and development activities in the field of Ayurveda in the country. There are three major institutes who are considered the centres of advance studies and Research in Ayurveda; one of these is located in Banaras Hindu University which is the biggest and the most prestigious University of the Indian subcontinent. There are nearly 500000 Ayurvedic Physicians practising in India both in public and private sectors.As a matter of fact Ayurvedic medicine enjoys the major share in Health Care delivery system in India specially in the rural areas, where it functions almost as an alternative system of medicine replacing Western Modern Medicine. In certain other sectors Ayurvedic medicine plays a complementary role, as obviously there are a number of health problems in present times where Western Modern medicine fails to help. In most of such problems Ayurvedic remedies play a Commendable role. Oridinarily Ayurvedic medicine is more suited to Chronic Functional Diseases and Psychosomatic Disorders.

Hence Ayurvedic medicine has the potential to contribute a lot to better living and better health. Considering the kind of life and health problems in present day Europe, the Ayurvedic Medicine has all potential to emerge as a major complementary Medicine for promotion of health, prevention of diseases and complementary treatment of many major modern diseases.

THE APPROACHES AND THE PRINCIPLES.

The Ayurvedic Medicine differs from Western Modern medicine on following scores:

1. Ayurvedic Medicine system is an experiencial science as opposed to Western Medicine system which is essentially an Experimental Science.

2 Ayurvedic Medicine system is a Subjective Science as opposed to Western Medicine system which claims to be an Objective Science.

3 Ayurvedic Medicine system is a holistic medicine or more an art of healing as contrast to western medicine system which is essentially an Analytical Science.

4 Ayurveda is concerned more about the Man as a whole while Western Medicine is fragmentary in its approach.

5 Ayurveda gives more importance to Health than Disease and hence believes more in Promotion of Health and Prevention of Diseases than Cure.

6 Ayurveda gives more importance to the functional entity of the body rather than the crude structural entity.

The following are the fundamental principles of Ayurvedic Medicine system.

THE THEORY OF MICROCOSM - MACROCOSM BALANCE:

The most important principle of Ayurveda is the theory of "Loka -Purusha Samya" i.e. the theory of balance between the Macrocosm and Microcosm. According to Ayurveda the 'Purusha' (Individual/Man or the Microcosm) and the 'Loka' (Universe/Environment or the Macrocosm) both consist of the same constituents namely the Pancha Mahabhuta and the Soul. The 'Loka' and'Purusha' constantly interact with each other and influence their melieu interior. So long this interaction is balanced the Man is in a state of Health. The moment this interaction is disturbed the balance is lost and the result is a disease. The cure of a disease lies in restoring the balance by substituting or depleting the excess or deficiency of the respective constituents by picking up the same from the Nature(the Macrocosm).

THE THEORY OF PANCHA MAHABHUTA, TRIDOSHA AND TRIGUNA:

The 'Loka' and'Purusha' both consist of Six basic components such as Five Mahabhutas- (1). Prithvi, (2) Jala, (3) Teja, (4) Vayu, (5) Akasha and the Sixth factor the Avyakta Brahma (Soul or Consciousness). The theory of Pancha Mahabhuta is essentially a theory of Physics. The biological representatives of Pancha Mahabhutas in living body are the three Doshas or Humours viz. (1) Vata, (2) Pitta, (3) Kapha. Vata refers to the entire energy and activity & mechanics of the body while Pitta refers to the entire chemical activities including digestion, metabolism, hormonal activity etc. Kapha is the substratum of the solid structure of the body.

THE PRAKRITI:- In order to have a hormonious function of the body it is essential that the three Doshas remain in appropriate balance. The man when born healthy he is more or less in a state of balance of Doshas but there is always a possibility of a genetically determined relative various of these Doshas within physiological limits. Such a genetically determined variation of Tridoshas determines the overall personality or constitution of the individual which is called"Deha Prakriti". The Deha Prakriti is the sum total of Physique, Physiology and Psychology of an individual as determined by ratio of three Doshas.The genetic relative preponderance of three Doshas ordinarily produces seven types of Prakriti viz.(1) Vataja, (2) Pittaja, (3) kaphaja, (4). Vata-Pittaja, (5) Vata-Kaphaja, (6). Pitta-Kaphaja, and (7). Sama (with compelte balance). The Prakriti of a man is further responsible for his future course of health and disease in life. As the Prakriti is genetically determined it cannot be changed but can be modified to some extent. In order to keep healthy it is necessary to adopt suitable diet, work and

life style in consideration of one's Prakriti. If any body violates and ignores his Prakriti he falls victim of a disease. So the great victim of Ayurveda is "Know Yourself to Keep Yourself Fit".

The same Pancha Mahabhutas are represented in the Psyche of Man in terms of "Triguna" namely (1) Sattva, (2) Raja and Tama. They determine the behaviour and Mental personality of Man.

A balance of these Gunas presents a balanced personality while their extreme preponderance produces extreme personalities with extreme behaviour. The Ayurvedic texts describe 16 types of behavioural variations in normal persons because of the different ratio variations in Trigunas as determined by genetics.

THE PANCHABHAUTIC PHARMACODYNAMICS

The same Pancha Mahabhutas are present in the articles of diet and drugs. It is only they who determine their qualities like hot or cold, rough or smooth, light or heavy etc. and also their taste like sweet, sour, salty, bitter, astringent, etc. as well as their pharmacological action in the body. A diet or drug is selected for a patient considering the Panchabhautika composition of the same, inorder to compensate the increase or decrease of the same in the body.

EXAMINATION OF PATIENT

The examination of a patient in Ayurvedic Medicine system is two-fold-

(1) Examination of the Personality and vitality of the victim, the Man and

(2) Examination of the disease in patient. Here the emphasis is more on the Man and his Health than his disease.

PRINCIPLES OF CURE

The Principle of Treatment of the sick is to restore balance of Doshas in the body by strengthening the weakened ones and by depleting the increased ones by substituting with similar/dissimilar materials (Samanya/Vishesha) from nature in the natural drugs and diets. In order to make this style of cure effective it is essential to purify the body so that there is free interaction of Microcosm and Macrocosm. This purification of the body is done by a series of purificatory procedures which are known as Pancha Karma Therapy in Ayurveda.

A Preliminary Clinical Trial of "Vijayasara Compound" In Cases of Insuline-Independent Diabetes

by:- Dr. Bhagwan Singh,
Principal, A& U Tibbia College,
Karol Bagh, New Delhi.

For years a number of drugs belonging to plant and mineral origin are in use traditionally by the practitioners of Indian System of Medicine i.e. Ayurveda with the claim of benefit in Diabetes mellitus with no or least side effects. Among them Vijayasara (Pterocarpus marsupium, Roxb.) is one found to be effective in Diabetes by many scientists.

Previously the Vijayasara, in the form of decoction is tried. But now a compound by name"Vijayasara Compound" having Vijayasara as a main ingredient is being tried.

Material and Methods.

Twenty known patients of Insulin- independent diabetes were selected from Dravyaguna O.P.D.(Diabetic clinic) of S.S. Hospital, B.H. U; Varanasi, who were taking allopethic anti-diabetic drugs like Glybenclamide, Chlorpropamide, Phenformin, etc. and were put on present drug trial. The diagnosis was confirmed by majority of cardinal symptoms of Diabetes mellitus (polyuria, polyphagia, polydipsia, weakness, wasting of muscles, giddiness, muscular and joint pains, etc), glucosuria and impaired glucose tolerance.

Drug selected for trial:

Vijayasara compound consisting of the following ingredients. Vijayasara (Pterocarpus marsupium) Ghanasatwa- 500 mgs; Dried fruit powder of Karavellaka (Mimordica charantea) 150 mgs; Seed powder of Jambu (Sizizium Cumini) -100 mgs; Ghanasatwa of bark of Udumbara (Ficus glomerat) - 60 mgs; Root powder of Ashwagandha(Withania somnifera) -50 mgs; Shilajit- 1 mgs and Vanga bhasma- 10 mgs.

Criteria for selecting the compound:

1. Todate western anti-diabetic drugs cause insensitivity, resistance or reactions gradually. Hence in vouge raise of dose warranted. So Ayurvedic drug is selected.
2. Vijayasara(Pterocarpus marsupium, Roxb.) has been proved to be effective in Diabetes by releasing Insulin(Prof. Amman, W.Germany, 1978), by regenerating beta cells of Islets of Langerhans of Pancreas (Charkravarty, B.K. et al; 1978).
3. Here the compound preparation made tablet form as it would be convenient and readymade to take in and easily portable (the use of decoction is not convenient in patients of touring job) and less dose is also an advantage(the mode of administration being oral in the form of decoction which has to be taken in bulk, at least 200 gms. per day).
4. Some other anti-diabetic drugs and Shilajit(the use of Shilajit in the form of Bhawana with decoction of drugs of Salasaradi-gana is emphasised by Sushruta) are included in the present compound to lessen the actual dose of Vijayasara.

Administration of drug and dose:

Before the study all the patients were withdrawn from their previous treatment and were put on placebo treatment for 7 days. Later Fasting blood sugar, Postprandial blood sugar(1 hour after 100 gms. of glucose), Urine sugar, Serum cholesterol and Blood urea were estimated in all cases. Then the proposed drug was administered orally for one week only.

Total 20 patients were divided into two groups. Eight patients, categorised under Group-I, were treated as O.P.D. cases and were advised to take in four tablets per day in two divided doses to be taken after lunch and dinner. Twelve patients, under Group-II, were admitted in Kayachikitsa-ward under Dravyaguna showing the effect of Vijayasara Compound on blood sugar and urine sugar levels of patients of diabetes mellitus in different doses. Data represents mean ± S.D, values of blood sugar levels (mgs %).

Figures in parentheses indicate the number of observations.

Dose of the drugs	Fasting blood sugar (mgs%)			Post-prandial blood sugar(mgs%)			Urine sugar (gms%)		
	B.T.	A.T.	Dif.	B.T.	A.T.	Dif.	B.T.	A.T.	Dif
Group-I (4Tabs/day)	133.63 ±50.28 (8)	139.63 ±52.02 (8)	+6.3	228.75 ±79.25 (8)	215.75 ±49.58 (8)	-13.0 (8)	0.88 ±0.58 (8)	0.63 ±0.44 (8)	-0.25
'p'value	>0.05 NS						>0.05 NS	>0.5 NS	
Group-II (8 Tabs/day)	204.75 ±108.43 (12)	147.33 ±56.46 (12)	-57.42	332.83 ±112.30 (12)	264.83 ±81.90 (12)	-68	1.04 ±0.40 (12)	0.80 ±0.39 (12)	-0.24
'p'value	<0.01 Highly significant			<0.05 Significant			>0.05 NS		

B.T = Before treatment; A.T= After treatment; NS= Not significant.

Unit and were administered eight tablets per day in four divided doses after breakfast, lunch at 4 P.M. and after dinner. After one week drug treatment the same investigations as those of before treatment were repreated in all 20 cases.

Diet:

All the patients were allowed diet which can provide approximately 1800 calories per day with restriction of sugar, rice and potato.

Criteria for assessment of results:

1. Subjective improvement:

-Reduction in quatity of urine and frequency of micturition.

-Decrease in appetite.

-Reduction of thirst.

-Reduction in muscular and joint pains.

-Relief from other complaints.

-General feeling of well-being.

2. Objective improvement:

-Reduction in F.B.S; P.P.B.S. and both.

-Reduction in urine sugar content.

On the basis of above parameters the results were graded as markedly improved (where there was reduction in F.B.S; P.P.B.S. and urine sugar content and subjective improvement), Improved (where there was reduction in eighter of F.B.S. and P.P.B.S. and urine sugar content and subjective improvement) and Not improved (where there was no reponse to drug subjectively or objectively) in each group.

Observations and Results.

1. Group- I

In this group of 8 patients, three were females and rest were males. All patients aged between 40 and 70 years and age in most of the patients ranged from 51 to 60 years. The duration of illness ranged from 2 months to 9 years. Most of the patients(63.3% reported polyuria, polyphagia, polydipsia and weakness. About 50% of total patients reported vertigo and diminished vision.

The means of F.B.S. and P.P.B.S. before treatment were 133.6 mgs% and 228.7 mgs% respectively. The urine sugar before treatment was 0.75 gms%.

After one week drug treatment with Vijayasara compound 4 tabs.per day orally the mean F.B.S. raised to 139.6 mgs% and mean P.P.B.S. and mean urine sugar have fallen to 215.7 mgs% and 0.625 gms% respectively. There was symptomatic improvement in all cases except in two which did not respond to the drug.

2. Group-II

Out of 12 patients, 2 were females and rest 10 were males. Age of all cases ranged from 30 to 60 years. Most of the patients(50%) aged between 51 and 60 years. The duration of illness ranged from 3 months to 13 years. Most of the patients complained of poluria, polyphagia, polydipsia, weakness and muscular and joint pains. Out of 12 cases 33.3% were complicated with Pulmonary Tuberculosis, Koch's Knee, Matured Cataract or Diabetic Neuropathy.

The means of F.B.s; P.P.B.S. and urine sugar before treatment were 204.3 gms%, 333.83 mgs% and 1.4 gms% respectively.

After one week treatment with Vijayasara compound 8 tabs. per day orally the F.B.S; P.P.B.S and urine sugar were reduced to 147.3 mgs%, 256.5 mgs% and 0.8 gms% respectively. There was much symptomatic improvement in 83.3% cases where the remaining 2 cases were complicated and did not respond to treatment.

The Serum cholesterol and Blood urea levels were found to be within normal limits in all cases of both groups before and after drug treatment.

Conclusion

In Group-I which is consisting of 8 cases where the dose of 4 tabs. per day of Vijayasara compound was given, one case was markedly improved, three cases were improved and four were not improved. In this group the reduction of blood sugar was insignificant.

Out of 12 patients of Group-II where Vijayasara compound was given in dose of 8 tabs. per day, eight cases were markedly improved, two were improved and two were not improved. In this group there was significant reduction in blood sugar levels.

The drug even in dose of 8 tabs. per day failed to show anti-diabetic effect in cases associated with complications.

Acknowledgement

Authors wish to thank Herbomed Pvt. Ltd; Calcutta, which is marketting the present Vijayasara Compound on the name of 'Diabex' tablets, for supplying the drug for this clinical study.

References

1. Amman, 1978 West Germany.
2. Chakravarty, B.K. et al.- A study on hypoglycaemic effect of Pterocarpus marsupium, Roxb; Ind. j. of Pharmacol; vol. 12, No. 2, Apr/Jun; 1980.
3. Davidson's principles and practice of medicine, Ed. Macleod, 12th Ed; The ELBS and Churchill Livingstone, 1977.
4. Ojha, J.K. et al- Hypoglycaemic effect of Pterocarpus marsupium, Roxb. (Vijaysar), J.R. I. M.Y & H; 13:4 :1978.
5. Prasad, V.V.- A study of pharamacognosy and antidiabetic effect of Clerodendrum infortunatum, Linn. (Leaf), M.D.(Ay) Thesis- Dravyaguna, 1980, I.M.S; B.H.U. Varanasi.
6. Sushruta Samhita - Comm. Delhana, I ed; Ed. by Nipendranathsen, C.K. Sen & Co. Ltd, Calcutta,1802.

MARCO POLO'S OBSERVATION ON INDIAN MEDICINE

By :- JYOTIR MITRA
Banaras Hindu University

Marco Polo, the Italian Traveller, was born in 1254 A.D. in to a family of enterprising and successful Ventian merchants.In 1271, he accompanied his father and uncle on their second visit to China and the court of Kublai Khan. Marco Polo adapted readily to Tartar customs and soon learnt their language. He proved himself an invaluable emissary of the Tartar ruler and spent the next seventeen years travelling in his service, enjoying a freedom of movement in the Kongol Empire probably unequalled by any other Europian before or since, Hetravelled to areas as far afield as the Polar Sea and Java,Zanzibar and Japan. Some of the places he visited remained unseen by other Europians for another 600 years, when allied troops opend the Burma Road during the Second World War.

In 1298, Marco Polo was a prisoner of war in Genoa, where he met the Romance - writer Rustichello of Pisa, a fellow prisoner Rustichello was quick to perceive that Merco Polo had a unique story to tell, covering as it did a vast panorama of nations and peoples- Persians, Turks, Tartars, Chinese, Tibetans, Indians,and many other with all their strange and wonderful customs.Together the two Italians wrote "The Travels". Marco Polo had an observant eye and retentive memory. He was also quick witted and respectful, a practical traveller and shrewd merchant. His vivid description of all he saw and experienced resulted one of the world's most remarkable books.

'The Travels' of Marco Polo was probably written in French and various versions were then, copied in to latin and many other languages. This translation of Marco Polo's journeys is from the new Italian version by Maria Bellonci. It was Teresa Waugh who translated the book in modern English from Italian,. This book was first published in 1984 by Sidwick and Jackson, London. This present book contains nine chapters and among them the two chapters VIth (from China to India) and VIIth (India) are somehow related to our paper.

The present paper elucidates his statements in nut shell. Marco Polo, describing the great city Baghdad, states that it takes some eighteen days to reach the sea by river and merchants, on their way to India sail down to the city of Kais where they come into the open sea. On the river, between Baghdad and Kais, is another city called Basara, in the woods around which the best date palms in the world be found.(p.25).

Kuh- banan is a large city where is found much iron, steel and ondanique and they make big, very shiny steel mirrors here as well as producing tutty (zinc oxide) which is good for the eyes, and spodium. They do this by piling earth particularly suited to the purpose in a very hot furnace on top of which is a kind of iron grid. The smoke and humidity escaping from the earth are collected on the grid and consist of tutty. The residue is spodium (p.36) After a journey of eight days (from Kuh- banan) the province of Tun and Kain with its many cities and castles is reached. This country lies along the borders of northern Persia. Here there is an endless plain out of which rises the "Solitary Tree" known to Christians as the Dry Tree. This tree is huge and study with leaves that are green on one side and white on the other.It produces husks like chestnut husks, but there is nothing inside them. (p.37). There is twelve days from Balkh to

Talikhan.Here is a very big grain market. It is situated in magnificient surrounding: to the south rises a range of magestic saltmountains and other which are rich with alomnds and pistachios both valuable commidities. From Talikhan a three day's ride takes the travellers through more beautiful and populated countryside where fruit, cereals and vines grow.(p.47). In Badakhshan, beautiful and valuable rubies are mined, like silver, from deep in the mountains. They are mainly found in the mountain called Sighinan. (P.41). in the same provinece, but in another mountain, the most precious and the bluest possible sapphires are mined. They are dug out in the same way as the rubies. In yet more mountains, there are large deposits of silver, copper and lead. The best wheat is grown here and barley without husks. Although they have no olive oil but there is sesame oil and nut oil. (p.42) In Kashmir, it is worth noting that coral from Europian countries sells better there than anywhere else. A journey of 12 days towards the south takes the traveller to the land where pepper grows, the land of the Brahmins which is India (p.43). The country of Khotan is rich in everything, especially, cotton, there are a lot of vineyards and small holdings producing flax, hemp and grain (p.45). One can reach Pem in five days from Khotan. Large number of jaspers (सूर्यकांत) and chalcedonies (खनिज अकीक). are found in the rivers. The cotton is profusely grown. (p.46). To the north east of Turkestan is the province of Charchan. Here are also found many high quality jaspers and chalcedonies. (p.46). In the province of Ghingh -in -talas, northern border has a high mountain with excellent deposits of steel and ondanique (high grade Indian steel). There is also a deposit of salamander (asbestos) (p.50).

As per Marco Polo, the great Kublai Khan had ordered trees to be planted on either side of the roads frequently by mes gers and traders.There were the large trees which were visible from a distance a help the ellers to follow the right path.

The great Kh was too happy to plant trees because diviners and astrologers had told him that any one planting tree lives a long time (p.90).In the province of Cathay, most people drink wine made from rice and flavoured with delicious spices. It was so well made that it tasted better than any other wine. It was clear and a great stimulant which quickly intoxicated people.(p.90)

Marco Polo, in the Kingdom of Kara -jang, reveals the treatment of a man bitten by rabid dog pointing out the use of snake bile says that small quantity of bile of snake is given to the above said patient and he becomes cured. The same was also used in difficult delivery with screaming. It was also used to reduce the swelling (p.105). Marco Polo describing the great province of Bengal, informs that spikenard, galingale, sugar and many rare spices made for active trading. Indian merchants came to buy eunuchs (p.110). In the Kingdom of Fu-chau, amazing quantity of gingar and galingale grow. One Venetian groat will buy eighty pounds of fresh ginger, there is also a fruit which can be used as a substitute for saffron. (p.134).

Marco Polo spent so long time among the Indians, learning their customs and behaviours. Describing the Island of Japan, Marco Polo states that Gold was mined in huge quantity. Nobody ever goes to Japan from the mainland, so the Gold never leaves the Island. There are vast numbers of very beautiful, large, round, pink pearls which are even more precious than white ones. It is usual when burying a body to put a pearl in its mouth. The Japanes have many other priceless stones. (p.140). The king of Chamba used to send a great quantity of aloe woods along with 20 elephants to the great Kublai Khan as tribute (145). He also informs that there is also a large quantity of very black wood called ebony from which chessmen and

inkstands were made. (145). In the Island of Java, Pepper, nutmeg, spike nard, galingale, cubeb, cloves, and all the rarest spices in the world are found. (146). Seven miles to the south west of Java, lie a small and a large Island known as Sondur and Condur. Here is abundance of ebony and brazil wood and also an unbelievable amount of Gold. Cowrie shells come from her(p.146). Marco Polo was forced to remain in Sumatra for five months due to bad weather which prevented him from travelling. Sumatra has no corn but rice only.There is no wine, but unusual type of drink made from a certain tree. A branch is cut from the tree and a receptacle. hung from the trunks. The receptacle must be quite big as in a day and night it will be full to overflowing with this most delicious drink.These trees look like small date palms, but they only have four branches and when they have stopped producing wine,the trees are watered throughly and after a little while the stems begin to produce more but this time it is white rather than red. So there is red and white wine, and it is wine which can cure dropsy and consumption. Big Coconut Fruits are also found here.(p.148.149),Marco Polo also informs that in the Kingdom of Lambri, there is super abundance of brazil as well as camphor and precious spices. Brazil is cultivated in the following way after the seeds are sown, the young shoots are planted. They are then left for three years after which they are dug up and used. Marco Polo took some of the seed to Venice and planted it there, but nothing grew because the climate was not too cold. Persons residing here, are hairless withtails a span in lenght(149). The kingdom of Fansur, a part of lesser Java, yield best camphor in the world. It is called' fansurina, which is produced and sold for its weight in Gold. There is no corn so the people eat rice and milk but they make flour from trees in these parts. The flour comes from inside a fine bark and is pounded to make a delicious paste. Marco Polo ate some himself and even took some back with him toVenice. Bread made from this flour tastes like barley bread. (p. 150). In the Island of Nikobar, Marco Polo observes that woods are full of the finest plants, including white and pink sandalwood, conconut trees, cloves, brazil and many valuable trees.(p 150). Marco Polo observes The island of Andamen with full of spices and fruits unlike his own (p.150).

He says that, in Ceylon, wonderful rubies are found finer than in any other part of the world. There are also sapphires, topazes, amethysts, garnets and many other precious stones. The king owns the most beautiful ruby ever seen. It is nearly a palm in length and as thick as man's arm. It is the brightest jewel in the world and has not the slightest flaw.(p. 152).

Marco Polo, under the chapter VII, describes India. He says that about sixty miles west to the ceylong, the Province of Malabar (part of Greater India) stands. Huge, fine pearls of excellent quality are found here and they are collected in a fine way. He narrates the details(p.153).

In the Kingdom of Motupalli, situated 500 miles to the north of Malabar has many mountains with diamonds. (p.159). Here, he narrates the procedure of collection of diamonds. (p. 159 ff.) He observes, in the Lar Province that Brahmins live longer than any other people in the world and this is because of their diet and abstinence, their teeth are in excellent conditions because they eat a herb which helps in digestion and which is very good for the health. They never practise blood letting(p.162).

Quilon Kingdom lies about 500 miles to the south west of Maabar. Quilon brazil, an excellent wood,grows here. Pepper trees are cultivated here and vast amounts of papper is harvested in May, June and July. Much indigo is extracted from certain plants (p.166). There

is no corn except rice. Wine is made from dates and it is a much more highly intoxicated drink than grape wine. There are many clever astrologers and good physicians(p.166).

In the Kingdom of Ely, situated about 300 miles from Comorin, large quantities of peper, ginger and other spices grow(p.167). In Malabar, Pepper, Ginger and other spices grow abundantly. There are coconuts and large quantities of cinnamon. Foreign merchant ships ballasted with brass come laden with cloth of gold, silk, sandal, sandalwood, silver, cloves, spikenard and other spices. Ships come from every where.

There are vast amount of Pepper, ginger and indigo in Gujrat. A lot of cotton is collected from the cotton trees which grow six paces tall here.

Thus, it can be concluded that Marco Polo's observation on Indian Medicine is informative and useful and through this, the medical history of 13th century can be documentally drawn.

MANAGEMENT OF AMAVATA WITH THE HELP OF AN AYURVEDIC COMPOUND

By:- TYAGI M.K. *JHA S.D. *PRASAD R.D. * ARYA M.P.S.
RESEARCH OFFICER, CRIA, PUNJABI BAGH, NEW DELHI- 110026
ASSTT. RESEARCH OFFICER, CRIA, PUNJABI BAGH, NEW DELHI- 110026
RESEARCH ASSISTANT, CRIA, PUNJABI BAGH, NEW DELHI- 110026
ASSISTANT DIRECTOR INCHARGE, CRIA, PUNJABI BAGH, NEW DELHI -110026

According to Ayurvedic concept, Tridoshas play an exclusive role in the Pathogenesis of the diseases. Amongst all the three, Vata has got vital role to play since it is controlling the entire sensory as well as motor functions of the body. Almost all diseases specially Vata Vyadhis cannot take place without the cardinal symptoms of which the Vata Dosha is prominent producer. Notwithstanding in Brihattrayee except Ashtang Hridya, the term AMAVATA has not been included in Asheetivata Vyadhi, it is quite evident that the disease entity is three with the sufficient knowledge and historical back ground in the medical history and found it's place in the latter scriptures.

The history of Rheumatoid Arthritis dates back to the year 1858 when Sir Alfred Garrod introduced the term, for the syndrome which he recognised as different from Gout and Rheumatic Fever, with only minor exception (Garrod included Heberden's nodes as features of Rheumatoid Arthritis) his description matches the modern definition. The terms of Rheumatism and Arthritis denoting inflammatory conditions of joints, while Rheumatism involves a vide range of illness that effect components of the musculo - skeletal stem /Articular system, joints, muscles, ligaments, connective tissues, tendons and bursae. Thus Rheumatoid Arthritis is a systemic disease. The frequency of extra articular manifestation justifies the concept of Rheumatoid disease. This disease is one of the main causes which are responsible for temporary or permanent disablement amongst the society. Since the disease is a burning problem to the society due to its crippling nature, the problem is further hightened due to lack of any harmless specific drug. Hence, the efforts to ascertain the efficacy of Ayurvedic compound has been taken up.

MATERIALS AND METHOD:-

The criteria for selection of the cases was as follows:

The cases of various Arthropathis with the symptoms of morning stiffness, pain in joints,swelling and tenderness(Sandhishula, Sandhishotha) were selected from the O.P. D. of the CRIA Hospital. All the cases were thoroughly examined according to Lakshanas described in the Ayurvedic texts. The necessary parameteric as well as non-parameteric laboratory investigations were done before and after the treatment.

The study was conducted in the I.P.D. cases, as an open clinical trial.

The cases which were having tophiformation the Ear and high rate of uric acid in Plasma were excluded due to Vata Shonitam.

PRINCIPAL DRUG AND THE SUPPORTING THERAPY:

A)	VATARI GUGGULU	500 Mg.
	YOGRAJ GUGGULU	500 Mg.
	VISHTINDUK VATI	250 Mg.
	KAISHORE GUGGULU	500 Mg.
		Three times a day with
	ANUPANA: RASNADI KWATHA	25 ml.
B)	AMAVATARI RASA	250 mg to 500 mg.
		Honey or plain water.

Abhyanga with Panchaguna taila as well as Mahanarayan taila was applied as and when required.

Swedana: Ruksha swedana (Baluka) or Vashpa swedana with Dashamula Kwatha/Nirgundi Patras was also done; specially in the cases of where it was required.

DIET: Routine hospital diet has been prescribed except Vatalahara Dravyas.

Duration of the treatment : 4-8 weeks.

Source of supply of the medicine :

The drug was supplied by the CRIA, New Delhi Pharmacy.

The details of the data of the study collected (in tabular form) with respect of age, sex, Prakriti were recorded.

Table showing the incidence of the age group.

AGE GROUP IN YEARS

1-10	11-20	21-30	31-40	41-5	51 and above	Total
--	2	6	5	8	11	32

SEXWISE INCIDENCE OF THE CASES:

MALE	FEMALE	TOTAL
6	26	32

STATEMENT OF THE PATIENTS STAY IN THE HOSPITAL IN DAYS:

01-20 days	21-60 days	and above
12	20	--

RESULT OF TREATMENT

Comp.Relf.	Marked R.	Mod.R.	Mild R.	No. R	LAMA	TOTAL
1	5	6	12	3	4	32

Referred: 1 Case

SUMMARY AND CONCLUSION:

Under the present study total 32 cases were admitted and treated/studied with Vatari guggulu, Yograj guggulu, Vishtinduk vati and Kaishore guggulu, three times in a day in the doses of 500 mg. Rasanadi kwath 25 ml. as Anupana.

Routine laboratory investigations were done before and after treatment. And thorough examination was done according to the Ayurvedic texts. In the cases of inflammatory nature associated with pain Kaishore guggulu plus Trayodashanga guggulu were found effective.

As the number of the cases were small hence further studies may yield some encouraging results. No adverse side effect has been reported by the patients.

ACKNOWLEDGEMENT:

Authors are highly indebted to the C.C.R.A.S. as well as Director, Dr. V.N. Pandey of the Council for providing the necessary help to conduct the study. Our thanks are due to Dr. H.R. Goyal, Deputy Director(Tech) and our colleagues and associates who have helped us in the study. Our special thanks are due to the Lab. staff as well as to Panchkarma staff.

"MATERNITY IN ANCIENT INDIAN MEDICINE"

By:- Prof. (Kum) P.V. Tewari
DEPARTMENT OF PRASUTI TANTRA
Institute of Medical Sciences
Banaras Hindu University, Varanasi- 5.

Maternity or motherhood a symbol of selfless love, sacrifice and dedication, a natural instinct of females refers in medicine to the subject dealing with conception, it's maintenance, nourishment and delivery. In ancient Indian medicine it is dealt under Kaumarabhrtya one of the eight specialities, the child being pivot, entire physiopathologies specific for women have revolved around it.

Though maternity or obstetrics and gynaecology are closely inter - related, and often described together, however, in present paper I shall limit myself to the field of maternity.

According to Indian philosophy reproduction is not merely a physiological function, rather it is a social obligation to be fulfilled by the couple, religious ritual to be observed during grhasthasrama. Naturally the practice of this branch is closely inter woven with social and religious customs, thus, the books of sociology and religion are flooded with the matter related to this branch. Thus, it is imperative to see the books of related subjected.

Fourth bramhana of VI Chapter of Brhadaranyaka Upanisad[1], deals with various excercises during coitus either to or not to have conception, specific diet etc. during pregancy according to desired qualities of offspring; embryology of Garbhopanisad[2]; qualifications of girl and man and method to know future of girl to be married in Aswalayana[3] and Apastamba grhya[4] sutras; classification of age of girl in Vaikhanasa upanisad[5] and Parasara smrti[6] vaidika garbha baijika and garbhika mantras as well as rtu sangamana, niseka or caturthi, garbhadhana, pumsawana, garbha raksana or anawalobhana, simantonnayana and sosyanti or ksipraprasuwan etc. home/ karma/ samskaras are ample evidences regarding availability of subject in these classics.

Good number of drugs or receipes not mentioned in ayurvedika, classics are also found in these books, such as-

Table No. (1)

Drug prescribed in other books but not in Ayurvedika classics.

Name of drugs or recipes (1)	Indication (2)	Reference (3)
Adhyanda	On Caturthi	Samkhayana Gr. Su. 1/19/2
Roots of Kakatani Macakacatani, Kosataki Brahti & Nili.	Paste to be smeard in the place of confinement to ward off Raksasas.	Sam. G Su. 1/23/1
Kusa- Kantaka and Somamsu	For Pumsawana	Paraskara, Gr.Su1/214.
Bile of tortoise	To be placed over the lap for pumswana	Gobhila, Gr.Su 2/6/1
Darbha and unripe young fruit of Udumbara.	During Simanta	Sam.Gr. Su.1/22/8.

1. Brhada. Upa.VI/4/ complete specially 9,10,11,14 to 20. 2. Garbhopa. III.
3. Aswala. Gr. Su. 1/5/5. 4. Apasta. Gr. Su. 1/3/10 To 20.
5. Vaikha. Upa. VI/12. 6. Paras. Smr. VII/6.

The women during pregnancy exhibits such a distinct features that even poets could not refrain themselves from describing these.

Vanabhata has described the features of queen Yasomati during intra-uterine stay of king Harsa Vardhana as under -

-Can not tolerate disobedience even in light mood.

-Wishes to take bath with the water of all four seas.

-Prefers to see her face in shining sword instead of stonestudded mirrors.

-Feels pleasure in the twang of bow-string rather than well played vina.

-Likes the sight of caged lions.

-Harsa - caritam-4

Atharvaveda, the fountain source of Ayurveda has very rich treasure of the subject. In this veda reference of vessels for menstruation and menorrhagia (A VI/17/1 to 4), rtukala (AV. III/20/1; VI/139/5; VIII/9/10), woman as field and man in possession of seed for conception (AV. XIV/2/14), visible and invisible sukra (AV.XIV/1/10); importance of healthy condition of woman for achieving conception (AV. XVIII/3/57), garbhadhana (AV.V/25 complete), pumsawana (AV VI/II complete), induction of abortion (AV.V/17/7), preterm deliveries (AV.VI/17 complete), abortion and intra- uterine death specially due to infection(AV.II/25/3, AV. VIII/6/9 and 22 etc;), specific protection of pregnant woman(AV.XIV/2/7); mechanism and management including surgery for labour (AV.I/II complete specially 1,3, to 5), are ample evidences.

It is not possible to enumerate all these, I will just explain in short the process of labour described in this Veda.

"At this birth, O Pusan, let Aryaman (as) efficient (Vedhan) invoker utter Vasat for thee, let the woman rightly engendered be relaxed, let her joints go apart in order to give birth." (Whitney)[1]".

Sayanacarya has explained it a verse for delivery of alive child without pain, with the relaxation of ligaments of joints likely to obstruct the labour[2]. During pregnancy specially delivery due to action of relaxine hormone the ligaments of joints specially pelvic ligaments are relaxed, which helps in easy delivery, probably this verse refers to that.

"Let Pusan (?) unclose (her or it) we make the yoni go apart, do thou Susana loosen do thou Biskala, let go."(Whitney)[3]

---

१ वषट् ते पूषन्नस्मिन्त्सूतावर्यमा होता कृणोतु वेधाः ।
सिस्रतां नार्यृतप्रजाता वि पर्वाणि जिहतां सूतवा उ ।।अ०वे०१।।११।१

२ हे पूषन् । अस्मिन् सूतौ इदानीं सम्प्राप्ते सुख प्रसवकर्मणि ।
यस्त प्रजाता सत्यप्रसवा जीवदपत्या सती, सिस्रताम् प्रसवजनित
क्लेशाद् विनासृतामवतु, अवलेशेन प्रसूतामवतु इत्यर्थः ।
पर्वाणि प्रसवनिरोधकाः सन्धिबन्धाः, वि जिहताम् विगच्छन्तु विलयामवन्तु इत्यर्थः ।। अ० वे १।११।१ का सायणाचार्यभाष्य ।

३ सूषा व्यूर्णोतु वि योनिं हापयामसि ।
श्रथया सूषणे त्वमव त्वं विष्कले सृज ।। अ० वे १।११।३

According to Sayanacarya [1] this verse refers to initial removal of covering of fetus (artificial rupture of membrane), then dilatation of yoni (ironing a process done to help in delivery). Viskali or sutimarut (apana vayu) propells the fetus with its face as downwards(during second stage internal rotation of fetal head occurs and with exaggarated flexion face become much downwards).

Susa or Susani the accoucheuse goddesses are symbolic referring to the lady helping the parturient woman. In this verse assistance given to the delivering woman as well as mechanism of labour is described.

" I split apart the urinator, apart the yoni, apart the (two) groins, apart both the mother and child, apart the boy from the after birth, let the after birth descend (Whitney).[2]

The verse refers to some surgical interference and artifical rupture of membranes to deliver the child and then expulsion of placenta.

It appears that during the period of this Veda, abortions were induced, but were not socially accepted, thus, the person resorting to this procedure was punished by wife of Bramhana [3]

Preceding description shows the deteriority and command of knowledge hidden in this Veda.

Amongst available ayurvedika classics of ancient period in Caraka Samhita, considered to be the oldest book, physiology of mensturation, fertilization, descend of garbha, garbha (zygote, embryo, fetus) dauhrda, pumsawana karma, clinical features of pregnant woman, antenatal care, principles of treatment of the diseases afflicting the pregnant woman, udavarta of a pregnant woman, abortions, upavistaka- upasuska -bhutahrta- garbha etc. fetal disorders, teratological abnormalities, accouchement ward, labour, puerperium etc. have been described.

In Susruta Samhita the book on surgery, comparatively detailed anatomy of female reproductive system, consent of guardian and other intricate details of obstructed labour are described, besides, this, other matter related the subject is also added such as----

1. Stri-sukra, physical changes preceeding menarche, formation of artava also alongwith sukra from rasa in one month, formation and function of raja, age of menarche and menopause, accumulation of blood within uterine vessels for whole month in menstrual cycle; effects of use of mascara etc. and coitus during menstruation, effect of seeing husband on fourth day of menstruation and rtu kala.

2. Functions of mahabhutas in development of embryo, formation of placenta, effect of diet of mother on body complexion of fetus, development of colour of eyes, descend of two

---

१ सूषा । सावित्री प्रजनयिनी देवता, व्यूर्णोतु गर्भं विगतावरणं करोतु । विहापयामसि विहापयामः विवृतं कारयाम । श्रथय गर्भिण्याः सन्धिबन्धना विमुञ्च सूषजे सूषजिः सुखप्रसवकारिणी देवता । त्वम् अपि मदीयेन अनेन सुखप्रसवकर्मणा प्रीता सती । विष्कले विष्कलिः सूतिमारुतः । त्वम् अवसृज गर्भम् अवाङ्मुखप्रेरय ॥ अ० वे १।११।३ का सायणाचार्यभाष्य ।

२अ वि ते भिनद्मि मेहनं वि योनिं वि गवीनिके ।
वि मातरं च पुत्रं च वि कुमारं जरायुणाव जरायुं पद्यताम् ॥अ वे १।११।५

२आ भिनदि विदारयामि गवीनिके योनेः पार्श्ववर्तिन्यो निर्गमन प्रतिबन्धके नाड्यौ जरायुकुमारावपि परस्परं विश्लिष्टौ करोमि ।
अ वे १ । ११।५ का सायणाचार्यभाष्य ।

३ ये गर्भा अवपद्यन्ते जगत् --------- ।
----------- ब्रह्मजायाँ हिनस्ति तान् ॥अ० वे० ५।१७।७

jiwas in twin pregnancy, birth of bone-less fetus, cause of absence of cry, micturition and defecation by fetus.

3. Cause of breast changes during pregnancy, clinical features of twin pregnancy, use of meat soup in forth, goksuru in sixth and basti in eighth month of pregnancy and hyper-emesis gravidarum.
4. Definition of garbha-srava and garbha-pata, treatment of various complications of abortion, monthwise treatment of abortions, clinical features of garbha-vrddhi and garbha -ksaya, advise for termination of pregnancy.
5. Construction of accouchement room with different woods according to caste of woman, causes of labour, treatment of garbha-sanga, manual removal of placenta and obstructed labour.
6. Period of puerperium, care of puerperal woman on the basis of her place of living, makkalla- sula, rakta- vidradhi.

Omission of description of liquor- amni by Susruta the surgeon of such high repute, is difficult to explain.

Latter authors i.e. Vagbhata, Kasyapa etc. have also advanced the knowledge of this speciality which can be summarized in following ways.

Constribution of Astanga Samgraha:

1. Presence of raja or sonita from early childhood, amount of raja.
2. Explanation of cause of birth of female or male child by coitus done on odd or even days respectively.
3. Rajasika and tamasika features of fetus, effect of place of living, season, profession and colour of sukra on the body complexion of pregeny, presence of dauhrda in forty five days, roma- raji.
4. Effect on the fetus of the diet capable of vitiating vata etc. dosas by pregnant woman, method of giving basti to a pregnant woman.
5. Comparatively detailed description of abortion etc, clinical features and treatment of upavistaka and upasuska-garbha associated with vitiation of vata etc. dosas and vatodara.
6. Use of skin over the bed for labour, bath to a puerperal woman, treatment of yonibhrmsa of a puerperal woman, raksakarma on sixth night after delivery.

Astanga -Hrdaya has described almost entire subject given byAstanga Samgraha albeit in summarized way except mention of viskambha mudha-garbha instead of its' different presentations/ positions.

Contributions of Kasyapa Samhita

Variation in duration of rtu- kala in different castes, principles of treatment of diseases afflicting the woman in differnt months of pregnancy, treatment of vomiting during pregnancy on the basis of dominating dosa, detailed treatment of diseases of pregnant woman, effect of smoking etc. given to a pregnant woman suffering from fever, mention of various menstrual

disorders, abortions, intra-uterine and neo-natal deaths etc under the heading of Jataharini, varanabandha, effect of avies (labour pains) on labour, colour of 'show' according to sex of the fetus, cause of reappearance of menstruation after delivery, comparatively detailed management of puerperium on the basis of place of living and also sex of born child, puerperal disorders and their elaborate treatment are it's contribution.

Contribution of Madhava Nidana

Sutika-rogas are enumerated in this book.

Contributions of Harita Samhita:

Classification of epochs of woman's life in bala and mugdha etc, acceptance of retas as different from Sukra, classification of mudha-garbha on the basis of dosas i.e. vataja etc. monthwise treatment of excessive quivering of fetus.

Later authors of this period have almost followed the foot steps of their predecessors. Ubhaya- trimsaka -yantra for help in delivery described in Vrndamadhava;[1] dreams indicating birth of male child, clinical features during antenatal period indicating still birth, use of milk with specific single drug in different months of pregnancy, month wise treatment of pain during pregnancy, vesico -vaginal fistula due to injury during delivery of obstructed labour alongwith it's treatment, recipes for the treatment of vaginal ulcer and laxity of vaginal canal after delivery in Yogaratna-Samuccaya[2], local constraceptive and abortifacients in Rajamartanda[3] and treatment of abdominal laxity after delivery in Vangasena[4] can specifically be considered as contributions of these books. Besides this good number of recipes have been added.

It is clear from preceeding description that there has been a continuous progress, albeit slow, in advancement of knowledge of the subject.

It is not possible to discuss whole subject in one paper. I will deal only three aspects i.e. preventive obsterics or the measures described to prevent maternal/fetal complication; abnormal labour including obstetric surgery and contraceptives now- a -days considered as a part of postnatal management.

Preventive obstetrics can be discussed under following headings.

1. Physical fitness and proper age for marriage.
2. Hygiene and asepsis.
3. High spirit or good psychological status of woman during various stages of reproduction.
4. Pathya or congenial diet.

---

1. Vrndamadhava Stri-roga/18
2. (a) Yogaratna-Samu. Vandhyadi-roga Ci. 21/31 to 33, 91 to 93, 123, 126, 277 to 284.

२ब. मूढगर्भापहरणे वस्तिर्यस्यास्तु मिषते ।
नरवेनान्येन वा योनौ सवेदच्छं जलं सदा यो० र० समु० २१-२७&

3. Rajam. Stri- roga/ 16 to 18 and 31.
4. Vangasena Stri-roga, 69/298.

1. Physical fitness and proper age for marriage:

In bala, vrddha, hungry, thirsty woman, suffering from chronic diseases, the impregnation in contra- indicated[1]. Fit age of conception is said to be sixteen years[2] which is also accepted as best age for pregnancy from purely obstetrical point of view. Young girl due to physical and psychological immaturity and old lady due to physical and psychological decline will not be able to nurture the child properly. It is proved beyond doubt that the incidence of chromosomal abnormalities, Down's syndrome, premature labour, etc. is more in the woman concieving after the age of thirtyfive years specially for the first time. Chronically ill woman can infect her child or be a cause of premature labour and intra-uterine growth retardation leading to various physical and psychological abnormalities.

2. Hygiene and asepesis:

This can be discussed under following sub- headings:

a) Specific mode of life during menstruation.

b) Isolation of parturient woman in accouchement ward and maintenance of asepsis.

c) Proper management during puerperium.

d) Cleaning of surgeon's hand to deliver the fetus.

(a) **Specific mode of life during menstruation:**

The woman was to be isolated, bath, unction, mascara[3] etc. were contra- indicated.

Though scientific value of various restrictions may be questioned, but these restrictions carry a hidden message that since, during menstruation natural defence of the reproductive system is lost and the woman is more vulnerable to contact infection specially if she bathes in pool, river etc. or have coitus, thus, is advised to lead a segregated life.

(b) Isolation of parturient woman in accouchement ward and maintenance of asepsis:

Well protected, lighted, ventilated, comfortable in all the seasons, accouchement- ward equipped with raksoghna and other drugs and instruments needed during delivery was constructed with wood at a distant place from normal dwelling accomodation. The expectant woman lived in this ward from ninth month. Entry in this room was restricted. This room was well fumigated, constant burning fire was kept there. All these measures maintain aseptic condition in the ward. Stay of woman for few weeks preceding delivery works as quarantine, she is also separated, lest she catches infections[4].

1. Ca. Sam. Sa. 8/6; Su. Sam. Sa. 10/43, 44; As. San. Sa.1/5 & 58; A.H.Sa. 1/9, Bhe. Sam. Su. 7/5 to 7.
2. Ca. Sam. Ci. 2-4/40 to 42; Su. Sam. Su. 35/9; As.San. Sa. 1/4; A.H. Sa. 1/8,9.
3. 1Ca. Sam. Sa. 8/5,Su. Sam. Sa. 2/24, 25; As. Su. Sa. 1/44,45;A.H. Sa. 1/24 to 26.
4. Ca. Sam. Sa. 8/33 to 35 ; Su. Sam. Sa. 10/3; As. San. Sa. 3/15,16; A.H. Sa. 1/73, 74 and Bhe. Sam. Sa. 8/6.

(c) **Proper cleaning during puerperium:**

Hot water bath atleast twice in a day was essential[1]. Specific raksoghna measures were prescribed[2].

The woman was made to sit over a chair covered with leather -bag filled with hot balataila[3]. This will prevent any contact of infection.

(d) **Proper cleaning of surgeon's hands to deliver fetus etc:**

Nails of the surgeon's hand should be properly cut[4] and cleaned was the advise, because these may carry infection.

3. Good pysochological status of woman:

Psychological well- being of woman was given very high importance.

From fourth day of menstruation, when she is preparing herself to meet her husband from that period upto the puerperium, she is to remain happy and in high spirit. Desires or other features of dauhrda indicate character of offspring, such as if the woman desires to see a king she will have a son of high fortune etc[5].

Psychological environment such as during putrestiyajna influences psychosomatic development of offspring. Unhappy mood etc. can cause various abnormalities such as-

---

1. Ca. Sam. Sa. 8/48; Su. Sam. Sa 10/15,16; As. San. Sa 3/38 A.H. Sa. 1/94 to 98, Ka.Sam. Kh. 11/22 to 27
2. सूतिकायाः विशेषेण रक्षोघ्नानि हितानि च।का० सं० खि० १०/१८२
3. चर्मावनद्धामासन्दीं बलातैलोष्णपूरिताम् ।
   अध्यासीत सदा सूता तथा योनिः प्रसीदति ।। का० सं० खि ११/२० -२२
4. Su. Sam. Ci. 15/4; As. San. Sa 4/38
5. Su. Sam. Sa. 3/15

Table No-(2)

State of life	Effect on the child
Forth day of menstruation[1].	Emulates the character according to thoughts.
Coitus (averse, frightened, sorrow-striken, angry, longing some one else).[2]	Infertility, physically or psychologically abnormal child.
Putresti-yajna.[3]	Influences complexion of child.
Anatenatal period including dauhrda.[4]	Physical and psychological abnormalities in child, abortion, intra- uterine death of fetus and obstructed labour.
Labour.	Prolonged labour.
Puerperum.[5]	Decrease in quantity of milk.

4. **Pathya or congenial diet:** During every stage of life, may be physiological or pathological regulated dietetic regimen has been much emphasized, naturally various stages of reproductive function are also not exception. Salient features of the dietetic regiment are as under :-

(a) During menstruation: - During menstruation the woman is advised to take havisya[6]. (cooked sali rice with ghrta or barley prepared with milk) or yawaka[7] (edibles prepared with barely). Yawa is lekhana, beneficial for vrana (ulcers), increases the excretion of flatus and feaces, suppresses pitta and kapha. These proporties may help in proper discharges of endometrium and menstrual blood, then it's regeneration etc.

---

1. (a) पूर्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमङ्गना । तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्तारं दर्शयित्त ।।सु० स० शा० २/२६
   (b) As. San. Sa. 1/46; A.H. Sa.1/27 and Ka. Sam. Sa. Jati /7.

२. (a)गर्भोपपत्तौ तु मन स्त्रिय य जन्तु व्रजेत्तत्सदृश प्रसूते ।
   च० स० शा० २/२५
   (b) Ca. Sam. Sa. 8/6; Su. Sam. Sa. 10/44 and As. San. Sa. 1/58.

3. Ca. Sam. Sa. 8/10, 11; ka. Sam. Sa. Jati/8.

4. Ca. Sam. Sa. 4/15/17/19 & Sa. 8/24, 30; Su. Sam. Sa. 3/14, 15 & Ni. 8/2 & 10; As. San. Sa. 2/19 to 21; A.H. Sa. 1/53, 54.

5. (a)क्रोधशोकावात्सल्यादिभिश्च स्त्रिया स्तन्यनाशो भवति ।। सु० सं० शा० १०/२४
   (b) As. San. U. 1/24, A.H. U. 1/17.

6. Su. Sam. Sa. 2/25,

7. As. San. Sa. 1/44.

(b) During rtu kala: Before conjugation but during rtu-kala the woman should consume oil and masa etc.[1], because the oil etc. increase pitta there-by artava which is an essential female component for conception.

(c) Prior to conception: Colour of the articles to be taken in diet should be identical to the complexion desired for offspring[2] is the advise of Caraka and kasyapa referred in Putr yajna.

(d) Antenatal period: Exhaustive account of 'to eat' or not' to eat' for pregnant woman is prescribed in Ayurvedika classics. She is advised to take mainly butter, milk, ghrta, liquid, sweet and palatable diet medicated with appetizing drugs[3]. Excessive heavy, hot and pungent articles and intoxicants like wine etc.left over and putrified articles are contra-indicated, because these can cause abortion or intra -uterine death of the fetus.[4] Specific dietetic regiment for different gestational months is also prescribed. In first month use of milk or ghrta,saliparni and palasa and water boiled in pot made of silver or gold[5]. In second month milk treated with drugs of madhura group[6]. In fourth month meat -soup and in sixth month ghrta medicated with goksuru [7] deserve special mention. For first three months the woman often has nausea, vomiting etc., thus, use of liquid, sweet and cold things will prevent vomiting and mal-nutrition. From forth month muscular tissue of fetus starts developing requiring more protein and use of meat -soup will be helpful in maintaining maternal and fetal growth. In third trimester water accumulation and urinary stasis is common problem and regular use of goksuru will prevent this complication.

Dauhrda is a special description of Ayurveda which denotes vicarious desires of the pregnant woman, actually these indicate specific deficiency, their supplementation help in maintenance of proper maternal and fetal development.

(e) During normal puerperium: After delivery when the woman feels appetite, medicated fats or medicated jaggery water should be given, once these are digested, midicated yawagu, mixed with milk and ghrta should be given. This should follow use of meat-soup and light diet[8] etc. After delivery, due to sudden increase in the intra - abdominal space for the

---

1. Ca. Sam. Sa. 8/4, Su. Sam. Sa. 2/28; As. San. Sa. 1/54, As.Hr. Sa. 1/21 and Ka. Sam. Sa. Jati. /3.
2. Ca. Sam. Sa. 8/9 to 12, Ka. Sam. Sa. Jati./8,9
3. Su. Sam. Sa. 10/2, A.H. Sa. 1/42, 43.
4. Ca. Sam. Sa. 4/18 and 8/21; Su. Sam. Sa. 10/2; As. San. Sa. 2/60, 61; A.H. Sa. 1/45.
5. As. San. Sa. 3/3.
6. Ca. Sam. Sa. 8/32; As. San. Sa. 3/4.
7. Su. Sam. Sa. 10/3.
8. Ca. Sam. Sa 8/48; Su. Sam. Sa. 10/15

bowels some digestive upset does come, above mentioned diet will take care of digestive capacity as well as caloric requirement of the body.

(f) <u>During abnormal puerperium</u>: For first three days powders, decoctions or pastes of drugs mixed with fat should be given. This helps in excretion of dosas, relieves stiffness and pain of flanks and vagina. This should be followed by fats in the morning and asawa or aristas in the evening for seven days. For next ten days milk medicated with drugs capable for suppressing vata, for another ten days meat -soup should be given. After this one month, light and congenial diet in little quantity should be taken for further three months[1].

<u>Abnormalities of labour.</u>

Now I shall discuss salient features of abnormalities of labour. These abnormalities can be discussed under following heading :-

(a) Premature labour.

(b) Postmature labour.

(c) Ante-partum haemorrhage

(d) Prolong labour

(e) Obstructed labour.

(a) **<u>Premature labour:</u>** Contra- indication of coitus on third day of menstruation as the child conceived may deliver abnormally[2], unstability of ojas in 8th month,[3] difference in the management of kala- prasuta (timely delivered woman) and akala - prasuta (delivered in abnormal period)[4] are ample evidences of premature labour. Harita has specifically mentioned that the child propelled by vayu delivered prematuraly is weak[5]. Arunadutta says that though the child born in seventh month does survive but is weak and terms it as akala- prasava.[6] In Madhukosa Commentary, delivery in seventh month is termed as viprasava[7].

---

1. Su. Sam. Ci. 15/13; As. San. Sa. 4/45 to 50; A.H. Sa. 2/41 to 46
2. Su. Sam. Sa. 2/31, As. San. Sa. 1/5 ka. Sam. Sa. Jati/5 & Bhe. Sam Sa. 5/5.
3. Ca. Sam. Sa. 4/24; Su. Sam. Sa. 3/16; As. San. Sa. 2/26, A.H. Sa.1/62,63;
4. अपप्रजातारोगांश्च चिकित्सेदुत्तरद भिषक (अपप्रजाता अकाल प्रसुताडल्टण सु० सं० उ० ३८।१६ एवं डल्टण टीका
5. अथ दोषबलेनापि गर्भो वापि प्रसूयते। वातसम्प्रेरिते गर्भे अपूर्णदिवसैर्यदि ।
प्रसूयते वाऽप्यथ तं गर्भं बालः प्रदृश्यते ।।हा० सं० षष्ठ १।२४ २५
6. A.H. Sa. 1/58 Arunadatta commentary.
7. M. M. 64/2 Madhukosa Comm.

(b) **Post mature labour**: Intra- uterine stay of fetus after 10th or 12th month is said to be abnormal[1] which is caused due to construction of exit passage or yoni by vayu[2]. According to Susruta lina- garbha also is a condition of prolong intra-uterine stay due to spasm of exit passage[3]. All these are ample evidences of post maturity.

(c) **Antepartum haemorrhage**: In the definition of obstructed labour it is mentioned that vitiated apana-vayu troubles or kills the young fetus by bleeding per vaginum which refers to be revealed antepartum haemorrhage[4].

Makkalla of aprajata or pregnant woman is explained by Dalhana that displaced fetus obstructs the passage of blood discharged in the uterus. This blood accumulated inside the uterus and matabolised causes very severe pain which refers to concealed antepartum haemorrhoage[5].

(d) **Prolong labour:** Treatment of garbha-sanga, delay or arrest to the progress of labour refer to prolong labour[6].

(e) **Obstructed labour**: Obstruction to the labour could be due to fault in passage, passanger and power.

(i) **Fault in the passage**: Abnormalities of soft passage i.e. uterus, cervix or perineum and bony pelvis can cause obstruction to the labour and later-on even rupture of uterus.[7]

These condition have been described in following way:

---

1. C. Sam. Sa. 4/25; Su. Sam. Sa. 3/16 As. San. Sa. 2/30 & A.H. Sa. 1/66.
2. (a) वायुश्च कुपितस्तु गर्भान् अतिकालं धारयति ।।च० सं० सू० १२।८
   (b) A.H. Sa. 1/66 Arunadatta commentary.
3. Su. Sam. Sa. 10/50 with Dalhana commentary.
4. Su. Sam. Ni. 8/3;As. San. Sa. 4/27
5. Su. Sam. Sa. 33/11 with Dalhana commentary.
6. Su. Sam. Sa. 10/10; As. San. Sa. 3/33; A.H. Sa. 1/83, 84.
7. गर्भकोपपरासङ्गो मक्कल्लो योनिसंवृतिश्च ।
   हन्युश्च स्त्रियं मूढ गर्भे यथोक्तश्चाप्युपद्रवाश्च ।। सु० सं० सू० ३३।११

Table No.(3)

Actual description	Abnormality of passage.
1. Garbha -Kosa apannata.[1]	Congenital or acquired abnormalities of uterus i.e. uterus -arcuatus, didelphys and fibroid-uterus etc.
2. Yoni -samvrti or yoni- samvarana.[2]	Cervical dystocia or non dilatation of cervix.
3. Bhaga- sahkoca due to shyness.[3]	Psychogenic perineal rigidity.
4. Yoni-bramsa.[4]	Cervical prolapse.
5. Asamyak - apatya - patha or anirasyamana.[5]	Abnormalities of bony pelvis

(ii) Fault in the passenger : The passenger or fetus may have abnormality of it's size i.e. over -size,[6] or presentation and position.[7]

(iii) Fault in the power: Arrest in the progress of labour due to abnormality of apana- vayu[8] slow movement of fetus[9] garbha- sanga [10], treatment in the failure of descend of fetus etc. [11], hint towards ineffectual uterine action, while stony hardness of abdomen, excessive pain without avies [12] or labour pain and makkalla [13] refer to hypertonocity of uterus. Cervical dystocia in already discussed.

---

1. गर्भकोषसमापन्नो मकुष्टो (मकुष्ठ) योनिसङ्गतः ।
   हन्युः स्त्रियं मूढ गर्भे यथोक्ताश्चाप्युपद्रवाः ।। हा० सं० द्वि० स्था० ४२।।
2. Sus. Sam. Ni. 8/4; As. San. Sa. 4/31; A.H. Sa. 2/38
3. अथवा लज्जया स्त्रीणां सङ्कोचात सङ्कुचितेभगे
   मूढगर्भश्च जानीयात् ।।हा० सं० तृ० स्था० ५२-१ से ३
4. Same as No. 2
5. Su. Sam. Ni. 8/3 As San. Sa. 4/29
6. Su. Sam. Ni. 8/3 As. San. Sa. 4/28
7. Su. Sam. Ni. 8/4; As. San. Sa. 4/39; Ma. Ni. 64/4,5.
8. Su. Sam. Ni. 8/3; As. San. Sa.4/29.
9. Ha. Sam.2/4/41.
10 Su. Sam. Sa. 10/10; As. San. Sa. 3/33 & As. H. Sa. 1/83, 84.
11. Ca. Sam. Sa. 8/38.
12. Ca. Sam. Sa 8/30; Su. Sam. Ni. 8/9; As. San. Sa. 4/28; As. H. Sa.2/23 24
13. Su.Sam. Su. 33/11 & Ni. 8/4; As. San. Sa. 4/31; A.H. Sa. 2/38

<u>Obstetric Surgery:-</u> Obstetric surgery refers to evacuation of uterus in incomplete abortion, induction of abortion and labour, manipulation or surgical interference to deliver fetus or placenta. All these procedures are described in classics.

(a) <u>Evacuation of uterus in incomplete abortion:</u> The woman should be treated with tiksana drugs or measures (curettage) till the ama - garbha is completely expelled, because if any portion is left, it troubles her[1].

(b) <u>Induction of abortion</u>: Susruta has included use of garbhasatana (abortifacient) drugs as cause of abortion and obstructed labour. This shows that drugs were used to terminate pregnancy[2]. Termination of pregnancy is also indicated if the woman is unable to withstand trouble[3] or else if upvistaka and upasuska garbha do not grow/develop inspite of best treatment[4].

(c) <u>Induction of labour:</u> In cases of postmaturity indications to induce labour are avai lable[5].

(d) <u>Surgery to deliver obstructed fetus:-</u>Intricate details of manipulation or surgery for delivering obstructed fetus is given.Consent of guardian was precondition for any interference in delivery[6]. This indicates high standard of medical ethics. Manipulation/surgery was to be done by wise person[7] who has seen several such ooperations[8], on the patient who is kept empty stomach[9], in supine position with flexed thighes and elevated hips[10] (lithotomy position). Initially by doing cephalic or podalic

---

1 आमगर्भ शेषेण हि पुनः पुनः शूलमनुषज्येत ।
तस्मात्तीक्ष्णैसवशेषयन्नुपाचरेत् अ० सां ४।।

2. Su. Sam. Ni. 8/2.

3. अविषह्ये विकारे तु उश्रेयो गर्भस्य पातनम् ।
न गर्भिण्याः विपर्य्यासः प्राप्तकाले न ।।

4. एवमवृद्धौ तीक्ष्णैविरिचयेदपरापातनीयैश्च पातयेत् ।। अ० सं० शा० ४।२२

5. कालातीतस्थायिनि गर्भे विशेषतः सधान्यमुदूखले
मुषलेनापि हन्याद् विषमो वा यानासने सेवेत ।।सु० सं० शा० १०।५०

6. su. Sam. Ci. 15/2; As. San. Sa. 4/37; As. Hr. Sa. 2/26

7. Su. Sam. Ci. 15/9; As. Hr. Sa. 2/36.

8. As. San. Sa. 4/35

9. Su. Sam. su. 15/12.

10. Su. Sam. Ci. 15/4; As. San. Sa. 4/38

bimanual version delivery was attempted, after death of the fetus and failure by manual extraction various destructive operations were done[1]. Laparotomy was practised to extract alive fetus after accidental death of woman[2]. Placenta was delivered with the help of drugs, manipulations, basti and in the event of failure of all these by manual extraction[3].

Contraception:-

Except references of historical importance in Atharvaveda[4], and Brahadaranyaka upanisad, [5] unequivocal description of contraceptive drugs/ methods of practical utility is lacking upto 11th century, however indirect reference for abstinence, safe, period, incomplete coitus are available. From 11th century onwards contraceptive/abortifacient drugs were used.

(a) Abstinance: Coitus was done to get the child, naturally it can be understood that when desired number is achieved, abstinance should be practised.

(b) Safe period: Rtu-kala is described as the period of optimum fertilization, once rtu-kala is over,yoni of the woman gets constricted, thus, does not permit the entry of sukra in its inner component[6]. Rtukala refers to proliferative phase including ovulation. After ovulation due to effect of progesteron hormone cervical mucus becomes hostile to sperm penetration, which is indicated in above description. If one does not want a child then should have coitus after rtukala or it refer to safe period.

(c) Incomplete coitus: During coitus lateral or hump back position of woman is contra-indicated, because in these positions woman does not concieve[7]. In these positions probably coitus becomes a type of incomplete coitus due to incomplete penitraction of penis or in other word this refers to incomplete coitus.

(d) Contraceptive drugs: In Yogaratna-Samucoeaya[8] three, and in Cakradutta[9] two, oral recipes are described for puspa- nasa or rajo harana {causing anovulationo ramenorhoea}respectively. Out of two recipes of Cakradutta one has been described as

---

1. Su. Sam. Ci. 15/5 to 7; As. San. Sa.4/39 to 41.
2. Su. Sam. Ni. 8/11; As. San. Sa. 4/52; Vangasen Stri-roga. 38/191.
3. Ca. Sam. Sa. 8/41; Su. Sam. Sa. 10/18 & Ci. 15/11;As. San. Sa. 3/34 (1 to 7), As. Hr. Sa. 1/84 to 90
4. (.AV. VI. /138/4,5, VII/37/1,2.
5. Brhada VI/4/10.
6. पद्मसङ्कोचमायाति दिने अतीते यथा तथा ।
ऋतावतीते योनिः सा शुक्र नान्तःप्रतीच्छति।। अ० सं शा १।४२
7. Ca Sam. Sa.8/6,As. .San.Sa.1/58,59
8. Yogaratna Samu. 21/285 to 287.
9. धात्र्य[illegible]नाभयाचूर्णं तोयैर्पीतं रजोहरेत
शेलु[illegible]पिष्टं पक्षणाध्वतदर्घकृत् चक्रदत्त योनिव्या०।।२३

oral contraceptive in Bhaisajyaratnawali[1] a book of twentieth century,on the logic that once raja is finished the question of conception does not arise. With this analogy all the recipes prescribed for puspa or rajonasa can be considered as oral contraceptives. Unequivocal description of two recipes to be used per vaginum and one to be tied in waist is seen in Rajamartanda.[2]

Preceding description clearly shows that good treasure of knowledge related to maternity is available in the books of ancient indian medicine.

---

1. रसाञ्जनं हैमवती वयस्था चूर्णीकृतं शीतजलेन पीतम् ।
रजोविनाशं नियतं करोति शङ्कात्र का गर्भसमागमस्य ।।भै० र० स्त्रीरो० ।१५४।
2. Rajamartanda Stri- roga. 31/16 to 18 and 31.

REFERENCES

1. (a) Atharvaveda (Saunakiyah) with comme. of Sayanacarya. Ist Edt. (1960) to (1969) Pub. by Viswabandhu. Visweswarananada Vaidika Shodha Samsthana Hosiyarapura.

   (b) Atharvaved Samhita, translated by Willian Dwight Whitney, Ist Edt. (1962) Pub. by Motilal Banarasidass Delhi- Patna, Varanasi.

2. Astanga sangraha : Hindi comme. by Atri Deva Gupta, Ist Edt. (1951) Pub. by Nirnayasagar Press, Bombay.

3. Astanga Hridaya: Hindi Comme by Lal Chandra Vaidya. Ist Edt. (1965) Pub. by Motilal Banarasi Dass, Varanasi.

4. Apastamba Grhya Sutra: Qutoed from Vol. XXX of" Sacred books of the east" Edt. by F. Max Muller, Pub. by Oxford Uni. Press Reprint, Motilal Banarasi Dass, New Delhi, Varanasi, Patna(1967)

5. Aswalayana Grhya Sutra: Quoted from Vol. XXIX "Sacred books of the east" (Ref. no. 4).

6. Garbhopanisad: Astavimsatyupanisadah, Ist Ed. (1965). Pub. by Prachya Bharati Prakashan Kamachha, Varanasi.

7. Gobhila Grhya Sutra: Ed. by Chintamani Bhattacharya 2nd Ed. 1982; Pub. by Munshilal Manshora Lal, New Delhi.

8. Cakradutta : Hindi Comm. by Jagdish. Prasad Tripathi, 5th Ed. 1983, Pub. by Chawkhambha Sanskrit series office, Varanasi.

9. Caraka Samhita: Hindi Comm. by Kasinath Sastri. Ist Edi. (1969) Pub. by Chawkhamba Sanskrit series office, Varanasi.

10. Parasara Smrti: Quoted from "Dharma Sastra ka Itihasa" by P.V. Kane; 3rd Ed.. 1980, Pub. by Director Uttar Pradesh Hindi Sansthan, Lucknow.

11. Brhadaranyaka upanisad(See ref. no. 6).

12. Bhela Samhita : Ist Edi. (1959) Pub. by Chawkhambha Vidya Bhawan Varanasi.

13. Bhaisajyaratnawali: 6th Ed.(1955) Pub. by Motilal Banarasi Dass, Varanasi.

14. Madhava Nidana: 2nd part ; 2nd Edi. Pub. by Mehara Chandra Laksamana Das, Delhi.

15. Yogaratna Samuccaya: Part III. Ist Edi. 1947 ; Edi. by V.A. Ramaswami Shastri Govt. Press, Trivendrum.

16. Rajamartanda: Hindi Comm. by Pawani Prasad Sharma, Ist Edi. (1966) Pub. by Chawkhambha Vidya Bhawan, Varanasi.

17. Vangasena: Hindi Comm. by Dr. R.K. Rai ; Ist Edi.(1983) Pub. by Prachya Prakashana, Varanasi.

18. Vaikhanasa Upanisad: (As no. 6).

19. Vrndamadhava: 2nd Edi. (1943) Pub. by Mahadeva - Chimmanaji Apte, Anandashram Mudranalaya, Bomaby.

20. Sankhayana Grhya Sutra: Vol XXIX of "Sacred books of the east" (Ref. No. 4).

21. Susruta Samhita: Comm. by Dalhana, Ist Edi. Pub. by C.K. Sen & co; Calcutta.

22. Harsa Charitam of Vanabhatta: Hindi Comm. by Jagannatha Pathak ; Ist Edi. 1958 Pub. by Chawkhambha Vidya Bhawan, Varanasi.

23. Harita Samhita : Hindi Comm. by Ravi Dutt Shastri, Ist Ed. 1950, Pub. by Luxmi Venketshwar Press, Kalyan, Bombay.

PHILOSOPHY OF AYURVEDA

BY: Prof. Priya Vrat Sharma, AMS(BHU), M.A. (Sanskrit) , M.A. (Hindi), Sahityacharya (Bihar).

At the outset I offer my homage to the Founders of this Great Charitable Institution in whose memory this oration has been organised. I also remeber my close association with Pt. Haridatt Shastri and Dr. M.L. Dwivedi erstwhile Directors of the hospital who are no more with their valuble services to Ayurveda and this Institution in particular. I also offer my homage to them.

Philosophy and science are inter- related. Science evolves in the background of philosophy and philosophy finds its expression in science. Infact, Science is practical application of philosophy makes its theoretical foundation.

Ayurveda-

The original medicine of India is properly known as Ayurveda but, in reality, Ayurveda is 'Science of life'. From the definition of Ayurveda given in the Carakasamhita [1] (CS) it appears that only a quarter of Ayurveda is related to medicine as it deals with wholesome and unwholesome items of life. The other three quarters deals with other aspects of life as God almighty who creates the universe only with a quarter of His power while three quarters are beyond it [2]. Moreover, as Ayurveda deals with life general it is not restricted to human being only but is applied to other living creatures as well. That is why one finds Gaja-Ayurveda (Elephant-medicine), Asva-Ayurveda (Horse-medicine) Gava-Ayurveda(Cow-medicine), Pakeya-Ayurveda (Bird-medicine), etc. There is also Vrksa-Ayurveda(Plant-medicine) dealing with physio- pathology of plant kingdom about which fairly good material is available in Brhat-Samhita of Varhmihira, Agnipurana, Visnudharmottaram Sarngadharapaddhati, etc..

Realistic approach-

Philosophy of Ayurveda is discussed exchaustively by S.N. Dasgupta in his magnum opus "A History of Indian Philosophy'(vol. II, pp. 273-433) but there is further scope for interpreting and reconstructing the original form of the same. It is unfortunate that Madav Acharya in his famous work"Sarvadarsana- Sangraha" did not spare any place to this important aspect of philosophy instead he dealt with the philosophyof Rasa-Sidhhas entitled as Rasesvara-Darsana[3] which is sometime confused with the philosophy of Ayurveda but, in fact, this is an offshoot of Tantricism of the mediveal period and not the original philosophy as dealt within ancient compendia of Ayurveda like that of Caraka and Susruta. This evolved out of the desire to achieve physical scability (pindasthairya) by which body would become immune to decay and death. The tantrikas wishes to become immortal in the moral frame itself by which both bhukti (enjoyment) and mukti(liberation) are attained. This was possible by the prescribed use of mercurial preparations.[4] Ancients did not like this idea of attachment to the mortal frame. They knew and accepted the perishable nature of the material physique and imperishable guiding spirit within. So, they never thought about making the body immortal rather they were concerned only with promoting happiness in life for whatever span is fixed for the age average

being of one hundred years.[5] The Upanishadic motto was to live for hundred years being all along full of activity [6] and Ayurveda only helped achieve this object. This would be evident further from the definition of Rasayana given by Caraka which only says that it is means of attaining excellent status of dhatu [7] and that it eliminated Jara(Old age) as defined in mediveal texts.[8] The word "Vayahsthapana" of Caraka also denotes the same idea that the body is maintained in active condition.[9]

Attachment to material physique is demonic approach [10] and it is surprising that Ras-Shastra which is satisfied by calling itself 'Daivi Cikitsa' (Godly medicine) in comparison to herbal and surgical treatments adopted such a demonic attitude in philosophy.

Ayurveda and other systems of Philosophy-

Often scholars feel contended, while dealing with the subject, by comparing the relevant descriptions of Caraka and Susruta with those of the six systems of Indian Philosophy.But it is a hazardous step because the ancient Samhitas of Ayurveda are products of the Upanisadic age whereas the above systems were formulated quite latger. In the realm of Nyaya philosophy SC. Vidyabhushan says that the portion of Kriyabhinirvritti, pariksa and debate are borrowed by Caraka from medhatithi Gautama[11]. Dasgupta has refuted it and has rightly concluded that the material regarding Nyaya philosophy in CS is of much earlier date in comparison to Gautama's Nyayasutra which has borrowed much from the former[12]. Similar position is regarding the Vaisesika system. The six catgegories-Samanya, Visesa, guna, dravya, karma and samavaya-in Ayurveda are used in concrete sense for application in health and disease while Vaisesika has used them in abstract sense. For instance, samanya and viseasa in Vaisesika denote class-concept and specific attribute respectively but in Ayurveda they are responsible for increase and decrease of material in concrete terms. They also mean similar opposite respectively.[13] Thus the approach of Ayurveda is, in this respect, utilitarian which has applied the philosophical concepts in solving the riddles of biology and medicine.

People's Welfare-

Apart from being utilitarian, Ayurveda has also been secular. In this regard, the sole critierion was 'bhuta-daya' or 'lokanugraha' (welfare of the people). Caraka has proclaimed it as the best goal of medicines. [13a] While defining and explaining 'aptagama'(authoritative scripture) he says that it is Veda but adds that any other source as well which does not go against Veda, approved by elders, formulated by investigators and aimed at people's welfare is also taken as authority.[14] Usually the orthodox systems of philosophy do not go beyond vedas in this respect.

Method of Investigation-

While the criterion of utility is people's welfare, the method of working is investigation. It is to be noted that when in other systems of philosophy the term 'Pramana' is used for means of valid knowledge Caraka instead has said it as"Pariksa"[15] which shows the importance of investigation for acceptance or rejection in all maters. Once he says that only who proceed with investigation succeed.[16] In his opinion, success attained without logic is, in reality, success by chance.[17] That is why he advises always to proceed with full knowledge.[18] The importance given to rational attitude towards facts and events of nature promted him to establish a new means of knowledge known as 'Yukti' (rational combination) which is not found elsewhere. It

is applicable in cases of effects produced by multiple causes.[19] Such cases are generally faced in medicine as the diseases often arise by multiple causes so is their management by combination of several factors. Cakrapanidatta over-influenced by orthodox systems did not grasp the real significance of Yukti and Caraka's orginal contribution in this respect. Once he takes it as 'Uha [20](conjecture or probability) and again as avinabhava[21] (invariable concommittance) which is the same as'Vyapti' of Nyaya. But as he could not see through its real purport and significance he could not relish its separate existence as pramana and concluded by including it under inference. In his support he has quoted the arguments of Santaraksika and Kamalasila given in Tattvasangraha.[22] Because of invariable concommittance and cause effect relationship Anumana and Yukti appear to be same but, infact, the difference between anumana and yukti is that the former is concerned with single cause while the latter with multiple causes in relation to effect.

Secular Outlook-

During the Upanisadic age of intellectual ferment a number of doctrines arose about causation and maintenance of the universe. Svetasvatara Upanisad[12] mentions kalavada, Svabhavavada, niyaṭivada, yadreechavada, bhutavada, purusavada and Isvaravada. Asvaghosa adds prakrtivada [23] which seems to the same as parinamavada. The mahabodhijataka (no. 528) mentions ahetuvada, Issarakaranavada, pubbkrtavada, ucchedavada and khattavijjavada. Susruta has mentioned the following Vedas-kalavada, Isvaravada, parinamavada, niyativada, yadreechavada and svabhavavada.

Apart from these doctrines, in Buddhist texts, there is mention of six heretics who had their organized sects in pre-Buddhist age with great influence on the people. They are purana kassappa, makkali gosala, Ajita kesakambali, pakudha kaccayana, sanjaya belatthiputta and nigantha nathaputta.[25]

Purana kassapa, an elder contemporary of Buddha, propounded the doctrine of ahetuvada which has been identified with svabhavavada or yadreechavada. Pukudha kaccayana (kakuda katyayana) held the doctrine of soul as being the sixth one, the other five being five mahabhutas. It resembles the concept of saddhatvatmaka purusa propounded by Caraka. According to Katyayana, the elements of being are eternal and immutable by their very nature. They combine together and separate from one another by their inherent tendency. Ajita Kesakambali was founder of lokayata or carvaka system of philosophy which did not accept soul as distinct from body.

Makkali Gosala was the third and last tirthanakara of the Ajivika sect which telieved in niyativada (determinism or fatalism). Sanjaya Belatthiputta was a septic and founded a school of though which held an attitude of suspended judgement because of difficulty in taking any decision. They proposed the way for critical method of investigation to arrive at the correct decision. Nigantha nathaputta is Mahavira, the twentyfourth tirthankara of Jainism. His main doctrine is the doctrine of free-will activity and thus it was known as kriyavada[26]

Thereafter came Buddha on the scene who propounded the doctrine of casual genesis (pratitya samutpada).[27]

In Ayurveda, most of the above heritical views are mentioned and accepted for explaining the biological phenomena. Caraka in a chapter (Su. 25) discussess the origin of man and his disease and, in this connection, has referred to the authorities who held the causation of one or

the other of following factors - atman, sattava, rasa, sad- dhatu, matapitr, karma, svabhava, prakrti and kala. Atreya while presiding over the symposium, concluded that if is not correct to stick to one's own view but we should consider all aspects and find out the truth.[28] It is evident from the statement that he accepted all the views particularly when he did not contradict any. Susruta also has referred to most of these views and accepted them.[29]

Middle Path-

Caraka, on one side, emphasises on Brahamanism and, on the other, accepts heretical views, thus as an impartial seeker of truth, takes a middle course. Panini in his sutra asti nasti distam matih' (4.4.60) mentions two extremes asti (belief) and nasti (non- belief) which make the forms astika and nastika.In between the two is "dastika" who takes the middle course and accepts truth after proper investigation. I think, Ayurveda comes under this category because of its investigative attitude and adopting the middle course. Samayoga of Caraka is based on conception which avoids extremes and perversions. It is said that samayoga (balanced use) leads to happiness whereas Visamayoga(imbalanced use) causes miseries.[30] The same concept is the basis of the definition of health and disease by which the former is equilibrium and the latter disequilibrium.[31] Gita says samayoga only as "yoga"[32] because yoga, in essence, is samatva [33] (equilibrium) which should be established both in body and mind. Buddha has termed it as madhyama pratipad [34] which is mentioned as such by Vagbhata.[35]

Samyogavada (Doctrine of conjunction) -

Samyogavada or doctrine of conjunction is the orginal contribution of Carak to philosophy of Ayurveda. According to this doctrine every thing is created and exists by conjunction and without this there is nothing.[36] As a corollary of this, it is decided that there is no any product alone and also not without cause.[37] From this a further corollary has developed as the concept of Svabhavoparama (natural cessation). It comprises of two things-

(1) There is cause of origin but not of destruction (or cessation) which comes by nature.

(2) The entities perish momentarily without any change giving place to succeeding ones. In any pathological condition, the physician only asssists the nature by eliminating the defunct and dead entities and starting a fresh series of healthy secretions and tissues.[39] Thus Ayurveda basically is nature cure which only assists nature [40] and does not unnecessarily interfere with or supress its course.

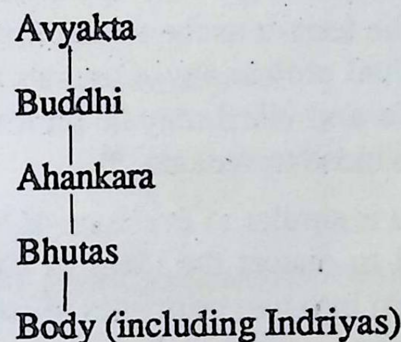
Samyogavada has its applications from the creation itself. Every creature is produced by conjunction and as conjunction is destructible everything caused is non-eternal.

In CS, Purusa (person or self) is said as of three types pure consciousness, conglomeration of six entities and the same of twentyfour principles.[41] The last one is also called as "Rasi- purusa" [42] (aggregated self) while the second one is known as "karma-purusa" or "cikitsadhikarana"[43](the substratum of medical treatment). The reason for this is that Ayurvedic medicine is based on the theory of Pancamahabhuta and as such deals with the body composed of five mahabhutas. The sixth principle of consciousness also includes mind which, alongwith its pathological conditions, is also dealt within Ayurveda. Caraka once says that the concept of six dhatus was formulated by earlier sankhyas.[44] Kakuda katyayana, as said before, also held this concept. Sad-dhatvatmaka purusa is, in fact, the miniature form of Rasi-purusa

and historically preceeds it. This concept is based on two divisions - one mortal and the other immortal.[45] In comparison to pure consciousness , Rasi-purusa adopts two attributes :-

(1) It feels pleasure and pain and

(2) It is destructible because of being product of conjuction.[46] The twentyfour components of Rasi-purusa are divided into two categories Prakrti (casual) and Vikrti (end products). The former consists of eight principles-Avyakta, mahan, ahankara and pancamahabhuta and the latter of sixteen entities . Five cognitive organs, five connective organs, five sense objects and mind.[47] This description differs from the evolutionary process given in later sankhya system. Caraka does not mention tanmatra but bhutas in prakrti because according to Ayurveda the further entities Indriyas and Indriyarthas are products of bhutas whereas accroding to sankhya they emerge from ahankara. In CS, the evolutionary process is given as follows:



At the time of dissolution, all entities are disjoined. Thus this unending cycle of birth and death goes on due to Rajas and Tamas caused by ignorance.[48]

Atman or pure consciousness does not do any thing or enjoy pleasure- pain without instruments (karma). It is conjunction of instruments that make him Kartta (Doer) and Bhokta (enjoyer)·[49]

The conjunction of the above factors is held and maintained by Atman.[50] Fertilization of ovum takes place on union of male and female partners . Again it combines with jiva (Atman) who descends into the womb alongwith sattva (mind) and also puts on the garb of bhutas.[51] Prana (life) moves there as shadow of jiva. [52] Ayus starts here which is mentioned as combination of body, sense organs, sattva and atman.[53] Just after this combination is completed and prana is infused the signs of life (consciousness) appear.[53a] and three dosas evolved out of mahabhutas, take up the biological functions. [53b]

Liberation (Moksa), therefore, in Caraka's opinion, is nothing but elimination of all conjunctions caused by absence of Rajas and Tamas and destruction of powerful karma. In this state pure consciousness, devoid of all conditions, attains its original status.[54]

Role of mind-

Sattva (mind) plays the most important role in the process of bondage and liberation. Sattva acts as linking agent between atman and various corporeal bodies [55] and when it is full of impurity with tamas and rajas reduces pure consciousness to Rasi-purusa[56] Due to rajas it

creates cravings for attachment to sense objects which leads to unhappiness. [57] Upadha (craving) is the cause of unhappiness and its source (corporeal body).[58] Gita says Triguna (sattva, rajas and tamas) as the cause of bondage but Caraka takes only two- Rajas and tamasa- as impurities while sattva is called as "Suddha" which is pure and bright and leads to liberation.[59] In life, atman feels sensations and participates in activities only due to conjunction with mind. [60] When mind getting rid of all external contacts becomes stable and fixed in atman it is known as 'yoga' (complete union.) [61] Gita also, at one place, defines yoga as elimination of all painful contacts. [62]

Vedanta and Early Sankhya-

In Vedanta, Brahman is taken as both kartta (efficient cause) and Upadana (material cause) of the creation.[63] In later sankhya this position is given to insentient prakrti. Caraka's description of avyakta and process of creation depicts the earlier sankhya while Susruta has described according to Isvarkrana's concept of sankhya which holds two distinct entities of purusa and prakrti and the former as the twentyfifth principles [64] although mentioning some of the pecularities of medical philosophy. Caraka's mention of twentyfour principles and their classification into prakrti and vikrti may be reminiscent of the early sankhya propounded by pancasikha [65] which was close to vedanta. [66]

Avyakta of Caraka is similar to Brahman of Vedanta. Cakrapanidatta over- influenced by later sankhya, has tried to distort the ideas of Caraka [67] and Dasgupta too following him wrongly bifurcates Prakrti into two principles of consciousness(Avyakta part) and evlutionary. It is to be noted that Caraka explicitly takes avyakta as consciousness and says it atman, jna and also Pradhana and Prakrti.[70] It aso contradicts the causaion of matter alone without the principles of consciousness and doer in the style of Vadentis and indicates the process of creation from consciousness as described in Upanisad.[71] Lastly, Caraka nowhere describes sankhya's prakrti but has discussed all along various questions relating to atman. According to it, Brahman does not enjoy alone and as such he desired or deterined to become many. Then he creates five bhutas starting from akasa.[72]

Macrocosm and Microcosm-

Loka (universe), like person, is also made of conjuction [73], Caraka has, in detail, shown the parellelism between loka (Macrocosm) and Purusa (Microcosm).[74] Yaska has mentioned six stages of beings (bhavas) as-birth, existence, growth, transformation, decay and death.[75] Caraka, however, laying emphasis on samyoga, has modified in it into five as cause (conjunction) , birth, growth, disturbance and disjunction.[77]

Freedom of Atman Vis-a-vis doctrine of Karma-

Atman is free to act but once acted has to reap the fruits of the same.[78] The principle of pure consciousness is only witness of the scene and is quite unattached. This has been explained by the simile of two birds in Upnisad.[79]

Ayurveda accepts re-birth and doctrine of karma which bears fruits- sweet and bitter - to enjoy. [80] Accordingly atman moves in various spacies and binds himself with pranas.[81] Some diseases also arise due to karma which resist drug- treatment and respond to daiva - vyapasraya cikitsa. [82]

Samyogavada on Physical Level-

Samyogavada of Caraka does not operate only on spiritual level but also on physical level. Diseases are nothing but contact of body with unpleasant situations.[83] Pathology appears when dosa and dusya combine together the treatment of which consist of seperation of these two. The drug therapy too prescribes conjunction of drugs with the body.

Happiness- Unhappiness-

One has to attain an oneness(Kaivalaya) if he is to enjoy eternal happiness.[84] On worldly plane, all contacts with miserable factors (Visamayoga) would have to be avoided if wants to be happy. The words "sukha" and "dukha" denote happiness and unhappiness on both spiritual and physical planes alike "Sukha" and "Dukha" are synonyms of health and disease respectively.

Conclusion-

The philosophy of Ayurveda is mainly discussed in the Caraka samhita which has direct bearing to medical concepts. Caraka's philosophy closely follows Vedanta and early sankha while Susruta follows the later sankhya. Samyogavada of Caraka is a unique contribution to Indian philosophy in general and medicine in particular. Vagbhata, the third member of the great trio, seems to be predominantly under the influence of Buddhist thought. Evidences of Buddhism are also observed in the Caraka- Samhita. It may be recalled that the authoriship of CS belongs to three different persons and as such it is no wonder that Upnisadic, Budhistic and Brahmanic evidences are found simultaneously therein.

The three-fold dividsion of purusa might be representing the two successive phases of development which the Sankhya philosophy has undergone preceeded by the Vedantic concept of single consciousness.

References-

1. CS.SU. 1.41
2. Gita 10.42
3. Sarvadarsanasangraha Ch. 9
4. Rasarnava 1.4-3
5. CS. VI. 8.122
6. Isavasyopanisad 2
7. CS. CI. 1.1.8
8. Samgadharasamhita I. 4.13
9. CS. SU. 4.8 and Cakrapani's Comm. thereon.
10. Gita 16. 10.16
11. S.C. Vidyabhusana : A.History of Indian Logic, pp. 25-35
12. S.N. Dasgupta: A History of Indian Philosophy, Vol. I, P. 302, II. pp. 392-400
13.a. Ibid Ci. 1.4.58
14. Ibid SU. 11.27
15. Ibid SU. 11.17; Vi. 8.83
16. Ibid SU. 10.5
17. Ibid Si. 2.29
18. Ibid SU.20.20
19. Ibid SU. 11.25
20. Cakrapani's comms. on the above
21. Cakrapani's comms. on CS. VI. 4.4
22. Cakrapani's comms. on CS. SU. 11.25
23. Asvaghosa: Buddhacarita, 9.55-64
24. Susruta - samhita, Sa. 1.11
25. A.L. Basham: History and Doctrine of the Ajivikas Ch.II

26. B.M. Barua: A History of Pre-Buddhistic Indian Philosophy, Chs. XVII, XXVI.
27. See Candrakirtti's Comm on Nagarjuna's Madhayamaka-sastra, Ch. I (Introductory remarks).
28. Susrut- Samhita, Sa. 1.11
29. CS. Sa. 1.129-31
30. Ibid Su. 9.4
31. Gita 6.17
32. Gita 2.48
33. T.W. Rhys Davids (Tr): Buddhist Sutss P. 147 (S.B.E.Series)
34. Astangahrdaya, SU. 2.30
35. CS. Sa. 1.57
36. Ibid Sa. 1.58
37. Ibid SU. 16.27.28,33
38. Ibid SU. 16. 35-36
39. Ibid SU.10.5
40. Ibid Sa.1.16-17
41. Ibid Sa. 1.35
42. Ibid SU. 1.46-47
43. Ibid SU. 25.15
44. E.H. Johnston: Early Sankhya, p. 83
45. CS. Sa. 1.59, 85
46. Ibid Sa. 1.63-64
47. Ibid Sa. 1.66-69
48. Ibid Sa. 1.49,54
49. Ibid Sa. 1.35
50. Ibid Sa. 4.8
51. Pranopanisad 3.3
52 CS. SU. 1.42
53. a. CS. Sa. 1.70-73
53 .b. Ibid SU. 18.48
54. Ibid Sa. 1.142
55. Ibid Sa. 3.3 with Cakrapani's Comm.
56. Ibid Sa. 1.53
57. Ibid Sa. 1.134
58. Ibid Sa. 1.95
59. a. Ibid SU. 1.57
60. Ibid Sa. 4.36;5.16-19
61. Ibid Sa. 1.75
62. Ibid Sa. 1.138-39
63. Gita 6.23
64. Brahmasutra 1.1.2, 4.23-27
65. Sankhyakarika 3
66 S.N. Dasgupta: Op. Cit. Vol. I, p. 216
67. S. Radhakrishnan: Indian Philosophy, Vol. II, p. 253
68. See Cakrapani's Comm. on CS. Sa. 1.35, 63-65
69. Dasgupta: Op. Cit., Vol. I, p. 214
70. CS. Sa. 1.61, 3.25,4.8
71. Ibid Sa. 1.43-44
72. Ibid Sa. 4. 8, 1.66-67
73. Maitrayani Upanisad 2.6; kathopanishad 2.6; Taittiriyopanisad 2.1
74. CS. Sa. 5.7
75. Ibid Sa. 5.3-5
76. Yaska: Nirukta 1.2
77. CS. Sa. 5.8
78. Ibid Sa. 1.78
79. Svetasvatara Upanisad 4.6
80. CS. Sa. 1.37, 52
81. Ibid Sa. 1.77
82. Ibid Sa. 1.117
83. Susruta- Samhita SU. 1.23
84. CS. Sa. 1.84, 155; 3.24

THE TREATMENT OF AMAVATA

(A study on the pathogenesis and the line of treatment of Rheumatoid Arthritis and Rheumatic fever.)

N. SREEDHARAN *

Amavata can be considered as one among the Sandhivatas (Arthritis). Arthritis, is so common that a large number of people in all walks of life suffer from it at one time or the other.

It is a disease complex in which the deranged Vata interacts with one of the following.

1) Ama i. e. the chyle putrified due to indigestion or
2) Rakta vitiated by incompatable food etc., or
3) The toxins produced by chronic Syphilis, Gonorrhoea, Dysentery etc., drives the unassimilable Amarasa or vitiated Rakta (blood) into the joints of the body which are the seats of Sleshaka Kapha. They cause inflamatory changes in the synovial membrane when it reaches the site.

Classification of Arthritis

There are five kinds of Arthrits depending on the basis of which deranged Vata combines and interacts with which factor. For example, when the deranged Vata interacts

a) With putrified rasa or Ama it will produce Amavata or Rasavata i. e. Rheumatoid arthritis and Rheumatic fever.

b) When it reacts with polluted Rakta it will produce Raktavata i. e. gout.

c) On combination with Visha or toxins produced by venereal diseases or Vishavata it causes condition like post-syphylitic arthritis.

d) When the deranged Vata combines with Sleshaka Kapha or synovial fluid and especially if it has becomes less (decreases in quantity) due to mal-nutrition or old age it will produce Jaravata i. e. arthritis caused by old age or Kevala Sandhivata or arthritis caused by mal-nutrition.

The first three types of arthritis mentioned above are called as Jeerna

* Dr. N. Sreedharan, Department of Panchakarma, Arogyadham, Maharshi Nagar P. O. (UP).

Sandhivata when they become chronic in character.

The Jeernasandhivatas or chronic arthritis can therefore be sub-divided as follows.

1) Jeerna Amavata (chronic rheumatoid arthritis)
2) Jeerna Vatarakta (chronic gout)
3) Jeerna Vishavata (chronic arthritis of post syphitic origin etc.

Since the Jaravata does not have such specific differentiating characteristics of Samavastha and Jeernavastha i. e. stages of acute and chronic disease states it is included as such in a separate fourth group.

This may be presented conveniently through a table.

nature of Gurutwa i. e. food difficult to digest, having too much fat and is sweet. Similarly, food containing mainly of fish, mutton also causes it.

Untimely food i. e. before completely digesting the previous meal is to be avoided.

2) Reduction in the digestive power of the individual.

3) Absence of physical exercise

4) Unwholesome environment in which there is continuous contact with cold, atmosphere, wind etc.

5) Individuals who are emotionally unstable and who are subjected to stress and strain.

Sandhivata Arthrities

Rasavata	Raktavata	Vishavata	Jeernavata	Jaravata
Amavata	Vatarakta	Arthritis caused by the toxins of Syphilis etc.		
Rheumatoid Arthritis & Rheumatic fever	Gout			

Jeerna Amavata	Jeernavata Rakta	Jeernavishavata
Chronic Rheumatoid Arthritis	Chronic Gout	Chronic post-Syphilitic Arthritis etc.

Aetiology of Sandhivatas

The causative factors in general are:

1) The intake of food having the

6) Carelessness in the proper cleaning of the body channels which results in not eliminating the accumulated

toxin, in time.

Of the four types of arthritis, Amavata or Rheumatoid arthritis and Rheumatic fever is dealt here.

Specific causes of Amavata according to Siddhantanidana

1) The food is heavy and sweet and has too much fat

2) The habit of not taking any exercise, including walking.

3) The vitiation of Rasadhatu i. e. formation of Ama internally.

The causative factors of Amavata according to Madhava nidana are the indulgence in incompatable food and habits and lack of physical activities or doing physical exercise immediately after taking heavy unctuous or fatty foods, especially by those who naturally have poor digestive activity. These are the definite causes of the production of Ama.

Ama is the Rasa or the remnant of the undigested. improperly processed food because of the weakness of Jatharagni and the digestive activity in the alimentary tract. It is foul-smelling and very sticky and causes weakness of all organs of the body which constantly come in contact with it.

Pathogenesis of Amavata

The Ama interacts with the vitiated Vata and induced by it runs quickly to the different seats of Kapha in the body. This Amarasa, which has become more putrified is driven by the deranged Vata and enters in to Dhamanis and occludes them. This causes derangement of all the three doshas of Vata, Pitta and Kapha. Thus this vicious end-products of improper digestion is again made to interact with the now deranged Vata, Pitta and Kapha and becomes further vitiated being thick and highly slimy and assumes different colours.

Effects on heart

Hridaya the heart is the seat of Rasadhatu. Therefore the putrified and vitiated Rasa affects the heart and weakens it and the patient feels uneasy. In the long run it may cause the damage of the mitral valve i. e. the valve between the left auricle and the left ventricle. It may cause many other diseases. In Amavata, because the Ama and Vata interacts violently and spreads into the joints all over the body and especially into the hip joint, the body will become rigid and immovable.

The signs and symptoms of Amavata

Anorexia, thirst, heaviness and tenderness of the body, fever, indigestion and swelling of the joints are the common symptoms and signs of Amavata. In acute condition it will produce excruciating pain in the affected joints just as if it was bitten by Scorpions. Usually the joints that are affected are the joints of the wrist, elbow, shoulder, neck, hip, knee and the ankle. Polyurea, colicky pain, burning sensation all over the body, insomnia, giddiness, nausea, pain in the heart, fainting, constipation are also often seen.

Prominence of doshas

When Pitta gets aggravated there will be burning sensation and redness of the affected joints. When Vata is prominent, pain will be very severe and when Kapha is predominent, rigidity,

heaviness and itching are the main symptoms.

Prognosis

Amavata can be cured only when a single dosha is involved. It is difficult to cure when two doshas are there and it is incurable, when all the three doshas are involved. Similarly if the swelling appears to move over all the parts of the body, it become incurable.

Treatment of Rheumatoid Arthritis

General Line of Treatment:

लङ्घनं स्वेदनं तिक्तं
दीपनानि कटूनि च ।
विरेचनं स्नेहपानं
वस्तयश्चाममारुते ॥
सैन्धवाद्येनानुवास्यः
क्षारवस्तिः प्रशस्यते ॥

commonly in Rheumatoid arthritis fasting, sudation and fomentation therapy are indicated. The intake of bitter, carminative and pungent food and medicines are advised. Inunction and medicated enemas are applicable in certain cases. Saindhavadi taila and kshara-vasthi are considered very good for unctuous enema.

१. लङ्घनम्:–
पित्तानुबन्धे एकरात्रं कफानुबन्धे द्विरात्रञ्च उपवासोऽनुष्ठेयः। उपवासावसरे पानार्थं तोयपाकविधिना सिद्धं पञ्चकोलपानीयं देयम्।

२. स्वेदनम्:–

Fasting Therapy

If Pitta is aggravated along with Vata, fasting shall be limited to one day. But in the case of the aggravation of Kapha, the fasting therapy should be continued for two days. During the fasting therapy, the decoction prepared with Panchakola according to Toya Pakavidhi, should be given orally.

द्वितीयेऽथवा तृतीये दिने
१) वालुकापिण्डपोटलीभिः
२) औषधचूर्णपोटलीभिः अथवा
३) धान्यपोटलीभिः सर्वाङ्गं रूक्षस्वेदः कर्तव्यः।

Sudation Therapy

On the second or third day unctuous type of fomentation should be done. For this either Valuka Potalisweda (sand fried with salt and tied in a piece of cloth in the form of a bolus or (2) Podikizhi (powder of some drugs fried and tied in a piece of cloth) may be used.

Dhanyakizhi

Some seeds fried and tied in a piece of cloth are used. This kind of fomentation should be continued for three days. Thereafter on the fourth day, purgation should be given.

Fresh juice of Vitex negundo Linn. (Five leaved chaste tree) 45ml and castor oil 45ml are mixed together and given early in the morning. It will be better to take Gandharvahasthadi Eranda or Brihat Saindhavadyeranda in the place of mere castor oil for mixing with the fresh juice of the leaf of Vitex negundo Linn.

When fever, burning sensation and red colour is seen in rheumatoid arthritis, it is better to administer Amrtottara kvatha mixed with Avipathi churna as a purgative. Here the purgative should be given either for one, two or even three days according to the condition of the disease and the patient.

After this apply the alleviation

therapy with drugs and food containing bitter, pungent and digestive stimulants. Local application of hot ointment is also indicated.

Alleviation therapy

1)	Rasnasaptaka decoction with medicated castor oil	90 ml / 15ml	6 a.m.
2)	Madhyama Rasnadi decoction with Shaddarana churnam	90ml / 20g	5 p.m.
3)	Sahacharadi decoction / Amavatari Rasa	90ml / 2 Ratti	9 p.m.

These three recipes are to be continued for one week.

In the second week

1)	Maharasnadi Pachana decoction with Abhadya churnam	90ml / 15gr	6 a.m.
2)	Madhyama Rasnadi decoction / Shaddarana churnam	90ml / 15gr	5 p.m.
3)	Rasnadi decoction / Amavata Vidhwamsini Rasa	90ml / 2 Ratti	9p.m.

Oleation therapy

By adopting the above treatment, when the acute condition of the disease is over, pain and inflammation subsides and the body becomes light and rough. However when the diseases has gone to the chronic stage, the patient shall be subjected to Snehapana. For this anyone of the following may be given.

1) Suntee ghrita
2) Sringiveradya ghrita
3) Kanjika shatpalaka ghrita
4) Prasarinyeranda taila
5) Brihat Saindhavadi taila

After administering the portion of medicated ghee for three days the sudation therapy may be started.

Sudation

Patrapotala Sweda shall be applied for three days. On the fourth day a purgative may be given. For this the fine powder of Operculina turpethum (Turpith) is mixed with Kanjika and used.

Afterwards complete rest has to be taken atleast for seven days taking alleviative decoction. If necessary poultice may be applied on the joint or joints affected. Thereafter administer Yogavasthi which contains five or three unctuous enemata. Medicated oils such as Kottamchukkadi, saindhavadi tailam, Vijayabhairava tailam etc. should be used for anointment and for frying the leaves and other drugs with which the bundles for fomentation are to be prepared. Medicated oils and decoctions to be used for Vasthi in Rheumatoid arthritis are unctuous enema. For the first and seventh days—Saindavamadanadi taila. On the 3rd and 8th days—Brihatsaindavadyeranda taila may be used.

Nirooha Vasthi (Un-unctuous Enema)

Un-unctuous enema shall be administered on 2nd, 4th and 5th days.
2nd day for

Nirooha – Erandamooladi docoction

on the fourth day – Dwipanchamooladi Goumuthra Kshara vasthi

on 6th day – Koshatakaragwadhadi Nirooha

The wholesome diet for rheumatoid arthritis are Barley (Hordeum vulgarum) and one year old Shashtika rice.

The vegetables and fruits to be used are Brinjal prepared with Kanjika. The bitter fruits are Trichosanthes diocea and Chennapodium album and the tendor leaves Azadirachta indica, Trianthema portula, Tricosanthus diocia, Tribulus terresteris, Crateva nurvala, Boerhaavia diffusa and meat of birds like chicken etc

Soups and special diet

Vegetable soups prepared with Horsegram (Dolichos bifflorus) Garden pea (Pisum sativum) and Bengal gram are recommended. There are some special preparations which can be considered as a beneficial diet or even as a specific remedy for Amavata. Among these Sandaki and Siddhmala or sidhyaleha deserve special mention. Sandhaki is a controversial term in Ayurveda. In the very recent interpretation of Sandhaki (Aryavaidyan Vol. IV No. 3 February 1991, Page No. 147) it is stated that "Sandaki is the name of a sour preparation, an acute vinegar made from the decoctions of Raddish (Raphanus sativus Linn.) mustard and others in which the powders of black cumin is added for enrichment. Sandaki and other similar preparations are light and appetising."

Almost all the commentators of Brihathrayi and Laghuthrayi whether Sanskrit or Malayalam, the same interpretations has been given. One yoga of Sandaki is seen described in "Ayurveda Saukhyam" written by todarananda in the chapter of the Treatment of Amavata. According to him the preparation of Sandaki is taken from "Brihadasavarista Samhita."

Preparation of Sandaki

सिद्धार्थकखलीप्रस्थं सुधौतं निस्तुषं जले।
मण्डप्रस्थं विनिक्षिप्य स्थापयेद्दिवसत्रयम् ॥ १ ॥
धान्यराशौ, ततो दद्यात् संचूर्ण्य पलिकानि च।
अलम्बुषा गोक्षुरकं शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ २ ॥
प्रसारिणी वारुणी त्वक् शुण्ठी मदनमेव च।
सम्यक् पाकं नु विज्ञाय सिद्धा तण्डुलमिश्रिता ॥ ३ ॥
भृष्टा सर्षपतैलेन हिङ्गुसैन्धवसंयुता।
भक्षिता लवणोपेता जयेदामं महारुजम् ॥ ४ ॥
एकजं द्वन्द्वजं साध्यं सान्निपातिकमेव च।
कट्यूरुवातमानाहं जत्रूग्रं त्रिकसंश्रितम् ॥ ५ ॥
उदावर्तञ्च सण्डाकी बलवर्णाग्निकारिणी।

960gr of mustard-oil-cake should be washed well in water to make it free from husks. Add 1440ml of Manda (Kanji water) to this and mix well. Then keep this inside of grain for three days.

Thereafter 60g fine powder of each of the following eight drugs should be mixed with it.

अलम्बुषा	– Biophytum sensitivum
गोक्षुरः	– Tribulus terrestris
शतपुष्पा	– Anethum graveolens Linn.
पुनर्नवा	– Boerhaavia diffusa
प्रसारिणी	– Paederia foetida
वारुणी	– Citrullus colocynthus
त्वक्	– Cinnamum cassia
शुण्ठी	– Zingiber officinale
मदनफलम्	– Randia dumetorum

When it is well fermented, it should be used to cook rice. Then fry it with mustard oil and add some asafoetida and rocksalt. This preparation with salt (if necessary) cures exceedingly painful ailments of Ama, caused by the derangement of one or more Doshas. It also cures rheumatism of the joints of the lumbar region, thigh, clavicular region and shoulder. It alleviates Anaha (distention of abdomen), Udavartta (misperistalsis) and promotes strength, complexion and the power of digestion.